योग कैसे करें

एक योगी के अनुभव

योगी आनन्द जी

योग कैसे करें

एवं

एक योगी के अनुभव

योग कैसे करें

एवं

एक योगी के अनुभव

योगी आनन्द जी

इस पुस्तक में सम्मिलित सामग्री के किसी अंश को किसी भी रूप में कोई प्रकाशक/लेखक/संपादक – इस पुस्तक के प्रकाशक से अनुमति लिये बिना प्रयोग न करें। ऐसा करना कॉपीराइट अधिनियम का उल्लंघन करना होगा।

द्वितीय संस्करण

ISBN 978-93-5288-373-8

●

© लेखक

योगी आनन्द जी

●

anandkyogi@gmail.com

http://www.kundalinimeditation.in/

http://www.youtube.com/c/YogiAnandJiSahajDhyanYog

https://www.fb.com/sahajdhyanyog/

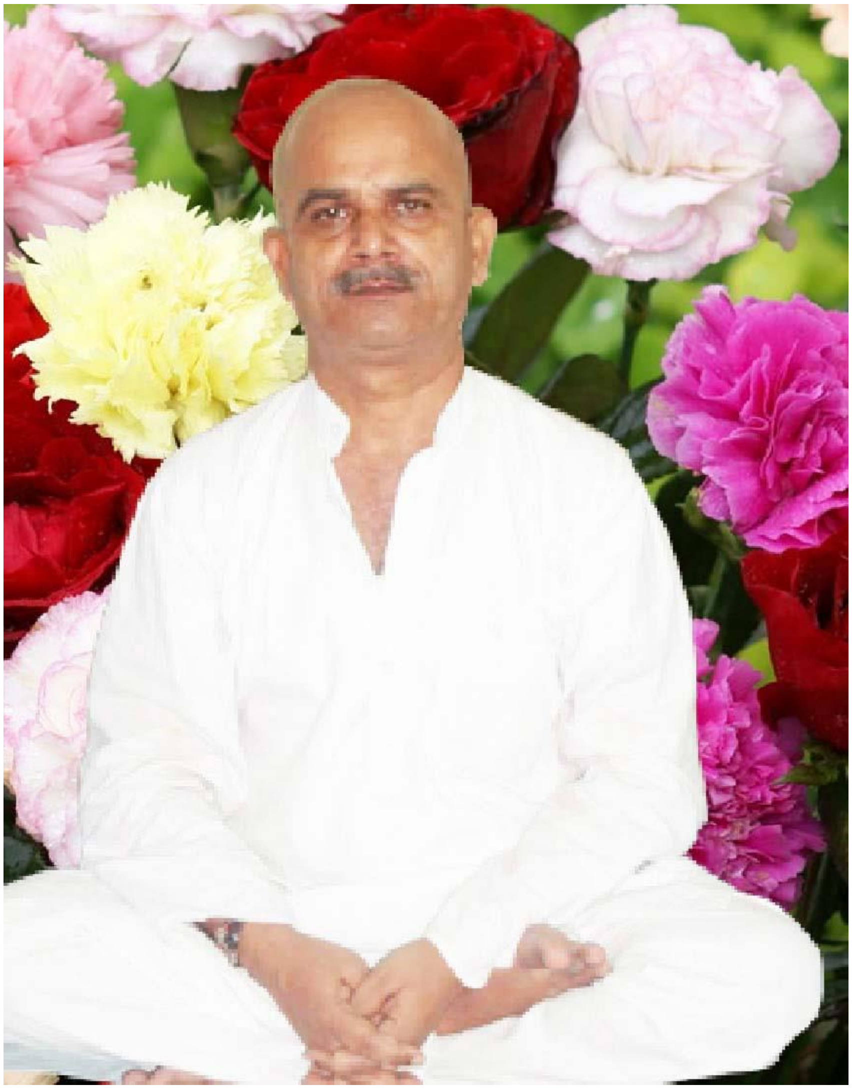

योगी आनन्द जी

प्रस्तावना

प्रिय पाठकों! इस लेख में मैंने यह लिखने का प्रयास किया है कि साधकों को ध्यानावस्था में किस प्रकार के अनुभव आते हैं। अनुभवों का अर्थ, योग मार्ग में आने वाले अवरोध तथा इन अवरोधों से छुटकारा किस प्रकार पाना चाहिए। कुण्डलिनी के विषय में ढेरों जानकारियाँ लिखी गयीं हैं, जीवात्मा बन्धन से मुक्त होकर किस प्रकार अपने निजस्वरुप में अवस्थित होती है। इसमें लिखे गये अनुभव स्वयं हमारे ही हैं। जो अनुभव सितम्बर सन् 1984 से मई सन् 1999 तक के बीच आये हैं, उन्हींअनुभवों को मैंने इस पुस्तक मैं लिखा है। हमारा मार्ग– "सहज ध्यान योग" है।

इस पुस्तक को लिखने का हमारा उद्देश्य यही है, कि साधक गण समझ सके, कुण्डलिनी जागरण के बाद तथा चक्र खुलने बाद साधक को किस प्रकार की अनुभूति होती है। आज कल ज्यादातर साधक भ्रम में रहते है, कि उनकी कुण्डलिनी जागृती हो गयी है और उनके चक्र क्रियाशील हो गये है,जबकि ऐसा नहीं हुआ होता है। साधक ज्यादा से ज्यादा आध्यात्मिक लाभ व उन्नति कर सकें, आपका जीवन दिव्य बने, आप अपने जिस्वरुप में अवस्थित हो जिससे आपको चिरशांति प्राप्त हो, यही मेरा उद्देश्य है।

धन्यवाद!

- योगी आनन्द जी

विषय-सूची

1. दो शब्द 12

सन् 1984

2. साधना करने की शुरूआत, पहली बार ध्यान पर बैठा, प्राण वायु मूलाधार चक्र पर, प्राण वायु स्वाधिष्ठान चक्र पर, प्राण वायु नाभि चक्र पर, भगवान विष्णु के दर्शन, प्राण वायु हृदय चक्र पर 15–22

3. भगवान शंकर के दर्शन, श्री माता जी के दर्शन, श्री माता जी के प्रत्यक्ष दर्शन की इच्छा, भगवान शंकर के दर्शन, प्राण वायु कण्ठचक्र पर, दादी माँ के सूक्ष्म शरीर से मिलना 23–31

सन् 1985

4. श्री माता जी के पास मिरज जाना, हम और आप एक हो जायेंगे, हमें दीक्षा दी गयी, तेजस्वी शिवलिंग के दर्शन 34–41

5. अपने भाव बदलो, नाग ने काटा, माता कुण्डलिनी शक्ति के दर्शन, उड्डियान बन्ध व मूल बन्ध का लगना, महायोग मुद्रा, अहंकार का दर्शन, भगवान शंकर और ॐ का दर्शन 46–55

6. श्री माता जी का दर्शन, साधना करने की तीव्र इच्छा, भगवान शंकर के दो रूपों में दर्शन, भगवान बजरंगबली के दर्शन, वासना के दर्शन, संकल्प नहीं करना, कुण्डलिनी शक्ति के दर्शन, नाग ने काटा 56–64

सन् 1986

7. आदिशक्ति द्वारा ज्ञानामृत पान, मूलाधार में खिंचाव व महायोग मुद्रा का लगना, तीनों बंधों का लगना 66–68

8. ऋषिकेश जाना, मैं स्त्री के रुप में, अर्धनारीश्वर के दर्शन, शिव शक्ति के दर्शन, ये शरीर गुरू का है 69–75

सन् 1987

9.	नाग ने काटा, स्वामी शिवानन्द जी के दर्शन, कुण्डलिनी शक्ति के विभिन्न रूपों में दर्शन, पत्नी की मृत्यु, बदला नहीं लोगे	77–84
10.	कठोर साधना करो, कुण्डलिनी ऊर्ध्व नहीं हो सकी, रंगों का दर्शन, ज्ञानचक्र के दर्शन	85–91

सन् 1988

11.	श्री माता लक्ष्मी जी के दर्शन, शेर, आग का बरसना, दूसरों की जानकारी प्राप्त होना, अतृप्त जीवात्माओं से बात करना, मैं भविष्यवक्ता के पास गया	93–97
12.	तू रूखा है, माता जी द्वारा जलगाँव बुलाना, आप शादी कर लीजिए, पत्नी की सद्गति हुई, कष्टों की अनुभूति	98–107

सन् 1989

13.	कामवासना की जागृति, नाग ही नाग, आग का गोला व बन्दर, स्वप्न संकेत, संकल्प पूर्ण होना, आदिगुरु शंकराचार्य जी के दर्शन, मिरज यात्रा, कुण्डलिनी शक्ति का दर्शन, शिवलिंगों के दर्शन	109–122
14.	दूरदर्शन-दूरश्रवण सिद्धि, कण्ठचक्र थोड़ा-सा खुला, दिव्य दृष्टि खुलने में अभी समय लगेगा, दो ज्योतियों के दर्शन, उष्णता, विविध अनुभव, शिवलिंग ही शिवलिंग, तीसरा नेत्र	123–133
15.	भगवान श्री गणेश जी के दर्शन, कारण शरीर से मैं अन्तरिक्ष में, अन्तरिक्ष में ॐ, ब्रह्मरंध्र का दर्शन, भगवान श्री कृष्ण, श्री माता जी का पत्र, आग-ही-आग, हृदय में अग्नि और भगवान शंकर	134–143

सन् 1990

16.	त्रिशूल, कण्ठचक्र से ब्रह्मरंध्र तक, ज्योति, अतृप्त जीवात्माएँ, जलाशय	146–149

सन् 1991

17. भगवान शंकर, हमारे दो रूप, पिछले जन्म के गुरुदेव, मिरज की यात्रा, विशाल मगरमच्छ, कुण्डलिनी सम्बन्धी अनुभव, यमदूत, कुण्डलिनी शक्ति का सहयोग, मैंने शक्तिपात किया 151–163

18. मैं मिरज आ गया, मेरी परीक्षा ली गयी, स्वामी चिदानन्द जी, अवधूत के दर्शन, ग्रन्थि खुलने का संकल्प, स्वामी शिवानन्द जी के दर्शन, अप्सराओं द्वारा नृत्य, अतृप्त जीवात्मा 164–172

19. फूलों की सुगन्ध, महा पुरुषों के दर्शन, मैं तीन बार मरा, कर्मों की पोटली, शरीर धनुषाकार हो गया, कर्म भोगना ही होगा, मेरे ऊपर सर्प चढ़ा, माता कुण्डलिनी शक्ति, पेड़ और नाग, मैं शत्रु नहीं, मित्र हूँ 173–184

सन् 1992

20. शरीर शुद्ध हुआ, मैं निर्वस्त्र था, अन्न का त्यागना, कण्ठचक्र की ग्रन्थि खुल गयी, लघु मस्तिष्क व आज्ञाचक्र, कमजोरी आ गयी, मैं गर्भ में, माता कुण्डलिनी द्वारा स्तनपान करना, कामधेनु गाय, सिद्धियों से हानि, साधिका के विषय में जानकारी, तन्मात्राएँ 185–196

21. गोंदेलकर महाराज, उल्टा घड़ा, जलता पेड़, शुद्धता की ओर, नाभि पर जोर, आपका प्रसाद इधर है, भाई का सूक्ष्म शरीर, दूसरे लोक में जाना, संकल्प करो सारे चक्र खुल जाएँ, मीठापन 197–206

22. ध्यानावस्था में आगे की ओर झुकना, उन्मनी अवस्था, कुण्डलिनी शक्ति द्वारा भोजन कराना, छोटा बच्चा, आँखों में खिंचाव, नीचे के लोकों में जाना, संसारी न रहो, कल्पवृक्ष, ब्रम्हरंध्र और अंधकार, नीलमय पुरुष, स्थूल जगत, ब्रह्मरंध्र का खुलना, ऊपर के लोक 208–224

23. ब्रह्मरंध्र में साधना, मृदंग की आवाज, दिव्य-दृष्टि द्वारा कार्य लेना, कर्म, भगवान श्री कृष्ण, कुण्डलिनी आँखों पर, अनुभव नहीं आने चाहिए, गुरु तत्त्व का स्वरूप, दूध का पीना, हिरण्यमय पुरुष, ब्रह्माण्ड जननी, मुक्ति, एक बार, भगवान दत्तात्रेय 227–241

24. श्री माता जी पर बाधा, गरुण और हंस का दर्शन, दिव्यदृष्टि से कार्य लिया, श्री माता जी का दिव्य स्वरूप, पूर्णता प्राप्त करो, सज्जनगढ़ की यात्रा, आलिंदी यात्रा, ज्ञानेश्वरजी व मुक्ताबाई आदि के दर्शन, दो दल का कमल, वाचा सिद्धि का प्रयोग 242–255

सन् 1993

25. संकल्प करो आत्मा साक्षात्कार हो, महापुरुष, दो जन्म पूर्व का दृश्य, कुण्डलिनी शक्ति, ईश्वर, गुरु, संसार नष्ट हुए के समान हुआ, सप्त ऋषियों से मिलना, धर्म, शत्रु, योगबल व कर्म, प्रवचन करना, तेजस्वी कण, आत्मसाक्षात्कार, शिवलोक जाना, श्री माता जी के दर्शन बन्द हो गए 258–277

26. भयंकर उष्णता, मैं ब्रह्म हूँ, बाधा दूर की, भगवान् यीशु, भगवान् श्री कृष्ण और श्री माता जी, ब्राह्मण नहीं, श्री माताजी, त्रिनेत्री स्त्री, श्री माताजी की इच्छा, गधे की सवारी, यह जगह छोड़ दो, कुण्डलिनी ऊर्ध्व की, दिव्य दृष्टि खोली, मैं शाकम्भरी पहुँचा 277–299

27. तामसिक शक्तियों ने दुर्गति की, परकाया प्रवेश की जानकारी, माता कुण्डलिनी शक्ति, जीव और कर्म, सन्यासी का प्रणाम, मैं सारे ब्रह्माण्ड की माँ हूँ, मैंने एक साधक की कुण्डलिनी फिर ऊर्ध्व की, मैं अद्वितीय सुन्दर स्त्री के रूप में, त्राटक, स्वामी चिदानन्द जी 301–325

सन् 1994

28. अहंकार का त्याग करना, परकाया प्रवेश सिद्धि के लिए मुझे मना किया गया 329–330

29. शाकम्भरी आश्रम छोड़ दिया, भगवान बजरंगबली जी, मेरी तरह बनो, विशालकाय हाथी, पृथ्वी का आशीर्वाद, नाग 331–340

सन् 1995

30. मुझे बहुत दूर जाना है, त्रिनेत्री बालक, भगवान नारायण, मोक्ष पाना अत्यन्त दुर्लभ है, श्री माता जी का आशीर्वाद, प्रकृति परिवर्तनशील है, शिव शक्ति का स्वरूप 341–348

31.	शुद्धता चरम सीमा पर, भगवान दत्तात्रेय, प्रकृति के नियमों का आदर करो, नीला वलय, भगवान गौतम बुद्ध जी, मेरे पिछले जन्म, मैं त्रिकाल का गुरु, त्रिकाल का वसुओं से मिलना, स्वामी शिवानन्द जी द्वारा मार्गदर्शन	349–365

सन् 1996

32.	त्रिकाल को लेकर मिरज आश्रम जाना, पूना की साधिका का कण्ठचक्र खोलना और कुण्डलिनी ऊर्ध्व करना, मिरज आश्रम में त्रिकाल की परीक्षा ली गई	367–368
33.	मिरज आश्रम में साधिका का कण्ठचक्र खोलना और कुण्डलिनी ऊर्ध्व करना, जलगाँव में साधिका का कण्ठचक्र खोलना और कुण्डलिनी ऊर्ध्व करना, मुझे श्राप मिला	369–371

सन् 1997

34.	श्राप का प्रभाव कमजोर होना, धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष	374

सन् 1998

35.	उन्नति की ओर, ब्रह्म आप मुझे दिखाई क्यों नहीं देते हैं, बुझे हुए अंगारे की तरह बनना, लक्ष्मी जी का आशीर्वाद, तृष्णा और कुण्डलिनी, भुने हुए चने, सुवर्णमय पुरुष	376–382
36.	मैं स्वयं तृप्त हूँ, मेरा शेष कर्म, चित्त पर सात्विकता का बढ़ना, निष्क्रिय इन्द्रियाँ, स्वच्छ हो जा, अमृत वर्षा, धर्म काँटा, मणिप्रभा, सफलता पर सवार, माया और अविद्या	383–392
37.	तराजू, तमोगुणी अहंकार का मूल स्रोत में विलीन होना, माता कुण्डलिनी शक्ति, अहंकार, तमोगुणी अहंकार, मेरा कर्म, सूखा हुआ पेड़, प्रभा, बुझा हुआ अंगारा, माया	393–402
38.	निजस्वरूप में अवस्थित होने का संकल्प करो, अनुभव किसी को न बताएँ, कर्माशय देखने का संकल्प न करना, चित्त निर्मलता की ओर, आत्मा और जीव, अशुद्धता का नष्ट होना निश्चित	403–407

39.	स्थूल शरीर त्यागने के बाद ऊर्ध्वगमन का मार्ग, चारों शरीर, चित्त निर्मलता की ओर, इसी में अवस्थित होना, भौतिक वस्तुओं को त्यागने का संकल्प, कर्माशयों का साक्षात् चित्त द्वारा तुरन्त करा देना	409–414
40.	तृष्णा और विकार, श्री माता जी के लिए आदिशक्ति से प्रार्थना करना, चित्त की वृत्ति और कारण शरीर, जीव और शरीर, सिर्फ 'ॐ' मंत्र का जाप करो	415–419

सन् 1999

41.	व्युत्थान की वृत्तियाँ, माया नष्ट होने की ओर, घर वालों को धन्यवाद, जब सब कुछ त्याग देगा, सीढ़ियाँ दिखाई दीं, ज्ञान प्रदान किया गया, कलियुग की कुदृष्टि, सत्य और असत्य ब्रह्म का ही स्वरूप है, स्थूल जगत दिखाई क्यों नहीं देता, भगवान शंकर का दर्शन	420–428
42.	भगवान शंकर द्वारा ज्ञान का उपदेश देना, उत्पत्ति का केन्द्र, कुण्डलिनी का श्राप व कलियुग की कुदृष्टि समाप्त हुई, संसार रूपी वृक्ष नष्ट हो गया, तुम्हें अगला जन्म लेना अनिवार्य	429–436

दो शब्द

इस पुस्तक में मैंने जो अनुभव लिखे हुए हैं, वे अनुभव हमारी साधना काल में आये हैं। मैंने अपनी साधना 18-20 सितम्बर, 1984 में शुरू की थी। साधना में शुरूआत से ही मुझे बहुत से अनुभव आये, मगर मैंने शुरुआत में अपने अनुभवों को नहीं लिखा था। हालांकि हमारे गुरूदेव ने कई बार हमसे कहा था– आनन्द कुमार तुम्हें ध्यानावस्था में अच्छे-अच्छे अनुभव आते हैं, इसलिए किसी कॉपी में अनुभवों को लिख लिया करो। पहले मैंने अनुभवों को लिखने की तरफ ध्यान नहीं दिया। जब मैं जून 1989 में श्री माता जी के पास गया और उस समय उनके साथ रहने का सुअवसर मिला, तब अण्णा जी ने भी (पूज्य श्री माता जी के पतिदेव) मुझसे कहा– "आनन्द कुमार! तुम अपने अनुभवों को किसी कॉपी में लिखना शुरू कर दो, हो सकता है भविष्य में तुम्हारे द्वारा लिखे गये अनुभवों का लाभ अन्य साधकों को भी मिले"। मैंने अण्णा जी के कहने पर अनुभवों को लिखना शुरू कर दिया। जून 1989 से मैं अपने अनुभवों को ध्यान में आने के तुरन्त बाद लिख लिया करता था। मगर जो अनुभव सितम्बर 1984 से मई 1989 तक आये, उनको मैंने नहीं लिखा था। इस बीच आये हुए अनुभवों को मैंने सन् 1994-95 में लिखा था, मगर तब तक इन अनुभवों को आये हुए दस वर्ष बीत गये थे। जो अनुभव मुझे याद आये उनमें महत्त्वपूर्ण अनुभवों को लिखा और शेष अनुभवों को छोड़ दिये।

हमें अपनी साधना में जो सफलता मिली तथा साधनाकाल में जो अनुभव आये इसका श्रेय मैं अपने परम पूज्य गुरूदेव श्री माता जी को देता हूँ, क्योंकि श्री माता जी की मुझ पर अपार कृपा रही है। सिर्फ गुरू ही नहीं बल्कि माँ का भी प्यार दिया, उन्हीं के आशीर्वाद से मैं इस योग्य हुआ हूँ कि साधना के समय आये हुए आरम्भिक अवस्था से उच्चतम अवस्था तक के अनुभवों को लिख सका हूँ। मैं तो एक सांसारिक मनुष्य मात्र था, मगर श्री गुरूदेव जी ने अपनी शरण में लेने के बाद मुझे तपा हुआ सोना बना दिया है। हमारे श्री माता जी व पिता जी ने तो हमें जन्म दिया, स्थूल शरीर दिया, मगर हमारे गुरूदेव ने अविद्या और माया से युक्त स्थूल जगत के असली स्वरुप का ज्ञान करा दिया और अनंत का मार्ग दिखा दिया। अब गुरूदेव की कृपा से उसी अनंत के मार्ग पर आगे बढ़ता चला जा रहा हूँ।

एक बात हमें और याद आ गयी, जब मैं ध्यान कर रहा था तब ब्रह्मलीन पूज्य स्वामी शिवानन्द जी ने हमसे पूछा– “योगी, तुम अपने अनुभव क्यों लिखा करते हो”। मैं बोला– “स्वामी जी, हमारे गुरूदेव व गुरू भाइयों की इच्छा थी कि मैं अपने अनुभवो को लिखूँ, बस मैं अनुभवो को लिखने लगा”। स्वामी जी बोले– “ये सच है कि ये अनुभव तुमने अपने गुरूदेव व गुरूभाइयों के कहने पर लिखे हैं, मगर मेरा भी आशीर्वाद तुम्हें प्राप्त है; इसलिए भविष्य में तुम्हारे इस लेख से कुछ साधकों को मार्गदर्शन मिलेगा, और उन साधकों का कल्याण होगा”। ये स्वामी शिवानन्द जी ऋषिकेश के थे। 1963 में ब्रह्मलीन हो गये थे, तथा हमारे श्री गुरूदेव जी के गुरूदेव हैं। स्वामी जी ने साधना काल में हमें बहुत मार्ग दर्शन दिया, जब योग में मुझे उच्चतम अवस्था प्राप्त हुई तब हमारी इन्होंने बहुत सहायता की थी, तथा योग की बारीकियों को समझाया था।

प्रिय पाठकों! आप हमारे अनुभवों को पढ़कर अवश्य लाभान्वित होंगे। तथा जो साधक साधना करते हैं उन्हें ये अनुभव अवश्य मार्ग दर्शन का काम करेंगे, ऐसा हमारा सोचना है। ऐसा भी हो सकता है कि हमारे अनुभव अन्य योगियों के अनुभवों से मेल न करते हों तो हमें क्षमा कीजिएगा। हमारा मार्ग सहज ध्यान योग का है इसलिये सहज ध्यान योग के साधकों को अवश्य लाभ मिलेगा। क्योंकि कभी-कभी ऐसा भी होता है कि एक साधक के अनुभव दूसरे साधकों से मेल नहीं करते हैं। लेकिन अनुभवों का जो सूक्ष्म अर्थ होता है वह एक जैसा ही होता है। मगर ध्यान रखने वाली बात यह है कि योग बिना सद्गुरू के नहीं हो सकता है, इसलिए साधक के लिए आवश्यक है कि वह अपनी साधना किसी योग्य मार्गदर्शक की निगरानी में करे, तभी योग मार्ग में आगे चलना सम्भव हो पाता है। सिर्फ पुस्तकों को पढ़कर योग नहीं किया जा सकता है।

मैं साधना करने से पूर्व भी आस्तिक था। पूजा-पाठ, मंदिरों आदि में विश्वास रखता था, धार्मिक पुस्तकों को बहुत पढ़ता था। मैंने दूसरे धर्म की पुस्तकों का भी अध्ययन किया हुआ है। मगर योग से सम्बन्धित पुस्तकें कभी नहीं पढ़ीं थी और न ही योग के विषय में हमें किसी प्रकार का ज्ञान था। जब मैं योग मार्ग में आया फिर मैंने पीछे मुड़कर नहीं देखा, बस आगे बढ़ता चला गया। बहुत से अवरोध आये, बड़ी-बड़ी परेशानियाँ आयी, दृढ़ता से परेशानियों का सामना किया और जरूरत पड़ने पर सांसारिक वस्तुओं का त्याग भी किया। मगर कोई भी अवरोध या परेशानी हमारे मार्ग को रोक नहीं सकी, आखिकार अंत में हमें सफलता मिल ही गयी। आज मैं अपने आपको आंतरिक रुप से आनन्दित पाता हूँ,

मेरे श्री माता जी व पिता जी ने मेरा नाम आनन्द रखा था, अब मैं आनन्द में हूँ, दुःख हमें छू भी नहीं सकता है, क्योंकि जिस जगह आनन्द है वहाँ दुःख का क्या काम है।

प्रिय पाठकों! यदि आप चाहें तो आप भी अपने जीवन को आनन्दित कर सकते हैं। योग का अर्थ यह नहीं है– कि आप जंगल में चले जाये और वहीं पर योग का अभ्यास करें, तभी आपका योग होगा ऐसा जरूरी नहीं है। आप गृहस्थ में रहकर भी योग का अभ्यास कर सकते हैं। बस आपके अन्दर योग के लिए श्रद्धा, विश्वास, लगन व दृढ़ता और संयम होना चाहिए, आपको भी अवश्य सफलता मिलेगी। सम्पूर्ण जगत् में मनुष्य ही सबसे श्रेष्ठ प्राणी है, मनुष्य का कर्तव्य है कि वह थोड़ा-सा ईश्वर का भी चिंतन करे, सारा जीवन भौतिक सुखों की लालसा में ही व्यतीत नहीं कर देना चाहिये। अरे भौतिक सुख तो क्षणिक होते है, क्षणिक सुख के बाद दुःख अवश्य आयेगा क्योंकि सुख-दुःख का जोड़ा होता है। इसलिए ऐसे आनन्द की तलाश करो जो सदैव आपके पास रहे और दुःख की कभी आपको अनुभूति ही न हो। मनुष्य का कर्तव्य है वह अपने निजस्वरुप को पहचाने, कि उसका वास्तविक स्वरुप कैसा है? आपका स्वरुप नित्य है, सत्य है, आप अमृत के पुत्र हैं अपने आपको पहचानो। क्योंकि आप जड़, नश्वर, माया और अविद्या से युक्त परिणामी स्थूल जगत को अपना मान रहे हैं। इस अंधकार युक्त जगत से मुक्ति सिर्फ सद्गुरू ही दिला सकते हैं। हे अमृत के पुत्रो, आप सभी को सद्गुरू की प्राप्ति हो, आपका जीवन धन्य हो, आपको अनंत का मार्ग प्राप्त हो। प्रिय पाठकों! आपको योग के विषय में कुछ पूछना हो तथा ध्यान करते समय किसी प्रकार का (योग-सम्बन्धी) मार्गदर्शन लेना हो, तो आप बेझिझक यू-ट्यूब अथवा फेसबुक पर पूछ सकते हैं।

योगी आनन्द जी

सन् 1984

साधना करने की शुरूआत

सबसे पहले मैं अपने गुरूदेव श्री माता जी को प्रणाम करता हूँ, क्योंकि गुरू ही साधक के जीवन में सबसे श्रेष्ठ होता है। उन्होंने हम पर अपार कृपा की है, हमारी गुरू श्री माता जी बनी और उन्होंने योग का मार्ग दर्शन किया। उन्हीं के मार्ग दर्शन में हमें साधना काल में अच्छे-अच्छे अनुभव आये तथा योग में सफलता प्राप्त हुई। गुरूदेव श्री माता जी ने ही साधना-काल में मेरे ऊपर कई बार शक्तिपात किया तथा उन्हीं के आशीर्वाद से उच्चतम स्थिति को प्राप्त कर सका हूँ, और मेरा वर्तमान जन्म सफल हुआ। अब मैं अपने अनुभवों को लिख रहा हूँ जो हमें अपने साधना-काल में आये है।

मैंने अपनी साधना की शुरूआत 18-20 सितम्बर सन् 1984 से की थी। उस समय मैंने ध्यानावस्था में आये हुए अनुभवों को नहीं लिखा था। हालांकि कई बार साधकों ने व श्री माता जी ने मुझसे कहा था– आप अपने अनुभवों को किसी कॉपी में लिख लिया करो, आपको अनुभव अच्छे-अच्छे आते हैं; हो सकता है आपके अनुभवों को भविष्य में नए साधक पढ़ें, इससे उन सभी साधकों को लाभ हो सकता है। मगर उस समय तक मैंने अपने अनुभव नहीं लिखे थे। एक बार जून 1989 में हमें श्री माता जी ने मिरज में बुलाया, मुझे वहाँ पर एक-डेढ़ माह रहने का अवसर भी मिला। उस समय हमारी साधना में और तीव्रता आ गयी थी, तब अनुभव और अच्छे-अच्छे आने लगे थे, तब श्री माता जी के पतिदेव अण्णा जी ने मुझसे से कहा– आनन्द कुमार आप अपने अनुभवों को एक कॉपी में लिख लिया करें। श्री माता जी व कुछ साधकों ने अनुभवो को लिखने के लिये कहा था। फिर मैंने जून 1989 से अपने अनुभव लिखने शुरु कर दिये था, मगर सितम्बर 1984 से मई 1989 तक जो अनुभव ध्यानावस्था में आये थे उन अनुभवों को नहीं लिखा गया था। इन अनुभवों को मैंने अक्टूबर 1994 में लिखे थे। लगभग 10 वर्ष बीत जाने के बाद हमें जो अनुभव याद आये तथा जिन अनुभवों को लिखना उचित समझा सिर्फ वही अनुभव लिखे थे।

सितम्बर 1984 की बात है, मैं उस समय दिल्ली में नौकरी करता था, मैं ड्यूटी करके अपने कमरे पर लगभग 5.30 बजे शाम को आ जाया करता था। कमरे पर आने के बाद हमें किसी प्रकार का कोई काम नहीं करना पड़ता था, इसलिए खाली समय में मैं सामान्य ज्ञान व कहानियों की पुस्तकें पढ़ा करता

था। मैं पड़ोसियों व मित्रों से ज्यादा मेल-जोल नहीं रखता था, हमें एकांत ज्यादा अच्छा लगता था, एक दिन हमारे पास कोई भी पुस्तक पढ़ने के लिए नहीं थी, तब सोचा खाली समय में क्या करूँगा इसलिए पड़ोसी मित्र के पास गया, मैंने उससे पुस्तक पढ़ने के लिए माँगी, तब मित्र बोला– इस समय तो हमारे पास किसी प्रकार की पुस्तक नहीं है, एक आध्यात्मिक पुस्तक पड़ी हुई है, चाहो तो उसे पढ़ सकते हो। मैं बोला– आप हमें वही पुस्तक दे दीजिए, मैं अपना समय उसी पुस्तक के साथ व्यतीत कर लूँगा। उस मित्र ने हमें एक पुस्तक दे दी, पुस्तक की हालत बहुत खराब थी, टाइटल व कुछ पेज पुस्तक से गायब थे। मैं वह पुस्तक लेकर अपने कमरे में आ गया, फिर मैंने शुरूआत से उस पुस्तक को पढ़ना शुरू कर दिया, लेकिन कुछ पेज पढ़ने के बाद हमें उस पुस्तक में कोई रूचि नहीं हुई, मगर फिर सोचा– चलो इसे पढ़ लो पढ़ने में क्या हर्ज है, आखिरकार समय ही तो व्यतीत करना था। जब मैंने 8-10 पेज जल्दी-जल्दी पढ़ लिए, तब इस पुस्तक में मेरी रूचि बढ़ गयी और मैं मन लगाकर पढ़ने लगा, रूचि इतनी बढ़ गयी कि पुस्तक बन्द करने की इच्छा ही नहीं हो रही थी। मैंने इस पुस्तक को लगभग 2-3 घण्टे पढ़ा, फिर बन्द करके रख दी। मैंने अपने लिये खाना बनाया और खाना खाकर सो गया, क्योंकि रात्रि काफी हो चुकी थी।

दूसरे दिन जब ड्यूटी से वापस आया, तब अपने कमरे में फिर से वही पुस्तक पढ़ने लगा। इस पुस्तक में इतनी ज्यादा रूचि बढ़ गयी कि सारी पुस्तक रात्रि के साढ़े दस बजे तक पढ़ डाली। अब हमारे अन्दर भी तीव्र इच्छा जाग्रत हुई कि क्या मैं भी साधना कर सकता हूँ? क्या मुझे भी सफलता मिल सकती है? पुस्तक के अंत में कुछ पेजों पर साधना करने का तरीका लिखा था। तथा लेखिका ने यह भी लिखा था, यदि आप योग के विषय में हमसे कुछ पूछेंगे तो मैं अवश्य बताऊँगी, तथा उन्होंने अपना पता भी लिखा था। मैंने निश्चय किया मैं भी ध्यान करूँगा, कभी-न-कभी सफलता अवश्य मिलेगी। यदि मनुष्य किसी भी कार्य को दृढ़ता से, परिश्रम व लगन से करे तो सफलता क्यों नहीं मिलेगी। जिस पुस्तक का वर्णन मैंने अभी किया है, ये पुस्तक हमारे गुरूदेव श्री माता जी द्वारा लिखी हुई थी। उस पुस्तक का नाम था 'किसी एक की साधना गाथा।' इस पुस्तक में गुरूदेव श्री माता जी के अनुभव लिखे हुए थे यह अनुभव उन्हें अपने साधना काल में आये थे।

पहली बार ध्यान पर बैठा

रात्रि के ग्यारह बज रहे थे, सोचा बाद में खाना बनाएंगे, पहले पुस्तक में बताई गयी विधि के अनुसार ध्यान करूँगा। फर्श पर आसन लगाकर मैं बैठ गया, मुझे भगवान शंकर अच्छे लगते है इसीलिए मैंने अपने कमरे में भगवान शंकर की विभिन्न मुद्राओं की फोटो लगा रखी थीं। उनमें से एक फोटो को अपने सामने रखकर उसकी पूजा की तथा भगवान शंकर से प्रार्थना की– ''कृपया आप हम पर प्रसन्न होकर, कृपा कीजिएगा तथा आशीर्वाद दीजिए कि मैं सफल योगी बँनू''। पुस्तक में बताई गयी विधि के अनुसार मैं रीढ़ सीधी करके बैठ गया, थोड़ी देर तक मैं चुपचाप बैठा रहा। कुछ क्षणों के बाद हमें ऐसा लगा कि मैं कुछ बेसुध सा होता जा रहा हूँ, बाद में हमें अपना होश नहीं रहा। जब मेरी आँखें खुली तो पाया शरीर के अन्दर एक विशेष प्रकार की क्रिया सी हुई जिसका वर्णन मैं नहीं कर सकता हूँ। मन प्रसन्न था, आसन से उठकर खड़ा हो गया, घड़ी पर निगाह डाली तब मैं चौंक पड़ा, चौंकने का कारण था घड़ी में ग्यारह बजकर चालीस मिनट हो चुके थे, मैं तो ग्यारह बजे ध्यान पर बैठा था फिर चालीस मिनट कैसे बीत गये, चालीस मिनट का समय बहुत लम्बा होता है? मुझे ऐसा लगा था– मैं पाँच मिनट तक बैठा रहा हूँ, सोचा शायद ध्यान पर बैठते समय घड़ी देखने में गड़बड़ी हो गयी होगी। फिर मैंने खाना बनाया और खाया, तब तक रात्रि का एक बज चुका था, इसलिए मैं तुरन्त सो गया।

दूसरे दिन मैं सुबह साढ़े तीन बजे जाग गया क्योंकि ध्यान पर बैठना था। मन बहुत प्रसन्न हो रहा था, तीव्र इच्छा भी जाग्रत हो गयी थी, कि मुझे अब रोजाना ध्यान करना है। सुबह उठकर नित्य-क्रिया से फुर्सत होकर 4 बजे ध्यान पर बैठ गया, अबकी बार घड़ी को गौर पूर्वक देखा, ताकि समय में कोई गड़बड़ी न हो, घड़ी सुबह के चार बजा रही थी। मैं आसन पर बैठ गया फिर भगवान शंकर की स्तुति की और अपनी आँखें बन्द कर ली। आँखें बन्द करते ही मैं अपनी सुधबुध खो गया, कुछ समय बाद मेरी आँखें खुल गयी, मन अत्यंत प्रसन्न हो रहा था, शरीर में आलस्य का नामोनिशान नहीं था। अब मैंने घड़ी की ओर निगाह डाली तो देखा– घड़ी पाँच बजा रही थी, मैं फिर आश्चर्यचकित हुआ, एक घन्टा समय कैसे बीत गया हमें मालूम नहीं हुआ। अभी मैं अपने आसन पर बैठा हुआ था, उठने की इच्छा नहीं हो रही थी। आँखें स्वमेव बन्द हो रही थी, ऐसा लगता था अभी और ध्यान पर बैठा रहूँ। मगर सुबह के पाँच बज रहे थे इसलिए उठकर खड़ा हो गया, खड़े होने पर हमें महसूस हुआ कि हमें थकान सी हो गयी है, मैं चारपायी पर लेट गया। अब मैं सोचने लगा कि आँखें बन्द करने पर एक घन्टा कैसे व्यतीत हो गया। यह भी निश्चित था कि मैं ध्यान पर बैठकर सोया नहीं था, अब मेरे अन्दर इच्छा शक्ति और बढ़ गयी, मैं

अवश्य ध्यान करूँगा तथा कठोर परिश्रम करूँगा। अब मेरे अन्दर विचार आया हमें साधक बनना है, इसके लिए हमें चाहे जितना त्याग करना पड़े। श्री माता जी की पुस्तक पढ़कर ज्ञात हो चुका था, मनुष्य का कर्म यदि अच्छा हो तो साधना में शीघ्र सफलता मिलती है। मगर साधना काल में मनुष्य को अपने पिछले कर्मों का फल भी भोगना पड़ता है, हमें तो अपने पिछले जन्मों के कर्म मालूम नहीं हैं। हाँ, अब अवश्य मैं अच्छे कर्म करूँगा जिससे मेरी साधना में प्रगति हो।

मैं सुबह खाना बना खाकर नौ बजे ड्यूटी पर चला गया। सायंकाल साढ़े पाँच बजे आया, कुछ समय तक आराम करके छः बजे शाम को फिर ध्यान पर बैठ गया, अबकी बार भी एक घण्टे का समय ध्यान करने में लग गया। मैं समझ गया शायद हमारा ध्यान लग जाता है इसीलिए एक घन्टा मालूम नहीं पड़ता है। रात्रि के ग्यारह बजे ध्यान के लिए मैं फिर बैठ गया, आधे घण्टे का ध्यान लगा, बारह बजे रात्रि को मैं सो गया। सुबह उठकर नित्य क्रिया से फुर्सत होकर 4 बजे फिर ध्यान करने के लिये बैठ गया, एक घण्टे का ध्यान किया। हमारा अब रोजाना का नियम बन गया था, सुबह चार बजे ध्यान करता था, सायंकाल 6 बजे ध्यान करता था, फिर रात्रि में ग्यारह बजे ध्यान करता था। इस प्रकार शुरूआत में हमारा ध्यान एक दिन में 2.30 घण्टे का हो जाता था।

प्राण वायु मूलाधार चक्र पर

प्रतिदिन ध्यान करते हुए हमें चार-पाँच दिन गुजर गये थे, सायंकाल के समय मैं ध्यान कर रहा था, तभी ध्यान की गहराई में डूब गया। फिर कुछ समय बाद हमें होश सा आने लगा, उस समय मुझे महसूस हुआ रीढ़ के बिलकुल निचले स्थान पर अर्थात मूलाधार चक्र में कुछ हो रहा है, अब हमारा ध्यान मूलाधार चक्र पर केंद्रित हो गया। कुछ समय बाद उस स्थान पर हल्का-हल्का दर्द सा या गुदगुदी सी महसूस होने लगी थी, यह दर्द बड़ा विचित्र सा था, दर्द होते हुए भी मुझे अच्छा लग रहा था। उस स्थान पर थोड़ी-सी गर्मी भी महसूस हो रही थी, इस गर्मी के कारण निचले भाग में पसीना निकल रहा था। कुछ समय बाद वह दर्द स्पष्ट होने लगा। ऐसा लग रहा था जैसे वायु गोलाकर रुप में गोल-गोल घूम रही है, जब हमें वायु का आभास हुआ तब पहले से दर्द थोड़ा और बढ़ सा गया था मगर हमारे अन्दर बड़ी प्रसन्नता हो रही थी। मैं और दर्द सहने के लिये तैयार था मगर दर्द ज्यादा नहीं बढ़ा। अब ध्यानावस्था में हमें महसूस हुआ हमारा स्थूल शरीर थक सा रहा है, हमने अपनी आँखें खोल दी अर्थात हमारा ध्यान टूट गया।

ध्यान टूटते समय हृदय के अन्दर से आवाज आयी– “जिस वस्तु का तुम अनुभव कर रहे थे वह तुम्हारी प्राण वायु है, तुम्हारी प्राण वायु का ऊर्ध्व होना शुरू हो गया है”। जब मैं ध्यान पर बैठता था तभी कुछ समय बाद ही यह प्राण वायु महसूस होने लगती थी। अब मैं नियमित ध्यान किया ही करता था इसके साथ ही ईश्वर का नाम-जपना भी शुरू कर दिया था। नाम जपने की इच्छा स्वमेव जाग्रत हो गयी थी, ध्यानावस्था में 15 दिनों तक हमें महसूस होता रहा कि हमारी प्राण वायु इसी जगह पर गति कर रही है।

प्राण वायु स्वाधिष्ठान चक्र पर

लगभग 15 दिनों तक प्राण वायु मूलाधार चक्र पर महसूस होती रही, मगर फिर ऐसा लगने लगा कि प्राण वायु ऊपर की ओर रीढ़ के सहारे चढ़ने का प्रयास कर रही है। जब ऊपर की ओर चढ़ने का प्रयास करती थी उस समय हल्का सा दर्द सा होने लगता था, मगर मन में प्रसन्नता होती थी। कुछ दिनों के बाद प्राण वायु मूलाधार चक्र से थोड़ी ऊपर की ओर चली जाती थी, मगर कुछ क्षणों बाद वापस नीचे मूलाधार चक्र पर आ जाती थी। जब हमारा मन थोड़ा सा एकाग्र होता था तब फिर प्राण वायु ऊर्ध्व होने लगती थी, बस यही क्रिया हुआ करती थी। कुछ दिनों के बाद प्राण वायु स्वाधिष्ठान चक्र पर आ गयी, हमें अच्छी तरह महसूस हो रहा था, अब प्राण वायु स्वाधिष्ठान चक्र पर आकर रुकने लगी है। पहले कुछ दिन ऐसा हुआ– कि प्राण वायु स्वाधिष्ठान चक्र पर थोड़ी देर तक रुक जाती थी फिर वापस नीचे आकर मूलाधार चक्र में ठहर जाती थी फिर कुछ समय बाद हमारा ध्यान टूट जाता था।

कुछ दिनों में प्राण वायु स्वाधिष्ठान चक्र पर स्थिर हो गयी तथा पहले की अपेक्षा ध्यान में रूचि और बढ़ गयी। कभी-कभी ध्यानावस्था में कुछ विशेष प्रकार के विचार आने लगते थे। मैं सोचता था हमें ऐसे गन्दे विचार क्यों आ रहे हैं? मैंने सोचा-हमारे अन्दर की गन्दगी निकल रही है, बाद में मालूम हुआ स्वाधिष्ठान चक्र जननेंद्रिय के स्थान पर है, प्राण वायु स्वाधिष्ठान चक्र में होने के कारण जननेंद्रिय पर हल्का सा प्रभाव पड़ता था इसलिए ऐसे विचार आया करते थे। इस चक्र पर प्राण वायु लगभग एक सप्ताह तक रूकी, फिर यहाँ से भी प्राण वायु ऊर्ध्व होने का प्रयास करने लगी। मूलाधार चक्र व स्वाधिष्ठान चक्र पर साधकों को अनुभव नहीं आते हैं अक्सर ऐसा देखा गया है, सिर्फ प्राण वायु ही महसूस होती है। ज्यादातर हमने यह भी अनुभव किया है कि साधकों को मूलाधार चक्र और स्वाधिष्ठान चक्र पर प्राण वायु

भी महसूस नहीं होती है, इसका यह अर्थ नहीं है कि उनकी साधना नहीं हो रही है। ध्यान लगने पर साधक के अन्दर प्रसन्नता बढ़ती है तथा हल्की-सी चैतन्यता की बढ़ोत्तरी सी होती है।

प्राण वायु नाभि चक्र पर

अब प्राण वायु धीरे-धीरे स्वाधिष्ठान चक्र से भी ऊर्ध्व होने का प्रयास करने लगी। जब प्राण वायु अपने पहले वाले स्थान से ऊपर की ओर चढ़ती है तब साधक को हल्की-सी दर्द की अनुभूति होती है। जब उस स्थान पर कई बार प्राण वायु आती जाती रहती है अथवा ठहर जाती है तब फिर दर्द सा महसूस नहीं होता है बल्कि गुदगुदी सी महसूस होने लगती है। प्राण वायु धीरे-धीरे ऊर्ध्व होकर नाभिचक्र पर आ गया, कुछ दिनों तक मात्र कुछ क्षणों के लिए नाभि चक्र पर आता था फिर थोड़ा सा नीचे आकर स्थिर हो जाता था, मगर अभ्यास बढ़ने पर प्राण वायु नाभिचक्र पर ठहरने लगा, अब यहाँ पर ध्यान पहले की अपेक्षा अच्छा लगता था। तब मैं अपने आपको कुछ समय के लिए भूल जाता था। यह बिलकुल याद नहीं रहता था कि मैं ध्यान कर रहा हूँ, लेकिन कुछ समय बाद मुझे अपनी याद आने लगती थी कि मैं ध्यान कर रहा हूँ।

इस अवस्था में हमें विशेष तरह की अनुभूति होने लगी थी, ध्यान पर बैठने के बाद हमें ऐसा लगता था कि हमारे शरीर के अन्दर सनसनाहट सी हो रही है फिर मैं अपने आपको भूल जाता था। मुझे ध्यानावस्था में दिखाई देता था– "मैं गहरे अंधकार में खड़ा हूँ और उसी गहरे अंधकार में आगे की ओर चला जा रहा हूँ, अंधकार एकदम कोयले के समान काला है, हमें अपना शरीर भी दिखाई नहीं दे रहा था। बस ऐसा लगता था, मैं घनघोर अंधकार में आगे की ओर बढ़ा जा रहा हूँ, इस अंधकार में अपने आपको अकेला पाकर हमारे अन्दर डर सा महसूस होता था, इस डर के कारण हमारा ध्यान टूट जाता था"। मैं आँखें खोल देता था, फिर ध्यान करने लगता था, जब ध्यान करने लगता था तब फिर वही अंधकार में मैं अपने आपको खड़ा पाता था। इसी प्रकार कुछ दिनों तक ध्यान करता रहा, फिर मैंने सोचा– कि यह कैसा योग है, मैं अंधकार को क्यों देखता हूँ और उसी में अपने आपको पाता हूँ। मगर मैंने दृढ़ता से काम लिया और विचार किया कि साधना करते रहो कब तक अंधकार दिखाई देगा, कभी-न-कभी यह अंधकार समाप्त हो जायेगा। अथवा इस अंधकार में आगे क्या होता है यह देखता हूँ।

कुछ दिनों तक यही अनुभव आता रहा कि मैं अंधकार में कहीं चला जा रहा हूँ। फिर एक दिन अनुभव आया, मैं अंधकार में चला जा रहा हूँ, उसी अंधकार में हमसे दूरी पर आग जल रही है, मैं आग की ओर चला जा रहा हूँ। जब मैं सुबह-शाम या रात्रि के समय ध्यान पर बैठता था तब यही अनुभव आता था, कि मैं अंधकार में आगे की ओर चला जा रहा हूँ, आगे की ओर काफी दूरी पर आग जल रही है आग की लपटें ऊँची-ऊँची उठ रही हैं, ये लपटें इतनी ऊँची होती थी, मानो आसमान को छू रही हो। मैं आग की लपटों ओर बढ़ता चला जा रहा हूँ अब आग हमारे निकट आ गयी, कुछ समय बाद यह आग अपने आप दिखनी बन्द हो जाती थी। तभी हमें अपना होश आने लगता था कि मैं ध्यान कर रहा हूँ। ध्यान स्वयं समाप्त हो जाता था। मैं अपनी आँखें खोल देता था।

जब कुछ दिनों तक ध्यानावस्था में यही अनुभव आता रहा, तब हमारे अन्दर भय सा होने लगा, कि अब क्या करूँ यह अंधकार और आग क्यों दिखाई देती है। मैं अंधकार में दौड़ता हुआ क्यों चला जा रहा हूँ? इस प्रकार के विचार हमारे मन के अन्दर आने लगे, तब मैं सोचने लगा– कि अब मैं क्या करूँ, किससे पूछूँ कि ये सब क्या है, यह तो ध्यानावस्था में दिखाई देता है, योग की बात है, कौन बताएगा? मैंने सोचा– क्यों न उन श्री माता जी को पत्र लिखूँ जिनकी पुस्तक पढ़कर मैंने साधना करने की शुरुआत की है, शायद वह हमें कुछ उत्तर दे दें। क्योंकि उन्होंने पुस्तक के अंत में लिखा है– यदि कोई साधक योग के विषय में मुझसे पूछेगा तो मैं उसका योग का मार्ग दर्शन अवश्य करूँगी।

कुछ दिनों बाद मैंने लम्बा सा पत्र श्री माता जी को लिखा। उस पत्र में लिखा– "मैंने आपकी पुस्तक पढ़कर साधना करना शुरू कर दिया है, साधना के विषय में भी संक्षेप में लिखा, हमारे प्राणों की स्थिति इस समय नाभिचक्र पर है, ध्यानावस्था में अंधकार दिखाई देता है, मैं उस अंधकार में आगे की ओर दौड़ता हुआ चला जा रहा हूँ कुछ समय बाद जलती हुई आग दिखाई देती है आग की लपटें ऊँची-ऊँची उठ रही होती हैं, जो आसमान को छूती हुई सी प्रतीत होती हैं। बार-बार यही अनुभव आता है इसलिए मुझे डर सा लगता है। अब मैं ध्यानावस्था में डरा-डरा-सा रहता हूँ। कृपया आप हमारा मार्गदर्शन कीजिएगा, तथा अपनी पूरी जीवनी संक्षेप में लिखी"।

पत्र तो मैंने श्री माता जी को लिखकर भेज दिया मगर साधना नियमित रुप से करता रहा था। धीरे-धीरे आग वाला अनुभव आना समाप्त हो गया। अब मेरा डर भी दूर हो गया था, फिर मेरी प्राण वायु भी नाभिचक्र से ऊपर की ओर उठने लगी, जैसे-जैसे अभ्यास बढ़ता जाता था, वैसे-वैसे हमारी इच्छा योग

करने के लिए और तीव्र होती जाती थी, ऐसा लगने लगा कब हमारी ड्यूटी समाप्त हो, और मैं कमरे में जाकर ध्यान करूँ।

भगवान विष्णु के दर्शन

मैं रोजाना की भाँति आज सुबह का ध्यान कर रहा था। हमें अचानक हल्का सा प्रकाश दिखाई देने लगा, उस प्रकाश में एक आकृति सी उभरनी शुरू होने लगी, वह आकृति जब स्पष्ट हुई तब हमारी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। क्योंकि हमारे सामने चतुर्भुज रुप में भगवान विष्णु पीताम्बर पहने हुए, चारों हाथों में शंख, चक्र, गदा व पद्म धारण किये हुए खड़े थे। मैंने उन्हें प्रणाम किया, वह सिर्फ मुस्करा रहे थे। मैं उन्हें गौर पूर्वक देख रहा था उनका बहुत ही सुन्दर स्वरुप था। कुछ समय बाद भगवान विष्णु अंतर्ध्यान हो गये, हमारी आँखे खुल गयी। ध्यानावस्था में हमारा यह पहला अनुभव था। मैं अनुभव के कारण बहुत प्रसन्न हो रहा था क्योंकि ध्यान में भगवान विष्णु के दर्शन हो गये थे, मैंने सोचा भविष्य में भी भगवान विष्णु के दर्शन होंगे, इस आशा के साथ मैं खुश हो रहा था। इस अनुभव को आये लगभग दस वर्ष (1986) हो गये है मगर हमें आज भी यह अनुभव अच्छी तरह से याद है।

प्राण वायु हृदय चक्र पर

प्राण वायु धीरे-धीरे नाभिचक्र से ऊर्ध्व होकर हृदयचक्र की ओर आने लगी, कुछ दिनों में प्राण वायु हृदय चक्र में आकर स्थिर होने लगी। अब हमारा ध्यान धीरे-धीरे एक घण्टे से थोड़ा ज्यादा लगने लगा। साधकों! जब किसी साधक की प्राण वायु हृदयचक्र पर आ जाये तब यहाँ पर बहुत अच्छे-अच्छे अनुभव आते हैं, साधक को इस अवस्था में बहुत मजा आता है, ऐसा लगता है कि मैं सदैव ध्यान पर ही बैठा रहूँ। इसका कारण है इस चक्र पर साधक को उसके इष्टदेव के दर्शन होते हैं तथा प्रकाश भी दिखाई देता है। जब हमारा प्राण वायु इस चक्र पर आया, तब हमें भी प्रकाश दिखाई दिया था। यह प्रकाश रोजाना दिखाई देता था, ऐसा लगता था मानो चारों ओर चाँदनी जैसा प्रकाश फैला हुआ है, उस सफेद उज्ज्वल प्रकाश में मैं घूम रहा हूँ। कभी-कभी बर्फीले पहाड़ दिखाई देते थे, कभी-कभी हरा-भरा जंगल दिखाई देता

था, कभी-कभी समुद्र दिखाई देता था। तथा कभी-कभी उगता हुआ सूरज दिखाई देता था। कभी-कभी बहता हुआ झरना दिखाई पड़ता था। इसी प्रकार के ढेरों अनुभव आये, सभी अनुभवों को मैं लिख नहीं सकता हूँ। क्योंकि दस वर्ष हो गये अब ज्यादा अनुभव याद भी नहीं हैं, सिर्फ जो अनुभव याद हैं और उनमें से जो प्रमुख अनुभव हैं उन्हीं को लिख रहा हूँ।

मैंने कुछ दिन पूर्व अनुभव लिखकर श्री माता जी के पास पत्र भेजा था उसका जबाब हमें 20 दिन बाद प्राप्त हो गया। पहले मैंने सोचा था– पता नहीं श्री माता जी पत्र का जबाब देंगी अथवा नहीं देंगी, मगर हमें श्री माता जी के हाथ द्वारा लिखा पत्र प्राप्त हुआ, तब मुझे बहुत प्रसन्नता हुई थी। श्री माता जी ने लिखा था– "जब साधक की साधना नाभिचक्र पर होती है उस समय उसे जलती हुई अग्नि दिखाई देती है, क्योंकि वह अग्नि का स्थान है, अब आप सोचिए आपको स्वच्छ पानी दिखाई दे और उस पानी में कमल खिला हुआ हो"। साथ ही मृत्युंजय मंत्र एक कागज में छपा हुआ भेजा था तथा उन्होंने पत्र में लिखा था– "इस मंत्र को ध्यान करने से पूर्व ग्यारह बार जाप कीजिए, आपका डर समाप्त हो जायेगा"। मैं ध्यान करने से पूर्व ग्यारह बार मृत्युंजय मंत्र का जाप करने लगा। ध्यान में बैठकर स्वच्छ पानी व कमल के विषय में भी सोचने लगा। कुछ दिनों बाद ध्यानावस्था में स्वच्छ पानी दिखाई देने लगा, उसी पानी में कमल का खिला हुआ फूल दिखाई देने लगा। शुरूआत में गंदा पानी दिखाई देता था, फिर धीरे-धीरे स्वच्छ पानी का बहता हुआ झरना दिखाई पड़ने लगा। एक दो दिखाई दिया– स्वच्छ पानी का झरना पहाड़ से नीचे की ओर गिर रहा है, अब यह पानी मेरे ऊपर गिरेने लगेगा। एक बार मैं ध्यानावस्था से उठकर खड़ा हो गया, मुझे लगा पहाड़ के ऊपर से आया पानी झरने के रुप में हमारे ऊपर गिरने वाला है। कुछ दिनों बाद झरने के स्थान पर विशाल जलाशय दिखाई देने लगा, ऐसा लगता था मानो यह पानी समुद्र है, फिर उसी से उगता हुआ सूर्य सुबह की भाँति दिखाई देने लगा।

भगवान शंकर के दर्शन

अभ्यास बढ़ जाने के कारण प्राण वायु अब हृदय चक्र में आकर स्थिर होने लगी थी, रोजाना कई प्रकार के अनुभव ध्यानावस्था में देखा करता था। आजकल मैं ध्यान करने के लिए 3.30 बजे सुबह जागता था और चार बजे ध्यान पर बैठ जाता था। उस समय ऐसा लगता था– जैसे हृदय के पीछे रीढ़ में हवा की गोली गोलाकार रुप में घूम रही है, पीठ पर उस स्थान पर उष्णाता के कारण पसीना भी बहने

लगता था। उस समय मैं अनुभव देखा करता था– मैं सफेद उज्ज्वल प्रकाश में घूम रहा हूँ, फिर हमें बर्फीले पहाड़ दिखाई देने लगते थे। मैं उन पहाड़ों पर चढ़ जाता था और पहाड़ों पर घूमा करता था। कुछ दिनों बाद अनुभव आया– मैं बर्फीले पहाड़ों पर आगे की ओर चला जा रहा हूँ। कुछ समय बाद हमने देखा, भगवान शंकर एक ऊँचे स्थान पर बैठे हुए हैं, उनके साथ श्री माता पार्वती भी विराजमान हैं, उनका नन्दी (बैल) भी थोड़ी दूरी पर बैठा हुआ है, मैं उनसे थोड़ी दूरी पर खड़ा हुआ हूँ, मैंने दूर से ही भगवान शंकर व श्री माता पार्वती को प्रणाम किया, वह दोनों उत्तर में कुछ नहीं बोले, परंतु मुस्कराए अवश्य थे। थोड़ी देर तक मैं उन्हें टकटकी लगाये देखता रहा, फिर भगवान शंकर व श्री माता पार्वती जी अदृश्य हो गये। मैं भी वापस चल दिया।कुछ दूर चलने के बाद हमें हरा-भरा जंगल मिला, यह जंगल बड़ा मनमोहक था, मैं इस जंगल में चारों ओर विचरण करता रहा, उस जंगल में वृक्ष बहुत ऊँचे-ऊँचे थे, तेज हवा चल रही थी। तभी हमारी आँखें खुल गयी और ध्यान टूटने के कारण अनुभव भी समाप्त हो गया। इस प्रकार के अनुभव कई बार आये थे, जिसमें भगवान शंकर के दर्शन करने का सुअवसर प्राप्त हुआ था।

श्री माता जी के दर्शन

कुछ दिनों तक साधना करने के बाद हमारे मन में इच्छा जाग्रत हुई। जिसकी पुस्तक पढ़कर हमने योग का अभ्यास करना शुरू किया है, तथा पत्र द्वारा उन्होंने मार्ग दर्शन भी किया है। मैंने अपने मन के अन्दर उन्हें अपना सद्गुरू भी मान लिया है। तथा हमें योग में अभी से अनुभवों के रुप में सफलताएँ भी मिलने लगी हैं। ऐसी महान् योगिनी के हमें दर्शन क्यों नहीं होते हैं? मन में कई बार सोचा कि श्री माता जी के दर्शन हों, मगर दर्शन नहीं हुए। अब मैं थोड़ा दुःखी सा रहने लगा, कि हमें श्री माता जी के दर्शन क्यों नहीं होते हैं। बस हमारा मन इसी में लगा रहता था कि श्री माता जी के दर्शन हों, नौकरी में ड्यूटी के समय भी मैं चिंतित सा दिखाई देता था। कभी-कभी मित्र हमसे पूछते थे– "क्या बात है घर की याद आ रही है"। मैं कह देता था– यह बात नहीं है कोई अन्य कारण है जिससे मैं चिंतित रहता हूँ।

अब हमारे मन में आया– क्यों न श्री माता जी को पत्र लिखूँ, एक दिन मैं श्री माता जी को पत्र लिखने बैठ गया। पहले मैंने कुछ अपने अनुभव लिखे फिर मैंने लिखा– "श्री माता जी हमें आपके दर्शन क्यों नहीं होते हैं, मैंने कई बार संकल्प भी किया कि हमें आपके दर्शन हो मगर असफलता ही हाथ लगी। कृपया आप हम पर कृपा कीजिए हमें आपके दर्शन हों"। श्री माता जी का कुछ दिनों बाद हमें पत्र मिला,

पत्र मिलने के कारण मैं खुश होकर अपने कमरे में आ गया। मुझे मालूम था इस पत्र के अन्दर हमारे लिए अवश्य शुभ संदेश लिखा होगा, सबसे पहले मैं पत्र पढ़ने लगा, उसमें लिखा था– आपका भाव कमजोर पड़ता होगा इसलिये संकल्प भी कमजोर होता होगा, आप पूर्ण भाव से संकल्प कीजिए, मैं भी प्रभु से प्रार्थना करूँगी कि आपको मेरा दर्शन हो। मैं पत्र पढ़कर रोने लगा, कि मेरा भाव कहाँ पर कमजोर पड़ जाता है, यह मुझे मालूम नहीं है। फिर मैं खूब रोया, क्या मेरे मन में श्री माता जी के प्रति श्रद्धा नहीं है, मैं यही सोचने लगा। थोड़ी देर तक सोच मुद्रा में लेटा रहा, फिर हाथ पैर धोकर आसन पर ध्यान करने के लिए बैठ गया, पहले ग्यारह बार मृत्युंजय मंत्र का जाप किया, फिर ध्यान के लिए मैंने अपनी आँखे बन्द कर ली। आँखें बन्द करते ही बहुत तेज प्रकाश दिखाई दिया, प्रकाश इतना तेज था कि मेरी आँखें चकाचौंध सी हो गयी, सामने की ओर देखने की सामर्थ्य नहीं रही, ऐसा लगा मानो ढेरों सूर्य एक साथ प्रकाशित हो गये हों। उसी तेज प्रकाश में एक मानव छवि बनती हुई दिखाई दी। पल भर में वह छवि स्त्री रुप में प्रकट हो गयी, मैं तुरन्त समझ गया कि ये "श्री माता जी हैं"। कुछ क्षणों तक मैं श्री माता जी के स्वरुप की छवि हमारे सामने बनी रही, फिर श्री माताजी अदृश्य हो गयी। फिर अनुभव समाप्त हो गया और मेरी आँखें खुल गयी। यह अनुभव ध्यान पर बैठते ही आया था, हमने सिर्फ आँखें ही बन्द की थी, अभी ध्यान नहीं लगा था।

मैं दुबारा ध्यान करने के लिये बैठ गया। ध्यानावस्था में अनुभव आया– मैं ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों पर घूम रहा हूँ, ये पहाड़ सफेद बर्फ के बने हुए हैं, इन्हीं पहाड़ों पर बड़ें-बडें ऊँचे वृक्ष हैं तथा तीव्र गति से हवा भी चल रही है। कुछ समय तक मैं वहीं पर घूमता रहा, फिर हमारा ध्यान समाप्त हो गया। लगभग एक घण्टे का ध्यान लगा, श्री माता जी के दर्शन होने के कारण हमारा मन अत्यधिक प्रसन्न रहने लगा था। नौकरी में ड्यूटी का समय कब बीत जाता था यह मुझे मालूम नहीं होता था। क्योंकि मैं श्री माता जी की याद में खोया रहता था।

श्री माता जी के प्रत्यक्ष दर्शन की इच्छा

श्री माता जी को मैंने पत्र लिखा– "श्री माता जी हमें आपका दर्शन हो चुका है, अब हमारी तीव्र इच्छा हो रही है हम आपका प्रत्यक्ष दर्शन करें, मैं आपके पास आना चाहता हूँ, कृपया आप मुझे बताएँ– हम आपके पास किस रास्ते से आयें, क्योंकि हमें मिरज शहर के बारे में जानकारी नहीं है, यह शहर कहाँ

पर है। दिल्ली में आपके शिष्य कहाँ-कहाँ पर रहते हैं, मैं उनसे मिलना चाहता हूँ। अब हमारी बहुत इच्छा होती है कि सत्संगियो से मिलूँ, ताकि साधना के विषय में उनसे आपस में बातें कर सकूँ"। कुछ दिनों बाद श्री माता जी का पत्र आया– "उसमें दिल्ली के दो सत्संगियों के पते लिखे हुए थे, तथा मिरज आने के लिए आज्ञा दे दी थी, श्री माता जी ने यह भी लिखा था– हमें बहुत खुशी है आपने कम उम्र में ही साधना करना शुरू कर दिया है, हम आप जैसे नई पीढ़ी के युवकों का मार्ग दर्शन अवश्य ही करेंगे"।

श्री माता जी ने पत्र में दिल्ली के दो साधकों के पते पत्र में लिखकर भेज दिये थे। मैं कुछ दिनों बाद उन साधकों के पास गया था, हमारा और उन साधकों का आपस में परिचय हुआ, फिर श्री माता जी के विषय में बातचीत हुई तथा मैंने उन साधकों को अपने अनुभव भी सुनाये और यह भी बताया, मैं शीघ्र ही श्री माता जी के पास जाने वाला हूँ। आजकल मैं सदैव श्री माता जी के विषय में सोचा करता था, तथा हमारे अन्दर एक ही धुन सवार रहती थी मैं अब ज्यादा से ज्यादा साधना करूँगा। अब हमारे विचार अपने आप बदलने लगे। मुझे याद आ रहा है– बचपन से लेकर साधना शुरू करने तक, हमारे अन्दर ईश्वर के प्रति बहुत ही खिचाव रहता है, मैं मन्दिरों में भी जाता हूँ, तथा पूजा-पाठ आदि में भी बहुत रूचि लेता हूँ। हमें मन्दिरों की सन्दुर मूर्तियाँ बहुत ही पसन्द है, मैं पूर्ण रुप से आध्यात्मिक सोच वाला था। मैं ढेरों आध्यात्मिक पुस्तकें भी पढ़ा करता था, धार्मिक पुस्तकों का संग्रह भी मैंने बहुत कर रखा है।

अब हमारा स्वभाव ऐसा बन गया है, कि रात-दिन सदैव ईश्वर को याद करता रहता हूँ। ईश्वर के सिवाय अब कुछ भी अच्छा नहीं लगता है। साधना करने के कारण अब रात्रि में नींद भी कम आती थी। मैं सोचा करता था– "कब सुबह के 3.30 बजें और मैं ध्यान पर बैठूँ"। यही रोजाना क्रिया किया करता था, कभी-कभी हमारे पड़ोसी कहते थे क्या बात है आज-कल आप बहुत सुबह स्नान किया करते हो और फिर सो जाते हो। उत्तर में मैं सिर्फ इतना कहता था– मुझे सुबह स्नान करने की आदत है। पड़ोसियों को मालूम नहीं था, कि मैं क्या किया करता हूँ। हमारे मित्र भी कहते थे– "क्या बात है अब तू गुमसुम सा रहता है"। अब हमारी आदतों में भी सुधार आने लगा था– किसी से मजाक करना, ज्यादा हँसना आदि अच्छा नहीं लगता था, अपने काम-से-काम रखता था। हमें बचपन से ही भगवान शंकर अच्छे लगते थे, यह मालूम नहीं ऐसा क्यों था? अगर सुन्दरता की दृष्टि से देखा जाय तो भगवान श्री कृष्ण जी का स्वरुप भी बहुत सुन्दर है, मगर हमारा श्री कृष्ण जी की ओर कोई झुकाव नहीं था, हमें भगवान शंकर ही ध्यानस्थ मुद्रा में अच्छे लगते थे।

एक बार मैं ध्यान कर रहा था ध्यान में अनुभव आया– सफेद उज्ज्वल प्रकाश फैला हुआ है, सफेद बर्फीले पहाड़ हैं, वायु भी तीव्र गति से चल रही है, मैं पहाड़ों पर घूम रहा हूँ। कुछ क्षणों में देखा– हमसे थोड़ी दूर एक बर्फीली पहाड़ी पर श्वेत वस्त्रधारी एक स्त्री घूम रही है। कभी-कभी यह स्त्री खड़ी होकर हमारी ओर देखती है, फिर कभी वह पहाड़ों पर घूमने लगती है। मुझे याद आ रहा है इस प्रकार के अनुभव हमने पहले भी देखे थे, यह स्त्री कुझे कई बार दिखाई दी थी, मगर मैं इसे पहचान नहीं पाता था क्योंकि मैंने इसे पहले कभी देखा ही नहीं था। मैं सोचा करता था– "हमारी समझ में नहीं आता है यह स्त्री हमें बार-बार क्यों दिखाई देती है"। मैं इस स्त्री के दर्शन देने का अर्थ नहीं लगा पाया करता था, मगर मैं सोचा अवश्य करता था– ये स्त्री हमें अक्सर क्यों दिखाई देती है, इसके दिखाई देने से मुझे कोई आपत्ति नहीं है, क्योंकि उसका स्वरुप बहुत ही सुन्दर था चेहरे पर बिलकुल शांति थी, आँखों में स्थिरता थी तथा सफेद साड़ी में अच्छी लग रही थी। मैंने निर्णय किया– "यह कोई साधारण स्त्री नहीं है, क्योंकि देखने से लगता है यह कोई अद्वितीय स्त्री है तभी तो ध्यान में बार-बार दिखाई देती है। मैं अपनी श्री माता जी को याद किया करता था मगर उनका दर्शन हमें नहीं होता था। इस स्त्री की उम्र लगभग 50-55 वर्ष की होगी, मैंने ऐसा अंदाज लगाया करता था। तथा उसका शरीर थोड़ा भारी सा था।

भगवान शंकर के दर्शन

हमने श्री माता जी की पुस्तक में पढ़ा था जब साधक की साधना हृदय चक्र में होने लगती है, तब साधक को यहाँ पर विभिन्न प्रकार के बहुत से दर्शन होने लगते हैं, यहीं पर साधक को अपने इष्ट के भी दर्शन होते हैं। अब हमारे अन्दर तीव्र इच्छा जाग्रत हुई कि मुझे भी भगवान शंकर के दर्शन हो, मैंने ध्यानावस्था में भगवान शंकर का स्मरण किया, तथा उनसे प्रार्थना की– "हे प्रभु! हमें आपके दर्शन हों, हमारे अन्दर आपके दर्शन करने की तीव्र इच्छा जाग्रत हुई है"। फिर कुछ दिनों बाद ध्यानावस्था में हमें भगवान शंकर के दर्शन हो गये। मैंने देखा– सामने ओर बहुत ऊँची-ऊँची पहाड़ की चोटियों पर बर्फ फैली हुई हैं, सबसे ऊँची चोटी पर थोड़ी सी समतल जगह है, उस समतल जगह पर छोटा सा चबूतरानुमा स्थान है, उस चबूतरे के ऊपर व्याघ्र चर्म पर भगवान शंकर ध्यानस्थ मुद्रा में बैठे हुए हैं। उनका त्रिशूल भी एक ओर बर्फ में गड़ा हुआ है तथा त्रिशूल में डमरू भी बँधा हुआ है, वहीं पर एक ओर नन्दी (बैल) बैठा हुआ है। यह जगह सफेद उज्ज्वल प्रकाश से युक्त है, चारों ओर बर्फ ही बर्फ फैली हुई है, यहाँ पर किसी प्रकार

का शोरगुल बिल्कुल नहीं है और न ही किसी प्रकार का कोई वृक्ष है, हवा भी नहीं चल नहीं रही है, बिल्कुल शांति-ही-शांति है। यह दृश्य कुछ समय तक देखता रहा, मैं बहुत प्रसन्न हो रहा था, फिर हमारा ध्यान टूट गया। मेरा ध्यान एक घण्टे तक लगा रहा।

ध्यान करने के बाद हमें थकान सी महसूस हुई। मैं आसन से उठकर चारपायी पर लेट गया और थोड़ा सा आराम किया। आज-कल अक्टूबर-नवम्बर के दिन थे। दिल्ली में इन दिनों हल्की-हल्की सर्दी पड़ने लगती है, मगर ध्यानवस्था में हमारे कपड़े पसीने से भीग जाते थे। 10-15 मिनट आराम करने के बाद मैं चारपायी से उठा और खाना बनाना शुरू कर दिया। मैं अपना खाना स्वयं बनाया करता था मुझे होटल में खाने की आदत नहीं थी। ऐसी आदत हमारी शुरू से रही, मुझे होटल का खाना पसन्द नहीं था इसलिए मैं अपने हाथों से खाना बनाया करता था। मैंने अपने ध्यान करने के समय में भी थोड़ा परिवर्तन कर लिया था– अब मैं सांयकाल को 6.30 से 7.30 बजे तक ध्यान किया करता था। 7.30 से 8.30 बजे तक खाना बना कर खा लेता था ताकि खाना थोड़ा हजम हो जाये। फिर रात्रि में 10 बजे ध्यान करने के लिए दुबारा बैठ जाता था, आधे घण्टे तक ध्यान किया करता था। 10.30 से 11.30 बजे तक नौकरी से सम्बन्धित पुस्तकों का अध्ययन किया करता था, फिर मैं सो जाता था। सुबह लगभग तीन बजे जाग जाता था, आधे घण्टे में तैयार होकर 3.30 बजे से 4.30 बजे तक ध्यान किया करता था, 4.30 से 5 बजे तक आराम करता था। फिर 5 से 6 बजे तक ध्यान करने के लिये दुबारा बैठ जाता था, उसके बाद खाना बनाकर और खाकर 9 बजे सुबह काम पर चला जाता था। शाम 5.30 बजे कमरे पर वापस आ जाता था। इस प्रकार मैं दिन में साढ़े तीन घण्टे तक ध्यान किया करता था तथा सम्पूर्ण दिन मन के अन्दर “ॐ नमः शिवाय” का जाप करता रहता था।

अब आप समझ सकते हैं, मैं साधना करने के लिए कितना उत्सुक था। यह दिनचर्या हमारी साधना के शुरूआत में थी, हमसे किसी ने नहीं कहा था कि आप इतनी साधना कीजिए, साधना के प्रति तो हमारी जबरदस्त लगन लगी हुई थी। अब मैं बहुत व्यस्त रहने लगा था तथा हमारा इधर-उधर घूमना पूरी तरह से बन्द हो चुका था, कभी-कभी हमें स्वयं अपने आप पर अचरज होता था कि हमें साधना का भूत कैसे सवार हो गया है। पहले तो मैं ऐसा नहीं था अब इतना बदलाव कैसे आ गया, हमें इस मार्ग पर अग्रसित करने वाला कोई नहीं था। हाँ, श्री माता जी की पुस्तक ही हमारी मार्ग दर्शक थी, और अब श्री माता जी से भी पत्र व्यवहार शुरू हो गया था।

आजकल हमें भगवान शंकर के दर्शन ध्यान में अक्सर हो जाया करते थे, उनके साथ में श्री माता पार्वती जी भी होती थीं, दर्शन होने की जगह वही पहले वाला स्थान था। भगवान शंकर के दर्शन कभी ध्यान मुद्रा में, तो कभी श्री माता पार्वती जी के साथ होते रहते थे। ध्यानावस्था में दर्शन होने के कारण आजकल मैं बहुत खुश रहता था, मगर ये खुशी के दिन ज्यादा दिन नहीं चले। क्योंकि ध्यानावस्था में हमारा प्राण वायु अब ऊपर की ओर जाने का प्रयास करने लगा था। जिससे हल्की सी पीड़ा अथवा गुदगुदी महसूस होती थी, साथ ही अब हमें दर्शन होने भी धीरे-धीरे बन्द होने लगे थे। पहले जैसा अब ध्यान में मजा नहीं आता था, इसका कारण था– ध्यानावस्था में दर्शनों का न होना अथवा कुछ दिनों बाद ही अगला अनुभव आता था।

प्रिय साधकों! आपने इस पुस्तक में पढ़ा होगा, हमारा ध्यान शुरू से ही अपने आप लगने लगा था। पहली बार में 45 मिनट का ध्यान लगा था, जबकि श्री माता जी ने अपनी पुस्तक में लिखा था– साधक को कम से कम 15 मिनट तो बैठना ही चाहिए, कुछ दिनों तक ध्यान नहीं भी लगे तब भी बराबर अभ्यास करते रहना चाहिये, आदि। मगर मैं आश्चर्य में था कि हमारा ध्यान तो शुरूआत से ही अपने आप लगने लगा था। श्री माता जी से पत्र व्यवहार अक्टूबर के अंतिम दिनों में हुआ था, अब हमारी हिम्मत साधना करने के लिये और भी बढ़ गयी थी। कभी-कभी जब मैं शांत बैठता था, तब हृदय के अन्दर आवाज सुनाई पड़ती थी– "आनन्द कुमार तुम साधना करो तुम्हे सफलता अवश्य मिलेगी"। इससे हमारी इच्छा-शक्ति में और भी दृढ़ता आ गयी थी। मुझे पता नहीं क्यों विश्वास हो रहा था, एक समय वह भी आयेगा जब हमारी कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत हो जायेगी तथा महानता के शिखर पर पहुँचूगा। कुछ साधकों को शिकायत रहती है कि उनका ध्यान जल्दी नहीं लगता है तथा उन्हें प्राण वायु के विषय में भी जानकारी नहीं होती है। कि उनकी साधना किस चक्र चल रही है तथा अनुभव न आने के कारण दुखी भी रहते है। हमें इस प्रकार की कभी कोई शिकायत नहीं रही है।

प्राण वायु कण्ठचक्र पर

साधकों! साधना में जो अभी तक आनन्द आता था, अब वह अदृश्य सा होने लगा था, क्योंकि प्राण वायु हृदय चक्र से ऊर्ध्व होने लगा था। जब प्राण वायु हृदय-चक्र से ऊर्ध्व होता है, तब अनुभव नहीं आते है अथवा कम आते हैं। जब प्राण वायु हृदय चक्र में वापस आता है तब अनुभव आने लगते है,

इसलिए अब अनुभव कभी-कभी ही आते थे। मुझे याद आ रहा है, मैं कण्ठचक्र में बहुत ही शीघ्र आ गया था, पहले धीरे-धीरे प्राण वायु कण्ठचक्र तक आता है फिर फिर कुछ समय बाद वापस होकर हृदय चक्र में आ जाता है। कण्ठचक्र में अनुभव हृदय चक्र की तरह नहीं आते हैं अगर कभी अनुभव आ भी गया तो काफी दिनों के बाद आता है। अनुभव न आने से मन थोड़ा दुःखी-दुःखी सा रहता था। जब भी अनुभव आता था तब बहुत प्रसन्नता होती थी। अनुभव न आने से मन थोड़ा-सा अप्रसन्न सा रहता था। मगर दूसरी तरफ खुशी होती थी, क्योंकि ध्यान में हमारी उन्नति हो गयी थी।

अब कभी-कभी ध्यानावस्था में लगता था– मैं घोर अंधकार में प्रवेशकरता हुआ चला जा रहा हूँ, हमें अंधकार के कारण कुछ भी दिखाई नहीं देता था। बस यही अनुभव बार-बार आता था, कि मैं तीव्र गति से आगे की ओर चला जा रहा हूँ। पहले की अपेक्षा अब ध्यान के समय थोड़ी थकान सी महसूस होती थी, हमारी साधना में बराबर प्रगति हो रही है, ऐसा हमें मालूम हो रहा था। कुछ दिनों बाद ध्यान पर बैठते ही हमारा प्राण तेजी के साथ ऊपर की ओर जाता था और कण्ठचक्र में जाकर रुक जाता था, नीचे उतरने का नाम नहीं लेता था, बल्कि प्राण और ऊपर जाने का प्रयास करता था मगर आगे का मार्ग बन्द होने के कारण प्राण ऊपर की ओर को दबाव देता था, प्राण के दबाव के कारण हमारी गर्दन पीछे की ओर झुक जाती थी। इस कारण सिर पीछे की ओर झुककर पीठ से चिपकने लगता था। जिसके कारण हमें ध्यानावस्था में बड़ी तकलीफ होने लगती थी। जब ध्यान टूट जाता था तब मैं अपने सिर को सीधा नहीं कर पाता था। गर्दन बुरी तरह से दुखने लगती थी। सिर सीधा करने के लिए हमें अपने दोनों हाथों का सहारा लेना पड़ता था। अब पहले की अपेक्षा ध्यान का समय अपने आप बढ़ गया था। ध्यान सवा घण्टे या डेढ़ घण्टे तक हो गया था।

कुछ दिनों बाद हमें एक विचित्र सा अनुभव आने लगा। ध्यान पर बैठते ही हमारी गर्दन पीछे की ओर चली जाती थी, ध्यानावस्था में मैं अपने आप को एक सुरंग जैसी जगह के अन्दर पाता था। उस सुरंग के अन्दर हल्का पीले रंग का प्रकाश होता था। यह प्रकाश उसी सुरंग की गोलाईनुमा दीवारों से अपने आप निकल रहा था, अथवा सुरंग की दीवारें स्वप्रकाशित थी। मैं उसी सुरंग में अन्दर की ओर तीव्रगति से प्रवेश करता चला जा रहा हूँ। कुछ समय बाद वह सुरंग आगे चलकर बन्द मिलती थी। मैं वहीं पर खड़ा हो जाता था। इतने में अनुभव समाप्त हो जाता था।

यह अनुभव कुछ दिनों के बाद अक्सर आया करता था। इसका अर्थ मैं नहीं समझ पाता था– कि यह सुरंग जैसी जगह क्या है और इसका अर्थ क्या है? मैं क्यों इस सुरंग के अन्दर तेज गति से दौड़ता हुआ

चला जा रहा हूँ। सुरंग हमेशा आगे चलकर बन्द मिलती थीं, फिर मैं उसी जगह पर खड़ा हो जाता था तभी कुछ क्षणों ध्यान टूट जाता था। फिर मैंने श्री माता जी को पत्र लिखा– “उसमें इस अनुभव के विषय में विस्तार से लिखा और इसका अर्थ भी पूछा”। मगर मेरे पत्र का उत्तर बहुत दिनों तक नहीं आया, बाद में हमें जानकारी हुई, उस समय श्री माता जी बहुत व्यस्त थीं, उन के घर में स्वामी चिदानन्द जी पधारे हुए थे। अन्य साधक गण भी आये हुए थे, इस कारण वह हमें पत्र नहीं लिख पायी थीं। कुछ समय बाद हमने यह निश्चिय किया, जब मैं भी श्री माता जी के पास जाऊँगा, तब उस समय इस अनुभव का अर्थ पूछ लूँगा।

दादी माँ के सूक्ष्म शरीर से मिलना

नवम्बर-दिसम्बर का महीना था, उस समय मैं दिल्ली में नौकरी करता था, हमें मालूम हुआ कि हमारी दादी माँ का देहांत हो गया हैं, हमारे घर से पत्र आया था, उसी में लिखा हुआ था। यह खबर पाकर हमें बड़ा दुःख हुआ, इसलिए दो तीन दिनों तक साधना के प्रति हमारा आकर्षण थोड़ा कम हो गया, क्योंकि हमें अपनी दादी माँ की याद आ रही थी। कुछ समय बाद हमारे अन्दर अचानक खुशी की लहर दौड़ गयी। खुशी का कारण था, अब मैं साधक हो गया हूँ, हमें भी अनुभव आते हैं। श्री माता जी की पुस्तक में एक जगह वर्णन मिलता है, प्रेतात्माओं से उनका सम्पर्क हुआ था तथा उन्होंने उसका उद्धार भी किया था। अब मैं सोचने लगा– क्या मैं अपनी दादी माँ को ध्यान के माध्यम से देख सकता हूँ तथा उनसे सम्पर्क हो सकता है, अब मैं साधक हो गया हूँ मगर क्या हमारे अन्दर इतनी योग्यता है कि मृतात्माओं से सम्पर्क कर सकूँ? बाद में हमारे मन ने कहा– मेरा दादी माँ से अवश्य सम्पर्क होगा, मनुष्य प्रयत्न करे तो क्या नहीं हो सकता है, बस उस कार्य के लिए लगन, श्रद्धा और परिश्रम चाहिए। मैंने निश्चय किया यदि हमारा दादी माँ से सम्पर्क नहीं हुआ तो भी मैं इस कार्य के लिए प्रयत्न करता रहूँगा। फिर सोचा– इस कार्य के लिये आज शाम से ही क्यों न प्रयत्न किया जाये।

मैं शाम 6.30 बजे ध्यान करने के लिये बैठ गया, फिर भगवान से प्रार्थना की– “हे प्रभु! आप हमें हमारी दादी माँ की जीवात्मा से मिलवा दीजिएगा, हमारी बड़ी इच्छा है मैं उनसे मिलना चाहता हूँ”। फिर मैं ध्यान पर बैठ गया। ध्यानावस्था में हमें पहले जैसी क्रिया हुई, गर्दन पीछे की ओर जाकर पीठ से चिपक गयी, फिर सुरंग वाला अनुभव आया, इसके बाद हमारा ध्यान टूट गया। अब की बार हमारा ध्यान डेढ़ घण्टे का लगा था। हमें थकान भी काफी महसूस हो रही थी इसलिए मैं लेट गया, हमें दादी माँ के विषय में

कोई जानकारी नहीं मिली, लेकिन मैं हताश नहीं हुआ। हमें अपने ऊपर बहुत बड़ा विश्वास था कि कभी न कभी सफलता अवश्य मिलेगी। जब मैं ध्यान पर बैठता था तब मैं ईश्वर से प्रार्थना किया करता था– प्रभु "हमें हमारी दादी माँ से मिलवा दो"।

तीन-चार दिन बाद हमें ध्यान में एक अनुभव आया। अनुभव के आते ही हमारे अन्दर दुःख की अनुभूति होने लगी। दुःख का कारण था, हमारी दादी माँ की हालत अत्यन्त दयनीय थी, लिखते हुए शर्म आ रही है मगर फिर भी साधकों को बताने के लिये संक्षेप में लिख रहा हूँ– हमारी दादी माँ एक गन्दगी के ढेर के ऊपर बैठी हुई थी, वह स्वयं बहुत दुःखी थी। उस गन्दगी के ढेर से अन्दर तीव्र दुर्गंध निकल रही थी, दुर्गंध के कारण बुरा हाल था, मुझे उन पर दया आ रही थी। मैं बोला– अम्मा, (मैं उन्हें अम्मा कहता था) तुम इस गन्दगी पर क्यों बैठी हो, यहाँ पर बड़ी दुर्गंध आ रही है, चलो अच्छी जगह चलकर बैठो। पहले उन्होंने हमें गहरी दृष्टि से देखा, फिर वह कुछ नहीं बोली। मैंने दुबारा दादी माँ से कहा– "चलो अच्छा यहाँ से उठो"। हमारा इतना ही कहना था तभी उन्हें क्रोध सा आ गया, वह तेज शब्दों में बोलीं– "आया यहाँ से दूसरी जगह बिठाने वाला, हमारी तो यही जगह है, कहाँ बिठाएगा मुझे"? मैं उनके शब्द सुनकर अचम्भित सा हुआ और सोचने लगा– अम्मा ऐसा क्यों कह रही है, हमारी समझ में नहीं आया। वह फिर बोलीं– "यहाँ से भाग जा, यहाँ से चला जा"। इतना कहकर वह उसी जगह लेट गयीं। हमें वहाँ पर खड़ा होना भी मुश्किल था, वह आराम से लेटी हुई थीं, उन्हें कोई परेशानी नहीं हो रही थी। उनके शरीर पर मैले-कुचैले वस्त्र थे, जबकि उन्होंने अपने जीवन में अत्यन्त स्वच्छ कपड़े पहने थे। मैं समझ गया हमारे कहने का इन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, इतने में हमारा अनुभव समाप्त हो गया। पाठकों! इस अनुभव को मैंने इसलिये लिखा है, इससे आप शिक्षा ले, मनुष्य को अपने कर्म कभी न कभी अवश्य भोगने ही पड़ते है। वर्तमान जीवन में मेरी दादी माँ बहुत ही पूजा-पाठ किया करती थी, बिल्कुल शांत स्वभाव वाली थी, फिर भी मृत्यु के बाद उसका इतना बुरा हाल था। पूर्व जन्मों के कर्मों के कारण ऐसी अवस्था प्राप्त हुई थी।

अब मैं थोड़ा गुमसुम सा रहने लगा, इसका कारण दादी माँ थी, मैं यह अनुभव भूल नहीं पा रहा था। मैं सोचने लगा– मैं क्यों अपनी दादी माँ के चक्कर में पड़ गया, जब श्री माता जी के पास जाऊँगा तब उनसे प्रार्थना करूँगा कि हमारी दादी माँ का इस वासना शरीर से उद्धार कर दीजिये। कुछ दिनों बाद हमारी दादी माँ हमें स्वप्नावस्था में दिखाई दी और हमसे बोली– "घरवालों ने हमारी तेरहवीं भी नहीं की है, कम-से-कम कुछ ब्राह्मणों को भोजन करा दिया जाता तो अच्छा रहता। जब मैं मरने लगी थी तब हमारी तीव्र इच्छा पोते को और अपनी छोटी लड़की को देखने की थी मगर घरवालों ने अनसुनी कर दी थी।" मैं

बोला– "अम्मा, छोड़ो ये सब बातें, अब इन बातों का कोई महत्त्व नहीं रह गया है क्योंकि वह समय बीत गया, अब वापस नहीं आयेगा। मैं कुछ दिनों बाद श्री माता जी के पास जा रहा हूँ, उनसे आपकी सद्गति की प्रार्थना करूँगा"। तब वह बोलीं– "हमारे लिए किसी से प्रार्थना करने की जरूरत नहीं है", यह कहकर वह चली गयीं। इसी प्रकार दो-तीन बार स्वप्नावस्था और ध्यानावस्था में दादी माँ हमें फिर दिखाई थी, मगर पहले की अपेक्षा अब कुछ ठीक लग रही थीं। दादी माँ ने हमें बताया– तुम्हारे पास आने पर हमें अच्छा लगता है, घर पर मैं किसी के पास नहीं जाऊँगी। कुछ दिनों बाद हमें मालूम हुआ दादी माँ द्वारा बताई गयी सभी बातें सत्य थीं। फिर मैंने सारी बातें अपने घरवालों को बतायी थीं। मृत्यु के बाद उन्हें वासना देह प्राप्त हुई है उस समय वह उस लड़के (कुलदीप) के विषय में सोचा करती थीं। कुछ समय बाद उन्हें इस देह से मुक्ति मिल गयी।

हम पहले लिख चुके हैं श्री माता जी का पत्र आया था उसमें लिखा था आप मिरज आ सकते हैं तथा दिल्ली के दो सत्संगियों के पता भी लिखे थे। जब मैं उस पते के अनुसार एक सत्संगी भाई के पास गया, तब उन्होंने हमें श्री माता जी के विषय में ढेर सारी जानकारियाँ दीं, तथा फोटो का एक एलबम देखने के लिये दिया था। उस एलबम में लगे फोटो को देखकर मैं चौक पड़ा, क्योंकि उसमें श्री माता जी के कई फोटो लगे हुए थे, अब हमें अपने पिछले अनुभव याद आने लगे, उस समय मैं उस सत्संगी से कुछ नहीं बोला। लगभग एक घण्टे तक हमारी और उन सत्संगी भाई से बातचीत होती रही फिर मैं वापस लौट आया। जब मैं वापस लौट रहा था, तब रास्ते में अति प्रसन्न हो रहा था। प्रसन्नता का कारण यह था कि मैं अज्ञानतावश श्री माता जी को पहले मैं नहीं पहचान पाया था। हमारे मस्तिष्क में श्री माता जी की छवि एक दुबली-पतली स्त्री की थी क्योंकि उनकी पुस्तक में स्वामी शिवानन्द जी के साथ जो उनकी फोटो छपी हुई है, उस फोटो में वह दुबली-पतली थीं, मगर वर्तमान में उनका शरीर थोड़ा भारी हो गया था। वर्तमान का फोटो देखकर अच्छी तरह समझ गया था कि हमें श्री माता जी का दर्शन पहले कई बार हो चुका था। उस समय उन्हें पहचान नहीं पाया था, जब पहले कई बार अनुभव आये थे, बर्फीले पहाड़ों पर स्त्री घूमती हुई दिखाई देती थी। पहाड़ों पर घूमती हुई श्री माता जी का जो स्वरुप था वह बिलकुल वर्तमान समय के शरीर से मेल करता था। इसका मतलब यह हुआ मुझे श्री माता जी का दर्शन अक्सर होता रहता था, मगर पहचान नहीं पाया था।

सन् 1985

श्री माता जी के पास मिरज जाना

श्री माता जी का पत्र हमें जनवरी सन् 1984 के अंतिम दिनों में प्राप्त हुआ उसमें लिखा था– “आप 15 फरवरी 1985 को हमारे यहाँ (मिरज) आ सकते हैं। 17 फरवरी को महाशिवरात्रि है, महाशिवरात्रि को हमारे यहाँ पर मंत्रों का जाप होता है उस जाप में आप भी भाग ले सकते है जिससे आपको आध्यात्मिक लाभ होगा। आप दिल्ली से झेलम एक्सप्रेस से पूना तक आइए, पूना से दूसरी रेल द्वारा मिरज आइए।” मैंने 13 फरवारी का पहले से ही रिजर्वेशन करा लिया था जिससे यात्रा में किसी प्रकार की परेशानी न उठानी पड़े। मैं 13 फरवारी को सुबह दिल्ली से झेलम एक्सप्रेस द्वारा पूना के लिए रवाना हो गया। रात्रि के समय अपनी सीट पर सोया हुआ था, अचानक स्वप्न में हमें दादी माँ दिखाई दी। वह हमारे पास आयी और बोली– “बड़ा आया हमें मुक्ति दिलाने वाला, श्री माता जी से हमारी सद्गति के लिए कहेगा, तू अपने आपको कितना बड़ा साधक समझता है”। मैं बोला– “मुक्ति तो श्री माता जी देंगी, मैं अपने लिए नहीं कह रहा था”। वह क्रोध के भाव से हमें देख रही थी। वह फिर बोली– “मुझे अच्छी तरह मालूम है कि मुझे कितनी मुक्ति मिलेगी”। कुछ क्षणों में वह अदृश्य हो गयी, हमारी आँखें खुल गयी घड़ी देखने पर मलूम हुआ, सुबह के 4 बजे है। सभी यात्री अपनी-अपनी सीटों पर सोए हुए थे, मैं अपनी सीट पर लेटे-लेटे करवट बदल रहा था। फिर दोपहर के समय मैं पूना पहुँचा, पूना से ट्रेन बदलकर मिरज पहुँच गया, मिरज तीसरे दिन सुबह पहुँचा था। रेलवे स्टेशन से श्री माता जी के घर के लिये ऑटोरिक्शा कर लिया था। लगभग 10 मिनट में श्री माता जी के घर पहुँच गया, ऑटो रिक्शा चालक ने श्री माता जी के घर के सामने आवाज लगाई, ऑटोरिक्शा चालक ने मराठी भाषा में श्री माता जी को बुलाया, मगर अन्दर से हिन्दी भाषा में आवाज आयी– दरवाजा खुला है, आ जाओ! मैं आवाज सुनकर भी अन्दर नहीं गया, कुछ क्षणों तक दरवाजे के बाहर ठहरा रहा। फिर श्री माता जी ने आकर स्वयं दरवाजा खोला और हमसे बोली– “अन्दर आ जाओ”। मैंने श्री माता जी के घर के अन्दर प्रवेश किया, पहले मैंने उनके चरण स्पर्श किये, फिर श्री माता जी मुझे कमरे में ले गयीं, श्री माता जी बहुत प्रसन्न थीं तथा हल्का-हल्का मुस्करा रही थीं। मैं उन्हें देखकर प्रसन्न हो रहा था, उन्होंने हमें बैठने का इशारा किया। मैं फर्श पर चटाई बिछाकर बैठ गया। श्री माता जी हमसे थोड़ी दूरी पर कुर्सी पर बैठ गयीं। फिर वह हमसे बोलीं– “जैसे ही

दरवाजे पर आवाज आयी मैं समझ गयी थी कि आप ही आये हैं, जबकि आवाज माराठी भाषा में थी, मैं हिन्दी में ही बोली थी– “दरवाजा खुला है, अन्दर आ जाओ”। मगर जब आप नहीं आये तब मुझे दरवाजा खोलना पड़ा”।

फिर श्री माता जी बोलीं– “आप दूर से आये हैं थक गये होंगे, हाथ मुँह धो लीजिये, तब तक मैं चाय बनाती हूँ”। मैं बोला– “हाथ मुँह अवश्य धोऊँगा, मगर श्री माता जी, मैं चाय नहीं पीता हूँ, इसलिए आप हमारे लिए चाय न बनाएँ”। श्री माता जी बोलीं– “आप शहर में रहकर चाय नहीं पीते हैं, अच्छी बात है, थोड़ा सा दूध ले लेना”। मुझे अपने-आपमें शर्म सी आयी। मैं इनके पास आया हूँ, ऊपर से ये हमारे लिए चाय बनायेंगी, उम्र भी काफी हो गयी है। श्री माता जी किचिन में चली गयीं, मैं बाथरूम में हाथ मुँह धोने के लिये चला गया। थोड़ी देर में मैं हाथ मुँह धोकर वापस आ गया, आखिरकार श्री माता जी नहीं मानी, हमें थोड़ा सा दूध पिला ही दिया। मुझे उस समय बड़ा अच्छा लग रहा था जिसका वर्णन मैं नहीं कर सकता था। थोड़ी देर तक हम और श्री माता जी आपस में बातें करते रहे, फिर श्री माता जी बोलीं– “आप स्नान कर लो, फिर ध्यान पर बैठेंगे, क्योंकि कोई न कोई यहाँ आता रहता है एकांत नहीं मिलेगा”। मैं स्नान के लिए चल दिया। श्री माता जी ने हमसे पूछा– “क्या आप गर्म पानी से स्नान करते हैं, मैं आपके लिए पानी गर्म कर दूँ”। हमें यह शब्द सुनकर बड़ी शर्म सी महसूस हुई। हमने हड़बड़ाकर उत्तर दिया– “नहीं नहीं श्री माता जी! आप हमारे लिये पानी गर्म न करें, मैं स्वयं अपना काम करूँगा, आप हमें सिर्फ समझा दें। श्री माता जी, मैं गर्म पानी से स्नान नहीं करता हूँ, मैं हमेशा ठण्डे पानी से स्नान करता हूँ।” श्री माता जी बोलीं– “अच्छा कोई बात नहीं, आप ठण्डे पानी से स्नान कर लें, फिर 9 बजे ध्यान पर बैठेंगे”। मैं बोला– “जी माता जी”।

हम और आप एक हो जायेंगे

मैं श्री माता जी के घर में बने ध्यान हाल बैठा हुआ था, श्री माता जी थोड़ी देर में आ गयीं और बोलीं– “चलो ध्यान पर थोड़ी देर बैठते हैं, क्योंकि कुछ समय में किसी को यहाँ पर आना है”। ध्यान पर बैठने के लिए श्री माता जी ने हमें एक चादर दे दी, मैं उस चादर को चटाई के ऊपर बिछा कर बैठ गया, श्री माता जी हमसे थोड़ी दूरी पर सामने बैठ गयीं, हम दोनों मात्र थोड़ी दूरी पर आमने-सामने बैठे हुए थे। श्री माता जी बोलीं– “यह बात कहने की नहीं है फिर भी कहे देती हूँ, क्योंकि मेरी आदत नहीं है पहले से

कोई बात बताऊँ। हममें और आपमें कोई फर्क नहीं रहेगा, हम आप एक हो जायेंगे, आप साधना में उच्च स्थिति को प्राप्त करेंगे"। ये शब्द श्री माता जी द्वारा सुनकर मैं आश्चर्यचकित हो गया, मैं श्री माता जी का मुँह देखने लगा। फिर मैं बोला– "श्री माता जी, आपके कहने का मैं अर्थ नहीं समझा– हममें आपमें कोई फर्क नहीं रहेगा, हम आप एक हो जायेंगे", इस पर श्री माता जी ने कोई उत्तर नहीं दिया। फिर श्री माता जी ने कहा– "चलो ध्यान करते हैं, हम तीन बार ओंकार बोलेंगे फिर ध्यान करेंगे"। श्री माता जी ने ओंकार बोला, ओंकार बोलते ही हमारी गर्दन झटके के साथ पीछे की ओर उलट गयी, मैं भी पीछे की ओर झुकता चला गया और ध्यानस्थ हो गया। हमारा ध्यान आधे घण्टे का लगा, क्योंकि श्री माता जी ने ओंकार फिर से कर दिया था। ओंकार के साथ ही मैं सीधा होकर बैठ गया, ध्यान के समय हमारा शरीर पीछे की ओर झुका हुआ था। अब हमारी गर्दन भी अपने आप सीधी हो गयी। वैसे पहले गर्दन सीधी करने के लिए दोनों हाथों का सहारा लेना पड़ता था। मैंने आँखें खोल दी। श्री माता जी हमें देख रही थीं, फिर वह बोलीं– "आपके बैठने के तरीके में थोड़ी त्रुटियाँ हैं"। फिर उन्होंने हमें समझाया कि ध्यान पर इस प्रकार से बैठना चाहिये, आपके अन्दर जो विचार आते हैं आने दीजिए, क्योंकि वह आपके अन्दर की गन्दगी है।

श्री माता जी ध्यान से उठकर अन्दर चली गयी, मैं अकेला वहीं बैठा रहा। अब हमारे अन्दर भय सा आने लगा, क्योंकि श्री माता जी ने हमसे कहा था– "आपके अन्दर जो विचार आते हैं, आने दीजिए, घबराइए नहीं"। मुझे लगा जैसे मेरी चोरी पकड़ी गयी क्योंकि ध्यानावस्था में कभी-कभी हमारे अन्दर गंदे विचार आया करते थे। वह विचार इस प्रकार के होते थे जिन्हें हमने कभी सोचा भी नहीं था। पता नहीं ऐसे विचार क्यों आया करते थे। चाहे जितना प्रयत्न करो मगर रुकते ही नहीं थे। अब मैं सोचने लगा– ये विचार श्री माता जी को मालूम पड़ते होंगे तब क्या सोचती होंगी। हमें अपने आप पर शर्म भी आने लगी। माता जी कितना प्यार करती हैं जबकि हमारा और श्री माता जी का स्थूल रूप से कोई रिश्ता नहीं है, फिर भी बिलकुल अपनी माँ जैसा प्यार करती थी। थोड़ी देर में श्री माता जी ने हमें जलपान करने को दिया, मैंने जलपान कर लिया। फिर एक घण्टे तक अकेले बैठा रहा, श्री माता जी ने हमसे कहा– "आप यहाँ पर बैठे-बैठे ऊब रहे होंगे। यहाँ पर हिन्दी जानने वाले हैं, मगर कम लोग ही हिन्दी जानते हैं। मैं आपकी पहचान हिन्दी बोलने वालों से करा दूँगी, ताकि आप उनसे बात कर सकें"।

एक घण्टे बाद एक श्रीमान् जी श्री माता जी के पास आये, श्री माता जी उन श्रीमान् जी से मराठी भाषा में बातें करती रहीं, क्या बातें उन दोनो की आपस में होती रहीं, मैं नहीं बता सकता हूँ। क्योंकि उस

समय मराठी भाषा हमारे लिए नई भाषा थी। फिर श्री माता जी ने इन श्रीमान् जी से हमारा परिचय कराया,वह बोलीं– "आनन्द कुमार जी, ये कुलकर्णी जी हैं, आप इनसे बातें कर सकते हैं। ये बिजली विभाग में काम करते हैं।" फिर हमारी और कुलकर्णी जी की हिन्दी भाषा में बातें होने लगीं। कुछ देर बाद कुलकर्णी जी बोले– "चलो बाजार घूमने चलते हैं आप यहाँ बैठे-बैठे बोर हो जायेंगे"। हमारा मन बाजार जाने के लिये नहीं था क्योंकि लम्बी यात्रा करने के कारण मैं थका हुआ सा था, दो दिन की यात्रा करके आया था। मैं उनकी बात को इनकार नहीं कर सका, उनके साथ बाजार जाने लिये चल दिया। रास्ते में हमारी और उनकी बातें होने लगीं, वह बोले– "आप इतनी दूर से आये हुए हैं, आप ऐसा कीजिए, परसो महाशिवरात्रि भी है, आप श्री माता जी से दीक्षा ले लीजिए। दीक्षा लेने के लिए मार्केट से थोड़ा सा सामान खरीदना पड़ेगा, मैं कल फिर आऊँगा, तब सामान खरीदवा दूँगा।" मुझे इन महाशय जी की बात सुनकर बहुत बुरा लगा, मैंने सोचा– इन्हें हमारी दीक्षा से क्या लेना देना है, हमारी राय लिये बगैर ही, दीक्षा लेने के लिए हम पर दबाव डाल रहे हैं। पता नहीं क्यों मन के अन्दर हमें क्रोध सा आने लगा, मैं सोचने लगा– मुझे ये सज्जन बाजार घुमाने के लिये ले आये हैं अथवा किसी कार्य के लिए दबाव देने के लिए लिवा लाये हैं! यह मेरा व्यक्तिगत मामला है, मैं मिरज में श्री माता जी के दर्शन करने आया हूँ, श्री माता जी का शिष्य बनने नहीं आया हूँ, यही मैंने निश्चय किया। कुछ समय तक मैं चुपचाप बना रहा, उनके साथ इधर-उधर घूमता रहा, फिर श्री माता जी के घर वापस आ गया। चलते समय कुलकर्णी जी ने फिर हमसे कहा– "मैं कल फिर आऊँगा, आप तैयार रहना, आपकी दीक्षा के लिए थोड़ा सामान लेंगे"। उनके शब्द सुनकर मुझे फिर बुरा लगा, हमसे इन्हें क्या परेशानी है बार-बार दीक्षा लेने के लिये दवाब दे रहे हैं।

मैं चुपचाप कमरे में बैठा हुआ था, थोड़ी देर में श्री माता जी हमारे पास आ गयीं। मैंने श्री माता जी से कहा– "श्री माता जी, कुलकर्णी जी हमसे दीक्षा लेने के लिये कह रहे थे, हमारी इच्छा दीक्षा लेने के लिए नहीं है, पहले आप हमें अच्छी तरह से समझ लें, क्योंकि मैं चाहता हूँ जब तक हमारे अन्दर आपका शिष्य बनने की योग्यता न आ जाये, तब तक आपका शिष्य नहीं बनना चाहता हूँ, ताकि हमारे कारण किसी महापुरुष की बदनामी न हो। हमने बहुत ऐसे शिष्य देखे हैं, उनके गुरू तो योग्य हैं मगर शिष्य के आचरण के कारण उनकी बदनामी होती है, मुझे अपने अन्दर इतनी योग्यता दिखाई नहीं दे रही है कि मैं आपका शिष्य बनूँ"। श्री माता जी हमारी बातें गौरपूर्वक सुन रही थीं, मगर श्री माता जी कुछ नहीं बोलीं। फिर थोड़ी देर बाद हमसे बोली– "हम आपको एक अलग से कमरा दिये देते हैं, आप उसमें रहिये। इस कमरे में ध्यान किया जाता है, कल से कुछ और साधक यहाँ पर आ जायेंगे"।

श्री माता जी का मकान उस समय बहुत बड़ा था, कुछ किराएदार भी रहते थे। श्री माता जी ने मुझे एक कमरे में लेकर गयीं और बोली– "आप इस कमरे में रहिये", फिर वह भी थोड़ी देर तक हमारे साथ कमरे में रहीं, उन्होंने हमें साधना के विषय में ढेरों शिक्षाएं दीं तथा प्राणायाम करने का तरीका भी बताया। फिर श्री माता जी चली गयी। अब हमें कुलकर्णी वाली बातें याद आ गयी। मैंने सोचा– ये श्रीमान् जी हमें जबरदस्ती दीक्षा दिलाये दे रहे हैं, श्री माता जी भी कुछ नहीं बोल रहीं हैं। मैंने सोचा– चलो कोई बात नहीं है, कितने का सामान आयेगा, जब इतनी दूर से खर्च करके आया हूँ, तो थोड़ा सा खर्च और सही, यही निर्णय कर लिया। सायंकाल के समय भी श्री माता जी के सामने बैठकर ध्यान किया, देर रात्रि तक हम और श्री माता जी दोनों आपस बातें करते रहे, फिर 12 बजे अर्धरात्रि के समय कमरे में आकर सो गया। सुबह 5 बजे ध्यान करना था, इसलिये सुबह 4 बजे जल्दी आँखें खुल गयी थी। मगर मैं लेटा रहा, अपरिचित जगह होने के कारण हमारे अन्दर थोड़ी झिझक सी थी। पौने पाँच बजे कमरे के बाहर से एक लड़की की आवाज आयी– "आनन्द कुमार"। मैं बोला– "हाँ जी", लड़की बोली– "ध्यान करने के लिए श्री माता जी बुला रही हैं"। मैं बोला– "थोड़ी देर में आ रहा हूँ"। लड़की इतना कह कर चली गयी। यह लड़की श्री माता जी की एक शिष्या थी, श्री माता जी ने इस लड़की को हमें बुलाने के लिये भेजा हुआ था। मैं फ्रेश होकर स्नान करने लगा, इसलिये हमें थोड़ा सा ज्यादा समय लग गया। जब मैं ध्यान कक्ष में पहुँचा, तब सभी साधक ध्यान पर बैठे हुए थे। श्री माता जी धीरे से बोलीं– "आइए, हमारे सामने बैठ जाइए"। श्री माता जी के सामने आसन बिछा हुआ था, मैं उसी आसन पर बैठ गया। बैठते ही हमारा ध्यान लग गया, सवा घण्टे तक ध्यान लगा, जब मैंने आँखें खोली तब सभी साधक ध्यान कक्ष से जा चुके थे।

कुलकर्णी जी लगभग सुबह दस बजे आ गये, मैं उन्हीं का इंतजार कर रहा था। फिर उनके साथ बाजार चला गया, बाजार से दीक्षा के लिए थोड़ा सा सामान खरीद लाया। सच बताऊँ– यह सामान बिना इच्छा के खरीदा था, दीक्षा लेने के लिए हमारी कोई रूचि नहीं थी। शाम को 6.30 बजे ध्यान के लिए जब साधना कक्ष में गया, तब ध्यान कक्ष पूरी तरह से भरा हुआ था, श्री माता जी के समीप लड़कियाँ बैठी हुई थीं, इसलिए मैं सबसे पीछे ध्यान करने के लिए बैठ गया। आधे घण्टे तक ध्यान किया, फिर आँखें खुल गयीं, क्योंकि श्री माताजी ने ओंकार बोल दिया था, इसलिए ध्यान टूट गया। ध्यान खुलते ही श्री माता जी मुझसे बोलीं– "आनन्द कुमार, आप इधर आइए"। मैं श्री माता जी के पास आ गया, उन्होंने अपने सामने बैठने का इशारा किया, मैं फर्श पर बैठ गया। श्री माता जी कुर्सी पर बैठी हुई थीं। श्री माता जी ने हमसे कहा– "कल आप अपना अनुभव सुना रहे थे, आपने उस अनुभव का अर्थ पूछा था। उस अनुभव का

अर्थ यह है– साधक का प्राण जब कण्ठचक्र में पहुँचता है, तब उसका प्राण कण्ठचक्र में रुकता है, आगे का मार्ग अवरूद्ध होता है, प्राण नीचे से ऊपर की ओर दबाव देता है, इस दबाव के कारण साधक की गर्दन पीछे की ओर चली जाती है, यदि साधक की साधना तीव्रता हो रही है तब उसका सिर पीठ से चिपकने लगता है, जिससे साधक को परेशानी सी महसूस होती है। दूसरा– आपने यह भी बताया था, आप गुफा के अन्दर प्रवेश करते हैं वह गुफा आगे चलकर बन्द मिलती है। कण्ठचक्र के पास गुफानुमा जगह होती है इसे भ्रमर गुफा भी कहते हैं। हमने अपनी पुस्तक में थोड़ा सा इस गुफा के बारे में वर्णन किया है, आपको यही भ्रमर गुफा दिखाई देती है। आपका प्राण कण्ठचक्र में आगे जाने का प्रयास करता है आगे का मार्ग खुला न होने के कारण बन्द दिखाई देता है। आगे जाने के लिए साधक को बहुत कठोर साधना करनी पड़ती है तथा कई वर्षों तक अभ्यास करने के बाद ही आगे का मार्ग प्रशस्त होता है।" जब श्री माता जी ने हमारे अनुभवों का अर्थ समझा दिया, फिर मैं अपने स्थान पर आकर बैठ गया। श्री माता जी ने हमारा सभी साधक-साधिकाओं से परिचय कराया– ये साधक दिल्ली से आये हुए हैं, इनका नाम आनन्द कुमार है।

हमें दीक्षा दी गयी

17 फरवरी सन् 1985, आज शिवरात्रि का दिन था। श्री माता जी के यहाँ सुबह से ही बहुत से साधक बाहर से आकर एकत्र हो रहे थे, कुछ साधक दूर-दूर के शहरों से आये हुए थे। बहुत से साधकों से हमारा परिचय भी हो गया था, सुबह से ही मृत्युंजय मंत्र का जाप सामूहिक रुप से शुरू कर दिया गया था। मंत्र अखंड रुप से 12 घण्टे तक चलना था। आज के दिन सुबह 9 बजे हमें दीक्षा मिलनी थी। दीक्षा के समय कुछ साधक और मैं श्री माता जी घर के ऊपर वाले कमरे में आ गये थे, वहाँ पर एकांत होने के कारण शान्ति थी। दीक्षा देने का कार्यक्रम शुरु हो गया, हमें दो साधिकाओं के बाद दीक्षा मिलनी थी। पहले श्री माता जी के चरणों की पूजा करनी थी, हमसे पहले दो साधिकाओं ने श्री माता जी के चरणों की पूजा की थी, मैं पूजा करते समय, पूजा की विधि गौर पूर्वक देख रहा था क्योंकि कुछ समय बाद हमें भी पूजा करनी थी, हमने इससे पहले किसी की पूजा नहीं की थी। यह हमारा प्रथम अवसर था जब मैं श्री माता जी की पूजा करूँगा। कुछ समय बाद हमने श्री माता जी के चरणों की पूजा करनी शुरू कर दी, पूजा करने का तरीका पूना की एक साधिका बताती जा रही थी। जब हमारे द्वारा की गयी पूजा सम्पन्न हो गयी,

फिर श्री माता जी ने दूसरे कमरे में पहले को साधिकाओं दीक्षा दी, उस समय मैं यह नहीं जानता था कि दीक्षा किस प्रकार मिलती है, फिर हमें श्री माता जी ने अन्दर कमरे में बुलाया। मैं श्री माता जी के समीप जाकर खड़ा हो गया, उन्होंने अपना आसन फर्श पर बिछा रखा था, उसी आसन पर स्वयं बैठी हुई थी, उनके सामने भी एक आसन बिछा हुआ था। सामने वाले आसन पर हमें बैठने का इशारा किया। मैं आसन पर बैठा गया। फिर श्री माता जी मुझसे बोलीं– "आप भगवान शिव की पूजा करते हैं तथा भगवान शिव के मंत्र का जाप भी करते हैं, इसलिए मैं आपको इसी मंत्र की दीक्षा दूँगी"। फिर श्री माता जी ने मंत्र उच्चारण करने का तरीका बताया, और बोलीं– "आप थोड़ी देर के लिए आँखें बन्द करके बैठिए, मैं आप पर शक्तिपात करूँगी"। उस समय मैं शक्तिपात का अर्थ नहीं समझता था, मैं आँखें बन्द करके बैठ गया। श्री माता जी ने अपने दाहिने हाथ के अँगूठे को हमारी भृकुटि पर स्पर्श किया, फिर जोरदार ओंकार किया– श्री माता जी ने जैसे ही ओंकार किया मुझे लगा श्री माता जी का अंगूठा गर्म सा हो रहा है, और हमारे शरीर के अन्दर नाड़ियों में वह गर्माहट पहुँच रही है। श्री माता जी ने दुबारा ओंकार किया इससे हमें हल्की सी तकलीफ होने लगी थी, क्योंकि ओंकार करते ही हमारे शरीर के अन्दर चीटियां सी काटने लगी थीं, उसी समय हमारा ध्यान लग गया। ध्यान लगभग एक घन्टे का लगा, जब हमारी आँखें खुली तब मैंने देखा– श्री माता जी कमरे के अन्दर नहीं हैं। मैं उठकर बाहर वाले कमरे में आ गया, वहाँ पर श्री माता जी हमारा इंतजार कर रही थीं। वह बोलीं– "आपका ध्यान लग गया था, इसलिए मैं बाहर आ गयी, अभी एक और साधक को दीक्षा देनी है"। मैंने उन्हें नमस्कार किया, अपना मस्तक उनके चरणों पर रख दिया तथा मन में सोचा– श्री माता जी अगर आप हम पर प्रसन्न हैं तो हमें आशीर्वाद दें, हमारी साधना अत्यन्त तीव्र होने लगे तथा मैं अच्छा साधक बनूँ। ऐसा सोच ही रहा था तभी श्री माता जी ने हमारी पीठ थपथपायी और बोलीं– "आनन्द कुमार आप आनन्द करो, आपका नाम भी आनन्द है भविष्य में आप अपने नाम के अनुसार आनन्द में होगे, यह हमारा आपको आशीर्वाद है"। इतना कहकर श्री माता जी दूसरे साधक को दीक्षा देने के लिये कमरे के अन्दर चली गयी। श्री माता जी जिस समय हमारी पीठ को थपथपा रही थीं उस समय ऐसा लग रहा था, मानो पीठ थपथपा नहीं रही हैं, बल्कि जोर-जोर से मार रही थीं, हमारी पीठ गर्म होने लगी थी। अब मैं सोचने लगा– जब श्री माता जी के हाथ का स्पर्श होता है तब बड़ा विचित्र सा लगता है, ऐसा क्यों? मैं यह नहीं जान पाया। श्री माता जी ने दीक्षा देते समय जब ओंकार किया था तब बहुत विचित्र सा लगा था। मैं सोच रहा था शायद श्री माता जी के द्वारा जो शक्ति निकलती है, वही हमें इस प्रकार की अनुभूति कराती है। हमें अपने आपमें प्रसन्नता हुई, अब हमारा पहले जैसा भाव नहीं रहा, कि हमें जबरदस्ती दीक्षा दी जा रही है।

मृत्युंजय मंत्र का जाप शाम 6 बजे बन्द कर दिया गया। सभी साधक गण आपस में बातें कर रहे थे। मगर हमारी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। वहीं पर हमारे बगल में अण्णाजी (श्री माता जी के पतिदेव) बैठे किसी से बातें कर रहे थे, सारी बातें मराठी भाषा में हो रही थीं। तभी हिन्दी में कुछ शब्द अण्णा जी बोले– यह लड़का दिल्ली से आया हुआ है, साधना करता है अच्छा साधक है, इसीलिए श्री माता जी ने इसे दीक्षा दी है। इस पर थोड़ा और दबाव पड़ेगा, जिससे इसकी साधना और अच्छी हो जायेगी। अण्णाजी की बात सुनकर मैं आश्चर्य में पड़ गया, अब हमारी समझ में आया– श्री माता जी ने हमें क्यों दीक्षा दी है, हमारा दुःख जो दीक्षा से सम्बन्धित था वह पूरी तरह से दूर हो गया। हमारे अन्दर खुशी की लहर दौड़ गयी, यह सब श्री माता जी ने हमारी साधना की उन्नति के लिए किया है। आज शाम साधकों की बहुत भीड़ हो गई थी, हम सभी साधक श्री माता जी के साथ देर रात तक बातें करते रहे। श्री माता जी को हिन्दी और मराठी दोनों भाषा में बोलना पड़ता था, हिन्दी भाषा वह मेरे कारण बोल रहीं थीं। फिर रात्रि के 12.30 बजे मैं अपने कमरे में सोने के लिए चला गया।

तेजस्वी शिवलिंग के दर्शन

कमरे में आकर कुछ समय तक नींद नहीं आयी। मैं श्री माता जी के विषय में सोचता रहा, श्री माता जी कितनी अच्छी हैं हमारा कितना खयाल रखती हैं, श्री माता जी के व्यवहार में अपनत्व व ममत्व भी है, यही सब सोचते-सोचते मुझे नींद आ गयी फिर मैं सो गया। मुझे स्वप्न में बहुत अच्छा अनुभव आया, वह इस प्रकार है– मैं किसी जगह पर पेट के बल लेटा हुआ हूँ, मैंने अपना मुँह थोड़ा सा भुजंगआसन की मुद्रा में ऊपर की ओर उठाया, तभी हमें दिखाई दिया– हमसे एक फीट की दूरी पर हमारे मुँह के सामने, एक बहुत सुन्दर शिवलिंग है, ऐसा लग रहा था जैसे भूमि से निकल कर ऊपर की ओर आ गया है। शिवलिंग काफी बड़े आकार में था, उस शिवलिंग से हल्के नीले रंग का प्रकाश निकल रहा था। वह प्रकाश चारों ओर बिखरा हुआ था, इस कारण चारों ओर की जगह प्रकाशित हो रही थी। उस समय शिवलिंग इतना अच्छा लग रहा था हमारी इच्छा हुई कि मैं इस शिवलिंग को अपने हाथों में पकड़ लूँ। मैंने पेट के बल लेटे हुए ही अपने दोनों हाथ आगे की ओर बढ़ाए, दोनों हाथों से उस शिवलिंग को पकड़ना चाहा, मगर वह शिवलिंग हमारे पकड़ में नहीं आया। मुझे आश्चर्य हुआ शिवलिंग पकड़ में क्यों नहीं आ रहा है, हाथ शिवलिंग के अन्दर से आर-पार हो जाते हैं फिर ऐसा महसूस हुआ शिवलिंग सिर्फ

नीले प्रकाश से बना हुआ है। हमने गौरपूर्वक देखा– शिवलिंग का स्वरुप बिलकुल साफ व स्पष्ट था, मैंने फिर शिवलिंग को अपने हाथों से पकड़ना चाहा, मगर वह पकड़ में नहीं आया। शिवलिंग अपनी जगह पर स्थिर था, दो तीन बार प्रयास करने पर जब वह पकड़ में नहीं आया। तब मैं सोचने लगा– यह कैसा शिवलिंग है जो पकड़ में नहीं आ रहा है। यही सोच रहा था उसी समय शिवलिंग की बगल में पैर दिखाई दिये, मैं गौरपूर्वक पैरों को देख रहा था, विचार आया यह किसके पैर हैं। उस समय हमारी दृष्टि नीचे की ओर को थी, फिर मैंने अपना मुँह ऊपर की ओर उठाया, तब ऐसा लगा जैसे कोई खड़ा हुआ हैं, अपनी दृष्टि ऊपर की ओर की, दृष्टि ऊपर की ओर करते ही मैं चौंका, क्योंकि सामने श्री माता जी खड़ी हुई थीं। मेरे मुँह से निकला– श्री माता जी आप! श्री माता जी का चेहरा तेज से चमक रहा था, मगर वह उत्तर में कुछ नहीं बोलीं, मैं उठकर बैठ गया। तब देखा– शिवलिंग वहीं पर है और श्री माता जी भी वहीं पर हैं। कुछ क्षणों बाद शिवलिंग व श्री माता जी दोनों अदृश्य हो गये। उसी क्षण हमारी आँखें खुल गयी।

मैंने घड़ी देखी तो उसमें सुबह के 4.30 बज रहे थे फिर हमें नींद नहीं आयी। मैं अनुभव के विषय में सोच रहा था। शिवलिंग हमारी पकड़ में क्यों नहीं आ रहा था, तथा श्री माता जी भी वहीं पर खड़ी हुई थीं। थोड़ी देर में कमरे के बाहर से आवाज आयी– आनन्द कुमार आपको श्री माता जी ध्यान करने के लिए बुला रही हैं, मैं बोला– मैं अभी आ रहा हूँ, मैं तैयार होकर पाँच बजे से थोड़ा पहले साधना कक्ष में पहुँच गया फिर श्री माता जी के सामने ध्यान करने के लिये बैठ गया। ध्यान करने के बाद हमें अनुभव का अर्थ पूछने का अवसर नहीं मिला। मैं दोपहर 11 बजे श्री माता जी के सामने बैठा हुआ था, उस समय वहाँ कोई भी साधक नहीं था, तब मैंने अपना अनुभव श्री माता जी को सुनाया। अनुभव सुनकर श्री माता जी अति प्रसन्न हुई। उन्होंने समझाया– आप शिवलिंग को कैसे पकड़ सकते हैं वह किसी पत्थर का नहीं बना था वह तो सिर्फ प्रकाश द्वारा निर्मित था, उसका स्वरुप कारण अवस्था वाला था अर्थात वह कारण जगत से सम्बंधित है, तुम सूक्ष्म शरीर से उसे कैसे पकड़ सकते हो। हमारा वास्तविक स्वरुप वही है जिसे तुमने देखा हैं, तुमने गुरू तत्त्व को इस रुप में देखा है, इसीलिए मैं शिवलिंग के बगल में खड़ी हुई दिखाई दे रही थी।

श्री माता जी फिर हमसे बोली– “आनन्द कुमार यह अनुभव बहुत अच्छा आया है, आपको हमारे स्वरुप का दर्शन हो गया, हमारे स्वरुप के दर्शन एक दो साधकों को हुआ है आप भाग्यशाली हैं”। श्री माता जी द्वारा ऐसे शब्द सुनकर हमें बड़ी खुशी हुई। बाद में श्री माता जी ने कुछ अन्य साधकों को यही अनुभव सुनाया, बाद में कुछ साधकों ने हमसे पूछा– “आपको बहुत अच्छे-अच्छे अनुभव आते हैं, हमें

तो अनुभव बिलकुल नहीं आते हैं आप पर श्री माता जी की बहुत कृपा है”। मैं बोला– “हमें तो शुरू से ही बहुत अनुभव आते हैं। जब हमारा और श्री माता जी का परिचय भी नहीं हुआ था। पत्रोत्तर कुछ समय बाद में हुआ था।” फिर वह साधिका बोली– “हमें तो दो साल हो गये हैं, परंतु एक भी अनुभव नहीं आया”। मैं बोला– “इस विषय में श्री माता जी को बताएँ, तब वह अवश्य आपको कुछ बताएँगी कि आपको अनुभव क्यों नहीं आते हैं”। साधिका बोली– “श्री माता जी ने हमें बताया था कि कुछ साधकों को अनुभव आते हैं, कुछ साधकों को अनुभव नहीं आते हैं”।

शिवरात्रि उत्सव की भीड़ अब कुछ कम होने लगी थी, सभी साधकगण धीरे-धीरे वापस अपने-अपने घर चले गये। अब सिर्फ मिरज वाले साधक ही श्री माता जी के पास आते थे। मैं श्री माता जी के पास चार-पाँच दिन रुका था, इतना समय कैसे बीत गया हमें पता ही नहीं चला। यहाँ पर सदैव योग सम्बन्धी बातें ही किया करते थे, हमारी जिदंगी में इतनी खुशी के दिन पहले कभी नहीं आये थे। हमारी इच्छा घर वापस आने की बिलकुल नहीं थी लेकिन घर वापस तो आना ही था। हमने श्री माता जी से चलने के लिये आज्ञा माँगी, श्री माता जी ने मुझे दिल्ली जाने की आज्ञा दे दी, और बोली– “आप जा सकते है, वापस जाकर दिल्ली में खूब साधना करना”। मैं बोला– “श्री माता जी! मैं ज्यादा-से-ज्यादा साधना करने का प्रयत्न करूँगा”। श्री माता जी बोलीं– “यदि आप साधना करेंगे, तो आपकी साधना अवश्य आगे बढ़ेगी। हाँ, हमसे पत्र व्यवहार अवश्य करते रहना। यदि साधना सम्बन्धी कोई बात हो तो लिखना, मैं आपकी साधना सम्बन्धी समस्या हल करके पत्र में लिखकर भेज दिया करूँगी।” मैं 20 फरवरी को सायंकाल 9 बजे श्री माता जी से आज्ञा लेकर उनके घर से चल दिया।

जब मैं श्री माता जी के घर से चला था, तब बहुत प्रसन्न था। मिरज रेलवे स्टेशन पर आते ही हमारी प्रसन्नता कम हो गयी और मन थोड़ा उदास सा हो गया, मुझे श्री माता जी की बड़ी याद आ रही थी। वापसी के समय मुम्बई वी.टी. से होकर कानपुर आया। जब मैं घर वापस आया तब सभी को आश्चर्य हुआ कि मैं साधना करने लगा हूँ। हमने घर में साधना के विषय में बताया, मगर इस विषय में किसी ने रूचि नहीं ली। इसका कारण यह था कि घर में हमारी किसी से नहीं बनती थी। मुझे ध्यान के माध्यम से अब कभी-कभी जानकारियाँ दूसरों के विषय में हो जाया करती थीं, ऐसा हमने घर वालों को बताया था। घर में भी मैं साधना किया करता था, उसी समय हमारे घर में एक घटना घटी।

हमसे दो छोटे भाई खेत में काम करते समय आपस में लड़ गये। बड़ा भाई घर वापस आ गया मगर छोटा भाई घर वापस नहीं आया। उसे बहुत ढूँढा गया मगर वह नहीं कहीं नहीं मिला। वह रात्रि के

समय ही खेतों से गायब हो गया। घर में सभी लोग चिंतित हो रहे थे। फिर इस विषय में ब्राह्मणों से पूछा गया, उन्होंने बताया– “वह दक्षिण दिशा की ओर गया है”। मगर भाई की कहीं भी किसी प्रकार की जानकारी नहीं मिली। फिर हमें हमारी माँ ने कहा– “ध्यान के माध्यम से तुम जानकारी करने की कोशिश करो, शायद तुम्हें कुछ जानकारी मालूम हो जाये”। मैं बोला– “मैं निश्चित नहीं कह सकता हूँ कि जानकारी होगी अथवा नहीं होगी, मगर प्रयत्न अवश्य करूँगा, कल सुबह मैं तुम्हें जानकारी दे दूँगा”। मैंने ध्यानावस्था में संकल्प द्वारा इस घटना के विषय में जानना चाहा, मगर हमें किसी प्रकार की जानकारी नहीं मिली। लेकिन फिर हमें स्वप्नावस्था में सारी जानकारी मिल गयी। हमने घरवालों को बताया जो इस प्रकार है– “ब्राह्मणों ने कहा था भाई दक्षिण दिशा की ओर गया है मगर यह बात गलत है, क्योंकि वह दक्षिण दिशा की ओर नहीं गया है बल्कि उत्तर दिशा की ओर गया है। उसने नदी को पार किया है। नदी हमारे गाँव के उत्तर दिशा में बहती है, नदी पार करते समय हमने देखा– नदी के दोनों किनारे हमारे गाँव के पास के किनारे जैसे नहीं है, अर्थात् उसने अपने गाँव से दूर नदी पार की है। पार करते समय आश्चर्यजनक दृश्य दिखाई देता है भाई एक हाथ के सहारे नदी में तैर रहा है तथा दूसरे हाथ में लुंगी पकड़े हुए है उस लुंगी में पोटलीनुमा कुछ वजनदार चीज बँधी हुई है, उसने नदी को शायद दो बार तैर कर पार किया है, इस समय वह नौकरी पाने का प्रयास कर रहा है”।

हमारी कुछ बातें घरवालों को अच्छी नहीं लगीं। उनका कहना था– “वह नदी क्यों तैरेगा, क्योंकि नदी में आजकल पानी बहुत ही कम होता है, बिना तैरे ही नदी पार की जा सकती है। दूसरी बात– वह दो बार नदी क्यों पार करेगा। इसका क्या अर्थ है– उस पोटली में वजनदार चीज क्या हो सकती है, उस समय भाई अपने शरीर पर मात्र दो तीन कपड़े ही पहने था।” घरवालों की इन सब बातों का हमारे पास कोई उत्तर नहीं था। कुछ दिनों तक भाई से सम्बन्धित किसी प्रकार की जानकारी नहीं मिली। एक दिन बाद मालूम हुआ हमारे गाँव से 25 कि.मी. दूर रेलवे स्टेशन पर एक दूधिए को वह मिला था। फिर मैं दिल्ली चला आया क्योंकि हमारी छुट्टियाँ समाप्त को चुकी थीं। कुछ दिनों बाद हमें पत्र द्वारा जानकारी दी गयी– भाई आगरा में मिल गया है तुमने जो बातें बताई थी वह सभी सच थीं। अब संक्षेप में– घटना इस प्रकार घटी थी, भाई से झगड़ा होने के बाद उसने सोचा कि वह घर नहीं जायेगा, उस समय उसे बहुत भूख लगी थी। उसने दूसरे के खेत से आलू खोदे, फिर उन आलुओं को भूनकर खाए, शेष बचे आलुओं को लुंगी में बाँधकर उत्तर दिशा की ओर चल दिया। नदी को दूसरे गाँव के पास से पार की थी, तब उसे वहाँ पर नदी तैर कर पार करनी पड़ी थी, क्योंकि वहाँ पर नदी में काफी गहराई थी, फिर 25 कि. मी. दूर रेलवे स्टेशन

तक पैदल चलकर पहुँचा, वहाँ उसे एक दूधिया मिला भाई की उससे बातचीत हुई, जब भाई को मालूम हुआ कि यह दूधिया मेरे गाँव के कुछ व्यक्तियों को जानता है तब दूधिया से नजरें बचाकर दिल्ली जाने वाली रेल पर बैठ गया। दिल्ली पहुँचने पर वह स्टेशन के बाहर नहीं निकल पाया क्योंकि वह बिना टिकट था, फिर आगरा जाने वाली रेल पर बैठकर आगरा आ गया। यहीं पर नौकरी तलाशनी शुरू कर दी।

इस अनुभव को लिखने का हमारा भाव सिर्फ इतना ही है कि हमें साधना करते मात्र 5-6 महीने ही हुए थे। अभी से हमें इस प्रकार की जानकारियाँ मिलनी शुरू हो गयी थीं। ज्यादातर साधकों को 5-6 महीने तक अभ्यास करने के बाद भी ध्यान नहीं लगता है। मगर हमें शुरूआत से ही दूसरे के विषय में जानकारियाँ मिलने लगी थीं, इसका कारण यह था– मैं पिछले जन्मों से योग का अभ्यास करता चला आ रहा हूँ, उसी के प्रभाव से हमें जानकारियाँ मिल जाती थीं। यह निश्चित नहीं था कि जब भी मैं जानकारी चाहूँगा तभी जानकारी हो जायेगी, बल्कि स्वयं अपने आप जानकारियाँ हो जाती थीं। कभी-कभी तो देश-विदेश की घटनाएं पहले से ही मालूम पड़ जाती थीं। कभी-कभी ऐसा भी होता था कि मैं लेटे-लेटे स्वप्नावस्था में देश-विदेश की घटनाएं देखा करता था। कभी-कभी कुछ घटनाएं पहले से मालूम पड़ जाती थीं। इसी कारण ध्यान के प्रति हमारी उत्सुकता और बढ़ गयी थी।

आजकल मैं ध्यान खूब करने लगा था, जब भी खाली समय मिलता था तभी मैं ध्यान करने के लिये बैठ जाता था। अब हमें अपने ध्यान में कुछ बदलाव सा महसूस होने लगा था। पहले ध्यानावस्था में हमारी गर्दन बहुत पीछे की ओर चली जाती थी इस कारण हमारा शरीर भी पीछे की ओर बहुत ही झुकता था। मगर जब से मिरज (महाराष्ट्र) जाकर दिल्ली आया था तब से हमारी गर्दन पीछे की ओर कभी-कभी मामूली सी जाती थी। मैं ध्यानावस्था में सीधा बैठा रहता था, मैं सोचा करता था– शायद हमारी साधना कमजोर पड़ने लगी है इसलिए मैं पहले से ज्यादा साधना करने लगा था। अब मैं चिंता में पड़ गया, यह क्या हो गया, शायद हमसें कोई गड़बड़ी हो गयी है। यही सोचकर हमने कुछ दिनों बाद श्री माता जी को पत्र लिखा, उसमें सारा विवरण लिख दिया। मेरे पत्र का उत्तर एक माह में आ गया। श्री माता जी ने उस पत्र में लिखा था– हमने आपकी गर्दन पीछे जाने से रोक दी है, क्योंकि आपको बड़ी तकलीफ होती थी, आप इसका अर्थ यह न लगाइए कि आपकी साधना कम पड़ गयी है,आपकी साधना पहले जैसी ही है, हमने आपकी तकलीफ कम कर दी है। पत्र पढ़कर हमारी चिंता दूर हो गयी, मैं कठोर अभ्यास करने में लग गया।

अपने भाव बदलो

प्रिय पाठकों! मैं शिक्षा के तौर पर यह अनुभव लिख रहा हूँ– इस प्रकार के अनुभव साधक के चित्त में स्थित वृत्तियों के कारण आते हैं। ऐसी वृत्तियाँ जन्म-जन्मांतरों से चित्त में स्थित रहती हैं। हमें अनुभव आया– मैं खड़ा हुआ हूँ, मेरे सामने पलंग पर एक बहुत सुन्दर लड़की लेटी हुई है, उसके शरीर पर एक भी वस्त्र नहीं है, वह पूर्ण रूप से नग्नावस्था में है। उसका शरीर संगमरमर के समान सुन्दर दिखाई दे रहा है, वह लड़की हमारी ओर विशेष मुद्रा में देख रही है। मैंने उसे गौरपूर्वक देखना शुरू किया, उसका चेहरा अति सुन्दर था तथा शरीर सुडौल था। इतनी सुन्दर लड़की मैंने पहले कभी नहीं देखी थी। हमारे अन्दर उसके प्रति विकार आना शुरू हो गया, विकार सिर्फ इतना ही था– यह बहुत सुन्दर लड़की है, उसकी सुन्दरता का वर्णन हम शब्दों में नहीं कर सकते हैं, मैं उसके प्रति आकर्षित सा हुआ उसके पास गया, उसने दोनों हाथों से हमारा हाथ पकड़ लिया, फिर मुझे थोड़ा सा जोर लगाकर अपनी ओर खींचा। मैं उसकी ओर खिंचता चला गया, और उसके शरीर के ऊपर झुक गया। उसके शरीर से विशेष प्रकार की सुगंध निकल रही थी, वह सुगंध हमारे शरीर के अन्दर प्रवेश करती गयी। उसी समय मैं अपने होंठों से उसका शरीर स्पर्श करने लगा, उसके शरीर का स्पर्श हमें बहुत अच्छा लग रहा था, उसने मुझे अपनी बाँहों में दबा लिया। उसका माँसल शरीर हमें बहुत अच्छा लग रहा था, उसमें कुछ विशेषता थी। उसके शरीर को स्पर्श करने से मुझे अनुभूति हुई कि यह सामान्य लड़की नहीं है, विशेष प्रकार की लड़की है, क्योंकि उसके शरीर से खुशबू भी निकल रही थी। कुछ समय तक मैं उसके शरीर से चिपका लेटा रहा, फिर उसके भाव हमें अच्छे नहीं लगे। वह सिर्फ हल्का-हल्का मुस्करा रही थी, इतने में हमें ऐसा लगा जैसे हमारे सामने कोई खड़ा हुआ है। मैंने उस ओर को देखा– सामने श्री माता जी खड़ी हुई थीं, उन्हें देखते ही हमारे होश उड़ गये। श्री माता जी हमारी ओर देख रही थीं, उनकी आँखों में तेज था, उनके शरीर के चारों ओर आभा फैली हुई थी। श्री माता जी की देखने की मुद्रा क्रोध रुप में नहीं थी, बल्कि ऐसा लग रहा था जैसे वह हमें गहराई से देख रही हों, उस समय हमारा बहुत बुरा हाल था। मैं उस लड़की से बोला– “देखो सामने श्री माता जी खड़ी हुई हैं, तुम उस तरफ को हो जाओ”। मैं डर के कारण करवट बदलकर लेट गया। मगर लड़की ने अपने दोनों हाथों से मुझे अपनी ओर को कर लिया। मैं समझ गया लड़की अन्दर से शक्तिशाली है। मैंने क्रोध में लड़की से कहा– “तुम्हें श्री माता जी से डर नहीं लगता है?” लड़की ने बड़े आराम से मुस्करा कर उत्तर दिया– “नहीं”। लड़की ने जिस निडर भाव से उत्तर दिया था, मैं आश्चर्यचकित हुआ। मैंने लड़की से प्रार्थना भरे शब्दों में कहा– “मुझे क्षमा कर दो”। हमारे यह शब्द

सुनते ही लड़की का भाव बदल गया, उसके चेहरे की मुस्कराहट गायब हो गयी तथा उसकी आँखें बिलकुल शांत सी हो गयीं, उसने हमें छोड़ दिया, मैं करवट बदल कर लेट गया। हमारे मन में विचार आया– श्री माता जी अभी यहीं खड़ी हैं अथवा चली गयीं हैं। मैंने मुड़कर श्री माता जी की ओर देखा, श्री माता जी वहाँ पर नहीं थीं फिर भी हमें उनका डर लग रहा था कि श्री माता जी ने मुझे देख लिया है, हमारी दृष्टि नीचे (फर्श) की ओर थी, तभी हमें फर्श पर भी एक स्त्री लेटी हुई दिखाई दी, मगर वह पहली स्त्री के समान निर्वस्त्र नहीं थी। मैं पलंग से उतर कर उस स्त्री के पास गया, जैसे ही मैं उस स्त्री को स्पर्श करने के लिए आगे बढ़ा, उसी समय आकाशवाणी हुई– *"आनन्द कुमार तुम अपने भाव बदलो, क्या सोचकर उसे स्पर्श कर रहे हो, तुम्हारे मुँह के अन्दर गन्दगी का ढेर है, शुद्ध होने का प्रयास करो"।* ये शब्द सुनकर हमें बड़ा दुःख हुआ। मैंने अपने मुँह में देखा– उस समय वास्तव में गन्दगी भरी थी, फिर मैंने उस लड़की को देखा, वह हमारे सामने अदृश्य हो गयी, हमारा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! मैं इतना अवश्य कहूँगा इस अनुभव में मैंने दो लड़कियाँ देखीं थी, वह पृथ्वीलोक की नहीं हो सकतीं हैं, क्योंकि पृथ्वीलोक में इस प्रकार की सुन्दरता से युक्त लड़कियाँ नहीं होती हैं। साधकों आप सोच रहे होगे– क्या आनन्द कुमार ऐसा है जैसा अनुभव में क्रिया कर रहा था, सच तो यह है, हमारा चरित्र अन्दर से बिल्कुल शुद्ध है। जन्म-जन्मांतरों की चित्त में स्थित वृत्तियों के करण यह अनुभव हमें आया है। मैं पिछले कई जन्मों से योग का अभ्यास करता रहा हूँ, योगियों के अन्दर इस प्रकार की वृत्तियाँ कई जन्मों पहले की चित्त में स्थित रहती हैं, फिर योग के अभ्यास के द्वारा उचित समय में बाहर निकलती रहती हैं। इस अनुभव में हमें श्री माता जी दिखाई दे रही थी, वास्तव में वह गुरुतत्त्व है, दीक्षा देते समय गुरू जब शक्तिपात करते है, वह शक्ति (गुरुतत्त्व) साधक के सूक्ष्म शरीर में अन्दर स्थित सूक्ष्म कोशिकाओं में व्याप्त हो जाती है, यही शक्ति उचित समय में साधक का मार्ग प्रसस्त करती रहती है। हमें शुद्धता के कारण इस शक्ति का दर्शन अर्थात श्री माता जी का दर्शन हुआ था, ताकि मैं उस स्त्री की ओर आगे न बढ़ूँ। ऐसा हुआ भी, श्री माता जी के कारण मुझे उस स्त्री से छुटकारा मिल गया। दुबारा दूसरी स्त्री के लिये आकाशवाणी ने हमें सतर्क कर दिया। अनुभव पढ़ने में अच्छा नहीं लगा होगा, मैं इसके लिए क्षमा चाहता हूँ, मगर एक साधक होने के नाते यह अनुभव लिखा है ताकि अन्य साधक को भी इस अनुभव से शिक्षा मिले। इस अनुभव ने हमारी जिन्दगी बदल दी, मुझे अपनी साधना में और व्यक्तिगत जीवन में आगे बढ़ने में सहायता मिली।

नाग ने काटा

आजकल हमारा ध्यान गहरा लगता था, फिर भी कभी-कभी ध्यानावस्था में अनुभव आ जाते थे। हमें एक-दो बार ध्यानावस्था में नाग दिखाई दिया था। हमसे थोड़ी दूरी पर नाग अपना फन उपर की ओर उठाए हुए हमें देख रहा था, मगर हमें नाग से डर नहीं लगता था। एक दिन किसी कारण से ध्यान करने के लिए हमें देर हो गयी, हमारा मन ध्यान करने के लिये बेचैन सा था, जब मैं ध्यान करने के लिये बैठा, तब ध्यान पर बैठते ही हमारा प्राण ऊर्ध्व हो गया। मैं गहराई में चला गया, हमें अपना आभास भी नहीं रहा। उसी समय हमें एक अनुभव आया– चारों ओर हरा-भरा क्षेत्र है, पेड़ पौधे भी बहुत हैं, दृश्य अच्छा लग रहा है। मैं एक पेड़ के नीचे जाकर खड़ा हो गया, उस पेड़ के नीचे एक चबूतरा बना हुआ था, मैं उस चबूतरे पर ध्यान करने के लिए बैठ गया। तभी मुझे अपने सामने एक नाग दिखाई दिया, वह नाग कुण्डली मारे हुए अपना फन ऊपर उठाकर खड़ा हुआ था। मैं उसे गौरपूर्वक देख रहा था, हमें उस नाग का डर नहीं लग रहा था, बल्कि मैं उसे देखकर मुस्करा रहा था, वह भी हमें शांत मुद्रा में देख रहा था। इतने में उसने बड़ी शीघ्रता से हमारे दाहिने पैर के अँगूठे में काट लिया, नाग के काटते ही मैं उछलकर खड़ा हो गया। जिस प्रकार अनुभव में उछलकर खड़ा हुआ, उसी प्रकार मैं स्थूल अवस्था में भी उछलकर खड़ा हो गया। हमारा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- उस समय हमें अनुभव वाला भय लगा था, मगर हमारे कमरे में लाइट ऑन होने के कारण प्रकाश फैला हुआ था। मैं चुपचाप पलंग पर लेट गया, और सोचने लगा– सर्प काटने का क्या अर्थ होता है? ध्यानावस्था में उन साधकों को नाग अक्सर दिखाई देते है जिनकी साधना अच्छी होती है। साधकों ने देखा होगा– स्वप्नावस्था व ध्यानावस्था में नाग तो दिखाई देता है, वह फुंफकार मारता है, पीछा करता है आदि, मगर साधकों को वह नाग काटता हुआ नहीं दिखाई देता है, अगर नाग साधक को ध्यानावस्था में काट ले, तो यह बहुत ही शुभ होता है। उसका अवस्था के अनुसार इनमें से कोई तात्पर्य होता है। **पहला-** ऐसा साधक भविष्य में निश्चय ही तेजस्वी होगा अर्थात उसकी साधना अच्छी होती है, **दूसरा-** गुरुपद पर बैठने के योग्य होगा अर्थात मार्गदर्शन करने की क्षमता उसके अन्दर होती है। **तीसरा-** यशस्वी होगा। **चौथा-** मोक्ष को अवश्य प्राप्त होगा। मैं समझ गया भविष्य में हमारी साधना अवश्य ही अच्छी होगी।

माता कुण्डलिनी शक्ति के दर्शन

मैंने ध्यानावस्था में देखा– चारों ओर हरियाली फैली हुई है, मैं हरे-भरे जंगल की ओर चला जा रहा हूँ। तभी मुझसे थोड़ी दूरी पर घास-फूस की बनी हुई एक झोपड़ी दिखाई दी, झोपड़ी सुन्दर बनी हुई थी। मैं झोपड़ी के दरवाजे पर जाकर खड़ा हो गया, कुछ क्षणों में लगा कि झोपड़ी के अन्दर शायद कोई नहीं है, हमारी इच्छा हुई कि मैं इस झोपड़ी के अन्दर जाकर देखूँ। अन्दर जाने की उत्सुकता इसलिए हुई, क्योंकि आसपास हमें कोई व्यक्ति दिखाई नहीं दे रहा था। फिर यहाँ पर इतनी सुन्दर झोपड़ी किसने बनाई है! मैंने झोपड़ी के अन्दर प्रवेश किया, अन्दर की जगह बिलकुल साफ-सुथरी थी, जैसे वहाँ पर कोई रोज सफाई करता रहता हो। उस झोपड़ी के अन्दर किसी प्रकार का सामान वगैरह नहीं था, झोपड़ी अन्दर से बिल्कुल खाली थी। मगर उसी क्षण हमें सामने दीवार पर एक चित्र टँगा हुई दिखायी दी, उस चित्र को देखकर मैं चौंक पड़ा, क्योंकि मैं जिस चित्र की रोज पूजा किया करता था यह वही चित्र था। यह चित्र भगवान शंकर का था, वैसे बाजार में भगवान शंकर के चित्र कई प्रकार के मिलते हैं, मगर यह चित्र कुछ विशेषता को लिये हुए था। इस विशेषता को एक साधक ही समझ सकता है। मैंने जैसे ही अपनी वाली फोटो उस झोपड़ी के अन्दर देखी, हमारी दृष्टि अपने आप उसी फोटो पर ठहर गयी। इतने में वह फोटो एकदम सजीव सी हो गयी। मैंने सोचा– यह चित्र सजीव कैसे हो गया, भगवान शंकर की आँखें विशेष तरह की मुद्रा में होकर हमें देखने लगीं, होंठ कुछ ज्यादा ही मुस्कराने लगे। हमारे मुँह से निकला– *'प्रभु आप'!* इतना कहते ही हमारी प्रसन्नता एकाएक गायब हो गयी। इसका कारण यह था, उनके गले में लिपटा सुनहरा नाग भी सजीव हो गया, भगवान शंकर के गले से अपनी लपेट खोलना शुरू कर दिया, और वह नाग फोटो से बाहर आने लगा, मेरे मन में विचार आया– मैं बाहर भाग जाऊँ तो अच्छा है, जैसे ही मैंने झोपड़ी से बाहर निकलने का प्रयास करने लगा, उसी समय वह नाग बड़ी तेजी से भगवान शंकर के गले से निकल कर झोपड़ी के दरवाजे पर फन उठाकर खड़ा हो गया। झोपड़ी से बाहर निकलने के लिए दूसरा मार्ग नहीं था, मेरे मन में यह निश्चित हो गया, अब यह नाग अवश्य काट लेगा। मैंने पल भर के लिए फोटो की ओर देखा, फोटो में भगवान शंकर का वही सजीव चेहरा मुस्करा रहा था। बड़े आश्चर्य की बात थी भगवान शंकर के गले में नाग नहीं था, नाग झोपड़ी के दरवाजे पर कुण्डली मारे फन ऊपर की ओर उठा कर जोर-जोर से फुंफकार रहा था। नाग अपनी जगह पर स्थिर बैठा हुआ था और हमें देख रहा था। मैंने समझ लिया– अब हमारी मृत्यु निश्चित है, फिर क्यों न छलांग लगाकर बाहर निकल जाऊँ। मैंने अपनी जगह पर खड़े होकर ही नाग के ऊपर से छलांग लगाई, हमारे द्वारा छलांग लगाते ही नाग तेजी से ऊपर

की ओर उठा और हमारे दाहिने पैर के अँगूठे पर डस लिया। डर के कारण मैं वहीं पर गिर पड़ा, मगर गिरने पर हमारे शरीर पर किसी प्रकार की चोट नहीं आयी, मुझे ऐसा लगा जैसे स्पन्ज के गद्दे पर गिरा हूँ। मैं उठकर बैठ गया, पैर के अँगूठे को अपने हाथों से पकड़ लिया, दर्द का नामोनिशान नहीं था। हमें डसकर नाग फोटो के अन्दर प्रवेश कर गया, तथा पहले की भाँति वह भगवान शंकर के गले में लिपट गया। मैं झोपड़ी से थोड़ी दूर जाकर खड़ा हो गया। मैंने सोचा– नाग ने हमें काट लिया है अब मैं अवश्य मर जाऊँगा, हमारी साधना भी पूरी नहीं हो पायी है, अब हमें समय से पहले ही मरना पड़ेगा। मैं ऐसा सोच ही रहा था तभी हमें अपने सामने एक स्त्री खड़ी दिखाई दी, वह हमारे पास खड़ी हुई थी, उसने लाल साड़ी पहन रखी थी, वह बहुत सुदर थी, उसका चेहरा तेज के कारण चमक रहा था और उसके शरीर से प्रकाश भी निकल रहा था। उसने सिर पर छोटा-सा मुकुट लगा रखा था, उसकी आँखें बड़ी-बड़ी चमकदार और तेजस्वी थीं, वह मन्द-मन्द मुस्करा रही थी। क्षण भर के लिये मैं उसकी सुन्दरता देखता रहा, इतने में उसने अपना दाहिना हाथ आशीर्वाद की मुद्रा में ऊपर की ओर उठाया, उसके हाथ उठाते ही हमारे शरीर के अन्दर से एक और शरीर हमारे समान ही बाहर निकल आया। अब हमारे दो शरीर हो गये, दोनों शरीरों का स्वरुप एक जैसा ही था। उस स्त्री ने हमारे अन्दर से निकले दूसरे शरीर का दाहिना हाथ अपने बाये से पकड़ लिया, फिर उस दूसरे शरीर को हमसे दूर लेकर चली गयी। अब मैं अपने दूसरे शरीर में अपनी अनुभूति करने लगा, जिस शरीर वह स्त्री लिये जा रही थी, वह स्त्री हमसे बोली– "तुम ऐसा क्यों सोचते हो कि तुम मर जाओगे, अब तुम नहीं मरोगे, तुम्हारी साधना भी पूरी होगी"। इतना कहकर वह स्त्री मेरा हाथ पकड़ कर ऊपर आकाश में आगे की ओर जाने लगी, अब मैं आकाश में आगे की ओर उस स्त्री के साथ चला जा रहा था। उस समय ऐसा लग रहा था, मानो माँ अपने बेटे का हाथ पकड़े हुए चली जा रही हो। कुछ क्षणों बाद हमारा ध्यान टूट गया अनुभव भी समाप्त हो गया। जैसे ही हमारी आँखे खुली तो मैंने देखा– हमारे सामने वही फोटो रखी हुई थी, जिसे मैंने झोपड़ी के अन्दर देखा था, इसी फोटो के मैं रोज पूजा किया करता था।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली झोपड़ी– यह झोपड़ी हमारे चित्त का स्वरुप है। झोपड़ी में स्थित नाग और फोटो सजीव से हो गये– जब कोई स्थूल वस्तु सजीव होकर क्रियाशील होती हुई दिखाई दे, तो समझ लेना चाहिये, उसका सम्बन्ध सूक्ष्म जगत से हो गया है तथा सूक्ष्म रुप से क्रिया हो रही है अर्थात उसका आन्तिरिक विकास होने लगा है। नाग ने हमें काटा– वह नाग सूक्ष्म रुप से कुण्डलिनी का ही स्वरुप नाग रुप में था। लाल साड़ी पहने हुई स्त्री– वह माता कुण्डलिनी शक्ति ही है। हमारे शरीर से

दूसरा शरीर प्रकट हो गया– वह मेरा सूक्ष्म शरीर है। फिर वह स्त्री हमारे सूक्ष्म शरीर को लेकर अंतिरिक्ष में आगे की जाने लगी। इसका अर्थ यह है– जब शुरूआत में ही कुण्डलिनी हमारे सूक्ष्म शरीर को पकड़ कर जाने लगी है, इससे यह निश्चय होता है कि भविष्य में मैं उच्चावस्था को प्राप्त करूँगा। कुण्डलिनी का हमारे सूक्ष्म शरीर को लेकर जाने का अर्थ है– कुण्डलिनी हमें निश्चय ही परम पिता (ईश्वर) से भविष्य में मिलवा देगी, क्योंकि कुण्डलिनी शक्ति हमारी माता है, माता ही पिता (ईश्वर) से मिलवा सकती है। इस अनुभव के आने के बाद हमें बड़ी प्रसन्नता हुई।

उड्डियान बन्ध व मूल बन्ध का लगना

आजकल हमारा ध्यान बहुत अच्छा लगता था तथा ध्यान की अवधि बढ़ाने के लिए मैं रात्रि के समय 10.30 से 12 बजे तक ध्यान किया करता था, जबकि श्री माता जी ने बताया था रात्रि के 11 बजे के बाद ध्यान नहीं करना चाहिये। मगर मैंने ध्यान की अवधि बढ़ाने के लिये रात्रि के समय ध्यान करना शुरु कर दिया है। अब हमें ध्यानावस्था में एक क्रिया और होने लगी थी, इस क्रिया का अर्थ न समझ पाने के कारण चिन्ता भी होने लगी थी। जब ध्यान करता था तब हमारा पेट अन्दर की ओर होकर पीछे की ओर चिपकता था। कभी-कभी पेट जोर से चिपक जाता था, ऐसा लगता था– कि चिपका हुआ पेट अब पूर्व स्थिति में नहीं आयेगा, इस क्रिया के साथ हमारा गुदा द्वार भी संकुचित होकर ऊपर की ओर खिचाव किया करता था, इन दोनों क्रियाओं का अर्थ न समझ पाने के कारण मैं असमंजस में पड़ गया था और सोचने लगता था, क्या यह क्रिया सही हो रही है अथवा गलत हो रही है। कुछ दिनों पश्चात इस क्रिया के विषय में जानकारी मिल गयी, इससे हमें बहुत खुशी हुई है कि हमारी साधना आगे की ओर बढ़ रही है।

अर्थ- पेट पीछे की ओर चिपकने को उड्डियान बन्ध कहते है। गुदा द्वार संकुचित होकर ऊपर की ओर खिंचने को मूलबन्ध कहते हैं। इन दोनों बन्ध के प्रभाव से प्राण वायु सुषम्ना नाड़ी के अन्दर प्रवेश करने के लिए दबाव देता है।

महायोग मुद्रा

अब कुछ दिनों बाद एक और क्रिया होने लगी थी। जब मैं ध्यान पर बैठता था, तब हमारा शरीर आगे की ओर झुकता था और सिर भूमि पर स्पर्श करने लगता था, फिर श्वांसें तेजी से अन्दर-बाहर होने लगती थीं, जैसे नाग फुंफकार रहा हो। हमें अच्छी तरह महसूस होता था कि हमारी श्वांसें जोर-जोर से अन्दर-बाहर हो रही हैं, मगर मैं इन्हें रोक नहीं सकता था। कुछ समय बाद हमारा सिर भूमि पर दबाव देने लगता था। कभी-कभी हमारा सिर दाहिने पैर के घुटने को स्पर्श करता था, फिर कुछ क्षणों बाद हमारा सिर बायी ओर को धीरे-धीरे जाकर बायाँ घुटने को स्पर्श करता था और फिर सिर सामने की ओर भूमि पर स्पर्श करता था, यही क्रम बराबरा चलता रहता था। यह क्रिया होते समय हमारी श्वांस बड़ी तेजी से चला करती थी, तथा मूलाधार में खिचाव सा होता रहता था। ऐसा लगता था उस स्थान पर वायु का दबाव ज्यादा बढ़ रहा है।

अर्थ- जब साधक का उड्डियान व मूलबन्ध जोर से लगने लगे तथा काफी दिनों तक यही क्रिया बराबर होती रहे, तब साधक को यह समझ लेना चाहिए, उसकी कुण्डलिनी ने अपनी आँखें खोल दी हैं। आँखें खोलने का अर्थ यह मत समझना लेना कि साधक की कुण्डलिनी ऊर्ध्व होने लगी है। कुण्डलिनी का आँखें खोलने को हम यह कह सकते हैं कुण्डलिनी जाग्रत हो गयी है। मगर सामान्य भाषा में कुण्डलिनी जागृति होने का अर्थ उसके ऊर्ध्व होने से ही लगाया जाता है। कुण्डलिनी जागृति होना और कुण्डलिनी ऊर्ध्व होना दोनों अलग-अलग अवस्थाएँ है। जब उड्डियान बन्ध व मूलबन्ध स्वमेव लगते हों, तथा शीघ्र न खुलते हों। कुछ साधकों को मैंने देखा है कि वह उड्डियान बन्ध और मूलबन्ध व जालंधर बन्ध जान-बुझकर लगाने का प्रयास करते हैं ताकि उनकी कुण्डलिनी जाग्रत हो जाये। यह जो श्वांस-प्रश्वांस अपने आप जोर से हाने लगता है इसको भस्त्रिका प्राणायाम कहते है। यह कुण्डलिनी के कारण होता है, क्योंकि साधक का शरीर शुद्ध नहीं होता है। तब भस्त्रिका चलने से शरीर में स्थित सूक्ष्म नाड़ियाँ शुद्ध होने लगती हैं।

ध्यानावस्था में हमारा शरीर आगे की ओर झुकता है तथा सिर भूमि पर लगता है। सिर दाहिने पैर के घुटने को स्पर्श करता है फिर बायें पैर के घुटने को स्पर्श करता है, इसे योग की भाषा में महायोग मुद्रा कहते हैं। इस मुद्रा के समय साधक को शरीरिक रुप से थोड़ी परेशानी होती है क्योंकि मूलबन्ध में खिंचाव हो जाता है तथा प्राण वायु के धक्के मूलाधार चक्र पर लगने लगते हैं। मूलाधार में धक्के लगने से

कुण्डलिनी को ऊर्ध्व होने में सहायता मिलती है अथवा ऊर्ध्व होने का प्रयास करती है। कभी-कभी इसी क्रिया में कुण्डलिनी जाग्रत होने का प्रयास करती है। जिन साधकों को महायोग मुद्रा नहीं होती है वह खाली समय में कृत्रिम रुप से इस मुद्रा को लगाने का प्रयास किया करें, इससे साधकों को अपना अभ्यास बढ़ाने में अवश्य सहायता मिलेगी। कुछ मार्ग दर्शकों का कहना है– ध्यानावस्था में आगे की ओर झुककर सिर का भूमि पर स्पर्श करना अच्छा नहीं होता है। मगर मैं इस बात को नहीं मानता हूँ बल्कि साधकों को राय देता हूँ, इस महायोग मुद्रा का अवश्य अभ्यास करें, यह हमारी स्वयम् की अनुभूति है।

अब हमारा मन ईश्वर चिंतन में लगा रहता था तथा तीव्र इच्छा होती थी, कि प्रभु को प्राप्त करूँ। श्री माता जी की हमें याद बहुत आती थी, वह हमें बहुत अच्छी लगती थीं। मैं सोचा करता था– श्री माता जी हर जन्म में हमारी गुरू माता बनें, मैं उनका शिष्य बनूँ। क्योंकि योग सम्बन्धी कोई समस्या आने पर प्रत्यक्ष बात तो कर सकता हूँ। हमने बहुत से शिष्यों को देखा है वह अपने गुरू से बात भी नहीं कर सकते हैं। उनके गुरू के पास समय ही नहीं होता है कि वह अपने हर शिष्य से बात कर सकें अथवा योग के विषय में शंका समाधान कर सकें। हमारा सोचना है– गुरुओं को उतने ही शिष्य बनाने चाहिए जितनों का मार्गदर्शन कर सकें अथवा मार्ग दर्शन के लिए समय हो। सिर्फ स्थूल जगत में प्रतिष्ठा व यश प्राप्त करने के लिए ढेर सारे शिष्य नहीं बना लेने चाहिए। यदि शिष्य उचित संख्या में होंगे तब शिष्यों को साधना करने में किसी प्रकार की कठनाई या परेशानी का सामना नहीं करना पड़ेगा, क्योंकि शिष्यों की साधना गुरु की देखरेख में होगी। खैर छोड़िये, मैं कहाँ गुरुओं के चक्कर में पड़ गया यह उनका व्यक्तिगत मामला है। मुझे उनको शंका की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए, आखिरकार वह गुरू पद पर हैं।

अहंकार का दर्शन

मुझे अनुभव आया– मैं किसी घर में हूँ, मेरे हाथ में एक काला नाग है, मैंने उस नाग को पकड़ रखा है। उस समय मुझे उस काले नाग से बिलकुल डर नहीं लग रहा था, बल्कि मैंने अपनी इच्छा से पकड़ रखा था। नाग को बीच में पकड़ कर उसी की ओर देख रहा था। वह फन उठाकर हमारे मुँह की ओर जोर से फुंफकार मारता था। जैसे ही वह फुंफकार मारता था उसी समय मैं अपने मुँह से “ॐ” शब्द का दीर्घ उच्चारण करता था। हमारे द्वारा ॐ का उच्चारण करने से नाग की लम्बाई अपने-आप घटने लगती थी, फिर वह नाग बिलकुल छोटा सा हो जाता था तथा वह सुस्त भी हो जाता था जिससे वह फुंफकार

नहीं मार पाता था। कुछ समय बाद मैंने नाग को भूमि पर छोड़ दिया। हमारे हाथ से छूटने के बाद नाग की लम्बाई फिर अपने आप बढ़ने लगी, वह फिर पहले जैसा लम्बा हो गया। मैंने फिर दुबारा नाग को पकड़कर उठा लिया। नाग ने फिर हमारे मुँह की ओर जोरदार फुंफकार मारी, जब वह फुंफकार मारता था तब मैं मुस्करा देता था। मैं नाग से बोला– अच्छा, तुम्हारा क्रोध अभी शांत किये देता हूँ। मैंने पहले की भाँति फिर से दीर्घ ओंकार किया, हमारे द्वारा ओंकार करते ही उसकी लम्बाई अपने आप कम होने लगी, फिर मैंने उसे भूमि पर छोड़ दिया। हमारे द्वारा छोड़ते ही वह पहले की भाँति फिर से लम्बा हो गया,और वह एक तरफ को दौड़ने लगा, मैंने नाग को फिर से अपने हाथ में पकड़ लिया। मेरे द्वारा पकड़ते ही वह पहले जैसी क्रियाओं की पुनरावृत्ति करने लगा। हमें इस कार्य को करने में मजा आ रहा था, तभी हमारा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- ध्यान के समाप्त होने पर अब हमें नाग का डर सा लगने लगा। मुझे नहीं मालूम उस समय मैंने नाग को कैसे पकड़ रखा था, क्योंकि हमें नाग से बहुत डर लगता है। बाद में मुझे जानकारी हुई, यह नाग अहंकार का प्रतीक है, 'ॐ' ब्रह्म की शक्ति है इसीलिए ओंकार करते समय उसका स्वरुप घटने लगता था। साधकों! आप यह कह सकते हैं पहले नाग ने जब काटा था, तब उसे कुण्डलिनी का प्रतीक बताया था। यह नाग अहंकार का प्रतीक बता रहे हैं। योग में कभी-कभी एक ही प्रकार की वस्तु के अलग-अलग अर्थ निकलते हैं, इसलिए साधकों को अपना अनुभव का अर्थ निकालने के लिए अपने मार्गदर्शक की सहायता अवश्य ले लेनी चाहिए। ध्यान के स्तर बदल जाने पर एक ही प्रकार के अनुभव का अर्थ भी बदल जाता है। यदि आप गौर पूर्वक बारीकी से अनुभव को देखेंगे तब समझ आयेगा, एक ही प्रकार के अनुभवों में कहीं-न-कहीं थोड़ा सा फर्क अवश्य होता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है साधक को कुछ अंतराल के बाद एक जैसा ही अनुभव आ जाता है, इसका अर्थ एक जैसा भी हो सकता है अथवा अलग-अलग भी हो सकता है, ऐसी अवस्था में आप अपने मार्ग दर्शक से अर्थ पूछ लें। कुण्डलिनी जब नाग के रुप में दिखाई देती है तब नाग का रंग कम काला अथवा सुनहरा होता है, जब साधक को साधना में उच्चावस्था प्राप्त होती है तब कुण्डलिनी का स्वरुप सुनहले नाग अथवा तपे हुए सोने की भाँति दिखाई देता है। मगर अहंकार का रंग गहरा काला ही होता है तथा देखने में थोड़ा बुरा सा या डरावना सा दिखाई देता है।

भगवान शंकर और ॐ का दर्शन

आज हमें ड्यूटी से कमरे में आने में काफी देर हो गयी थी, मैंने सोचा–अब 15-20 मिनट ही ध्यान पर बैठ लूँ। मैं रात्रि के 11.30 बजे ध्यान पर बैठ गया, ध्यान पर बैठते ही हमारी गर्दन पीछे की ओर हो गयी, कुछ क्षणों बाद मैं गहराई में चला गया, तभी ध्यानावस्था में हमें दिखाई दिया– सामने की ओर घोर अंधकार है, मैं उसी अंधकार में आगे की ओर चला जा रहा हूँ। कुछ क्षणों बाद हमें लगा– शायद अंधकार में कुछ दिखाई पड़ रहा है, मैंने अपनी दृष्टि उसी जगह पर स्थिर कर दी। घोर अंधकार में गोलाकार नीले रंग का चमकदार प्रकाश दिखाई देने लगा, यह नीले रंग का गोलाकार प्रकाश धीरे-धीरे हमारे पास आ रहा था। इस गोलाकार प्रकाश के मध्य में एक आकृति सी बनने लगी, आकृति स्पष्ट होने पर मैं प्रसन्न होने लगा। गोलाकार प्रकाश के मध्य में भगवान शंकर ध्यान मुद्रा में बैठे हुए थे, भगवान शंकर के शरीर से नीले रंग का प्रकाश निकल रहा था। कुछ क्षणों तक मैं भगवान शंकर को ध्यानस्थ मुद्रा में देखता रहा। फिर भगवान शंकर अदृश्य हो गये, मैंने अपने आपको अंधकार में खड़ा पाया।

मैं भगवान शंकर के विषय में सोच ही रहा था। इतने में हमारी दृष्टि स्वमेव ऊपर की ओर हो गयी। हमारा मुँह भी ऊपर आसमान की ओर हो गया था हमें आश्चर्य हो रहा था। क्योंकि यह क्रिया मैंने प्रयत्न पूर्वक नहीं की थी बल्कि स्वमेव हो गयी थी। कुछ क्षणों बाद हमें एक नीले रंग का चमकदार बिन्दु दिखाई दिया। उसी नीले रंग के बिन्दु के अन्दर से प्रकाश निकलने लगा और गोलाकार आकृति में फैलने लगा, यह प्रकाश गोलाकार आकृति में धीरे-धीरे फैलता जा रहा था। अब प्रकाशित बिन्दु गोलाकार आकृति में बदल चुका था, यह गोलाकार प्रकाश लहरनुमा आकार में चारों ओर फैल रहा था, फिर यह नीले रंग के प्रकाश की गोलाकार आकृति सारे आकाश में व्याप्त हो गयी। इस प्रकाश के केंद्र में 'ॐ' की आकृति धीरे-धीरे स्पष्ट होने लगी, अब मैं गोलाकार प्रकाश के अन्दर तेजस्वी 'ॐ' को देख रहा था। कुछ समय बाद गोलाकार नीला प्रकाश अपने आप में सिकुड़ने लगा। कुछ समय तक 'ॐ' का स्वरूप स्पष्ट दिखायी देता रहा, फिर 'ॐ' का स्वरूप धीरे-धीरे हमसे दूर जाकर ओझल होने लगा। गोलाकार प्रकाश ने सिकुड़कर बिन्दु का स्वरुप धारण कर लिया। फिर बिन्दु भी अदृश्य हो गया। मैं अपना मुँह आसमान की ओर किये हुए खड़ा था, तभी हमारा ध्यान टूट गया। हमारी गर्दन पीछे की ओर पीठ से चिपक गयी थी, मैंने सिर को दोनों हाथों का सहारा देकर सीधा किया। उस समय रात्रि के साढ़े बारह बज रहे थे, हमारा स्थूल शरीर थक गया था। अतः मैं आसन से उठकर चारपाई पर लेट गया।

अब मैं बहुत व्यस्त हो गया था, शरीर थका-थका सा रहने लगा, आखिरकार मैं बीमार हो गया। मेरी साधना पूरी तरह से बन्द हो गयी थी। डॉक्टर से इलाज करा रहा था, कमजोरी इतनी आ गयी थी, कि हमारे एक मित्र हमें सहारा देकर डिस्पेंशरी ले जाया करते थे। एक दिन मैंने डॉक्टर से छुट्टी लिखने को कहा, तब डॉक्टर ने हमें दुबारा चेक किया और छुट्टी लिखने से मना कर दिया। डॉक्टर बोला– आप बिलकुल ठीक हैं क्यों आप मेडिकल छुट्टी माँग रहे हैं, आप ड्यूटी कर सकते हैं। हमें डॉक्टर की बात बड़ी आश्चर्य जनक लगी, हमारा दोस्त नेता टाइप व प्रभावशाली व्यक्तित्व वाला था, उसके कहने पर डॉक्टर ने झिझकते हुए एक सप्ताह की छुट्टी लिख दी, बाद में हमें प्राइवेट इलाज कराना पड़ा। फिर मैंने श्री माता जी को पत्र लिखा– उसमें हमने बीमारी का सारा विवरण लिखा था, श्री माता जी का पत्र हमें डेढ़ माह बाद प्राप्त हुआ। श्री माता जी स्वयं बीमार थीं इसलिए हमें पत्र लिख नहीं पाईं थी। जब श्री माता जी का पत्र हमें प्राप्त हुआ, तक मैं उस समय बीमारी से ठीक हो चुका था। बीमारी के समय मैं सोचा करता था– अगर मैं मर जाऊँ तो अच्छा है क्योंकि स्थूल शरीर में बहुत ज्यादा कष्ट हो रहा था। तथा मानसिक रूप से कुछ परेशानियाँ भी भोग कर रहा था।

श्री माता जी ने पत्र में लिखा– "मनुष्य का जन्म मिलने के बाद, शरीर त्यागने के बुरे विचार को त्यागकर, शरीर के द्वारा ज्यादा-से-ज्यादा फायदा उठाना चाहिए, दुनिया के साथ साधक का मनमुटाव रहता ही है, समाज की यही धरणा समझकर साधक को दुःखी नहीं होना चाहिए बल्कि दया करना चाहिए क्योंकि वह अज्ञानी है। आपकी साधना जब अच्छी हो जायेगी तब आप अपने को स्वयं सुरक्षित महसूस करेंगे और दुनिया के साथ तृतीय पुरुष की भाँति व्यावहार करेंगे। साधना में अधीरता से काम नहीं चलता है, यह सफर बहुत लम्बा है तथा जटिल भी है, थोड़ा धीरज रखो। स्थूल शरीर जीवित क्यों रखूँ, ऐसा विचार न कीजिए, यह शरीर तो गुरू का है"। श्री माता जी का पत्र पढ़कर हमें प्रसन्नता हुई, हमारे अन्दर साहस और बढ़ गया। धीरे-धीरे स्वस्थ होने के कारण थोड़ी-थोड़ी साधना करना शुरू कर दी थी।

श्री माता जी का दर्शन

हमारी साधना एक बार फिर तीव्र गति से होना शुरु हो गयी थी, मुझे एक दिन ध्यानावस्था में श्री माता जी के दर्शन हो गये। मैंने देखा– हमारे समाने एक बहुत बड़ा प्रकाश वलय प्रकट हो गया है, यह प्रकाश वलय बहुत तेज था, आँखें चकाचौंध हो रही थीं। कुछ क्षणों बाद देखा– उस प्रकाश वलय में श्री

माता जी ध्यान मुद्रा में बैठी हुई हैं, उनका चेहरा सूर्य के समान चमक रहा है तथा उनके शरीर से प्रकाश निकल रहा है। मैं बोला– अरे यह तो श्री माता जी हैं, मगर श्री माता जी कुछ नहीं बोलीं। कुछ क्षणों बाद श्री माता जी अदृश्य हो गयीं। हमारा अनुभव समाप्त हो गया।

साधना करने की तीव्र इच्छा

अब मैं साधना करने में रूचि अधिक लेने लगा था। साधना करने की इच्छा हमारे अन्दर इतनी ज्यादा प्रबल हो गयी कि मेरा मन अब नौकरी में नहीं लगता था। मैं सोचता रहता था– नौकरी करने से हमारी भौतिक आवश्यकताऐं पूरी होंगी और साधना करने से हमें आध्यात्मिक लाभ मिलेगा। भौतिक लाभ से अच्छा है कि आध्यात्मिक लाभ कमाया जाये वह हमें मरणोपरांत काम आयेगा। भौतिक उपलब्धियाँ सिर्फ स्थूल जगत तक ही सीमित हैं। अब हमारे मन में इसी प्रकार के विचार आने लगे। हमें मालूम है साधना करने के लिए स्थूल वस्तुओं की भी आवश्यकता पड़ती है। जब तक स्थूल शरीर है तब तक भोजन, कपड़े आदि की आवश्यकता पड़ती रहेगी। इसके लिए मैंने सोचा– ऐसी कई जगहें हैं जहाँ पर भोजन, कपड़ा आदि मुफ्त मिलता है, हाँ ऐसी जगहों पर कुछ-न-कुछ काम करना पड़ता है। बहुत से संन्यासी या योगी ऐसे भी हैं वह सिर्फ ईश्वर चिंतन में लगे रहते हैं और अपनी आवश्यकताऐं माँग कर पूरी कर लेते हैं। मैंने सोचा– ऐसी जगहें ऋषिकेश व हरिद्वार में ज्यादा हैं, वहाँ साधना करने का अधिक समय मिलेगा। अब नौकरी करने की हमारी इच्छा नहीं रह गयी थी।

इस समय मेरी उम्र 26 वर्ष के लगभग है अब मेरा ध्यान पत्नी की ओर गया, तो सोचा– माँ और पत्नी में क्या फर्क है, पत्नी जब हमारे बच्चे की माँ बन गयी तब यह बच्चा हमारा ही अंश है। पत्नी जब हमारे अंश की माँ है, तो क्या हम उसे माँ के भाव से नहीं देख सकते हैं? जब मेरा ध्यान पत्नी की ओर जाता था तब वह हमें हमारी माँ जैसी दिखाई पड़ती थी। फिर मैंने श्री माता जी को पत्र लिखा, उसमें मैंने अपने मन की सारी बातें लिख दी। कुछ समय बाद हमें श्री माता जी का पत्र मिला उसमें लिखा था– "आनन्द कुमार, तुम्हारी इच्छा नौकरी छोड़कर साधना करने के लिए हरिद्वार-ऋषिकेश जाने की है, वहाँ खाना मुफ्त मिलता है इस बात की पहले जानकारी कर लीजिए, ऐसे आश्रमों में काम बहुत करना पड़ता है, साधना करने के लिए समय नहीं मिलेगा। आपने शादी करके पहले गलती की है, फिर एक बच्चे के पिता भी बन गये हो। अब आप हमसे पूछ रहे हो– क्या मैं पत्नी को माँ के रुप में देख सकता हूँ? अब ऐसा

करना एक तरह का पाप ही है अगर तुलसीदास की तरह आपकी पत्नी खुशी से तैयार हो जाती है तब वह बात अलग है। आपकी पत्नी तड़पती रहे और आप घर से निकल पड़ों, यह बात ठीक नहीं है। पहले आप उसके लिए रोटी-पानी का इंतजाम कर दीजिए। एक लड़का हो जाने के कारण शास्त्र के अनुसार आप मुक्त हो सकते हैं, ऐसी छोटी उम्र में साधना की तीव्र लालसा व लगन आपके मन में है ऐसी जवानी में तुम पत्नी को माँ के रुप में देखना चाहते हो, इस विशेष गुण, त्याग और वैराग्य के लिए तुम्हारी सराहना करती हूँ। ऐसा लड़का योगी माँ को मिले तो उसको खुशी है, ऐसे बच्चे को माँ बहुत चाहती है। लेकिन आनन्द कुमार गीता का उपदेश देखो- तो कर्तव्य ही श्रेष्ठ माना गया है जो गलती आपसे पहले हुई है, उसके लिये अब पछताना क्या? फिर भी आपको पूर्ण वैराग्य हो गया है तो आप किसकी मानोगे। जिसको वास्तविक वैराग्य प्राप्त हुआ हो उसको कौन रोक सकता है। वह अपने के लिए नहीं सोचता है वह प्रभु का प्यासा दर-दर भटकर अपने ध्येय को प्राप्त कर लेता हैं, लेकिन ऐसे लोग लाखों में एक ही मिलते हैं, आप शांत रहिये अपनी साधना बढ़ाइए, आपकी जो भी इच्छा होगी प्रभु पूरी कर देगा”।

‘आपकी श्री माता जी’

साधकों! हमारी शादी व लड़का साधना करने से पूर्व हुए थे, उस समय मैं एक साधारण मनुष्य था, मुझे स्वयं मालूम नहीं था कि मैं भविष्य में साधना करूँगा वरना मैं शादी ही नहीं करता।

भगवान शंकर के दो रूपों में दर्शन

आज सांयकाल 8 बजे ध्यान पर बैठा, मैंने ध्यानावस्था में देखा– चारों ओर प्रकाश फैला हुआ है। वहीं पर भगवान शंकर खड़े हुए हैं, वह हमारी ओर देखकर मुस्करा रहे हैं। भगवान शंकर को देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई, मैं भगवान शंकर को टकटकी लगाए हुए देख रहा था, कुछ क्षणों में भगवान शंकर के शरीर से दूसरा शरीर प्रकट हो गया, दूसरा शरीर भी पहले वाले शरीर के स्वरुप के समान था। भगवान शंकर का दूसरा स्वरूप पहले वाले स्वरूप के बगल में खड़े हो गये, वह भी मुस्करा रहे थे। हमने जब भगवान शंकर के दोनों स्वरूपों की ओर देखा– तब हमारी हँसी छूट गयी। हमारे मुँह से निकला– *“वाह भगवान! आप दो-दो रूपों में”।* उन दोनों के स्वरूपों में कोई अन्तर नहीं था दोनों एक ही समान थे, कुछ

क्षणों तक मैं दोनों स्वरूपों को देखता रहा, फिर दूसरे वाला भगवान का शरीर पहले वाले शरीर में समा गये, कुछ क्षणों बाद वह भी अंतर्ध्यान हो गये, अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- जब इस प्रकार कोई देवता दो स्वरूपों में प्रकट होकर दर्शन दे, तब अभ्यासी को समझ लेना चाहिये, उसका सूक्ष्म शरीर भी ध्यानावस्था में बाहर निकलने वाला है अथवा निकलता है मगर यह अभ्यासी समझ नहीं पाता है, कि उसका आन्तरिक विकास हो रहा है।

भगवान बजरंगबली के दर्शन

यह अनुभव हमें स्वप्नावस्था में आया– हमने देखा हमारे सामने अन्तरिक्ष से एक प्रकाश पुंज हमारी ओर चला आ रहा है। मैं उस प्रकाश पुंज को गौर पूर्वक देखने लगा, वह हमारे सामने हमसे थोड़ी दूरी पर आकर स्थिर हो गया। मैं टकटकी लगाए हुए उत्सुकता वश उस प्रकाश पुंज को देख रहा था। तभी उस प्रकाश में भगवान बजरंगबली दिखाई दिये, उनकी मुद्रा बड़ी विचित्र थी, उन्होंने पालथी लगाई हुई थी तथा अपने दोनों हाथ जोड़ रखे थे, आँखें बन्द थीं जैसे ध्यान कर रहे हों। मैं उन्हें कुछ क्षणों तक देखता रहा, उसी समय हमारे अन्दर विचार आया– इन्होंने अपने हाथ क्यों जोड़ रखे हैं, कुछ क्षणों तक भगवान बजरंगबली हमें दर्शन देते रहे फिर अदृश्य हो गये। हमारा अनुभव समाप्त हो गया मेरी आँखें खुल गयी, मैं हड़बड़ा कर उठकर बैठ गया, घड़ी की ओर देखा– उसमें पौने चार बज रहे थे हमारे ध्यान का समय हो गया था। मैं सोचने लगा– आज भगवान बजरंगबली के दर्शन कैसे हो गये, इन्होंने हम पर कैसे कृपा कर दी, मैं तो इनका स्मरण नहीं किया करता हूँ, मैं तो सिर्फ भगवान शंकर का स्मरण किया करता हूँ। वैसे भगवान बजरंगबली जी ग्यारहवें रुद्रावतार हैं। कुछ सालों बाद मालूम हुआ भगवान बजरंगबली जी से हमारा गहरा नाता है, जिसे हम यहाँ पर स्पष्ट नहीं लिख सकते हैं। भविष्य में इन्होंने कई बार मुझे दर्शन दिये तथा हमारा मार्गदर्शन भी किया है। हम इनका बहुत सम्मान करते है।

वासना के दर्शन

मैं सुबह 3.30 बजे ध्यान करने के लिए बैठ गया। ध्यानावस्था में अनुभव आया– मैं अंधकार में आगे की ओर चला जा रहा हूँ, अंधकार इतना अधिक है उसमें कुछ भी नहीं दिखाई दे रहा है, हमें अपना हाथ भी नजर नहीं आ रहा है। अंधकार में सामने की ओर हमसे दूर तेज प्रकाश दिखाई दे रहा था फिर वह प्रकाश अदृश्य हो जाता था, यह प्रकाश किसी वाहन के हेड लाइट के समान था। ऐसा लगता था– जिस जगह से यह प्रकाश आ रहा है उसका केंद्र हमसे बहुत दूर है, प्रकाश बहुत ही तेज था। यह प्रकाश जब हमारे मुँह पर पड़ता था, तब हमारी आँखें बन्द हो जाती थीं। हमारे मुँह पर प्रकाश पड़कर क्षण भर में एक ओर हो जाता था, उस समय मैं ठहर जाता था, फिर अंधकार में मैं आगे की ओर चलने लगता था। मैं आगे चला जा रहा था तभी हमारे पैर अपने आप रुक गये, क्योंकि हमारे सामने एक तरूण लड़की खड़ी हुई थी, वह देखने में बहुत सुन्दर थी तथा लाल रंग के कपड़े पहने हुए थी। मैंने उसे गौर पूर्वक देखा, वह युवती 17-18 वर्ष की लग रही थी, वह धीरे-धीरे मुस्करा रही थी उसका चेहरा बहुत सुन्दर था। सबसे बड़ा आश्चर्य यह था कि अंधकार के कारण मैं अपना शरीर नहीं देख सकता था, मगर हमसे थोड़ी दूसरी पर खड़ी हुई युवती बिलकुल स्पष्ट दिखाई दे रही थी, उसके शरीर पर अंधकार का कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा था। कुछ क्षणों के लिए हमें घबराहट सी महसूस हुई, क्योंकि वह हमारे सामने बिलकुल पास खड़ी थी। वह हमें अश्लील अश्लील मुद्रा में देख रही थी, इस मुद्रा का वर्णन तो मैं खुलकर नहीं लिख सकता हूँ। इतना अवश्य लिखूँगा– उसके देखने व मुस्कराने का तरीका अच्छा नहीं था, उसने हमें अपनी ओर आने का इशारा किया, मगर मैं अपनी जगह पर स्थिर खड़ा रहा। जब मैं अपनी जगह पर से नहीं हटा, तब वह स्वयं दो तीन कदम चलकर हमारे पास आ गयी। हमारे पास लड़की के आ जाने पर हमें शर्म के कारण घबराहट सी महसूस हो रही थी। हमें ऐसा लगा जैसे हमारे पैर भूमि पर चिपक गये हों, क्योंकि चाहकर भी मैं पीछे की ओर हट नहीं सका था। हमारे पास आकर उस लड़की ने अपनी दृष्टि हमारे चेहरे पर स्थिर कर दी, उसका चेहरा हमारे अति पास था, हमारे अन्दर विचार आया– "यह लड़की कितनी सुन्दर है"। दूसरे ही क्षण मैंने अपनी दृष्टि उसके चेहरे से शर्म के कारण हटा ली और नीचे की ओर कर ली। दृष्टि नीचे करते ही हमें उसका सारा शरीर दिखाई देने लगा, हमने देखा– उसके कपड़े पारदर्शी हैं, उसके सारे अंग साफ-साफ दिखाई दे रहे हैं, फिर मैंने एक बार हिम्मत करके उसकी ओर देखा, वह पहले की भाँति हमें देख रही थी। ऐसा लग रहा था जैसे हमारे अन्दर की कोई चीज पढ़ रही हो, घबराहट के कारण हमारा हाल बुरा था। हमें अपना होश आने लगा कि मैं ध्यान पर बैठा हूँ, अनुभव समाप्त हो गया।

अनुभव समाप्त होने के बाद हमें बहुत दुःख हुआ, यह स्त्री हमें क्यों दिखाई दी। मैं किसी स्त्री को याद नहीं करता हूँ किसी भी स्त्री को बुरे भाव से नहीं दिखता हूँ। सिर्फ अपनी साधना से मतलब रखता हूँ, मैं तो सिर्फ श्री माता जी को याद करता हूँ, फिर हमें ऐसे अनुभव क्यों आते हैं, मैं बड़ा दुःखी हुआ। थकान के कारण हमें सुबह 5.30 बजे नींद आ गयी। फिर स्वप्नावस्था में हमें अनुभव आया– मैं कहीं चला जा रहा हूँ, कुछ क्षणों में सामने की ओर एक बड़ा सा दरवाजा दिखाई दिया, उस दरवाजे के अन्दर से हमें एक लड़की आती हुई दिखाई दी, वह लड़की हमारे सामने आकर खड़ी हो गयी। जैसे ही वह लड़की हमारे सामने आयी, मैंने उसे पहचान लिया यह वही लड़की थी जिसे मैंने थोड़ी देर पहले ध्यानावस्था में देखा था। उस लड़की के हाव-भाव अबकी बार भी अच्छे नहीं थे, बिल्कुल पहले जैसे थे, मैं चुपचाप खड़ा हुआ था। अब की बार पहले जैसा दृश्य नहीं था चारों ओर प्रकाश फैला हुआ था। लड़की ने हमसे कहा– *"आनन्द कुमार हमारे घर के अन्दर आ जाओ, साथ ही दरवाजे की ओर इशारा किया जिधर से आयी थी"।* हमारे मुँह से निकला–*"नहीं"।* मगर उसने बुरा नहीं माना बल्कि मुस्करा दी, तभी अनुभव भी समाप्त हो गया।

अबकी बार लड़की पहले से ज्यादा सुन्दर दिखाई दे रही थी। सुबह के छः बज रहे थे। अब हमारा हाल बहुत बुरा था क्योंकि वही लड़की फिर दुबारा दिखाई दी थी। अब मैं क्या करूँ यही हाल रहा, तो हमारी साधना कैसे होगी। हे भगवान! मुझे क्षमा करना, मैं इन लड़कियों से दूर रहना चाहता हूँ। मैंने स्थूल जीवन में भी लड़कियों से बोलना बन्द कर दिया था, सिर्फ मजबूरी में बोलता था। मैंने तुरन्त श्री माता जी को पत्र लिखा– उसमें अनुभव को विस्तार से लिख दिया, अबकी बार श्री माता जी ने पत्र का उत्तर शीघ्र ही भेज दिया था। श्रीमाता जी ने पत्र में लिखा था– आपका अनुभव सही है,अनुभव में– *"अंधकार व प्रकाश भी सही है आपने जो लड़की देखी है, वह आपकी वासना की प्रकृति है, इसलिए उससे डरिए नहीं बल्कि तटस्थ रहकर उसका अवलोकन करिए, तथा अपनी साधना में दृढ़ रहना"।* श्री माता जी का पत्र पढ़कर हमारी जान में जान आयी।

अर्थ- हमें ध्यानावस्था में इतना अंधकार इसलिये दिखाई दे रहा था, क्योंकि हमारी साधना कण्ठचक्र में चल रही थी। यहाँ पर अज्ञान और अविद्या का स्थान होता है, तथा कण्ठचक्र से आगे की अवस्था सूक्ष्म जगत से सम्बन्धित होती है। इसलिये अभ्यासी को अपने चित्त पर स्थित तमोगुण की मात्रा को बहुत कम करना पड़ता है, यह अभ्यास के द्वारा धीरे-धीरे कम होने होता है। वह लड़की हमारी ही

वासना की प्रकृति है इस चक्र पर वासना का भी स्थान होता हैं, इसीलिये हमारी वासना लड़की के रुप में दिखाई दी थी।

संकल्प नहीं करना

आजकल दिल्ली विविध-भारती रेडियो पर 7 बजकर 45 मिनट पर सायंकाल के समय प्रायोजित प्रोग्राम सप्ताह में एक बार आया करता था। यह बात सन् 1985 की अंतिम समय की है, शायद दिसम्बर महीना रहा होगा, यह प्रोग्राम धार्मिक आया करता था। शिवपुराण, देवीपुराण तथा अन्य पुराणों की कथाओं पर आधारित झलकियाँ प्रसारित किया करते थे। एक बार की झलकी में बताया गया, भगवान शंकर ने अपने भक्त को स्पप्न में बताया– "मैं अपने भक्तों की सदैव रक्षा किया करता हूँ"। यह शब्द हमारे हृदय के अन्दर प्रवेश कर गये। हालाँकि यह शब्द किसी पुराण से लिए गये थे, वास्तविक सत्यता क्या थी मैं नहीं जानता हूँ। उस समय मैं बहुत भावुक हो गया, और सोचा– मैं भी तो भगवान शंकर का भक्त हूँ क्या भगवान शंकर मेरी भी रक्षा किया करते हैं, यदि यह सही है तो भगवान शंकर हमें अवश्य दर्शन दें, अथवा मैं समझूँगा कि मैं उनका सच्चा भक्त नहीं हूँ। हमारे आँसू बहने लगे, हमने सोचा– अगर दो चार दिनो में भगवान शंकर के दर्शन होते हैं तो ठीक है वरना हमारे अन्दर त्रुटियाँ हैं, फिर मैं ध्यान करने के लिये बैठ गया, एक घण्टे तक ध्यान किया, मगर कोई अनुभव नहीं आया। मैं थोड़ा सा दुःखी भाव में रात्रि के 11.30 बजे लेटा हुआ आँसू बहा रहा था। आँखों में नींद आने का नाम नहीं था, इतने में हमारी आँखें अपने आप बन्द हो गयी, हमें अपना होश नहीं रहा, उसी समय हमें अनुभव आया– हमसे दूर सामने ओर हल्के नीले रंग का तेज प्रकाश दिखाई दिया, फिर वह प्रकाश धीरे-धीरे हमारे पास आने लगा, हमसे थोड़ी दूरी पर आकर वह प्रकाश रुक गया। उस प्रकाश के अन्दर से एक आकृति स्पष्ट रुप से उभरने लगी, वह आकृति कुछ क्षणों में भगवान शंकर के रुप में बदल गयी। अब मैं भगवान शंकर को बिलकुल पास से देख रहा था, वह ध्यान मुद्रा में बैठै हुए थे। उनके शरीर से नीला प्रकाश चारों ओर को निकल रहा था, तथा भगवान शंकर हल्का-हल्का मुस्करा भी रहे थे। उन्हें देखकर मैं बहुत प्रसन्न हो रहा था, इतने में अन्तरिक्ष से आवाज आयी, *"आनन्द कुमार तुम्हें इस प्रकार का संकल्प नहीं करना चाहिए था"।* यह शब्द सुनकर हमारी दृष्टि ऊपर की ओर हो गयी, हमारे अन्दर किसी प्रकार का विचार नहीं प्रकट हो रहा था, फिर भगवान शंकर धीरे-धीरे हमसे दूर जाकर अदृश्य हो गये। हमारा अनुभव समाप्त हो गया और

आँखें भी खुल गयी। मैंने सो नहीं रह था बल्कि सिर्फ आँखें ही बन्द की थीं, मैंने निश्चिय किया अब मैं इस प्रकार का संकल्प कभी नहीं करूँगा।

एक बार मैं दिल्ली में एक सत्संगी के यहाँ से एक पुस्तक लाया था। उस पुस्तक का नाम था– *'चिद्शक्ति विलास।'* इसे स्वामी मुक्तानन्द जी ने लिखा था। इस पुस्तक में स्वामी मुक्तानन्द जी के अनुभव लिखे हुए हैं। मैंने इस पुस्तक के कई पेज पढ़ लिये थे। उसी समय श्री माता जी का पत्र आया, उसमें लिखा था– *आप एक पंथ पर चलिए प्रभु आपको प्रेरणा देगा।* हमने उस पुस्तक को पढ़नी बन्द कर दी। स्वामी मुक्तानन्द जी की पुस्तक "चिद्शक्ति विलास" बहुत अच्छी है, उस पुस्तक को पढ़ने से किसी भी नए साधक को लाभ मिलेगा, इस पुस्तक में लिखा है– अगर किसी साधक को ध्यानावस्था में नाग काट ले, तो उस साधक को अवश्य ही मोक्ष मिलेगा। यही पुस्तक फिर हमने सन् 1992 में मिरज आश्रम में मैंने पढ़ी थी तथा हमें मार्ग दर्शन भी मिला था। हमारे कुछ अनुभव इस पुस्तक से मिलते जुलते हैं, यह पुस्तक हमें अति प्रिय है। स्वामी मुक्तानन्द जी स्वयं एक महान् संत हो चुके हैं, इस पुस्तक में कुण्डलिनी के विषय में बहुत अच्छा लिखा है। मैंने इस पुस्तक का वर्णन इसलिए किया, सन् 1992 में हमें इस पुस्तक से बहुत मार्ग दर्शन मिला था।

कुण्डलिनी शक्ति के दर्शन

आजकल हमारा ध्यान फिर अधिक होने लगा था, क्योंकि हमारे पास काफी समय रहता था। एक दिन ध्यानावस्था में हमें अनुभव आया– एक शिवलिंग है उस शिवलिंग में नाग लिपटा हुआ है, मैं उस लिपटे नाग को देख रहा हूँ, इतने में वह नाग शिवलिंग से अपने चक्कर खोलकर हमारे सामने आकर खड़ा हो गया, हमें उस काले नाग से डर नहीं लग रहा था। नाग हमारे सामने बिलकुल पास आकर कुण्डली मारकर, फन उठाकर खड़ा हो गया और हमें देखने लगा, वह नाग हमें देख रहा था मैं उसे देख रहा था। उसकी आँखें हमें स्पष्ट दिखाई दे रही थीं तथा उसका मुँह भी मैं गौरवपूर्वक देख रहा था। कुछ क्षणों बाद उस नाग ने अपना फन सिकोड़कर थोड़ा मुँह नीचे की ओर कर लिया और कुण्डली खोलकर जिधर से आया था उधर को वापस चला गया। हमसे थोड़ी दूरी पर उसी शिवलिंग पर पहले की भाँति घुमावदार लिपटकर अपने मुँह के अन्दर पूँछ निगल कर,अपनी आँखे बन्द कर ली और शांत हो गया। कुछ क्षणों बाद शिवलिंग भी अदृश्य हो गया। हमारा अनुभव समाप्त हो गया। ध्यानावस्था के समय हमें

नाग का बिलकुल डर नहीं लगा था। मगर ध्यान से उठने के बाद हमें डर लगने लगा था, क्योंकि अनुभव में मैंने उसका मुँह अति पास से स्पष्ट देखा था,वही उसका स्वरूप याद आ रहा था।

इस अनुभव में दिखाई देने वाला नाग कुण्डलिनी का स्वरुप है क्योंकि वह नाग शिवलिंग पर साढ़े तीन चक्कर लगाये हुए लिपटा था, वैसे भी यह कुण्डलिनी मूलाधार चक्र पर शिवलिंग के साढ़े तीन चक्कर लगाए हुए लिपटी रहती है। यह कुण्डलिनी अपनी पूँछ अपने मुँह के अन्दर दाबाये रहती है। जब साधक की कुण्डलिनी जाग्रत होती है तब यह नागिन के रुप में सबसे पहले अपनी आँखें खोलती है, फिर साधना का ज्यादा अभ्यास होने पर, वायु के धक्के उस स्थान पर लगने के कारण मुँह से अपनी पूँछ उगलनी शुरू कर देती है, जब सारी पूँछ अपने मुँह से उगल देती है, फिर साधक का अभ्यास अधिक होने पर, वह कुण्डलिनी अपना मुँह ऊपर की ओर उठाकर ऊर्ध्व होने लगती है, साधक के अभ्यास के अनुसार ही उसकी ऊर्ध्वगति होती है। ऊपर लिखे अनुभव की तरह हमें कुछ अनुभव और आये थे, मगर उनका वर्णन मैं यहाँ नहीं कर रहा हूँ।

नाग ने काटा

एक दिन ध्यानावस्था में अनुभव आया, पहले की भाँति शिवलिंग पर एक नाग लिपटा हुआ दिखाई दिया। कुछ क्षणों बाद उस नाग ने शिवलिंग से अपना चक्कर खोलकर हमारे पास आ गया, फिर हमारे सामने पहले की भाँति फन उठाकर कुण्डली मारकर बैठ गया। मगर अबकी बार वह जोर-जोर से श्वांसें ले रहा था और छोड़ रहा था। उसके श्वांस से निकली हुई वायु, हमारे मुँह को स्पर्श कर रही थी, कुछ क्षणों बाद हमें लगा, नाग क्रोध में फुंफकार रहा है। मुझे उठकर भाग जाना चाहिए, यह विचार हमारे अन्दर आया ही था तभी उसने बड़ी शीघ्रता से हमारे दाहिने पैर के अँगूठे पर काट लिया। उसके काटने से अँगूठे में पीड़ा होने लगी। मैंने पैर के अँगूठे को अपने हाथ से पकड़ लिया और उठकर खड़ा हो गया, तभी अनुभव समाप्त हुआ।

इस अनुभव में एक विशेषता थी। जिस तरह अनुभव में मैं अपने दाहिने पैर के अँगूठे को पकड़कर खड़ा हो गया, ठीक इसी प्रकार मैं स्थूल रुप से भी अपने दाहिने पैर के अँगूठे को पकड़कर खड़ा हो गया था, फिर चारपाई पर लेट गया, चारपाई पर लेटे हुए भी महसूस हो रहा था, हमारे अँगूठे के इस स्थान पर

नाग ने काटा हुआ है। यह बात शायद आपको अचम्भित भी कर रही होगी, कि ध्यानावस्था में नाग ने काटा और स्थूल अवस्था में उसकी अनुभूति हो रही है। कभी-कभी ऐसा भी होता है, यदि सूक्ष्म शरीर पर कोई प्रहार किया गया हो तो स्थूल शरीर भी कष्ट की अनुभूति करता है, क्योंकि स्थूल शरीर को चलाने वाला तो सूक्ष्म शरीर ही है।

अर्थ- यदि कुण्डलिनी साधक को ध्यानावस्था में काट ले, तब अभ्यासी को समझ लेना चाहिये, उसे इसी जन्म में तत्त्वज्ञान की प्राप्ति अवश्य होगी, तत्त्वज्ञान प्राप्त होने के कारण मोक्ष की प्राप्ति होगी। अगर अंहकार ध्यानावस्था में काट ले, तब उस अभ्यासी को स्थूल जगत में सुख, यश, कीर्ति, गुरुपद आदि अवश्य मिलेगा। इस अनुभव में हमें कुण्डलिनी ने काटा है

।

सन् 1986

आदिशक्ति द्वारा ज्ञानामृत पान

मुझे याद आ रहा है यह अनुभव 26 जनवरी 1986 का है। मैंने देखा– मैं एक अबोध बालक हूँ, मैं एक साल से भी छोटा उम्र वाला हूँ अथवा एक साल के बच्चे के समकक्ष हूँ। मुझे किसी स्त्री ने अपने गोद में ले रखा है,मैं उसकी गोद में लेटा हुआ हूँ, फिर उसने कपड़ों के अन्दर से अपना दाहिना स्तन खोल दिया, अपने स्तन के पास मेरा मुँह में ले गयी, उस स्त्री ने अपना स्तन मेरे मुँह में लगाना चाहा, मगर मैंने अपना मुँह एक ओर को कर लिया। फिर उस स्त्री ने अपने हाथ से हमारे सिर पर अपनी ओर को दबाव दिया, मेरा मुँह उसके स्तन से स्पर्श हो गया। स्पर्श होते ही मैं स्तन पान करने लगा। उस स्तन से निकलने वाले दूध का स्वाद बहुत अच्छा लग रहा था, कुछ समय तक मैं स्तन पान करता रहा,फिर स्तनपान करना बन्द कर दिया। उस समय वह प्यार से मेरे सिर पर हाथ फिरा रही थी। मुझे उस स्त्री का मुँह स्पष्ट नहीं दिखाई दे रहा था, क्योंकि मेरा मुँह उसके स्तन के नीचे था। कुछ क्षणों में मुझे उस स्त्री ने अपने दोनों हाथों पर उठा लिया। उस समय मेरे मुँह के सामने उसका मुँह था, उसने प्यार से मुझे चूमा फिर मुस्कारने लगी। उसके दाँत मोतियों के समान चमकदार थे, उसकी आँखें बहुत ही सुन्दर व बड़ी-बड़ी थीं, कुल मिलाकर उसका चेहरा बहुत ही सुन्दर था। सिर पर सोने का बना हुआ ऊँचा सा मुकुट भी था, उस मुकुट में ढेरों मणियाँ लगी हुई थीं इन मणियों से प्रकाश निकल रहा था। वह मुझे दोनों हाथों पर उठाए हुए थी मुझे प्यार से देख रही थी। तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अनुभव समाप्त होने के बाद पहले मुझे थोड़ी सी हँसी आयी– मैं अनुभव में एक इतना सा छोटा बच्चा हूँ, एक स्त्री मुझे दूध पिला रही है। इस दूध पिलाने का क्या अर्थ होता है, श्री माता जी ही बता सकती हैं,मैंने सोचा– श्री माता जी को पत्र कैसे लिखूँगा? फिर मैंने निर्णय लिया, वह हमारी गुरू माता है हमें शर्म नहीं आनी चाहिए। मैंने थोड़ा शरमाते हुए श्री माता जी को पत्र लिखा। पत्र का उत्तर एक डेढ़ माह बाद आया, श्री माता जी के पत्र में लिखा था– "ऐसा अनुभव बहुत ही कम साधकों को आता है या कहना चाहिए सैकड़ों साधकों में से एक को आता है। दूध पीने का मतलब होता है माँ दुर्गा शक्ति से ज्ञानामृत प्राप्त करना, उस समय साधक को बिलकुल दूध पीता बच्चा बनना चाहिए, विकार रहित, अहंकार रहित बिलकुल शुद्ध होना चाहिए। साधना में आपकी काफी प्रगति है, मगर साधना में वास्तविक

लक्ष्य एक दो साल में प्राप्त होने वाली चीज नहीं है, और नहीं किसी को प्राप्त हुई है”। माता जी का पत्र पढ़कर हमें बहुत खुशी हुई, क्योंकि हमारी साधना की तारीफ की गयी थी। जब आदिशक्ति किसी साधक को इस प्रकार अपना स्तन पान कराये तब उसे समझ लेना चाहिये, साधक को इसी जन्म में तत्त्वज्ञान प्राप्त होने वाला है।

एक दिन ध्यान में मुझे अनुभव आया– मैं चन्द्रमा को देख रहा हूँ, चन्द्रमा बिलकुल स्वच्छ आकाश में चमक रहा है। चन्द्रमा की चाँदनी चारों ओर फैली हुई है, बिलकुल शांत वातावरण है। मैं चन्द्रमा की ओर देख रहा हूँ, इतने में मेरा ध्यान टूट गया। मझे याद आ रहा है मैंने ध्यानावस्था में कई बार चन्द्रमा देखा है।

अर्थ- स्वच्छ आकाश में जब चन्द्रमा इस प्रकार चमकता हुआ दिखाई दे, तब उसका अर्थ होता है– यह चित्त की एक अवस्था है, साधक शीघ्र ही आध्यात्म में उन्नति प्राप्त करेगा तथा उसकी साधना तीव्र गति से आगे की बढ़ रही है।

मूलाधार में खिंचाव व महायोग मुद्रा का लगना

आजकल मेरी साधना बहुत अच्छी हो रही है। मेरी साधना तो अच्छी हो गयी है, मगर अब ध्यानावस्था में थोड़ी तकलीफ होने लगी है। ध्यानावस्था में मेरी गर्दन पीछे की ओर जाकर पीठ से चिपक जाती है तथा मेरा शरीर भी पीछे की ओर बहुत ज्यादा झुकता है। ऐसा लगता है कि मैं पीछे की ओर गिर आऊँगा, मगर गिरता नहीं हूँ। हां, कभी-कभी मेरा शरीर झूले की तरह झूलता रहता है। इस क्रिया में मेरा शरीर बहुत कष्ट भोगता है। क्योंकि गले में प्राण ऊपर की ओर जाने का प्रयास करता है तब हमारी गर्दन दुखने लगती है, शरीर जल्दी से थक जाता है, सारा शरीर पसीने से तर हो जाता है। अब कुछ दिनों से मेरे मूलाधार चक्र में अजीब सा दर्द होता रहता है। कभी-कभी हल्की सी गुदगुदी भी होती है, कभी यही गुदगुदी हल्के से दर्द का स्वरुप धारण कर लेती है, उस समय लगाता है मूलाधार चक्र में खिचाव सा हो रहा है। खिचाव के समय वेदना सी महसूस होती है, उस समय लगता है– मैं ध्यान करने के लिए बैठा हूँ अथवा मेरे कष्टों का पिटारा खोल दिया गया है। ढेरों तरह के कष्टों की अनुभूति होती है, मगर मजे की यह बात है कष्टों के बावजूद भी ध्यान खुलने का नाम नहीं लेता है, ध्यान उस समय कम-से-कम एक घण्टे का

अवश्य होता है। इस मूलाधार चक्र में दर्द सिर्फ ध्यानावस्था के समय ही नहीं होता है बल्कि जाग्रत अवस्था में भी होता है। कभी-कभी मेरा शरीर ध्यानावस्था में पीछे जाने के बाद सीधा हो जाता है फिर आगे की ओर झुकना शुरू हो जाता है तब तक आगे झुकता रहता है जब तक कि सिर भूमि पर स्पर्श न हो जाये। थोड़ी देर तक मेरा सिर भूमि पर स्पर्श रहता है, फिर सिर दाहिने पैर के घुटने की ओर जाता है, दाहिने घुटने को स्पर्श करने के बाद सिर बाएँ पैर के घुटने की ओर जाता है, बाएँ घुटने को स्पर्श करने के बाद सिर वापस आकर सामने की ओर फर्श से स्पर्श करता रहता है। कुछ क्षणों में श्वांसें तेज चलने लगती है और ये श्वांसें सीधे मूलाधार चक्र में सीधी ठोकर मारती है, जिससे मूलाधार चक्र में दर्द पैदा होता है। श्वांस जितनी तेज चलती है,मूलाधार चक्र उतना ही ज्यादा तेज दुखता है। उस समय मुझे अपना होश रहता है, यदि मैं उस समय सीधा होना चाहूँ तो सीधा नहीं हो सकता हूँ। जब मैं बुरी तरह से थक जाता हूँ तब मेरा ध्यान टूट जाता है। ध्यानावस्था में कभी-कभी महसूस होता है मूलाधार चक्र में प्राणवायु दबाव मार रही है, उसी समय लगता है मेरे गले में भी ऊपर की ओर प्राण वायु दबाव दे रही है।

तीनों बंधों का लगना

कुछ दिनों तक ऊपर लिखी क्रियाएँ होती रहीं, मगर फिर मेरा आगे की ओर झुकना अथवा पीछे की ओर झुकना बन्द हो गया था। अब मैं सिर्फ सीधा बैठता था, उस समय मेरा गुदा द्वार ऊपर की ओर संकुचित होता था तथा मेरा पेट पीछे की ओर चिपकता था, नाभि पीछे पीठ की ओर दबाव मारने लगती थी। शुरू में यह थोड़ा-थोड़ा हल्का सा चिपकता था मगर कुद दिनों पश्चात पेट पीछे की ओर ज्यादा चिपकने लगा, जब पेट चिपक जाता था तब श्वांस बाहर छोड़ने में बड़ी परेशानी होती थी, अर्थात आंतरिक कुम्भक जोर से लगता था तथा हमारी ठोड़ी आगे की ओर झुककर गर्दन के निचले हिस्से में स्पर्श करके दबाव देती थी। इस अवस्था में यह होता था, मैं श्वांस नहीं ले सकता था, और न ही मैं श्वांस छोड़ सकता था। क्योंकि ठोड़ी का गर्दन के निचले हिस्से में दबाव देने पर श्वांस नली अवरूद्ध हो जाती थी।

अर्थ- गुदा द्वार का ऊपर की ओर संकुचित होने को मूलबन्ध कहते हैं। पेट का पीछे की ओर चिपकने को उड्डियान बन्ध कहते हैं। ठोड़ी का गर्दन के निचले हिस्से में चिपकने को जालंधर बन्ध कहते हैं। इस प्रकार तीनों बन्ध एक साथ लगते थे। इन तीनों बंधों के लगने से मूलाधार व पेट का भाग बहुत गर्म

होता था। कभी-कभी यह गर्मी बेचैनी बढ़ा देती थी। प्रिय साधकों ऊपर लिखे दोनों अनुभवों का अर्थ है– मूलाधार चक्र में खिंचाव होता है और महायोग मुद्रा होने लगती है तथा उसी समय भस्त्रिका भी चलने लगती है। इन दोनों प्रकार की क्रियाओं का प्रभाव भी मूलाधार पर पड़ता है तथा प्राणों का दबाव भी मूलाधार चक्र पर पड़ता है, तीनों बन्ध लगना भी अति उत्तम है। ये सभी क्रियाएँ मूलाधार चक्र को गर्म करती हैं तथा कुण्डलिनी पर धक्के मारती हैं। मैं पहले अनुभवों में लिख चुका हूँ– जब साधक को कुण्डलिनी के दर्शन होने लगते हैं, तब साधक की अवस्था कुण्डलिनी ऊर्ध्व होने की होती है। यदि इस अवस्था में गुरू या मार्गदर्शक उसकी कुण्डलिनी जाग्रत करने का प्रयास करेगा, तब कुण्डलिनी बड़े आराम से ऊर्ध्व हो जायेगी। मुझे नहीं मालूम है– इस अवस्था में मेरी कुण्डलिनी श्री माता जी ने क्यों नहीं उठाई थी, जबकि मेरी साधना की अवस्था कुण्डलिनी उठाने के लिए परिपक्व थी, कुछ समय बाद मुझे मालूम हुआ था। हमारे द्वारा होने वाली महायोग मुद्रा पर श्री माता जी बहुत नाराज हुई थी, उनका कहना था– साधक को आगे की ओर झुकना गलत है पीछे की ओर झुकना चाहिए। साधकों, अगर आपको स्वमेव महायोग मुद्रा हो रही है तो बहुत अच्छी बात है। सिर का आगे की ओर झुक कर भूमि पर स्पर्श करना, फिर सिर दाहिने पैर के घुटने व बाएँ पैर के घुटने को स्पर्श करना तथा उसी समय साथ में भस्त्रिका का चलना महा योगमुद्रा कहलाती है।

ऋषिकेश जाना

मैंने पहले ही श्री माता जी से इच्छा व्यक्त की थी– मैं आश्रम में रहना चाहता हूँ ताकि मुझे साधना करने का अवसर ज्यादा से ज्यादा मिल सके। श्री माता जी ने पत्र में लिखा था– “आप ऋषिकेश में स्वामी शिवानन्द आश्रम में जाइए, वहाँ जाकर परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी से व स्वामी माधवानन्द जी से मिलिए, उनसे पूछिए क्या वे आश्रम में आपको रखना चाहेंगे? आप सोच लीजिए, आपको आश्रम में जिंदगी बितानी पड़ेगी, तथा हमारा नाम बताइए”। श्री माता जी ने स्वामी माधवानन्द जी के लिये एक पत्र भी लिखा था, वह पत्र हमें स्वामी माधवानन्द जी को देना था। मैं मार्च 1986 के अंतिम दिनों में शिवानन्द आश्रम ऋषिकेश गया था। मैं दिल्ली से बस द्वारा सुबह ही “शिवानन्द आश्रम” पहुँच गया था, वहाँ जाकर मालूम हुआ कि स्वामी चिदानन्द जी विदेश गये हुए हैं, स्वामी माधवानन्द जी से सुबह 9.30 बजे मिल सकते हैं। सुबह 9.30 से पहले दार्शनिक स्थलों पर घूमता रहा, फिर पौने दस बजे मैं स्वामी

माधवानन्द जी के पास पहुँचा गया, क्योंकि उनसे मिलने का सार्वजनिक रुप से यही समय निश्चित था। इस समय कोई भी व्यक्ति स्वामी जी से मिल सकता था। स्वामी जी सभी से मिलने के लिए एक निश्चित जगह पर आ जाते थे। जब मैं स्वामी माधवानन्द जी के पास पहुँचा, तब वहाँ पर बहुत से पुरुष बैठे हुए थे, उनमें से कुछ पुरुष विदेशी भी थे। स्वामी जी कुछ समय तक कुछ पुरुषों से बातें करते रहे, फिर वहाँ उपस्थित सभी व्यक्तियों से पूछा– आप कहाँ आये हैं तथा परिचय पूछते थे। उस भीड़ में सिर्फ मैं एक ऐसा अकेला पुरुष था, उन्होंने मेरी ओर एक बार देखा मगर हमसे किसी प्रकार की बात नहीं की और नहीं कुछ पूछा। जब वह उठकर जाने लगे, तब रास्ते में मैं स्वामी जी से मिला। मैंने श्री माता जी का नाम बताया और उनका लिखा हुआ पत्र भी दिखाया, मैं उनसे हाथ जोड़कर बोला– "श्री माता जी ने हमें आपके पास भेजा है", स्वामी जी ने हमें एक बार देखा, फिर बिना बोले ही आगे की ओर चल दिये। उनके इस व्यवहार से मुझे बहुत दुःख हुआ। मैं सोचने लगा– दिल्ली से चलकर यहाँ तक आया हूँ स्वामी जी ने हमसे एक भी शब्द नहीं बोला। मैं उसी समय दुखी भाव से आश्रम से बाहर की ओर चल दिया, और सोचने लगा– क्या जब पुरुष महान हो जाता है तब छोटे पुरुषों से बात नहीं करता है! फिर मैंने सोचा– इनकी साधना और इनकी तपस्या ही महानता का कारण है, इसीलिए सभी लोग इन्हें पूजते हैं। उसी समय मैंने निश्चय किया– "मैं अब निश्चित रुप से अत्यन्त कठोर साधना करूँगा, मुझे जिंदगी में चाहे जितनी बड़ी कीमत अदा करनी पड़े, मैं इतना बड़ा योगी बनूँगा, मुझे योग के विषय में किसी योगी के सामने गिड़गिड़ाना न पड़े, मुझे किसी से आध्यात्म के विषय में याचना न करनी पड़े"। यही सोचकर मैं दिल्ली के लिए वापस चल दिया, फिर दिल्ली से अपने घर कानपुर (उ. प्र.) आ गया। मगर हमारे घर में किसी की इच्छा नहीं थी कि मैं नौकरी छोड़ दूँ। फिर कुछ दिनों में मैं दुःखी भाव से दिल्ली वापस आ गया और सोचने लगा– हमें अब क्या करना चाहिए, मैंने यह भी निश्चय किया, अब मैं किसी आश्रम में नहीं रहूँगा, अपने घर में रहूँगा, वहीं पर कष्ट भोगूँगा। इसके बाद मैं श्री माता जी के साथ सितम्बर सन् 1990 में शिवानन्द आश्रम गया था, फिर अप्रैल सन् 1994 में शिवानन्द आश्रम माता जी के साथ गया था। मगर जब अप्रैल 1994 में शिवानन्द आश्रम गया था, उस समय योग में मुझे बहुत कुछ प्राप्त हो चुका था। मुझे किसी योगी के सामने गिड़गिड़ाने की आवश्यकता नहीं थी। और किसी योगी से मिलने की इच्छा नहीं हुई थी, मुझे स्वयं अपने आप से सब कुछ प्राप्त हो जाता है, तब मुझे किसी दूसरे व्यक्ति की क्या जरूरत है।

मैं स्त्री के रुप में

मुझे ध्यानावस्था में अनुभव आया– मैं किसी जगह पर घूम रहा हूँ। चारों ओर हल्का प्रकाश फैला हुआ है। कुछ क्षणों बाद मुझे अपनी याद आयी, क्योंकि मुझे अपने आप में कुछ विचित्रता सी अनुभूति हुई। हमारी दृष्टि अपने शरीर की ओर गयी तब मैं चौंक पड़ा, चौंकने का कारण यह था– "मेरा शरीर स्त्री जैसे शरीर वाला बन गया था"। फिर मैंने अपने शरीर को गौर पूर्वक देखा,तो पाया– "मैं पूर्ण रुप से स्त्री जैसा ही बन गया हूँ"। अब मुझे याद आया कि मैं तो पुरुष था, फिर स्त्री कैसे बन गया? मैं यही सोच रहा था– तभी मेरे शरीर के सारे वस्त्र अपने आप गायब हो गये। हमारे शरीर पर एक भी वस्त्र नहीं था, मैं एकदम निर्वस्त्र था। मैंने चारों ओर देखा कोई पुरुष तो नहीं है, अथवा हमारे शरीर को कोई देख तो नहीं रहा है। मगर आसपास कोई नहीं था, यह जानकर मुझे थोड़ा संतोष सा हुआ। मैं अपने शरीर के अवयवों को गौर पूर्वक देख रहा था। सोचने लगा यह सब कैसे हो गया, मेरा शरीर अत्यन्त सुन्दर था, रंग एकदम गोरा था, शरीर स्वस्थ व मांसल था, सिर के बाल काफी लम्बे-लम्बे सुन्दर थे, चेहरे की त्वचा चिकनी व आकर्षक थी, सारा शरीर सुडौल था। मैं बार-बार अपने सुन्दर शरीर को देख रहा था और सोच रहा था कि मैं कितना सुन्दर बन गया हूँ, परन्तु स्त्री बन जाने के कारण मुझे अपने में शर्म महसूस हो रही थी, मगर मैं कुछ नहीं कर सकता था। उस सुनसान जगह में, मैं एक जगह बैठ गया, इतने में मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

मुझे इस प्रकार के कई अनुभव आये, जिसमें मैं अपने आपको स्त्री के रुप में पाता था। एक बार का अनुभव लिख रहा हूँ– मैं किसी स्थान पर खड़ा हुआ हूँ, इतने में हमें अपनी याद आयी। उत्सुकता बस मैंने अपना शरीर देखा– मेरे शरीर का कमर से ऊपरी भाग स्त्री का है, कमर से निचला भाग पुरुष का है। इस प्रकार का शरीर देख कर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि इस प्रकार के स्त्री व पुरुष कहीं भी नहीं पाए जाते हैं, कि स्त्री व पुरुष एक ही शरीर में स्थित हो। मेरे शरीर पर एक भी वस्त्र नहीं था। फिर भी मैं बहुत प्रसन्न होकर इधर-उधर घूम रहा था। कुछ क्षणों बाद मेरा अनुभव समाप्त हो गया। इस तरह के हमें जितने भी अनुभव ध्यानावस्था में आते थे, उसमें मेरे शरीर पर वस्त्र नहीं होते थे। एक बार मैंने सोचा– मुझे अनुभव आता है कि मैं स्त्री जैसा शरीर वाला बन गया हूँ क्या मैं वास्तव में स्त्री जैसा शरीर वाला बन जाता हूँ। अथवा बाहरी शरीर स्त्री जैसा हो जाता है क्या अन्दर के अंग भी स्त्री जैसे हो जाते हैं अबकी बार यह अवश्य देखूँगा। कुछ दिनों बाद फिर इसी प्रकार का अनुभव आया– मैं किसी स्थान पर खड़ा हूँ, मेरा शरीर पूर्ण रुप से स्त्री का बन गया है। पहले मैंने अपने शरीर को, फिर शरीर के अंगों का उतार चढ़ाव देखा,

तब निश्चय किया– मैं किसी सुन्दर स्त्री से कम नहीं हूँ, उसी समय मुझे याद आया मेरा शरीर अन्दर से भी स्त्रियों की तरह है अथवा नहीं है। यह सोचते ही मैंने अपने शरीर के अन्दर के अवयवों की जाँच करना शुरु कर दिया, कुछ क्षणों बाद मैंने निर्णय किया– हमारा शरीर निश्चिय ही अन्दर और बाहर से स्त्री स्वरुप वाला है।

साधकों! मुझे अनुभव के द्वारा स्त्री के विषय में पूरी तरह से अनुभूति हो गयी थी। इससे मुझे सबसे बड़ा फायदा यह हुआ कि मेरा खिंचाव कभी भी स्त्री की ओर नहीं हुआ। जितना एक लड़की स्वयं अपने विषय में जानती है, उतना मैं भी स्त्री के विषय में जानता हूँ। सच बोलूँ तो मुझे आगे चलकर स्त्रियों के इतने अनुभव आये कि स्वयं किसी स्त्री या लड़की ने अपने जीवन में इतने अनुभव नहीं लिए होंगे जितने मैंने लिए हैं। मुझे अपने शरीर में व लड़की के शरीर में कोई अन्तर नहीं महसूस होता है। मेरे अन्दर विकार आना बिलकुल बन्द हो गया। अब मुझे लड़कियों से बातचीत में तथा उनके साथ रहने (ड्यूटी के समय) में कोई परहेज नहीं करता हूँ, क्योंकि ध्यानवस्था की अनुभूतियाँ, स्थूल संसार की तरह क्षणिक मात्र नहीं होती हैं बल्कि चैतन्यमय होती हैं, इसलिए ऐसी अनुभूतियाँ सदैव याद रहती हैं। ऐसा लगता है यह अनुभूति अभी-अभी हुई है, चाहे मैने वर्षों पहले वह अनुभूति की हो, ध्यानावस्था में आये अनुभवों की यही खासियत होती है।

अर्धनारीश्वर के दर्शन

जो अनुभव मैंने स्त्रियों के विषय में लिखे हैं, इसी तरह के अनुभव कुछ महीनों तक ध्यानावस्था में आते रहे हैं। मुझे एक दिन अनुभव आया– मैं अपने सामने की ओर थोड़ा सा ऊपर की ओर द्रष्टि करके हल्के नीले रंग का प्रकाश देख रहा हूँ। उसी प्रकाश के अन्दर कुछ क्षणों बाद भगवान शंकर प्रकट हो गये, मैं भगवान शंकर के दर्शन करने लगा। मैं उन्हें प्रसन्नता पूर्वक देख रहा था, तभी भगवान शंकर के शरीर का बाएँ ओर का भाग स्त्री के शरीर जैसा दिखाई देने लगा। मुझे आश्‍चर्य हुआ– भगवान शंकर का शरीर आधा स्त्री का था और आधा शरीर पुरुष का था, वह अपने दाहिने हाथ में चमचमाता हुआ त्रिशूल लिये थे और स्त्री वाले शरीर पर लाल रंग की साड़ी पहन रखी थी। गले में चमकती हुई मालाएं पहने हुए थी तथा सिर पर चमकता हुआ मुकुट था, बायाँ हाथ नीचे की ओर था, हथेली खुली हुई थी। उस समय ऐसा लग रहा था जैसे शरीर का आधा भाग चीरकर स्त्री का तथा शरीर का आधा भाग चीरकर भगवान शंकर

का चिपका दिया गया हो। उस समय भगवान शंकर के चारों ओर अण्डाकार रुप में तेजस्वी वलय विद्यमान था, वलय से प्रकाश की चिंगारियाँ बाहर की ओर फूट रही थीं। यह दृश्य कुछ समय तक दिखाई देता रहा, फिर धीरे-धीरे अदृश्य हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में भगवान शंकर का यह अर्धनारीश्वर वाला स्वरुप था। मुझे एक बात याद आ गयी– इस अनुभव के बाद मुझे स्त्री के अनुभव आने बन्द हो गये थे। ध्यानावस्था में मेरा शरीर स्त्री का हो जाता था। मैं ही पुरुष हूँ मैं स्त्री हूँ अर्थात मैं शक्तिमान हूँ और मैं ही शक्ति हूँ। स्त्री शक्ति स्वरुपा होती है, मैं अपने आप में पूर्ण हूँ। भगवान शंकर का अर्धनारीश्वर वाले स्वरुप का अर्थ है वह पूर्ण है। मुझे स्त्री के स्वरुप के अनुभव कुण्डलिनी के कारण आते थे। आजकल मेरे शरीर में गर्मी बहुत बढ़ गयी थी, ऐसा लगता था पेट में आग-ही-आग भरी है। कुम्भक होने पर पेट की गर्मी और बढ़ती थी, ऊपर से तीनो बन्ध लगते थे।

शिव शक्ति के दर्शन

एक बार मैंने अनुभव में देखा– मैं बहुत डरा हुआ दौड़ता चला जा रहा हूँ, मेरे डरने व दौड़ने का कारण यह है, मेरे पीछे एक व्यक्ति चला आ रहा है। वह व्यक्ति देखने में बहुत ही क्रूर लगता है, उसका चेहरा और शरीर देखने में बहुत भयानक है। उसके हाथ में धारदार एक हथियार है, दौड़ने की गति मेरी बहुत ही तेज है, जितना तेज मैं दौड़ता हूँ उतनी ही तेजगति से वह व्यक्ति मेरा पीछा करता हुआ चला आ रहा है। बहुत समय तक दौड़ने के बाद जब मैं थक गया, तब मुझे अपने सामने बहुत ही विशाल आकार का एक शिवलिंग दिखाई दिया। मैं शिवलिंग को देखकर रुक गया, क्योंकि दृश्य बहुत ही अच्छा था। शिवलिंग की ऊँचाई लगभग 10-15 फीट रही होगी, जितनी ऊँचाई शिवलिंग की थी उतनी ही उसकी विशाल चौड़ाई भी थी। उस विशाल शिवलिंग के मध्य भाग पर एक नाग आधा लिपटा हुआ था तथा नाग का आधा शरीर शिवलिंग से ऊपर उठा हुआ था। उस नाग के अनगिनत फन थे, सभी फन उसने शिवलिंग के ऊपर उठा रखे थे, हर फन के ऊपर एक-एक मणि लगी हुई थी, यह सभी मणियाँ चकम रही थी, इस प्रकार ढेरों मणियों का प्रकाश वहाँ पर फैला हुआ था। मैं उस नाग के फनों को देख रहा था, मैं सोचने लगा– यह नाग कैसा है, नाग एक है, मगर इसके फन अनेकों हैं। इतने में मुझे याद आया कि एक व्यक्ति मेरा पीछा कर रहा था, उस व्यक्ति को याद करके मुझे डर लगने लगा। मैंने अपने पीछे की ओर

देखा वह व्यक्ति मेरी ओर अब भी चला आ रहा था, मुझे लगा यह व्यक्ति मुझे मार डालेगा। मैं तुरन्त दौड़ कर शिवलिंग से लिपट गया, इतने में यह व्यक्ति मेरे पास आ गया। डर के कारण मेरा बुरा हाल था, उसी समय आकाशवाणी हुई–*"यह व्यक्ति हमारी शरण में है तुम इसका कुछ नहीं बिगाड़ सकते हो"*। मैंने आकाश की ओर देखने लगा, आकाशवाणी होते ही वह व्यक्ति अदृश्य हो गया। अब मुझे अपनी याद आयी। मैं शिवलिंग पर लिपटा हुआ हूँ, उस नाग के ढेरों फन मेरे ऊपर छतरी का काम कर रहे थे, मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में शिव और शक्ति (कुण्डलिनी) के दर्शन हो गये। वह व्यक्ति जिससे डरकर मैं भाग रहा हूँ वह प्राकृतिक-बन्धन का स्वरुप है। मैं शिव और शक्ति के शरण में चल गया था, इससे हमें प्राकृतिक बन्धन के डर से मुक्ति मिल गयी। इसका एक अर्थ यह भी है भविष्य मैं प्राकृतिक बन्धन से मुक्त हो जाऊँगा, जैसा इस अनुभव में दिखाई दिया। प्राकृतिक बन्धन से मुक्त होने का अर्थ होता है– मोक्ष को प्राप्त होना।

उन्हीं दिनों मुझे मालूम हुआ कि श्री माता जी कुछ सत्संगियों के साथ ऋषिकेश आ रही हैं। शायद अगस्त या सितम्बर 1986 की महीना रहा होगा। श्री माता जी द्वारा लिखा पत्र हमारे पास भी आया था कि आप ऋषिकेश चल सकते हैं। मगर मुझे नौकरी से छुट्टी नहीं मिली थी, इसलिये मैं ऋषीकेश नहीं जा सका था,जब श्री माता जी दिल्ली आयी थी तब मैं रेलवे स्टेशन पर उनके दर्शन करने गया था, उस समय उनके साथ बहुत से साधक भी थे। फिर श्री माता जी व उनके साथ आये साधक ऋषिकेश चले गये थे। ऋषिकेश से वापस आते समय श्री माता जी ने दिल्ली में सत्संग के लिये समय दिया था, मगर मुझे सूचना न मिलने के कारण सत्संग में मैं नहीं पहुँच पाया था। फिर श्री माता जी ने मुझे अपनी लड़की के घर का पता दिया था और कहा था– आप कल इस पते पर दोपहर के समय आ जाएँ। यह पता उनकी लड़की के घर का था, दूसरे दिन मैं श्री माता जी की लड़की के घर पहुँच गया। थोड़ी देर बाद कुछ साधक और आ गये, कुछ समय तक श्री माता जी से ध्यान सम्बन्धी बातें होती रहीं, फिर अवसर पाकर श्री माता जी को अर्धनारीश्वर वाला अनुभव सुनाया और उसका अर्थ पूछा– अनुभव सुनकर श्री माता जी मुस्कराई मगर कुछ नहीं बोलीं। वहीं पर उपस्थित एक साधक ने कहा– "अनुभव अच्छा है मगर इसमें पूछने वाली क्या बात है"। उसी समय हमारा कुछ और साधकों से परिचय हुआ। श्री माता जी ने प्रवचन के समय हमें बताया– "तुम्हारा (मेरा) पेट बहुत गर्म होता है तथा शरीर भी बहुत गर्म होता है, आप शीर्षासन किया

करें, साधक को कुछ-न-कुछ साधना में कष्ट तो उठाने ही पड़ते है, गर्मी बढ़ना स्वाभाविक है। आपका मस्तक भी दुखता रहता है, प्राणायाम खूब किया करो, शुद्धता से रहने का प्रयत्न करो"।

ये शरीर गुरू का है

नवम्बर सन् 1986 में मैं अपने घर कानपुर आया हुआ था। अब मैं यह बताना चाहूँगा– मेरी घरवालों से बिलकुल नहीं बनती थी, इसका कारण मेरे पिता जी थे, उनके और हमारे विचार आपस में नहीं मिलते थे। हम उनके साथ तालमेल नहीं बिठा सकते थे और न ही वे हमारे साथ तालमेल बिठा सकते थे। इसी कारण हमारी किसी से नहीं बनना स्वाभाविक ही था, क्योंकि हमारे पिता जी पूरे घर को गाइड करते थे वह घर के मालिक थे, सिर्फ हम उनकी बातें नहीं मानते थे, हमारा और उनका अन्दर से विरोधाभास था, हमारे और उनके कर्म भी मेल नहीं करते थे। मैं आध्यात्म से जुड़ा हुआ था, वह पूरी तरह से स्थूल वाद से जुड़े थे। वह सभी के साथ हर तरह का व्यवहार करने में निपुण थे, इसी कारण हमारी और पिताजी की नहीं बनती थी। इसी समय किसी कारण से हमारे घर रिश्तेदार आये हुए थे, उन्ही के सामने एक घटना घटी– हमारी और पिता जी की लड़ाई हो गयी, किसी बात पर पिता जी ने हमारा झूठा नाम लगा दिया। वह झूठ तो बोल ही रहे थे ऊपर से तर्क-वितर्क भी कर रहे थे। हमें पिता के नाम पर घृणा हो गयी, क्योंकि झूठ-पर-झूठ बोले जा रहे थे। मैं रात्रि के समय 10.00-10.30 बजे घर से निकल पड़ा। पिता जी की पड़ोस में किसी से नहीं बनती थी, रिश्तेदारों में भी विरोध था। हमें अपने कर्मों पर दुःख हो रहा था कि कर्मों के कारण हमें ऐसे घर में जन्म मिला है। अगर कोई हमारे पिता जी से मिले, तब यह कोई नहीं कह सकता है कि ये इस स्वभाव के होंगे, काफी पढ़े लिखे हैं बुद्धिमान भी हैं मगर बुद्धि को सदैव पाप कर्मों में लगाया करते हैं। मैं रात्रि समय घर से निकल कर चल दिया, अपने गाँव से बाहर मैं सुनसान रास्ते पर चला जा रहा था, मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि मैं अब क्या करूँ? लगभग एक डेढ़ किमी. की दूरी पर पहुँचा। वहाँ पास में एक कुआँ है, मैं कुएँ के पास पहुँचा। पहले खड़े होकर सोचा, फिर यही निर्णय किया- ऐसे दुष्ट पिता से छुटकारा पाने का अच्छा उपाय है कि मैं आत्महत्या कर लूँ, अथवा हमारे पास दूसरा एक और रास्ता था कि पिता की हत्या कर दूँ। अगर पिता की हत्या की तो मुझे क्या मिलेगा,मैं पाप का भागीदार अवश्य बन जाऊँगा, वह पाप मुझे कभी-न-कभी भोगना ही पड़ेगा। अच्छा यही है कि मैं आत्महत्या कर लूँ, ऐसे पिता से छुटकारा तो मिल जायेगा। मैंने पूरा निर्णय कर लिया– इस कुएँ में कूद

जाओ यहाँ देखने वाला कोई नहीं है। मैं कुएँ में छलांग लगाने को हुआ, उसी समय मेरे पैर ठहर गये, मेरे अन्दर से आवाज आयी– *"तुम आत्महत्या नहीं करो"।* मैं आवाज सुनकर चौंका, यह आवाज मुझे अपने अन्दर से सुनाई दे रही थी। क्षण भर के लिये लगा, कहीं मुझे धोखा तो नहीं हुआ है, अथवा मैं आत्महत्या करने से डर तो नहीं गया हूँ, मगर मेरे अन्दर डर का नामोनिशान नहीं था। उसी समय मेरे अन्दर से फिर आवाज आयी, *"तुम आत्महत्या नहीं करोगे, आत्महत्या से कोई लाभ नहीं होगा। तुम समझते हो तुम्हारे पिता दोषी हैं, सच तो यह है कि तुम्हारा कर्म ही इस प्रकार का है, यह शरीर जो नष्ट करने जा रहे हो, यह शरीर भी तुम्हारा नहीं है। यह शरीर तुम्हारे गुरू का है, तुम्हें इस शरीर से इसी जन्म में बहुत साधना करनी है, यह साधना अपने लिए और दूसरों के लिए भी करनी है। तुम्हारा यह शरीर अत्यन्त अमूल्य है, इस अमूल्य शरीर का भविष्य में पूरा-पूरा लाभ उठाओगे, तुम समझ लो तुम्हारी मृत्यु हो गयी है, अब तुम अपने भी लिए जियोगे तथा दूसरों के लिए भी जियोगे, अविवेकता व क्रोध वश इस शरीर को नष्ट करने के लिए आ गये हो। जब तुम्हारा यह स्थूल शरीर नष्ट होगा, उसके बाद यह समाज आदर के साथ तुम्हें याद करेगा। कुछ समय तक यहीं बैठकर इन शब्दों का चिंतन करो"*। ये शब्द मेरे हृदय के अन्दर स्पष्ट रुप से सुनाई दिये थे। कुछ समय के लिए मैं वहीं पर बैठ गया, मुझे लगा जो यह शब्द सुनाई दिये हैं, इन शब्दों ने मुझे बुजदिल बना दिया हैं। फिर निर्णय किया– "अब मैं कष्ट सहूँगा और अत्यन्त कठोर साधना करूँगा"। यही सोचकर रात के सन्नाटे में मैं वापस घर लौट गया, मेरी इस घटना को घर में कोई नहीं जानता है, क्योंकि मैंने किसी को इस विषय में नहीं बतायाहै। फिर श्री माता जी को कुछ दिनों बाद मैंने पत्र लिखा, उस पत्र में विस्तार से सारा हाल लिखा। मेरा यही अनुभव श्री माता जी ने अपनी मराठी पुस्तक में भी लिखा है।

मैंने अपनी नौकरी छोड़ दी और सोच लिया– मैं अब सिर्फ साधना करूँगा, मैं जानता था कि मेरी घर में नहीं बनती है, किसी की भी इच्छा नहीं थी कि मैं नौकारी छोड़ूँ, मगर मुझे साधना करने का रोग लग गया था। इसलिए मैंने किसी की भी नहीं सुनी, और न किसी की राय मानी, मैंने अपना निर्णय स्वयं किया– "अब मैं जिऊँगा सिर्फ साधना के लिए, और साधना के लिए ही मरुँगा, हमें अपने मार्ग से कोई नहीं रोक सकता है"। हमें यह निश्चय हो गया था कि मेरी दुर्गति होनी निश्चित है क्योंकि मेरा मार्ग अध्यात्मिक है। घरवाले तो सांसारिकता में लिप्त थे, मेरी पत्नी भी दुःखी रहती थी क्योंकि मैंने नौकरी जनवरी सन् 1987 को छोड़ दी थी।

सन् 1987

नाग ने काटा

यह अनुभव मुझे एक रिस्तेदार के यहाँ आया था, मैं वहाँ पर गया हुआ था। रात्रि के समय ध्यानावस्था में मुझे अनुभव आया– सामने ओर से मेरे पास एक काला नाग आया, नाग को देखकर मैंने दूर भागना चाहा, मगर मैं भाग नहीं सका, मुझे ऐसा लग रहा था जैसे मेरे पैर भूमि से चिपक गये हो, इस कारण मैं चल नहीं पा रहा हूँ। तभी वह नाग मेरे सामने आ गया, मेरे सामने आकर पहले वह फन उठाकर बड़ी जोर से फुंफकारा, मैं उसी समय समझ गया था, यह नाग हमें अवश्य काट लेगा। मैं ऐसा सोच ही रहा था– तभी नाग ने बड़ी फुर्ती से दाहिने पैर के पंजे के ऊपरी हिस्से में काट लिया, और मेरे सामने ही वहीं पर अदृश्य हो गया, मैं देखता ही रह गया। उसी समय मैंने नाग को जोरदार आवाज में कहा– "तुम्हारे जहर का असर मुझे नहीं हो सकता है, मैं तुम्हारे जहर को अभी निकालता हूँ"। इतने में मैंने अपने दाहिने हाथ की तर्जनी अंगुली को नाग द्वारा काटे हुए स्थान पर स्पर्श की, फिर अपने मुँह से जोरदार उच्चारण किया- ॐऽऽऽ, ॐऽऽऽ, ॐऽऽऽ। जैसे ही मैं ओम का उच्चारण करता था, उच्चारण के साथ ही काटे हुए स्थान से जहर बूँदों के रुप में निकलकर बाहर आने लगा, इसी प्रकार मैंने कई बार ओम का उच्चारण किया, थोड़ी देर में सारा जहर बाहर निकाल दिया। मैं प्रसन्न होकर फिर आगे की ओर बढ़ गया। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- मैं पहले लिख चुका हूँ– साधक को जब ध्यानावस्था में काला नाग काट ले, तब उसे यश, कीर्ति, सम्पन्नता आदि की प्राप्ति होती है तथा गुरू पद की प्राप्ति होती है। इस अनुभव में मैंने ॐ का उच्चारण करके सारा जहर निकाल दिया। इसका अर्थ यह हुआ– मैं इन सारी श्रेष्ठताओं को स्वीकार नहीं करूँगा और आगे बढ़ जाऊँगा। यह तो भविष्य बताएगा कि मैं ऐसा कर पाऊँगा कि नहीं कर पाऊँगा।

स्वामी शिवानन्द जी के दर्शन

हमने अपने साधक बन्धुओं से कई बार सुना था, कि उन्हें स्वामी शिवानन्द जी के दर्शन हो गये हैं अथवा होते हैं। वैसे हमें बहुत अनुभव आते हैं मगर स्वामी शिवानन्द जी के दर्शन कभी नहीं हुए। एक साधक ने मुझे बताया– मैं बीमार हो गया था स्वामी जी ने हमें दर्शन दिये तथा दवाई का नाम बताया और खाने के लिये कहा– दवाई खाने से वह साधक ठीक हो गया। मैंने सोचा– कुछ साधकों को मार्ग दर्शन के अतिरिक्त इलाज भी कर देते हैं, और मुझे दर्शन तक नहीं होते हैं। मैने कुछ दिनों तक स्वामी जी की बड़ी स्तुति की, ताकि हमें भी उनके दर्शन हो सकें, फिर एक दिन ऐसा भी आया उन्होंने हमें ध्यानावस्था में दर्शन दिये। मैंने देखा– मैं स्वयं अपने शरीर के अन्दर प्रवेश कर गया हूँ, हमारे शरीर के अन्दर का भाग प्रकाश से युक्त है। मगर आश्चर्य यह था कि मैं अपने ही शरीर के अन्दर प्रवेश कर गया था। अन्दर जाकर मैंने देखा– हमें दूर-दूर तक भूमि दिखाई दे रही है, मैं वहीं पर घूमने लगा। तभी हमें सामने ओर एक ऊँचा चबूतरा दिखाई दिया, उस चबूतरे के ऊपर आसन बिछा हुआ था। आसन के ऊपर स्वामी शिवानन्द जी विराजमान थे, स्वमी जी हमारी ओर देखकर मुस्करा रहे थे, उन्होंने भगवा रंग की एक लुंगी पहन रखी थी, तथा भगवा रंग का एक वस्त्र ओढ़ रखा था। मैं उनके पास गया और बोला– *"स्वामी जी आप"।* स्वामी जी बोले– *"हाँ मैं"* तुम कई दिनों से इच्छा कर रहे थे कि स्वामी जी के दर्शन नहीं होते हैं, अब तुम्हें हमारे दर्शन हो गये है, तुम खूब साधना करना, कभी भी साधना को छोड़ने की इच्छा मत करना, हाँ, तुम्हें पेरशानियां बहुत आयेगी, मगर जो अच्छा साधक होता है वह परेशानियों को सहता हुआ आगे की ओर बढ़ता है। परेशानियाँ तो साधक को आती ही है, इससे घबराना नहीं चाहिए, भविष्य में तुम्हें कई संतों का आशीर्वाद प्राप्त होगा। इन शब्दों को कहने के बाद स्वामी जी हमारे सामने से अदृश्य हो गये। मैं उस प्रकाशमान जगह से वापस आने लगा। मैं जिस मार्ग से गया था उसी मार्ग से वापस आ गया। मैं बहुत प्रशन्न हो रहा था, क्योंकि स्वामी जी के दर्शन हो गये थे, इसके साथ उन्होंने ढेर सारी बातें बताईं तथा मार्ग दर्शन भी किया।

जनवरी सन् 1987 में मैं अपने शरीर के अन्दर प्रवेश कर गया था, तब वहाँ का दृश्य देखा था तथा अन्दर जाने का ऐसा तरीका था जिसे पढ़कर साधक आश्चर्य चकित हो जायेंगे। ध्यानावस्था में मैंने देखा– मैं अपने स्थूल शरीर से अलग हो गया हूँ। फिर मैं अपने स्थूल शरीर के मुख से अन्दर की ओर प्रवेश कर गया, उसके बाद हमें यह अनुभव आया था। अनुभव में दिखाई दिया– मैं अपने ही शरीर के अन्दर प्रवेश कर गया हूँ। सच तो यह है, साधकों को जो अनुभव आते है वह उसे अपने अन्दर ही दिखाई

पड़ते है, मगर उसे ऐसा भासित होता है कि वह बाहर का दृश्य देख रहा है। सारे दृश्य देखते समय साधक अंतर्मुखी ही रहता है तथा वृत्ति तो चित्त पर स्थित रहती है। चित्त सर्वत्र व्याप्त रहता है, साधक दृश्य को चित्त के अन्दर ही देख रहा होता है। चित्त का सर्वत्र व्यापक होने के कारण अर्थात चित्त सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त होता है।साधक को जिस जगह का दृश्य दिखाई देता है वह स्थान या क्षेत्र स्थूल जगत या सूक्ष्म जगत में कहीं न कहीं स्थित रहता है, उस समय उसे ऐसा लगता है जैसे वह बाहर का दृश्य देख रहा है। स्वामी जी को देखने के लिए मैं अपने शरीर के अन्दर चला गया अर्थात मैं अन्तर्मुखी हो गया, सच तो यह है स्वामी जी तो तपलोक में बैठे हुए थे मगर मुझे ऐसा दिखाई दे रहा था– वह किसी जगह पर ऊँचे चबूतरे पर बैठे हुए हैं। चित्त की वृत्ति अपने व्यापकता के अनुसार स्वरुप को धारण कर सकती है अर्थात साधक अपने चित्त में ही सम्पूर्ण दृश्य देखता है।

कुण्डलिनी शक्ति के विभिन्न रूपों में दर्शन

जब मैं दिल्ली से नौकरी छोड़कर घर आ गया तब मेरी तीव्र इच्छा थी कि हमारे घर के अन्य सदस्य भी साधना करें, मगर हमारी यह बात किसी ने नहीं मानी। फिर मैंने अपनी पत्नी व माँ को राजी कर लिया कि वह भी मेरे साथ ध्यान करने के लिये बैठेंगी। एक दो दिन मेरी माँ मेरे साथ ध्यान पर बैठी मगर फिर उसने ध्यान पर बैतना बन्द कर दिया। इसके बाद मेरी पत्नी भी मना करने लगी और वह बोली– *"मुझे मालूम नहीं ध्यान कैसे लगता है, आप ही ध्यान किया करो, हमारे साथ जबरदस्ती न कीजिए"।* जब उसने हमसे ऐसा कहा, तब मैं समझ गया– जब इसके अन्दर संस्कार ही नहीं होंगे तब हमारे साथ कब तक आँखें बन्द करके बैठेगी। मैं बोला–*"अगर तुम्हारी इच्छा ध्यान करने की नहीं है तब तुम हमारे साथ न बैठा करो"* फिर वह ध्यान करने के लिये कभी नहीं बैठी। सच तो यह था, वह मेरे ध्यान से भी चिढ़ती थी, मगर वह इस विषय में स्पष्ट नहीं कहती थी। मैं उसका भाव समझ गया था। दिल्ली से आने के बाद एक बार मेरी साधना ने फिर से गति पकड़ ली, मेरी साधना अब अच्छी होने लगी।

मुझे ध्यान में एक अनुभव अक्सर आया करता था– मेरे सामने थोड़ी पर एक स्त्री लाल रंग की साड़ी पहने हुए खड़ी है,उसके सिर पर कभी-कभी सोने का ऊँचा मुकुट लगा रहता था,वह देखने में बहुत सुन्दर लगती थी। वह हमें अपनी ओर आने का इशारा किया करती है अर्थात वह स्त्री मुझे बुलाया करती थी। मैं उस स्त्री की ओर देखता रहता था, वह स्त्री मुँह से कुछ नहीं बोलती थी।

कभी-कभी इस प्रकार का अनुभव आता था– मैं सुनहले प्रकाशमान जगह में चला जा रहा हूँ, कुछ समय बाद हमें दिखाई दिया– सामने ओर थोड़ा ऊपर आकाश में, सोने का बहुत विशाल व ऊँचा सिंहासन है। उसी सिंहासन पर लाल रंग की साड़ी पहने हुए बहुत सुन्दर स्त्री बैठी हुई है। उसके सिर पर चमकता हुआ मुकुट है, गले में और अन्य अंगों पर भी आभूषण पहने हुए है। ऐसा लगता है कि वह स्त्री आभूषणों से लदी हुई है, उसकी बड़ी-बड़ी आँखें बहुत सुन्दर लगती हैं, उसकी नाक व होंठ भी बहुत सुन्दर हैं। कभी-कभी जब वह मुस्कराती है, तब उसके दाँत बहुत सुन्दर चमकते हुए दिखाई देते हैं। जैसे ही मैं उस स्त्री को देखता हूँ, वह स्त्री मुझे बुलाने लगती है और अपनी ओर आने का इशारा करती है। मैं उस सुन्दर स्त्री को टकटकी लगाए देखता रहता हूँ। फिर सोचता हूँ यह स्त्री मुझे क्यों बुला रही है?

कभी अनुभव इस प्रकार का आता है– मैं कहीं चला जा रहा हूँ, मेरे सामने थोड़ी ऊँचाई पर अन्तरिक्ष में बहुत बड़ा सोने का दरवाजा बना हुआ है। वह सुन्दर दरवाजा खुला हुआ है, उस दरवाजे पर सुन्दर नक्काशी बनी हुई है, मैं उस सुन्दर दरवाजे को देखने लगता हूँ। सिर्फ दरवाजा ही दिखाई देता है। दरवाजे के अतिरिक्त किसी प्रकार की दीवारें या मकान आदि नहीं है। कुछ क्षणों बाद वही स्त्री दरवाजे के अन्दर से आती हुई दिखाई देती है, फिर दरवाजे के चौखट पर आकर खड़ी हो जाती है और अपने हाथों से अपने पास आने का इशारा करती है। मैं हर बार की तरह उस अद्वितीय सुन्दर स्त्री को देखता रहता हूँ, कुछ क्षणों बाद यह अनुभव समाप्त हो जाता है। कभी-कभी उस स्त्री के शरीर पर आभूषण होते हैं, कभी-कभी उसके शरीर पर आभूषण नहीं होते हैं, और कभी बिलकुल साधारण वेशभूषा में होती है।

कभी इस प्रकार का अनुभव आ जाता था– ध्यानावस्था में अन्तरिक्ष में मुझे एक महल दिखाई देता है वह महल बहुत ही सुन्दर है, दूर से देखने पर ऐसा दिखाई देता है, जैसे यह महल तपे हुए सोने से बना हुआ है। मैं महल के दरवाजे के पास पहुँचता हूँ, फिर कुछ क्षणों बाद मैं उस महल के अन्दर प्रवेश कर जाता हूँ। वह महल एकदम सुनसान-सा लग रहा है, मैं महल के अन्दर आगे की ओर जाता हूँ। तब मुझे दिखाई दिया उस महल के अन्दर ढेरों सुन्दर कमरे बने हुए हैं, ये सभी कमरे सोने के ही बने हुए हैं तथा दीवारों पर बहुत सुन्दर नक्काशी बनाई गयी है। कमरों के आगे बालकनी भी है, वहाँ पर सुन्दर बाग भी है, उस बाग में फूल खिले हुए हैं। तथा वहीं बड़े-बड़े जलाशय भी हैं। मैं उसी महल के अन्दर इधर-उधर घूमने लगता हूँ। उसी समय विचार आया– ये महल है अथवा पूरा शहर बना हुआ है,आश्चर्य की बात है इस महल में कोई नहीं रहता है। इस महल की दीवारों से हल्का सुनहले रंग का प्रकाश निकल रहा था, इतने में हमें सामने की ओर एक मंचाकार ऊँची जगह दिखाई दी। इस मंचनुमा जगह पर अति सुन्दर सोने का बना

हुआ सिंहासन है तथा सिंहासन में मणियाँ लगी हुई हैं। इन मणियों से प्रकाश निकल रहा है, उसी सिंहासन पर लाल साड़ी पहने हुए एक अद्वितीय सुन्दर स्त्री बैठी हुई है, उसके सिर पर ऊँचा सा मुकुट लगा हुआ है, गले में चमकदार प्रकाशित आभूषण, नाक में छोटा-सा आभूषण, हाथों में भी ढेरों आभूषण पहने हुए है, वह हमारी ओर देखकर मंद-मंद मुस्करा रही है। उसका चेहरा अत्यन्त सुन्दर है, उसकी आँखें बड़ी-बड़ी पूरी तरह से खुली हुई हमें देख रही हैं। उस स्त्री को देखते ही मैं अपनी जगह पर ठहर गया। उसने मुझे अपनी ओर आने का इशारा किया, मगर मैं उस स्त्री की ओर नहीं गया और न ही उससे बोला। तभी वह वह स्त्री अपने सिंहासन से उठी और हमारी ओर आने लगी, जब स्त्री हमारी ओर आ रही थी, तब वह भूमि पर नहीं चल रही थी, बल्कि वह भूमि से काफी ऊपर आकाश में चल रही थी। मैं उससे काफी नीचे भूमि पर खड़ा हुआ था, वह स्त्री हमसे थोड़ी दूरी पर, मगर हमसे ऊँचाई पर आकाश में खड़ी हुई थी। मैं निष्भाव से उस स्त्री की सुन्दरता टकटकी लगा कर देखे जा रहा था। अनुभव समाप्त हुआ।

इस प्रकार के अनुभव हमें जल्दी-जल्दी आते थे, कभी-कभी यह सुन्दर स्त्री स्वप्न में भी दिखाई देती थी। हर बार वह अपने पास आने के लिये मुझे बुलाया करती थी, मगर वह मुँह से कभी नहीं बोलती थी। मैंने सोचा– यह स्त्री हमें क्यों दिखाई देती है, श्री माता जी से इसका अर्थ पूछूँगा। मैंने श्री माता जी को विस्तार से पत्र लिखा, मगर श्री माता जी ने इस पत्र का उत्तर नहीं दिया। मैं समझ गया कि शायद श्री माता जी हमारे अनुभवों का अर्थ नहीं बताना चाहती हैं। अब हमें और भी बेचैनी होने लगी, मगर मैं क्या कर सकता था। इसी प्रकार के अनुभव लगातार कुछ महीनों तक आते रहे। उस समय मैं इन अनुभवों का अर्थ नहीं समझ सकता था, क्योंकि मुझमें इतनी योग्यता नहीं थी। मगर अब मेरे अन्दर स्वयं योग्यता आ गयी है कि मैं सभी प्रकार के अनुभवों का अर्थ निकाल सकता हूँ।

इसी प्रकार मुझे एक और अनुभव आया, मगर अबकी बार स्त्री नहीं दिखाई दी। मैं अन्तरिक्ष में चला जा रहा हूँ, फिर वही महल सामने ओर दिखाई दिया, मैं उस महल के दरवाजे से अन्दर प्रवेश कर गया, अन्दर जाकर मैं पहले की भाँति वहीं पर टहलने लगा। यहाँ पर सब कुछ पहले जैसा था, जब मैं मंचनुमा जगह के पास पहुँचा, तब मंचनुमा जगह के ऊपर वही सिंहासन दिखाई दिया, सोने से बने खूबसूरत नक्काशीदार सिंहासन पर अबकी बार वह स्त्री नहीं बैठी थी। इसलिये मैं पास से सिंहासन को देखने लगा, मगर मैंने हाथ से सिंहासन को स्पर्श नहीं किया, क्योंकि सिंहासन अभी हमसे थोड़ी दूरी पर था। मैं सिंहासन की सुन्दरता देख रहा था, तभी अचानक सिंहासन पर बैठने के स्थान पर तेज सुनहरा प्रकाश प्रकट हो गया। मैं उस प्रकाश को देख रहा था, तभी कुछ क्षणों में वह सुनहरा प्रकाश, सुनहरे नाग

के रुप में परिवर्तित हो गया। नाग फन उठाए हुए कुण्डली मारे सिंहासन पर बैठा हुआ था। उसने मेरी ओर जोरदार फुंफकार मारी, फुंफकार मारने से उसके मुँह के अन्दर से सफेद भाप जैसी वायु निकल पड़ी। मैं तेज गति से महल से बाहर की ओर भागा, कुछ क्षणों में मैं महल से बाहर आ गया, अब मेरे जान में जान आयी। मैंने सोचा– चलो उस सुनहले नाग से छुटकारा तो मिला। मैं ऐसा सोच ही रहा था कि नाग की भयंकर फुंफकार फिर सुनाई दे। मैंने सामने की ओर आकाश में देखा– आकाश को देखते ही मेरे होश उड़ गये, सामने की ओर आकाश में कुण्डली मारे हुए वही नाग हमारी ओर फुंफकार रहा था। नाग आधे आकाश में कुण्डली मारे फन उठाए हुए बैठा था, इतना विशाल नाग, जिसने आधे आकाश में कुण्डली मार रखी हो तथा बहुत ही विशाल फन ऊपर उठाए बैठा हो, साथ ही फुंफकार रहा हो, तो देखने वाले पर क्या बीतेगी आप अंदाज लगा सकते है। जब वह फुंफकारता था तब भाप के समान या बर्फ के समान सफेद वायु बाहर की ओर फेंकता था। मैं पीछे की ओर मुड़कर भागा, कुछ समय तक दौड़ने के बाद फिर वही सोने का बना हुआ बहुत बड़ा दरवाजा मिला, जो हमेशा दिखाई देता था। मैने सोचा कि दरवाजे के अन्दर चला जाऊँ तो हमारा बचाव हो जायेगा। जैसे ही मैं दरवाजे के अन्दर प्रवेश करने को हुआ, दरवाजे की देहरी पर वही सुनहरा नाग प्रकट हो गया, उसने एक बार फिर जोरदार फुंफकार मारी, अबकी बार उसकी श्वांस से इतनी सफेद वायु निकली कि मैंने अपने आप को सफेद वायु के बीच में पाया। अब मुझे दिखाई देना भी बन्द हो गया, मुझे ऐसा लगा जैसे मैं घने कोहरे के बीच में खड़ा हूँ। इतने में मुझे अपना होश आने लगा कि मैं ध्यान पर बैठा हूँ। मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- लाल साड़ी में दिखाई देने वाली स्त्री स्वयं कुण्डलिनी शक्ति ही है। वह मुझे अपने पास बुलाती थी, मुझे कुण्डलिनी शक्ति के पास चला जाना चाहिए था, मगर मैं उसे पहचान नहीं पाता था, इस कारण मैं उसके पास नहीं जाता था, बस अपनी जगह पर खड़ा रहता था। जो सोने के महल आदि दिखाई देते थे उसका कारण यह है, उसे भुवनेश्वरी भी कहते हैं। अद्वितीय सुन्दर होने के कारण उसे त्रिपुर सुंदरी भी कहते हैं। यह दरवाजा व सिंहासन आदि दिखाई देने का अर्थ है- कुण्डलिनी शक्ति के दर्शन कई प्रकार से होते है, उसी स्थान पर कुण्डलिनी शक्ति नाग के रुप में दिखाई दी थी, वह आधे आकाश में कुण्डली मारे बैठी हुई। वह तो शक्तिस्वरूपा है, सारा ब्रह्माण्ड तो उसी की कृपा से संतुलित रहता है, कुण्डलिनी शक्तिस्वरूपा होने के कारण इन्हीं की शक्ति से ब्रह्माण्ड के सभी प्राणी शक्ति प्राप्त करते है। नाग फुंफकारते समय सफेद भाप के समान वायु निकाल रहा था– यह सफेद भाप जैसी दिखने वाली वस्तु, सात्विक शक्ति है, जो हमारे ऊपर फ़ेंक रही है। मुझे एक बात और लिखनी है, कि जब से मुझे कुण्डलिनी

शक्ति के दर्शन होने लगे है, तब से हमारे ऊपर बहुत से कष्ट आने लगे हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि कुण्डलिनी के कारण हमें कष्ट मिलने लगे हैं, बल्कि सच तो यह है कि हमारे अन्दर जो कई जन्मों के कर्म भरे हुए थे,उन कर्मों को कुण्डलिनी निकाल कर बाहर फेंकने लगी, कर्मों को तो भोगना ही होगा, इसलिए ढेरों कष्ट हम पर टूट पड़े है, उन कष्टों को भोगना हमारी मजबूरी भी थी। हमारी साधना जितनी तीव्र होती थी, कष्ट उतने ज्यादा बढ़ जाते थे। साधकों! मैं सच कहूँ तो हमारी दुर्गति होनी शुरू हो गयी थी।

पत्नी की मृत्यु

मेरी और पिता जी की आपस में ज्यादा लड़ाई हो गयी, मैं अपना पैतृक हिस्सा माँग रहा था उन्होंने देने से इंकार कर दिया, इसलिए हम दोनों एक दूसरे के साथ अभद्र व्यवहार करने लगे। मेरे पास दो रिश्तेदार भी आये थे, जिन्होंने हमें बड़ी-बड़ी धमकियाँ दीं, मगर मैं धमकियों से डरने वाला नहीं था। कारण, मैं मृत्यु का स्वागत करने के लिए सदैव तैयार रहता था, उन रिश्तेदारों ने शब्दों से हमारे साथ अभद्रता भी की थी। मगर मैं उस समय कुछ नहीं बोला, क्योंकि मैं अकेला था। एक दिन ऐसा भी आया मुझे घर के अन्दर घुसने नहीं दिया गया, मैं अपने चाचा के पास रहने लगा। उसी समय मेरी पत्नी बीमारी से ग्रस्त हो गयी, वह बीमार रहने लगी। मैं पैसों के अभाव से गुजर रहा था तथा घर में हमें हिस्सा नहीं दिया गया था तथा मैं घर से बाहर चाचा के पास मजबूरी में रहता था, उसका इलाज नहीं कराया गया। मैंने अपने छोटे भाई के द्वारा मैंने पत्नी को उसके माँ के घर पहुँचा दिया। कुछ दिनों बाद मुझे खबर मिली वह बहुत ज्यादा बीमार है मैं उसके पास पहुँचा, उसकी हालत ज्यादा खराब हो चुकी थी, मैं समझ गया अगर इलाज न हुआ तो मृत्यु हो जायेगी। मैं अपने गाँव वापस आ गया, पैसों का इंतजाम करना था। मैं गाँव से पैसों का इंतजाम करके चलने वाला था, तभी मुझे खबर मिली पत्नी का देहांत हो गया है। वह 26 अक्टूबर 1987 का दिन था, खबर सुनकर मैं शून्य-सा हो गया, दुःख इस बात का नहीं था कि मेरी पत्नी मर गयी है, दुःख इस बात का था कि मैं इलाज नहीं करा सका। मुझे लगा मैं परास्त हो गया, सोचने लगा मेरी जबरदस्त हार हुई है, घर वालों की जीत हुई क्योंकि उन सबके मन के अन्दर खुशी हो रही थी। बल्कि उस समय घर वालों ने मुझसे कहा– *"तूने अपनी पत्नी को मार डाला है"।*

बदला नहीं लोगे

पत्नी की मृत्यु के पश्चात् मैं अपने घर नहीं आया बल्कि चाचा के घर आया, मेरी समझ में नहीं आ रहा था। मैं क्या करूँ, मैं ध्यान करने के लिए बैठ गया, मैंने संकल्प किया– मुझे क्या करना चाहिए, मेरे सामने दो मार्ग हैं एक– मैं सदैव चुपचाप बना रहूँ। दूसरा– चाहे जैसे हो बदला लेना चाहिये। क्योंकि बदला लेने में पाँच मिनट से भी कम का समय लगेगा, मैं पूरी तरह से तैयार था। मुझे याद आ रहा था, एक साल पहले मैं आत्महत्या करने गया था, मगर आत्म हत्या नहीं कर सका। मैं ध्यान पर बैठ गया, मेरा ध्यान लग गया, मुझे अपने अंतःकरण से आवाज सुनाई दी– *"तुम किसी से बदला नहीं लोगे, बदला लेने का विचार छोड़ दो। किसी ने तुम्हारे साथ गलत व्यवहार नहीं किया है, हर एक की मृत्यु का कुछ-न-कुछ कारण होता है, तुम्हारी पत्नी की सिर्फ इतनी ही उम्र थी, अब तुम अपने घर वापस चले जाओ, एक बात का ध्यान रखना, तुम्हें बिलकुल शांत रहना है"।*

अंतःकरण में जो शब्द सुनाई दिये उससे मैं और भी दुःखी हो गया, क्योंकि मैं अभी घर वापस नहीं जाना चाहता था, यह मुझे बिलकुल मंजूर नहीं था। दोपहर बाद मैं फिर ध्यान पर बैठा। मैंने सोचा– साधना करके मैं उच्च अवस्था प्राप्त कर सकता हूँ तथा ध्यान में कुछ और गुप्त संकेत मिले, जिससे भासित होता था हमारा भविष्य उज्ज्वल अवश्य होगा, ध्यान से उठकर मैंने यही निर्णय किया, फिर घर की ओर चल दिया। 28 अक्टूबर सन् 1987 सायंकाल मैं अपने घर कई दिनों बाद गया, उस समय ऐसा लग रहा था मुझे अपने जीवन की सबसे बड़ी हार मिली है। मैं अपने आपमें बेइज्जत-सा महसूस कर रहा था, मन में घरवालों के प्रति घृणा थी। मैं घर जाकर चुपचाप बैठ गया, मुझसे कोई नहीं बोला, मैं भी किसी से नहीं बोला। सभी लोग मेरी ओर देख रहे थे, उनके देखने से लगता था, जैसे उन्होंने कोई बड़ी बाजी जीत ली हो। मैं चुपचाप अपने कमरे में जाकर लेट गया, मुझे अपनी पत्नी की मृत्यु का इतना दुःख नहीं था, दुःख इस बात का था कि क्या इसी समय इसकी मृत्यु होनी थी, मुझे लग रहा था प्रकृति ने हमारे जोरदार थप्पड़ मारा है, जिसका लाभ हमारे घर वालों को हुआ, मैं यही सोच रहा था कि मेरी दृष्टि दीवार पर टंगी फोटो पर गयी। इस फोटो की मैं तीन वर्षों से पूजा किया करता था। मैं भगवान शंकर से बोला– *"ठीक है प्रभु हमारी परेशानी आप मुस्कराइये, पर, मैंने आपको प्राप्त करने के लिए सब कुछ छोड़ दिया है और आपने हमें परेशानियों में ढकेल दिया।"* इतने में मेरी आँखें बन्द हो गयी और हमारा ध्यान लग गया।

कठोर साधना करो

मैंने ध्यानावस्था में देखा– मेरे सामने नीले रंग के शरीर वाले भगवान शंकर ध्यान मुद्रा में बैठे हुए हैं, मैं उन्हें देख रहा था। तभी भगवान शंकर की आँखें खुलने लगीं, उन्होंने मेरी ओर देखा, मैं उनके सामने खड़ा हुआ था। इतने में आकाश से आवाज आयी– *"आनन्द कुमार तुम बुद्धिहीनों की तरह दुःख में डूबे हुए हो, तुम्हें दुःख महसूस नहीं करना चाहिए। तुम्हारा मार्ग साधना के लिए प्रशस्त हो गया है, तुम्हारी पत्नी तुम्हारे साथ इतने ही दिनों के लिए आयी थी। भविष्य में इस विषय पर सारी जानकारी हो जायेगी। अब तुम अत्यन्त कठोर साधना करो, जिससे तुम्हें हमारी प्राप्ति होगी,फिर दुःखों से मुक्त हो जाओगे। अब तुम अत्यन्त कठोर साधना करो, अत्यन्त कठोर साधना करो"।* इस प्रकार की आवाज आकाश से आ रही थी। इतने में मेरी आँखें खुल गयी, मुझे ये शब्द याद आ रहे थे– "अब तुम अत्यन्त कठोर साधना करो"। पता नहीं मेरे अन्दर क्या बदलाव आया, मेरा दुःख समाप्त हो गया, शरीर में बिलकुल हल्कापन महसूस हो रहा था, ऐसा लगा रहा था जैसे हमारे साथ कोई घटना ही नहीं घटी है।

अब मुझे महसूस हुआ कि मुझे भूख लगी है, फिर मैंने खूब खाना खाया और चुपचाप कमरे में लेट गया। रात्रि के लगभग 11 बज रहे होंगे, मुझे नींद आने लगी, उसी समय मुझे अपनी पत्नी दिखाई दी, हमारी और उसकी थोड़ी देर तक बातें होती रही। उसने मुझे कुछ बातों पर अमल करने को कहा था, मगर मुझे उसकी बात पर यकीन नहीं आया कि यह बात सच होगी, तभी मेरी आँखें खुल गयी। मैं समझ गया, मेरी पत्नी वासना देह (अतृप्त) में चली गयी है। काफी समय तक सोचता रहा कि अब पत्नी के लिए क्या कर सकता हूँ, मेरी अभी इतनी योग्यता नहीं है कि मैं वासना देह से इसे मुक्त करा सकूँ, मैंने सोचा कि श्री माता जी से कहूँगा, तब इसे वासना देह से वह मुक्त करा देंगी।

साधकों! मेरी पत्नी ने मुझे साधना में बड़ी सहायता की थी। वह सूक्ष्म जगत की ढेरों बातें मुझे बताया करती थी, जिन्हें मैं नहीं जानता था। जब वह मेरे पास आती थी तब वह अपने साढ़े तीन वर्षीय लड़के से मिलने को कहती थी, मैं उससे कह देता था जाओ जाकर मिल लो, मैं कैसे तुम्हें रोक सकता हूँ, तुम तो उसकी माँ हो, मरने के बाद उसे अपने लड़के के प्रति लगाव बना रहा था। वह नियमित रुप से अपने लड़के से मिलने आया करती थी। लड़के से मिलने के लिये पत्नी को मेरी आज्ञा लेना जरूरी था, क्योंकि उस समय मेरी इतनी साधना हो चुकी थी कि कोई भी अतृप्त जीवात्मा मेरी आज्ञा के बिना मेरे घर के अन्दर प्रवेश नहीं कर सकती थी। जब मेरी पत्नी अपने लड़के से मिलती थी तब वह जोर-जोर से रोने

लगता था, फिर मैंने यह बात अपने घर वालों को बताई, तब घर वालों को यह सब अच्छा नहीं लगा, मगर घर वाले इस कार्य में कर भी क्या सकते थे सिर्फ चुपचाप रहने के अतिरिक्तऔर कुछ नहीं कर सकते थे। मैं पत्नी को इजाजत दे देता था, उधर घर वालों को जगा देता था, फिर सोते हुए लड़के को बिठा दिया जाता था ताकि उसे किसी प्रकार की कोई तकलीफ न हो। मगर पत्नी कहती थी– लड़के को जगाया मत करो। इस बात का मैंने कोई उत्तर नहीं दिया, हमारा लड़का रात्रि में हमारी माँ और बहन के बीच में सुलाया जाता था। मगर एक दिन हमने घर वालों को सूचित नहीं किया। उस रात्रि एक विचित्र घटना घटी, लड़का रात्रि के समय चारपायी के नीचे बैठकर रोने लगा। चारपायी की ऊँचाई इतनी ज्यादा थी वह स्वयं नीचे उतर नहीं सकता था, फिर वह नीचे कैसे उतर गया, यह मालूम नहीं हो पाया। घरवालों को यह सब अच्छा नहीं लगता था मगर वह कर भी क्या सकते थे, घरवालों ने लड़के के लिए ताबीज बनवायीं। तब पत्नी ने मुझसे कहा–"मैं नहीं मिल सकती हूँ, वह ताबीज पहने हुए है"। मैं बोला– "ताबीज कुछ नहीं करेगा तुम जाकर मिल लो"। उसी समय लड़का जोर-जोर से रोने लगा। वह बोला– "मम्मी आ गयी थी हमारा गला दबा रही थी, कह रही थी हमारे साथ चलो, उन्होंने हमारा गला जोर से दबाया था"। पत्नी की इस क्रिया पर मुझे क्रोध आया, तब मैंने उससे मिलने पर रोक लगा दी। फिर पत्नी ने मुझसे कहा– "मैं अब ऐसा नहीं करूँगी"। मगर मेरे संकल्प ने मिलने पर पूरी तरह से रोक लगा दी। मेरा और पत्नी का मिलना-जुलना होता रहता था, पत्नी हमें सूक्ष्म जगत की दिलचस्प जानकारियाँ दिया करती थी। मेरा और पत्नी का एक साल तक मिलना-जुलना बना रहा था।

साधकों, वैसे मुझे पत्नी के विषय में यहाँ लिखना नहीं चाहिए था, मगर मैंने इसलिए लिखा– इससे आप सभी को जानकारी हो जाये– मरने के बाद जब वासना देह को प्राप्त होते हैं, तब उन्हें मानसिक रुप से बहुत कष्ट उठाना पड़ता है। इनकी उम्र इस देह में बहुत ज्यादा होती है, किसी की बिलकुल कम होती है, यह मृतक के कर्मों पर आधारित होता है। वासना देह को प्राप्त जीवात्माओं की इच्छाओं की समाप्ति पर इस देह से मुक्त हो जाती हैं अथवा योगी पुरुष इस देह से किसी भी जीवात्मा को मुक्त कर सकता है।

कुण्डलिनी ऊर्ध्व नहीं हो सकी

हमने पहले लिखा है, 28 अक्टूबर सन् 1987 को हमारा ध्यान लेटे-लेटे ही लग गया, जिसमें हमें आज्ञा मिली थी कि तुम कठोर साधना करो, दूसरे दिन मैं एकदम शांत हो गया। 29 अक्टूबर की सायंकाल मैं अपने घर के द्वार पर ध्यान करने के लिए बैठ गया। हमारे घर के द्वारे पर देवी का स्थान भी है, मैं उसी स्थान के सामने ध्यान करने के लिए बैठ गया। मेरा ध्यान तुरन्त लग गया, पहले मेरी गर्दन पीछे की ओर गयी, सिर का पिछला भाग पीठ से चिपक गया, शरीर पीछे की ओर झुकने लगा, मुझे ऐसा लगा कि मैं पीछे की ओर गिर जाऊँगा, मगर गिरा नहीं था। इतने में मूलाधार चक्र में जोर से प्राण वायु का दबाव बढ़ने लगा, इस कारण कुछ क्षणों बाद उस स्थान पर पीड़ा सी होने लगी, ऐसा लगा कि कोई नस बड़ी जोर से खिंच रही है, साथ ही मूलाधार चक्र का क्षेत्र भी ऊपर की ओर खिंचने लगा। कुछ समय तक मैं इस पीड़ा को सहता रहा, फिर मैं सीधा होकर बैठ गया। कुछ क्षणों बाद धीरे-धीरे तीनों बन्ध लग गये, आंतरिक कुम्भक भी लगना शुरू हो गया। कुम्भक इतने जोर से लगता था कि प्राण वायु बाहर निकलने का नाम ही नहीं लेती थी, इससे मेरे अन्दर घबराहट सी होने लगती थी। श्वांस के द्वारा जो प्राण वायु अन्दर आती थी, तब ऐसा लगता था कि प्राण वायु फेफड़े में न जाकर मूलाधार चक्र में जा रही है। जब ढेर सारी प्राण वायु मूलाधार चक्र में एकत्र हो जाती है, उस समय यही प्राण वायु आग का रुप धारण कर लेती है, इससे उस स्थान पर तीव्र जलन होने लगती थी, ऐसा लगता है कि सम्पूर्ण पेट आग बनकर जला जा रहा है। कुछ समय बाद हमारा जालन्धर बन्ध खुल गया,अब सिर आगे की ओर झुकना शुरू हो गया, कुछ क्षणों बाद सिर आगे की ओर भूमि पर स्पर्श होने लगा, इस अवस्था मे हमें श्वांस लेने में बड़ी परेशानी होती थी। मेरी श्वांसें तीव्रता से चलने लगी, इससे उड्डियान बन्ध खुल गया, श्वांसों ने भयंकर रुप धारण कर लिया। ऐसा लगता था कि जैसे कोई नाग भयंकर रुप से फुंफकार रहा हो। मैं अपनी श्वांस रोक नहीं सकता था, मूलाधार चक्र फोड़े की तरह दुख रहा था, भस्त्रिका हमारी जोर-जोर से चल रही थी।

भूमि पर हमारा मस्तक लगा हुआ था, अब ठोड़ी हमारी गर्दन से चिपकने लगी तब सिर का ऊपरी भाग भूमि पर लग गया। मेरा आसन अब भी लगा हुआ था, फिर मैं दोनों घुटनों के बल हो गया। अब हमारे स्थूल शरीर की आकृति बड़ी विचित्र सी हो गयी, सम्पूर्ण शरीर सिर के ऊपरी हिस्से व घुटनों के बल हो गया, मेरे दोनों हाथ पेट पर चिपके हुए थे। अब हमें लगा जसे मूलाधार चक्र उखड़कर सिर की ओर आ जायेगा, भस्त्रिका जोर-जोर से चल रही थी, श्वांस सीधा मूलाधार चक्र पर ठोकर मार रहा था। ऐसा लग रहा था कि मूलाधार चक्र में श्वांस नहीं बल्कि हथौड़े की ठोकर मारी जा रही है। मैं पसीने से तर

हो रहा था, शरीर थक चुका था। अत्यधिक कष्ट के कारण मैंने सोचा कि ध्यान करना छोड़ दूँ, मैं उठकर खड़ा हो जाऊँ, मगर मैं ऐसा नहीं कर सका। इतने में मूलाधार चक्र में भयंकर वेदना हुई जो मैं सह नहीं सका, मैं बेहोश सा हो गया, सारी क्रियाएँ अपने आप बन्द हो गयी।

उसी समय मुझे एक अनुभव आया, अनुभव में स्वच्छ नीला आकाश दिखाई दिया, उस आकाश में सूरज, चन्द्रमा, तारे आदि नहीं थे, सिर्फ नीला स्वच्छ आकाश था। उस विशाल आकाश में चकाचौंध कर देने वाली बिजली चमकी और फिर उसी समय अदृश्य हो गयी। जिस समय बिजली चमकी थी तब सारा आकाश प्रकाश से चमक उठा था। बिजली इस प्रकार चमकी थी जैसे बरसात के समय बादलों के बीच में बिजली चमकती है और अदृश्य हो जाती है। इतने में मुझे होश आ गया, फिर भस्त्रिका चलना शुरु हो गयी। मैंने सोचा– कि मुझे इतनी वेदना हो रही है, इससे अच्छा है कि मेरी मृत्यु हो जाये। वेदना असहनीय हो रही थी, ऊपर से बाह्य कुम्भक भी लगना शुरू हो गया। श्वांस बाहर जाये तो अन्दर आने का नाम नहीं ले रही थी, जब श्वांस अन्दर आ जाये तब बाहर जाने का नाम नहीं लेती थी। मेरी नस-नस टूट चुकी थी, शरीर बुरी तरह से थक चुका था। मैंने सोचा– मुझे ऐसी साधना नहीं चाहिए, ऐसी साधना को त्यागता हूँ। बस यही सोचने लगा, मगर मेरे सोचने से क्या होता है। इतने में मुझे लगा कि किसी ने मुझे पकड़कर उठा दिया है।

मुझे कुछ क्षणों बाद होश आ गया। मेरे छोटे भाई ने मुझे पकड़ कर सीधा कर दिया था, उस समय भी मेरा आसन लगा हुआ था, धीरे-धीरे मेरे पैर सीधे होने शुरू हो गये। मैंने खड़े होने का प्रयास किया मगर खड़ा न हो सका, मुझे ऐसा लगा कि मेरे पैरों में जान ही नहीं है। मैंने भाई से बैठने का इशारा किया, भाई ने मुझे बिठा दिया। मैंने देखा कि मेरे घर के सभी सदस्य उपस्थित थे। मैंने अपने भाई से कहा– "तुमने मुझे क्यों उठा दिया है, मैं अपनी जिंदगी की अमूल्य वस्तु प्राप्त करने वाला था, तुम्हारे उठा देने से मुझे प्राप्त नहीं हो सकी"। भाई बोला– "हम सब बहुत देर से तुम्हें देख रहे थे कि तुम्हें बहुत तकलीफ हो रही थी, कभी-कभी श्वांस वापस नहीं आती थी, हम यह नहीं जान सके कि ये साधना है या कुछ और है, इसके पहले ऐसा कभी नहीं हुआ था, इसलिए मैंने तुम्हे उठा दिया है"। मैं कुछ नहीं बोला, समझ गया कि मेरे भाग्य में कुण्डलिनी ऊर्ध्व होना अभी नहीं है।

साधकों! मुझे यहाँ जिस प्रकार की क्रिया हुई है, ऐसी क्रिया बिरले साधक को ही होती है। कुण्डलिनी जागरण में हर साधक का अपना-अपना अनुभव अलग-अलग होता है अथवा थोड़ा सा मेल करता हुआ हो सकता है। मुझे इस समय इसलिए इतनी तकलीफ हुई थी, क्योंकि कुण्डलिनी स्वयं ऊर्ध्व

होने का प्रयास कर रही थी। यदि इसी समय कोई दूसरा शक्तिपात कर देता, तब कुण्डलिनी आराम से ऊर्ध्व हो जाती।

जो कुण्डलिनी स्वयं ऊर्ध्व होती है, वह कुण्डलिनी अधिक शक्तिशाली होती है। कुण्डलिनी स्वयं ऊर्ध्व तभी होती है, जब साधक की साधना उग्र होती है वरना स्वयं ऊर्ध्व नहीं हो पायेगी। हर एक साधक की कुण्डलिनी स्वमेव ऊर्ध्व नहीं हो सकती है। जिस साधक ने बिना शक्तिपात के अपनी कुण्डलिनी स्वयमेव ऊर्ध्व कर ली है, ऐसा साधक योग के विषय में भविष्य में अत्यन्त शक्तिशाली होता है। साधना द्वारा स्वयमेव कुण्डलिनी ऊर्ध्व करने वाले साधक का शरीर गर्म रहता है, ऐसा उग्र कुण्डलिनी के द्वारा होता है। शक्तिपात करके उठाई गयी कुण्डलिनी इतनी शक्तिशाली नहीं होती है जितनी स्वयमेव ऊर्ध्व हुई कुण्डलिनी शक्तिशाली होती है। स्वयमेव कुण्डलिनी ऊर्ध्व करने के लिए साधक को कठोर साधना करनी पड़ती है तथा ऐसे साधक पूर्व जन्मों में योगी रह चुके होते हैं। कुछ साधक ऐसे होते हैं कि गुरू द्वारा कुण्डलिनी ऊर्ध्व करने पर भी उन्हें ज्यादा अनुभूति नहीं होती है। ऐसा तब है जब उचित समय से पूर्व कुण्डलिनी ऊर्ध्व कर दी जाती है तथा जो साधक ध्यान ज्यादा नहीं करते हैं। इसलिए साधकों को कुण्डलिनी जागरण का अलग-अलग अनुभव होता है। कुछ साधकों को हमने देखा है उन्हें कुण्डलिनी जागरण पर कई प्रकार की क्रियाएँ होने लगती हैं, इससे उनके स्थूल शरीर को बड़ा कष्ट होता है। ये क्रियाएँ शरीर की शुद्धता न होने के कारण होती हैं अथवा कभी-कभी गलत मार्गदर्शन के कारण भी हो सकती हैं। अत्यधिक क्रियाएँ होना ध्यान नहीं होता है, इसलिए गुरू अथवा मार्गदर्शक को चाहिए कि साधक की कुण्डलिनी जाग्रत करने के बाद ज्यादा क्रियाएँ न होने दे, बल्कि शक्तिपात कर साधक को स्थिर कर दे ताकि वह ध्यानावस्था में शांत बैठा रहे, इससे साधक को मन एकाग्र करने में सहायता मिलेगी। कुछ गुरू कुण्डलिनी जाग्रत तो कर देते हैं, मगर साधक की क्रियाएँ बन्द नहीं कर पाते हैं। उनका तर्क होता है कि कुण्डलिनी जागरण पर क्रियाएँ तो होती ही हैं। यह सही है कि कभी-कभी कुछ न कुछ क्रियाएँ होती हैं, मगर साधक को अच्छी साधना करने के लिए, अधिक से अधिक प्राणायाम करना चाहिए जिससे साधक की नाड़ियाँ शुद्ध हो जायें। नाड़ी शुद्ध होने पर क्रियाएँ होना कम हो जायेगी अथवा पूरी तरह से बन्द हो जायेगी।

हमने पहले लिखा है कि ध्यानावस्था में हमें अधिक वेदना हुई थी, भस्त्रिका चलने से नाड़ी शुद्ध होती है। इस समय भस्त्रिका चलने पर प्राणवायु मूलाधार चक्र पर स्थित कुण्डलिनी पर धक्के मार रही थी, जिससे कुण्डलिनी ऊर्ध्व हो जाये। जब कुण्डलिनी में कुछ हलचल होती है तब हमें नाड़ी में खिंचाव

महसूस होता है, इससे हमें लग रहा था मूलाधार चक्र खिंच रहा है तथा प्राण वायु के दबाव के कारण मूलाधार चक्र गर्म हो रहा था। तीनों बन्ध लगने पर मूलाधार चक्र पर दबाव पड़ता है, इससे कुण्डलिनी ऊर्ध्व होने में सहायता मिलती है। हमें यहाँ जो अनुभव आया– स्वच्छ नीले रंग के आकाश में बिजली चमकी थी, इस रुप में कुण्डलिनी शक्ति का ही दर्शन है। कुण्डलिनी के दर्शन कई प्रकार के होते हैं, स्वच्छ नीला आकाश हमारा चित्त है। मैंने अनुभव में यह नहीं लिखा था कि जब कुण्डलिनी का दर्शन हुआ था तब और जोर से फिर से भस्त्रिका चलने लगी थी, उस समय मेरे मुँह से जोर-जोर से ॐऽऽऽ, ॐऽऽऽ (ओम) शब्द निकल रहा था। यह ओंकार शब्द अपने आप कुण्डलिनी के कारण निकल रहा था। ध्यानावस्था में जब ओंकार शब्द अपने आप निकालने लगे तब साधक को समझ लेना चाहिये, कुण्डलिनी ने आँखे खोल दी हैं यह क्रिया उसी के द्वारा हो रही होती है।

मैं जब कभी भी ध्यान पर बैठता था, तब मेरे द्वारा भस्त्रिका जोर-जोर से चलती थी। ऐसा लगता कि जैसे कोई नाग फुंफकार रहा हो, कभी-कभी आंतरिक और बाह्य कुम्भक दोनों ही लगते थे, मगर हमें थकान नहीं आती थी। कभी-कभी मूलाधार चक्र में खिंचाव अवश्य होता था, मगर फिर पहले जैसी क्रिया कभी नहीं हुई। अब मैं अपने आपको स्वतंत्र महसूस करता था, साथ ही मेरी साधना अच्छी होने लगी थी। इसी बीच श्री माता जी का पत्र आया उस पत्र में लिखा था– आनन्द कुमार तुमने नौकरी छोड़ दी, अब तुम्हें रुपये कमाने के लिए कुछ-न-कुछ काम करना चाहिए, क्योंकि मनुष्य को पुरूषार्थ अवश्य करना चाहिए, खर्चे की भी आवश्यकता पड़ती है, इसलिए धन कमाने का कुछ-न-कुछ जरिया तो होना ही चाहिए। श्री माता जी के कहने पर मैंने दुकान खोल ली, इलेक्ट्रोनिक्स सम्बन्धी काम करने लगा। क्योंकि इलेक्ट्रोनिक्स सम्बन्धित कार्यों में मैं निपुण हूँ।

रंगों का दर्शन

एक बार मैं पूजा कर रहा था मेरी आँखें अपने आप बन्द हो गयी। कुछ क्षणों तक मैं शांत बैठा रहा, फिर आँखें अन्दर की ओर खिंचने लगीं, आँखें अपने आप अन्दर की ओर को जोर से दबाव दे रही थी। उसी समय पहले अंधकार दिखाई दिया, फिर उस अंधकार में पीला रंग दिखाई दिया। कुछ ही क्षणों में पीला रंग चारों ओर सर्वत्र फैल गया, फिर वह गहरा व चमकीला हो गया, कुछ क्षणों में पीला रंग अदृश्य हो गया। अब हरा रंग दिखाई देने लगा, हरे रंग के बाद क्रमशः नारंगी, धूम्र व नीला रंग दिखाई दिया। जब

एक रंग धीरे-धीरे अदृश्य हो जाता था तब दूसरा रंग दिखाई देने लगता था। इसी प्रकार क्रमशः पाँचों रंग दिखाई दिये थे। ये रंग दिखाई समय मुझे बहुत अच्छा लग रहा था। फिर मेरी आँखें धीरे-धीरे खुल गयी, आँखों में हल्का-सा दर्द या थकान-सी महसूस हो रही थी। ये पाँचों रंग पाँचों तत्वों के रंग थे, हर एक तत्त्व का अपना अपना रंग होता है।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाले पाँचों रंग पाँचों स्थूल भूतों के थे। पीला रंग पृथ्वी तत्त्व का होता है, हरा रंग जल तत्त्व का होता है, नारंगी (लाल) रंग अग्नि तत्त्व का होता है, धूम्र के समान रंग वायु तत्त्व का होता है, चमकीला हल्का नीला रंग आकाश तत्त्व का होता है। इन सब रंगों का दिखाई देने का अर्थ होता है– अभ्यासी की साधना स्थूल पंचभूतों से आगे सूक्ष्मपंच भूतों में शुरू हो गयी है अथवा शुरू होने वाली है। अर्थात अब वह अन्तर्मुखी होकर सूक्ष्म पंचभूतों व उनसे निर्मित सूक्ष्म जगत में साधना (विकास क्रम) चलने लगी है।

ज्ञानचक्र के दर्शन

एक दिन मैं पूजा कर रहा था, मेरी आँखें पहले की तरह अन्दर की ओर अपने आप दबाव देती चली गयी। पहले की भाँति रंग दिखाई दिये, अन्त में नीले रंग में एक बिन्दु दिखाई दिया, वह बिन्दु मुझसे बहुत दूर अन्तरिक्ष में था। बिन्दु अपनी जगह पर गोल-गोल घूम रहा था, वह बिन्दु अपनी जगह पर घूमता हुआ मेरे पास आने लगा। मेरे पास आने पर बिन्दु का आकार बढ़ने लगा, फिर मेरे बिलकुल पास आ गया। अब उसका आकार भी बहुत बड़ा हो गया, बिन्दु पहले चकमदार गोला-सा दिखाई दिया। फिर उसका स्वरूप रथ के पहिये के आकार जैसा हो गया और चक्र की भाँति अपनी जगह पर तीव्र गति से घूमने लगा। धीरे-धीरे उसकी घूमने की गति कम होने लगी, तब वह पहिया स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा। पहिये में रथ के समान आरे लगे हुए थे। वह रथ के पहिये की भाँति बना हुआ था। पहिये के केंद्र में एक छिद्र भी था, जब पहिया स्थिर हो गया तब उसका आकार बढ़ने लगा, मेरी दृष्टि उस पहिये के मध्य में बने छिद्र पर स्थित हो गयी। अब छिद्र का आकार भी बढ़ने लगा, उस छिद्र के अन्दर विशाल शरीर धारण किये हुए भगवान विष्णु चतुर्भुज रुप में खड़े हुए थे। उनके हाथ में शंख, चक्र, गदा व पद्म भी था। वह हमारी ओर देखकर मुस्करा रहे थे, उनकी छवि बहुत ही सुन्दर थी। मेरे मुँह से अचानक निकल पड़ा– “प्रभु आप”। इतना कहते ही भगवान विष्णु हमसे दूर होते चले गये। उनका आकार बिलकुल छोटा हो

गया, वह स्वयं गोलाकर रुप में घूमने लगे। तीव्र गति से घूमने के कारण पहिया जैसा आकार धारण कर लिया। फिर हमसे दूर हटते चले जाने कारण कुछ क्षणों में बिन्दु रुप में बदल गये, अब सिर्फ नीला आकाश रह गया, बिन्दु अदृश्य हो गया। ध्यान टूट जाने के कारण हमारी आँखें खुलने लगी, फिर हमें ऐसा दृश्य नहीं दिखाई दिया।

अर्थ- प्रत्येक मनुष्य के भृकुटि से थोड़ा ऊपर की ओर अन्दर की तरफ सूक्ष्म शरीर में रथ के पहिये के स्वरुप में ज्ञानचक्र स्थित रहता है, इस ज्ञान चक्र के विषय में प्रत्येक साधक को जानकारी नहीं होती है। जो साधक कठोर साधना करते हैं तथा पूर्वकाल के योगी होते हैं, उन्हें ही इस ज्ञानचक्र के विषय मे ज्ञान होता है। निपुण मार्गदर्शक या गुरू इस ज्ञानचक्र की सहायता से अपने शिष्यों का मार्गदर्शन भी करते हैं, इसके द्वारा मार्गदर्शन करना प्रत्येक गुरू के बस की बात नहीं होती है। ज्ञानचक्र के द्वारा किसी भी संसारी मनुष्य या साधक की योग्यता का ज्ञान किया जा सकता है। जो मनुष्य उच्च शिक्षा प्राप्त, तीव्र बुद्धि वाले, सात्विक स्वभाव वाले, परोपकारी व दानी स्वभाव के होते है उनका ज्ञानचक्र अपनी जगह पर सात्विकता के अनुसार धीमी गति से अपनी जगह पर गति करता रहता है। जो मनुष्य सात्विक साधक होता है, उसकी जिस स्तर की साधना होती है अथवा जितनी आध्यात्मिक योग्यता होती हैं उसी के अनुसार ज्ञानचक्र की गति में तीव्रता होती है। नशीले पदार्थों का सेवन करने वाले व्यक्तियों का ज्ञानचक्र गति नहीं करता है बल्कि स्थिर रहता है। योगी पुरुष एक विशेष प्रकार की सिद्धि प्राप्त करने के लिए इस ज्ञानचक्र का प्रयोग करते हैं।

अनुभव में हमें यही ज्ञानचक्र दिखाई दिया था, उसके छिद्र के अन्दर भगवान विष्णु खड़े हुए दिखाई दिये थे। ज्ञानचक्र अत्यन्त तीव्र गति से घूम रहा था। इससे स्पष्ट होता है कि हमारी साधना अत्यन्त तीव्र गति चल रही है तथा मैं पूर्वकाल में भी साधना कर चुका हूँ।

सन् 1988

श्री माता लक्ष्मी जी के दर्शन

यह अनुभव मुझे स्वप्नावस्था में आया– हमारे सामने अन्तरिक्ष में श्वेत रंग का तेज प्रकाश प्रकट हो गया है। वह प्रकाश अपनी जगह पर तेजी से गोलाकार रुप में चक्कर लगाने लगा। प्रकाश गोलाकार चक्कर लगाता हुआ मेरी ओर आने लगा। जैसे-जैसे वह मेरी ओर आता जा रहा था, वैसे-वैसे उसका आकार भी बड़ा होता जा रहा था। गोलाकार प्रकाश हमसे थोड़ी दूरी पर आकर स्थिर हो गया। प्रकाश का आकार बहुत बड़ा था, फिर प्रकाश के मध्य में एक मानव आकृति उभरने लगी। कुछ क्षणों बाद वह मानव आकृति बहुत बड़ी व स्पष्ट हो गयी। यह मानव आकृति श्री माता लक्ष्मी जी की थी, वह कमल के फूल के ऊपर खड़ी हुई थी। वह बहुत सुन्दर लग रही थी, लाल साड़ी पहले हुए थी, गले में मणियों की मालाएँ पहने हुए थी, सिर पर ऊँचा मुकुट लगा हुआ था। श्री माता लक्ष्मी जी आभूषणों से सजी हुई थी, वह हमारी ओर देखकर मुस्करा रही थी, उनका दाहिना हाथ हमारी ओर आशीर्वाद मुद्रा में उठा हुआ था। कुछ क्षणों तक मैं श्री माता लक्ष्मी को देखता रहा, वह बहुत अच्छी लग रही थी। फिर मेरे मुँह से निकला– "आप तो श्री माता लक्ष्मी जी हैं"। फिर कुछ क्षणों बाद उनका स्वरुप धुँधला पड़ने लगा और प्रकाश रुप में बदल गयी। वह प्रकाश का गोला अपनी जगह पर गति करने लगा तथा पीछे की ओर हटता हुआ आकाश में अदृश्य हो गया, तभी मेरे आँखें खुल गयी।

फिर ध्यानावस्था में मैंने श्री माता लक्ष्मी से प्रार्थना की– "यदि आप हम पर प्रसन्न हैं तो हमें आशीर्वाद दो, हमारी साधना अच्छी हो जाय तथा साधना में सफलता मिले। हमारे अन्दर कभी भी धन का लालच नहीं हो, भविष्य में ध्यान की स्थिति उच्च हो"। इस प्रकार से देवी-देवताओं के दर्शन होने का कारण यह है जब चित्त में सत्वगुण की मात्रा अधिक होने लगती है, तब इस प्रकार के दर्शन होने लगते है। क्योंकि सात्विक वृत्ति ही देवी देवताओं के स्वरुप को धारण सकती है। जब चित्त सात्विक होता है, तभी देवी-देवताओं व सन्त पुरुषों के दर्शन होते है।

शेर

ध्यानावस्था तथा स्वप्नावस्था में हमें शेर के अनुभव बहुत आये हुए हैं, कई माह तक शेर लगातार दिखाई देते रहे हैं। ध्यानावस्था में मैं देखता था– हरा-भरा जंगल है, जंगल से दौड़ता हुआ शेर चला आ रहा है, शेर का रंग सफेद था तथा उसके गले में बड़े-बड़े बाल भी थे। शेर हमारे सामने आकर खड़ा हो गया फिर बड़ी जोर से गर्जना करने लगा। मैं शेर को टकटकी लगाए हुए देख रहा था, उस समय हमें थोड़ा-थोड़ा भय-सा लग रहा था। शेर ने तीन चार बार गर्जना की फिर वापस जंगल में चला गया और अदृश्य हो गया।

कभी कभी अनुभव में हमें दिखाई देता था– मैं किसी रास्ते पर जा रहा हूँ, हमें ऐसा महसूस हुआ कि कोई मेरे पीछे-पीछे आ रहा है। मैंने मुड़कर पीछे की ओर देखा– तो शेर हमारे पीछे बड़े आराम से चला आ रहा है, डर के कारण हमारा बुरा हाल हो गया। मैं डर के कारण दौड़ने लगा और आगे चलकर छिप गया। फिर हमें शेर दिखाई नहीं दिया। अनुभव समाप्त हो गया।

कभी-कभी हमें दिखायी देता था– मैं कहीं चला जा रहा हूँ, आगे चलकर रास्ते में हमें दो शेर दिखाई दिये। दोनों शेर आपस में खेल रहे थे, उन शेरों को देखकर डर कारण हमारे पैर रुक गये। मुझे लगा कि मैं भाग जाऊँ, मगर हमारे पैर आगे बढ़ने का नाम नहीं ले रहे थे, ऐसा लगा कि पैर भूमि से चिपक गये हैं, कुछ देर में एक शेर एक ओर जाकर अदृश्य हो गया। इसी प्रकार ध्यनावस्था व स्वप्नावस्था में कई बार शेर दिखाई दिये थे, कभी-कभी हमारे मार्ग में सामने खड़े हो जाते थे, मगर हमारा किसी प्रकार का नुकसान नहीं करते थे, सिर्फ कभी-कभी डर लगता था। वैसे, शेर देखने में बहुत सुन्दर होते थे।

एक बार मैंने देखा– चारों ओर चाँदनी फैली हुई है, इतने में अन्तरिक्ष में एक शेर सफेद रंग का शेर प्रकट हो गया। पहले उसने हमारी ओर देखा, फिर ऊपर की ओर मुँह उठाकर गर्जना करने लगा। सम्पूर्ण आकाश शेर की गर्जना से गूँज गया। एक-दो बार शेर ने अपने आगे के पैर ऊपर की ओर उठा कर गर्जना की। कुछ क्षणों तक गर्जना करता रहा, फिर अदृश्य हो गया। इस प्रकार का अनुभव सिर्फ एक बार आया था।

अर्थ- साधकों! इन शेरों के दर्शनों का अर्थ निकालना बड़ा मुश्किल है, क्योंकि योग के अनुसार शेर के दर्शनों का अर्थ कई प्रकार का होता है। एक– शेर मन का भी प्रतीक होता है। दूसरा– क्रोध का भी

प्रतीक है। तीसरा– सभी जानते हैं कि शेर अम्बा देवी का वाहन है। उनके दर्शन माता अम्बा देवी की कृपा समझनी चाहिए। हमने यहाँ पर शेर के मात्र कुछ अनुभव लिखे हैं। एक जगह पर लिखा है कि कभी-कभी दो शेर दिखाई देते थे। मनुष्य का मन दो प्रकार का होता है– एक बर्हिमन, दूसरा अंतर्मन। वैसे मन दो नहीं होते हैं, बल्कि मन की अवस्थाएँ दो होती हैं– उत्कृष्ट मन, निकृष्ट मन। उत्कृष्ट मन को अंतर्मन कहते हैं, निकृष्ट मन को बर्हिमन कहते हैं। हमने पहले भी लिखा हुआ है कि हर साधक हो एक जैसे अनुभव नहीं आते हैं। कुछ अनुभव कभी-कभी मेल करते हुए आते हैं। इसलिए अपने अनुभवों को अथवा योग सम्बन्धी समस्याओं को अपने मार्गदर्शक या गुरू से सुलझा लेना चाहिए, ताकि भ्रम की स्थिति पैदा न हो। कभी-कभी ऐसा भी देखा गया है कि दूसरे गुरुओं के शिष्यों से अनुभव मेल कर जाते हैं।

आग का बरसना

मैंने ध्यानावस्था में देखा, मैं हरे-भरे जंगल के अन्दर चला जा रहा हूँ। उस जंगल में ऊँचे-ऊँचे वृक्ष हैं, झाड़ियाँ भी बहुत हैं, जंगली जानवर भी दिखाई पड़ जाते हैं। मैं प्रसन्न मुद्रा में इधर-उधर घूम रहा हूँ, तभी आकाश में भयंकर आवाज प्रकट हुई। आवाज ऐसी थी जैसे बरसात में बादल गरजते हैं, मैंने आकाश की ओर दृष्टि की, आकाश बिल्कुल स्वच्छ था। मैं यह नहीं समझ सका कि आकाश में किस स्थान से आवाज प्रकट हुई है। इतने में फिर पहले की भाँति आकाश में आवाज प्रकट हुई, मगर आवाज का स्रोत समझ में नहीं आ रहा था। मैं थोड़ा आगे की ओर बढ़ा। तभी आकाश में तेज चमक पैदा हुई जिससे सारी पृथ्वी और आकाश में प्रकाश फैल गया। उस समय मैं पृथ्वी पर ऊँचे स्थान पर खड़ा हुआ था, पृथ्वी दूर-दूर तक दिखाई दे रही थी। कुछ क्षणों में आकाश से आग की ज्वाला पृथ्वी की दूसरी ओर आकर गिरी। इससे पृथ्वी पर आग फैल गयी। मैंने आकाश की ओर दृष्टि की, तो दिखाई दिया– आकाश से उल्कापात की तरह पृथ्वी पर आग की लपटें गिर रहीं थीं। अब सम्पूर्ण पृथ्वी आग से जल रही थी। जब आकाश से आग की लपटें गिरती थीं, उस समय आकाश में भयंकर गर्जना होती थी, कुछ क्षणों में सम्पूर्ण पृथ्वी आग की लपटों में घिर गयी। अब भी आकाश में भयंकर गर्जना हो रही थी। मैं पृथ्वी पर खड़ा हुआ आग से घिर गया था मगर आग का असर मुझे बिलकुल नहीं हो रहा था। मेरे ऊपर भी आकाश से आग गिर रही थी। ऐसा लगता था मैं आग में स्नान कर रहा हूँ इसलिये प्रसन्न हो रहा था। पृथ्वी पर रहने वाले जानवर जल रहे थे तथा जलते हुए इधर-उधर भाग रहे थे। मैं यह सब देखकर हँस रहा था, मगर जानवर भागकर कहाँ जा सकते थे, चारों ओर आग ही आग फैली हुई थी। आग में जलकर सब-कुछ राख होने

लगा था। आकाश ऐसा लग रहा था मानो फट जायेगा। कुछ समय बाद यह क्रिया धीरे-धीरे बन्द होने लगी, क्योंकि पृथ्वी का सब कुछ जलकर राख हो चुका था। पृथ्वी पर पेड़-पौधे, झाड़ियाँ व जानवर आदि कुछ भी नहीं रह गया था। सिर्फ मैं अकेला प्रशन्न मुद्रा में खड़ा हुआ था, आकाश पूर्ण रुप से शांत हो चुका था। मैं प्रसन्न मुद्रा में आगे चल दिया। उस समय मेरे अन्दर विचार आया- "अब तो पृथ्वी पर अकेला मैं ही रह गया हूँ"।

अर्थ- यह अवस्था मुझे भविष्य में प्राप्त होगी। आकाश और पृथ्वी हमारा ही चित्त है। आकाश हमारा चित्ताकाश है, प्रथ्वी (भूमि) हमारे चित्त की भूमि है, आग हमारा योगबल है, पृथ्वी पर हरा-भरा वातावरण पेड़-पौधे, जानवर आदि हमारे कर्माशय हैं, जो योगबल से जलकर राख हो गये है। चित्त पर स्थित ऊपरी सतह पर जो कर्माशय है उन्हें निकट भविष्य में भोग कर नष्ट करने हैं, वही जलकर नष्ट हो गए है। इन कर्माशयों के जलकर नष्ट होने से आगे का मार्ग प्रशस्त हो जायेगा। यह अनुभव हमारे लिए बहुत अच्छा है।

दूसरों की जानकारी प्राप्त होना

आजकल हमें अपने गाँव के आसपास की घटनाएँ अपने आप मालूम हो जाती थीं। कुछ घटनाएँ हमारे गाँव से दूर घटती थी, वह भी मालूम हो जाती थीं, मगर योग की गोपनीयता के कारण मैं किसी से कोई घटना नहीं बताता था। मैं अपने काम से काम रखता था। ज्यादा नजदीकी सम्बन्ध मैं किसी से नहीं रखता था। किसी काम को करने से पहले ही हमें उसका फल मालूम हो जाता था। कोई भी व्यक्ति कुछ कार्य करने वाला होता था अथवा कार्य करने की सोचता था तब भी हमें मालूम हो जाता था। एक-दो बार ऐसा भी हुआ जब किसी व्यक्ति ने कार्य करना शुरू किया, तब मैंने उसका फल कार्य पूरा होने से पहले ही बता दिया था। ऐसे समय पर हमें बड़ी परेशानी उठानी पड़ी थी, लोग हमारे पास पूछने के लिये आने लगे थे, बड़ी मुश्किल से हमें इन लोगों से छुटकारा मिल पाया। इसलिए मैं समाज के लोगों से कम सम्बन्ध रखता था। हमें यह भी अपने आप मालूम हो जाता था कि भूमि के कितने फीट नीचे पानी है। यह जानकारी ट्यूबवेल में सहायक होती है। इसी प्रकार हमें मृत्यु के विषय में भी मालूम हो जाता था किस व्यक्ति की निकट भविष्य में मृत्यु होने वाली है, उसकी जानकारी हमें पहले से हो जाती थी कि अमुक व्यक्ति इस समय मर जायेगा।

अतृप्त जीवात्माओं से बात करना

इसी प्रकार हमें अतृप्त जीवात्माओं की बहुत जानकारियाँ मिला करती थीं। ये जीवात्माएं ज्यादातर वे होती थी जिनकी अकाल मृत्यु हो जाती थी। हम नहीं जानते ये अतृप्त जीवात्माएं हमें कैसे ढूँढ लेती थीं कि मैं योगी हूँ। शायद हमारा वलय देखकर हमारे विषय में जान जातीं होगी। ऐसी जीवात्माओं से हमारी बहुत बातचीत हुआ करती थी। वह अपने विषय में पूरा परिचय भी देती थीं तथा अपना सारा हालचाल बताती थीं। हमने यह भी आकलन किया ज्यादातर जीवात्माएँ स्त्रियों की होती थीं, जिन्होंने अपनी आत्म हत्या कर ली होती थी अथवा उनाकि हत्या कर दी जाती थी। ऐसी जीवात्माओं को वासनादेह प्राप्त होती है। फिर ये हमसे कुछ-न-कुछ अवश्य माँगती थीं, मगर मैं कह देता था– मेरी साधना अभी शुरू हुई है, कृपया आप अपनी इच्छा अन्य किसी साधक या योगी से पूरी कर लें, हम आपकी माँग पूरी नहीं कर पाएँगे। इस प्रकार की जीवात्माओं से बात करने में बड़ा मजा आता था। इच्छा पूर्ति न होने पर जीवात्माएँ चली जाया करती थीं। मैं उन्हें बड़े प्यार से वापस लौटा देता था। उन दिनों मुझे अनुभव भी अच्छे-अच्छे आते थे, हमारी साधना भी अच्छी हो चुकी थी। मगर श्री माता जी हमारी कुण्डलिनी उठाने के विषय में कुछ नहीं बताती थीं। मैं सोचता था– श्री माता जी हमारी साधना के विषय में कुछ भी क्यों नहीं बताती हैं।

मैं भविष्यवक्ता के पास गया

मैंने एक बार श्री माता जी को पत्र लिखा– हमारी इच्छा है कि हमारी भी कुण्डलिनी ऊर्ध्व हो। कुछ दिनों बाद श्री माता जी का पत्र आया उसमें लिखा था– आनन्द कुमार आपका पत्र हमेशा भावपूर्ण होता है, गुरू शिष्य की परिपक्व अवस्था पर कुण्डलिनी ऊर्ध्व कर देता है। श्री माता जी के पत्र से हमें निराशा हुई। हमारे गाँव से दूर एक भविष्यवक्ता जी थे, वह आम लोगों की समस्याएँ सुलझाते रहते थे। मैंने सोचा– मैं भी भविष्यवक्ता से अपनी कुण्डलिनी के विषय में पूछूँगा, मै कुछ दिनों बाद उस भविष्यवक्ता के पास गया। मैं भी प्रश्नकर्ताओं की लाइन में बैठ गया। जब मेरा नम्बर पूछने के लिये आया, तब मैंने अपना परिचय बताया तथा यह भी बताया, मैं सहज ध्यान योग का साधक हूँ। भविष्य में हमारी कुण्डलिनी जाग्रत होगी अथवा नहीं होगी? कृपया आप हमें बता दीजिए। भविष्यवक्ता जी पहले बोले– “पहले आप मुझे ध्यानयोग के विषय में बताइए”। मैंने उन्हें संक्षेप में ध्यान योग के विषय में बता दिया। फिर वह बोले–

“आप यह योग करना छोड़ दीजिए अथवा गुरू के सामने कीजिए, क्योंकि यह योग अत्यन्त खतरनाक है, प्राण ऊपर चढ़ता है,अगर वापस नीचे नहीं आया तो जान भी जा सकती है”। अब मेरा विचार भविष्यवक्ता के प्रति बदल गया। तब मैंने सोचा– जब इन्हें योग के विषय में ही जानकारी नहीं हैं तब हमारा भविष्य क्या बताएँगे। मैंने दुबारा प्रश्न किया– “आप मुझे इतना बता दीजिए कि हमारी कुण्डलिनी जाग्रत होगी अथवा नहीं होगी”। भविष्यवक्ता जी बोले– “हम तो भूतप्रेत के देवता हैं, भूतप्रेत के विषय में बताते हैं अथवा भगाते हैं। आप तो हमसे आगे की बात पूछते हैं, आप हमसे आगे निकलने की सोच रहे हैं”। इन महाशय जी की बात पर हमारे मन में थोड़ा सा क्रोध आया,कि यह किस प्रकार बात करते हैं। उन्होंने हमारी पिछली जिन्दगी बतानी शुरू कर दी जो बिलकुल सच था, मगर मैं बीच में बोल पड़ा, हमारा सवाल यह नहीं है। हमारा सवाल कुण्डलिनी जागृति का है। वह बोले– “आप अपने गुरू को प्रसन्न कीजिए, यह समस्या उन्ही से हल होगी”। मैं समझ गया, हमारे प्रश्न का उत्तर देना इनकी सामर्थ्य से बाहर है। मैं अपने घर वापस लौट आया। साधकों! मैं अपने प्रश्न का उत्तर जानता था, मगर श्री माता जी का इस विषय पर न बताना ही हमारी दुविधा का कारण बना था।

तू रूखा है

भविष्यवक्ता के पास से वापस आकर मैंने श्री माता जी को पत्र लिखा– मैं भविष्यवक्ता के पास इस कार्य के लिए गया था। श्री माता जी का कुछ समय बाद पत्र आया। उसमें लिखा था– “आप इधर-उधर क्यों भटक रहे हैं, प्रभु आपकी सारी इच्छाएं पूरी कर देगा”। मगर मुझे इतने शब्दों से संतुष्टि नहीं मिली, क्योंकि मैं अपनी स्थिति स्पष्ट जानना चाहता था। श्री माता जी हमें हमारी स्थिति के विषय में नहीं बतातीं थीं, बल्कि यह भी कहती थीं तू बहुत रूखा है, तेरा भाव भक्ति में जरा भी नहीं है। रूखे होने के कारण तुम्हारी साधना नहीं होती है, तुम्हारी साधना में यही रूकावट है। तुम अपने गुरू के प्रति सेवा का भाव नहीं रखते हो, तुम्हारे अन्दर अपने गुरू के प्रति सेवा का भाव होना चाहिए। मगर मेरा सोचना इससे भिन्न होता था, योग के अभ्यास में रूखेपन का अवरोध कैसा! मेरा मार्ग भक्ति योग नहीं है। फिर भक्ति के अभाव में साधना में रूकावट का क्या काम है? यह सच है भक्ति में अंतःकरण शुद्ध जल्दी होता है। लेकिन बहुत से योगी ऐसे भी हो चुके है जिन्हें भक्ति से कोई मतलब ही नहीं रहा है, सिर्फ बदला लेने की दृष्टि से वह अपना योगबल बढ़ाने के लिए तपस्या करते थे, क्या उन्हें योग के अभ्यासके द्वारा अपना

लक्ष प्राप्त नहीं हुआ। सच तो यह है जिनकी इच्छा शक्ति दृढ़ होती है वे साधक योग में निश्चय ही सफल होते हैं। दृढ़ इच्छा शक्ति रखने वाले निश्चय ही रूखे होते हैं, अगर उनके अन्दर रूखापन नहीं होता, तब उनकी दृढ़ इच्छाशक्ति भी नहीं होती। पूर्वकाल में विश्वामित्र ने वशिष्ठ को नीचा दिखाने के लिए कठोरता से योग का अभ्यास किया था तथा भगवान परशुराम व दधीचि ने भी बदला लेने की दृष्टि से योग का अभ्यास किया था, योग की दृष्टि में ये तीनों योगी किससे कम रहे है। तीनों अपनी-अपनी जगह पर महानता को प्राप्त हुए। जिसमें इच्छाशक्ति दृढ़ नहीं होती है, तो वह योग में शीघ्र सफल भी नहीं हो सकते हैं। दृढ़ इच्छाशक्ति वाला पुरुष ही कठोर साधना कर सकता है, गिड़गिड़ा कर अथवा कृपा पर किसके योग का अभ्यास हुआ है। जब तक आप स्वयं परिश्रम नहीं करेंगे तब तक ईश्वर भी आप पर कृपा नहीं करेंगे। कोई भी बता दे कि स्तुति करके किसी को कुछ मिल गया हो, तो मैं भी स्तुति कर लूँ, फिर क्यों बेकार में कठोर परिश्रम करूँ, स्थूल शरीर को क्यों कष्ट भोगने पर मजबूर करूँ। मैं भक्ति या स्तुति का विरोध नहीं कर रहा हूँ, सच तो यह है भक्त हमसे बहुत महान व श्रेष्ठ होते है क्योंकि उन्हें क्रोध नहीं आता है तथा अहंकार से रहित होते है। भक्ति अत्यन्त कठिन मार्ग है, मगर योग का अभ्यास करने के लिए दृढ़ता आवश्यक है। दृढ़ता में कठोरता व रूखापन होता है। हमने यह भी देखा है जो साधक रूखे होते हैं उनकी साधना अच्छी होती है। ऐसे साधकों के अन्दर दृढ़ता बहुत होती है, जिस कार्य में उनकी लगन लग जाये वह कार्य करके ही छोड़ते हैं। कठिन कार्यों से वे विचलित नहीं होते हैं। ऐसे साधकों का मस्तिष्क अधिक क्रियाशील रहता है, मगर भक्ति भाव वाला साधक तर्क-वितर्क ज्यादा नहीं करता है क्यों कि वह भावना प्रधान होता है। उसे अपने हृदय को सन्तुष्ट करना पड़ता है। हमें श्री माता जी ने कई बार सभी के सामने रूखा कहकर सम्बोधित किया, उस समय उनके द्वारा रूखा कहने में हेय भाव होता था, मगर हमारी साधना उत्तरोत्तर बढ़ रही थी, किसी प्रकार से कभी नहीं रूकी, सफलताएँ बराबर मिल रही थीं।

रूखा होने के बाद भी हमें सफलताएँ बहुत ही शीघ्र मिलीं है, मगर भक्ति भाव वाले साधक हमसे पीछे रह गये। सिर्फ भक्ति भाव से ही योग नहीं हो जाता है। योग में सफलता प्राप्त करने के लिए साधक को कठोर साधना करनी पड़ती है, तभी सफलता मिलती है अन्यथा नहीं मिलती है। जो साधक पहले यह सोचकर ढीले पड़ जाते हैं, जब प्रभु की कृपा होगी अथवा गुरू कृपा होगी तब साधना बढ़ जायेगी, ऐसे साधकों को सफलताएँ मिलना बहुत मुश्किल होता है। ईश्वर कर्माध्यक्ष तथा नियामक हैं। साधक को स्वयं अपने कर्मों के अनुसार फल मिलते हैं। उसे चाहे प्रभु कृपा समझ लें अथवा गुरू कृपा समझ ले। बिना कर्म के किसी की कृपा नहीं होती है। जिसे आप कृपा समझ रहे हैं वह आपके कर्मों का फल है। जब

गुरू कृपा होगी, सफलता मिल जायेगी, हमें ये समझ में नहीं आता है साधक ऐसा क्यों कहते हैं? गुरू के लिए सभी साधक एक समान होते हैं, मगर फिर भी कुछ शिष्यों को योग में शीघ्र सफलता मिलती है, कुछ को देर में मिलती है। इसका अर्थ यह है– जिस साधक ने जितना परिश्रम किया है, उसे उतनी योग्यता प्राप्त हो गयी। गुरू पर दोषारोपण करना गलत है कि वह किसी पर कम कृपा करता है, किसी पर ज्यादाकृपा करता है। यदि सफलता और असफलता गुरू के अधिकार में होता, तब वह अपने शिष्य को क्षण भर में ही पूर्ण कर देते अथवा आत्मसाक्षात्कार करा देते। प्राणियों का जीवन चक्र कर्म प्रधान है इसलिए कर्म करने में लग जाइये, तभी आपको अपना लक्ष्य प्राप्त होगा। पहले आप गुरू का अर्थ समझ लें– "अंधकार से दूर करने वाला अर्थात् प्रकाश में गमन कराने वाला, अंधकार दूर होते ही प्रकाश की अनुभूति होने लगती है, ऐसा प्रकाश जो कभी नष्ट नहीं होता हो अर्थात् सत्य ही नष्ट नहीं होता है। सत्य सिर्फ ब्रह्म होता है। दूसरे शब्दों में, गुरू सिर्फ मार्गदर्शन का काम करता है, वह तो सदैव समभाव से सभी साधकों को आशीर्वाद देता है। इसी प्रकार हर बात पर ईश्वर को नहीं घसीटना चाहिए कि यह कार्य ईश्वर के कारण हुआ, ईश्वर सभी जीवों पर समभाव रखता है।"

माता जी द्वारा जलगाँव बुलाना

जुलाई सन् 1988 में श्री माता जी के यहाँ से पत्र आया,उसमें लिखा था– गुरू पूर्णिमा का उत्सव मनाया जा रहा है, आप इस उत्सव में आइए, मगर मैं किसी कारण से गुरू पूर्णिमा उत्सव पर नहीं जा सका था। फिर श्री माता जी का पत्र हमें सितम्बर सन् 1988 में मिला। उसमें लिखा था– "मैं जलगाँव आयी हूँ एक-डेढ़ माह रहूँगी, आप यहाँ आ सकते हैं। यहाँ पर एकांत भी मिलेगा, आने से पहले पत्र द्वारा हमें सूचित करना, आप कब आ रहे हैं"। मैंने पत्र लिखा– "श्री माता जी मैं अक्टूबर में आ रहा हूँ तथा जलगाँव पहुँचने की निश्चित तारीख भी लिख दी थी"। मैं निश्चित तारीख पर श्री माता जी के पास जलगाँव पहुँच गया। उस समय जलगाँव में श्री माता जी के ज्यादा शिष्य नहीं थे, जैसे कि आजकल हैं। कुछ साधकों से हमारा परिचय भी हो गया था। एक दिन जलगाँव से 15-20 कि.मी. दूर कण्वाश्रम में भी गया था। श्री माता जी ने कण्वाश्रम के स्वामी जी के विषय में थोड़ा सा मुझे पहले बता दिया था। स्वामी जी थोड़ा क्रोधी स्वभाव के हैं, ऐसा श्री माता जी ने मुझे बताया था।

मैं और कुछ साधक श्री माता जी के साथ एक दिन कण्वाश्रम में गये थे। आश्रम पहुँचने पर स्वामी जी कुछ समय बाद श्री माता जी के पास आये। मैंने भी स्वामी जी के दर्शन किये, वह काफी ऊँचे कद के थे, स्वस्थ शरीर, तेजस्वी चेहरा, देखने से साफ जाहिर होता था कि वह उच्चकोटि के योगी हैं, सभी ने दूर से उन्हें नमस्कार किया। श्री माता जी के साथ कुछ विशिष्ट लोग भी आये हुए थे। फिर श्री माजा जी ने हमारे विषय में स्वामी जी को बताया– "ये कानपुर से आये हैं, अच्छे साधक हैं"। स्वामी जी ने गहरी दृष्टि से हमें देखा। फिर पूछा– "तुम्हारा क्या नाम है?" मैं बोला– "स्वामी जी मेरा नाम आनन्द कुमार सिंह है"। फिर स्वामी जी कुछ नहीं बोले, सिर्फ कुछ क्षणों तक मुझे देखते रहे। फिर वह श्री माता जी से बात करने लगे, काफी समय तक बातचीत होती रही। एक स्त्री के पूछने पर स्वामी जी ने अपना पिछला पूरा परिचय दिया, जिसका उल्लेख मैं यहाँ पर नहीं कर रहा हूँ। वापस चलते समय मैंने स्वामी जी को दूर से नमस्कार किया,तब स्वामी जी हमसे बोले– "साधना करो, कठोर साधना करो, प्रभु अवश्य मिलेगा"। स्वामी जी के ये शब्द सुनकर मुझे बहुत खुशी हुई। जलगाँव वापस आकर श्री माता जी ने मुझे बताया कि स्वामी जी की तपस्या बहुत है, हमसे भी ज्यादा है, मगर साक्षात् दुर्वासा जी हैं।

एक दिन श्री माता जी ने बताया– "अण्णाजी कह रहे थे आनन्द कुमार यहाँ क्यों आया है, इसे मिरज में गुरू पूर्णिमा पर आना चाहिए था, वहाँ क्यों नहीं आया"। श्री माता जी बोलीं– "मैंने आनन्द कुमार को यहाँ बुलाया है, यहाँ एकांत में बातचीत करने का अवसर मिलेगा, वहाँ भीड़भाड़ में बातचीत का अवसर नहीं मिलता, उससे जरूरी बात करनी है"। ये बातें हमें श्री माता जी ने बताईं थी। मुझे श्री माता जी ने मुझे अपने सामने ध्यान पर बिठाया, मैं उनके सामने बैठकर ध्यान करने लगा, ध्यानावस्था में हमारा शरीर आगे की ओर झुकता चला गया, सिर भूमि पर स्पर्श करने लगा, श्वांसें तेज गति से चलने लगी। इसी प्रकार मैं एक घन्टे तक ध्यान करता रहा।

श्री माता जी ने बताया– सुबह कुछ साधक दीक्षा लेने आ रहे हैं, आप भी सुबह तैयार हो जाना, सुबह कुछ देर तक सामूहिक ध्यान करेंगे। दूसरे दिन सुबह 8.00-8.30 बजे कुछ साधक श्रीमाता जी के पास आ गये, श्री माता जी ने उन सभी साधकों को दीक्षा दी। फिर ध्यान करने के लिए हम सभी साधक एक साथ बैठ गये, मैं श्री माता जी के सामने एक ओर को बैठ गया। ध्यानावस्था में हमारा सिर आगे की ओर झुककर भूमि से स्पर्श करने लगा, फिर जोर-जोर से भस्त्रिका चलने लगी, कुछ क्षणों में हमें लगा– "श्री माता जी गर्दन से लेकर मूलाधार चक्र तक रीढ़ के ऊपर शक्तिपात कर रही हैं, उनके अँगूठे का स्पर्श हमें महसूस हो रहा था, कुछ क्षणों में भस्त्रिका चलनी बन्द हो गयी, मैं सीधा बैठ गया"। फिर मैं अपने

आप को भूल-सा गया, जब हमारी आँखें खुली तब सभी साधक बैठे हुए थे और हमारी ओर देख रहे थे। श्री माता जी धीरे-धीरे साधकों से बातें कर रही थीं।

साधकों के जाने के बाद श्री माता जी ने मुझे बताया– "आनन्द कुमार आपका आगे की ओर झुकना गलत है, यह साधना नहीं बल्कि अवरोध हैं, मैंने यह अवरोध दूर कर दिया, इसलिए आप सीधे होकर बैठ गये थे। ध्यानावस्था में साधक पीछे की ओर झुकता है, आगे की ओर नहीं झुकना चाहिए। आपके साथ आपकी पत्नी भी आयी हैं तथा दो और अतृप्त जीवात्माओं का प्रभाव आप पर है"। श्री माता जी के यह शब्द सुनकर में चौंका और उनसे कहा– "दो और अतृप्त जीवात्माएँ कौन हो सकती हैं, मुझे अपनी पत्नी के विषय में जानकारी थी, मगर दो और जीवात्माओं के विषय में जानकारी नहीं थी। अगर हम पर दो अतृप्त जीवात्माओं का प्रभाव था, तब हमें परेशानी होनी चाहिए थी, मगर हमें किसी प्रकार की परेशानी कभी महसूस नहीं हुई"। श्री माता जी बोलीं– "वह ठीक है मगर परेशानी तब होती है जब शरीर के अन्दर प्रवेश करें, इनका प्रभाव बाहर से था"। फिर मैं कुछ नहीं बोला, श्री माता जी फिर बोलीं– "वे जीवात्माएँ तो चली जाएँगी, मैं आपकी पत्नी को मंत्र भी दे दूँगी, जिससे उसको भी उस देह से (वासनादेह) मुक्ति मिल जायेगी। चलो अच्छा है वह आपके साथ आ गयी है"। दूसरे दिन मैंने श्री माता जी से कहा– "आप हमें जाने की आज्ञा दे दीजिए"। श्री माता जी बोलीं– "आप एक दो दिन रुककर जाइए, कल दशहरा का पर्व है आप महाराष्ट्र का दशहरा देखिये,यहाँ पर कैसे मनाया जाता हैं"।

आप शादी कर लीजिए

अगले दिन सुबह लगभग दस बजे श्री माता जी बोलीं– "चलो नीचे चलते हैं यहाँ पर कोई-न-कोई आता रहता है, इसलिए अवरोध आयेगा"। हम और श्री माता जी नीचे वाले फ्लैट में चले गये। श्री माता जी उस नीचे वाले फ्लैट में रहने वाली स्त्री से बोलीं– "मुझे एकांत में इस लड़के से बात करनी है, ऊपर कोई-न-कोई आता रहता है। उस फ्लैट वाली स्त्री ने एक कमरा खोल दिया, मैं और श्री माता जी के उस कमरे में चले गये। वह स्त्री अपने फ्लैट से हेमन्त भैया के फ्लैट पर चली गयी। मैं सोच रहा था, श्री माता जी को मुझसे क्या बात करनी है, जो इतने एकांत में क्यों ले आयीहैं। मैं फर्श पर दरी बिछाकर श्री माता जी के सामने बैठ गया। श्री माता जी बोलीं– "आनन्द कुमार मैंजो बोल रही हूँ उसका उत्तर आप सोचकर बाद में दे देना, आज अथवा कल भी उत्तर दे सकते हैं ताकि आप सही निर्णय करके उत्तर दे

सकें, श्री माता जी की बात सुन कर मुझे भय-सा महसूस होने लगा। मैंने सोचा जरूर कोई महत्त्वपूर्ण बात कहना चाहती हैं, श्री माता जी गहरी दृष्टि से हमें देख रही थीं। फिर कुछ क्षण रुककर बोलीं– "आनन्द कुमार आपकी पत्नी की मृत्यु हो गयी है, आप अभी जवान हैं आपकी उम्र अभी काफी शेष है, इसलिए आप शादी कर लीजिए ताकि आपको बुढ़ापे में पछताना न पड़े, क्योंकि बुढ़ापे में साथी की जरूरत होती है, आप शादी कर लीजिए"। श्री माता जी के शब्द सुनकर हमारे होश उड़ गये, मुझे ऐसा लग रहा था– "मुझे चक्कर आ जायेगा"। कानों में सांय-सांय की आवाज आने लगी, ऐसा लगा जैसे कान सुनना बन्द कर देंगे, हमारी श्वांस अपने आप रुकने लगी। शरीर कुछ समय के लिए निश्क्रिय-सा हो गया। श्री माता जी की दृष्टि हमारे चेहरे पर टिकी हुई थी, मैंने सोचा कि यह श्री माता जी ने क्या कह दिया, कुछ क्षणों बाद हमारी चेतना वापस आ गयी। शरीर को झटका सा लगा, हमारी आँखों से आँसुओं की धार बहने लगी। मैंने श्री माता जी से हाथ जोड़कर बड़ी मुश्किल से आवाज निकालकर बोला– "श्री माता जी कृपया आप हमसे शादी के लिए न कहें कि आप शादी कर लीजिये"। मैंने उनके चरण पकड़ लिए और जोर-जोर से रोने लगा, श्री माता जी ने हाथ लगाकर हमें उठाया और बोलीं– "आनन्द कुमार हिम्मत से काम लो, खूब सोच समझ लो, इसीलिए हमने उत्तर देने के लिये समय दिया है। ऐसा मत समझो शादी करने से साधना में अवरोध आयेगा, साधना शादी के बाद भी होती रहेगी। क्या शादी करके गृहस्थी बसाने वाले अच्छे साधक नहीं बनते हैं, बहुतों ने गृहस्थ जीवन में ही साधना की है। इसलिए आप कोई अच्छी-सी लड़की देखकर शादी कर लीजिए, उसकी छोटी जाति न हो आपके समकक्ष हो, हमारा आशीर्वाद आपके साथ रहेगा।" ये शब्द कह कर श्री माता जी चुप हो गयी, मैं फिर शादी का नाम सुनकर दुःखी हो गया, मगर अबकी बार पहले जैसा दुख नहीं हुआ था, क्योंकि अब हमारे अन्दर दृढ़ता आ गयी थी। अब पूरी तरह से आत्मविश्वास बढ़ गया था। मैंने श्री माता जी से हाथ जोड़े और बोला– "श्री माता जी आप हमें दो दिन अथवा दो साल का समय दीजिए तो भी हमारा निर्णय यही है, अब मैं किसी कीमत पर शादी नहीं करूँगा। मैं बुढ़ापे में आने वाले कष्टों से घबराता नहीं हूँ। हमारा लक्ष्य सिर्फ साधना करना ही है, यदि आप हमें आशीर्वाद देना चाहती हैं तो हमें अवश्य आशीर्वाद दीजिये, कि भविष्य में हमारी साधना अच्छी हो, हमें सफलता मिले। मैंने अब शादी न करने का दृढ़ निश्चय कर लिया है"। इतना कह कर मैंने श्री माता जी के पैर पकड़ लिए। श्री माता जी ने हमारी पीठ थपथपायी और बोलीं– "आनन्द कुमार जब आपका इतना दृढ़ निश्चय है तो हमारा आशीर्वाद आपके साथ है। भविष्य में आप एक अच्छे साधक बनेंगे तथा पूर्णता भी प्राप्त करेंगे"। हमें श्री माता जी के ये शब्द बहुत अच्छे लगे। और मैं बहुत प्रसन्न हुआ।

श्री माता जी बोलीं, “मैं आपको एक मंत्र दूँगी, वह शक्तिमंत्र है। इस मंत्र के जाप करने से आपकी कुण्डलिनी को ऊर्ध्व होने में सहायता मिलगी अथवा ऊर्ध्व होने लगेगी। यह मंत्र अत्यन्त गुप्त है। यह मंत्र आप किसी को नहीं बताएँगे, यह मंत्र हमें साधना काल में ध्यानावस्था में बताया गया था। इस मंत्र को विधिपूर्वक बोलना चाहिए, तभी फलित होगा, यह मंत्र मैं बाद में बताऊँगी तथा बोलने का तरीका भी बताऊँगी, चलो ऊपर चलें काफी समय हो गया है”। श्री माता जी और मैं ऊपर आ गये।

दोपहर का भोजन करने के बाद थोड़ा आराम किया। फिर श्री माता जी बोलीं– “चलो ऊपर चलते हैं मैं आपको मंत्र बताऊँगी”। मैंने एक कुर्सी उठाई और श्री माता जी के साथ पीछे-पीछे चल दिया। सीढ़ियाँ चढ़ते समय श्री श्री माता जी ने कहा– “आनन्द कुमार आप हमारा हाथ पकड़ो”। क्योंकि उन्हें सीढ़ियाँ चढ़ते समय थोड़ी परेशानी हो रही थी। मैंने श्री माता जी का हाथ पकड़ा और धीरे-धीरे सीढ़ियों पर चढ़ने लगा, छत पर पहुँचकर एक ओर कुर्सी डाली, उस कुर्सी पर श्री माता जी बैठ गयीं। मैं चटाई बिछाकर नीचे बैठ गया। श्री माता जी बोलीं–“मंत्र पहले सीख लीजिए, फिर आपको बोलने का तरीका बताती हूँ”। मैंने मंत्र को कागज पर लिख लिया, श्री माता जी ने मंत्र का उच्चारण किया। फिर श्री माता जी बोलीं– “आप ध्यान पूर्वक से उच्चारण करने का तरीका सुनिए। मंत्र में किस जगह उतार चढ़ाव है”। श्री माता जी ने दो तीन बार मंत्र का उच्चारण किया, फिर हमें बोलने के लिए कहा। मैंने भी मंत्र का उच्चारण किया, मगर उस मंत्र का बोलने का तरीका सही नहीं था। इसी प्रकार श्री माता जी ने हमें बोलने का तरीका समझाया, फिर मुझे मंत्र बोलने का तरीका आ गया। श्री माता जी ने कहा– “मंत्र बहुत ही शक्तिशाली है यदि सही उच्चारण के द्वारा मंत्र को बोला जाये तो कुण्डलिनी अवश्य ऊर्ध्व होने का प्रयास करने लगती है। इस मंत्र का जाप ज्यादा से ज्यादा करना ताकि उसका लाभ शीघ्र मिल सके”। श्री माता जी ने एक मंत्र और दिया। इस मंत्र से सांसारिक स्थिति में सुधार आता है तथा कारोबार भी अच्छा चलने लगता है। श्री माता जी ने यह दोनों मंत्र पहली बार हमें ही दिये थे। मैं फिर श्री माता जी के साथ फ्लैट में वापस आ गये, क्योंकि थोड़ी देर में श्री माता जी को जलगाँव शहर में ही सत्संग में जाना था।

साधकों! श्री माता जी द्वारा बताए गये मंत्रों का वर्णन मैं यहाँ पर नहीं कर रहा हूँ, क्योंकि ये मंत्र अत्यन्त गुप्त है तथा बहुत ही शक्तिशाली है। साधक की कुण्डलिनी ऊर्ध्व करने में सहायता करते है तथा अन्य प्रकार के भी कार्य करते हैं इन मंत्रों को आप अपने गुरूदेव या मार्गदर्शक से पूछ लीजिए। फिर मैं श्री माता जी के साथ सत्संग में चला गया। श्री श्री माता जी ने प्रवचन किया और ध्यान भी कराया। अबकी

बार ध्यानावस्था में मैं इतना पीछे झुक गया, मुझे ऐसा लगा कि मैं पीछे गिर जाऊँगा। मेरे पीछे बैठे साधक ने हमें पकड़ लिया तभी हमारा ध्यान टूट गया।

हमारी ट्रेन का समय हो गया था। मैंने श्री माता जी से कानपुर (उ.प्र.) जाने के लिये आज्ञा ले ली। एक साधक मुझे जलगाँव रेलवे स्टेशन तक छोड़ गये। जलगाँव से ट्रेन द्वारा हम कानपुर आ गये। हमारी अबकी बार की यात्रा अत्यन्त सफल रही। मैं बहुत प्रसन्न था। मैं घर आकर कठोरता के साथ साधना करने लगा।

पत्नी की सद्गति हुई

कुछ दिनों बाद श्री माता जी का पत्र आया। उसमें लिखा था– "आपकी पत्नी मंत्र लेने से इनकार कर रही है। वह अपने बच्चे के मोह में है, मगर मैं शीघ्र ही मंत्र दे दूँगी तथा उसे वासना देह से मुक्त कर दूँगी"। आखिरकार उसे वासना देह से मुक्ति मिल गयी। फिर भी साधना के प्रभाव से हमारी और उसकी मुलाकात होती रहती थी। वह हमें अपने बारे में बताया करती थी। कभी-कभी वह स्वयं भी आ जाती थी, क्योंकि मैंने उसे योगबल दे रखा था। उसी योगबल के द्वारा वह हमसे मिलने आ जाती थी वरना वह हमसे नहीं मिल सकती थी, क्योंकि अब वह पृथ्वी की परिधि में नहीं थी। कभी-कभी वह हमें भविष्य की छोटी-छोटी जानकारियाँ दे देती थी। अब उसमें पहले जैसी आसक्ति या प्यार नहीं था, वह कुछ उखड़ी-उखड़ी सी रहती थी। जब मैंने इसका कारण पूछा तो उसने बड़ी मुश्किल से बताया– "मैं जहाँ पर रहती हूँ, वहाँ पर अच्छी तरह से हूँ. अब मुझे मत बुलाया करो। उसकी आसक्ति अब उसे अपने लड़के से भी नहीं रह गयी थी। साधकों! उसने हमें एक बात बतायी, वह जिस जगह पर रहती है उस जगह पर उसी के समान और भी जीवात्माएँ रहती हैं। वहाँ की जीवात्माओं को कुछ-न-कुछ कष्ट अवश्य बना रहता है। पत्नी को भी कष्ट रहता था मगर उसे कष्ट सहने की आदत पड़ चुकी थी।

बहुत दिनों बाद एक बार मैंने उससे सम्पर्क स्थापित किया। हमारी उससे मुलाकात होते ही उसने कहा– "आप मुझे मत बुलाया करो, अब हमें क्यों बुलाते हो, हमारी अब मृत्यु हो चुकी है। मैं अब तुम्हें नहीं मिल सकती हूँ, तुम्हारी मुलाकात के बाद हमें कुछ दिनों तक आपकी बात याद आती रहती है जो हमारे लिए अच्छा नहीं है। आप मुझे अपनी पत्नी मानते हो, अब मैं आपकी पत्नी नहीं हूँ, क्योंकि हमारा

स्थूल शरीर नष्ट हो चुका है, हमारा आपका सम्बन्ध सिर्फ स्थूल शरीर का था। इसलिए आप हम पर रहम करो हमसे मुलाकात मत करो, ताकि मैं आपको भूल जाऊँ। मैं आपके पास ज्यादा देर तक नहीं रुक सकती हूँ"। मैंने उससे कुछ समय तक बातें कीं, उसके उत्तर में उसने कहा– "अब आप साधना करिए, आपने शादी नहीं की यह अच्छा किया, यह हमारे लड़के के लिये अच्छा है, मगर दूसरी शादी न करने के कारण भविष्य में आपको परेशानी उठानी पड़ेगी"। मैंने कहा–"आप हमें अपने यहाँ की कभी-कभी जानकारियाँ दे दिया करो"। वह बोली– "मैंने आपको बहुत सी बातें बताई हैं, अब हमें और मजबूर न करो"। मैं बोला– "जब तुम्हें वहाँ ज्यादा परेशानी महसूस हो, तब हमारे पास सीधे चली आना, हम उस परेशानी का हल कुछ-न-कुछ अवश्य निकाल लिया करेंगे। कुछ समय बाद हमारी साधना और अच्छी हो जायेगी"। वह हल्का-सा मुस्कराई और बोली– "यह हमारे लिए अच्छा रहेगा"। इतना कह कर वही चली गयी। साधकों! अब आप समझ गये होंगे, हमारी और पत्नी की कितनी ज्यादा बातें हुआ करती थीं। मैं मंत्रों का जाप करके संकल्प द्वारा योगबल उसके पास पहुँचा दिया करता था, योगबल के कारण उसे वहाँ पर बहुत ज्यादा कष्ट नहीं सहना पड़ता था।

साधकों! पत्नी के विषय में एक और अनुभव लिख रहा हूँ। अभी तक मैं जाग्रत अवस्था में पत्नी से मिला करता था। सिर्फ आँखें बन्द करके बात किया करता था, मगर अबकी बार उससे ध्यानावस्था में मिला, यह बात जून सन् 1990 की है। पत्नी से मिले हुए डेढ़ वर्ष हो गये थे, मैने सोचा– अब उससे मिलूँगा, हमारी साधना पहले से और ज्यादा अच्छी हो गयी है। मैं ध्यान पर बैठ गया। मैंने देखा– मैं अन्तरिक्ष में खड़ा हुआ हूँ, मैंने अपना दाहिना हाथ आशीर्वाद मुद्रा में ऊपर की ओर उठाया, तभी मेरी हथेली के मध्य भाग से तीन किरणें पीली, लाल और नीली रंग की निकलीं, ये तीनों किरणें सूर्य की किरणों की भाँति थीं, ये तीनों किरणें ऊपर की ओर आकाश में चली गयीं। उन किरणों की लम्बाई अपने आप बढ़ती जा रही थी, मैं अपना हाथ आशीर्वाद मुद्रा में किये हुए खड़ा था। कुछ समय बाद उन तीनों किरणों को मैंने हाथों में रस्सी की भाँति पकड़ लिया। फिर मैंने उन किरणों को रस्सी की भाँति खींचना शुरू कर दिया। कुछ क्षणों तक मैं उन किरणों को अपनी ओर खींचता रहा। इतने में हमें किसी के कराहने की आवाज आयी। हमें लगा जैसे कोई मनुष्य दर्द के कारण कराह रहा है। फिर मैंने देखा– किरणों के दूसरे भाग में कुछ बँधा हुआ है, बाद में स्पष्ट हो गया किसी की मनुष्य की लाश जैसी बँधी हुई है। उसी की कराहने की आवाज आ रही थी, मैं समझ गया वह व्यक्ति मृत नहीं जीवित है। उस व्यक्ति को देखकर मैं चौंका पड़ा, क्योंकि वह कोई ओर नहीं बल्कि मेरी ही पत्नी थी। उसी के गले में तीनों किरणें लिपटी हुई

थीं, पत्नी हमारे सामने कराहते हुए खड़ी हो गयी और बोली– “मेरा गला खोलो”। मैंने उसके गले से किरणों के चक्कर खोल दिये। अब वह आराम से बैठ गयी। मैंने पूछा–“इन किरणों में तुम कैसे फँस गयी”। वह बोली– “तुम्हीं ने संकल्प करके हमें इस तरह बुलाया है, मैंने पहले भी कहा था मुझे मत बुलाया करो, तुमने जबरदस्ती हमारे साथ ऐसा व्यवहार किया है, इससे हमें बहुत तकलीफ हुई है”। मैं बोला– “यदि तुम्हें इतनी तकलीफ हो रही थी तब तुमने इन किरणों के चक्करों को क्यों नहीं खोल लिया?” वह बोली– “यह कार्य हमारी सामर्थ्य से बाहर था, ये किरणें हमारे पास आकर गले में लिपट गयीं, फिर तुमने मुझे घसीटना शुरू कर दिया, इसलिए यहाँ तक घिसटते हुए आयी हूँ”। मैं बोला–“हमारा इरादा आपको कष्ट देने का नहीं था, अनजाने में हमारे द्वारा आपको कष्ट हुआ है”।

साधकों! यहाँ पर पत्नी के विषय में लिखने का कारण यह है, आप सभी साधकों को मृतात्माओं से मिलने के विषय में जानकरी हो जाये। हर साधक एक निश्चित अवस्था में ऐसी जीवात्माओं से सम्पर्क स्थापित कर सकता है। ऐसे कार्यों के लिए साधना उग्र होनी चाहिए, अन्यथा सम्पर्क स्थापित नहीं हो सकता है। मैं फिर अपनी पत्नी से कभी नहीं मिला, बल्कि वह स्वयं हमारे पास मिलने आयी थी, इसका विवरण आगे दिया गया है। मुझे जानकारी हो गयी थी, अगर इसी तरह से हम दोनों मिलते रहे तो उसका अगला जन्म देर में हो सकता है। इसी प्रकार मैंने ढेर सारी जीवात्माओं से सम्पर्क स्थापित किये थे और उनसे बातचीत भी किया करता था, मुझे इस तरह से बातें करने में मजा आता था तथा इन जीवात्माओं के विषय में ज्ञान होता था।

कष्टों की अनुभूति

जलगाँव से वापस आने के बाद मैं फिर कठोर साधना करने में लग गया। ध्यानावस्था में हमारी गर्दन पीछे की ओर जाकर पीठ से चिपक जाती थी, गर्दन पीठ से इतनी ज्यादा चिपक जाती थी कि ध्यान खुलने के बाद गर्दन सीधी नहीं कर पाता था, तब अपने दोनों हाथों से सिर को पकड़ कर गर्दन धीरे-धीरे सीधी किया करता था। उस समय बहुत कष्ट सहना पड़ता था। एक बार में सवा से डेढ़ घण्टे तक का ध्यान हो जाता था दिन में तीन-चार बार ध्यान पर बैठता था। प्राणायाम भी दो-तीन बार किया करता था तथा श्री माता जी द्वारा बताए गये मंत्रों का भी जाप किया करता था। कुछ दिनों बाद हमारे शरीर के अन्दर गर्मी बढ़नी शुरू हो गयी, ऐसा लगता था पेट जला जा रहा है, मैं जितनी ज्यादा साधना करता था, गर्मी

उतनी ही ज्यादा बढ़ती थी, हमारे घर का माहौल भी बदलने लगा था। अब हमें साधना करने में अत्याधिक परेशानी उठानी पड़ती थी, घर का विरोध भी सहना पड़ता था। हमारे मन में विचार आया कि घर को छोड़कर बाहर कहीं साधना की जाये तो अच्छा है। लेकिन बाहर हमारी कहीं भी इतनी जान-पहचान नहीं थी, कि किसी के द्वारा आश्रम में साधना करने के लिए चला जाऊँ। फिर सोचा– अगर आश्रम में चला भी गया तो वहाँ पर साधना करने के लिये समय कम मिलेगा तथा आश्रम का काम भी करना पड़ेगा, कुछ आश्रमों का हाल तो हमने बहुत बुरा सुना है कि संन्यासियों की आपस में नहीं बनती है, इसलिए हमारा मन पूरी तरह से आश्रम में जाने के लिए तैयार नहीं हुआ। आप ऐसा समझ लीजिए मैं अपने आप को अधर में लटका हुआ पाता था, मन में बड़ी खींचातानी होती थी। कभी-कभी ऐसा लगता था कि हमारी साधना कैसे पूरी होगी, मगर हमारा दृढ़ निश्चय व धैर्य बहुत अधिक होने के कारण हताश नहीं होता था। मैं यह सोचता था जब कष्ट ही सहना है, तब फिर घर से जाने के लिये क्यों सोच रहा हूँ, यह भी सच है– जब तक ज़िन्दगी में कष्ट नहीं आते हैं, तब तक जीने का मजा नहीं आता है। लक्ष्य जितना बड़ा होता है, उतनी ही अधिक परेशानियाँ आतीं है और उसी के अनुसार अधिक परिश्रम भी करना पड़ता है।

सन् 1989

कामवासना की जागृति

कृपया पाठकगण हमें क्षमा करना, मैं जो अब लिखने जा रहा हूँ वह अनुभव कामवासना सम्बन्धी है। क्योंकि योग मार्ग में साधक को यह अवस्था अवश्य आती है, इसलिए इस पर लिख रहा हूँ ताकि साधकों को योग के अभ्यास के विषय में समझने में सहायता मिले। मैं जितनी कठोरता के साथ अधिक साधना करता था, परेशानियाँ भी उतनी ही अधिक आती थीं। अब हमारे अन्दर एक कमी आने लगी थी, इस कमी के कारण मैं स्वयं परेशान रहने लगा था। मैं सोचता था– अब साधना करना बड़ा मुश्किल है, यह परेशानी मुझे कभी नहीं आयी थी, परेशानी का नाम "कामवासना"था। हमारे शरीर के अन्दर कामवासना की जागृति हो गयी थी। जब मैं ध्यानावस्था में होता था तब कामवासना उग्र स्वरुप धारण कर लेती थी, मगर ध्यान टूटने के बाद हमें यह परेशानी नहीं रहती थी। मैं सोचता था कि मेरे अन्दर क्या कमी आ गयी है जो यह कामवासना इतनी तीव्र गति से उभर आयी है। हमारी समझ में नहीं आ रहा था कि अब क्या करूँ, मैं सोचने लगता– यदि इस विषय में किसी को जानकारी हो गयी तो लोग क्या कहेंगे? यह साधना नहीं करता है ढोंग कर रहा है, जब मैं ध्यान नहीं करता था तब हमारी कामवासना शान्त रहती थी, मगर ध्यानावस्था में हमारा हाल बहुत खराब हो जाता था। इसलिये अब मुझे ध्यान से डर-सा लगने लगा, जब मैंने अपना ध्यान कम कर दिया तब इस कामवासना से थोड़ी-सी राहत मिलने लगी, मगर ध्यान तो करना ही था इसलिए ध्यान पर बैठ जाता था।

साधकों! आप हमें बेशर्म कहेंगे! मैं क्या करूँ, योग के अभ्यास में ऐसा ही होता है, इसलिए क्षमा करें। जब मैं ध्यान करने के लिये बैठता था, तब फिर वही कामवासना की इच्छा चलने लगती थी। कई बार मन को समझाया मगर मन उसी ओर आकर्षित होता रहता था। मैं कभी अपने इष्ट को याद करता, कभी श्री माता जी को याद किया करता था, मगर इसका समाधान नहीं होता था, मन तो बस कामवासना पर ही स्थिर रहता था। हमारी वासनाएँ इतनी प्रबल हो गयीं थी कि ध्यानावस्था के समय हमारा शरीर पसीने से तर हो जाता था, मुझे अपने आप से क्रोध आने लगता था। एक बार क्रोध इतने जोर से आया कि ध्यानावस्था में हमारे मुँह से निकला– *"नहीं ऽऽऽ"।* फिर हमारा ध्यान टूट गया। मैं अपने आसन पर बैठा हुआ था, हमारी श्वांस तेज चल रही थी। मुझे अपने पर क्रोध आ रहा था, मैं बैठकर रोने लगा। फिर

ईश्वर से प्रार्थना की– “प्रभु, यदि मेरा यही हाल रहा तो मैं साधक नहीं बन पाऊँगा, निम्न श्रेणी का मनुष्य अवश्य बन जाऊँगा”। हमारी समझ में कुछ नहीं आ रहा था, जो चीज हमारे अन्दर बिल्कुल नहीं थी वह अब इतनी तीव्रता से कैसे अपना प्रभाव दिखाने लगी। फिर मैंने सोचा– श्री माता जी को पत्र लिखूँगा, तो श्री माता जी क्या सोचेंगी– पहले मैंने शादी के लिए कहा था तब आनन्द कुमार ने मना कर दिया, अब ऐसे शब्द लिखकर भेज रहा है। आखिरकार हमें अपनी समस्या का हल चाहिए था, इसलिए मैंने निश्चय किया श्री माता जी को इस विषय मैं बताऊँगा, वही इस समस्या का हल कर सकती हैं। फिर मैंने श्री माता जी को पत्र लिखा।

श्री माता जी को पत्र इस तरह से लिखा था कि श्री माता जी हमारे भावों को समझ जाएँ। कुछ दिनों बाद हमारे पत्र का उत्तर आ गया, उस पत्र में हमें श्री माता जी ने बड़ी डाँट-फटकार लगाई गयी थी। मगर हमारी यह क्रिया बन्द नहीं हुई, इसलिए हमने साधना करनी बन्द कर दी, साधना बन्द करने पर हमें इस परेशानी से थोड़ा आराम मिल गया, धीरे-धीरे वासना शांत हो गयी, क्योंकि मैंने ध्यान करना बन्द कर दिया था। अब मुझे अपने योग के अभ्यास पर बड़ा क्रोध आ रहा था, मैं सोचता था कि योग का अभ्यास करना बड़ा मुश्किल है, जब ध्यान पर बैठता हूँ तब कामवासना शुरू हो जाती है, ध्यान बन्द कर देता हूँ तब कामवासना बन्द हो जाती है। लगभग एक माह तक ध्यान नहीं किया, लेकिन अब हमें ध्यान के बिना बड़ी बेचैनी सी शुरू हो गयी। इसलिए ध्यान करना फिर से शुरू कर दिया, अबकी बार यह क्रिया नहीं हुई, अब मैं ध्यान सिर्फ तीन घण्टे किया करता था, फिर दिन भर अपनी दुकान चलाया करता था।

प्रिय साधकों! आप सोचते होंगे, हमारे अन्दर यह कामवासना क्यों प्रकट हो गई। उसका अर्थ लिखता हूँ– हमारे पहले अनुभवों को पढ़कर आपको भासित हो गया होगा, मैं इस प्रकार का साधक नहीं रहा हूँ, अगर मैं इस प्रकार का होता तो अपनी शादी कर लेता, जैसा श्री माता जी ने जलगाँव में मुझसे कहा था। जिस समय ध्यानावस्था में हमें यह क्रिया होती थी, उस समय मैं इसका अर्थ नहीं समझ पाता था। श्री माता जी ने हमें इसका अर्थ नहीं समझाया था, बल्कि इस विषय में हमारी डाँट लगाई थी। मुझे लगता था– ये हमारे अन्दर की ही सूक्ष्म वासनाएँ है जो चित्त के ऊपरी सतह पर आ रही है। मगर अब पुस्तक लिखते समय, हमें योग की सभी प्रकार की जानकारियाँ प्राप्त हो गई है क्योंकि योग मार्ग में अभ्यास के द्वारा काफी सफर तय कर लिया है। वास्तविकता यह थी– कि योग के अभ्यास के द्वारा हमारी कुण्डलिनी ऊर्ध्व हो रही थी। श्री माता जी को हमने कई बार पत्र लिखे थे, उसमें मूलाधार चक्र का अनुभव भी सदैव लिखा करता था, मगर श्री माता जी उस अनुभूति का उत्तर नहीं देती थी और न ही

खुलकर हमारे ध्यान के विषय में बताती थी। वैसे कभी-कभी हमें आभास हो जाता था कि हमारी कुण्डलिनी ऊर्ध्व हो रही है। फिर मैं सोचता था अगर कुण्डलिनी ऊर्ध्व हो रही होती, तब श्री माता जी इस विषय में अवश्य बताती,कि तुम्हारी कुण्डलिनी ऊर्ध्व हो रही है। श्री माता जी हमें अक्सर बताया करती थी कि कुण्डलिनी जब गुरु द्वारा ऊर्ध्व की जाती है तभी कुण्डलिनी ऊर्ध्व होती है। मगर जब कुछ वर्षों बाद मैंने अभ्यास के द्वारा कुण्डलिनी ऊर्ध्व करके उसकी यात्रा पूर्ण करा दी, तब हमें सम्पूर्ण जानकारी स्वयमेव हो गई। कुण्डलिनी स्वयमेव ऊर्ध्व हो सकती है, यदि साधक उग्र साधना करता रहे तो कुण्डलिनी अवश्य ऊर्ध्व हो जायेगी। स्वमेव ऊर्ध्व हुई कुण्डलिनी वाले साधक अत्यन्त शक्तिशाली होते हैं तथा अपने साधनाकाल में दूसरों पर शक्तिपात कर सकते हैं। कुण्डलिनी स्थिर होने के बाद योगबल की मात्रा पहले की अपेक्षा से काफी अधिक हो जाता है। जिन साधकों की कुण्डलिनी पिछले जन्म में ऊर्ध्व हो चुकी है तथा कुण्डलिनी की पूर्ण यात्रा कर स्थिर कर लिया है, ऐसे साधकों की कुण्डलिनी अवश्य उग्र होती है तथा ऐसा साधक मार्गदर्शन में सक्षम होता है।

मैं बात कामवासना की कर रहा था, साधक की कुण्डलिनी जब स्वाधिष्ठान चक्र पर आती है तब साधक के अन्दर की कामवासना बहुत ज्यादा प्रकट हो जाती है क्योंकि स्वाधिष्ठान चक्र जननेन्द्रिय अथवा लिंग के स्थान पर होता है। कुण्डलिनी जब वहाँ पहुँचती है तब यह चक्र अधिक क्रियाशील हो जाता है। इसलिए उस समय ध्यानावस्था में कामवासना का प्रभाव बहुत अधिक हो जाता था। मगर जब मैंने ध्यान करना बन्द कर दिया तब कामवासना का प्रभाव समाप्त हो गया था। क्यों कुण्डलिनी का ऊर्ध्व होना बन्द हो गया था वह मूलाधार चक्र में सुषुप्त अवस्था में हो गई थी। यह बात जनवरी सन् 1989 की है। इसी प्रकार हमारी कुण्डलिनी सितम्बर-अक्टूबर सन् 1989 में भी ऊर्ध्व हो गयी थी, मगर श्री माता जी द्वारा न बताये जाने के कारण मैं उधर की ओर ध्यान नहीं देता था। मैं सोचता था– श्री माता जी ने तो कुण्डलिनी ऊर्ध्व नहीं की है जबकि मुझे कुण्डलिनी ऊर्ध्व होते हुए दिखाई देती थी। श्री माता जी हमें क्यों नहीं बताती थी वह बात मैं कभी समझ ही नहीं समझ पाया, जबकि दूसरे साधकों के विषय में सब कुछ बताया करती थी। मैं पूर्ण रूप से श्री माता जी पर निर्भर था, कि श्री माता जी स्वयं बता देंगी। उस समय किसी कारण से हमारी साधना कम हो गयी। तब फिर हमारी कुण्डलिनी फिर बैठ गयी थी। फिर जनवरी सन् 1991 में हमरी कुण्डलिनी एक दिव्य शक्ति ने ऊर्ध्व कर दी थी, अबकी बार कुण्डलिनी ऊर्ध्व होकर हृदय तक आ गयी थी।

फरवरी सन् 1991 में माता जी के पास मिरज-महाराष्ट्र गया था, उस समय शिवरात्रि पर्व पर मुझे बुलाया गया था। तब मैंने श्री माता जी से पूछा– कृपया आप हमें स्पष्ट बताइये यह क्या है? श्री माता जी बोली– आनन्द कुमार आपको समझ आनी चाहिए,आपकी कुण्डलिनी ऊर्ध्व हो रही है, आपकी कुण्डलिनी लगभग सवा साल पहले भी ऊर्ध्व हुई थी मगर फिर वह बैठ गई”। मैं बोला– श्री माता जी आपने पहले हमें कुण्डलिनी के विषय में बताया नहीं था। जब गुरु कुण्डलिनी ऊर्ध्व करते है तब कुण्डलिनी ऊर्ध्व होती है। श्री माता जी बोली– “आपको समझ में आना चाहिए था, क्या हर बात को गुरू बताएगा”। श्री माता जी के शब्दों को सुन कर मुझे बड़ा दुःख हुआ, अगर मुझे पहले मालूम हो जाता कि मेरी कुण्डलिनी ऊर्ध्व हो गयी है, तब मैं और ज्यादा समय तक साधना करता, ताकि वह दुबारा मूलाधार चक्र में सुषुप्त अवस्था में स्थित नहीं होती, मैंने श्री माता जी से पूछा– “आप बताया करती थीं गुरू ही कुण्डलिनी ऊर्ध्व करता है तभी ऊर्ध्व होती है मगर आपने हमारी कुण्डलिनी ऊर्ध्व नहीं की है। श्री माता जी बोली– “हाँ, यह सही है मगर आपकी कुण्डलिनी उठाने का मैंने संकल्प किया था”। यह सुन मैं चुप हो गया। मैंने निश्चय किया कि हमारी कुण्डलिनी उसी दिव्यात्मा ने ऊर्ध्व की है, यह दिव्यात्मा मेरे दो जन्म पूर्व के पिता श्री हैं, इन्हींने वर्तमान जन्म में मेरी कुण्डलिनी जगृति की थी, इसका निश्चय हमें बाद में हो गया था। हमारे पिछले कई जन्मों में कुण्डलिनी जाग्रत रह चुकी है तथा पिछले जन्मों में मैंने बहुत साधना भी की है। मगर हमारे कुछ कर्म अभी शेष है इसलिए हमें इस जीवन में कठिनाइयाँ मिल रही है।

नाग ही नाग

यह अनुभव मार्च-अप्रैल 1989 में आया था। मुझे ध्यानावस्था दिखाई दिया– मैं कहीं चला जा रहा हूँ। सामने की ओर हमें लताएँ ही लताएँ भूमि पर फैली हुई दिखाई दे रही है। लताएँ अपने आपमें उलझी हुई थी और ये लताएँ बहुत ही घनी थी। मैंने उन लताओं के अन्दर प्रवेश किया और थोड़ा सा आगे की ओर चला, तभी हमें दिखाई दिया– लताएँ आपस में लिपटकर बिना किसी आधार के आसमान की ओर जा रही है। मैं उन्हें गौरपूर्वक देख रहा था, तभी हमें सामने लताओं में लिपटा हुआ बहुत बड़ा पीला नाग दिखाई दिया। जैसे ही मैंने नाग की ओर देखा– उसने फन फैलाकर हमारी ओर जोर से फुंफकार मारी, मैं थोड़ा पीछे की ओर खिसक गया, वह नाग लताओं में लिपटा हुआ हमें बारम्बार फुंफकारें मारे जा रहा था। उसका फन बहुत ही चौड़ा था, हालाकि वह क्रोध में फुंफकार रहा था। उस नाग का रंग पीला

चमकदार होने के कारण हमें बड़ा प्यारा सा लग रहा था। मैं अपने सामने वाला रास्ता त्याग कर एक ओर से आगे की ओर जाने का प्रयास किया। मैं हाथों से लताओं को हटाता जा रहा था, इतने में एक पीले रंग के नाग ने हमारे हाथ पर फन दे मारा, मैं चौंका तो देखा– पहले नाग की भाँति वह भी लताओं में लिपटा हुआ था, पहले वाला नाग और यह नाग एक जैसे थे। मैं थोड़ा सा दाहिने होकर आगे की ओर चला ही था तभी फिर एक नाग ने हमारा रास्ता रोक दिया। मैंने सोचा– क्या इन लताओं में नाग ही नाग रहते हैं। हमारे अन्दर पता नहीं कहाँ से ऐसा साहस आ गया कि नागों का हमें बिलकुल डर नहीं लगने लगा, अब मैं उन लताओं को कुचलता हुआ आगे की ओर जाने लगा। नागों के झुंड-के-झुंड हमें मिलते थे, वह नाग फन ऊपर उठाकर जोर-जोर से फुंफकार मारते थे। नाग लताओं में लिपटे हुए थे और भूमि पर भी कुण्डली मारे बैठे हुए थे। नीचे बैठे नागों के फन हमारे पैरों में लगते थे, लताओं पर लिपटे हुए नाग अपना फन हमारे हाथों पर मार रहे थे। आगे बढ़ने में हमें परेशानी होने लगी, क्योंकि लताएँ कम थी, नागों की संख्या ज्यादा थी, भूमि पर पैर रखना भी मुश्किल था। चारों ओर पीले रंग के नाग ही नाग दिखाई दे रहे थे, नागों की श्वाँस की आवाज हमारे कानों में बहुत जोर से गूँज रही थी। नागों के कारण मैं आगे नहीं बढ़ सका, भूमि पर पैर रखने के लिए जगह नहीं थी। अब मैं उन पीले नागों के बीच खड़ा हो गया, मैं निर्भीक होकर नागों को देखे जा रहा था, वह कुण्डली मारे फन उठाकर फूँफकार रहे थे। मगर मुझे किसी ने काटा नहीं था। हमारा अनुभव समाप्त हुआ।

अर्थ- साधकों! पीले रंग के नाग कुण्डलिनी शक्ति के स्वरूप है वह एक होकर भी अनेक रूपों में दिखाई दे रही है। जो ढेर सारी लताएँ हैं, वह हमारे शरीर के अन्दर की सूक्ष्म नाड़ियों का जाल है, हर चक्र में सूक्ष्म नाड़ियों का जाल सा होता है। आजकल मैं शक्तिमंत्र का बहुत जाप कर रहा हूँ। कुण्डलिनी जागरण से सूक्ष्म शरीर का विकास होता है, सूक्ष्म शरीर के अन्दर स्थित सूक्ष्म कोशिकाओं की जड़ता नष्ट करके चैतन्यता विखेर देती है,इसलिये सभी लताओं में नाग लिपटे हुए दिखाई दे रहें हैं तथा जोर-जोर से फुंफकार रहे है।

आग का गोला व बन्दर

ध्यानावस्था में हमें कभी-कभी बन्दरों के दर्शन भी होने लगे है। पहले मैंने सोचा कि बन्दर क्यों दिखाई देते हैं, इनका ध्यान से क्या लेना देना है, मगर जब इन बन्दरों पर गहरी दृष्टि डालकर गौर पूर्वक

देखा, तब ऐसा लगा कि इनका ध्यान से कोई-न-कोई अर्थ जरूर है, नहीं तो ये ध्यान में क्यों दिखाई देते हैं। ध्यानावस्था में एक बार में सिर्फ एक ही बन्दर दिखाई देता था। ये सभी बन्दर लाल रंग के होते है, लाल रंग के बन्दरों की पूँछ छोटी होती है। मगर ध्यानावस्था में इनकी पूँछ काफी बड़ी दिखाई देती थी। अनुभव में दृश्य इस प्रकार का होता था– बन्दर धीरे धीरे आगे की ओर चला जा रहा है, उसकी पूँछ ऊपर की ओर उठी हुई है। बन्दर से आगे की ओर प्रकाशित आग का एक गोला दिखाई देता है, यह आग का गोला बन्दर से दो फीट की दूरी पर स्थित रहता है, बन्दर जैसे-जैसे आगे बढ़ता जाता है वैसे-वैसे आग का गोला भी आगे बढ़ता जाता है। मगर बन्दर और आग के गोले की दूरी सदैव एक-सी बनी रहती है। कुछ समय बाद आग का गोला फट जाता है तब बन्दर भी अदृश्य हो जाता था। इतने में अनुभव समाप्त हो जाता था, यह अनुभव हमें सदैव सुनहले प्रकाश में दिखाई देता था, अनुभव सदैव इसी तरह का आता है। फर्क सिर्फ इतना होता है कभी कभी आग का गोला आगे की बजाय पीछे की ओर दिखाई देता है, कभी-कभी आग के गोले दो दिखाई देते हैं। एक गोला आगे की ओर होता है और दूसरा गोला पीछे की पीछे रहता है, मगर बन्दर से दोनों आग के गोलों की दूरी सदैव समान रहती है तथा आग का गोला फटते ही बन्दर अदृश्य हो जाता है।

अर्थ- ध्यानावस्था में साधक को इस प्रकार का दृश्य दिखाई दे, तब उसे समझ लेना चाहिए कि साधक की साधना अग्नि तत्व में चल रही है। अग्नि तत्व के अन्तर्गत जिसकी साधना चलती है उसका आन्तरिक विकास होना शुरू हो गया है अर्थात सूक्ष्म विकास होने लगता है। यह विकास सूक्ष्म शरीर के अन्तर्गत चलता है इसका सम्बन्ध सूक्ष्म जगत से होता है। कुण्डलिनी का स्वरूप भी अग्नि तत्व से सम्बन्धित होता है। जब ध्यानावस्था में बार-बार लाल रंग का बन्दर दिखाई देने लगे, तब उसका अर्थ यही लगा लेना चाहिए। इसलिए आग का गोला दिखाई देता था। आग का गोला फटने का अर्थ होता है– साधक के चित्त पर स्थित वृत्तियाँ, जो यह दृश्य दिखा रही हैं वह व्यापक होने लगी है। अगर ध्यानावस्था में काले मुँह वाला लंगूर (बन्दर) दिखाई दे, तब उसका अर्थ वायु तत्व से सम्बन्धित होता है।

स्वप्न संकेत

साधकों! स्वप्न संकेत को साधना के अनुभव नहीं कहना चाहिए, बल्कि हमारा मानना है कि यह साधना की एक अवस्था होती है। स्वप्न संकेत का अर्थ है– मैं स्वप्नावस्था में जिस दृश्य को देख रहा हूँ,

जिस व्यक्ति से बात कर रहा हूँ, चाहे वह परिवार का व्यक्ति, पड़ोसी, मित्र, रिस्तेदार, जान-पहिचान वाला हो। वहीं स्वप्न वह व्यक्ति भी देख रहा होता है। स्वप्नावस्था में जो बात मैं अपने मित्र, सगे सम्बन्धी से कह रहा हूँ,वह व्यक्ति भी वही स्वप्न देख रहा होता है तो उसे भी मालूम हो रहा है, मैं क्या कह रहा हूँ। कहने का अर्थ है– मेरे स्वप्न में आने वाला व्यक्ति भी बिलकुल वही दृश्य व बातचीत अपने स्वप्नावस्था में देख रहा होता है। कहा जाता है– स्वप्न सत्य नहीं होते हैं, मनुष्य का मन ही स्वप्न दिखाने काम करता है। वही एक से अनेक बनकर कल्पनिक दृश्य दिखाता है जो सच नहीं होते है। स्वप्न हर पुरुष का अपना व्यक्तिगत होता है, दूसरों से उसका कुछ लेना देना नहीं होता है। मगर जो स्वप्न सात्विक वृत्तियों द्वारा दिखाये जाते हैं, वह स्वप्न सदैव सत्य होते हैं।

स्वप्न संकेत की अवस्था हमारी काफी दिनों तक चलती रही। मैं स्वप्नावस्था में दूसरों की जानकारी हासिल कर लेता था, मैंने बहुत से लोगों से इस तरह से बात की। यदि हमें अपने मित्र से कोई बात कहनी होती थी, तब सोने से पूर्व मैं उन्ही बातों का संकल्प करके सो जाता था। फिर स्वप्नावस्था में अपने मित्र से वही बात कर रहा होता था। बाद में जब मैं अपने मित्र से कहता था– आपने स्वप्न में यह देखा है तथा यह बात की है, तब मित्र चौंक पड़ता था। वह कहता कि हमारा स्वप्न तुम्हें कैसे मालूम हो गया। इस प्रकार के स्वप्न संकेत भेजने में दूरी का कोई अवरोध नहीं होता था। दूरी कम हो अथवा ज्यादा हो इसमें कोई फर्क नहीं पड़ता था, यह क्रिया उसी के साथ करता था जिससे हमारी घनिष्ठाता होती थी। मैं अपनी वास्तविक बात किसी को नहीं बताता था।

स्वप्न संकेत मैं किसी को भी भेज सकता था, चाहे उसने हमसे बात की हो अथवा बात नहीं की हो। अपने प्रयोग के तौर पर कुछ पात्र ऐसे चुने थे जिनसे मैंने कभी बात नहीं की थी। अब मैं ऐसे पात्रों के पास स्वप्न संकेत भेजा करता था, बाद में किसी न किसी तरीके से इसकी जानकारी प्राप्त कर लेता था। तब निश्चय हो जाता था हमारा प्रयोग सच निकला है, मगर दूसरा व्यक्ति अचम्भित हो जाता था कि इन्हें हमारे स्वप्न के विषय में कैसे मालूमहो गया है। स्वप्न संकेत सिर्फ पुरुषों को ही नहीं बल्कि स्त्रियों को भी प्रयोग के तौर पर भेजता था जो 100% सच होता था। कुछ समय बाद मैंने यह सब कुछ छोड़ दिया। मुझे अपनी साधना आगे की ओर ले जानी थी, जब एक-डेढ़ वर्ष बाद इस प्रकार का प्रयोग किया तब यह प्रयोग सफल नहीं हुआ, मुझे लगा यह कार्य किसी सिद्धि की तरह होता था।

संकल्प पूर्ण होना

मैंने पहले भी लिखा है कि मैंने इलेक्ट्रोनिक्स की दुकान खोल ली थी। कुछ ही समय में हमें आसपास के लोग जानने लगे थे, क्योंकि इस क्षेत्र में हमारा अनुभव बहुत ही अच्छा है। नये सेट स्वयं असेंबल करना, पुराने रिपेयरिंग करना मुझे अच्छी तरह आता था मगर मैं दुकान कम ही खोलता था। कारण यह था– मैं साधना पर ज्यादा ध्यान देता था तथा ज्यादातर बाहर भी जाया करता था। मैं सिर्फ दुकान उतनी ही खोलता था जितनी हमें पैसों की जरूरत होती थी, क्योंकि हमारा लक्ष्य साधना करना था, धन प्राप्ति करना नहीं था। हमारी दुकान दो-दो सप्ताह बन्द रहती थी। जब मैं दुकान खोलता था, तब रुपये आने शुरू हो जाते थे। इस सबका कारण एक था मैं अपने मार्ग में (इलेक्ट्रोनिक्स) बहुत अनुभवी था। इसलिए लोग दुकान खुलने का इंतजार करते रहते थे। कुछ दिनों बाद हमारे अन्दर एक विशेष गुण आ गया। सुबह मैं सोच लेता था कि आज दुकान में हमारे पास इतने रुपये आ जाये, तब दुकान में शाम तक उतने ही रुपये आ जाते थे, उन रुपयो की गिनती न कम होती थी और नहीं ज्यादा होती थी। यह बात हमें आश्चर्य में डाल देती थी।

एक दिन मैंने निश्चय किया कि मेरे पास इतने रुपये आ जाएँ। इन रुपयों की संख्या बहुत ही ज्यादा थी, रुपये प्राप्त करने का लक्ष्य असम्भव सा था। मगर आश्चर्य की बात है, दुकान पर इतना काम आ गया कि दिन भर में काम पूरा नहीं कर सका था। फिर दुकान पर रुककर रात भर काम किया, दूसरे दिन सुबह उतने ही रुपये आ गये, जितने रुपये के लिए मैंने सोचा था। अब मैं चौंका, यह क्या बात है ऐसा क्यों होता है? अब मैं अपने घर में सभी को बता दिया करता था कि आज हमारे पास इतने रुपये दुकान से प्राप्त होगें, घरवाले भी आश्चर्य में पड़ गये थे। मैं अपने घर में बता के जाता था, मुझे आज इतने रुपये दुकान से चाहिए,तब उतने ही रुपये हमारे पास आ जाते थे। पाठकों! आपको आश्चर्य हो रहा होगा कि ऐसा कैसे होता होगा? मगर यह सब सत्य है। उस समय रुपये की जरूरत चाहे जितनी हो, मैं अपने जरूरत के अनुसार ही दुकान से रुपये प्राप्त करता था। मगर रुपये कभी जमा नहीं करता था।

एक बार श्री माता जी का पत्र आ गया, उन्होंने हमें गुरू पूर्णिमा पर बुलाया था। हमारे पास रुपये बिलकुल नहीं थे, क्योंकि मैंने कभी रुपये एकत्र ही नहीं किये थे। जब जरूरत पड़ती थी तब दुकान खोल लेता था, शाम तक रुपये प्राप्त हो जाते थे। अबकी बार श्री माता जी के पास जाना था। मैंने दुकान खोली और दुकान से कहा– "देख हमें श्री माता जी के पास जाना है इतने रुपये शीघ्र चाहिए"। फिर क्या था, डेढ़

माह दुकान बन्द रहने के बाद भी ग्राहकों की लाइन लग गई, तीन दिन-तीन रात दुकान पर बराबर काम करता रहा, फिर हमारे पास उतने ही रुपये आ गये जितने रुपये हमें चाहिए थे। दूसरे दिन श्री माता जी के पास जाने के चल दिया, वहाँ पर गुरू पूर्णिमा पर्व का उत्सव मनाया जा रहा था। मैंने दुकान से कभी भी ज्यादा रुपये के लिए नहीं सोचता था, आखिरकार ऐसा मैं क्यों सोचूँ, हमारे जीवन का मुख्य लक्ष्य योग का अभ्यास करना था, मैं सदैव योग के विषय में सोचता रहता था, कि ज्यादा से ज्यादा योग का अभ्यास कर सकूँ।

प्रिय साधकों! अब मैं यह लिखता हूँ कि यह सब कैसे होता था। उत्तर– यह सब साधना के बल पर होता था, मगर ऐसे कार्यों को करने में योगबल घटता रहता है। प्रिय साधकों! मैं आपको एक राय देता हूँ कि आप ऐसा कभी मत करना। योगबल को सदैव आध्यात्मिक कार्यों में कल्याण हेतु लगाना चाहिए, योगबल का भौतिक कार्यों में कभी प्रयोग नहीं करना चाहिए। मैं प्रयोग के तौर पर यह सब किया करता था ताकि इस प्रकार के कार्यों को करने में बारीकी से जानकारियाँ प्राप्त हो सके। मैं चुपचाप बैठने वाला साधक नहीं हूँ, ऐसे कार्यों को करने के लिए योग का कठोर अभ्यास व त्याग की आवश्यकता होती है। प्रयोग के तौर पर मैंने क्या-क्या किया है उसे आप आगे पढ़ोगे। मैं उन प्रयोगों के विषय में नहीं लिख रहा हूँ, जो मैंने सिद्धियों के प्राप्त करने के लिए किया हैं।

आदिगुरु शंकराचार्य जी के दर्शन

अभी तक मैंने जो अनुभव लिखे हैं, वह सिर्फ 18-20 सितम्बर सन् 1984 से मई सन् 1989 तक के है क्योंकि इस अवधि में आये इन अनुभवों को मैंने कॉपी में नहीं लिखे थे। अब दस वर्ष बीत जाने के बाद, इन अनुभवों को लिखा है। मुझे मुख्य रूप से जो अनुभव याद आये उन्हें लिखा है, जिन अनुभवों की मुझे याद नहीं आयी उन्हें मैं नहीं लिख सकता हूँ। कुछ अनुभव मुझे और भी याद है, मगर उन्हें नहीं लिख रहा हूँ। यदि मैं सारे अनुभव लिखूँगा तब बहुत ज्यादा लिखना पड़ेगा।

अब जो आगे अनुभव लिखे गये हैं वह अनुभव ध्यान में आने के बाद तुरन्त कॉपी में लिख लिया करता था। फरवरी सन् 1994 में हमें आदिगुरू शंकराचार्य का आदेश प्राप्त हुआ था– *"अपने पिछले अनुभव याद करके लिखिए तथा योग पर भी लेख लिखिए"*। मैंने उन्हें प्रणाम किया और मैं बोला– "प्रभु,

आपकी आज्ञा का पालन करूँगा। आप हमें आशीर्वाद दें। मेरे अन्दर इतनी योग्यता आ जाये कि मैं योग पर लेख लिख सकूँ।" भगवान शंकरचार्य जी बोले– *"आपके अन्दर अवश्य प्रेरणा जागृति होगी, आप लेख लिख सकेगे, मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है। भविष्य में तुम्हारे पास योग के विषय में ढेर सारी योग्यताएँ होंगी, तुम स्वयं अपने आप में पूर्ण होगे, योग की सारी समस्याएँ हल करने में आप स्वयं सामर्थ्यवान होगे तथा महानता को प्राप्त होगे।"* मैं बोला– "प्रभु, आप से निवेदन है कि आप हमें परकाया प्रवेश सिद्धि के विषय में बताने की कृपा करें"। मेरी बात सुनकर भगवान शंकरचार्य जी क्षणभर के लिए स्तब्ध रह गये। फिर थोड़ा मुस्कराए और बोले– *"योगी! इस सिद्धि के विषय में जानकर क्या करोगे, भविष्य में तुम्हें तत्त्वज्ञान प्राप्त होगा। फिर इस सिद्धि के विषय में नहीं पूछोगे तथा तुम्हारे प्रश्न का उत्तर भी मिल जायेगा। शीघ्र ही तुम तत्त्वज्ञान को प्राप्त करोगे तथा असीमित योगबल के स्वामी भी होगे। हमारी आज्ञा को शीघ्र पालन करना शुरू कर दो।"* उन्होने आशीर्वाद मुद्रा में ऊपर की ओर हाथ उठाया और अंतर्ध्यान हो गये। फिर अक्टूबर सन् 1995 में हमारा और भगवान शंकरचार्य जी का ध्यानावस्था में वार्तालाप हुआ था। यह वार्तालाप सिद्धि के विषय में हुआ था, मगर उन्होंने आकाश गमन सिद्धि के विषय में बताने से इन्कार कर दिया। वह बोले– "यह सिद्धि मुझे मालूम नहीं है, मैं तो पानी के ऊपर चलने वाली सिद्धि के विषय में जानता हूँ"। मैं बोला– "कृपया आप इसी सिद्धि के विषय में बता दीजिए", मगर उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया वह चुप हो गये। मैंने कहा– "प्रभु! मैं अपने ज्ञान के द्वारा इस सिद्धि के विषय में जान के रहूँगा"। मगर वह कुछ नहीं बोले सिर्फ चुपचाप रहे। बाद में मुझे मालूम हो गया था कि ब्रह्म द्वारा मना किए जाने के कारण हमें सिद्धियों के विषय में कुछ भी नहीं बताया गया, मगर भविष्य में इन सिद्धियों के विषय में जानकारी हो गयी थी।

मिरज यात्रा

मई के आखिरी सप्ताह में मुझे श्री माता जी का पत्र मिला, उसमें लिखा था– आप 15 जून तक हमारे पास आ जाएँ, 18 जुलाई को गुरूपूर्णिमा का उत्सव मनाया जायेगा, तब तक आप हमारे पास रह सकते हैं। इस अवधि में आपको गुरु सेवा का अवसर मिलेगा तथा आपको अध्यात्मिक लाभ भी होगा। पत्र पढ़ कर मुझे बहुत खुशी हुई कि श्री माता जी के पास कई दिनों तक रहने का अवसर मिलेगा। इतने समय तक रहने का अवसर शायद ही किसी शिष्य को मिला होगा, मुझे अपने आप में बड़ी खुशी महसूस

हुई। मैंने निश्चय किया कि मैं अवश्य श्री माता जी के पास जाऊँगा। मैंने सोचा कुछ समय तक के लिये दुकान बन्द कर दूँगा। घर के सदस्यों ने तथा मित्रों ने हमें बहुत समझाया कि तुम्हारी दुकान की अभी-अभी शुरुआत हुई है तथा काम भी अच्छा चल रहा है। इतने पहले से मिरज के लिए मत जाओ, गुरू पूर्णिमा पर चले जाना। मगर इन सभी को क्या मालूम कि मुझे कौन-सा लाभ मिलने ने वाला है। श्री माता जी के पास पत्र लिखकर भेज दिया कि मैं आपके पास 15 जून को आ रहा हूँ।

मैं घर से 13 जून को मिरज के लिए चल दिया। 15 जून को सुबह मिरज पहुँच गया। वहाँ पहुँच कर मालूम हुआ कि श्री माता जी बीमार हैं, उस समय श्री माता जी बीमारी के कारण किसी भी साधक को अपने चरण स्पर्श नहीं करने देती थी। मैंने श्री माता जी के दर्शन किये, फिर उन्होंने हमें अपने पास बुलाने का कारण बताया। श्री माता जी बोली– आनन्द कुमार! मैंने आपको यहाँ पर इसलिए बुलाया है कि आप हमारे पास रह सकते हैं। आपको खाना बनाना भी आता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि आप यहाँ पर खाना बनाएँ। आप इस कार्य में भी निपुण है इसलिये मैंने आपको ऐसा कहा था तथा यहाँ रहकर आपको साधना करने का ज्यादा समय भी मिलेगा। आप वैसे भी ज्यादा से ज्यादा साधना करना चाहते हैं, मन से विरक्त भी हो चुके हैं। आप यहाँ पर पुरूषार्थ के लिए नौकरी कर लीजिए, आपके लिए नौकरी ढूँढ दी जायेगी। ऐसे शब्द सुनकर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ कि श्री माता जी के घर में रहूँ, उनकी सेवा करूँ, कुछ समय के लिए नौकरी भी कर लूँ, तथा साधना करने का अवसर भी मिलेगा। हमने पहले तो ऐसा नहीं सोचा था, इसलिए यह सब सुनकर बड़ा आश्चर्य सा लगा। मैं कुछ नहीं बोला, क्योंकि मैं निर्णय नहीं कर पाया था कि क्या करूँ। मैंने श्री माता जी से कहा– "माता जी! हमारे घर से 4-5 कि०मी० दूर कस्बे में हमारी दुकान भी है। मैं कुछ दिनों के लिये दुकान बन्द करके आपके पास आ गया हूँ, मुझे घर वापस जाना जरूरी है। श्री माता जी बोली– "आप कुछ दिनों बाद घर चले जाना, दुकान का सामान घर में रख कर वापस आ जाना"। मैं श्री माता जी के सामने कुछ कह नहीं सकता था, इसलिए हाँ कह दिया क्योंकि हमारे अन्दर मना कर देने की सामर्थ्य नहीं थी।

श्री माता जी ने सभी साधकों को बता दिया था कि आनन्द कुमार हमारे पास रहेगा। मगर हमारे मन के अन्दर श्री माता जी के यहाँ रहने की बिल्कुल इच्छा नहीं थी, मगर यह बात मैं कह नहीं पाता था। एक दिन श्री माता जी ने कुलकर्णी जी से कहा– "आप आनन्द कुमार की नौकरी लगवा दीजिए"। कुलकर्णी जी इस कार्य को करने लिये तैयार हो गये। फिर मैं कुलकर्णी जी के साथ मिरज शहर में दिन भर नौकरी ढूँढता रहा, मगर नौकरी नहीं मिली। नौकरी न मिलने का एक कारण यह भी था, इलेक्ट्रॉनिक्स के

जिस तरह के कार्य में मुझे महारत प्राप्त है उस तरह का कार्य मिरज शहर नहीं होता था। श्री माता जी के घर की तरफ वापस लौटते समय मैंने अपनी बात कुलकर्णी जी को बताई, कि मेरी इच्छा श्री माता जी के पास रहने की नहीं है यह बात श्री माता जी से प्रत्यक्ष कह नहीं पाता हूँ। कुलकर्णी जी ने मुझे समझाया– "आप यहीं रुक जाइए, श्री माता जी सभी से अपने पास रुकने के लिये नहीं कहती है, आपका सौभाग्य है कि आपसे कहा गया है"। उत्तर में मैं कुछ नहीं बोला। दूसरे दिन एक-दो जगह नौकरी करने के लिए बात हो गयी थी, मगर कुछ कारणों से वहाँ पर मैं नहीं गया। श्री माता जी हमारे रूख को जान गई थीं, शायद कुलकर्णी जी ने श्री माता जी को बता दिया होगा, क्योंकि श्री माता जी थोड़ी उखड़ी-उखड़ी सी रहने लगी थीं। कुछ दिनों बाद मुझे किसी ने जानकारी दी थी, श्री माता जी ने पूना के श्री अनिल टाक जी से अपने पास रहने के लिए कहा था, मगर अनिल जी ने श्री माता जी के पास इस तरह ठहरने के लिए मना कर दिया था।

जब मैं श्री माता जी के पास मिरज पहुँचा था तब उसके तीन-चार दिन बाद जलगाँव की दो साधिकाएँ भी आ गई थीं। वह श्री माता जी की बड़ी सेवा किया करतीं थी, बाद में हमारी और उन दोनों साधिकाओं की घनिष्ठता हो गई थी। हम सब एक साथ मिलकर ध्यान करने के लिय बैठते थे और एक साथ मिलकर काम भी निपटा लिया करते थे, सभी की साधना बहुत तीव्र हो गई थी। उस समय हमें बहुत अनुभव आने लगे थे, सभी साधक कहते थे आप अपने अनुभवों को क्यों नहीं लिखा करते हैं, आपको अनुभव अच्छे-अच्छे आते हैं इसलिये अपने अनुभवों को लिख लिया करो। श्री माता जी ने भी हमसे कहा– "आप अपने अनुभव लिख लिया करें"। एक बार अण्णाजी कहा था– "आनन्द कुमार आप बाजार से एक कॉपी खरीद लीजिये, अपने अनुभव लिखना शुरू कर दीजिए, आपको अनुभव बहुत अच्छे आते हैं, हो सकता है भविष्य में आपके अनुभवों का लाभ अन्य साधकों को भी प्राप्त हो। यही बात बहुत पहले मैंने श्री माता जी को भी कही थी, उन्होंने भी अनुभव लिखना शुरू कर दिया था। आज उन अनुभवों का लाभ आप सभी साधकों को मिल रहा है।" मैंने अण्णाजी की बात मान ली और अनुभव लिखना शुरू कर दिया।

मैंने पहले लिख चुका हूँ श्री माता जी का स्वास्थ्य खराब चल रहा था। वह किसी से चरण स्पर्श नहीं कराती थीं। मगर एक दिन सुवह चार बजे ध्यान पर बैठते समय श्री माता जी ने अपने दाहिने पैर के अँगूठे से हमारे आज्ञाचक्र पर शक्तिपात किया था। तब से हमारा ध्यान और अच्छा लगने लगा था, मुझे अपने घर की अपेक्षा श्री माता जी के यहाँ पर ध्यान बहुत अच्छा लगता था, क्योंकि यहाँ पर पूरी तरह से

आध्यात्मिक वातावरण था तथा श्री माता जी सदैव प्रत्यक्ष उपस्थित रहती थीं। श्री माता जी हमसे पूजा भी (स्वामी शिवानन्द जी की) करवाती थी, उनके ध्यान कक्ष में एक छोटा-सा मन्दिर है उसमें स्वामी शिवानन्द जी (श्री माता जी के गुरू) की मूर्ति स्थापित है। हम सभी साधक मिलकर एक साथ स्तुति, हनुमान चालीसा तथा मंत्र आदि का पाठ किया करते थे, चौबीसों घन्टे आध्यात्मिक वातावरण बना रहता था।

कुण्डलिनी शक्ति का दर्शन

अब हमारा ध्यान बहुत गहरा लगने लगा था। मूलाधार में अक्सर दर्द हुआ करता था, इसके साथ मूलाधार में सदैव खिंचाव हुआ करता था। एक दिन ध्यानवस्था में मैं आगे की ओर झुकता चला गया, सिर फर्स पर स्पर्श करने लगा था। फिर श्वांसे भी तेज चलने लगी, ये श्वासें मूलाधार में जोर जोर से टकरा रहीं थीं, इससे मूलाधार चक्र में दर्द बढ़ गया था कुछ क्षणों के लिए मैं गहराई में चला गया। तभी मुझे अनुभव आया– हमारे सामने भगवान विष्णु खड़े हुए मुस्करा रहे हैं, उनके चार भुजाएँ है वह पीताम्बर धारण किये हैं, गले में बहुत सुन्दर बड़ी सी माला पहने हुए हैं। चारों भुजाओं में शंख चक्र गदा व पद्म धारण किये हुए हैं। मैं बहुत प्रसन्न हो रहा था, वह अन्तरिक्ष में खड़े हुए थे तथा प्रकाश का वलय चारों और घूम रहा था। कुछ क्षणों तक मैं भगवान विष्णु को देखता रहा, भगवान विष्णु का शरीर पारदर्शी सा हो गया। हमें उनके शरीर में मूलाधार चक्र दिखाई देने लगा।, फिर मूलाधार चक्र से एक बहुत तेज प्रकाशित पतली सी लाइन ऊपर की ओर जाने लगी, वह प्रकाशित लाइन गले तक जाकर रूक गई। फिर कुछ क्षणों बाद वह लाइन अदृश्य हो गई। फिर मूलाधार चक्र से अत्यन्त चमकीली प्रकाश लाइन ऊपर की ओर घुमावदार चढ़ती हुई तीव्र गति से जाने लगी। गले तक जाकर अदृश्य हो गई, यही क्रिया बार-बार हो रही थी। मूलाधार चक्र से कण्ठचक्र तक वह प्रकाशित लाइन घुमावदार चढ़ती थी फिर अदृश्य हो जाती थी। उस समय हमें भगवान विष्णु का शरीर बिलकुल पारदर्शी दिखाई दे रहा था, कुछ क्षणों तक मैं यह क्रिया देखता रहा, फिर भगवान विष्णु अंतर्ध्यान हो गये। हमारा ध्यान टूट गया।

मैं अपने अनुभव का अर्थ जानता था, फिर भी श्री माता जी के द्वारा मैं इस अनुभव का अर्थ सुनना चाहता था। मैंने अपना अनुभव श्री माता जी को बताया और इसका अर्थ पूछा– श्री माता जी बोली आपको कुण्डलिनी का दर्शन हुआ है। यह प्रकाशित लाइन मुझे अब भी याद है।

शिवलिंगों के दर्शन

एक बार ध्यान करते समय मैंने देखा कि हमारे भृकुटी पर शिवलिंग विद्यमान है। मैं कुछ क्षणों तक उसे देखता रहा, फिर वह अदृश्य हो गया। कुछ समय बाद मुझे फिर दिखाई दिया– ऊँची-ऊँची बर्फीली चोटियाँ हैं, ये चोटियाँ स्वप्रकाशित हैं, उन चोटियों के बीच एक समतल जगह है, उस समतल जगह पर शिवलिंग बना हुआ है कुछ क्षणों तक मैं शिवलिंग को देखता रहा, फिर ध्यान की गहराई में डूब गया।

कुछ समय बाद मैंने ध्यानावस्था में देखा– मैं बर्फीले क्षेत्र की ओर आगे बढ़ता चला जा रहा था, चारों ओर बर्फ ही बर्फ फैली हुई थी। मेरी जहाँ तक दृष्टि जाती थी बर्फ ही दिखाई दे रही थी, कुछ समय तक चलने के बाद में एक जगह रुक गया, तब मुझे सामने की ओर एक गुफानुमा जगह बनी हुई दिखाई दी। उस गुफानुमा जगह में विशाल आकार का शिवलिंग स्थित था। शिवलिंग बहुत ही सुन्दर था। मैंने सोचा– इस बर्फीले सुनसान जगह में यह शिवलिंग कितना सुन्दर दिखाई दे रहा है। कुछ क्षणों में हमारा अनुभव समाप्त हो गया।

साधकों! बाद में मुझे मालूम हुआ कि यह अमरनाथ का शिवलिंग था। मैंने सोचा चलो अमरनाथ तो मैं जा नहीं सकता था मगर ध्यान में अमरनाथ का दर्शन हो गया।

कुछ समय के बाद देखा– सोने का बहुत सुन्दर दरवाजा है। जैसे ही मैं दरवाजे के सामने पहुँचा वह अपने आप खुल गया। मैं दरवाजे के अन्दर प्रवेश कर गया, फिर आगे की ओर एक और दरवाजा दिखाई दिया, जब मैं उस दरवाजे के पास पहुँचा तब वह भी खुल गया। इसी प्रकार मैं आगे की ओर चलता गया, मुझे दरवाजे मिलते गये, जैसे ही मैं दरवाजे के पास पहुँचता था तब वह दरवाजा अपने आप खुल जाता था। इसी प्रकार छः दरवाजे मिले, वह अपने आप खुल गये थे। फिर आगे की ओर एक बहुत सुन्दर शिवलिंग दिखाई दिया, शिवलिंग के चारों ओर प्रकाश फैला हुआ था। हमारी दृष्टि शिवलिंग पर कुछ समय तक स्थिर बनी रही, फिर शिवलिंग अदृश्य हो गया। तब मैंने अपने आपको अंतिरिक्ष में खड़ा हुआ पाया।

अर्थ- अनुभव में जो ये दरवाजे अपने आप खुलते जा रहे थे, और मैं दरवाजों के अन्दर प्रवेश करता जा रहा था, यह हमारे ही सूक्ष्म शरीर के अन्दर स्थित चक्र थे जो इस प्रकार से दिखाई दे रहे थे। इसका अर्थ यह हुआ– मेरी साधना शीघ्र ही छटवें चक्र पर पहुँच जायगी, यह अनुभव छटवें चक्र का है।

दूरदर्शन-दूरश्रवण सिद्धि

आजकल हमारा अभ्यास अत्यन्त उग्र सा हो गया था, मुझे ध्यान का नशा सा चढ़ा रहता था। ऐसा लगता था कि सदैव ध्यान ही करता रहूँ। अभ्यास इतना उग्र हो गया कि जब मैं सो जाता था, तब मैं अपने आप सोते समय ध्यान पर बैठ जाता था। हमारा जब ध्यान टूटता था, तब मालूम होता था कि मैं ध्यान पर बैठा हूँ। ध्यान पर बैठते समय मालूम नहीं होता था कि मैं ध्यान पर कब बैठ गया हूँ, मुझे अपनी इस क्रिया पर आश्चर्य होता था। ध्यान पर एक या डेढ़ घन्टे अवश्य बैठा रहता था, यह क्रिया रात्रि के एक बजे से तीन बजे के बीच होती थी। हमें दिन में नींद बिलकुल नहीं आती थी, क्योंकि रात्रि में मैं कितना सोता था यह मुझे मालूम नहीं था। वैसे मैं रात्रि के 12 बजे सोता था, सुबह 4 बजे जाग जाता था।

जब साधक निद्रावस्था में बैठकर ध्यान करने लगे और साधक को मालूम न हो पाए, कि वह कब ध्यान करने के लिये बैठा था, तब समझ लेना चाहिए कि साधक की साधना बहुत ही तीव्र गति से आगे की ओर बढ़ रही है। ऐसा अत्यधिक अभ्यास करने के कारण होता है। स्थूल शरीर सोता रहता है सूक्ष्म शरीर ध्यान पर बैठने के लिए स्थूल शरीर को मजबूर कर देता है, सूक्ष्म शरीर के अन्दर ध्यान की क्रिया चलती रहती है। इतनी कठोर साधना करने वाले साधक हजारों में एक ही होता हैं अथवा विरला ही होता हैं।

हमारे साथ एक आश्चर्य जनक क्रिया होने लगी थी। यह क्रिया जागृति अवस्था में हुआ करती थी, मैं कहीं भी बैठा हूँ चाहे भीड़-भाड़ की जगह में बैठा हूँ, हमारी आँखें कभी भी अपने आप बन्द हो जाती थी। मैं क्षण भर के लिए अपने आप को भूल जाता था। उसी समय किसी भी जगह का दृश्य दिखाई देने लगता था और वहीं की आवाज भी सुनाई देती थी, फिर हमारी आँखें खुल जाती थी। यह क्रिया क्षणिक देर के लिये होती थी, मैं सोचता था– यह कैसी क्रिया है कि हमारी आँखें अपने आप बन्द हो जाती है। फिर किसी जगह का कुछ न कुछ दृश्य दिखाई देता है और वहीं की आवाज भी सुनाई देती है कभी-कभी ऐसा भी होता था कि मैं साधकों के बीच में बैठा होता था और हमारी आँखें अपने आप बन्द हो जाती थी। फिर किसी जगह का दृश्य दिखाई देने लगता था और वहीं की आवाज भी सुनाई देती थी। यह क्रिया कभी-कभी मात्र 10 सेकण्ड को भी होती थी। कभी-कभी 2-3 मिनट तक की हो जाती थी।

एक बार मैं श्री माता जी के सामने बैठा हुआ था। अण्णाजी पाठ कर रहे थे, मैं और श्री माता जी उस पाठ को सुन रहे थे। उसी समय हमारी आँखें बन्द हो गई, हमारा मुँह भी खुल गया था, कुछ क्षणों बाद

मेरी आँखें खुल गई। श्री माता जी मुझे देख रही थीं, क्योंकि वह हमारे सामने बैठी हुई थीं। फिर कुछ क्षणों में मेरी आँखें बन्द ही गई और लगभग आधा मिनट बाद खुल गयी। मैं चौंक पड़ा, क्यों कि श्री माता जी की दृष्टि हमारे चेहरे पर टिकी हुई थी। जैसे ही मैं चौंका तभी श्री माता जी ने मुस्करा दिया। मुझे ऐसे लगा जैसे मेरी चोरी पकड़ी गयी हो, मगर मैं क्या कर सकता था, मैं सो नहीं रहा था। आलस्य भी बिलकुल नहीं था, हमें यह महसूस होता था– आँखें बन्द होने पर हमारी गर्दन थोड़ी सी एक तरफ को झुक जाती है। ज्यादातर दाहिनी ओर को गर्दन झुका करती थी, दूसरा व्यक्ति यहीं समझेगा कि आलस्य के कारण मैं सो जाता हूँ। मगर मैं इस क्रिया को रोक नहीं सकता था, क्योंकि हमें खुद भी मालूम नहीं पड़ता था कि यह क्रिया होने वाली है। जब यह क्रिया हो जाती थी तब जान पाता था। जो इस क्रिया के समय दृश्य आते थे वह बहुत ही अच्छे होते थे। आवाज इतनी जोर से सुनाई देती थी, ऐसा लगता था कान फटे जा रहे हो।

अण्णाजी ने जब पाठ पूरा कर लिया, तब श्री माता जी ने बताया– "आनन्द कुमार! तुम्हें जो क्रिया होती है, इसे दूरदर्शन-दूरश्रवण सिद्धि कहते हैं। सिद्धि के प्रभाव से आँखें अपने-आप बन्द हो जाती हैं। उस समय किसी भी जगह का दृश्य, मित्र, सगे सम्बन्धी आदि दिखाई देते हैं तथा उनकी आवाजें भी सुनाई देती है। यह क्रिया अत्यन्त तीव्र गति से होती है, इस सिद्धि में साधक को बहुत अच्छा लगता है। किसी भी जगह की जानकारी पलक झपकते ही की जा सकती है। अण्णाजी जब पाठ कर रहे थे, उस समय आपको यह सिद्धि कार्य कर रही थी, मैं तुरन्त जान गयी थी।" मैंने श्री माता जी से पूछा– "श्री माता जी, मैं यह नहीं जानता था कि यह सिद्धि है, आपसे इस विषय में पूछने की हिम्मत नहीं हुई। मैं सोचता था मुझे ऐसी क्रिया क्यों होती है, मैं सोता भी नहीं हूँ फिर भी आँखें बन्द हो जाती है। हमें दृश्य दिखाई भी देता है तथा वहाँ की आवाज भी सुनाई देती है। जिस समय अण्णजी पाठकर रहे थे, उस समय मुझे पूना रेलवे स्टेशन का दृश्य दिखाई दे रहा था। अमुक ट्रेन जाने वाली थी, यात्री ट्रेन पर चढ़ रहे थे तथा लाउडस्पीकर से उस ट्रेन के विषय में घोषणा की जा रही थी।" श्री माता जी बोलीं– "जो आपने देखा है वह सत्य होगा, मगर इस सिद्धि का कभी दुरूपयोग नहीं करना चाहिए"। श्री माता जी सिद्ध के विषय में बताकर अन्दर रसोई में चली गयीं। अब हमारे अन्दर बहुत खुशी हुई कि मुझे यह सिद्धि प्राप्त हुई है। मैंने वहाँ पर उपस्थित कुछ साधकों को बताया कि मुझे दूर-दर्शन और दूर-श्रवन सिद्धि प्राप्त हुई है।

सिद्धि प्राप्ति की खुशी मुझे बहुत हुई, मैंने सोचा– अब मुझे अपने अभ्यास और कठोरता से करना चाहिए, मगर साधना बढ़ाने का समय हमारे पास नहीं था, वर्तमान समय में मैं बहुत साधना करता था। श्री माता जी के पास कुछ साधक आये हुए थे, हमारा परिचय उन साधकों से हो गया था, मुझे उन साधकों से

भी बातें करनी पड़ती थी, थोड़ा सा घरेलू काम भी कभी-कभी करना पड़ता था। हमारे अन्दर विचार आया, कि यह सिद्धि स्वयं काम करती रहती है तथा जानकारियाँ प्राप्त कराती रहती हैं। क्या मैं अपनी इच्छानुसार इस सिद्धि से काम ले सकता हूँ। मैंने सोचा– यदि श्री माताजी से इस सिद्धि के विषय में पूछूँगा, कि इस सिद्धि से कैसे कार्य लेते हैं तो क्या वह बताएँगी? हो सकता है श्री माता जी नाराज हो जाएँगी। इसलिए मैंने निर्णय किया– मैं स्वयं इस सिद्धि के विषय में जानकारी करूँगा कि यह सिद्धि कैसे कार्य करती है। जैसे ही मैंने सिद्धि का स्मरण किया और फिर संकल्प करके ओंकार किया उसी समय सिद्धि ने तुरन्त कार्य करना शुरु कर दिया। मैंने अपने एक रिश्तेदार के यहाँ का संकल्प किया था, क्षण भर में उस रिस्तेदार की सारी जानकारी मिल गयी। अब मैं बहुत प्रसन्न हुआ कि किसी का कुछ भी जाना जा सकता है।

मैंने इस सिद्धि के विषय में कुछ साधकों को बताया तो साधक भी प्रसन्न हो गये तथा सिद्धि के विषय में और भी बारीकी से पूछने लगे। मैंने बताया– मैं क्षण भर में किसी की भी जानकारी कर सकता हूँ, उसी समय मैंने साधक मित्रों को कुछ और जानकारियाँ दीं, फिर बाद में हमें बताया गया कि वह जानकारियाँ सत्य है। जब मेरी इच्छा होती थी तब मैं मिरज में बैठा हुआ अपने घर (कानपुर उ.प्र.) की सारी जानकारियाँ कर लेता था। इच्छा करते ही हमें टी०वी० की तरह दृश्य दिखाई देने लगते थे, मगर कुछ दिनों से ये सिद्धि बहुत कार्य करने लगी थी। अब मैं सोचने लगा– यह सिद्धि कम कार्य करे तो अच्छा है क्योंकि इसके कारण साधना में अवरोध आने लगा था। मैंने सारी बातें सिद्धि के विषय में श्री माता जी को बतायी तब श्री माता जी बोलीं– "आप संकल्प करके इस सिद्धि को बन्द कर दिजिए तथा मैं भी संकल्प करूँगी कि यह सिद्धि कार्य न करें। वरना आपके ध्यान में अवरोध आयेगा तथा आप इस सिद्धि से कार्य बिलकुल न लीजिये, फिर कुछ दिनों बाद धीरे-धीरे यह धीमी पड़ जायेगी। आपको सिद्धि अभी नयी-नयी प्राप्त हुई है इसलिए अति तीव्र गति से कार्य कर रही है"।

प्रिय साधकों, यह सिद्धि कुछ दिनों बाद अपने आप धीमी पड़ने लगी थी, मगर सिद्धि ने पूर्ण रुप से कार्य करना बन्द नहीं किया। इस सिद्धि से किसी की भी अत्यन्त गुप्त बात जान सकते है, जो उस समय वर्तमान में हो रहा हो। आप इस सिद्धि के चक्कर में मत पड़ना क्यों यह अभ्यास के लिए अवरोध है। मैंने ढेरों जानकारियाँ इस सिद्धि द्वारा प्राप्त कीं है, उसका विवरण देना उचित नहीं है, यदि सिद्धि से कार्य न लिया जाय तो निश्क्रिय-सी हो जाती है। यदि साधक सिद्धि से किसी भी प्रकार का कार्य लेगा, तब सिद्धि आति तीव्र गति से कार्य करेगी।

कण्ठचक्र थोड़ा-सा खुला

आप सोच रहे होगें कि कण्ठचक्र थोड़ा-सा क्यों खुला है, पूरा क्यों नहीं खुला है, यह कैसा चक्र है? साधकों! सभी चक्रों में सबसे जटिल चक्र कण्ठचक्र ही है, यह चक्र सरलता से नहीं खुलता है, इस चक्र को खुलने में बहुत समय लग जाता है। साधक को कई वर्षों तक अत्यन्त कठोर साधना करनी पड़ती है, कभी-कभी किसी साधक का पूरा जन्म इसी चक्र पर साधना करते हुए बीत जाता है मगर कण्ठचक्र नहीं खुलता है। जिन साधकों ने पिछले जन्मों में साधना की होती है अथवा पिछले जन्म के योगी होते हैं, फिर भी वर्तमान जन्म में कई वर्षों तक उग्र साधना करनी पड़ती है। तब उनका कण्ठचक्र खुल पाता है। कण्ठचक्र की संरचना ही ऐसी है कि साधक कठोर साधना करने के बाद भी शीघ्र नहीं खोल पाते हैं। कण्ठचक्र में सोलह दल का कमल होता है, इस कमल दलों पर ज्यादातर देवियों का स्थान है, जीव और अविद्या का भी यहीं पर स्थान है। कण्ठचक्र से निचले भाग में जो चार चक्र स्थित है वह शीघ्र ही खुल जाते हैं, तथा प्राण रीढ़ के सहारे ऊर्ध्व होता चला जाता है, मगर कण्ठचक्र से प्राण ऊपर नहीं जा पाता है, ऊपर के मार्ग में एक ग्रंथि अवरोध डाले रहती है, यह ग्रंथि नाड़ियों का एक गुच्छा है। प्राण जब ऊपर जाने प्रयास करता है तब प्राणों का अधिक दबाव होने के कारण गर्दन पीछे की ओर मुड़ जाती है इससे साधक को बड़ी परेशानी होती है। क्योंकि साधक का शरीर पीछे की ओर झुक जाता है और इसी अवस्था में ध्यान करना पड़ता है।

मुझे साधना करते हुए लगभग पौने पाँच वर्ष हो गये है, अब इस ग्रंथि पर थोड़ा सा अभ्यास का असर हुआ है जबकि मैं प्राणायाम, व्यायाम आदि भी भरपूर करता हूँ। साधना मैं कितनी कठोर करता हूँ, यह आप पढ़कर समझ गये होगें तथा मैं पिछले जन्मों में योगी भी रह चुका हूँ। अब थोड़ी सी सफलता मिली है अर्थात कण्ठचक्र थोड़ा सा खुल गया है, इस खुले हुए भाग से हमारी थोड़ी सी प्राणवायु आज्ञा चक्र पर आ जाती है इस कारण मस्तक (भृकुटि) पर थोड़ी गुदगुदी भी हुआ करती है, कभी-कभी चीटियों-सी काटने लगती है। इसलिए अब आज्ञा चक्र के भी अनुभव आ जाया करते हैं इस अवस्था में प्राण ज्यादातर कण्ठचक्र पर ही रूकता है आज्ञाचक्र (मस्तक) वाला प्राण भी कुछ समय बाद वापस कण्ठचक्र में आ जाता है, प्राणों का आज्ञा चक्र तक पहुँचने को गति कहते है, मगर प्राणों की स्थिति कण्ठचक्र पर ही रहती है। आज्ञाचक्र पर प्राण पहुँचने के कारण ही ढेर सारे शिवलिंग दिखाई पड़ते हैं क्योंकि आज्ञाचक्र पर भगवान शिव का स्थान है। ध्यान पर बैठते ही हमें मालूम पड़ जाता है कि हमारे

प्राणों का थोड़ा हिस्सा आज्ञा चक्र पर आ गया है, जब थोड़े समय बाद प्राण वायु वापस कण्ठचक्र में आता है तब भी मालूम पड़ जाता है।

एक बार ध्यान पर बैठा हुआ था तभी ध्यानावस्था में देखा– मैं ध्यानपर बैठा हुआ हूँ अन्तरिक्ष से बहुत तेज प्रकाश हमारे सिर के ऊपर पड़ रहा है, यह प्रकाश टार्च के प्रकाश की भाँति था मैं दूर खड़ा हुआ अपना शरीर देख रहा था जिसके सिर पर तेज प्रकाश पड़ रहा था। फिर मैंने अन्तरिक्ष की ओर दृष्टि की, तब दिखाई दिया– प्रकाश बहुत ऊपर की ओर से आ रहा था। प्रकाश का श्रोत दिखाई नहीं दे रहा था।

सुबह के समय मैं ध्यान कर रहा था, ध्यान बहुत ही अच्छा लगा काफी समय तक मैं ध्यान की गहराई में बना रहा। फिर हमें अनुभव आया– घोर अंधकार है उस अंधकार में ऊपर की ओर दो अंगुलियाँ उठी हुई हैं। फिर हाथ भी स्पष्ट दिखाई देने लगा, मैं यह नहीं समझ पाया कि ये हाथ और ऊँगलियाँ किसकी हैं। इसका अर्थ– आत्मा और परमात्मा से सम्बन्धित हैं।

एक दिन सायंकाल के समय मैं श्री माता जी के सामने बैठा हुआ ध्यान कर रहा था, हमारे साथ कुछ और सत्संगी भाई व बहनें ध्यान कर रही थी। ध्यानावस्था में मैंने देखा– मैं बहुत नीचे की ओर देख रहा हूँ, कुछ क्षणों में हमें एक शिवलिंग दिखाई दिया, शिवलिंग बहुत ही सुन्दर था। फिर शिवलिंग में सुर्ख लाल रंग का तपे हुए सोने की तरह कुछ लिपटा सा दिखाई देने लगा, ऐसा लग रहा था– शिवलिंग पर रस्सी की तरह कुछ लिपटा हुआ है, फिर धीरी धीरे दृश्य धुँधला सा पड़ने लगा और अदृश्य हो गया।

अर्थ- यह दृश्य मूलाधार चक्र का है, मूलाधार चक्र में जो त्रिकोण है उसी त्रिकोण के मध्य में शिवलिंग पर रस्सी की भाँति लिपटी हुई कुण्डलिनी दिखाई दे रही थी।

दिव्य दृष्टि खुलने में अभी समय लगेगा

यह अनुभव हमें स्वप्नावस्था में आया मैंने देखा– कविता बहन हमारे पास आयी हुई है, मैं उस समय किसी स्थान पर बैठा हुआ था। कविता बहन हमारे सामने हमसे थोड़ी दूरी पर आकर बैठ गई। उनके हाथ में गुलाब के फूल की एक पंखुड़ी थी। मैंने उस पंखुड़ी को देख रहा था, इतने में कविता बहन बोली–

“आनन्द कुमार मेरी ओर देखो”। मैं कविता बहन की ओर देखने लगा, उन्होंने फिर उस गुलाब के फूल की पंखुड़ी को अपनी भृकुटि पर लगाया। फिर हिन्दी में बोला– “आनन्द कुमार आपको यहाँ पर कुछ दिखाई दे रहा है”। उनका इशारा भृकुटि की ओर था, मैं उनकी भृकुटी को गौरपूर्वक देखने लगा, मगर मुझे उनकी भृकुटि पर कुछ नहीं दिखाई दिया। मैं कविता बहन की भृकुटि को देख रहा था। तभी हमारा अनुभव समाप्त हो गया।

जिस समय यह अनुभव आया था उस समय कविता बहन श्री माता जी के घर पर आयी हुई थी। मैंने सोचा– मैं स्वयं कविता बहन को यह अनुभव बताऊँगा और उन्हीं से इस अनुभव का अर्थ पूछूँगा। दोपहर के समय जब हम सब साधक भाई-बहन बैठे हुए थे, उस समय अनिल भैया को माध्यम बनाकर कविता बहन से इस अनुभव का अर्थ पूछा। पहले तो उन्होंने आनाकानी की फिर ज्यादा कहने पर इस अनुभव का अर्थ बताया। उन्होंने कहा– “आनन्द कुमार आपकी दिव्य दृष्टि के लिए अभी समय लगेगा अर्थात आपकी दिव्यदृष्टि अभी नहीं खुलेगी"।

कविता बहन मिरज के पास मालगाँव की रहने वाली है, इनकी साधना बहुत आगे चल रही है यह अनुभवों का अर्थ निकाल लेने की योग्यता रखती है, इसलिए मैंने इनसे अनुभव का पूछा था, उस समय इन्हें हिन्दी नहीं आती थी इसलिए अनिल भैया को माध्यम बनाया था, भविष्य में मैंने इनसे थोड़ा सा मार्ग दर्शन भी लिया था, मैं मन के अन्दर इनकी बहुत इज्जत करता हूँ।

दो ज्योतियों के दर्शन

आज 1 जुलाई सन् 1989 को सायंकाल ध्यान करने के लिये बैठा हुआ था। लगभग सवा घण्टे का ध्यान लगा था तथा ध्यानावस्था में अनुभव आया– चारों ओर अंधकार छाया हुआ है, अंधकार में एक ही बार में दो ज्योति दिखाई देने लगीं, दोनों ज्योति थोड़ी-थोड़ी दूरी पर स्थित थीं। दोनों ज्योति के आसपास छोटी सी आभा थी। मुझे कई बार अनुभव में एक ही ज्योति दिखाई देती थी, अबकी बार दो ज्योति दिखाई थी। कुछ समय तक मैं दोनों ज्योतियों को देखता रहा फिर ये दोनों अदृश्य हो गई, अनुभव भी समाप्त हो गया। मैंने श्री माता जी से इस अनुभव का अर्थ पूछा– तब श्री माता जी ने बताया "एक ज्योति जीव दूसरी ज्योति शिव का प्रतीक है"। मैं समझ गया– शायद इन दोनों ज्योतियों का इसलिए

दर्शन हुआ है क्योंकि हमारी साधना कण्ठचक्र पर चल रही है तथा कभी-कभी प्राण वायु आज्ञा चक्र पर भी पहुँच जाता है। कण्ठचक्र पर जीव का स्थान है,आज्ञा चक्र भगवान शिव का स्थान है इसलिए दोनों का अनुभव एक साथ आया है। हमने लिखा है– पहले मुझे एक ज्योति दिखाई देती थी वह शायद जीव के लिए भासित कराती है क्योंकि मैं पहले कण्ठचक्र पर था अब आज्ञाचक्र में थोड़ा सा प्राण जाता था। यह अनुभव कई बार आया है।

इस अनुभव का अर्थ श्री माता जी ने बताया था– 'एक जीव का, दूसरा शिव का प्रतीक है'। मैं यह बता दूँ यह ज्योति चित्त की ही वृत्तियाँ हैं अर्थात वृत्तियाँ ही ज्योति का स्वरूप धारण कर लेतीं हैं, मगर जीव और शिव का प्रतीक है ऐसा दर्शा रही हैं। वास्तव में जीव और शिव नहीं है।

उष्णता

अब हमारे शरीर में बहुत उष्णता महसूस होने लगी थी, नाभि के आसपास तो कुछ ज्यादा ही उष्णता महसूस होती थी, कभी-कभी यह उष्णता हृदय की ओर बढ़ जाती थी, ध्यानावस्था के समय यह उष्णता और भी उग्र रूप धारण कर लेती थी। मूलाधार चक्र में उष्णता सदैव बनी रहती थी। साधारण अवस्था में भी श्वांस मूलाधार चक्र में टकराया करती थी। ध्यानावस्था में श्वांस के कारण मूलाधार चक्र दुःखता रहता था, कभी-कभी ध्यान के बाद भी मूलाधार चक्र दुःखता था। एक दिन श्री माता जी से मैंने पूछा– श्री माता जी हमारे शरीर के अन्दर बहुत गर्मी बढ़ गयी है तथा मूलाधार चक्र बहुत दुखता रहता है, श्री माता जी ने कोई उत्तर नहीं दिया और न ही हमारी बात पर ज्यादा गौर किया। हमें उस समय काफी परेशानी हो रही थी, मूलाधार चक्र के दर्द के कारण सारा ध्यान यहीं पर एकाग्र हो रहता था। फिर कुछ दिनों बाद हमारी यह क्रिया होनी बन्द हो गई, इस प्रकार की क्रिया पहले भी हो चुकी थी फिर यह क्रिया अपने आप बन्द हो गई थी।

साधकों! उस समय मैं इस क्रिया का अर्थ नहीं समझता था, मगर अब मैं इस क्रिया का अर्थ अच्छी तरह समझता हूँ। यह अवस्था कुण्डलिनी जागृति कर देने की होती है, मगर श्री माता जी ने हमें इसका अर्थ क्यों नहीं बताया, यह मैं नहीं जानता हूँ। श्री माता जी उस समय हमसे थोड़ी उखड़ी-उखड़ी सी रहती थीं। इसका कारण यह था– मैं मिरज हमेशा के लिए रुकने वाला नहीं था और नौकरी भी नहीं की

थी, जिस लिए हमें यहाँ बुलाया गया था। एक और बात थी– मैं सभी साधकों की भाँति श्री माता जी की स्तुति वाले शब्दों प्रयोग नहीं करता था, इसलिए मुझे रूखा कहा जाता था। हमसे कई बार कहा गया– आप रूखे बहुत हैं इसलिए आपकी साधना में प्रगति नहीं है, यदि आप में भक्ति भाव होता तब आपकी साधना बहुत आगे हो जाती। मैं अपने आप में दुःखी सा रहता था।, हमारे अन्दर से सदैव ऐसे शब्द नहीं निकलते थे जो शब्द भक्तिभाव वाले होते है। हमारे सामने श्री माता जी ने कई बार नए साधकों से कहा– "आपका भाव गुरू के प्रति बहुत अच्छा है, आप सरल हैं, आपकी कुण्डलिनी बड़े आराम से उठ सकती है"। मैं सोचने लगता था– इनकी साधना अभी इतनी अच्छी भी नहीं है और कुण्डलिनी ऊर्ध्व हो सकती है, हमारी साधना इतनी आगे है फिर भी कुण्डलिनी नहीं उठ सकती है क्योंकि मैं रूखा हूँ। मैं कुछ नहीं बोलता था, बोल भी क्या सकता था, आखिरकार वह मेरी गुरू थीं। एक बात बता दूँ– मैं सब कुछ समझता था, मगर मुझे अभी योग का अभ्यास करना था, योग के लिए मार्गदर्शक होना आवश्यक था।

विविध अनुभव

आज दो जुलाई सुबह के समय ध्यान पर बैठा हुआ था, आजकल हमारा ध्यान भृकुटि पर लगता है, क्योंकि प्राण वायु का कुछ हिस्सा आज्ञाचक्र पर आकर ठहरता था। मुझे भृकृटि पर लाल रंग का चमकदार बिन्दु दिखाई दिया यह बिन्दु गोलाकार रुप में था।

अर्थ- लाल रंग अग्नितत्व का प्रतीक है तथा लाल रंग रजोगुण का भी प्रतीक है।

दोपहर ग्यारह बजे ध्यान करते समय मैंने देखा– एक हल्का पीले रंग का नाग हमसे थोड़ी दूरी पर कुण्डली मारे, फन ऊपर उठाए हुए हमारी ओर देख रहा है। ध्यान करने के बाद मैं समझ गया, यह कुण्डलिनी का स्वरूप है।

आज कल हमें क्रियाऐं बहुत हुआ करती थीं। इन क्रियाओं का वर्णन मैं यहाँ नहीं कर रहा हूँ, वैसे क्रियाओं का कुछ-न-कुछ अर्थ अवश्य होता है। ध्यान के समय क्रियाएँ बहुत ज्यादा होती थी, जब मैं सो जाता था, तब सोते समय भी अपने आप ध्यान पर बैठ जाता था फिर ध्यानावस्था में क्रियाएँ हुआ करती थी। साधकों! ज्यादा क्रियाएँ होना अभ्यास के लिए रूकावट है, क्योंकि क्रियाएँ होते समय मन एकाग्र नहीं रहता है। इसलिए मार्गदर्शक को चाहिए कि वह साधक की क्रियाएँ अपने योगबल से बन्द कर दे

अथवा अपने गुरु से ये क्रियाएँ होना बन्द करवा ले। साधक को उस समय अत्यन्त शुद्ध रहना चाहिए तथा प्रणायाम भी खूब करना चाहिए। साधक की साधना में एक अवस्था ऐसी भी आती है कि कुछ मुद्राएँ अवश्य होती हैं, हर एक मुद्रा का कुछ न कुछ अर्थ अवश्य होता है। मुद्राएँ साधक की योग्यता को भासित कराती हैं, सिर्फ मुद्रा देखकर योग्य मार्गदर्शक साधक की साधना की अवस्था समझ जाएँगें।

आजकल सोते समय हमारे शरीर के अन्दर अंगों में कम्पन बहुत हुआ करता था, कभी-कभी यह कम्पन इतना ज्यादा होता था कि हमारी आँखें खुल जाती थी, ऐसा लगता था जैसे शरीर के अन्दर भूकम्प-सा आ रहा है। साधकों! शरीर के अन्दर इस तरह का कम्पन साधक की उच्चावस्था को प्रदर्शित करता है, क्योंकि इस अवस्था में वायुतत्व अधिक क्रियाशील रहता है, जब स्थूल शरीर शांत होता है, तब वायु तत्व अपना कार्य करने लगता था इससे शरीर के अन्दर कम्पन हुआ करता था। यदि साधक बहुत अधिक प्राणायाम का अभ्यास करता है तब काफी समय बाद उसे शरीर के अन्दर कम्पन-सा महसूस होने लगता है।

आज चार जुलाई को सुबह ध्यान पर बैठा तो ध्यान में एक ज्योति दिखाई दी। अबकी बार इस ज्योति का स्वरुप बहुत बड़ा था। तथा सायंकाल के समय ध्यानावस्था में शिवलिंग के दर्शन हुए थे।

आजकल मुझे लगा करता है कि मैं बहुत हल्का हो गया हूँ। ध्यान के बाद हल्कापन कुछ ज्यादा ही महसूस होता रहता है, हल्केपन के कारण हमारे शरीर में काफी स्फूर्ति सी महसूस होती थी, आलस्य बिलकुल नहीं लगता था।

अर्थ- ऐसा इसलिए होता है जब साधक के शरीर का जड़तत्व कम होने लगता है, तब उसका जड़त्व भी कम होने लगता है, इसलिए साधक हल्कापन महसूस करता है।

शिवलिंग ही शिवलिंग

आज 9 जुलाई सायंकाल मैं ध्यान करने के लिये बैठा हुआ था, श्री माता जी ने हमारे आज्ञा चक्र पर शक्तिपात किया। मुझे ऐसा लगा कि मैं बहुत ऊपर आ गया हूँ, हमारी प्राणवायु और मन आज्ञा चक्र पर आ गया है। ध्यानावस्था में लग रहा था मैं बहुत ऊपर अन्तरिक्ष में विद्यमान हूँ, मैं बहुत हल्का हो गया

हूँ, कुछ समय बाद मैं ध्यान की गहराई में चला गया। हमें अनुभव आया– मैं पृथ्वी को दूर-दूर तक देख रहा हूँ, पृथ्वी हरी-भरी दिखाई दे रही है, मैं अन्तरिक्ष में बहुत ऊपर बैठा हुआ हूँ, ऐसी अनुभूति हो रही थी। तभी अन्तरिक्ष में बहुत बड़ा शिवलिंग दिखाई दिया, शिवलिंग का रंग काला था। थोड़ी देर बाद हमें अन्तरिक्ष में ढेर सारे शिवलिंग दिखाई देने लगे। सारा अन्तरिक्ष शिवलिंगों से भर गया। अब मैं नीचे की ओर पृथ्वी को देखने लगा, मैं पृथ्वी पर जिस ओर देखता था वहीं पर शिवलिंग प्रकट हो जाता था। फिर मैं पृथ्वी के जिन जगहों पर दृष्टि डालता था, तब उसी जगह से शिवलिंग भूमि के अन्दर से निकलकर ऊपर आने लगते थे। पृथ्वी के जिस जगह पर शिवलिंग प्रकट होता था वहाँ पर पृथ्वी फट जाती थी। पृथ्वी के हर हिस्से में चाहे मैदान हो, कूड़े का स्थान हो, चाहे पुराने खण्डहर हो, सभी स्थानों से शिवलिंग प्रकट हो रहे थे। अब हमें पृथ्वी धूमती हुई दिखाई देने लगी थी, सम्पूर्ण पृथ्वी में शिवलिंग ही शिवलिंग व्याप्त थे, दृश्य बहुत अच्छा लग रहा था।

मैं पृथ्वी को धूमते हुए देख रहा था तथा अन्तरिक्ष को भी देख रहा था, शिवलिंग के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था, कुछ क्षणों में सारे शिवलिंग अदृश्य हो गये। फिर एक अत्यन्त विशाल आकार में शिवलिंग प्रकट हो गया, यह शिवलिंग सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में व्याप्त हो रहा था पृथ्वी भी इसी शिवलिंग के अन्दर धूम रही थी। इतना विशाल आकार का शिवलिंग था, अन्तरिक्ष और पृथ्वी दोनों उसी के अन्दर समाए हुए थे, यह शिवलिंग उज्ज्वल सफेद रंग का था तथा इसके ऊपर विशेष तरह के कुछ फूल रखे हुए थे। यह शिवलिंग एक बार में नहीं देखा जा सकता था, इसे देखने के लिये दृष्टि ऊपर से नीचे की ओर करनी पड़ती थी। यह शिवलिंग हमें बहुत अच्छा लग रहा था। इतने में हमें अपना होश आने लगा कि मैं ध्यान पर बैठा हूँ, अनुभव समाप्त हुआ।

हमारा प्राण आज्ञाचक्र में थोड़ा सा आया करता था, क्योंकि कण्ठचक्र पूरी तरह से नहीं खुला था। प्राण का आज्ञा चक्र में आने के कारण हमारी साधना की गति आज्ञा चक्र पर थी, उस समय प्राण और मन, आज्ञा चक्र पर स्थित थे इसलिए चारों ओर सर्वत्र शिवलिंग ही दिखाई दे रहे थे। सम्पूर्ण अपरा प्रकृति का स्वरुप अर्थात पिण्डाकार में अपरा-प्रकृति शिवलिंग के समान स्वरुप वाली होती है। लिंग का अर्थ होता है–'व्यक्त रूप में'। इस अपरा प्रकृति को लिंग भी कहते हैं और परा प्रकृति को अलिंग कहते हैं।

तीसरा नेत्र

जब से हमारा प्राणवायु आज्ञा चक्र पर आने लगा है, तब से सिर काफी भारी-भारी रहने लगा है तथा सिर में दर्द भी रहा करता था। नाड़ियों में अशुद्धता होने के कारण दर्द हुआ करता था, नाड़ियों को शुद्ध करने के लिए प्राण वायु नाड़ियों में दबाव देता था, यही दबाव दर्द की अनुभूति कराता था। मैं प्राणायाम बहुत किया करता था, प्राणायाम करने पर थोड़ा सा आराम मिलता था। आज सुबह 10 जुलाई को ध्यान पर बैठा हुआ था, तब ध्यानावस्था में आज्ञा चक्र (भृकुटि) पर एक इंच लम्बा खड़े आकार में प्रकाश दिखाई दिया, हमारा ध्यान प्रकाश की ओर केंद्रित हो गया, उसके अन्दर एक लाइन बहुत तेज चमक रही थी, वह चमकदार लाइन उस प्रकाश में नीचे ऊपर हो रही थी। उस प्रकाश के अन्दर मुझे कुछ दिखाई देने लगा, मैं गौर करके उसे देखने लगा। स्पष्ट होने पर मालूम हुआ मैं एक आँख देख रहा हूँ, आँख खड़े आकार में थी मगर वह आँख बन्द थी। आँख बन्द होने पर भी बहुत सुन्दर दिखाई दे रही थी। कुछ क्षणों में अनुभव समाप्त हो गया। यह अनुभव श्री माता जी को बताया, तब उन्होंने मुझे बताया यह आपका तीसरा नेत्र है, अभी बन्द है, इसके खुलने में अभी समय लगेगा।

ऊपर लिखे अनुभव के बाद हमें एक और अनुभव कुछ क्षणों बाद आया– घोर अंधकार विद्यमान है, मैं उस अंधकार को देख रहा हूँ, कुछ क्षणों बाद अंधकार में प्रकाश पुंज प्रकट हो गया। धीरे-धीरे प्रकाश पुंज बहुत बड़ा हो गया, यही प्रकाश पुंज शिवलिंग के रूप में परिवर्तित हो गया। शिवलिंग का रंग सफेद था तथा उसका आकार बहुत बड़ा था। शिवलिंग के ऊपर बहुत सुन्दर थोड़े-से फूल रखे हुए थे, मैं शिवलिंग को देखकर प्रसन्न हो रहा था। फिर मेरे मुँह से आवाज जो निकली–“प्रभु! आप शिवलिंग के रुप में "। इतने में शिवलिंग अन्तरिक्ष में मुझसे दूर जाने लगा और अदृश्य हो गया। हमारा अनुभव भी समाप्त हो गया। यह अनुभव आज्ञा चक्र का है।

मैं दोपहर के समय ध्यान पर बैठा हुआ था। ध्यान में हमें ऊँचे-ऊँचें पहाड़ दिखाई देने लगे। फिर मैं पहाड़ की घाटियों को देखता हुआ आगे बढ़ने लगा। आगे चलकर मैंने देखा– पानी का एक स्त्रोत है, थोड़ा-सा पानी वहीं पर भरा हुआ है, उसी पानी ने आगे चलकर नाले का रूप ले लिया है। फिर पहाड़ों की अत्यन्त गहरी खाईयों से होते हुए पानी ने आगे चलकर नदी का रूप धारण कर लिया। मैं सोचने लगा– यह दृश्य कहाँ का देख रहा हूँ। उसी समय में अचानक मैं अपने-आप कहने लगा– “यहाँ तो गंगा नदी है।”

मैं आजकल ध्यानावस्था में मस्तक पर लाल रंग का बिन्दु अक्सर देखा करता था, आज एक बार पीले रंग का बिन्दु भी देखा था। अर्थ- पीले रंग का बिन्दु पृथ्वी तत्त्व का प्रतीक होता है। लाल रंग का बिन्दु अग्नि तत्व का प्रतीक होता है। आजकल हर बार विभिन्न तरह के शिवलिंग देखा करता हूँ। कुछ स्वप्रकाशित शिवलिंग बहुत ही सुन्दर दिखाई देते है।

श्री माता जी की इच्छा थी कि मैं मिरज में रूक जाऊँ, मगर मेरी इच्छा मिरज में रुकने की नहीं थी। श्री माता जी से मैं स्पष्ट नहीं कह सकता था कि आपके पास रुकने की हमारी इच्छा नहीं है। इसलिए हमने उन्हें पत्र लिखकर दे दिया। उसमें लिखा था–"श्री माता जी आप त्रिकालदर्शी हैं, कृपया आप हमारा भविष्य देखकर बता दीजिए हमें कहाँ रहना है, हमारी इच्छा आपके पास रहने की नहीं है"। श्री माता जी ने हमें भी पत्र लिखकर उत्तर दिया– 'चाहूँ तो बता सकती हूँ कि आपको कहाँ रहना है, यदि आपकी इच्छा यहाँ रहने की नहीं है तो आप गुरू पूर्णिमा का पर्व मनाइए फिर आप वापस घर जा सकते हैं। मैं श्री माता जी का पत्र पढ़कर बहुत खुश हुआ, क्यों कि घर जाने की आाज्ञा मिल गई है। मैं गुरू पूर्णिमा का पर्व मनाने के बाद अनिल भैया के साथ पूना उनके घर पर आ गया क्योंकि पूना से ही मेरा झेलम एक्सप्रेस का आरक्षण था।

भगवान श्री गणेश जी के दर्शन

यह अनुभव अनिल भैया के घर पूना में आया था। मैं अनिल भैया की थोड़ी-सी तारीफ लिख दूँ– अनिल भैया बहुत अच्छे स्वभाव के साधक हैं। मन उनका बहुत अच्छा है तथा इस समय हमारी और अनिल भैया की खूब बनती है, इसलिए मैं इन्हीं के साथ इनके घर आ गया हूँ। फिर 19 और 20 जुलाई की मध्यरात्रि के समय ध्यान करने के लिये बैठ गया– पहले तो हमें विभिन्न तरह की क्रियाएँ हुई फिर हमारा ध्यान गहरा लग गया। मुझे अनुभव आया– अंधकार में प्रकाश पुंज प्रकट होता हुआ दिखाई देने लगा, मैं प्रकाश पुंज को देखने लगा, वह प्रकाश पुंज कुछ समय में भगवान गणेश जी के रूप में परिवर्तित हो गया। भगवान गणेश जी प्रकाश वलय के बीच मैं बैठे हुए थे और हमारी ओर देख रहे थे। मैं भगवान गणेश जी की सुन्दरता देख रहा था, हमारी दृष्टि भगवान गणेश जी के मस्तक पर ठहर गयी, उनके मस्तक पर प्रकाश गोलाकार रूप में उभर रहा था, फिर अदृश्य हो जाता था। मैं यह क्रिया देख रहा था, तभी उनका तीसरा नेत्र हमें दिखाई देने लगा। मैं बोला– "प्रभु! हमें आपका तीसरा नेत्र दिखाई दे रहा है"। मगर

उत्तर में वह कुछ नहीं बोले, बल्कि उनकी आकृति अस्पष्ट होकर अदृश्य होने लगी। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- भगवान गणेश जी मूलाधार चक्र के देवता हैं,यह चक्र मेरा विकसित हो चुका है, इसलिये मुझे इनका दर्शन हुआ है। इनका तीसरा नेत्र दिखाई देने का अर्थ है– मेरी दिव्य-दृष्टि शीघ्र ही खुल जायेगी।

20 जुलाई को सुबह ध्यान पर हुआ बैठा था– ध्यान में पहले बहुत सुन्दर यज्ञ कुण्ड दिखाई दिया। यज्ञ कुण्ड बहुत सजा हुआ था तथा उस पर बहुत सुन्दर नक्काशी बनी हुई थी। मैं यज्ञकुण्ड देख ही रहा था कि उसके अन्दर अग्नि प्रकट हो गयी अग्नि की ज्वालाएँ ऊपर तक उठ रही थी। फिर अग्नि की ज्वालाऐं धीरे-धीरे कम होने लगी। कम होते-होते ज्वालाऐं कुण्ड के निचले भाग में समा गई। मैं अग्नि को देखने के लिए कुण्ड में झाँकने लगा। यह यज्ञ कुण्ड बहुत गहरा दिखाई दे रहा था। उस यज्ञ कुण्ड के निचले भाग पर भगवान गणेश जी बैठे हुए थे। मैं बोला– "प्रभु आप उसमें बैठे क्या कर रहे हैं? मगर वह कुछ न बोले"। तभी हमारा अनुभव समाप्त हो गया, अनुभव समाप्त होने के बाद हमें हँसी आ गयी, क्योंकि मैं कह रहा था– आप उसमें बैठे क्या कर रहे हैं।

अर्थ- साधकों! यज्ञ कुण्ड वाला दृश्य मूलाधार चक्र का है। भगवान गणेश जी मूलाधार चक्र के देवता है।

आज-कल ध्यानावस्था में कई बार दूर-दूर तक पृथ्वी दिखाई देती है, चारों ओर हरियाली छायी रहती है। बड़े-बड़े पेड़-पौधे होते हैं, तथा पृथ्वी पर समतल भाग भी दिखाई देता है। साधकों! जब साधक का प्राण वायु आज्ञा चक्र पर आता है तब ऐसे दृश्य दिखाई देते हैं- समतल भूमि है, भगवान शंकर ध्यान मुद्रा में बैठे हुए हैं।

अर्थ- जो समतल भाग दिखाई देता है वह साधक के चित्त की भूमि होती है। जिसे मैं बार-बार पृथ्वी कह रहा हूँ वह भी चित्त की भूमि ही है। इस चक्र पर शुरुआत में इसी प्रकार के अनुभव आते हैं।

कारण शरीर से मैं अन्तरिक्ष में

21 जुलाई को सुबह ध्यानावस्था में देखा– मैं अपने स्थूल शरीर से निकलकर अलग खड़ा हो गया हूँ। पहले मुझे अपना स्थूल शरीर दिखाई दिया कि वह ध्यानावस्था में बैठा हुआ है। फिर हमारा सूक्ष्म शरीर अनिल भैया के घर की छत को पार करता हुआ ऊपर की ओर अन्तरिक्ष में तीव्र गति से जाने लगा। सूक्ष्म शरीर को घर की छत को पार करने में किसी प्रकार का अवरोध नहीं हुआ। अन्तरिक्ष में ऊपर जाते समय मैंने पृथ्वी की ओर देखा, पृथ्वी बिलकुल छोटी सी गेंद के समान छोटी सी दिखाई दे रही थी। मैं तीव्र गति से ऊपर चला जा रहा था। पृथ्वी हमारी दृष्टि से ओझल हो गई। कुछ क्षणों बाद मैं अन्तरिक्ष में अपने आप रूक गया। मेरे सूक्ष्म शरीर के अन्दर से दूसरा शरीर निकल पड़ा। अब मैं अपने सूक्ष्म शरीर को देख रहा था, वह मानव आकार में मुर्ति की भाँति खड़ा हुआ था। सूक्ष्म शरीर श्वेत रंग के प्रकाश से बना हुआ था, उसका स्वरुप स्थूल शरीर की तरह नहीं था, सूक्ष्म शरीर उज्ज्वल पारदर्शी था। सूक्ष्म शरीर को अन्तरिक्ष में छोड़कर मैं अत्यन्त तीव्र गति से ऊर्ध्व होने लगा। कुछ समय बाद मैंने सूर्य के समान प्रकाश का गोला देखा, वह गोला अपनी जगह पर स्थिर था, मैं उसके पास खड़ा हो गया। यह प्रकाश का गोला सूर्य के आकार के बराबर था। मेरे अन्दर इच्छा प्रगट हुई कि मैं इसे पकड़ लूँ, मैंने अपने दोनों हाथ आगे की ओर बढ़ा कर उसे पकड़ना चाहा, मगर वह हमारी पकड़ में नहीं आया क्योंकि वह गोला प्रकाश से बना हुआ था। मैं गोले के सामने पेट के बल लेटा हुआ था, हमारा मुँह प्रकाश से बने गोले की तरफ था। मेरा शरीर लेटा हुआ उस गोले के चारों ओर अपने आप गति कर रहा था, जैसे प्रथ्वी सूर्य के चारों ओर गति करती है। उस समय अन्तरिक्ष में मैं और प्रकाश का गोला था। अन्तरिक्ष स्वच्छ प्रकाशित चमकीला दिखाई दे रहा था, फिर प्रकाश का गोला अदृश्य हो गया। उसी समय मैं अपने आप सीधा खड़ा हो गया और तीव्र गति से नीचे की ओर आने लगा, जहाँ पर हमारा सूक्ष्म शरीर खड़ा हुआ था, मैं उसी के सामने रूक गया। सूक्ष्म शरीर मूर्ति के समान बिलकुल स्थिर खड़ा हुआ था, मैं सूक्ष्म शरीर के अन्दर प्रवेश कर गया। सूक्ष्म शरीर नीचे की ओर तीव्र गति से आने लगा, उसी समय हमें पृथ्वी दिखाई देने लगी। पृथ्वी पर मैं पूना शहर के ऊपर क्षणिक देर के लिये रूका। फिर अपने स्थूल शरीर के सामने आकर खड़ा हो गया। मैंने देखा– मेरा स्थूल शरीर ध्यान पर बैठा हुआ है, मैं स्थूल शरीर के अन्दर प्रवेश कर गया। हमारा अनुभव समाप्त हो गया और आँखें खुल गई। मैं लगभग सवा घण्टे ध्यान पर बैठा रहा था, इसका अर्थ है– मैंने सवा घण्टे अन्तरिक्ष में यात्रा की थी।

अर्थ- साधकों! इस अनुभव में मैं अपने आपको क्रमश: तीन शरीरों में अलग-अलग अनुभूति करता हूँ, तथा तीनों शरीरों को देख रहा हूँ। ये तीनों शरीर– स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर है। स्थूल शरीर तो स्थूल जगत से ही सम्बन्ध रखता है, सूक्ष्म शरीर का सूक्ष्म जगत से सम्बन्ध रहता है, कारण शरीर का सम्बन्ध कारण जगत से रहता है। सूक्ष्म शरीर की गति सिर्फ सूक्ष्म जगत तक सीमित रहती है, सूक्ष्म शरीर एक जगह जाकर रूक जाता है। सूक्ष्म शरीर वहीं तक गति कर सकता है, जहाँ तक सूक्ष्म शरीर का घनत्व सूक्ष्म जगत के घनत्व से मेल करता है। जब घनत्व कम होने लगता है तब सूक्ष्म शरीर आगे नहीं जा सकता है क्योंकि उसका घनत्व मेल नहीं करता है। इसलिए सूक्ष्म शरीर के अन्दर से कारण शरीर निकल पड़ा,और आगे की ओर गति करने लगा। कारण शरीर का घनत्व सूक्ष्म शरीर से बहुत कम होता है, इसलिए वह आगे की ओर गति कर सकता है। कारण शरीर कारण जगत में गमन करता है। मैं उस प्रकाश के गोले को पकड़ना चाहता हूँ मगर पकड़ नहीं पाता हूँ। वह प्रकाश का गोला कारण शरीर से भी कम घनत्व का बना हुआ है। इसलिए वह पकड़ में नहीं आता है।

चन्द्रमा के समान प्रकाश का गोला ‘‘ऋतम्भरा-प्रज्ञा’’ का स्वरूप है। क्योंकि कारण शरीर से वह पकड़ में नहीं आया था। उस समय मैं ऋतम्भरा-प्रज्ञा को नहीं समझ सका था, मगर फिर हमें इसकी जानकारी हो गयी है। मैं पूर्वकाल में ढेरों जन्मों से साधना करता चला आ रहा हूँ, यह जन्म हमारा अखिरी जन्म है। आखिरी जन्म में योगी के चित्त में ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य होता है, इसी के द्वारा तत्त्वज्ञान प्राप्त कराया जाता है, तथा अविद्या का नाश होता है। इस अनुभव में जब हमें यह दृश्य आया था हमें तभी समझ लेना चाहिए था कि भविष्य में ऋतम्भरा-प्रज्ञा की प्राप्ति होगी तथा तत्त्वज्ञान से युक्त हो जाऊँगा। ऋतम्भरा-प्रज्ञा अज्ञान की दुश्मन होती है अर्थात अज्ञान का मूल से नाश कर देती है।

22 जुलाई को मैंने ध्यानावस्था में देखा– मूलाधारचक्र से लेकर ब्रह्मरंध्र तक एक बहुत सूक्ष्म पतली सी सफेद रंग की पारदर्शी नाड़ी दिखाई दे रही है, इसी में सारे चक्र स्पर्श करते हुए दिखाई दे रहे हैं, नाड़ी के ऊपर ब्रह्मरंध्र का क्षेत्र है। तथा ध्यानावस्था में कई प्रकार की क्रियाएँ व मुद्राएँ हुईं जिनका वर्णन मैं नहीं कर रहा हूँ। कभी-कभी इन मुद्राओं से कष्ट सा होता था। अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली पारदर्शी नाड़ी सुषुम्ना नाड़ी है।

अन्तरिक्ष में ॐ

मैं ध्यान पर बैठा हुआ था मुझे आवाज सुनाई दी– “मेरी ओर देखो”। यह आवाज अन्तरिक्ष से आयी थी, मैं अन्तरिक्ष की ओर देखने लगा। तब हमें अन्तरिक्ष में कुछ लिखा हुआ दिखाई दिया, मैंने चारों ओर अन्तरिक्ष में अपनी दृष्टि की, तब मैं उस शब्द को पढ़ पाया। अन्तरिक्ष में ‘ॐ’ लिखा हुआ था। ‘ॐ’ को एक बार में देखकर नहीं पढ़ा जा सकता था, क्योंकि वह सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में लिखा हुआ था। उसे पढ़ने के लिए मुझे अन्तरिक्ष में एक ओर से दूसरी ओर को देखना पड़ा था। तब पढ़ पाया था, कि ‘ॐ’ लिखा हुआ है। यह ‘ॐ’ प्रकाश से बना हुआ था।

एक बार मैं ध्यानावस्था में बैठा हुआ था। उसी समय हमें सुनाई दिया– *गुरू नानक मुक्ति के काफी निकट हैं। उनके पाँच शिष्य अभी काफी* दूर हैं, मगर इन शिष्यों के नाम नहीं बताए गये थे। इसलिए मैं ये नहीं जान सका कि कौन से शिष्य है। गुरू नानक जी पंजाबी धर्म को चलाया था, इसलिए पंजाबी लोग इन्हें भगवान की तरह मानते हैं।

एक बार ध्यानावस्था में देखा कि मैं आकाश की ओर देख रहा हूँ तभी मुझे दिखाई दिया– पूर्व दिशा की ओर आकाश में दिव्य प्रकाश प्रकट होकर फिर अदृश्य हो जाता है, यही क्रिया बार-बार हो रही है। मैं यह दृश्य कुछ समय तक देखता रहा। फिर हमारे मन में आया ऐसा क्यों हो रहा है? उसी समय आकाश से हमें आवाज सुनाई दी– यह क्रिया मृत्युंजय मंत्र के कारण हो रही है, फिर हमारा यह अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- जब अभ्यासी मृत्युंजय-मंत्र का अधिक जाप करता है, तब इसका प्रभाव उसके चित्त पर पड़ता है, इसी कारण आकाश में दिव्य प्रकाश प्रकट होता हुआ और अदृश्य होता हुआ दिखाई दे रहा था।

आजकल हमें अतृप्त जीवात्माएँ स्वप्नावस्था में बहुत दिखाई देती थीं। कभी दिखाई देता था– कुछ अतृप्त जीवात्माएँ कुछ खा रही है, कुछ खाने का इंतजार कर रही हैं। कुछ अतृप्त जीवात्माएँ हमसे खाना माँगा करती थी, मगर मैं उनकी इच्छा पूर्ति नहीं कर सकता था। यदि मैं किसी एक को खाना देता तो हमारे पास अतृप्त जीवात्माओं की भीड़ आनी शुरु हो जाती, इसलिये मैं किसीको खाना नहीं देता था।

आज ग्यारह अगस्त को ध्यानावस्था में देखा– अन्तरिक्ष में एक बहुत सुन्दर स्त्री प्रकट हो गयी है, उसके चारों ओर तेज प्रकाश का वलय फैला हुआ है। वह सुन्दर स्त्री लाल रंग की साड़ी पहने हुए और सिर पर मुकुट लगाए हुए खड़ी है,और हमारी ओर देख कर मुस्कुरा रही है। उस सुन्दर स्त्री ने हमें अमृत के बारे मे समझाने लगी। वह बोली– *"अमृत तीन प्रकार का होता है"*। तीनों प्रकार के अमृत का नाम बताए, उस अमृत के नाम बहुत ही अटपटे से थे। उस समय कमरे के बाहर शोर हो रहा था। शोर होने के कारण ध्यान टूट गया। अमृत के विषय में मैं आगे नहीं सुन सका।

मैंने ध्यानावस्था में देखा– मैं अन्तरिक्ष में खड़ा हूँ, मुझे अपने सामने बहुत सुन्दर शिवलिंग दिखाई दे रहा है। शिवलिंग के चारों ओर तथा ऊपर भी फूल रखे हुए है। शिवलिंग के चारों ओर प्रकाश फैला हुआ है। शिवलिंग से थोड़ा उपर अन्तरिक्ष में प्रकाश के द्वारा 'ॐ' लिखा हुआ था। फिर हमें 'ॐ' व शिवलिंग एक साथ दिखाई देने लगे। हमारा ध्यान टूट गया। ध्यान टूटने के बाद महसूस हुआ, आज्ञा चक्र हल्का-सा दुख रहा है।

ब्रह्मरंध्र का दर्शन

आज 23 अगस्त को सुबह ध्यान पर बैठा था। मैंने ध्यानावस्था में देखा– मैं अपने स्थूल शरीर के अन्दर हूँ, अपने शरीर के अन्दर ही ऊपर की ओर देख रहा हूँ, सिर के ऊपरी भाग में अर्ध-वृत्ताकार सी जगह दिखाई दे रही है, उसके अन्दर बहुत तेज प्रकाश भरा हुआ है। उसी समय मैंने अपने आपसे कहा– यह ब्रह्मरंध्र है इसलिए प्रकाश-ही-प्रकाश भरा हुआ दिखाई दे रहा है, साधक को ब्रह्मरंध्र के अन्दर प्रकाश ही प्रकाश दिखाई देता है। जब साधक का प्राण ब्रह्मरंध्र के अन्दर आता है, तब उसकी निर्विकल्प समाधि लगने लगती है।

ध्यानावस्था में अब हमारा मन सिर के ऊपरी भाग की ओर चला जाता था और ब्रह्मरंध्र द्वार पर जाकर ठहर जाता था तथा सिर के अन्दर भरी हुई वायु का दबाव भी ब्रह्मरंध्र के निचले भाग में बना रहता था। मैं यहाँ पर एक बात बता दूँ कि प्राण आज्ञा चक्र पर आकर ठहरा रहता था, सिर की नाड़ियों में भरी हुई वायु ऊपर की ओर जाकर एकत्र हो जाती थी। पहली बार जब वायु सिर के ऊपरी (ब्रह्मरंध्र के नीचे) भाग में एकत्र हुई थी तब हमारे शरीर में जोरदार कम्पन हुआ था फिर मैं सामान्य हो गया था। सिर में क्रिया करने वाली वायु को उदान वायु कहते हैं। उदान वायु कण्ठ के ऊपर सम्पूर्ण सिर के अन्दर स्थित रहती है

अथवा सिर में स्थित वायु को उदान वायु कहते हैं। योगी पुरुष ही उदान वायु को क्रियाशील करके अपने अधिकार में रखतें हैं। मृत्यु के बाद ऊपर के लोकों में ले जाने का कार्य यही उदान वायु ही करती है। इसका निवास स्थान कण्ठ में होता है, सिर के जिस ऊपरी भाग में वायु महसूस होती है वह जगह ब्रह्मरंध्र का निचला भाग था। अभी हमारा कण्ठचक्र पूरा नहीं खुला है बल्कि थोड़ा सा ही खुला है। अब ध्यान करते समय मन एकाग्र खूब होता है, क्योंकि आज्ञा चक्र में मन एकाग्र होता है। तथा प्राण वायु भी आज्ञा चक्र पर स्थित होती है।

आज 27 अगस्त को मन एकदम एकाग्र हो गया। मैं गहराई में चला गया। उस समय देखा– अन्तरिक्ष में चारों ओर बहुत तेज प्रकाश फैला हुआ है, मैं प्रकाश को देख रहा हूँ। प्रकाश इतना तेज है कि आँखें चकाचौंध हो रही हैं। उसके सामने सूर्य का प्रकाश जुगनू के समान है, फिर वह प्रकाश अदृश्य हो गया। कुछ समय बाद देखा– अन्तरिक्ष में एक बहुत सुन्दर सिंहासन है यह सिंहासन सोने का बना हुआ है। सुन्दरता व बनावट से स्पष्ट होता है यह सिंहासन दिव्यता से युक्त है।

अर्थ– अंतरिक्ष में सोने का सिंहासन दिखाई देने का अर्थ होता है– अभ्यासी की कुण्डलिनी जगृति हो गयी है, मगर अभी ऊर्ध्व नहीं हुई है।

भगवान श्री कृष्ण

आज-कल चार-पाँच दिन से मैं बहुत बीमार था। घर पर इस समय कोई नहीं था, घर के सभी सदस्य दिल्ली गये हुए थे। मैं बीमार इतना हो गया था कि उठकर बैठ भी नहीं सकता था। मैं अपने लिये खाना भी नहीं बना सकता था, इसलिए दो दिनों से भूखा ही लेटा हुआ था। बीमारी और भूख के कारण शरीर कमजोर पड़ गया था, हमें बहुत ज़ोर से प्यास लगी हुई थी, घर में पानी उपलब्ध नहीं था, प्यास के कारण मेरा बुरा हाल था। मुझे अपने आप पर क्रोध आ रहा था, कि हमारा कर्म इतना खराब है कि मैं प्यास से परेशान हो रहा हूँ और पानी भी नहीं पी सकता हूँ। मैंने सोचा– “इससे अच्छा है कि मेरी मृत्यु हो जाये”। दुखी होकर मैंने कहा– “हे ईश्वर! मैं अपने घर में प्यास से तड़प रहा हूँ, यह शरीर किस काम का है मैं पानी भी न पी सकता हूँ, इससे अच्छा है कि आप हमें मृत्यु दे दें, साधना करने से हमें क्या मिला, मैं अपनी जिंदगी में वैसे भी दुर्गति भोग रहा हूँ”। बुखार के कारण मेरा शरीर आग के समान तप रहा था, उसी समय मुझे नींद आ गई और सो गया। स्वप्नवस्था में मैंने अपने आपको एक बहुत सुन्दर बगीचानुमा

जंगल में पाया, मैं उस जंगल में आगे की ओर चला जा रहा था, इतने में हमें मुरली की बहुत मधुर आवाज सुनाई दी। मैं आवाज सुनकर रुक गया और सोचने लगा– मुरली की आवाज किधर से आ रही है? मैं मुरली की आवाज की ओर चलने लगा, थोड़ा ही चल पाया था तभी मैं ठहर गया। ठहराने का कारण यह था, हमसे थोड़ी दूरी पर एक पेड़ के नीचे भगवान श्री कृष्ण पीताम्बर धारण किए हुए, गले में सुन्दर मालाएँ पहने हुए, दोनों हाथों से मुरली पकड़े हुए खड़े थे। मैं भगवान श्रीकृष्ण के स्वरुप को देख ही रहा था तभी आकाश में जोरदार आवाज गूँजी– *"आनन्द कुमार! तुम्हें क्या चाहिए, भगवान से माँग लो"।* आवाज सुनकर पहले मैं हँसा और फिर भगवान श्रीकृष्ण से कहा– "प्रभु, आप तो शरीर पर कपड़े भी धारण नहीं (सिर्फ थोड़े) किए हुए हैं, मैं आपसे क्या माँगू"। इतना कहकर मैं चुप हो गया। मैंने भगवान श्रीकृष्ण से मजाक किया था, अन्तरिक्ष से फिर आवाज आयी– *"आनन्द कुमार, तुम्हें क्या चाहिए माँग लो"?* अबकी बार मैं कुछ नहीं बोला, सिर्फ अन्तरिक्ष की ओर देखने लगा, क्योंकि आवाज अन्तरिक्ष से आ रही थी। तीसरी बार फिर आवाज आयी– *"आनन्द कुमार, तुम्हें क्या चाहिए, भगवान तुम्हारे सामने खड़े हैं, माँग लो"।* अबकी बार आवाज आने पर मैं जोर-जोर से रोने लगा, मैं भगवान श्रीकृष्ण के सामने पेट के बल भूमि पर लेट गया और हाथ जोड़कर मैं बोला– "प्रभु, मुझे कुछ नहीं चाहिए, यदि आप हम पर प्रसन्न हैं तो हमें आपकी कृपा चाहिए"। इतना कह कर हाथ जोड़कर मैं कुछ क्षणों में खड़ा हो गया। हमारी आँखों से आँसू बह रहे थे, फिर भगवान श्रीकृष्ण हमारे सामने अंतर्ध्यान हो गये। उसी समय वहीं पर बालक के रुप में श्री कृष्ण के दर्शन होने लगे। उस समय वह दो वर्ष के बालक के समान उम्र वाले होंगे, उनके सिर पर मोर पंख बँधा हुआ था, वह हमारी ओर देख कर हँस रहे थे। इतने में हमारी आँखें खुल गई। अनुभव समाप्त हुआ।

उसी समय हमें पड़ोस की स्त्री की आहाट मिली, मैंने जोर लगाकर उसे बुलाया और सारी बातें बताईं, मैंने उससे पानी पीने के लिये माँगा। वह स्त्री थोड़ी देर में पानी और खाना लेकर आ गयी और उसने मुझसे कहा– "जब तक तुम बीमार हो मैं तुम्हें खाना दे दिया करूँगी"। मैंने पानी पिया तब मुझे कुछ राहत मिली, अब मैं अनुभव के बारे में सोचने लगा, कितना सुन्दर अनुभव था। यह अनुभव 5 सितम्बर को आया था।

आज-कल हमारा ध्यान सिर के ऊपरी भाग में लगता था। कुछ समय बाद ध्यानावस्था में नाभि के आस पास जलन होने लगती थी, ऐसा लगता था मानों पेट जला जा रहा है, साथ ही उड्डीयान बन्ध भी

लगता था, सारा पेट सिमटकर पीछे पीठ कि ओर चला जाता था, मूलाधार चक्र इस क्रिया से बहुत दुःखता था। उड्डीयान बन्ध इतना जोर से लगता था कि खुलने का नाम नहीं लेता था।

18 सितम्बर को सुबह ध्यान पर पीले रंग के नाग के रूप में कुण्डलिनी का दर्शन हुआ। नाग को इतना पास से देखा कि उसकी आँखों में हमारी परछाईं दिखाई दे रही थी।

श्री माता जी का पत्र

श्री माता जी को पत्र लिखे हुए बहुत दिन हो गये थे, उस पत्र का उत्तर अब आया है। श्री माता जी ने पत्र में लिखा था– आनन्द कुमार को अनेक आशीर्वाद! आपके दोनों पत्र मिले, जब आप यहाँ से (मिरज से) गये थे तब निश्चित रूप से कुछ लेकर गये। आपके सभी अनुभव सही हैं। ध्यान में तरह-तरह के अनुभव आते हैं। हर एक अनुभव का उत्तर देना कठिन है तथा इतना हमारे पास समय भी नहीं है। अब हम चाहते हैं कि अनुभव ज्यादा न आएँ, जो भी आएँ, वह अनुभव आप स्वयं जान सकें। मन शांत, स्थिर, समाधानी होना चाहिए। ब्रह्मरंध्र का अनुभव सही है। लेकिन यह अनुभव है अनुभूति नहीं है।

आज का दिन बहुत शुभ है। गुरुदेव का जन्मदिन है (20 सितम्बर)। सारी क्रियाएँ सही हो रही हैं, आपका ध्यान भी अच्छा लग रहा है, अब और गहराई में घुसने का प्रयत्न कीजिए। मन को नाभि पर स्थिर करो, नाभि से ही सारी क्रियाएँ होती हैं। उसी का मूल पकड़ो, विचारों को रोको। अनुभव नहीं आने चाहिए, शान्त हो जाओ। अनुभव आगे नहीं बढ़ने देते हैं, साधना में बाधक होते हैं, अस्तु।

“तुम्हारी माता जी मालती देवी बाल”

आग-ही-आग

श्री माता जी का पत्र आया उसमें लिखा था मन को नाभि पर केंद्रित करो। मैंने मन को नाभि पर केंद्रित करना शुरू कर दिया। शुरुआत में नाभि पर ध्यान करने पर विचित्र-सा लगता था। पहले नाभि के आसपास दर्द-सा महसूस हुआ। यह क्रम कुछ दिनो तक चलता रहा। फिर नाभि अत्यधिक गर्म होने लगी जिससे ध्यान में थोड़ी परेशानी-सी महसूस हुई। सारे पेट में आग-ही-आग महसूस होने लगी तथा

ध्यानावस्था में नाभि के आसपास आग दिखाई देती थी। जब मैं सो जाता था तब स्वप्नावस्था में भी नाभि पर चारों ओर आग दिखाई देती थी। कभी-कभी मात्र आँखें बन्द करने पर जलती हुई आग दिखाई देती थी। एक बार ध्यानावस्था में देखा– आग को कोई फूँक रहा है जिससे आग और प्रज्वलित हो गई, उस समय पेट का बुरा हाल था, ऐसा लगता था कि जल जायेगा। फिर यह आग हृदय की ओर बढ़ने लगी। ऐसा लग रहा था, कि हृदय आग के कारण जल जायेगा। रात्रि में सोने के बाद बुरा हाल हो जाता था क्योंकि पेट और हृदय इतना गर्म हो जाता था कि नींद नहीं आती थी। मैं सोते समय जाग जाता था, ऐसा लगता था– सारा हृदय जल रहा है। अब नाभि की जलन पर थोड़ा आराम सा मिला, मगर हृदय में जलन के कारण काफी कष्ट हो रहा था। कुल मिलाकर इस आग से बुरा हाल हो गया था। पानी पीने से आराम बिलकुल नहीं मिलता था। मैंने श्री माता जी को पत्र भी लिखा, मगर उसका उत्तर नहीं आया।

इन दिनों शौच क्रिया में बड़ी परेशानी होती थी, दो-दो दिन तक शौच नहीं जाता था। सदैव हृदय में जलन होती रहती थी। धीरे-धीरे जलन कम होने लगी। एक बार ध्यानावस्था में देखा– ढेर सारी राख़ पड़ी हुई है, आग की जलन अब कम हो गयी थी। ऐसा लगता था– जैसे कोई चीज जलकर राख हो गयी है।

एक बार ध्यान में देखा– एक नाग कुण्डली मारे बैठा हुआ है, फन ऊपर की ओर उठाए हुए है। वह अपने मुँह से आग उगल रहा है। जैसे ही वह फूँफकार मारता है उसके मुँह से आग निकलने लगती है। सारा शरीर गर्म होने लगता था।

अर्थ- ध्यानावस्था में दिखाई देने वाला नाग कुण्डलिनी थी। वह अपने प्रभाव से जड़ता को नष्ट कर रही थी, इसीलिए नाग के मुँह से आग निकलती हुई दिखाई देती थी। जड़ता के नष्ट होने पर अग्नितत्व का प्रभाव बढ़ने लगता है इससे शरीर में गर्मी की अनुभूति होने लगती है। ध्यानावस्था में दिखाई देने वाली राख, हमारे कर्मों को जलाने के बाद बचा हुआ अवशेष है।

हृदय में अग्नि और भगवान शंकर

ध्यान में आजकल अत्यन्त उष्णता रहती है। एक दिन सुबह ध्यान करते समय देखा– मुझे अपना हृदय दिखाई दे रहा है, फिर हृदय के अन्दर शिवलिंग दिखाई देने लगा, यह शिवलिंग प्रकाश का बना

हुआ था। शिवलिंग से तेज प्रकाश बाहर की ओर निकल रहा था, एक बार मैं ध्यान की गहराई में चला गया। तब दिखाई दिया– हृदय में आग की लपटें उठ रही हैं, कुछ क्षणों तक आग की लपटें देखता रहा। फिर आग की लपटें धीरे-धीरे अदृश्य हो गयी। तब हृदय में आग की जगह भगवान शंकर समाधि मुद्रा में दिखाई देने लगे। उनके दाहिने बाजू में रुद्राक्ष की दो मालाएँ थीं, गले में भी रुद्राक्ष की मालाएँ थीं। उस समय उनके गले में हमें नाग नहीं दिखाई दिये थे, भगवान शंकर का शरीर नीले रंग के प्रकाश का बना हुआ था तथा आग चारों ओर फैली हुई थी, भगवान शंकर थोड़ी देर बाद अदृश्य हो गये।

यह अनुभव 29 अक्तूबर का है। मैंने ध्यानावस्था में देखा– मैं बैठा हुआ ध्यान कर रहा हूँ। हमारे मुँह से ॐ-ॐ के शब्द निकल रहे थे। यह शब्द इतने ज़ोर से निकले की ध्यानावस्था में हमारी आँखें खुल गई। कुछ समय बाद मैं फिर ध्यान पर बैठ गया, फिर यही दृश्य आया कि मैं ध्यान पर बैठा हूँ और ॐ-ॐ जोर से बोल रहा हूँ, इतने में हमारे शरीर से प्रकाश का गोला निकला और वह अन्तरिक्ष में चला गया, फिर मैं गहरे ध्यान में डूब गया। जब मैं ध्यान से उठा तब मैं इस अनुभव का अर्थ नहीं समझ पाया।

एक दिन मैं ध्यान कर रहा था, मन भी बहुत एकाग्र हो रहा था। फिर मूलाधार चक्र में दर्द-सा महसूस होने लगा। फिर घोर अंधकार में बिजली चमकी और अदृश्य हो गई, जैसे बरसात में बादलों के बीच बिजली चमकती है और अदृश्य हो जाती है।

अर्थ- यह कुण्डलिनी का दर्शन है, कुण्डलिनी के दर्शन कई प्रकार के होते हैं।

मैंने ध्यानावस्था में देखा– एक व्यक्ति हमारे सामने बैठा हुआ है। उस व्यक्ति ने अपना दाहिना हाथ ऊपर की ओर उठाया और फिर बोला– "कालों के काल,'महाकाल"। इतने में उसके दाहिने हाथ में एक त्रिशूल प्रकट होकर आ गया। चमकता हुआ वह त्रिशूल बहुत अच्छा लग रहा था, तथा त्रिशूल से हल्का-हल्का प्रकाश निकाल रहा था। उसी समय मैंने मन में कहा– "यह त्रिशूल भगवान शंकर का है"। फिर उस व्यक्ति ने उसी त्रिशूल से हमारे सिर का ऊपरी भाग काट दिया। मैं बड़ा दुखी हुआ और बोला– "इसने हमारा ब्रह्मरंध्र ही काट डाला"। मैंने अपने सिर को उसी जगह चिपका दिया और सिर के ऊपरी भाग को पकड़कर खड़ा हो गया। इतने में मेरी आँखें खुल गई।

अर्थ- यह त्रिशूल संसारी नहीं है, अनुभव में हमारे सिर का ऊपरी भाग त्रिशूल के द्वारा काटा जाना, बहुत ही महत्वपूर्ण है। इसका अर्थ है– भविष्य मैं हमारा ब्रह्मरंध्र तो खुलना निश्चित ही है, इसके

साथ साथ सहस्त्रार चक्र का भी विकास होगा, अर्थात सहस्त्रार चक्र भी खुलेगा। तब तत्त्वज्ञान की प्राप्ति होगी। मगर अनुभव में अज्ञानता के कारण सिर के ऊपरी भाग को चिपका कर पकड़े हुए खड़ा हूँ।

कुछ दिनों बाद हमारी साधना अपने आप कम होने लगी। मैंने श्री माता जी को पत्र लिखा कि ऐसा क्यों हो गया। श्री माता जी का पत्र कुछ दिनों बाद आया उसमें लिखा था– ‘‘कभी-कभी साधना अपने आप कम हो जाती है, फिर अधिक हो जाती है’’। ऐसा ही हुआ, कुछ समय बाद हमारी साधना अपने आप अच्छी होने लगी तथा तीनों बन्ध भी लगने लगे।

सन् 1990

त्रिशूल

यह अनुभव 7 जनवरी को आया। मैंने ध्यान में देखा– मैं आकाश में उड़ता चला जा रहा हूँ, हमारी गति बहुत ज्यादा तेज है, तेज गति के कारण पृथ्वी हमें दिखाई नहीं दे रही है। रास्ते में ऊँचे-ऊँचे पेड़ों की टहनियाँ व अन्य अवरोध भी मिलते जाते हैं। मगर ये अवरोध हमारा कुछ नहीं कर पाते हैं, बिना अवरोध के उड़ता चला जा रहा हूँ। फिर एक जगह भूमि पर जाकर खड़ा हो जाता हूँ। हमारे सामने पानी बह रहा है, ऐसा लग रहा था जैसे छोटी सी नदी में पानी बह रहा है, पानी के बहने की गति तीव्र है, मैं किनारे खड़े होकर कहता हूँ– *"अगर में चाहूँ तो इस धारा को रोक सकता हूँ"।* मैं अपना दाहिना हाथ ऊपर की ओर उठाता हूँ, और जोर से *'ॐ'* शब्द का उच्चारण करता हूँ। उसी समय हमारे हाथ में चमचमाता हुआ त्रिशूल आ जाता है, त्रिशूल तपे हुए लोहे की भाँति सुर्ख लाल है, त्रिशूल से प्रकाश निकल कर चारों ओर फैल रहा था। त्रिशूल को मैं पानी की धारा के बीच में फेंकना चाहता हूँ, जिससे पानी की धारा रुक जाये, मगर उसी समय आकाश से आवाज सुनाई देती है–*"नहीं, तुम ऐसा नहीं करोगे, भविष्य में तुम इस प्रकार के कार्यों में शक्ति का प्रयोग नहीं करोगे"।* मैंने आकाश की ओर देखा और फिर त्रिशूल को देखा। फिर मेरे मुँह से ओंकार शब्द का उच्चारण होने लगा, ओंकार का उच्चारण होते ही त्रिशूल अदृश्य हो गया।

अर्थ- साधकों! योग के अभ्यास करने की गति तेज है इसीलिए मैं उड़ता हुआ चला जा रहा हूँ, कोई अवरोध मुझे रोक नहीं पाता है। पानी की धारा– स्थूल जगत का स्वरुप है। हमारे अभ्यास में यही अवरोध स्वरुप है अर्थात संसार रूपी अवरोध बड़ी तेज गति से बह रहा है। त्रिशूल– शक्ति का स्वरूप है। अपने स्थूल अवरोधों को मैं शक्ति के द्वारा रोकना चाहता हूँ, मगर ऐसा करने के लिये मुझे रोका जा रहा है।

कण्ठचक्र से ब्रह्मरंध्र तक

यह अनुभव हमें 17 फरवरी को आया, मैंने ध्यानावस्था में देखा– हमें अपने सिर के अन्दर का भाग दिखाई दे रहा है। सिर के अन्दर कण्ठचक्र से आज्ञाचक्र व ब्रह्मरंध्र तक का मार्ग दिखाई दे रहा है। पहले मुझे कण्ठचक्र दिखाई दिया, कण्ठचक्र पर स्थित ग्रंथि भी दिखाई दे रही थी, वह ऊपर जाने का मार्ग अवरोध किये हुए थी। यहाँ पर अत्यन्त सकरा-सा मार्ग खुला हुआ था, उसी सकरे मार्ग से प्राण वायु थोड़ी सी ऊपर की ओर चली जाती थी। शेष प्राण वायु कण्ठचक्र पर ही रुक जाती थी। कण्ठचक्र के ऊपर तीन मार्ग थे, एक– एक मार्ग कण्ठचक्र से बिलकुल सीधा ऊपर की ओर जाता था जो ब्रह्मरंध्र के द्वारा पर पहुँचता था। दूसरा– एक मार्ग पूर्व की ओर जाकर आज्ञा चक्र पर आता था फिर आज्ञा चक्र से ऊपर की ओर घुमावदार उठता हुआ ब्रह्मरंध्र द्वार पर आता था। तीसरा– एक मार्ग कण्ठचक्र से सिर के पश्चिम भाग से होता हुआ ब्रह्मरंध्र द्वार तक आता है। कण्ठचक्र से ब्रह्मरंध्र द्वार तक तीन मार्ग होते हैं। इन मार्गों पर कुण्डलिनी क्रमशः गमन किया करती है।

आज्ञाचक्र को मैंने गौरपूर्वक देखा, आज्ञाचक्र के पीछे की तरफ अण्डाकार प्रकाश खड़े आकार में दिखाई दिया। मैं बाद में समझ गया कि यह अण्डाकार प्रकाश मेरा तीसरा नेत्र है, फिर ब्रह्मरंध्र द्वार पर देखा, वह पूरी तरह से बन्द था।

ज्योति

अब हमें अनुभव बहुत कम आते है। मैं ज्यादातर अभ्यास में ही लगा रहता हूँ, श्री माता जी ने पहले कहा भी था अब अनुभव नहीं आने चाहिए। यहाँ पर जो अनुभव लिख रहा हूँ वह 4 सितम्बर को आया था। यह अनुभव ध्यान में अथवा स्वप्नावस्था में नहीं आया बल्कि प्रत्यक्ष आया था– मैं और मेरी छोटी बहिन बातें कर रहे थे, शाम के 8 बजे होंगे। तभी मुझे 2-3 मीटर दूर मोमबती की लौ के समान प्रकाश दिखाई दिया, मैंने बातें करनी बन्द कर दी, चुपचाप उस लौ को देखने लगा। ऐसा लग रहा था, जैसे चित्त के अन्दर दीप शिखा के समान लौ का दर्शन होता है, उसी की तरह यह प्रकाश था। मैं उस ज्योति को टकटकी लगाए हुए देख रहा था, कुछ समय तक वह ज्योति स्थिर रही फिर मुझसे दूर हटती हुई अन्तरिक्ष में ऊपर की ओर चली गयी। ऊपर जाकर हमारी दृष्टि से ओझल हो गयी।

इस प्रकार का प्रत्यक्ष अनुभव जीवन में पहली बार आया, ऐसे अनुभव पर लोग कम विश्वास करेंगे मगर यह अनुभव सत्य है, मैं इन स्थूल आँखों से ज्योति को कुछ क्षणों तक देखता रहा था। इसी प्रकार का अनुभव 19 नवम्बर को आया, मैं रात्रि के समय कमरे में लेटा हुआ था, मुझे कमरे की छत पर प्रत्यक्ष रूप में तेज प्रकाश का बिन्दु दिखाई देने लगा था, फिर शीघ्र ही वह ज्योति के रूप में परिवर्तित हो गया, यह ज्योति भी पहली जैसी ज्योति के समान स्वरुप वाली थी।, मैं बहुत समय तक ऊपर की ओर ज्योति को देखता रहा। फिर वह ज्योति ऊर्ध्व होकर ऊपर अंतरिक्ष में चली गयी और अदृश्य हो गयी। अबकी बार विशेषता यह थी कि मैं कमरे के अन्दर लेटा हुआ था, ज्योति ऊपर की ओर छत पर दिखाई दे रही थी, फिर अंतरिक्ष में जाकर अदृश्य हो गयी। उस समय कमरे की छत का हमें आभास नहीं हो रहा था, हमारे मन की एकाग्रता ज्योति पर थी। जब ज्योति अंतरिक्ष में जाकर अदृश्य हुई, उस समय हमें कमरे की छत दिखाई देने लगी। पहले कमरे की छत क्यों नहीं दिखाई दी थी, ये अनुभव हमारी जिन्दगी के विशेष प्रकार का हैं क्योंकि स्थूल नेत्रों से मैं ज्योति और सम्पूर्ण दृश्य देख रहा था।

अतृप्त जीवात्माएँ

आजकल मेरा अतृप्त जीवात्माओं से सम्पर्क बहुत हुआ करता था, स्वयं अतृप्त जीवात्माएँ हमारे पास आया करती थी और अपनी बात मुझे बताया करती थी। इसलिए मैंने किसी भी अतृप्त जीवात्मा के विषय में स्पष्ट नहीं लिखा है, क्योंकि इनकी संख्या बहुत ज्यादा हुआ करती थी। इस पुस्तक में ऐसा लिखना उचित नहीं समझा है, मगर मैं यहाँ पर एक अतृप्त जीवात्मा के विषय में लिखता रहा हूँ– यह लड़की दिल्ली में हमारे साथ काम किया करती थी, हालाँकि हमारी इस लड़की से उस समय भी ज्यादा बातचीत नहीं होती थी, क्योंकि उसका काम रिसेप्शनिस्ट का था। सितम्बर का महीना था, उस समय मैं घर में अकेला रहता था, सुबह का ध्यान करके मैं लेट गया था। तभी मुझे नींद आ गयी। मैंने स्वप्नावस्था में देखा– वही लड़की हमारे पास आ गयी, हमारे सामाने आकर खड़ी हो गयी। मैं आश्चर्यचकित होकर बोला– “उमा तुम”। मेरा इतना कहते ही वह रोने लगी। मैं फिर बोला– “तुम तो मेरी बहिन की तरह हो, क्यों रो रही हो मुझे बताओ”। फिर वह लड़की मुझसे लिपट गयी और बिलख-बिलखकर रोने लगी। मैंने पूछा– “उमा तुम्हें क्या परेशानी है मुझे बताओ”। वह बोली– “मुझे भूख लगी है”। मैं बोला– “घर के अन्दर चली जाओ, जो कुछ रखा हो खा लेना”। उमा घर के अन्दर चली गयी,

कुछ समय के बाद मैं भी घर के अन्दर गया तो देखा– उमा खाना खा रही थी, वह मुझे देखकर मुस्कराने लगी। मैंने कहा– "कोई बात नहीं, तुम्हारी जब तक इच्छा हो तब तक यहाँ रहिए"। उमा बोली– "नहीं-नहीं भाई साहब, मुझे अभी दिल्ली वापस जाना है"। मैं बोला– "तुम्हारी जैसी इच्छा हो"। वह लड़की कुछ समय बाद चली गयी, अनुभव समाप्त हो गया। इस घटना के बाद यह लड़की दो बार मेरे पास आयी थी, मगर अब वह प्रशन्न थी, उसे किसी प्रकार का कष्ट नहीं था। मुझे खुशी हो रही थी, वह मेरे द्वारा तृप्त हो गयी था।

इस लड़की के साथ जो मेरा वार्तालाप हुआ वह यहाँ पर नहीं लिख रहा हूँ। उसने अपने विषय में सब कुछ बताया था कि उसकी कैसे मृत्यु हो गयी थी। फिर मैं अप्रैल सन् 1990 में दिल्ली गया था, तब मैंने अपने मित्रों से इस लड़की के विषय में जानकारी की, तब मित्रों ने बताया कि कुछ समय पूर्व उसकी मृत्यु हो चुकी है। मेंने सोचा कि ये अतृप्त जीवात्माएँ कितनी दूरी से जानकारी कर लेती हैं कि मैं साधक हूँ।

जलाशय

आजकल ध्यानावस्था में अक्सर चन्द्रमा दिखाई देता है। चन्द्रमा का स्वरूप अष्टमी तिथि के चन्द्रमा के समान छोटा होता है। यह अनुभव कई बार आया।

यह अनुभव नवम्बर माह में आया, मैं एक जगह खड़ा हूँ, सामने की ओर बहुत ही बड़ा जलाशय है, इस जलाशय का दूसरा किनारा हमें दिखाई नहीं दे रहा है, दूर-दूर तक पानी-ही-पानी दिखाई दे रहा है, मैं जलाशय को गौरपूर्वक देख रहा हूँ। हमसे थोड़ी दूरी पर हमारे सत्संगी मित्र खड़े हुए हैं, वह भी जलाशय को देख रहे हैं। वहीं पर कुछ सत्संगी भाई स्नान कर रहे हैं, मैं सत्संगी मित्र से बोला (उसका नाम नहीं लिखना चाहता हूँ)– "अरे भाई, अन्दर आकार स्नान कर लो"। तो वह सत्संगी भाई बोले– "अन्दर गहराई बहुत ज्यादा है, इसलिए मैं यहाँ पर स्नान कर रहा हूँ"। मैं बोला– "मैं इस जलाशय की गहराई में स्नान करूँगा"। पानी एकदम स्वच्छ था, गहराई स्पष्ट दिखाई दे रही थी, मैंने पानी के अन्दर प्रवेश करना चाहा, तब मैं आश्चर्यचकित हुआ क्योंकि पानी के अन्दर प्रवेश न करके पानी के ऊपर खड़ा हो गया। थोड़ा सा पानी के ऊपर चला और फिर मैं दौड़ने लगा, मेरी दौड़ने की गति बहुत ही तीव्र थी। कुछ समय तक पानी के ऊपर दौड़ता रहा, उस जगह पर पानी स्थिर था। जलाशय का पानी वैसे भी स्थिर रहता है। फिर कुछ क्षणों के लिए मैं रुक गया, क्योंकि सामने बहुत ही तेज धार बह रही थी। मैंने सोचा– पानी की

धार इतनी तेज है कि मैं बह जाऊँगा और हमारी मृत्यु हो जाएगी। मैंने मन में कहा– "मैं मृत्यु से नहीं डरता हूँ, मैं इस धार को पार कर जाऊँगा"। फिर क्या था मैं अत्यन्त तीव्र गति से पानी की धार के ऊपर दौड़ने लगा। किनारा अब भी दिखाई नहीं दे रहा था, मैं धार (पानी) के ऊपर दौड़े जा रहा था। जैसे ही मैंने पानी की धार को पार किया, उसी समय जलाशय का पानी अदृश्य हो गयाऔर किनारा आ गया, मैं भूमि पर खड़ा हो गया। मुझे लगा, मैं बहुत ही दूरी तय करके आया हूँ। इतने में हमें वहीं पर थोड़ी दूरी पर दो साधिकाएँ खड़ी हुई दिखाई दी, इन साधिकाओं से हमारी बहुत ही मित्रता थी। तभी हमारी दृष्टि अपने शरीर पर पड़ी। तो मैंने देखा– हमारे शरीर पर एक भी वस्त्र नहीं है, मुझे अपने आप पर शर्म आ रही थी क्योंकि दोनों साधिकाएँ हमारे पास आ रहीं थी। मैंने देखा वहीं भूमि पर एक गन्दा कपड़ा पड़ा हुआ है,उसे उठाकर लंगोटी के रूप में लगा लिया। तब तक दोनों साधिकाएँ हमारे पास आ गयी और बोलीं– "भाई साहब"। मुझे अपने आप पर लंगोटी के कारण शर्म आ रही थी, इतने में श्री माता जी हमारे सामने आ गयी, अब मेरा मन के अन्दर बुरा हाल था। दोनों साधिकाओं ने श्री माता जी से कहा– "आनन्द कुमार इस तेज धार को पार करके आया है"। श्री माता जी बोलीं– "क्यों आनन्द कुमार, आप इस तेज धार को पार करके आए हो"। मैं बोला– "हाँ श्री माता जी! मैं इस धार को पार करके आया हूँ"। फिर श्री माता जी बोलीं– "क्यों आनन्द कुमार यह गन्दी लंगोटी क्यों लगा रखी है"। मैं कुछ न बोला, शर्म के कारण मेरा बुरा हाल था। मैं सिर को नीचे किए हुए खड़ा था। अनुभव समाप्त हो गया।

मैं मिरज गया था तब यह अनुभव मैंने श्री माता जी को बताया था, श्री माता जी अनुभव सुनकर प्रसन्न हो गयी और मुझसे बोली– "आनन्द कुमार आपको यह अनुभव बहुत अच्छा आया है"। वह साधक जो पानी के अन्दर स्नान करने से मना कर रहा है, वह जीवन में योग नहीं कर पायेगा, आपकी गति योगाभ्यास में बहुत तीव्र है। इसलिए आप तीव्र गति से जलाशय के ऊपर दौड़े जा रहे थे। जलाशय में तेज धार देखकर आपने साहस दिखाया मृत्यु से भी नहीं डरे और पानी की धार को पार कर ली। आप भविष्य में निश्चय ही मृत्यु पर विजय प्राप्त करोगे। आपने गन्दी लंगोटी लगा ली यह अच्छा नहीं किया, यह आपके अन्दर की कमी है, आपका अन्तःकरण और शुद्ध होना चाहिए। आपको भासित नहीं होना चाहिए कि आपके शरीर पर वस्त्र नहीं हैं। यह कमी आपकी भविष्य में निकल जाएगी। श्री माता जी जब हमें इसका अर्थ बता रहीं थी तब उस समय बहुत से साधक बैठे हुए थे। वह साधक भी उस समय उपस्थित था जिसने स्नान करने से मना कर दिया था, वह बहुत दुःखी हुआ। यह सत्य है उसकी साधना बिलकुल नहीं हो रही थी।

सन् 1991

भगवान शंकर

यह अनुभव जनवरी के प्रथम सप्ताह में आया। मैं एक महलनुमा जगह के अन्दर हूँ, यह महल अंतरिक्ष में बना हुआ है, इस महल का रंग पूरी तरह उज्ज्वल सफेद है। ऐसा लगता है कि दीवारें और फर्श संगमरमर से भी सुन्दर किसी वस्तु द्वारा निर्मित है, महल के अन्दर आंगननुमा बहुत अच्छी जगह है। मैं इसी जगह के मध्य में खड़ा हुआ हूँ, इतने में पूर्व दिशा की ओर से बहुत तेज प्रकाश आता हुआ दिखाई दिया। यह प्रकाश मेरे ऊपर भी पड़ने लगा, सारा महल प्रकाश से चमकने लगा। मेरे ऊपर प्रकाश पड़ने से आँखें चकाचौंध हो रही थी, प्रकाश के अतिरिक्त कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। उसी समय हमरी दृष्टि पश्चिम दिशा की ओर गयी, मैंने देखा– मुझसे थोड़ी दूरी पर पश्चिम दिशा में भगवान शंकर अपने वाहन बैल पर सवार हैं। बैल (नादिया) सफेद रंग का ऊँचे कद का हृष्ट-पुष्ट है। भगवान शंकर का रंग हल्का नीला व प्रकाशित है, वह गले में रुद्राक्ष कि मालाएँ और व्याघ्र चर्म पहने हुए हैं। सिर पर बालों का ऊँचा जूड़ा लगा हुआ है, वह हमारी ओर देख रहे हैं। मैंने अपने आप से कहा– "यह तो भगवान शंकर हैं"। इतने में बैल के बाईं ओर एक अद्वितीय सुन्दर स्त्री प्रकट हो गयी, वह बहुत सजी-धजी सी थी। सिर पर सोने का मुकुट मणियों से युक्त लगा हुआ था, सारे शरीर पर दिव्य आभूषण व लाल रंग की साड़ी पहने हुई थी। स्त्री के प्रकट होते ही भगवान शंकर ने उसे अपने आगे बैल की पीठ पर बिठा लिए, बैल पश्चिम दिशा की ओर चल दिया। उसी समय आकाशवाणी हुई– " इस योगी के लिए सारे द्वार खोल दिए जाएँ"। मैंने यह आवाज स्पष्ट सुनी, तब तक नादिया पश्चिम दिशा में जाकर अदृश्य हो गया। मैं देख रहा था प्रकाश अब भी पूर्व दिशा की ओर से आ रहा था तथा हमारे ऊपर भी पड़ रहा था। इतने में बैल पश्चिम दिशा की ओर से आता हुआ दिखाई दिया, बैल हमारे सामने से निकलकर पूर्व दिशा की ओर चला गया। अबकी बार बैल के ऊपर कोई सवार नहीं था, बैल अकेला था। इतने में मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! यहाँ पर योगी शब्द हमारे लिए प्रयोग किया गया है। सारे द्वार खोल दिये जाएँ– इसका अर्थ है हमारे सारे चक्र खोल दिये जाएँ अर्थात भविष्य में हमारे सारे चक्र खुल जायेंगे।

हमारे दो रूप

यह अनुभव जनवरी के प्रथम सप्ताह में आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा– मैं अंतरिक्ष में उड़ता हुआ चला जा रहा हूँ। आगे चलकर ऊँचे बर्फीले पहाड़ मिले, मैं पहाड़ की चोटियों पर अति तीव्र गति से चढ़ा चला जा रहा हूँ। फिर मुझे दिखाई दिया मैं पहाड़ की सबसे ऊँची चोटी पर चढ़ रहा हूँ। जब मैं सबसे ऊपर चोटी पर पहुँचा तब ऐसा लगा, यह चोटी आकाश को छू रही है। मैं खड़ा होकर नीचे की ओर देखने लगा, मुझे लगा मैं बहुत ऊँचाई पर आ गया हूँ, इतने में हमारे सामने दो हाथ प्रकट हो गए, दोनों हाथों की हथेली कुछ देने की मुद्रा में जुड़ी हुई थी। ऐसा लग रहा था कि दोनों हाथ हमें कुछ दे रहे हैं, उन दोनों हाथों को देखकर मैं स्तब्ध रह गया क्योंकि वह हाथ बहुत ज्यादा सुन्दर थे। दोनों हाथों ने सुन्दर चूड़ियाँ पहन रखी थी, वह हाथ किसी स्त्री के थे। मैंने उन दोनों हाथों के सहारे ऊपर की ओर देखना शुरू कर दिया। तब मैंने देखा– मुझसे डेढ़ दो फीट की दूरी पर तथा थोड़ी ऊँचाई पर (सर्वोच्च शिखर पर) एक स्त्री खड़ी हुई है, वह हरे रंग की सितारोंदार साड़ी पहने हुई है। सितारों से प्रकाश निकल कर झिलमिला रहा है, सिर पर मुकुट लगाए है तथा आभूषणों से सुशोभित है। जब मैंने उसका चेहरा देखा तो उस चेहरे ने मुस्करा दिया, मगर मैं चेहरा देखकर दंग रह गया क्योंकि वह मेरा ही चेहरा था, अब मैं आश्चर्य चकित हो गया। ऐसा कैसे हो गया मैं तो पुरुष हूँ, फिर मैं स्त्री के रूप में सामने कैसे खड़ा हो गया हूँ। मैंने गौरपूर्वक स्त्री को देखना शुरू किया, उसके सिर पर बहुत सुन्दर मणियों से युक्त चमकीला मुकुट लगा हुआ था। आँखे बड़ी-बड़ी तेजस्वी थी, नाक और होंठ की बनावट बहुत ही अच्छी व आकर्षक थी। सुन्दर चेहरा, गर्दन बहुत सुन्दर त्वचा वाली थी, गले में मणियों की मालाएँ थी। हरे रंग का ब्लाउज व साड़ी पहने हुए थी, दोनों वस्त्रों में सितारे लगे हुए थे। वक्षस्थल उभरा हुआ था, नाभी के आसपास का शरीर पतला था, निचला भाग हृष्ट-पुष्ट था, हाथ व बाजू बहुत सुन्दर थे, मैं बार-बार उसकी सुन्दरता देखे जा रहा था, वह स्त्री मुस्करा रही थी। उस समय मुझे लग रहा था मैं तो पुरुष के रूप में खड़ा हुआ हूँ। पल भर में मुझे लगा मैं स्त्री के रूप में ऊपर खड़ा हुआ हूँ, हमारे समान स्वरूप वाला पुरुष नीचे ओर खड़ा हुआ है। अब मैं अपना सुन्दर शरीर देखने लगा और सोचने लगा– मैं बहुत सुन्दर स्वरूप वाली स्त्री हूँ। मुझे दिखाई दे रहा था– मेरे सामने मेरे समान पुरुष का शरीर थोड़ी दूरी पर खड़ा हुआ है और हमारी ओर देख रहा है। मैं स्त्री के रूप में खड़ा हुआ चारों ओर का अन्तरिक्ष देख रहा था, फिर मुझे कुछ क्षणों में लगा– मैं पुरुष वाले शरीर में आ गया हूँ, स्त्री वाला शरीर सामने ऊपर की ओर खड़ा हुआ मुस्कराकर हमें कुछ दे रहा है। मैंने अपने दोनों हाथ (अंजुली के आकार में) स्त्री की ओर बढ़ा दिये, तभी उसने भी अपने दोनों हाथों को मेरे सामने कर दिए वह दोनों हाथों

में (अंजुली में) कुछ लिये हुए थी। स्त्री ने हमारे हाथों में कुछ डाल दिया। मगर हमें यह नहीं दिखाई दिया कि उसने क्या दिया है, इतना अवश्य था कि उसने कुछ दिया है। इतने में वह स्त्री अदृश्य हो गयी। मैं नीचे की ओर अपने आप आने लगा। अनुभव समाप्त हुआ।

साधकों! उस समय मैंने इस अनुभव का अर्थ नहीं समझ पाया था। मगर बाद में मुझे इस अनुभव के अर्थ की जानकारी हो गयी थी। अनुभव में मैं स्त्री भी हूँ और पुरुष भी हूँ, मैंने अपने आप को स्त्री शरीर में अनुभूत भी किया था, फिर पुरुष शरीर में आ गया था, आपको मालूम होगा– स्त्री शक्ति का स्वरूप होती है। मैं पुरुष शरीर में हूँ तब इस शरीर की शक्ति, स्त्री रूप में ही दिखाए देगी। इसलिए मैं अनुभव में मैं स्त्री स्वरूप में भी दिखाई दे रहा हूँ। स्त्री शक्ति होती है, शक्तिवान पुरुष होता है। इसलिए मैं दोनों रूपों में दिखाई दे रहा था तथा अनुभूति भी कर रहा था। अनुभव में स्त्री ने मेरे हाथों में मुझे कुछ दिया मगर हमें दिखाई नहीं दिया कि उसने क्या दिया है। शक्तिस्वरूपा स्त्री हमें शक्ति ही देगी। इसका अर्थ है– हमारे अन्दर कुण्डलिनी शक्ति का शीघ्र जागरण होगा, कुछ समय बाद हमारी कुण्डलिनी ऊर्ध्व हो गयी थी। कुण्डलिनी शक्तिस्वरूपा है।

मैंने देखा– ध्यानावस्था में अंतरिक्ष से मेरे ऊपर प्रकाश पड़ रहा है। मैं प्रकाश में स्नान कर रहा हूँ, मुझे अपना सारा शरीर प्रकाश में स्नान करते हुए दिखाई दे रहा था। फिर मुझे चन्द्रमा दिखाई देने लगा, चन्द्रमा का आकार सप्तमी अष्टमी तिथि के बराबर था।

पिछले जन्म के गुरुदेव

यह अनुभव हमें जनवरी के आखिरी सप्ताह में आया था। आजकल मेरी साधना बहुत ही उग्रता से हो रही थी। इसका कारण यह था– आजकल उत्तर भारत में सर्दी बहुत पड़ती है। सर्दी के दिनों में साधना अच्छी होती है, अभ्यास द्वारा प्रकट हुई शरीर की गर्मी, सहन हो जाती है। मैं सुबह 3:30 बजे ध्यान पर बैठा गया था। मेरा गहरा ध्यान लगा हुआ था कि अचानक मूलाधार चक्र में जोरदार वेदना हुई, मेरा गहरा ध्यान टूट गया। हमें अपना होश आने लगा, मैं फिर ध्यान करने लगा। मेरा मन अबकी बार मूलाधार चक्र पर केन्द्रित हो गया क्योंकि मूलाधार चक्र में आग-सी फैली हुई थी। मुझे तीव्र बेचैनी होने लगी, फिर यह आग रीढ़ के सहारे ऊपर की ओर जाने लगी और स्वाधिष्ठान चक्र पर आकार ठहर गयी। मुझे अनुभूति हो

रही थी कि आग ऊपर की ओर चढ़ रही है, इतने में मेरा ध्यान कुछ क्षणों के लिए गहरा हो गया। मैंने ध्यान में देखा- हमारे सामने ऊँचे कद के संन्यासी जी खड़े हुए हैं, उनके सिर के बाल लम्बे-लम्बे थे, दाढ़ी बढ़ी हुई थी। सभी बाल खिचड़ी हो रहे थे अर्थात् आधे बाल पके हुए सफेद थे आधे काले बाल थे। वह मेरे सामने खड़े हुए मुझे देख कर मुस्कुरा रहे थे। फिर उन्होंने आशीर्वाद मुद्रा में हाथ ऊपर की ओर उठाया। कुछ क्षणों बाद अदृश्य हो गए। वे संन्यासी जी मुझसे कुछ नहीं बोले, और न ही मैं उनसे कुछ बोला था। मेरा अनुभव समाप्त हुआ। फिर सुबह जब दुबारा ध्यान पर बैठा तब हमें यही आग फिर से मूलाधार चक्र में फैली हुई अनुभूति हुई। फिर यह आग रीढ़ के सहारे ऊर्ध्व होने लगी।

अर्थ- अभी मैंने जिस आग का उल्लेख किया। हमारी कुण्डलिनी जागरण की अनुभूति इसी प्रकार से हुई है, क्योंकि हमारी कुण्डलिनी बहुत ही उग्र है। फिर कुण्डलिनी ऊर्ध्व होने की अनुभूति इस प्रकार हुई है। मैंने जिस संन्यासी जी के विषय में उल्लेख किया है– इनके विषय में 5 वर्ष बाद जनवरी 1996 में मालूम हुआ था कि यह मेरे पिछले दो जन्म पूर्व के गुरुदेव जी हैं और मेरे पिताश्री भी थे जो वर्तमान समय में तपलोक में रहते हैं। वह मेरा कल्याण करने आए थे। मगर उस समय उन्होंने मुझे कुछ नहीं बताया था और न ही कोई बात की थी। गुरुदेव मेरी कुण्डलिनी ऊर्ध्व करने के लिए तपोलोक से हमारे पास आए हुए थे। इन गुरुदेव के विषय में फिर किसी जगह आगे लिखूँगा। हमारी कुण्डलिनी फिर कभी भी सुषुप्तावस्था में नहीं गई, क्योंकि पहले दो-तीन बार कुण्डलिनी ऊर्ध्व होकर सुषुप्तावस्था में चली गयी थी। श्री माता जी ने हमें इस विषय में कुछ नहीं बताया था, बल्कि बाद में कहा– "आपको समझ में आना चाहिए"। मगर मुझे उस समय मालूम नहीं हुआ था कि मेरी कुण्डलिनी ऊर्ध्व हो गयी है। प्रिय साधकों! जिस तरह से मुझे अपनी कुण्डलिनी जागरण की अनुभूति हुई है, इस तरह से सभी साधकों को अनुभूति नहीं होती है। मैं पूर्व जन्मों से योगी हूँ इसलिये मेरी कुण्डलिनी अत्यन्त उग्र है, इसकी उग्रता के कारण ही मैं सारे अध्यात्मिक कार्य करता हूँ। बहुत ऐसे भी साधक होते हैं उन्हें अपनी कुण्डलिनी की ज्यादा अनुभूति नहीं होती है।

मिरज की यात्रा

श्री माता जी का पत्र एक वर्ष से नहीं आया था, मैंने जुलाई सन् 1990 में श्री माता जी के साथ दिल्ली से ऋषिकेश की यात्रा की थी। ऋषिकेश में मैं श्री माता जी के साथ स्वामी शिवानन्द आश्रम में

रुका था, उस समय बहुत संख्या में साधक गण आये हुए थे। मगर बहुत दिनों से श्री माता जी का पत्र न आने के कारण मन में थोड़ी अशांति-सी थी। इसलिए मैंने निश्चिय किया अब मैं मिरज जाऊँगा। मेरे पास शिवरात्रि पर्व पर आने के लिये मिरज से पत्र भी आ गया था। मेरे पास उस समय रुपयों का इंतजाम नहीं हो पा रहा था, इसलिए मैंने अपने पिता जी से कुछ रुपये उधार ले लिए और मिरज के लिए चल दिय। मिरज जाते समय रास्ते में जलगाँव दो दिन के लिये रुका था, फिर जलगाँव के कुछ सत्संगियों के साथ मिरज के लिये चल दिया। वहाँ शिवरात्री पर भीड़-भाड़ के कारण श्री माता जी से बात न हो सकी, जब ज्यादातर साधक चले गए तब मैं श्री माता जी से बोला– "ध्यान पर बैठते समय मूलाधार चक्र में बहुत गर्मी होती है। फिर हृदयचक्र तक जलन होने लगती है तथा हृदय का क्षेत्र भी जलने लगता है। मैं समझ नहीं पाया हूँ ऐसा क्यों होता है"।

एक बार ध्यान पर बैठते समय श्री माता जी ने कहा– "आनन्द कुमार आप हमारे सामने ध्यान पर बैठिए"। मैं श्री माता जी सामने ध्यान करने के लिये बैठ गया, ध्यान पर बैठते ही मुझे अनुभूति हुई– मूलाधार चक्र से ऊपर की ओर गर्म लोहे की राड (छड़) की तरह कोई चढ़ने लगी, ऐसा लग रहा था जैसे रीढ़ के आसपास का क्षेत्र जलाती हुई चली जा रही है, फिर हृदयचक्र पर आकर कुछ समय के लिए रुक गयी, कुछ क्षणों बाद हृदयचक्र से ऊपर की ओर रीढ़ के सहारे मांस को जलाती हुई कोई वस्तु ऊपर की ओर चढ़ने लगी है। अब हमारी पीठ बहुत ही गर्म हो रही थी, इससे मुझे कष्ट की अनुभूति होने लगी। मेरा सारा ध्यान इसी ओर आकर्षित हो गया, उस समय ऐसा लगता था कि पीठ की तरह बाजू की नसें भी कोई काटे डाल रहा है। हमारे बाजू व हाथ भी गर्म होने लगे, मुझे इस कष्ट के करण बेचैनी तो बहुत हो रही थी फिर भी लगभग एक घन्टे का ध्यान लगा था। फिर मुझे ध्यान तोड़ना पड़ा क्योंकि सामूहिक मंत्र जाप होने वाला था।

एक बार श्री माता जी व अन्य सत्संगी भाई-बहिन एक साथ भोजन करने के लिए बैठे थे, तब बातों-बातों में मैंने श्री माता जी से पूछा– "श्री माता जी आज ध्यान में हमें बड़ा विचित्र सा अनुभव आया"। श्री माता जी ने बोली– "आपको कैसा अनुभव आया है?" मैं बोला– "मूलाधार चक्र से गर्म लाल लोहे की राड (छड़) की तरह एक रेखा ऊपर की ओर चढ़ती हुई जाने लगी, वह सुर्ख लाल रंग की रेखा हृदय चक्र तक आकर ठहर गयी। फिर कुछ क्षणों बाद वह रेखा हृदय चक्र से ऊपर की ओर जानी लगी। उस लाल रंग की रेखा से इतनी तीव्र जलन हो रही थी, पीठ का ऊपरी भाग बुरी तरह जलने सा लगा था। यहाँ तक कि बाजू की नसें भी जलने सी लगी थी, जैसे-जैसे वह रेखा कण्ठचक्र की ओर जा रही

थी, वैसे-वैसे जलन और तीव्र होकर आसपास फैलती जा रही थी। इतनी तीव्र जलन मैंने कभी महसूस नहीं की है।" श्री माता जी बोलीं– "क्या आपको मालूम नहीं है यह कुण्डलिनी है, कुण्डलिनी ऊपर चढ़ रही है। वह जिस चक्र में पहुँचती है उस चक्र की जड़ता को जलाती चली जाती है और चेतन्यता को बिखेरती हुई आगे की ओर चली जाती है, यह उसी का अनुभव है"।

श्री माता जी की बात सुनकर मैं आश्चर्यचकित हुआ। वहाँ पर और भी साधक बैठे हुए थे, उन सभी साधकों ने भी मेरा अनुभव सुना। फिर कुछ साधकों ने बाद में मुझसे कुण्डलिनी के विषय में पूछा, मैंने उन्हें कुछ और कुण्डलिनी के अच्छे-अच्छे अनुभव सुनाये। कुण्डलिनी कण्ठचक्र तक ऊर्ध्व होने के कारण मैं आंतरिक रूप से बहुत प्रसन्न था। मैं अपनी खुशियाँ दबाए हुए था।

अब श्री माता जी के यहाँ से सारे साधक जा चुके थे। सिर्फ मैं अकेला ही रह गया था। एक दिन श्री माता जी ने हमें कोल्हापुर जाने के लिए कहा, क्योंकि कोल्हापुर में श्री माता जी का कुछ कार्य था। श्री माता जी बोलीं– "कल सुबह शीघ्र यहाँ से निकल जाना और दोपहर के खाने तक वापस आ जाना, फिर एकांत में ध्यान करने के लिए बैठेंगे। मैं आपकी साधना ज्यादा कर दूँगी फिर आपकी साधना औरअच्छी हो जाएगी"। मैं सुबह ही कोल्हापुर के लिए निकाल चल दिया। जिस समय मैं ट्रेन में बैठा हुआ था उस समय कुण्डलिनी ऊर्ध्व होने की अनुभूति मुझे हो रही थी। कुण्डलिनी ऊपर की ओर चढ़ती थी, कण्ठचक्र तक जाकर कुछ क्षणों तक ठहरी रहती थी, फिर नीचे कि ओर उतर कर आ जाती थी। रास्ते में यही होता रहा था, उस समय मैं ध्यान नहीं कर रहा था, सिर्फ चुपचाप बैठा हुआ था। कोल्हापुर पहुँच कर पहले श्री माता जी का कार्य करने में लगा रहा, फिर कोल्हापुर का प्रसिद्ध लक्ष्मीनारायण मन्दिर देखा, यह मन्दिर पौराणिक है और मन्दिर बहुत ही सुन्दर है, फिर कोल्हापुर से मिरज के लिये निकल पड़ा। मै शाम को मिरज आ गया। उस दिन ध्यान करने का अवसर नहीं मिला, दूसरे दिन सुबह पाँच बजे ध्यान करने के लिये बैठा था, तब श्री माता जी मेरे आज्ञा चक्र पर शक्तिपात किया, शक्तिपात करते समय ऐसा लगा कि हमारे मस्तक पर शक्ति प्रवेश हो रही है, इसके बाद गहरा ध्यान लग गया। एक घन्टे का ध्यान लगा, ध्यान समाप्त करके मैं चलने की तैयारी करने लगा, क्योंकि कुछ समय बाद घर वापस आने के लिये ट्रेन पकड़नी थी, मैं शीघ्र ही श्री माता जी की आज्ञा लेकर मिरज रेलवे स्टेशन के लिए चल दिया।

विशाल मगरमच्छ

ध्यानावस्था में एक विशाल जलाशय देखा, उस जलाशय के किनारे बहुत से अपरिचित मनुष्य खड़े हुए हैं, मैं भी उस जलाशय के किनारे खड़ा हुआ हूँ। कुछ क्षणों बाद मैं जलाशय के पानी के ऊपर चलने लगा। थोड़ा सा आगे चलकर पानी के अन्दर नीचे की ओर प्रवेश कर गया और बहुत गहराई में जाकर शांति मुद्रा में वहीं पर बैठा गया। फिर कुछ समय बाद पानी के ऊपर निकल आया और पानी के ऊपरी सतह पर खड़ा हो गया, तभी मैंने देखा– एक मगरमच्छ हमारे सामने तैर रहा है, मैं मगरमच्छ को देख रहा हूँ, वह हमें नहीं देख रहा है, क्योंकि मगरमच्छ के पूंछ का भाग मेरी ओर है। किनारे पर खड़ी भीड़ हमारी ओर देख रही है,उसी भीड़ में कुछ लोग कह रहे थे– अब इसे (मुझे) मगरमच्छ खा जाएगा, मैं दूसरे किनारे की ओर तीव्र गति से पानी की ऊपरी सतह पर दौड़ने लगा। कुछ क्षणों बाद जब हमें दूसरा किनारा मिल गया, फिर मैं उस पार किनारे पर बैठ गया। तभी मुझे दिखाई दिया कि मगरमच्छ मेरा पीछा कर रहा है। वह हमारे पास आ गया, क्षण भर के लिए हमें लगा मगरमच्छ मुझे खा जाएगा, मगर उसी समय मुझे अपने बगल में एक लड़का खड़ा हुआ दिखाई दिया। उस छोटे-से लड़के (लगभग 10-12 वर्ष का) ने मगरमच्छ का मुँह पकड़ लिया, फिर उसने मगरमच्छ का मुँह मुझे पकड़ा दिया। मैंने मगरमच्छ के मुँह में लम्बी सी कील ठोंक दी, कील इतनी लम्बी थी, कि वह नीचे की ओर भूमि में गड़ गयी। मगरमच्छ का मुँह कील में फँस गया था, अब वह छटपटाने लगा। मैं मगरमच्छ को छोड़ कर जलाशय में पानी के ऊपर चलने लगा, फिर मैं उसी जगह पर पहुँचा जहाँ पर यह मगरमच्छ पहले दिखाई दिया था। मैंने देखा– उस जगह पर चार-पाँच मगरमच्छ मेरी ओर तेज गति से आने लगे। मैं मुड़कर एक ओर को भागा ताकि मगरमच्छ हमें पकड़ न पाए, तभी एक मगरमच्छ ने हमें पकड़ लिया और पानी के अन्दर नीचे की ओर खींचना शुरू कर दिया। मैं पानी के अन्दर नीचे की ओर जाने लगा, मुझे लगा कि अब ये मगरमच्छ हमें पानी के अन्दर नीचे गहराई में ले जाएगा, उसी समय हमने अपने दोनों हाथ ऊपर की ओर उठाए और मुँह ऊपर आकाश की ओर किया। फिर मैं जोर से ओंकार करने लगा, ओंकार इतना जोर से किया कि हमारी आवाज आकश में गूँजने लगी। ओंकार बोलते समय मेरा मुँह खुला हुआ था, हमारे मुँह से प्रकाश की किरणें निकल रही थीं, वह आकाश को भेदती हुई ऊपर की ओर चली जा रही थी। उस समय मैं अपने मन में सोच रहा था, हमारी आवाज भगवान शंकर तक पहुँचे। मैं लगातार जोर से ओंकार किए जा रहा था, वह प्रकाश की किरणें अति तीव्र गति से ऊपर की ओर चली जा रही थी, मुझे मालूम नहीं है वह प्रकाश की किरणें कितनी ऊपर तक गयी होगी। कुछ समय बाद मेरे मुँह से ओंकार शब्द निकलना बन्द

हो गया, मगर मेरा मुँह अभी खुला हुआ था। आकाश में ओंकार की ध्वनि बराबर गूँज रही थी। मुझे आश्चर्य हुआ कि मैं ओंकार बोल नहीं रहा हूँ, फिर भी ओंकार की ध्वनि कहाँ से आ रही है। मैंने देखा– मेरे मुँह से निकली प्रकाश की किरणों के बीच में ऊपर की ओर से छोटे-छोटे प्रकाश बिन्दु चले आ रहे हैं। वह प्रकाश बिन्दु हमारे मुँह के अन्दर प्रवेश कर गए,रहे हैं, मेरे अन्तःकरण से आवाज आयी– "ये प्रकाश बिन्दु भगवान शंकर के यहाँ से आ रहे हैं"। मुझे दिखाई दिया– "अंतरिक्ष में भगवान शंकर समाधि मुद्रा में बैठे हुए हैं"। जैसे ही ऊपर की ओर से आये हुए प्रकाश बिन्दु हमारे मुँह के अन्दर प्रवेश किये, उसी समय मगरमच्छ ने हमें छोड़ना शुरू कर दिया और धीरे-धीरे छोड़ दिया। मैं फिर पानी के ऊपर चलने लगा और यह सोचने लगा, अब मैं निर्भय होकर पानी पर विचरण कर सकता हूँ। जब मैं पानी के ऊपर इधर-उधर घूम रहा था तब भी वही पर वे मगरमच्छ उपस्थित थे। मगर मुझे उनसे बिलकुल डर नहीं लग रहा था और न ही मगरमच्छ हमारी ओर देख रहे थे।

अर्थ- साधकों! ये मगरमच्छ राग, द्वेष, लोभ, मोह, तृष्णा आदि का प्रतीक हैं। जलाशय– स्थूल जगत का प्रतीक है। अनुभव में मैंने मगरमच्छ के मुँह में कील ठोक दी है– इसका अर्थ हुआ हमें लोभ मोह आदि प्रभवित नहीं कर सकेंगे। मगर दुबारा दूसरे मगरमच्छ ने हमें पकड़ लिया, फिर ईश्वर के कृपा से उसके भी प्रभाव से मुक्त हो गया। अंत में सभी विकारों से मुक्त होकर मैं संसार में विचरण करूँगा, ऐसा अनुभव में हमारे भविष्य के विषय में दिखया गया है।

कुण्डलिनी सम्बन्धी अनुभव

मुझे एक अनुभव आया, मैं चला जा रहा हूँ, सामने ओर एक कमरा जैसा मकान मिला। मैं उस कमरे के अन्दर चला गया, वहाँ पर कुछ व्यक्ति व महिलएँ बैठी हुई थीं, सभी आँखें बन्द किये हुए ध्यानावस्था में बैठे हुए थे। कुछ क्षणों तक मैं चुपचाप खड़ा रहा, फिर मैं सामने ओर ऊँचे स्थान पर बैठी हुई वृद्ध स्त्री के पास गया और वहीं पर बैठ गया, सभी ने आँखें खोल दीं। वह वृद्ध स्त्री वहाँ की प्रधान थी, वह स्त्री उन पुरुषों से बात करने लगी। क्या बातें कर रही थी, मैं नहीं समझ सका, क्योंकि अपरिचित भाषा में बात कर रही थी। कुछ क्षणों बाद मैंने उस वृद्ध स्त्री से पूछा– "माँ, आप मेरे विषय में क्या बात कर रही थीं?" वह बोली– "मैं आपके बारे में कह रही थी कि यह साधारण पुरुष नहीं है। मैं देख रही हूँ इसकी कुण्डलिनी ऊर्ध्व होती है, भविष्य में यह महान पुरुष बनेगा।" मैंने पूछा– "माँ, हमारी दिव्यदृष्टि कब

खुलेगी?" वह वृद्ध स्त्री पहले चुप हो गयी फिर आँख बन्द करके बोली– "आपकी दिव्यदृष्टि खुलने में अभी लगभग एक वर्ष लग जाएगा। उससे पहले आपको कुछ छोटी-छोटी सिद्धियाँ भी मिलेंगी"। मेरा अनुभव समाप्त हो गया। इस वृद्ध स्त्री की भविष्यवाणी कितनी सत्य है, यह भविष्य ही बताएगा। उसने इतना अवश्य सत्य कहा था कि मेरी कुण्डलिनी ऊर्ध्व होती है।

आज 5 मार्च है, आज ध्यानावस्था बहुत अच्छा अनुभव आया– श्री माता जी छड़ी पकड़े हुए, छड़ी के सहारे चली आ रही हैं। वह मेरे सामने थोड़ी ऊँची जगह पर बैठ गईं, मुझे बहुत प्रसन्नता हो रही थी। मैंने श्री माता जी को प्रणाम किया, उसी समय श्री माता जी ने अपना दाहिना पैर ऊपर की ओर उठाया, फिर पैर के अँगूठे को हमारी भृकुटी पर स्पर्श करके ओंकार किया। ओंकार करते ही मुझे महसूस होने लगा कि हमारे शरीर के अन्दर शक्तिपात हो रहा है, श्री माता जी ने तीन बार ओंकार किया। फिर मुझसे बोलीं– "आनन्द कुमार आपकी साधना धीरे-धीरे ही आगे की ओर बढ़ेगी, साधना कोई ऐसी वस्तु नहीं है कि एकदम कुछ समय में पूर्ण हो जाएगी, उन्होंने हमारी पीठ को थपथपाई, फिर वह अदृश्य हो गयी। मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

आजकल ध्यानावस्था में उड्डीयान बन्ध, जालंधर बन्ध और आंतरिक कुम्भक सभी एक साथ मिलकर बहुत जोर से लगते है। उस समय श्वांस बाहर निकलने का नाम नहीं लेता है, इस क्रिया से स्थूल शरीर को बहुत कष्ट होता है। मगर कुण्डलिनी ऊर्ध्व होने में सहायता मिलती है, जब कुण्डलिनी हृदयचक्र से ऊपर जाती है, तब बड़ा कष्ट होता है। ऐसा लगता है पीठ के ऊपर की ओर की नसें काटे दे रही हैं। इस कारण हल्का-हल्का दर्द सा होता है। पीठ भी बड़े जोर से गर्म होती है।

आजकल कुण्डलिनी शक्ति के बहुत दर्शन होते है, ज्यादातर अनुभव में बादलों के बीच चमकती हुई बिजली के रूप में दिखाई देती है, स्वप्न में पीले नाग के रूप में दिखती है, कभी-कभी ध्यानावस्था में शिवलिंग पर लिपटी हुई दिखाई देती है। फिर कुण्डलिनी शिवलिंग से अपना चक्कर खोलना शुरू कर देती है और ऊपर की ओर चढ़ती हुई चली जाती है। शिवलिंग पर दो चक्कर लिपटे शेष रह जाते है। इस अवस्था में पीठ पर जलन, चीटियों की तरह काटना या रेंगना और जैसे ब्लेड से नसें काटी जा रही हो ऐसी अनुभूति होती है।

6 मार्च की रात्रि को निद्रावस्था में अनुभव आया– चारों ओर प्रकाश फैला हुआ है। उसी प्रकाश के अन्दर एक बहुत तेज रेखा चमकती हुई दिखाई दी, उसी समय हमारे शरीर के अन्दर नस चटकने की

जोर से आवाज सुनाई दी। ऐसा लगा– जैसे किसी ने कोई नस तोड़ दी हो, नस टूटने की आवाज से मैं जाग गया और उठकर बैठ गया। उस समय हमारी पीठ तवे के समान गर्म हो रही थी, पेट में गर्मी अधिक हो जाने के कारण ऐसा लग रहा था, जैसे पेट जला जा रहा है। पूरी गर्दन के क्षेत्र में आग जैसी फैली हुई थी, गर्दन के आसपास हल्का-सा दर्द भी हो रहा था, जैसे नसें काटी गयी है। मुझे लेटे हुए ही अनुभूति हो रही थी, कुण्डलिनी गर्दन तक आ गयी है क्योंकि कुण्डलिनी चढ़ी हुई थी। आजकल ऐसा भी होता था, मेरे सो जाने के बाद कुण्डलिनी ऊर्ध्व हो जाती है। जब पीठ अधिक गर्म हो जाती थी तब हमारी नींद अपने आप खुल जाती थी। फिर मैं उठकर थोड़ी देर में ध्यान पर बैठ जाता था।

जब मैं ध्यान पर बैठता था तब मेरी गर्दन पीछे की ओर चली जाती थी। ऐसा लगता था– जैसे गर्दन में कुछ फँसा हुआ है, उसी समय गर्दन के अन्दर चीटियाँ सी काट रही है। साँसें भी तेज चलने लगती थीं, कभी-कभी ध्यानावस्था में जीभ तालू से चिपक जाती थी। ऐसा लगता है मानों जीभ उल्टा मुड़कर गले के अन्दर चली जाएगी। जीभ में अन्दर जाने के लिए बुरी तरह खिंचाव होता था। कभी-कभी ध्यानावस्था में जीभ मुँह से बाहर निकल आती थी, जैसे सर्प अपनी जीभ मुँह के बाहर निकालता है, ऐसे ही हमारी जीभ बाहर निकलकर लपलपाती थी तथा बाहर इधर-उधर को होती थी। कभी-कभी खाना खाते समय ही ध्यान लग जाता था, मैं भोजन की थाली अलग रख देता था और ध्यान करने लगता था।

यमदूत

एक बार अनुभव आया हमारे सामने 5-6 पुरुष खड़े हुए हैं। पुरुषों का रंग काला है, मगर उनके मुँह पर बहुत तेज है, आँखों से भी तेज निकल रहा है, उनकी आँखें हल्के लाल रंग की हैं, पुरुष काले होते हुए भी आकर्षक लग रहे थे। उनका शरीर गठीला व सुडौल था, उनकी बाजू शक्तिशाली जैसी दिखाई दे रही थी। सभी काले रंग के पुरुष हमें देख रहे थे और मैं उन्हें देख रहा था। मेरे अन्दर विचार आया– अगर ये लोग आगे बढ़े और हमसे कुछ बोले, तो मैं अवश्य ही इनकी पिटाई कर दूँगा, मैं स्वयं चलकर उनके पास गया और आगे की ओर बढ़ा, मगर वह कुछ नहीं बोले और नहीं मैं कुछ बोला। मैं भी उन सभी को घूर रहा था, वह सभी मुझे भी घूर रहे थे। कुछ क्षणों बाद वह सभी पुरुष वापस चले गए, मेरा अनुभव समाप्त हो गया। अर्थ- साधकों! यह पुरुष यमदूत थे, मगर हमारी और उनकी आपस में बातें नहीं हुई थी।

मुझे ध्यानावस्था में अनुभव आया– मेरे सामने बहुत ऊँचाई वाला पहाड़ है, मैं उस पर चढ़ रहा हूँ। जब बहुत ऊँचाई पर चढ़ जाता हूँ, तब फिर नीचे की ओर फिसल जाता हूँ, बार-बार यही क्रिया कर रहा हूँ। जिस जगह तक चढ़ जाता हूँ, उससे ऊपर पहाड़ की सीधी ऊँचाई दिखाई दे रही है। उसे देखकर लगता है इस पहाड़ पर कैसे चढ़ा जाएगा, मगर तब तक फिसलकर नीचे आ जाता हूँ। यह पहाड़ बर्फीला नहीं है, हल्का काले रंग के पदार्थ से बना हुआ है। उस पहाड़ में रेत जैसे छोटे-छोटे कण भी चमक रहे हैं, इन कणों की चमक बहुत तेज है। पहाड़ की ऊपरी परत काली मिट्टी जैसी प्रतीत होती है। इतने में अनुभव समाप्त हो जाता है।

अर्थ- यह अनुभव कण्ठचक्र का है, कण्ठचक्र से ऊपर का मार्ग बिलकुल सीधा होता है इसलिए पहाड़ ऊपर की ओर सीधा दिखाई दे रहा है। मेरा प्राण व कुण्डलिनी कण्ठचक्र तक जाते हैं, फिर वापस नीचे लौट आते हैं। इसलिए मैं पहाड़ पर चढ़ता हूँ, और फिर वहीं से फिसल जाता हूँ। ऐसी क्रिया बराबर कर रहा हूँ।

कुण्डलिनी शक्ति का सहयोग

ध्यानावस्था में देखा– मैं किसी सँकरी जगह में खड़ा हूँ, चारों ओर अंधकार है। इसलिए मुझे कुछ दिखाई नहीं दे रहा है, उस अंधकार में मेरे सिर के ऊपर की ओर एक सँकरा छिद्र है। उस छिद्र से ऊपर की ओर प्रकाश दिखाई दे रहा है। मैं जिस जगह पर खड़ा हुआ हूँ, वहाँ पर इधर-उधर कोई रास्ता नहीं है, बस एक ही रास्ता दिखाई दे रहा है। यही ऊपर वाला छिद्र ही रास्ते के रूप में है, इस छिद्र को मैंने ऊपर की ओर दृष्टि करके गौरपूर्वक देखा। फिर सोचा– इसी छिद्र से ऊपर की ओर जाया जाए। मैं अपने पैरों से जोर लगाकर ऊपर की ओर उछला, कि एक बार में ही ऊपर के ओर चला चला जाऊँ, मगर मैं छिद्र में फस गया। फिर ऊपर जाने के लिये मैंने बहुत जोर लगाया, कि मैं ऊपर चला जाऊँ, मगर ऊपर की ओर नहीं जा सका। मैं अब नीचे भी नहीं आ सकता था, क्योंकि सँकरी जगह में फँसा हुआ था। हमारे पैर नीचे की ओर लटक रहे थे। कुछ देर तक मैंने बहुत जोर लगाया मगर ऊपर जाने के लिये सफलता नहीं मिली। इतने में मैंने नीचे की ओर देखा– "एक स्त्री हमारे पैरों पर नीचे से ऊपर की ओर को जोर लगा रही थी कि मैं ऊपर चला जाऊँ"। मैं स्त्री को देखकर आश्चर्य में पड़ गया, क्योंकि नीचे सिर्फ मैं ही खड़ा हुआ था, यह स्त्री कहाँ से आ गयी। मैंने स्त्री को गौरपूर्वक देखा– वह स्त्री बहुत सुन्दर थी, सोने का ऊँचा सा मुकुट धारण

किये थी, लाल रंग की सितारोंदार साड़ी पहने हुए थी। मैंने सोचा– इतनी सुन्दर स्त्री हमारे पैरों पर धक्का मारकर ऊपर ढकेलने का प्रयास कर रही है। मैं उसी छिद्र में फँसा हुआ था तभी मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! जिस जगह पर मैं खड़ा हुआ हूँ वहाँ पर अंधकार छाया हुआ है– यह कण्ठचक्र का क्षेत्र है, कण्ठचक्र में मार्ग सँकरा-सा होता है। कण्ठचक्र थोड़ा-सा खुला होने के कारण ऊपर की ओर छिद्र दिखाई दे रहा है। कण्ठचक्र से ऊपर का क्षेत्र (सिर वाला भाग) साधक को प्रकाशित दिखाई देता है। कण्ठचक्र पूरा नहीं खुला होने के कारण मैं ऊपर की ओर नहीं जा पा रहा हूँ। बहुत प्रयास करने पर भी उस सँकरे क्षेत्र में फँस गया था, जब तक मार्ग पूरा नहीं खुला हो तब तक ऊपर नहीं जाया जा सकता है। जो स्त्री हमें ऊपर के लिए धक्का मार रही है वह माता कुण्डलिनी है। फिर भी मैं ऊपर न जा सका। क्योंकि इस जगह पर मार्ग सँकरा सा होता है तथा यहाँ पर ग्रंथि के कारण मार्ग बन्द सा भी रहता है। इसीलिए साधकों को यहाँ से आगे का मार्ग प्रसस्त करने में बहुत समय लग जाता है। इस अनुभव में दिखाई देता रहा है– कुण्डलिनी भी मार्ग बनाने में सहायता कर रही है। इस समय मेरा कण्ठ चक्र धीरे-धीरे खुल रहा है, यही दिखाया गया है।

आजकल हमारी भृकुटी पर भी क्रियाएँ सी हुआ करती है। ऐसा लगता है अन्दर से भृकुटी हिल रही है या धीरे-धीरे हथोड़े से ठोका जा रहा है। कभी-कभी भृकुटी पर कम्पन हुआ करता है। ऐसी अवस्था में मेरा मन भृकुटी पर एकाग्र हुआ करता है। कभी-कभी लगता है, मूलाधार चक्र गर्म होकर भृकुटी तक खिंचाव करता है। ध्यान समाप्त होने का नाम ही नहीं लेता है।

आज 10 मई को ध्यानवस्था में अनुभव आया– कोई हमारे मस्तक को बड़ी जोर से नोंच रहा है, मुझे पीड़ा होने लगी, थोड़ी देर में मुझे लगने लगा कि मस्तक दो भागों में बंट गया। आधा भाग किसी ने नोंच डाला, आधे भाग में पीड़ा हो रही थी। मैं बोला– “मेरा मस्तक क्यों नोंच डाला”। उसी समय मेरी आँखें खुल गयी, मुझे महसूस हो रहा था कि मस्तक पर जोर-जोर से चींटियां काट रही हैं।

अर्थ- यह क्रिया प्राण वायु के दबाव के कारण होती है तथा कुण्डलिनी द्वारा भी नाड़ी शुद्ध के होने लगती है वह उस क्षेत्र की जड़ता नष्ट कर देती है और चैतन्यता बिखेर देती है।

यह अनुभव मई के अंतिम सप्ताह में आया। ध्यानवस्था में देखा– मेरा शरीर बहुत बड़ा हो गया है, मेरा सिर आकाश के अन्दर प्रवेश कर गया है। पृथ्वी मेरे पैरों के नीचे दबी हुई है, मैंने नीचे की ओर देखा–

पृथ्वी को पैर के तलवे से दबा रखी है। मेरी दृष्टि पृथ्वी की भोगोलिक स्थिति पर गयी, तब मैं बोला– "यह उत्तरी अमेरिका है,और यह दक्षिणी अमेरिका है, सोवियत संघ, चीन, भारत, जापान आदि देश की भौगोलिक स्थिति देखी। चन्द्रमा-तारे नक्षत्र आदि हमारे शरीर के मध्य भाग में स्थित हैं"। मुझे ऐसा लगा– मैं सम्पूर्ण अंतरिक्ष में व्याप्त हूँ, इस अनुभव में मेरा शरीर व्यापक होते हुए दिखाया गया है, जैसा विराट स्वरूप होता है।

मैंने शक्तिपात किया

जून का प्रथम सप्ताह था, हमारे घर में छोटी बहिन की शादी थी। कुछ कारणों से शादी में खींचातानी हो गयी, आखिरकार बारात वापस चली गयी। सारा घर और रिश्तेदार दुःखी हो रहे थे, मैं भी दुःखी-सा था। उसी समय हमारी दृष्टि बहिन की ओर गयी, वह चुपचाप लेटी हुई थी, सब लोग अपनी-अपनी राय दे रहे थे। मैं बोला– "अब वही होगा जो बहिन चाहेगी"। मैं नहीं जानना चाहता हूँ कि बहिन क्या चाहती है, मैं भी बहिन के पास बैठ गया और बोला– "तुम अपने मन में सोच लो, तुम क्या चाहती हो, मैं शक्ति का प्रयोग करूँगा"। बहिन कुछ नहीं बोली, मैंने अपने घर वालों और रिश्तेदारों के सामने ही बहिन के मस्तक पर शक्तिपात किया। हमारे घर में उस समय शादी के कारण भीड़-भाड़ थी, सभी सदस्य हमारी ओर देख रहे थे। उनकी समझ में नहीं आ रहा था, मैं क्या कर रहा हूँ।

दो दिन बाद लड़के (जिसके साथ शादी हो रही थी) के पिताजी आए, उन्होंने अपनी गलती स्वीकार की। एक सप्ताह बाद शादी होना स्वीकार हुआ। जब शादी होने लगी, तब हमारी बहिन का स्वास्थ्य ज्यादा खराब हो गया था, वह अपने सहारे बैठ भी नहीं सकती थी, उसे तेज बुखार आ रहा था और कमजोरी भी हो रही थी। इलाज का कोई खास असर नहीं हो रहा था,उसके फेरे पड़ने वाले थे। बहिन बैठ नहीं पा रही थी, एक स्त्री बहिन को पकड़कर बैठी हुई थी। फिर भी वह (बहिन) एक ओर को कमजोरी के कारण लुढ़क गयी। उस समय मैं बहिन के पास गया, जिस स्त्री ने बहिन को पकड़ रखा था, मैंने उससे कहा– "आप इसे छोड़ दीजिए"। स्त्री बोली– "यदि मैं इसे छोड़ दूँगी तो यह गिर जायेगी"। मैं बोला– "अब यह नहीं गिरेगी, बल्कि स्वस्थ हो जायेगी"। फिर मैंने बहिन के आज्ञाचक्र पर शक्तिपात किया, मुश्किल से आधा मिनट से कम समय लगा होगा, बहिन ठीक तरह से बैठ गयी। बहिन स्वयं बोली– "दादा (भैया) मैं बिलकुल ठीक हो गयी हूँ"। अब बहिन का बुखार भी उतर गया और उसकी कमजोरी भी

समाप्त हो गयी,वह बिल्कुल स्वस्थ हो गयी थी। फिर उसके फेरे पड़ने लगे। ऐसा लग रहा था कि बहिन कभी बीमार ही नहीं हुई थी। सभी लोग देख रहे थे, कि मैंने क्या किया है यह बहिन ठीक हो गयी। पंडित जी ने (पुरोहितजी) बाद में कहा– "सच है भक्ति में शक्ति होती है, वह आज मैंने देख लिया है"।

अर्थ- साधकों! योगी चाहे तो किसी रोग को अति शीघ्रता से ठीक कर सकता है। जिस रोग को डॉक्टर ठीक करने में बहुत समय लगते हैं। कई दिनों से डॉक्टर हमारी बहिन को ठीक नहीं कर पा रहा था। मैंने भीड़ के सामने कुछ सेकेण्ड में ठीक कर दिया था। शक्तिपात करके उसका बुखार उतार दिया, और उसकी कमजोरी ठीक कर दी।

मैं मिरज आ गया

मेरा मन सदैव साधना के विषय में सोचता रहता था। जून के मध्य से हमारे अन्दर विचार आने लगे कि अब मैं यह घर को छोड़ दूँगा, कहीं और जाकर साधना करूँगा, क्योंकि घर में जब तक पिताजी हैं, तब तक कलह होना निश्चित है। वह जान बूझकर हमारे रास्ते में अवरोध डालते थे। मैं यह तो जानता था कि इन्हें कभी-न-कभी अपना कर्म भोगना ही होगा, लेकिन अभी मेरी साधना के लिए अवरोध बने हुए हैं। मैंने कुछ लोगों से अनुरोध किया कि मैं आपके खेतों की रखवाली करूँगा, उसके बदले में हमें सिर्फ भोजन चाहिए, मैं अपनी साधना करना चाहता हूँ। मगर इसके लिये कोई भी व्यक्ति राजी नहीं हुआ, बल्कि बहुत से लोगों ने मेरा मजाक उड़ाया। ऐसा इसलिए सम्भव नहीं हुआ, क्योंकि मैं ऊँची जाति वाला हूँ। हमारे पिता श्री के पास भी काफी भूमि है, उन लोगों ने हमारी बात को मजाक समझा। कुछ समय बाद श्री माता जी का पत्र आया उसमें लिखा था– "आप गुरु-पूर्णिमा उत्सव में शामिल होइए"। मैंने शीघ्र ही मिरज जाने के लिये अपनी तैयारी कर ली, फिर 19 जुलाई को घर से मिरज के लिए चल दिया। मिरज जाते समय रास्ते में एक-दो दिन के लिये जलगाँव (महाराष्ट्र) रुक गया था, फिर मैं कुछ साधकों के साथ श्री माता जी के पास मिरज पहुँच गया। गुरु-पुर्णिमा उत्सव पर बहुत से साधक आये हुए थे, तीन-चार दिनों तक साधकों ने गुरु-पूर्णिमा उत्सव मनाया, फिर साधक वापस जाने लगे। श्री माता जी ने कहा– "आनन्द कुमार आप चाहें तो आश्रम में रुक सकते हैं"। उस समय श्री माता जी का आश्रम बन रहा था, इसलिए वहाँ पर किसी साधक का रहना आवश्यक था। आश्रम मिरज शहर से 5-6 किमी दूर बनाया जा रहा था। कुछ लोगों को मालूम हो गया था कि आनन्द कुमार मिरज रुकने वाला है। सभी साधक बन्धु वापस जा

चुके थे, मैं और मेरठ का एक लड़का श्री माता जी के पास रह गये थे। इस लड़के को नौकरी करनी थी, साधना से इसका कोई मतलब नहीं था, नौकरी के लिए रुका हुआ था। श्री माता जी ने मुझसे कहा– "आनन्द कुमार आप सही समय पर यहाँ आ गये हैं, अब यहाँ पर आपकी साधना अवश्य अच्छी हो जाएगी। आप जितनी साधना करना चाहें कर सकते हैं। मैं चाहती हूँ कि आप पूर्ण होकर यहाँ से जाइए। जब आपकी साधना अच्छी हो जाएगी, तब मैं आपको सन्यास की दीक्षा दिलवा दूँगी।" इन शब्दों को सुनकर मैं अति प्रसन्न हुआ। फिर उन्होंने भोजन का सामान देकर हमें आश्रम जाने की आज्ञा दे दी, वहीं पर एक छोटी-सी कुटिया बनी हुई थी। उसकी चाबी हमें दे दी और मुझसे कहा– "आप इस कुटिया में साधना करना"। मैं आश्रम में रहने के लिये आ गया, आश्रम में इमारत बनाने का कार्य चल रहा था। वहाँ पर एक कमरा भी बना हुआ था, साधारण-सी घास-फूस की कुटिया बनी हुई थी, इसी कुटिया में मुझे साधना करनी थी। आश्रम में एक कमरा भी बना हुआ था, इसी कमरे के अन्दर सीमेंट रखी हुई थी, उसी कमरे में मैंने एक तरफ सफाई करके अपना सामान रख लिया और इसी में रहने लगा। मैंने दिन में चार बार ध्यान करने के लिये बैठता था, शुरुआत में मैं 6-8 घन्टे तक ध्यान करता था, प्राणायाम और व्यायाम भी किया करता था। वहाँ पर पेड़ों में रोजाना पानी दिया करता था, नयी बनी हुई इमारत में पानी भी छिड़का करता था। खाना अपना मैं स्वयम् बनाया करता था। यह मेरा रोजाना का काम था, अब हमारी साधना अच्छी होने लगी थी। यहाँ पर अब अक्सर कुण्डलिनी और भगवान शंकर के दर्शन हुआ करते थे।

ध्यानवस्था में अनुभव आया– मैं अंतरिक्ष में खड़ा हूँ, सुनहले रंग का प्रकाश चारों ओर फैला हुआ है। उस समय अंतरिक्ष में न सूर्य है, न चन्द्रमा है, न तारे हैं, प्रकाश स्वयं चारों ओर फैला हुआ है, मैं प्रसन्न हो रहा था और सोच रहा था, यह जगह कितनी अच्छी है। इतने में मुझे 20-25 मीटर की दूरी पर एक पिण्ड दिखाई दिया, वह पिण्ड भी स्वप्रकाशित सा था। प्रकाश बहुत हल्का सा था, वह पिण्ड अपनी जगह पर घूम रहा था। मैं गौर करके उस पिण्ड को देखे जा रहा था कुछ क्षणों बाद मैं पिण्ड की ओर चल कर उसी के ऊपर खड़ा हो गया, उस पर खड़े होते ही मैंने अपने आपको पृथ्वी पर पाया। मैं समझ गया यह पिण्ड तो पृथ्वी है।

मेरी परीक्षा ली गयी

यह अनुभव 14-15 अगस्त का है। ध्यानावस्था में मैंने देखा– मैं अंतरिक्ष में खड़ा हुआ हूँ और इधर-उधर देख रहा हूँ। उसी समय मेरे पास एक स्त्री आ गयी, उस स्त्री ने अपना दाहिना हाथ मेरे कन्धे के ऊपर रख दिया, उसने अपने बाएँ हाथ से मेरा बायाँ हाथ पकड़ लिया, फिर मेरे बाएँ कन्धे से चिपक गयी और चिपके हुए ही हमें लेकर आगे की ओर चलने लगी, मैं भी मंत्र-मुग्ध-सा होकर उसके साथ चल दिया। मैं सोचने लगा– यह स्त्री कौन है? मैं उसके शरीर को गौर पूर्वक देखने लगा, वह स्त्री बहुत ही सुन्दर थी, उसका रंग गोरा था, उसका खूबसूरत चेहरा चमक रहा था, वह स्त्री बहुत ही आकर्षक थी। मैंने सोचा– यह स्त्री मुझे कहाँ लिए जा रही है। मगर मैं उस स्त्री से कुछ नहीं बोला– क्योंकि मैं उसकी सुन्दरता देखे जा रहा था, वह हमारे शरीर से चिपकी हुई और मुस्कराती हुई चली जा रही थी, मुझे उसका स्पर्श अच्छा लग रहा था। थोड़ी दूर आगे चलकर वह खड़ी हो गयी, दोनों आपस में आमने-सामने खड़े हो गये और एक दूसरे को देखने लगे। मैं उसका सुन्दर चेहरा देख रहा था, उसके दाँत बहुत सुन्दर मोतियों के समान थे, दाँतो से चमक निकल रही थी। कभी-कभी जब वह ज्यादा हँसती थी, तब उसके मुँह के अन्दर का भाग दिखाई देने लगता था। वह इस प्रकार के पारदर्शी कपड़े पहने हुए थी कि उसके अन्दर का शरीर स्पष्ट झलक रहा था। फिर उस स्त्री ने मुझसे कुछ कहा (वह शब्द अश्लील थे)। मैं उसके शब्द सुनकर घबरा सा गया, क्योंकि मैंने यह नहीं सोचा था– कि यह स्त्री ऐसे अश्लील शब्द मुझसे कह देगी, मुझे घबराया सा देखकर वह खिलखिला कर हँस पड़ी। मैं उसका मुँह और मोतियों जैसे दाँत देख रहा था, उसकी जीभ भी स्पष्ट दिखाई दे रही थी। चेहरे का तेज सुन्दरता को बढ़ा रहा था, मैंने गहरी दृष्टि उस स्त्री पर डाली। मैं समझ गया यह साधारण स्त्री नहीं है, फिर इस स्त्री ने हमसे ऐसा क्यों कहा, यह हमें बुरा लगा। मैंने उसकी बात को मानने से इन्कार कर दिया, वह एक विशेष मुद्रा में लापरवाह-सी खड़ी हुई थी, हमें उसका भाव अच्छा नहीं लगा। उसने अपने दोनों हाथों से हमारे दोनों हाथ पकड़ लिए, हमारे अति नजदीक खड़ी होकर फिर वही शब्द दोहराए जो पहले कहे थे। मैं फिर से वही शब्द सुनकर अपने हाथ छुड़ाकर जोर से भागा, जब मैं कुछ दूर निकल गया फिर पीछे मुड़कर देखा– वह स्त्री वहीं पर खड़ी हुई मुस्कुरा रही थी। इतने में वह स्त्री तीव्र गति से उड़कर (स्वयं पैरों से नहीं चली) हमारे सामने आ गयी। मुझसे थोड़ी दूरी पर तथा थोड़ी सी ऊँचाई पर स्त्री खड़ी हो गयी, हमारे सामने उसका स्वरूप बदल गया। अब वह माता कुण्डलिनी के स्वरूप वाली हो गयी, उसके सिर पर सोने का मुकुट लगा हुआ था, सितारे लगे हुए लाल साड़ी पहने हुए थी तथा आभूषण आदि से सुसज्जित हो गयी थी। उसने आशीर्वाद मुद्रा में अपना दाहिना

हाथ ऊपर की ओर उठाया और बोली– "भविष्य में तुम महान बनोगे"। मेरा अनुभव समाप्त हो गया। मैं परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया इसलिये कुण्डलिनी शक्ति ने हमें आशीर्वाद दिया।

अर्थ- स्वयं माता कुण्डलिनी ने अपना स्वरूप बदलकर हमारी परीक्षा ले रही थी। क्योंकि वह स्त्री हमसे अश्लील शब्द कह रही थी, मुझे उसकी बात स्वीकार नहीं थी, शायद किसी भी साधक को स्वीकार नहीं होगी। दुबारा वही शब्द कहने पर मैं उस स्त्री से हाथ छुड़ाकर भागा। फिर कुण्डलिनी (वह स्त्री) हमारे सामने आकार अपने वास्तविक स्वरूप में आ गयी, फिर मुझे आशीर्वाद भी दिया क्योंकि मैं उसकी परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया। कभी-कभी साधक को ऐसी परीक्षाएँ देनी पड़ती हैं। उसमें साधक को उत्तीर्ण होना आवश्यक भी है, ऐसा ज्यादातर उन्हीं के साथ होता है जिनकी उग्र साधना होती है।

अब मेरी साधना तीव्र गति से होने लगी थी, मन ब्रह्मरन्ध्र के पास एकाग्र होता था, सिर में दर्द सा हुआ करता था। साधना पर एक बार में 3 घन्टे से ज्यादा बैठता था, मन भी प्रसन्न रहता था। कभी-कभी सिर के ऊपरी भाग में हल्का सा दर्द होता रहता था, इसे सहन करना पड़ता था इसके अतिरिक्त और कोई रास्ता नहीं था। श्री माता जी ने बताया– साधक को यह दर्द सहना ही पड़ता है, कुछ दिनों बाद सिर में दर्द, मस्तक में खिंचाव और ब्रह्मरन्ध्र में भी खिंचाव हुआ करता था।

अर्थ- साधकों! यह दर्द नाड़ी शुद्धि न होने के कारण होता था, प्राणायाम करने से धीरे-धीरे नाड़ी शुद्ध होने लगती है। मैं तो प्राणायाम भी बहुत करता था फिर भी दर्द सहना पड़ता था। साधकों! जिनकी उग्र साधना होती है उन्ही को ऐसा दर्द होता है। मेरी साधना बहुत उग्र थी इसलिए दर्द हुआ करता था।

स्वामी चिदानन्द जी

ध्यानावस्था में अनुभव आया– मैं स्वामी चिदानन्द जी के साथ घूम रहा हूँ, स्वामी जी बोले– "आप मेरे साथ आइए"। मैं स्वामी जी को देखने लगा, उनके चेहरे पर वही तेज, शरीर दुबला-पतला, आवाज में वही आकर्षण था। जो प्रत्यक्ष ऋषिकेश में देखा था। उनके शरीर पर वही दो वस्त्र हुए थे।, एक वस्त्र पहने हुए थे दूसरा ऊपर ओढ़े हुए थे। वह हमारे आगे चल रहे थे, मैं उनके पीछे चल रहा था, जो वस्त्र शरीर के निचले भाग में लपेटे हुए थे वह खुलकर भूमि पर गिर गया, स्वामी जी निर्वस्त्र हो गये। मैं स्वामी जी से बोला– "स्वामी जी, आपका वस्त्र नीचे गिर गया है"। स्वामी जी हमारी ओर मुड़े और वस्त्र पकड़

कर ऊपर की उठाने लगे, तभी स्वामी जी के शरीर का अगला भाग भी निर्वस्त्र दिखाई दिया। मेरे बोलने का स्वामी जी पर कोई असर नहीं हुआ और न भाव बदले। मैंने सोचने लगा– स्वामी जी कैसे वस्त्र पहनते हैं जो नीचे गिर जाता है, एक क्षण के लिए वह नग्न हो गए थे। अब हम दोनों आगे कि ओर चले जा रहे थे। रास्ता बहुत ही खराब था, इसलिये चलने में थोड़ी-सी परेशानी हो रही थी। आगे चलकर हमें तीन पशु मिले, तीनों पशु खूँटे से बँधे हुए थे। ये तीनों पशु भैंस, भैंस का बच्चा, और गाय थी, स्वामी जी ने पहले भैंस के गले की जंजीर खोल दी, फिर अन्य दोनों की जंजीर खोल दी। मैं आश्चर्यचकित होकर बोला– "स्वामी जी आपने इन्हें क्यों खोल दिया"। स्वामी जी बोले– "इन्हें लेकर चलना है"। मैं सोचने लगा कि स्वामी जी इतने बड़े महात्मा पुरुष होकर इन पशुओं का क्या करेंगे! स्वामी जी तीनों पशुओ को लेकर चल दिए। भैंस सबसे आगे थी,फिर भैंस के पीछे स्वामी जी, उनके पीछे भैंस का बच्चा, फिर गाय थी, मैं सबसे पीछे था। मैं गाय के ऊपर हाथ रखे हुए पीछे-पीछे चल रहा था, मुझे मालूम नहीं था कि स्वामी जी हम सभी को कहाँ लिए जा रहे थे।

अर्थ- साधकों! ये स्वामी जी स्वामी शिवानन्द जी के शिष्य तथा ऋषिकेश में शिवानन्द आश्रम के अधक्ष हैं। बहुत महान योगी हैं, मैं इनका मन के अन्दर बहुत सम्मान करता हूँ। स्वामी जी के नग्न होने पर हमारे अन्दर विकार नहीं आना चाहिए था, मगर विकार आ गया। हमारे अन्दर विकार आने का अर्थ है– मेरा अन्तःकरण अभी पूरी तरह से शुद्ध नहीं है, स्वामी जी ने हमारी परीक्षा ली थी। स्वामी जी ने तीनों जानवर खोल दिए, भैंस का अर्थ है– हमारे चित्त पर स्थित कष्टों से युक्त तमोगुणी कर्म है। भैंसे के बच्चे का अर्थ है– ये थोड़े से कष्टों से युक्त तमोगुणी कर्म, हमें शीघ्र ही भोगने पड़ेंगे। गाय हमारी जीवात्मा का प्रतीक है, उसके ऊपर मैं हाथ रखे हुए चला जा रहा हूँ। जीवात्मा बन्धन में बँधी हुई थी, उसे बन्धन से मुक्त कर दिया है। अभी हमारे कर्म शेष है, इनसे मुक्त होने के लिये कर्मों का भोग करना होगा, तभी ये कर्म नष्ट होगे। कर्मों के नष्ट होने पर जीवात्मा बन्धन से मुक्त हो जाती है। इस अनुभव से स्पष्ट होता है, मैं बन्धनों से मुक्त हो जाऊँगा।

अवधूत के दर्शन

यह अनुभव 9 सितम्बर को आया। सुबह ध्यानावस्था में अनुभव आया– श्री माता जी हमें किसी जगह पर ले गयी, वहाँ पर चारों ओर अंधकार छाया हुआ था। मैं और श्री माता जी अंधकार में खड़े हुए

थे, श्री माता जी हमारे दाहिनी ओर खड़ी हुई थीं। सामने ओर थोड़ी-सी जगह में हल्का-सा उजाला था, उसी हल्के से प्रकाश में एक पुरुष बैठे हुए दिखाई दिये, उनके शरीर पर वस्त्र नहीं थे, उनके बैठने का ढंग और उनका भाव पागल मनुष्य जैसा था। सिर थोड़ा सा नीचे की ओर झुकाए हुए थे। जब मैंने उन्हें देखा, तो विचार आया– यह कौन पुरुष है जो पागलों की भाँति बैठे हुए है, ये देखने में तो सन्तों जैसे लगते है। मेरे दाहिने ओर श्री माता जी खड़ी हुई थीं। मैंने उनसे पूछा– "श्री माता जी यह पुरुष कौन हैं"? श्री माता जी बोलीं– "यह संत पुरुष है इसकी अवधूतावस्था है"। मेरा अनुभव यहीं पर समाप्त हो गया।

अर्थ- श्री माता जी जब आश्रम में आयी तब मैंने उनसे पूछा– "श्री माता जी इस अनुभव का अर्थ क्या है"। श्री माता जी बोलीं– "अवधूतावस्था ऐसी ही होती है, न ही कपड़े पहनने का भान होता है न रोटी खाने का भान होता है। किसी ने रोटी खिला दी तो खा ली, वरना भूखे ही बैठे रहे, उन्हें स्थूल भान नहीं होता है। ऐसे सन्त पुरुष दर्शन देकर शिक्षा भी देते हैं और मार्ग दर्शन भी करते हैं। यदि आप उनसे पूछते कि आप कौन हैं, तब वह अवश्य अपने बारे में बताते, कि मैं कौन हूँ। प्राण जिस लोक में जाता है उस लोक के सन्तों के दर्शन होते हैं। अथवा दर्शन देते हैं।" यह अनुभव कण्ठचक्र में आया है इसलिये अंधकार दिखाई दे रहा था।

ग्रन्थि खुलने का संकल्प

मैंने श्री माता जी से पूछा– "श्री माता जी, ध्यान में हमारी स्थिति क्या है?"। श्री माता जी बोलीं– "आपके प्राणों की गति आज्ञाचक्र तक है। कभी-कभी प्राण ब्रह्मरंध्र तक पहुँच जाता है।, मगर स्थिति कण्ठचक्र में ही है क्योंकि प्राण यहाँ पर रुकता है। पूर्ण रूप से प्राण ऊपर नहीं जा पाता है, कण्ठचक्र के पास जो ग्रंथि होती है, जब तक वह पूर्ण रूप से खुल नहीं जाती है तब तक प्राण पूर्ण रूप से ऊपर नहीं जा सकता है। आपकी कुण्डलिनी गर्दन तक जाती है, ग्रन्थि खुलने के बाद ऊपर की ओर जाने लगेगी।" आजकल ध्यान के समय तीनों बन्ध लगते थे। 6 सितम्बर शुक्रवार को श्री माता जी के पास उनके घर गया, शुक्रवार होने के कारण सामूहिक ध्यान किया जा रहा था। मैं भी सभी साधकों के साथ बैठा हुआ ध्यान कर रहा था, ध्यानावस्था में हमारी गर्दन पीछे की ओर चली गयी, सिर पीठ से चिपक गया, शरीर भी पीछे की ओर झुक गया। सारा प्राण कण्ठचक्र में रुका हुआ था, उसके साथ श्वांस भी अवरुद्ध हो रहा था। अब गर्दन में और शरीर को कष्ट हो रहा था, मैं इतना पीछे की ओर झुक गया था कि मुझे लगा मैं

पीछे की ओर गिर जाऊँगा। उसी समय मुझे दो वर्ष पहले की याद आ गयी, पहले भी ऐसा कष्ट होता था। इस समय ध्यान करने के लिए मैं श्री माता जी के सामने बैठा हुआ था, कुछ समय बाद मुझे महसूस हुआ कि गर्दन में एक तरफ श्री माता जी शक्तिपात कर रही हैं, कुछ क्षणों बाद मुझे आराम मिल गया। फिर मेरी गर्दन अपने आप सीधी होने लगी, थोड़ी देर बाद मैंने ध्यान तोड़ दिया। क्योंकि श्री माता जी ने ओंकार कर दिया था।

दूसरे दिन सुबह ध्यानावस्था में मुझे अनुभूति होने लगी– मेरी कुण्डलिनी कण्ठचक्र में स्थित ग्रन्थि पर टक्कर मार रही है। गर्दन की नसें चटक रही थी अथवा नसें खिंच रही हैं, गर्दन में तीव्र जलन हो रही थी। कुण्डलिनी के कारण इस क्षेत्र में जोर से चींटियाँ-सी काटने की अनुभूति रही थीं। ऐसा सम्भवतः आधे घन्टे तक होता रहा था। जब श्री माता जी के पास उनके घर गया, तब शक्तिपात के विषय में पूछा, श्री माता जी ने बताया– "आपकी गर्दन बहुत पीछे जा रही थी। सारा प्राण गर्दन पर रुका हुआ था, आपकी गर्दन बहुत फूल गयी थी। इसलिए मैंने ग्रन्थि खुलने का संकल्प किया था ताकि प्राण ऊपर की ओर चला जाए। ग्रन्थि तुरन्त नहीं खुलती है, फिर भी कुछ समय खुलने के लिए लग जाएगा।"

स्वामी शिवानन्द जी के दर्शन

ध्यानावस्था में स्वामी शिवानन्द जी के दर्शन तीसरी बार हो गये। सिर्फ दर्शन ही नहीं हुए बल्कि उनसे बात भी हुई थी। स्वामी जी भगवा वस्त्र धारण किए हुए थोड़े से ऊँचे स्थान पर बैठे थे, मैं भी उनके सामने भगवा वस्त्र धारण किए हुए खड़ा था। स्वामी जी बोले– "तुम 20 ब्राह्मणों का इंतजाम हमें करना पड़ेगा"। उनके ये शब्द सुनकर मैं अचम्भित हुआ कि स्वामी जी ने हमें ब्राह्मण शब्द से सम्बोधित किया और पूरे 20 ब्राह्मणों का इंतजाम करने के लिए भी कहा है। मै स्वामी जी के कहने का अर्थ समझ नहीं पाया कि उन्होंने ऐसा क्यों कहा। मैंने स्वामी जी से पूछा– "मैं आपसे एकांत में कुछ पूछना चाहता हूँ"। उत्तर में वह मुस्कराए और कहा– "अच्छा"। उन्होंने मुझसे यह नहीं कहा, कि पूछो क्या पूछना है, इसलिए मैं चुप बना रहा। उसी समय हमारे अन्दर से आवाज आई– "जो कुछ पूछना हो वह श्री माता जी से पूछो"। अनुभव समाप्त हो गया।

साधकों! श्री माता जी से हम सभी बातें तो पूछ नहीं सकते हैं क्योंकि उनका स्थूल शरीर स्त्री का है। भले ही वह हमारे गुरु हों मगर फिर भी कुछ-न-कुछ मर्यादा अवश्य होनी चाहिये, कभी-कभी मैं अपने प्रश्न घूमा-फिराकर पूछ लेता था। आजकल अनुभव में खूबसूरत लड़कियाँ या स्त्रियाँ बहुत दिखाई देती थीं, कभी-कभी स्त्रियों की संख्या बहुत ज्यादा होती थीं, वह हमरे सामने नृत्य किया करती थीं। ऐसा लगता था ये अप्सराएँ हैं, ये सभी अंतरिक्ष या दिव्य भवनों में होती थीं। कभी-कभी लड़कियाँ कामुक मुद्रा में भी होती थीं। तथा वासनात्मक बातें करती थी।

अप्सराओं द्वारा नृत्य

एक बार ध्यानवस्था में देखा– मैं अंतरिक्ष में खड़ा हूँ। मेरे पास एक स्त्री आयी और वह अंतरिक्ष में नृत्य करने लगी, नृत्य के साथ संगीत की भी आवाज आ रही थी, मगर संगीत बजाने वाला वहाँ पर कोई नहीं था। स्त्री नृत्य बहुत सुन्दर कर रही थी। मैं अंतरिक्ष में बैठा हुआ था, स्त्री का नृत्य शास्त्रीय संगीत पर आधारित था। मुझे उसका नृत्य अच्छा लग रहा था, वह स्त्री अंतरिक्ष में इधर-उधर दौड़-दौड़कर नृत्य कर रही थी। नृत्य के अनुसार ही संगीत स्वयं बज रहा था, संगीत की आवाज अंतरिक्ष से स्वयं आ रही थी। कुछ समय तक मैं नृत्य देखता रहा, फिर स्त्री ने नृत्य करना बन्द कर दिया। वह अद्वितीय सुन्दर स्त्री मेरे पास आई और बोली– "आपको मेरा नृत्य कैसा लगा?" मैं बोला– "आपका नृत्य बहुत अच्छा था"। मुझे शास्त्रीय संगीत पर नृत्य बहुत अच्छा लगता है। स्त्री विशेष मुद्रा में बोली– "सच मेरा नृत्य बहुत अच्छा था और मैं कैसी हूँ?" पहले मैं चौंका फिर बोला– "आप बहुत अच्छी नृत्यांगना हैं"। स्त्री बोली– "क्या आप हमारे साथ शादी करेंगे?" मैं यह शब्द सुनकर कुछ नहीं बोला। इतने में हमारे पीछे ढेर सारी उसी के समान स्त्रियाँ हँसती हुई दिखाई दी। मैं उन सभी स्त्रियों को देखकर भागा। मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ– इस तरह के नृत्य ऊपर के सूक्ष्म लोकों में होते हैं, उच्च श्रेणी का साधक या योगी इस प्रकार का नृत्य कभी भी देख सकता है। मगर हमें ध्यानवस्था में यह अनुभव स्वमेव आया है, साधक को एक निश्चित अवस्था में इस प्रकार का नृत्य करती हुई अद्वितीय सुन्दर स्त्रियाँ दिखाई देती है। ये दृश्य ऊपर के लोकों से सम्बन्धित होते हैं।

अतृप्त जीवात्मा

मैं और मेरठ का लड़का एक साथ आश्रम में सोये हुए थे। यह अनुभव आया– स्वप्नावस्था में एक तरुण लड़की हमारे कमरे में आ गयी और हमारे सामने खड़ी हो गयी। मैंने उससे कहा– "आप कौन हैं इधर क्यों आई हैं, यहाँ लड़कियों का क्या काम है ?" लड़की कुछ नहीं बोली, उत्तर में सिर्फ मुस्करा दी। मैं जागकर बैठ गया हमारे ध्यान का समय हो गया था, मगर मैं उस लड़की को नहीं भूल पाया। लड़की का साहस तो देखिए वह हमारे कमरे के अन्दर आ गयी थी। ध्यान के द्वारा मैंने उस लड़की की जानकारी ली, तब मुझे मालूम हो गया, वह अतृप्त जीवात्मा थी। उसी समय ध्यानावस्था में आवाज सुनाई दी– "आनन्द कुमार"। मैंने अपना ध्यान तोड़ दिया और सोचा– "मुझे कौन बुला रहा है, सुबह के 3.30 बजे है चारों ओर सन्नाटा फैला हुआ है, शायद मुझे धोखा हुआ है। मैंने अपनी आँखें बन्द कर ली, फिर ध्यान करने लगा। आँखें बन्द करते ही फिर आवाज सुनाई दी– 'आनन्द कुमार'। मैंने फिर आँखें खोल दीं, मैं समझ गया जरूर कोई चक्कर है। फिर मैंने अपनी आँखें बन्द की और बोला– "मुझे कौन बुला रहा है"। आवाज आयी– "मैं वही लड़की हूँ जिसे कुछ समय पहले आपने देखा है"। मैं बोला– "आप कौन हैं, अपना परिचय दीजिए"। उस लड़की की आवाज आयी– "मैं भटक रही हूँ, मेरी कई वर्ष पहले हत्या कर दी गयी थी"। मैंने पूछा– "आपकी हत्या क्यों कर दी गयी थी?" वह बोली– "यह मैं नहीं बता सकती हूँ, आप अपने पड़ोसी से पूछ लीजिए"। मैं बोला– "आपको हमसे क्या काम है?" आवाज आयी– "आपके पास आना हमें अच्छा लगता है"। मैं बोला– "कृपया आप हमें क्षमा करें, मैं यहाँ पर साधना करने आया हूँ। मुझे अपनी साधना करने दीजिए"।

मैं उसी दिन सुबह श्री माता जी के पास गया। वहाँ पर मालगाँव से कविता दीदी भी आयी हुई थीं। श्री माता जी को मैंने उस अतृप्त जीवात्मा वाली बात बतायी, श्री माता जी बोलीं– "मैं संकल्प करके उसे भगा दूँगी"। तथा कविता दीदी ने भी संकल्प किया कि वह लड़की अब मेरे पास आश्रम में ना आये। फिर मैं श्री माता जी के घर से आश्रम आ गया। वह लड़की फिर हमारे पास आश्रम में नहीं आयी, मगर उसकी आवाज ध्यान के समय सुनाई देती रहती थी। कभी सोते समय उसकी आवाज आने लगती थी। मुझे सोते समय आवाज सुनाई देती थी– 'आनन्द कुमार'। आवाज बड़ी प्यारी थी, मुझे बड़े प्यार से वह बुलाया करती थी, मगर मुझे तो उसकी इस क्रिया से साधना में अवरोध हो रहा था। एक बार मैं रात्री के 1.30 बजे आश्रम से उस स्थान पर गया, जहाँ पर उसकी हत्या की गयी थी। मैंने अपने हाथ जोड़े और उस लड़की से कहा– "कृपया आप मेरी साधना में अवरोध न कीजिए"। मैं वापस आश्रम में आ गया, फिर हमें कभी भी

उसकी आवाज सुनाई नहीं दी। फिर मेरा और इसका सम्पर्क जनवरी सन् 1996 में हुआ था। हमारी और इस लड़की की घनिष्ठता हो गयी, मैंने उसे थोड़ा ज्ञान भी दिया था। अब वह लड़की बहुत प्रसन्न है।

मैंने सारी बातें आश्रम के पड़ोस में रहने वालों को बतायी, तब उन्होंने हमें बताया– लगभग 20-25 वर्ष पहले इस लड़की की हत्या कर दी गयी थी जब वह कुएँ पर कपड़े साफ करने गयी थी। मेरे द्वारा पूछने पर पड़ोसी पहले आश्चर्य में पड़ गए, फिर उन्होंने हमें उस लड़की के विषय में सारी बातें बताईं। जब मैं आश्रम में रहता था तब आश्रम के आसपास आबादी बिल्कुल नहीं थी, सिर्फ दो-तीन घर बने थे, ये लोग खेती किया करते थे। इन पड़ोसियों से मेरा बहुत प्रेम था, ये लोग बहुत अच्छे थे, जब मैं कभी बीमार हो जाता था अथवा कोई परेशानी होती थी तब ये पड़ोसी खाना आदि बनाकर मुझे दे देते थे।

फूलों की सुगन्ध

मैं कुटिया के अन्दर बैठा हुआ ध्यान कर रहा था। तभी कुटिया के अन्दर फूलों की खुशबू आने की अनुभूति होने लगी। मैंने अपना ध्यान हल्का कर दिया, फिर ऐसा लगने लगा जैसे चारों ओर खुशबूदार फूल बिखरे हुए हैं उन्हीं की खुशबू आ रही है, मैं फूलों के बीच बैठा हूँ। इस प्रकार का एहसास आधे घन्टे तक होता रहा, फिर मैं ध्यान की गहराई में चला गया।

अर्थ- प्रिय साधकों! जब साधक को तन्मात्राओं का साक्षात्कार होता है तब इस प्रकार की खुशबू आने की अनुभूति होती है। पृथ्वी तत्व की तन्मात्रा गन्ध है। इसलिए गन्ध तन्मात्रा का साक्षात्कार हो रहा था, यह योग की एक अवस्था है।

महा पुरुषों के दर्शन

आजकल गर्दन पर दर्द बहुत बढ़ गया था, साधारण अवस्था में भी गर्दन दु:खा करती थी। गर्दन को दाएँ-बाएँ ओर घुमाने पर ऐसा लगता था, मानों गर्दन टूटी जा रही है। ध्यानावस्था में गर्दन की नाड़ियों में बहुत खिंचाव होता था, ऐसा लगता कि ध्यान करना बन्द कर दूँ तो अच्छा है। मस्तक की नाड़ियों में भी खिंचाव हुआ करता था। मैं एक बार में 3 घन्टे तक ध्यान किया करता था, अब 10 मिनट ध्यान करना

मुश्किल हो रहा था। गर्दन में ग्रंथि की जगह दर्द हुआ करता था, मैं ध्यान शीघ्र तोड़ देता था क्योंकि ग्रंथि में असहनीय दर्द होता था। एक दिन सायंकाल के समय मैं ध्यान पर बैठा हुआ था। ध्यान बहुत गहरा लगा, फिर अनुभूति होने लगी कि कुण्डलिनी उग्र होकर हमारी पीठ जलाए दे रही है। ऐसा लगता था जैसे कोई पीठ और गर्दन में सुइयाँ चुभो रहा है। फिर मन एकाग्र हो गया तब देखा– मैं भगवान गौतम बुद्ध को देख रहा हूँ, फिर हमें गुरुनानक जी के दर्शन हुए, कुछ समय बाद संत रविदास के दर्शन होने लगे। इन तीनों महापुरुषों ने मुझे दर्शन दिए और आशीर्वाद भी दिया।

मैं तीन बार मरा

एक बार ध्यानावस्था में अनुभव आया– मैं तीन बार मरा हूँ, सुनने में यह बात निश्चय ही आश्चर्य जनक लगेगी। कोई भी मनुष्य एक बार ही मरता है, मगर मै साधक होने के कारण तीन बार मरा हूँ। अनुभव में देखा– मैं मर रहा हूँ, हमारे शरीर की सम्पूर्ण प्राण वायु में खिंचाव हो रहा है, इसलिये कष्ट के कारण मैं तड़प रहा हूँ क्योंकि मुझे बहुत कष्ट हो रहा है। कभी हमें अंधकार-सा दिखाई देता था, ऐसा लगता है कि तूफान सा आ गया है, फिर मैं होश में आने लगता हूँ। बहुत देर तक छटपटाने के बाद मुझे लगा, अब मेरे भौतिक शरीर से जीवात्मा निकल जाएगी। मैं रोने लगा, क्यों कि मैं मरना नहीं चाहता था, मुझे लगा अब मेरा सब कुछ छुट जाएगा। फिर एहसास हुआ, अब मेरे सगे-सम्बन्धी सब छूटे जा रहे हैं। मुझे लगा कि अभी मेरा लड़का बहुत छोटा है इसका क्या होगा, मरते समय मुख्य रूप से लड़के की मुझे याद आ रही थी। हमारे प्राण निकलने लगे, कुछ समय घोर कष्ट पाकर मैं मर गया। मरने के बाद मैं ऊपर चला गया।

दूसरी बार फिर मरते समय मैं पृथ्वी पर नहीं था बल्कि अंतरिक्ष में था। जब अंतरिक्ष में मरने लगा तो उस जगह हमारे सगे-सम्बन्धी इत्यादि नहीं थे। हमारे पास दो और प्राणी थे वह मेरी तरह छटपटा रहे थे। उनकी भी मृत्यु हो रही थी। उन प्राणियों को देखकर मैं रोने लगा, क्योंकि वह भी मर रहे थे। मुझे थोड़ा-सा उनसे प्रेम था, इसलिए मुझे मरने से डर लग रहा था कि मैं भी मर जाऊँगा, मुझे मृत्यु से डर लग रहा था।

तीसरी बार जब मैं मरने लगा तब मुझे पहले जैसा दुःख नहीं लग रहा था बल्कि मैं मुस्करा रहा था। मैं स्वयं मरने के लिए तैयार हो गया था, सोच रहा था मैं जितनी जल्दी मर जाऊँ उतना ही अच्छा है। मैं मरने के लिए लेट गया। लेटते समय मैंने देखा– पृथ्वी हमारी पीठ के नीचे दब गयी है मेरा शरीर बहुत बड़ा हो गया, सारा आकाश मैंने चादर की भाँति ओढ़ लिया। मुझे स्वयं मालूम नहीं था की मेरे शरीर की लम्बाई कितनी है, क्योंकि मैं सम्पूर्ण आकाश में लेटा हुआ था। ऐसा लग रहा था– जितनी मेरे शरीर की लम्बाई है, आकाश मुश्किल से उतना ही लम्बा होगा। मैं मुस्कराने लगा। मरने समय मुझे किसी प्रकार की पीड़ा नहीं हो रही थी, बल्कि हमें प्रसन्नता हो रही थी। मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

मुझे ध्यानावस्था में मरते समय पीड़ा की जिस प्रकार अनुभूति हुई वह बहुत कष्टदायक थी। मैं शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकता हूँ, क्योंकि शब्दों से व्याख्या अपूर्ण होगी। मरते समय जब मनुष्य को याद आता है, उसके सगे सम्बन्धी छूट रहे हैं, तब दुःख और बढ़ जाता है। उस समय मरने की इच्छा बिलकुल नहीं होती है मगर मृत्यु के हाथों छूटा भी नहीं जा सकता है। जो मृत्यु तीसरी बार आयी थी वह प्रथम व द्वितीय बार की मृत्यु से बिल्कुल विपरीत थी। उस समय मानसिक कष्ट बिल्कुल नहीं था और मन में भी किसी प्रकार का विचार नहीं था। मृत्यु के समय अपार शांति थी तथा अपार प्रसन्नता थी। प्रथम प्रकार की मृत्यु सामान्य मनुष्य को आती है। दूसरी प्रकार की मृत्यु बहुत कम मनुष्यों को आती है जो आध्यात्म वादी होते है, कर्म थोड़ा रह जाता है उन्हें इस प्रकार की मृत्यु आती है। तीसरे प्रकार की मृत्यु उच्चकोटि के योगी को आती है।

हमें तीनों प्रकार की मृत्यु के अनुभव तो अभी आ गये है, मगर इसकी योग्यता भविष्य में आएगी। पहली प्रकार की मृत्यु के समय, तृष्णा के कारण और प्राणों के कारण घोर कष्ट की अनुभूति होती है। इस प्रकार की मृत्यु में स्थूल शरीर और स्थूल जगत से सम्बन्धित पदार्थ छूट जाते है। दूसरी प्रकार की मृत्यु सूक्ष्म पदार्थों को त्यगने पर आयी थी, सूक्ष्म शरीर में वासनाएँ आदि रहती हैं, इन वासनाओं को त्यागने पर कष्ट की अनुभूति होती है, क्योंकि अभ्यासी को सूक्ष्म वासनायें त्यागते समय मानसिक पीड़ा होती है। स्थूल पदार्थ के त्यागने से अधिक सूक्ष्म पदार्थ त्यागने (सूक्ष्म वासनायें) में मानसिक कष्ट की अनुभूति ज्यादा होती है। तीसरी प्रकार की मृत्यु सूक्ष्म शरीर को त्यागने पर आती है, उस समय उसके अन्दर किसी प्रकार की कोई वासना नहीं होती है, बल्कि तत्त्वज्ञान से युक्त होने के कारण योगी को मृत्यु के समय प्रसन्नता होती है। वह सोचता है– चलो अच्छा है यह शरीर छूट जाए ताकि महाकारण शरीर में स्थित हो जाएँ, क्योंकि अभ्यास द्वारा कारण शरीर को व्यापक करके ईश्वर के शरीर में अंतर्मुखी हो गया है।

साधकों, यह सत्य है कि मृत्यु के पश्चात मैं महाकरण जगत में प्रवेश कर जाऊँगा। मेरी मृत्यु अभी नहीं है। मुझे अभी कई वर्षों तक जीवित रहना है। अभी कुछ महत्वपूर्ण कार्य भी करने हैं, मुझे अपनी मृत्यु के विषय में पूरा ज्ञान है तथा यह भी ज्ञान है, मृत्यु के बाद मैं कहाँ जाऊँगा। क्योंकि जिस अभ्यासी की ऋतम्भरा-प्रज्ञा चित्त में प्रगट हो जाती है उसका चित्त ज्ञान के प्रकाश से युक्त हो जाता है। अनुभव में मुझे तीन बार मरते हुए दिखाया है।

कर्मों की पोटली

यह अनुभव मुझे स्वप्नावस्था में आया था, कविता दीदी मेरे पास आयी हुई है। मेरे पास आते ही मुझसे पूछा– "आनन्द कुमार वह किधर है"? मैंने एक ओर को इशारा करके कहा– "इधर है"। मैंने एक तरफ बने गड्ढे की ओर इशारा किया। कविता दीदी बोलीं– "उसे निकालो"। मैं उस गड्ढे के अन्दर धीरे-धीरे उतरने लगा वह गड्ढा कुएँ की तरह बना हुआ था। मैं नीचे की ओर उतरता हुआ चला गया। नीचे उतरकर मैंने एक पोटली उठाई और ऊपर चढ़ने लगा। ऊपर चढ़ते समय मुझे बहुत तकलीफ हो रही थी, उस पोटली में क्या है, मैं नहीं जानता था। मैं उस कुएँनुमा गड्ढे से बाहर निकल आया, तभी मेरी आँखें खुल गयीं।

अर्थ- साधकों! यह हमारे कर्मों की पोटली है तथा गन्दगी आदि से भरी हुई है। इसका अर्थ है– आप अपनी गन्दगी व कर्म आदि बाहर निकाल दो। इस प्रकार के कर्मों को भोग कर नष्ट किया जाता है, हल्के-फुल्के कर्म तो प्राणायाम और समाधि के द्वारा नष्ट हो जाते हैं।

शरीर धनुषाकार हो गया

मैं पहले कई बार लिख चुका हूँ कण्ठचक्र की ग्रंथि न खुलने के कारण गर्दन पीछे की ओर हो जाती थी। शरीर भी पीछे की ओर झुकता था। कभी-कभी शरीर इतना पीछे की ओर झुकता था, कि ध्यानावस्था में शरीर झूले की तरह झूलता रहता था। एक बार श्री माता जी के घर में सामूहिक ध्यान हो रहा था, तभी ध्यान करते समय मैं पीछे की ओर गिर गया। मेरा सिर पीछे की ओर फर्श से टकराया और

मेरा ध्यान टूट गया, क्योंकि मेरा सिर दुखने लगा था। फिर जोर लगाकर सीधा हो गया और ध्यान पर बैठ गया। दुबारा फिर मेरा शरीर पीछे की ओर झुका और पहले की भाँति पीछे की ओर गिर गया। वहाँ पर उपस्थित सभी साधक हमें देख रहे थे। अबकी बार उठकर बैठने में थोड़ी देर लग गयी, क्योंकि मेरा शरीर थक चुका था। रीढ़ भी दुःख रही थी। मैं पसीने से तर हो चुका था, शर्ट उतारकर रख दी। सारे शरीर में कुण्डलिनी के कारण आग-सी लगी हुई थी तथा चींटियाँ सी काट रही थी। मैं फिर तीसरी बार ध्यान पर बैठ गया, गर्दन फिर पीछे की ओर मुड़ी, अबकी बार मेरा आसन अपने आप बदलने लगा। मैं सहजासन पर बैठा हुआ था, आसन अपने आप बदलकर वीरासन हो गया। फिर मेरा शरीर पीछे की ओर झुका और मैं गिर गया। अबकी बार हमारे शरीर को बहुत वेदना हुई, ध्यान के कारण आँखें नहीं खुल रही थी, मैं वीरासन पर ही पीछे की ओर पीठ के बल गिरा गया था। लेटे-लेटे ही मेरा ध्यान लगना शुरू हो गया। इतने में नाभि की नाड़ियों में खिंचाव होने लगा, भस्त्रिका भी तेज गति से चलने लगी। इसी अवस्था में ही गर्दन पीछे की ओर जाने लगी, सिर पीठ से चिपक गया, अब सिर का ऊपरी भाग फर्श से चिपक गया था। उसी समय नाभि में जोरदार खिंचाव हुआ, नाभि के आसपास का क्षेत्र ऊपर आकाश की ओर उठता था। अब मेरा शरीर देखने में धनुष के आकार का हो गया, रीढ़ कमान की तरह ऊपर की ओर उठी हुई थी, तभी नाभि पर ऊपर की ओर जोर से झटके लग रहे थे। साधकों! आप स्वयं समझ सकते हैं कि मेरा भौतिक शरीर कितना कष्ट भोग रहा था। मैं पूरी तरह पसीने से भीग गया था। फिर हमें ध्यान तोड़ना पड़ा, क्योंकि ध्यान टूटने का नाम नहीं ले रहा था।

कुछ दिनों तक ध्यानावस्था में सहजासन से अपने आप वीरासन में बैठ जाता था। फिर बाद में ध्यानावस्था में अपने आप वज्रासन लग जाता था, शरीर की रही-सही वेदना वज्रासन पूरी कर देता था। ऐसा लगता था जैसे पैर बुरी तरह से टूट गए हों, पैरों में दर्द हुआ करता था। वज्रासन के समय शरीर का भार सिर्फ एड़ी पर रहता था। फिर पीछे की ओर गिरकर, सिर का ब्रह्मरंध्र वाला भाग भूमि पर स्पर्श करता था, शरीर का भार बाएँ पैर की एड़ी पर रहता था। शरीर पूरा ऊपर की ओर उठा रहता था, पीठ वाला भाग भूमि से स्पर्श नहीं करता था,वह ऊपर ओर उठा रहता थी। फिर वही क्रिया होती थी कि नाभि ऊपर की ओर अर्थात आकाश की ओर उठी रहती थी और जोरदार झटका मारती थी। रीढ़ धनुषाकार हो जाती थी। इस अवस्था में एक-एक घन्टे तक ध्यान करता था।

साधकों! इस अवस्था में स्थूल शरीर की अत्यन्त दुर्गति होती थी, ऐसा लगता था साधना करना अत्यन्त कष्टदायी है। बहुत दिनों तक यही क्रिया होती रही, फिर एक दिन श्री माता जी ने एकांत में

बुलाकर हमें समझाया– "शरीर का कमान की तरह होना, नाभि का ऊपर की ओर उठना जरूरी है, योग की भाषा में इसे तीर चलना कहते हैं। नाभि से प्राण निकालकर ऊपर आकाश में चला जाता है, नाभि में उस समय बहुत सारा प्राण भरा होता है। नाभिचक्र एक ऐसा चक्र है, जिसमें सबसे ज्यादा प्राण भर सकता है। यह शरीर कुण्डलिनी और प्राण के कारण पीछे को गिरता है, क्योंकि ऊपर का मार्ग अवरुद्ध होता है, कुण्डलिनी का वेग शरीर सहन नहीं कर पता है। इस प्रकार की साधना निश्चय ही उच्चकोटि के साधक करते हैं, क्योंकि स्वयं कुण्डलिनी और प्राण साधक के शरीर को धनुषाकार बना देता है। इससे नाभि के आसपास के क्षेत्र व नाभि से निकलने वाली नाड़ीं क्रियाशील होने लगती है। नाभि के क्षेत्र में कुछ नाड़ियाँ ऐसी होती है जिनका सम्बन्ध प्राणी के सम्पूर्ण जीवन चक्र से होता है। इसलिए इस क्षेत्र का इस तरह से विकास होना आवश्यक है ताकि अभ्यासी का जीवन चक्र छिन्न-भिन्न हो सके अथवा उसकी जीवन यात्रा सदैव के लिए समाप्त हो सके अर्थात जीवन यात्रा पूर्ण हो जाए, जीव मोक्ष की ओर गमन कर सके।

श्री माता जी ने बताया आपकी गले की ग्रंथि अभी खुली नहीं है। शरीर में जब और शुद्धता आयेगी तब ग्रंथि खुल जाएगी। इसलिए आप हफ्ते में एक दिन उपवास अवश्य किया करें, इससे शरीर की नाड़ियाँ अवश्य शुद्ध होंगी, जिससे ग्रंथि खुलने में सहायता मिलेगी। आपके कष्ट कुछ कम होंगे, फिर मैं सोमवार का व्रत करने लगा, व्रत के दिन सिर्फ रात्री में एक कप दूध पीता था। शुरुआत में व्रत वाले दिन बड़ी परेशानी होती थी, हमें भूख बहुत सताती रहती थी, फिर व्रत रखने की आदत पड़ गयी।

कर्म भोगना ही होगा

एक बार अनुभव आया– मैं अंधकार में कहीं चला जा रहा हूँ। इतने में एक विशालकाय व्यक्ति मेरे सामने आ गया। विशालकाय व्यक्ति को देखकर मेरे अन्दर भय उत्पन्न होने लगा। मैं उस विशालकाय व्यक्ति से छिपने की कोशिश करने लगा, मगर उस व्यक्ति ने मुझे छिपते हुए देख लिया, उसने बड़ी बेरहमी से मेरा हाथ पकड़ा और मुझे लेकर चल दिया। मुझे मालूम नहीं था, वह मुझे कहाँ लिए जा रहा है, कुछ दूर चलकर एक जगह जाकर रुक गया और मेरा हाथ छोड़ दिया, फिर उसने मुझसे कुछ कहा, मैं उसकी बात मानने को तैयार नहीं हुआ। उसी समय दूर से एक अत्यन्त डरावना और विशालकाय गिद्ध के आकार का पक्षी आ गया, उस पक्षी का शरीर सिर्फ मांस और खून का बना हुआ था, उसके पंख माँस के बने हुए थे। ऐसा लग रहा था, पक्षी की बाह्य त्वचा अभी-अभी अलग की गयी है, क्योंकि उसके शरीर के

मांस से खून टपक रहा था। पक्षी खून से भीगा हुआ था तथा वह हिंसक दिखाई दे रहा था, पक्षी इतना डरावना था, उसे देखते ही मेरी आवाज बन्द हो गयी। उसकी चोंच एक मीटर लम्बी होगी, वह मेरी ओर चोंच खोलकर दौड़ा, मुझे ऐसा लगा, वह एक बार में ही मुझे अपनी चोंच में दबा लेगा। मेरी जोर से चीख निकल गयी। मैं उस व्यक्ति से बोला– "मैं आपकी बात मानूँगा"। वहीं खड़े विशालकाय व्यक्ति ने उस पक्षी की ओर इशारा किया, वह डरावना पक्षी रुक गया। वह पक्षी साधारण पक्षियों की भाँति नहीं था, उसके शरीर से चमक निकल रही थी। फिर वह पक्षी अदृश्य हो गया। मैं वहीं पर डरा-सा खड़ा हुआ था, उसी समय एक छोटा सा लड़का प्रकट हो गया। वह मुझे अकारण ही मारने लगा। मैं बोला– "तुम मुझे क्यों मार रहे हो"। मैं भी उस लड़के से भिड़ गया और उसे मारने लगा, इतने में वही पक्षी फिर से प्रकट हो गया। जैसे ही वह पक्षी मेरी ओर चोंच खोल कर दौड़ा, मैं उसी समय 'ॐ नमः शिवाय' का जाप करता हुआ, उससे दूर की ओर दौड़ने लगा। जैसे ही मैं आगे की ओर दौड़ा, तभी मुझे सामने ओर नदी दिखाई दी, वह नदी बहुत नीचे की ओर बह रही थी, नदी का जल नीला या काला जैसा था, जल स्वच्छ नहीं था। मैं उसी नदी में कूद पड़ा और नदी के अन्दर नीचे गहराई में डुबकी लगा ली। उस नदी के अन्दर अंधकार ही अंधकार था, मैं नदी की निचली सतह पर बैठकर मैं 'ॐ नमः शिवाय' का जाप करने लगा। पानी के अन्दर मैंने भगवान शिव से पूछा– "प्रभु हम आपका जाप कर रहे हैं, फिर भी हमें उस पक्षी से क्यों डर लग रहा है"। इतने में आवाज आयी– *'कर्म भोगना ही पड़ता है'*। उसी समय वहीं पर पानी में शिवलिंग प्रकट हो गया, मेरा अनुभव समाप्त हो गया। मुझे अब भी उस डरावने पक्षी से डर लग रहा था। आश्चर्य की बात यह थी, कि शिव मंत्र का उस पक्षी पर बिलकुल प्रभाव नहीं पड़ रहा था।

मैंने निश्चय किया यह कर्म मेरे पिछले जन्मों के होगे, तभी यह विशालकाय डरावना पक्षी मुझे दिखाई दे रहा था। फिर यह अनुभव श्री माता जी को बताया, उन्होंने कहा– "आपका पिछला जन्म कुछ समय के लिए खराब रहा था, उसी समय ऐसा कर्म किया था, मगर फिर आप किसी आश्रम में रहने लगे। आपके ऊपर किसी सन्यासी का आशीर्वाद है। इसलिए आपकी साधना तीव्र गति से हो रही है"।

अर्थ- साधकों! यह डरावना पक्षी– मेरा ही पिछले जन्मों के कर्म हैं। इसलिए इस जन्म में घोर कष्ट उठाने पड़ते हैं, मुझे भूखा भी रहना पड़ता है। विशालकाय पुरुष– प्रकृतिलय पुरुष है अर्थात प्राकृतिक बंधन। नदी– यही स्थूल जगत है। इन्हीं क्लेशात्मक कर्मों के कारण ही संसार में जन्म लेना मुझे पड़ा।

मेरे ऊपर सर्प चढ़ा

आजकल मैं 8-10 घन्टे ध्यान करता था, फिर शक्तिमंत्र का जाप करता था। शक्तिमंत्र के प्रभाव से सर्प हमारे कमरे के अन्दर आ जाते थे तथा कमरे के बाहर बहुत सर्प रहते थे। एक कारण यह भी था आश्रम खेतों में बना हुआ था इसलिए जंगलनुमा जगह थी तथा यहाँ पर सर्प भी बहुत पाये जाते हैं। मैं सर्पों से इतना परेशान हो गया कि दरवाजों पर भी आकर सर्प लिपट जाते थे, कई बार सर्पों ने हमें कमरे से बाहर नहीं निकलने दिया। मुझे पड़ोसियों को जोर लगाकर बुलाना पड़ा, पड़ोसियों ने आकर सर्प से छुटकारा दिलाया। कभी-कभी सर्प छत पर लटके हुए दिखाई देते थे, कमरे से बाहर निकलते समय सर्प रास्ते में बैठे हुए मिलते थे। वहाँ पर ऐसे सर्प भी रहते थे, वह दीवारों पर बड़ी तेजी से चढ़ जाते थे, निडरता के कारण उस आश्रम में अकेला रहता था। एक दिन की बात है मैं आश्रम में अकेला था और रात्रि का सन्नाटा छाया हुआ था। मैं भूमि पर सोया हुआ था, हमारे आसपास दो सर्प लेटे हुए थे तथा कुछ बिच्छू भी चटाई पर चिपके हुए थे, उस समय मैं इन्हें नहीं जान पाया था। मगर जब रात्रि के समय मैं लघु शंका के लिए उठा और लाइट जलाई, उस समय हमारी दृष्टि चटाई की ओर गयी, जिस पर मैं सोया हुआ था। उस चटाई पर सर्प व बिच्छुओं को देखकर मैं बड़ी तेजी से बाहर निकला। और लोहे की छड़ उठा लाया। मैं सर्पों को मारता नहीं था, इसलिए उन्हें भगा दिया। रात हो या दिन, सर्प कमरे के अन्दर आ जाते थे। ऐसा समय बहुत दिनों तक चलता रहा।

यह घटना सोमवार 4 नवम्बर की है, आज मेरा व्रत भी था। लगभग 11 बजे दोपहर को स्नान करके विष्णुसहस्त्र नाम का पाठ करने के लिए बैठ गया। पाठ और मंत्र जाप आदि करके, मैं कुण्डलिनी मंत्र का जाप कर रहा था। जाप लगभग एक सवा घन्टे तक करने के बाद शरीर में थकान सी आ गयी तथा शरीर गर्म भी अत्यधिक हो रहा था। इसलिये मैं कम्बल फर्श पर बिछा कर लेट गया। हाथ में माला लिए आँखें बन्द किये हुए कुण्डलिनी मंत्र का जाप कर रहा था। अभी पाँच मिनट भी नहीं हुए थे कि दाहिने ओर कन्धे से लेकर पेट तक कुछ ठण्डा-ठण्डा सा लगने लगा। मैंने सोचा– शायद शरीर में कोई क्रिया हो रही होगी इसलिए ठण्डा लग रहा है, जब कि शरीर गर्म हो रहा था। ठण्डापन अच्छा लग रहा था। मैं मंत्र जाप करने में मग्न था, कुछ क्षणों में लगा कि पेट पर (नाभि के पास) कोई वस्तु चढ़ रही है और वह ठण्डी लग रही है। मैं फिर भी मंत्र जाप करने में लगा रहा, वह ठण्डापन नाभि के पास से होकर सीने (हृदय) की ओर आने लगा, यह मुझे अच्छा लग रहा था, क्योंकि मंत्र जाप के कारण शरीर के अन्दर आग सी फैली हुई थी, कुण्डलिनी भी ऊर्ध्व हो रही थी। जब हमारे सीने पर कुछ गुदगुदी अथवा खुजली सी होने लगी,

जिस हाथ से मैं माला पकड़े हुए था उसी हाथ से मैंने सीने पर खुजाना चाहा, आँखें बन्द किए हुए ही खुजाने के लिये अपने सीने पर उंगली लगाई, तभी ऐसा महसूस हुआ कि सीने पर कुछ है, मैंने दाहिने हाथ से पकड़कर दूर फेंकने के लिये प्रयास किया। तभी हमारे हाथ में सर्प के मुँह वाला भाग पकड़ में आ गया। बिजली की गति के समान मैंने उस सर्प को दूर फेंक दिया, माला हाथ से छूट गयी, मैं उठकर तेजी से दरवाजे पर खड़ा हो गया। मैंने देखा– काला लम्बा सा सर्प चटाई पर पड़ा हुआ था, सर्प की लम्बाई देखकर मेरे होश खराब हो गए।

मेरे पड़ोस में सर्प पकड़ने वाला व्यक्ति रहता था मैं उसे बुला लाया। उसे बुलाने में मुझे दो मिनट भी नहीं लगे थे। मैं और सर्प पकड़ने वाला व्यक्ति जब कमरे के अन्दर आया, तब देखा सर्प वहाँ नहीं था। कमरे में मेरा थोड़ा-सा ही सामान रखा हुआ था, उस सामान में ढूँढा मगर सर्प नहीं मिला। वह व्यक्ति बोला– “आपको धोखा हुआ होगा”। मैं बोला– “नहीं, मुझे धोखा नहीं हुआ है”। आखिरकार सर्प कमरे में नहीं मिला, वह व्यक्ति वापस चला गया। मैंने सोचा– सर्प मेरे सिर की तरफ से आया था, इसीलिए कन्धा ठण्डा-ठण्डा लग रहा था। फिर हमारे शरीर से चिपकता हुआ कमर की ओर गया, कमर के पास से नाभि की ओर चढ़ा। सर्प हमारे शरीर पर चढ़ा हुआ नाभि से सीने (हृदय) की ओर आया। मैं कुण्डलिनी मंत्र का जाप करता रहा, तब मुझे सर्प की जानकारी नहीं हुई। मगर जब सर्प की जानकारी हुई तब डर के कारण मेरा बुरा हाल था। जब मैंने सर्प को फेंक दिया और दरवाजे पर मैं खड़ा हो गया, तब सर्प मेरी ओर मुँह करके जीभ बार-बार बाहर को निकाल रहा था। ऐसा लगता था शायद वह मुझे प्यार से देख रहा है, मगर मैं उससे प्यार नहीं कर सकता था, क्योंकि सर्प को हाथ से पकड़ने पर डर लगता है।

मैं कमरा बन्द करके श्री माता जी के पास उनके घर गया, मैंने सारी बातें उन्हें बतायी। श्री माता जी बोलीं– “आप अब चारपाई का इंतजाम कीजिए, उसी का प्रयोग कीजिये”। मैंने जब यह बात कविता दीदी को बतायी तो वह बोली– “इस प्रकार का सर्प मिलता नहीं है, यह क्रिया कुण्डलिनी शक्ति के कारण होती है”। कुछ समय बाद हमें ज्ञात हुआ कि ध्यानावस्था में हमारे शरीर से विशेष प्रकार की किरणें निकलती रहती थीं, उन किरणों के कारण सर्प आकर्षित होते थे, इसलिए मेरे पास बहुत से सर्प आते थे।

माता कुण्डलिनी शक्ति

आज सुबह मेरठ वाले लड़के के साथ कुछ वाद-विवाद हो गया था, मैंने श्री माता जी से कहा तो वह चुप रहीं। मैं समझ गया वह लड़का श्री माता जी की बनावटी स्तुति करता रहता है, इसलिए श्री माता जी को उसमें दोष नजर नहीं आते हैं। मैं दूसरे स्वभाव वाला हूँ, बनावटी स्तुति नहीं कर सकता हूँ तथा सिर्फ साधना करता रहता हूँ, किसी से ज्यादा मतलब नहीं रखता हूँ, फिर भी अकारण कुछ-न-कुछ अक्सर मुझसे बोला जाता है। मुझे भी साधना करनी है, इसलिए चुपचाप सुन लेता हूँ।

आज दुःखी भाव में मैं लेटा हुआ था। इसी विषय में कुछ सोच रहा था, कुछ समय बाद मैं सो गया। स्वप्नावस्था में मुझे अनुभव आया– मैं पलंग पर पेट के बल लेटा हुआ हूँ कुछ दुःखी-सा हूँ। इतने में हमारे पास एक लड़की आई, वह लडकी मेरे सिर पर बालों में अपना हाथ फेरने लगी। उस समय हमारी दृष्टि नीचे की ओर थी, वह लड़की मेरे बालों पर बड़े प्यार से हाथ फेर रही थी। मैं सोचा– यह लड़की कौन है? मैंने अपना सिर ऊपर की ओर उठाया, कुछ क्षणों तक मैं उस लड़की को देखता रहा, मैं अब भी दुखी भाव में था। उस लड़की ने झुककर मेरे बाएँ गाल पर अपने होंठों से बड़ी जोर से चूमा और खड़ी हो गयी। मुझे उसका चूमना बड़ा विचित्र सा लगा, उसके होठों का स्पर्श ऐसा था, मैं तुरन्त जान गया यह साधारण लड़की नहीं है। मैं उठकर खड़ा हो गया, वह लड़की सामने खड़ी हुई थी, उसकी उम्र लगभग 20 वर्ष की होगी। मैंने उसका चेहरा देखा, वह निष्भाव से मुझे देख रही थी। मैंने सोचा– इसकी उम्र हो बहुत कम है, मगर प्यार 'माँ' के समान कर रही है।मैंने पूछा– "आप कौन हैं?" वह लड़की बोली– "जो आप सोच रहे हैं मैं वही हूँ"। मैं बोला– "आपको देखने से लगता है आप कम उम्र की लड़की हैं, 'माँ' कैसे हो सकती हैं?" इतने में वह लड़की हँसी और बोली– "पुत्र, मेरी उम्र कम नहीं है, अब तुम दुःखी मत होना, मैं तुम्हारे साथ हूँ। जो अन्याय करता है, उसे अपना कर्म अवश्य भोगना पड़ता है, तुम्हारा लक्ष्य योग का अभ्यास करना है, सभी प्रकार के कष्टों को सहन करो"। मैं बोला– "यदि आप मेरी माँ हैं, जब मैं बुलाऊँगा तब आप आओगी?" वह लड़की बोली– "अवश्य आऊँगी, मैं तुम्हारे शरीर में व्याप्त हूँ"। मैं उसका आखिरी शब्द सुनकर चौंका पड़ा, तभी उसी समय लड़की का स्वरूप बादल गया, मैं तुरन्त पहचान गया यह माता कुण्डलिनी शक्ति है। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! अब आप समझ सकते हैं माता कुण्डलिनी शक्ति हमारे लिए कितना प्रेम करती हैं, भविष्य में मैं अपनी सारी समस्याएँ माता कुण्डलिनी से हल किया करता था। ऐसा लग रहा था जैसे उस लड़की ने अभी-अभी मेरे बाएँ गाल को स्पर्श किया गया है।

पेड़ और नाग

आज 19 दिसम्बर को सुबह ध्यानावस्था में अनुभव आया, मैं किसी जगह पर खड़ा हूँ। मुझे नाग की फुंफकार की अवाज सुनाई दी, फुंफकार की आवाज बड़ी जोर से आ रही है। जिधर से आवाज आ रही थी, मैं उधर की ओर चल दिया। थोड़ा आगे चलकर मैंने देखा– एक पेड़ खड़ा हुआ है, पेड़ ज्यादा हरा-भरा भी नहीं है तथा सूखा भी नहीं है। उस पेड़ पर टहनी ज्यादा नहीं हैं, इधर-उधर एक-दो पत्ते लगे हुए हैं। पेड़ देखने में अच्छा नहीं लग रहा है, उसकी जड़ें भी खुली हुई हैं। इस पेड़ के दूसरी तरफ एक नाग (सुनहरा) अपना फन उसी पेड़ की जड़ों पर मार रहा है। कभी फन जड़ों पर मारता है, कभी फन तने पर मारता है। नाग बहुत क्रोध में था, मैं दूर खड़ा हुआ देख रहा था मगर नाग हमें नहीं देख रहा था। कुछ क्षणों तक इस क्रिया को देखता रहा, फिर मैं यह सोचकर वहाँ से चल दिया, कि नाग हमारी ओर न आ जाए। उसी समय नाग ने हमें देख लिया, वह मेरी ओर को दौड़ा, मैं वहाँ से तेजी से भागा। इतने में मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! पेड़– पेड़ मेरा ही शरीर है, नाग कुण्डलिनी शक्ति है। शरीर में जड़ तत्त्व की अधिकता रहती है, कुण्डलिनी शक्ति का स्वरुप चैतन्यमय है, इसलिये वह जड़ता की विरोधी है, यह जड़ता को नष्ट कर देती है। नाग पेड़ की जड़ों पर फुँफकारता हुआ फन मार रहा है– नाग हमारे शरीर की जड़ता को नष्ट कर रहा है। जड़ता के नष्ट होने पर पेड़ का अस्तित्व भी नष्ट हो जायेगा। फिर यह शरीर दिव्यता को प्राप्त हो जायेगा।

मैं शत्रु नहीं, मित्र हूँ

मैं किसी सुनसान जगह पर खड़ा हुआ हूँ, मुझे नाग की फुंफकार सुनाई दी, मैं आवाज की ओर चल दिया जिधर से आवाज आ रही थी। मैंने आगे चलकर देखा– एक विशाल जलाशय है उसमें बहुत स्वच्छ पानी भरा हुआ है। उस झील के बीच में पानी के ऊपर एक नाग कुण्डली मारे हुए बैठा है, उसका फन ऊपर की ओर उठा हुआ है, वह पानी में फुंफकार मार रहा है। मेरे मन में आया– यह नाग पानी में फुंफकार क्यों मार रहा है, यह दृश्य देखकर मुझे डर लगने लगा, मैं वहाँ से तीव्र गति से भागा। भागते समय नाग ने हमें देख लिया, तभी नाग फुंफकारता हुआ मेरा पीछा करने लगा। थोड़ी दूर तक भागने के बाद मेरे पैर अपने आप रुक गए, ऐसा लगा जैसे मेरे पैर भूमि पर चिपक गए हैं। मैंने खूब जोर लगाया, मगर मैं अपने पैरों को आगे नहीं बढ़ा सका। इतने में वह नाग मेरे सामने आ गया, मुझे लगा कि वह मुझे काट लेगा, मगर उसने मुझे नहीं काटा। वह नाग फन उठाए हुए मेरे सामने खड़ा हुआ था। उसी समय आकाश से आवाज आई– "मैं आपका शत्रु नहीं हूँ मित्र हूँ, आप जब भी मुझे बुलाएँगे मैं अवश्य आऊँगा"। फिर नाग चला गया, अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! कभी-कभी कुण्डलिनी का दर्शन इसी तरह होता है। पानी के ऊपर नाग कुण्डली मारे बैठा हुआ फुंफकार रहा है। जलाशय, स्थूल जगत का स्वरुप है। पानी वास्तव में चित्त की वृत्तियाँ होती है वही इस रुप मैं दिखाई देती हैं। फुंफकारने काअर्थ है– कुण्डलिनी शक्ति अपनी चैतन्यता को विखेर रही है।

अब मैं दिन में दोपहर बाद 2-3 बजे खाना खाया करता था। सिर्फ एक बार खाना खाने कि आदत डाल रखी थी। कभी-कभी सोमवार की तरह मंगलवार व बुधवार को भी व्रत हो जाता था, क्योंकि दोपहर में 200 मिली दूध और दो केले खाता था जिससे मेरा शरीर और शुद्ध हो जाए।

सन् 1992

शरीर शुद्ध हुआ

अब महसूस होने लगा था कि मेरा शरीर शुद्ध होने लगा है। मैं बाजार की कोई भी चीज नहीं खाता था, चाय भी नहीं पीता था। दूसरों के हाथ का दिया पानी भी नहीं पीता था, दूसरों के हाथों का बनाया खाना भी नहीं खाता था। यदि मैं दूसरों का दिया खाना खा लूँ, तो साधना में हमें महसूस होने लगता था। जिसका खाना खाता था उसके विषय में सब कुछ दिखाई देने लगता था, क्योंकि खाना बनाने वाले के संस्कार उस खाने में आ जाते हैं। मैं भोजन पर विशेष ध्यान देता था, आजकल अन्न खाना बन्द कर चुका था, सिर्फ केला और दूध लिया करता था। कभी-कभी आलू व शकरकंदी उबाल कर खा लेता था, वह भी बिलकुल थोड़ा सा ही खाता था। दिसम्बर माह में श्री माता जी के कहने पर एक बार अन्न खाया था, फिर नहीं खाया था। अब एक कप दूध और दो केले, बस इतना ही मैं खाना खाता था। शरीर में कमजोरी की अनुभूति बिलकुल नहीं होती थी, क्योंकि हमारी कुण्डलिनी उग्र थी, कुण्डलिनी के कारण मेरे शरीर में कमजोरी नहीं आती थी। मैं किसी से ज्यादा बात नहीं करता था, किसी के पास ज्यादा बैठता नहीं था ताकि हमारे अन्दर दूसरों की अशुद्धता न आ जाए। आजकल मैं 10-12 घन्टे साधना करता था। 2 घन्टे शक्ति मंत्र का जाप करता था, लगभग 4-5 बार प्राणायाम करता था। एक सवा घन्टे इसमें लग जाता था फिर व्यायाम भी करना होता था, आधे घन्टे तक व्यायाम करता था तथा आध्यात्मिक पुस्तकें पढ़ता था। आश्रम में किसी न किसी का आना-जाना होता ही रहता था, उससे बातें भी करनी पड़ती थी। आश्रम में लगे पेड़ों को पानी भी देता था। रात्रि में ढाई तीन घन्टे सोया करता था, हमें नींद ज्यादा आती नहीं थी। हमारे विचारों में आजकल बहुत परिवर्तन होने लगा था, इससे लगा हमारे विचार शुद्ध होते जा रहे हैं।

मैं निर्वस्त्र था

अब इस प्रकार के अनुभव बहुत आने लगे थे, अनुभव में मैं देखता था कि मैं निर्वस्त्र हूँ और सुनसान जगह में बड़े आराम से घूम रहा हूँ। आश्चर्य की बात यह थी, मैं अपने शरीर का पिछला भाग भी

पूरी तरह से देख सकता था, जबकि कोई भी मनुष्य अपने शरीर के पीछले भाग को नहीं देख सकता है। मगर मुझे सिर से लेकर पैर तक अपना सारा शरीर दिखाई देता था। उस सुनसान जगह में विचरण करते समय मेरे अन्दर विचार आया, हमें कोई इस अवस्था में देख तो नहीं रहा है। यही सोच ही रहा था– तभी हमें एक मनुष्य अपनी ओर आता हुआ दिखाई दिया। मैं अति तीव्र गति से एक ओर को भागा, ताकि वह पुरुष मेरे पास न आ सके। मैंने मुड़कर देखा– वह मनुष्य भी तीव्र गति से चलता हुआ मेरे पास आ रहा था। मैं यह सोचकर घबराने लगा, वह पुरुष मेरे पास आ जाएगा। उसी समय मुझे दिखाई दिया– हमारे दाहिने ओर एक नदी बह रही है, मैं नदी के पास पहुँच गया। नदी बहुत नीचे बह रही थी, मैंने ऊपर से छलांग लगा दी। छलांग लगाते समय मैं अपने शरीर से निकलकर अलग खड़ा हो गया,अब मैं देख रहा था– मेरे पहले वाला शरीर छलांग लगा कर नदी में कूद गया, मुझे बहुत जोर से हँसी आ गयी यी, फिर मैं बोला– "निर्वस्त्र होने के डर से यह नदी में कूद गया"। फिर मैं इतने जोर से हँसा कि हमारी आँखें खुल गयी। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! मुझे दिखाई दे रहा था कि मैं निर्वस्त्र हूँ, इसीलिए नदी में कूद गया। निर्वस्त्र होने का अर्थ होता है– "विकारों से रहित होना"। मगर अज्ञानता बस मेरे अन्दर विकार आ गया– मैं निर्वस्त्र हूँ इसलिये मुझे कोई देख न ले, ऐसा विकार मेरे अन्दर नहीं आना चाहिये था। यह विकार अभ्यास के द्वारा समाप्त होगा। विकार के कारण ही मैं उस पुरुष से डर रहा हूँ। नदी में कूंदते समय मेरे सूक्ष्म शरीर से एक और शरीर निकल कर बाहर खड़ा हो गया, यह मेरा कारण शरीर था, विकार आने के कारण मैं नदी में कूद गया, इसलिये इस क्रिया को देखकर मैं हँस रहा हूँ।

अन्न का त्यागना

पूर्णतया अन्न त्याग का विचार मेरे अन्दर स्वयमेव आया, ताकि मेरा शरीर ज्यादा से ज्यादा शुद्ध हो जाय तथा हमारी साधना और ज्यादा उग्रता के साथ अग्रसर हो। मैं प्राणायाम ज्यादा करना शुरू कर दिया जिससे भूख कम लगने लगे। अन्न खाने से जड़ता अधिक बढ़ती है, नाड़ियों में जड़ता के कारण अवरोध आ जाता है। ऐसा मैंने ध्यानावस्था में महसूस किया है, इसलिए अन्न त्यागकर प्राणायाम और ज्यादा करने लगा था। श्री माता जी ने एक हफ्ते में एक बार चावल खाने के लिये बोला था, मगर मैंने अन्न पूरी तरह से त्याग दिया था। दिन में दो बार में आधा लीटर दूध व चार केले लेता था। कुछ दिनों तक

ऐसा करने पर हमारे सिर का दर्द भी समाप्त हो गया था। पहले सिर मैं दर्द बहुत हुआ करता था। अब नाड़ियाँ शुद्ध होने के कारण सिर दर्द समाप्त हो गया।

एक बार मैं शक्ति मंत्र का जाप कर रहा था। जाप प्रत्येक दिन निश्चित संख्या में अवश्य करता था, जिससे मेरे अन्दर शुद्धता और ज्यादा हो जाय। मंत्र जाप करते समय हमारी आँखें बन्द हो गयी, तभी अनुभव आया– मेरे सामने दो थालियों में भोजन आ गया, उस भोजन से बहुत अच्छी खुशबू निकल रही थी। मेरी खाने की इच्छा हुई, मैंने अपना हाथ आगे की ओर बढ़ाया, उसी समय मेरे हाथ में कम्पन होने लगी। मेरा हाथ अपने आप वापस आ गया, मैंने अपने सामने थोड़ी सी ऊँचाई पर एक स्त्री को बैठे हुए देखा, वह स्त्री देवियों के समान लग रही थी। उसके सिर पर ऊँचा सा चमचमाता हुआ मुकुट लगा था। वह स्त्री बोली– *''पुत्र, अभी तुमने स्थूल शरीर से अन्न का त्याग किया है। अब सूक्ष्म शरीर से भी अन्न का त्याग कर दो ताकि तुम्हारी इच्छा भोजन करने के लिए न चले''*।

कण्ठचक्र की ग्रन्थि खुल गयी

ध्यानावस्था में मेरा प्राण कण्ठचक्र में रुकता था, इसका कारण कण्ठचक्र में स्थित ग्रंथि है वही आगे का मार्ग अवरोध किये रहती है, ग्रंथि के कारण मुझे बहुत कष्ट भोगना पड़ता था। ध्यानावस्था में कुण्डलिनी भी आगे की ओर नहीं जा पाती थी। यह ग्रंथि ही साधक के लिए बहुत बड़ी अवरोधक है। साधक इस ग्रंथि को खोलने के लिए वर्षों तक साधना करता है तब उसे सफलता मिलती है। वरना बहुत से साधकों को यही ग्रंथि खोलने में सम्पूर्ण जीवन भर साधना करनी पड़ती है फिर भी यह ग्रंथि नहीं खुलती है। अनुभव पढ़कर आपने समझ लिया होगा, हमें भी इस ग्रंथि के कारण बहुत परेशानी उठानी पड़ी थी। ध्यानावस्था में अब इस ग्रंथि की नाड़ियाँ खुलती महसूस होती थीं, ये नाड़ियाँ खुलते समय गर्दन में दर्द हुआ करता था। साधारण अवस्था में भी गर्दन फोड़े के समान दुखती रहती थी, गर्दन को इधर-उधर घुमाने में बड़ी तकलीफ होती थी। मेरी समझ में आने लगा था, कि अब शीघ्र ही ग्रंथि खुल जाएगी, क्योंकि गर्दन का हाल बहुत बुरा होता था। मुझे धैर्य धारण किये हुए कई वर्ष बीत गए थे। जो पुरुष धैर्य पूर्वक किसी काम में लगा रहता है उसे अवश्य सफलता मिलती है। एक दिन ध्यानावस्था में गर्दन की सभी नाड़ियाँ खिंचने लगी, उसी समय ग्रंथि भी दुखने लगी। मुझे ऐसा लगा कि कुण्डलिनी ने अपना मुँह टक्कर मारकर ग्रंथि के अन्दर प्रवेश करा दिया है, ग्रंथि की नाड़ियाँ अलग-अलग होकर बिखर गयी है।

कुण्डलिनी ने फिर कण्ठचक्र पर जोरदार धक्का मारा, इससे उसका मुँह कण्ठचक्र के ऊपर निकल गया, उसी समय ध्यानावस्था में मुझे अनुभूति होने लगी कि मेरा कण्ठचक्र खुल गया है। क्यों कि कुण्डलिनी का मुँह कण्ठचक्र से ऊपर निकल गया था, कण्ठचक्र पर रुका प्राण आज्ञाचक्र पर आ गया। मुझे ऐसा लगा रहा था, कण्ठचक्र में बहुत सारी प्राणवायु भरी हुई थी। अब मुझे अपनी गर्दन बिलकुल खोखली (पोली) लगने लगी थी, क्योंकि कुण्डलिनी और प्राणवायु दोनों ऊपर की ओर चले गए थे। मुझे बहुत खुशी हो रही थी कि मेरा कण्ठचक्र खुल गया है।

अब ध्यान में मेरी स्थिति बदल गयी थी, पहले मेरी स्थिति कण्ठचक्र पर थी अब मेरी स्थिति आज्ञा चक्र पर हो गयी है, क्योंकि मन और प्राण दोनों एक साथ आज्ञा चक्र पर आ जाते थे। अब मन पहले की भाँति इधर-उधर नहीं भागता था, बल्कि मेरा सहयोग करता था और सदैव ईश्वर चिंतन में लगा रहता था। तथा मन अक्सर प्रसन्न रहता था, बुरे विचार आने बन्द से हो गए थे। मन सोचता रहता था मैं सदैव ध्यान पर बैठा रहूँ। मेरा कण्ठचक्र जनवरी के प्रथम सप्ताह में खुल गया था।

यह अनुभव जनवरी के मध्य में आया। सूक्ष्म शरीर से मेरी पत्नी मेरे पास आ गयी, वह कुछ परेशान सी लग रही थी। मैंने पूछा– "क्या हुआ?" वह बोली– "मेरे पेट में सदैव दर्द बना रहता है, आप साधक हैं कृपया हमारी सहायता कर दीजिए"। मैंने अपना बायाँ हाथ उसके सिर के पीछे ओर लगाया और दाहिने हाथ के अँगूठे से उसके मस्तक पर शक्तिपात किया। शक्तिपात करते समय वह एक ओर को हो गयी। मैं बोला– "क्या बात है, एक ओर को क्यों हो गयी"। वह बोली– "तुमने ओंकार बहुत जोर से किया है, मुझे सहन नहीं हो रहा था, अब मेरा दर्द ठीक हो गया है"। वह कुछ क्षणों बाद वापस चली गयी। इसके बाद वह मेरे पास कभी नहीं आयी, क्योंकि उसने जन्म धारण कर लिया है।

लघु मस्तिष्क व आज्ञाचक्र

साधकों! अब हमारी कुण्डलिनी कण्ठचक्र से ऊपर की ओर जाने लगी है। कण्ठ चक्र से ब्रह्मरंध्र द्वार के लिए तीन मार्ग होते हैं। कुण्डलिनी क्रमश: तीनों मार्गों से होकर ब्रह्मरंध्र द्वार तक जाती है। 1. सीधा मार्ग, 2. पूर्व का मार्ग, 3. पश्चिम का मार्ग है। **1. सीधा मार्ग**- यह मार्ग कण्ठचक्र से 90 अंश का कोण बनाता हुआ, बिलकुल सीधा ऊपर की ओर ब्रह्मरंध्र द्वार पर पहुँचता है। **2. पूर्व मार्ग**- यह मार्ग कण्ठचक्र

से आज्ञाचक्र (भ्रूमध्य) पर आता है, फिर आज्ञाचक्र से थोड़ा ऊपर उठता हुआ ब्रह्मरंध्र द्वार पर पहुँचता है।
3. पश्चिम मार्ग- यह मार्ग कण्ठचक्र से लघु मस्तिष्क के बीच से होता हुआ, थोड़ा सा ऊपर की ओर उठता हुआ ब्रह्मरंध्र द्वार पर आता है। इस प्रकार कण्ठचक्र से ब्रह्मरंध्र द्वार तक कुण्डलिनी के गमन करने लिए तीन मार्ग होते हैं। पूर्व का मार्ग और पश्चिम का मार्ग को अगर गौरपूर्वक से देखें, तो पुल के आकार का दृश्य बन जाता है। दोनों मार्ग पूर्व व पश्चिम से घुमावदार होकर ऊपर की आकर बीच में (ब्रह्मरंध्र द्वार पर) मिल जाते हैं।

अर्थ- साधकों! अभी तक कण्ठचक्र पर कुण्डलिनी शक्ति बहुत समय तक रुकी रही थी, लेकिन कुण्डलिनी शक्ति अगर उग्र स्वरूप वाली हो, तो ब्रह्मरंध्र द्वार पर पहुँचने में बहुत ज्यादा समय नहीं लगता है, एक बात और लिखना चाहता हूँ– कण्ठचक्र से कुण्डलिनी शक्ति जब ऊपर की ओर चढ़ती है, तब कभी पूर्व मार्ग पर चल कर आगे की ओर जाती है, कभी सीधे मार्ग पर ऊपर की ओर चली जाती है, तो कभी पश्चिम मार्ग पर लघु मस्तिष्क के बीच से रास्ता बनाती हुई आगे की ओर बढ़ती है। यह पश्चिमी मार्ग साधक के लिए कष्टदायी होता है, क्योंकि लघु मस्तिष्क को कुण्डलिनी शक्ति बेरहमी के साथ चीरती हुई आगे की ओर बढ़ती है। कुण्डलिनी शक्ति जितनी उग्र होगी, साधक को उतना ही अधिक कष्ट भोगना होता है, क्योंकि उग्रता के कारण मार्ग के आसपास के क्षेत्र को जलाती हुई आगे का मार्ग बनाती जाती है। लघु मस्तिष्क की बनावट गोभी के फूल के समान होता है। जब लघु मस्तिष्क में कुण्डलिनी शक्ति अपना मार्ग बनाती हुई आगे की ओर जाती है तब साधक का ध्यान कभी-कभी टूट जाता है, क्योंकि उस समय दर्द बहुत होता है। ऐसा लगता है मानो मांस के अन्दर गर्म लोहे का सूजा (सुआ) घुस गया हो। कभी-कभी साधक दर्द के कारण अपना सिर पकड़कर बैठ जाता है, मगर साधक को यह सब कष्ट सहना ही पड़ता है। अन्य दोनों मार्गों पर कुण्डलिनी शक्ति के जाने पर परेशानी अनुभूति नहीं होती है। जब आज्ञाचक्र पर कुण्डलिनी शक्ति आती है तब आज्ञाचक्र खुलते समय थोड़ी तकलीफ सहनी पड़ती है, क्योंकि आज्ञाचक्र में स्थित झिल्ली जैसी चीज़ को कुण्डलिनी नोंच डालती है। जब आज्ञाचक्र पर कुण्डलिनी आती है तब दिव्य दृष्टि खुलकर अत्यन्त तीव्र गति से कार्य करने लगती है तथा साधक बहुत ज्यादा सूक्ष्मरुप से शक्तिशाली हो जाता है। जरूरत पड़ने पर साधक दूसरों को जबरदस्त हानि भी पहुँचा सकता है, मगर साधक को ऐसा करना वर्जित है, क्योंकि उसके अन्दर दूसरों के प्रति कल्याण का भाव होना चाहिए।

साधकों! अब मेरी साधना में और उग्रता आ गयी, मैं शक्ति मंत्र का जाप बहुत किया करता था जिससे हमारी कुण्डलिनी और उग्र हो जाए। मंत्र जाप करते समय कुण्डलिनी ऊर्ध्व होकर लघु मस्तिष्क के पास पहुँच जाती थी फिर लघु मस्तिष्क में जोर-जोर से धक्का मारती थी, उसी समय मेरा जाप करना बन्द हो जाता था। क्योंकि मैं दर्द से तड़प उठता था। इसी प्रकार ध्यानावस्था में कुण्डलिनी के कारण बड़ा कष्ट होता है, मगर इसे सहना जरूरी था। हमारी कुण्डलिनी शीघ्र ही भृकुटी तक (आज्ञाचक्र पर) आ गयी। कई दिनों तक लघु मस्तिष्क के अन्दर से मार्ग बनाने के बाद एक दिन कुण्डलिनी लघु मस्तिष्क को पार कर गयी, मैंने सोचा चलो अब आराम मिला, बहुत कष्ट होता था जब इस मार्ग पर कुण्डलिनी जाती थी। लघु मस्तिष्क का मार्ग खुल जाने के बाद कुण्डलिनी आज्ञाचक्र खोलने का प्रयास करने लगी। सीधा वाला मार्ग तो उसने बड़े आराम से खोल दिया था। मुझे सदैव मालूम रहता था कि कुण्डलिनी अबकी बार इस मार्ग से होकर जा रही है। ज्यादा तर साधकों को मालूम नहीं होता है कि उनकी कुण्डलिनी किस मार्ग से होकर जा रही है। ऐसा शांत स्वभाव वाली कुण्डलिनी अथवा मध्यम स्वभाव वाली कुण्डलिनी वाले साधकों के साथ होता है। उग्र कुण्डलिनी वाले साधकों को हर समय जानकारी रहती है कि उनकी कुण्डलिनी किस स्थान पर स्थित है अथवा इस समय कहाँ पर गमन कर रही है।

साधकों! यह अनुभव 31 जनवरी की रात्रि 11 बजे का है। आज शुक्रवार है, मैं हर शुक्रवार को श्री माता जी के पास जाता हूँ, श्री माता के पास इस दिन सामूहिक रूप से ध्यान किया जाता है। शुक्रवार को क्षेत्रीय साधक बहुत आ जाते हैं। मैंने भी सभी के साथ ध्यान किया, आज ध्यानावस्था में मुझे बहुत परेशानी हुई थी, क्योंकि आज्ञाचक्र के पास की नसें बुरी तरह से खिंच रहीं थीं। कुण्डलिनी अपनी उग्रता के कारण आज्ञाचक्र में आग-ही-आग फैला रही थी, इस आग के कारण आँखों में जलन होने लगी थी तथा आँखें अन्दर की ओर खिंचती (दबती) थीं। ऐसा लग रहा था– मानों आज्ञाचक्र फटा जा रहा है। मैंने फिर ध्यान तोड़ दिया, कुछ समय बाद श्री माता जी से आज्ञा लेकर रात्रि के 9 बजे मैं आश्रम आ गया। फिर रात्रि के ग्यारह बजे मैं दुबारा ध्यान पर बैठा, कुण्डलिनी ने बड़ी तीव्रता से अपना कार्य करना शुरू कर दिया। ऐसा लगा जैसे आज्ञाचक्र फट जाएगा, प्राण वायु भी आज्ञाचक्र पर दबाव मार रही थी। सम्पूर्ण आज्ञाचक्र कम्पन करने लगा, आज्ञाचक्र के पास की नसें चटकने लगी, ऐसा लग रहा रहा था अब नसें टूट जायेगी। कुछ क्षणों बाद पीड़ा चरम सीमा पर पहुँच गयी, मगर मेरा मन आज्ञाचक्र पर स्थिर था, इतने दर्द में ध्यान कैसे लग सकता है। उसी समय मुझे दर्द से मुक्ति मिल गयी। सारा प्राण वायु ऊपर की ओर आगे चला गया। कुण्डलिनी भी आज्ञाचक्र से थोड़ी ऊपर की ओर आगे चली गयी।

पश्चिम मार्ग से और पूर्व मार्ग (आज्ञाचक्र) से आये हुए दोनों प्राण ब्रह्मरंध्र द्वार पर आकर मिल गये। अब सिर के ऊपरी भाग में गुदगुदी होने लगी, तब ऐसा लगने लगा मैं बहुत ऊपर आ गया हूँ। हमारे अन्दर खुशी की बाढ़-सी आ गयी, क्योंकि हमें बहुत बड़ी सफलता प्राप्त हुई थी। मैंने श्री माता जी को विस्तार से सारी बातें बतायी, तब श्री माता जी बोलीं– "आपका आज्ञाचक्र खुल गया है"।

आज्ञाचक्र खुलने के बाद ध्यानावस्था में दिव्य दृष्टि बहुत ही तीव्र गति से कार्य करने लगी थी। इसलिए अब हमें दूसरों के विषय में बहुत जानकारियाँ हो जाती थीं तथा संत महात्माओं के साथ बातचीत भी बहुत होती रहती थी। ऊपर के लोकों के विषय में ढेर सारी जानकारियाँ होती रहतीं थीं, मगर मैं इन सब बातों को नहीं लिख रहा हूँ, सिर्फ मुख्य-मुख्य अनुभव लिख रहा हूँ।

कमजोरी आ गयी

मुझे फरवरी माह में कमजोरी महसूस होने लगी थी। मैं ज्यादा पैदल भी नहीं चल सकता था, बैठने की भी आदत ज्यादा नहीं रह गयी थी, लेटना ज्यादा अच्छा लगता था। लेकिन ध्यान पर बैठने में कभी कमजोरी महसूस नहीं होती थी। एक माह से ज्यादा हो गया, मैंने अन्न नहीं खाया था। शरीर में शुद्धता बहुत आ गयी थी, मगर कुण्डलिनी के कारण गर्मी बहुत बढ़ गयी थी, तीन-तीन दिन शौच नहीं जाता था, जब शौच जाता था तब शौच के साथ खून भी आता था। मैंने यह बात श्री माता जी को बतायी था, तब उन्होंने मुझे बताया– आपकी आँतों में कुण्डलिनी की गर्मी के कारण जख्म हो गए हैं, आप दूध में घी डाल कर पिया करें तो जख्म नहीं होंगे। मैं दूध में घी डाल कर पीने लगा, ऐसा लगता था हमारे शरीर में आग-ही-आग भरी हुई है, यह आग सदैव महसूस होती रहती थी। समझ में नहीं आता था कि अब क्या करूँ, क्योंकि अभ्यास कम नहीं कर सकता था, ध्यान की लगन लगी हुई थी। इतने सारे कष्टों के बावजूद मेरा मन प्रसन्न रहता था तथा कष्ट सहना हमें अच्छा लगता था। मन सदैव एकाग्र बना रहता था तथा शरीर में बहुत गर्मी के कारण हमारी हालत पागलों की जैसी हो गयी थी, यदि मैं बैठा हूँ, तो मुझे बैठना अच्छा लगता था, हमारी आँखों का देखने का तरीका भी विचित्र-सा हो गया था। कभी-कभी हमें किसी बात की सुध नहीं रहती थी, हमें भूल जाने की आदत सी पड़ गयी थी, कभी-कभी मैं दूध गर्म करते समय दूध को ही देखता रहता था तभी दूध उबलकर नीचे गिर जाता था। मैं गिरते हुए दूध को देखता रहता था, कुछ समय बाद होश आता था कि दूध उबल गया है, मगर अब क्या कर सकता था। दूध उबलकर गिरने

की क्रिया अक्सर हुआ करती थी, मैं सोचता था कि आज दूध नहीं उबलने दूँगा, मगर मेरे आँखों के सामने दूध उबलकर निकल जाता था। फिर मुझे अपने आप पर क्रोध आता था ऐसा क्यों हो जाता है ? मेरा शरीर भी बहुत दुर्बल हो चुका था, शरीर में हड्डियाँ मात्र रह गयी थीं। कोई पूछता क्या बात है, आपका स्वास्थ्य बहुत खराब है। मैं क्या उत्तर देता कि क्यों मेरी ऐसी हालत है, मैं यही कह देता था कि मेरी तबीयत खराब हो गयी थी। इस अवस्था में ईश्वर को सदैव याद करता रहता था, क्योंकि मेरा मन अपने आप ईश्वर की याद में लगा रहता था। जो मन पहले लगाने से नहीं लगता था, आज वह स्वयं एक जगह पर स्थिर हो जाता है। कुण्डलिनी की उग्रता के कारण मेरा यह हाल हो गया था।

मैं गर्भ में

यह अनुभव मार्च माह में योगनिद्रा अवस्था में आया। एक रात्रि मैं सोया हुआ था, मुझे अनुभव आया– मैं किसी जगह घोर अंधकार में हूँ। मेरा शरीर विशेष प्रकार की मुद्रा में है, ऐसा लग रहा है मेरा शरीर पानी में उल्टा-पुल्टा होकर तैर रहा है, उस पानी से दुर्गंध सी आ रही है। दोनों पैरों के घुटने मुँह के पास लग रहे हैं, मेरा शरीर शिशु के समान है। हमारे शरीर की ऐसी मुद्रा बन रही है, जैसा गर्भ में स्थित शिशु की होती है। दोनों पैरों के घुटने मुँह पास स्पर्श करते समय गर्दन में खिंचाव होता था, इस कारण मेरा शरीर दुखने लगता था फिर मेरी आँखें भी खुल जाती है। मैं अपने आपको पलंग पर उसी मुद्रा में पाता था जैसी मुद्रा स्वप्नावस्था में हो रही थी। मैं दुबारा फिर सो गया, सो जाने के बाद फिर पहले जैसा वही अनुभव आने लगा कि मैं गर्भ के अन्दर हूँ, गर्भ में हमारे शरीर पर प्राण वायु के धक्के (दबाव) लग रहें हैं, मेरा शरीर बाहर निकलने का प्रयास कर रहा है, मैं बाहर नहीं निकल पा रहा हूँ। प्राण वायु के दबाव के कारण मेरा शरीर दुख रहा है फिर हमारी आँखें खुल जाती है। तब मैं देखता हूँ पलंग पर हमारे स्थूल शरीर की वैसी ही मुद्रा गर्भ वाली बनी हुई थी, हमारा शरीर दुख रहा था। इसी प्रकार तीन बार क्रिया हुई थी, फिर मैं करवट के बल लेट गया।

इस अनुभव में मुझे मालूम हुआ कि गर्भ में स्थित शिशु की क्या हालत होती है। शिशु सदैव कष्ट भोगता रहता है, गर्भावस्था में शिशु किस प्रकार के कष्ट भोगता है यह हमें अनुभव के द्वारा दिखाया गया है। इसीलिये निद्रावस्था में मैं बार-बार गर्भस्थ शिशु जैसी मुद्रा वाला बनने लगता था। इससे मेरा स्थूल शरीर कष्ट भोगने लगता था, इस अनुभव को मैंने संक्षेप में लिखा है, अनुभव तो बहुत लम्बा था। अनुभव

में हमें समझाया गया था– शिशु का जन्म कैसे होता है, उस समय उसे कितनी अपार पीड़ा होती है। मुझे अपने जन्म के समय की घटना दिखाई गयी थी तथा उस समय मुझे कितनी पीड़ा हुई थी, उसके कुछ अंश की अनुभूति भी करायी गयी थी। इस अनुभव में हमें अपने जन्म के समय का थोड़ा दृश्य व कष्टों कि अनुभूति दिखाई गयी थी। किसी भी मनुष्य को अपने जन्म के समय के कष्टों की अनुभूति याद नहीं रहती है, मगर मुझे इस अनुभव में जन्म के समय के कष्टों की अनुभूति करायी गयी थी तथा मुझे उस समय के दृश्य भी दिखाया गया।

माता कुण्डलिनी द्वारा स्तनपान करना

मैंने अनुभव में देखा– मैं बिलकुल छोटा-सा शिशु हूँ, किसी स्त्री के साथ लेटा हुआ हूँ। उस ने मुझे अपने हाथ का सहारा देकर अपनी ओर करवट के बल लिटा लिया। फिर अपना हाथ मेरे सिर पर रखा, मेरा मुँह अपने स्तन में लगाने लगी, जैसे ही उसने स्तनपान कराने की चेष्टा की, मैंने अपना मुँह एक ओर को हटा लिया। फिर उस स्त्री ने मेरा सिर पकड़कर स्तनपान कराने की कोशिश की, तब मैंने आपना मुँह फिर एक ओर को हटा लिया। परन्तु तीसरी बार मेरा सिर पकड़कर वह स्त्री जबरदस्ती स्तनपान कराने लगी, जैसे ही हमारे मुँह के अन्दर दूध का थोड़ा सा अंश गया, उस दूध का स्वाद हमें बहुत अच्छा लगा, ऐसा दूध स्थूल रूप से उपलब्ध नहीं होता है, जो दूध मैंने इस अनुभव में पिया, उसका स्वाद हल्का सा मीठा था, इसमें दिव्यता की अनुभूति हो रही थी।

अर्थ- साधकों! यह अनुभव मैंने अति संक्षेप में लिखा है, विस्तार में लिखना उचित नहीं समझता हूँ। यह स्त्री स्वयं कुण्डलिनी शक्ति थीं। आजकल मैं अन्न नहीं खाता हूँ, भूख तो सदैव महसूस होती रहती है। इसलिए सूक्ष्म शरीर को तृप्त करने के लिए (भूख मिटाने के लिए) माता कुण्डलिनी ने स्वयम् स्तनपान कराया है। जब तक मैंने अन्न ग्रहण नहीं किया, तब तक मुझे ऐसे ही अनुभव आते रहे, शायद आपको पढ़ने में आश्चर्य जनक लगे, मगर यह सत्य है। मुझ पर माता कुण्डलिनी की अपार कृपा है, यह अनुभव जब श्री माता जी को बताया– तब वह बहुत प्रसन्न हुईं और बोली– एक बार आदिगुरु शंकराचार्य जी प्रभु में इतने खो गए कि भोजन करने की भी याद नहीं रही, उनके सामने देवी की पत्थर की मूर्ति थी, उस पत्थर की मूर्ति से दूध अपने निकलने लगा। फिर उन्होंने उसी मूर्ती का स्तनपान किया और तृप्त हो गए।

कामधेनु गाय

मैंने अनुभव में देखा– मैं पृथ्वी पर एक जगह पर बैठा हुआ हूँ, हमारे सामने एक गाय प्रकट हो गयी, गाय भूमि से थोड़ा ऊपर आधार हीन खड़ी हुई थी। दोनों एक-दूसरे को देख रहे थे, गाय बहुत सुन्दर थी, उसका रंग एकदम स्वच्छ सफेद था। उसके छोटे-छोटे से सींग थोड़ा अन्दर की ओर मुड़े हुए थे, आँखें एकदम काली थीं और साफ थीं। वह गाय साधारण गाय नहीं लग रही थी, क्योंकि वह पृथ्वी से एक-डेढ़ फीट ऊपर आधारहीन खड़ी हुई थी। दूसरी बात उस गाय के शरीर से हल्का-हल्का प्रकाश निकल रहा था तथा वलय चारों ओर घूम रहा था। उसी समय गाय ने मुझसे कुछ कहा– उसकी आवाज तो मनुष्य की भाँति थी मगर भाषा मैं न समझ पाया। मैं बोला– "आपने मुझसे क्या कहा है मैं समझ नहीं पाया, कृपया दुबारा बता दे"। गाय दुबारा बोली– "आपकी साधना एक वर्ष में अच्छी हो जाएगी"। यह सुनते ही मैंने उस गाय को नमस्कार किया, नमस्कार करते समय उसने अपने आगे वाले दोनों पैर मेरे सिर के ऊपर रख दिये। मैंने गाय से कहा– "आपने हमें आशीर्वाद दिया है, हम आपके आभारी हैं"। गाय हमारे सामने उसी समय अन्तर्ध्यान हो गयी। साधकों! यह गाय देवताओं के लिये पूज्यनीय है, ये कामधेनु गाय गोलोक की रहने वाली है।

सिद्धियों से हानि

इस अनुभव में समझाया गया है कि सिद्धि से क्या लाभ होता है और उससे क्या नुकसान होता है। सिद्धियाँ जब मनुष्य को प्राप्त होती हैं तब वह उन सिद्धियों से मनुष्य कार्य कर सकता है, समाज के लोग उस मनुष्य को भगवान की तरह पूजा करने लगते हैं। उस समय मनुष्य को यश भी बहुत प्राप्त होता है, क्योंकि क्षण भर में आश्चर्यजनक कार्य करने की सामर्थ्य होती है। बहुत से व्यक्ति सिद्धि के चक्कर में पड़कर आपका नाम कमाते हैं, जब बहुत समय बीत जाता है तब यह सिद्धियाँ एक न एक दिन कार्य करना बन्द कर देती हैं। फिर वह मनुष्य सिद्धि से रहित हो जाता है। अगर उस मनुष्य ने सिद्धियों से गलत कार्य लिया होता है तब ये सिद्धियाँ उस मनुष्य को किसी-न-किसी रूप में नुकसान भी पहुँचा देती हैं। फिर जो मनुष्य उसकी पूजा किया करते थे, अब वही मजाक उड़ाने लगते हैं। इसलिए सिद्धियों से बचना चाहिए। सिद्धियाँ योगी के लिये आध्यात्मिक मार्ग में अवरोधक होती है।

साधिका के विषय में जानकारी

साधकों! आजकल हमारी दिव्यदृष्टि बहुत तीव्र गति से कार्य करती है। पृथ्वी ही नहीं किसी भी लोक की जानकारी दिव्य-दृष्टि से तुरन्त हो जाती है, कभी-कभी ध्यानावस्था में हमें अपने आप जानकारी हुआ करती थी। अब मैं मिरज आश्रम में बैठे ही अपने परिचितों की तथा साधकों की जानकारियाँ कर लिया करता था। मगर कुछ साधकों की जानकारियाँ अपने आप हो जाती थीं। इस जगह पर एक साधिका का वर्णन संक्षेप में कर रहा हूँ, यह साधिका थाणे (मुम्बई) की रहने वाली है। मैंने दिव्यदृष्टि से देखा– यह साधिका हमारे सामने बैठी हुई है, मगर उसका स्थूल शरीर बहुत कमजोर हो गया है। वह कुछ सोच मुद्रा में बैठी हुई हैं। मैं उस साधिका से बोला– “आपको क्या हो गया, आप इतनी दुबली-पतली क्यों हो गयी हैं”। मगर वह साधिका उत्तर में कुछ न बोली, बस मेरी ओर देखती रही। मेरे अन्दर विचार आया– यह बीमार है तथा इसे शारीरिक कष्ट बहुत है इसलिए चुपचाप बैठी हुई है। दूसरे दृश्य में इस साधिका का पति, साधिका से कहीं बाहर घूमने के लिए दबाव डाल रहा है, जबकि साधिका की अन्दर से घूमने की इच्छा बिलकुल नहीं है। इसके बाद इस साधिका के विषय में ढेरों जानकारियाँ प्राप्त हुई, जिसका वर्णन करना उचित नहीं है। क्योंकि यह उसका व्यक्तिगत मामला है।

अनुभव समाप्त होने के बाद सोचा– मैंने तो इस साधिका से कभी ज्यादा बातचीत भी नहीं की है फिर हमें इसका अनुभव क्यों आया। अनुभव से मैं समझ गया कि यह बीमार रह चुकी है, फिर यह साधिका जब अक्षय तृतीया पर आश्रम में आई, तब मैंने पूछा– “आपका स्वास्थ्य कैसा है”? वह हमारे शब्द सुनकर चौंक गयी, और वह बोली– “आपको कैसे मालूम हुआ कि मैं बीमार थी, मैंने तो किसी को नहीं बताया है”। मैं कुछ नहीं बोला सिर्फ मुस्करा दिया। उसने श्री माता जी से पूछा– “मेरे बारे में आनन्द कुमार को कैसे मालूम हो गया कि मैं बीमार हूँ, मैंने तो किसी को नहीं बताया है कि मैं बीमार थी”। श्री माता जी ने साधिका को बताया– “आनन्द कुमार को सारी बातें योगबल पर मालूम हो जाती हैं, क्योंकि उसकी दिव्यदृष्टि खुली हुई है, किसी की भी जानकारी कर सकता है”। वह साधिका कुछ समय बाद मेरे पास आई और मुझसे पूछा– “आनन्द भैया आपको हमारे बारे में क्या-क्या मालूम है”। मैं बोला– “मैं आपके बारे में बहुत कुछ जानता हूँ”। उसके पूछने पर फिर मैंने उसे बताना शुरू किया, वह चुपचाप मेरी बातें सुनती रही। आखिरकार वह समझ गयी कि मुझसे कोई बात छिप नहीं सकती है। मैंने उसे बताया– “साधक कभी भी किसी की व्यक्तिगत बातें दूसरों को नहीं बताता है आप मेरी ओर से निश्चिन्त हो रहें”। मेरे द्वारा सांत्वना देने पर, वह साधिका प्रसन्न होकर चली गयी।

तन्मात्राएँ

इस प्रकार के अनुभव सिर्फ साधकों को ही आ सकते हैं, और इन अनुभवों से प्रसन्नता बहुत होती है। वैसे इस प्रकार के अनुभव ध्यानावस्था में आते हैं मगर ये अनुभव सामान्य अवस्था में आते थे– मेरे कानों में आवाजें सुनाई दिया करती थीं। ये आवाजें कभी परिचित लोगों की होतीं थी तो कभी अपरिचित लोगों की होती थी। अक्सर मालूम हो जाता था कि कौन बोल रहा है, मुझे कुछ शब्द सुनाई देते थे जिनका उत्तर मैं अन्दर से तुरन्त दे देता था। मुझे अच्छी तरह मालूम रहता था, कि मैंने क्या सुना है और क्या जवाब दिया है। कभी-कभी मित्रों की आवाजें सुनाई देतीं थीं कि आपस में क्या बातें कर रहे थे। कभी श्री माता जी के शब्द सुनाई देते थे, ये शब्द स्पष्ट और तेज आवाज में सुनाई देते थे। कभी-कभी मुझे अपने घर वालों की आवाजे सुनाई देती थी कि हमारे घर में क्या बातें हो रही हैं। इस प्रकार की आवाजें सुन-सुनकर मन ऊब चुका था। एक बार मैंने श्री माता जी को बताया– "हमें ऐसी क्रियाएँ होती रहती है"। तब श्री माता जी ने मुझसे कहा– "आपकी साधना तेज गति से आगे की ओर बढ़ रही है, तभी साधक को यह अवस्था प्राप्त होती है। मुझे भी अपने साधना काल में ऐसे आवाजें कुछ दिनों तक सुनाई दी थी, फिर ये आवाजें अपने आप बन्द हो जातीं है"।

अर्थ- जब साधक की साधना तन्मात्राओं में प्रवेश करती है तब ये क्रियाएँ होनी शुरु हो जातीं है, इन आवाजों का सम्बन्ध आकाश तन्मात्रा से होता है। अभ्यास के द्वारा जब अवस्था आगे की ओर बढ़ती है तब इस प्रकार की आवाजें सुनाईं देनी बन्द हो जातीं है। पहले आवाजें सुनने में बहुत अच्छा लगता है फिर इस क्रिया से मन ऊब जाता है।

एक दिन हमारी इच्छा हुई कि आज मैं ध्यान में बैठकर नाद सुनूँगा। मैं ध्यान पर बैठ गया और नाद सुनने का प्रयास करने लगा, पहले चिनचिन-चिनचिन की आवाज आई, जैसे झींगर आवाज निकालता है। फिर यह आवाज धीरे-धीरे बढ़ने लगी, आवाज इतनी तेज हो गयी कि कानों को परेशानी होने लगी। फिर घन्टे बजने की आवाज आने लगी। आवाज इतनी तेज हो गयी कि ऐसा लगने लगा, हमारे कानों में हजारों घन्टे बज रहे हैं। मैं बहुत समय तक इस ध्वनि को सुनने में लगा रहा। फिर ध्यान से उठ गया, क्योंकि मेरा यह मार्ग नहीं है।

यह अनुभव हमें ध्यानावस्था में आया, मैंने देखा- मैं एक सुनसान जगह पर खड़ा हूँ, अचानक पृथ्वी के अन्दर से आवाज आई– जैसे पृथ्वी फट रही हो, उसी समय हमारे सामने थोड़ी दूरी पर पृथ्वी फट

गयी। पृथ्वी के अन्दर से ऊपर की ओर एक स्त्री प्रकट होने लगी। उस स्त्री के शरीर का नाभि से ऊपर का भाग पृथ्वी के ऊपर था, नाभि से निचला भाग पृथ्वी के अन्दर समाया हुआ था, स्त्री हरे रंग की सितारोंदार साड़ी पहने हुए थी। सिर पर बहुत ऊँचा मुकुट लगा हुआ था, उसके शरीर से तेज निकल रहा था। इतने में उस स्त्री ने मुझसे कुछ कहा– मगर हमारी समझ में नहीं आया, वह स्त्री जोर-जोर से कुछ कह रही थी। मैं सोचने लगा– स्त्री की भाषा हमारी समझ में क्यों नहीं आ रही है, उस समय हवा भी तेज गति से चलने लगी थी इसलिये मैं उसकी आवाज समझ नहीं पा रहा था।

अर्थ- साधकों! उस स्त्री ने किस भाषा में मुझसे कहा मैं समझ न सका। यह स्त्री पृथ्वी का ही स्वरूप था अर्थात पृथ्वी स्त्री रूप में हमें दिखाई दे रही थी। वह मुझसे कुछ कह रही थी मगर मैं उसकी भाषा समझ नहीं पा रहा था। वैसे पृथ्वी एक ग्रह है यह पिण्ड रूप में विद्यमान है, मगर उच्च श्रेणी के साधकों को और योगियों को ध्यानावस्था में यह स्त्री रूप में भी दिखाई देती है। यदि अभ्यासी चाहे तो बात भी कर सकता है।

गोंदेलकर महाराज

ध्यानावस्था में हमें एक अनुभव आया– एक संतपुरुष अपने शिष्यों के साथ बैठे हुए थे, मैं उन्हें दूर से खड़ा हुआ देख रहा था, मुझे उनके पास तक जाने के लिए रास्ता नहीं था, क्योंकि उनके सामने उनके शिष्य बैठे हुए थे। मैंने उन्हें दूर से हाथ जोड़कर नमस्कार किया और बोला– "मैं आपको नमस्कार करता हूँ"। वह संत जी बोले– "मुझे"। मैं बोला– "हाँ मैं आपको नमस्कार करता हूँ"। वह मुस्कराए और बोले– "अच्छा, अच्छा आप द्वितीय में ही रहिए, आप तृतीय, तृतीय में नहीं। आप द्वितीय में ही रहेंगे"। मैं उनके सामने थोड़ी दूरी पर हाथ जोड़े खड़ा हुआ था फिर मैंने रास्ते में बैठे हुए उनके शिष्यों से कहा– "कृपया आप एक तरफ हो जाइए, मैं स्वामी जी को नमस्कार करना चाहता हूँ"। उनके शिष्यों ने एक तरफ होकर मुझे रास्ता दे दिया, फिर स्वामी जी के पास पहुँच कर मैंने उनको नमस्कार किया। फिर उन्होंने हमारी पीठ थपथपाई। उन्होंने जैसे ही हमारी पीठ पर हाथ लगाया, उसी समय मेरी कुण्डलिनी ऊपर की ओर चढ़ने लगी, उसी के साथ मेरा श्वांस भी तीव्र हो गया। उन्होंने दुबारा अपना हाथ मेरी पीठ पर लगाया, सिर से नीचे की ओर को अपना हाथ मेरी पीठ पर फिराया। उसी समय मेरी कुण्डलिनी वापस मूलाधार चक्र में जाकर शांत हो गयी। अनुभव भी समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! ये स्वामी जी बहुत महान योगी थे। महाराष्ट्र में इन्हें ज्यादातर लोग जानते हैं तथा इनकी पूजा भी करते है। ये सन्त जी महाराष्ट्र के ही रहने वाले थे। स्वामी जी ने हमसे कहा– आप द्वितीय में रहिए इसका अर्थ है दूसरा जन्म अभी मेरा और होगा। तृतीय में नहीं, अर्थात तीसरा जन्म मेरा नहीं होगा। जिस योगी को उच्चतम अवस्था प्राप्त होती हैं वह अपने पिछले और अगले जन्मों को जान लेता है। आवश्यक जानकारी– मैं पाठकों को बताना चाहूँता हूँ, जिस समय हमें यह अनुभव आया था उस समय के कर्मों के अनुसार मेरा एक और जन्म होना चाहिये था, इसीलिये सन्त जी ने मुझे ऐसा बोला था। मगर कुछ समय बाद मैंने अत्यन्त कठोर साधना करके तत्वज्ञान को प्राप्त कर लिया है, अब मेरा अगला जन्म नहीं होगा, यही मेरा आखिरी जन्म है। क्योंकि मैंने कर्मों को बीज रूप से नष्ट कर दिया है। ऋतम्भरा-प्रज्ञा के द्वारा मैंने अपने चित्त पर स्थित अज्ञान को नष्ट कर दिया है। इस विषय में आपको आगे पढ़ने को मिलेगा।

उल्टा घड़ा

यह अनुभव हमें मई-जून में ध्यानावस्था में श्री माता जी के सामने आया। श्री माता जी के सामने मैं ध्यान कर रहा था। मैंने देखा– मैं ऊपर की ओर देख रहा हूँ, ऊपर मुझे उल्टा घड़ा रखा हुआ दिखाई दे रहा था, उस घड़े का मुँह नीचे की ओर है। घड़े के मुँह के पास तेज प्रकाश से युक्त एक लाइन चमक रही है, इस प्रकाशित लाइन के कारण चारों ओर प्रकाश फैला हुआ हैं जिससे घड़े का मुँह स्पष्ट दिखाई दे रहा हैं। उस घड़े का मुँह बन्द है, उस घड़े के अन्दर क्या भरा हुआ है, यह मालूम नहीं है। मैंने दो तीन बार देखने का प्रयास किया, मगर घड़े के अन्दर कुछ भी नहीं दिखाई दिया। यह अनुभव मात्र कुछ क्षणों का था। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- ऊपर की ओर दिखाई देने वाला उल्टा घड़ा हमारा ब्रह्मरंध्र हैं। साधक को ब्रह्मरंध्र उल्टे घड़ा जैसा ही दिखाई देता है ब्रह्मरंध्र का मुँह नीचे की ओर हैं इसलिए वह उल्टा घड़ा-सा दिखाई दे रहा था। चमकदार लाइन कुण्डलिनी शक्ति हैं, उसी से प्रकाश निकल रहा हैं”।

जलता पेड़

यह अनुभव ध्यानावस्था में आया– एक पेड़ है उसमें मोटी-मोटी टहनी लगी हुई हैं, वह पेड़ सूखा-सा दिखाई दे रहा है। उस पेड़ में आग लग गयी, आग ने चारों ओर से उसे घेर लिया है, वह पेड़ बुरी तरह से जलने लगा। पेड़ जलने के कारण आग की ऊँची लपटें उठ रही हैं, कुछ समय बाद हमें धुँआ दिखाई देने लगा। फिर दिखाई दिया– यह धुँआ मेरे सारे शरीर के अंदर भर गया है। मैं सोचने लगा कि यह धुँआ क्यों दिखाई दे रहा है अथवा कहाँ से आ गया है? तब याद आया शायद पेड़ पूरा जल गया होगा, इसलिए धुँआ दिखाई दे रहा है, क्योंकि अब पेड़ हमें दिखाई नहीं दे रहा था। मैंने यह अनुभव श्री माता जी को बताया, तब वह बहुत प्रसन्न हुईं और बोलीं– "शास्त्र के अनुसार यह पेड़ जो शरीर के अन्दर जलता दिखाई दिया, वह तुम्हारे पिछले जन्मों के तमोगुणी कर्म हैं, वह जलकर राख हो गए हैं। साधक के लिए यह बहुत बड़ी उपलब्धि होती है"।

साधकों! श्री माता जी ने बताया कि बुरे कर्म जल रहे थे, मगर यह याद रखना– योगबल पर सारे कर्म नहीं जलाए जा सकते हैं, वह चाहे जितना बड़ा योगी हो, सिर्फ कुछ ही कर्मों को जलाया जा सकता है। वही हमारे साथ हुआ, मगर हमारे अभी कर्म शेष हैं, जो भोगकर ही समाप्त होंगे। समाधि से बचे हुए शेष कर्म भोगकर ही नष्ट किये जाते हैं।

शुद्धता की ओर

यह अनुभव दोपहर एक बजे ध्यानावस्था में आया– मैं कहीं चला जा रहा हूँ, रास्ते में 8-9 वर्ष की एक लड़की मिली, लड़की बहुत सुन्दर थी, बड़ी प्यारी सी लग रही थी। लड़की ने दोनों हाथों से लेने का इशारा किया, उसी क्षण मैंने भी अपने दोनों हाथों को आगे की ओर बढ़ाये और उसे उठा लिया,फिर मैंने अपने कन्धों पर उसे बिठा लिया। वह लड़की मेरे लिये अपरिचित थी, फिर भी दोनों तरफ से परिचित-जैसा व्यवहार हो रहा था। मैं लड़की को कन्धों पर बिठाए हुए तेज गति से आगे की ओर जाने लगा। मुझे ऐसा लग रहा था, मैं भूमि पर नहीं चल रहा हूँ, बल्कि भूमि से बहुत ऊपर चल रहा हूँ। आगे चलकर रास्ता छोटे-छोटे कमरों जैसी जगह में बदल गया, मुझे ऐसा लग रहा है एक कमरे से दूसरे कमरे में प्रवेश कर रहा हूँ। कमरा पूरी तरह से चारों ओर से बन्द है, मगर लड़की का इशारा करते ही द्वार अपने आप खुल जाता

था। प्रत्येक कमरे की बनावट एक-जैसी ही है सभी कमरे प्रकाशित है, फिर मैंने सोचा– यह लड़की हमें कहाँ लिए जा रही है, मैं वापस आ भी पाऊँगा या नहीं आ पाऊँगा। यह भी सोच रहा था यह लड़की कौन है? जिसके इशारे मात्र से आगे का मार्ग प्रशस्त हो जाता है, मैं तेजी से आगे की ओर बढ़ा जा रहा हूँ। आगे चलकर जैसे ही मैंने कमरानुमा जगह में प्रवेश किया तो देखा– सामने श्री माता जी ऊँचे आसन पर विराजमान हैं, हल्की-हल्की आभा श्री माता जी के चारों ओर फैली हुई है। उनके सामने ढेर सारी लड़कियाँ बैठी हुई खाना खा रही हैं, सभी लड़कियाँ अत्यन्त खूबसूरत और अच्छे कपड़े पहने हुए हैं। श्री माता जी ने मुझे देखकर मुस्करा दिया। तभी मेरी भी इच्छा खाना खाने की हुई। इतने में आवाज आयी– "आपका खाना यहाँ नहीं है"। मैं यह शब्द सुनकर थोड़ा उदास सा हो गया। इतने में सामने की ओर बैठी हुई श्री माता जी बोलीं– "यह आनन्द कुमार है इसको खाना दे दो"। मैं वहीँ पर बैठ गया, हमारे सामने अपने आप पत्तलनुमा कोई वस्तु आ गयी, उसी समय चमचे से हमें खाना परोसा जाने लगा, हमें सिर्फ अकेले चमचा ही दिखाई दे रहा था। परोसने वाला दिखाई नहीं दे रहा था और न परोसी हुई वस्तु दिखाई दे रही थी, मैं और मेरे साथ वाली लड़की एक साथ खाना खाने लगे, खाना खाकर वह लड़की अदृश्य हो गयी। श्री माता जी ने एक ओर को इशारा किया और कहा– "आप ऊधर चले जाइए"। मैं उसी ओर को आगे चला गया और आगे चलकर मैं ध्यान पर बैठ गया। ध्यान पर बैठे हुए कितना समय हो गया, यह मुझे मालूम नहीं चला, मैंने ध्यान से उठकर सामने ऊपर की ओर देखा– वहाँ पर कुछ लिखा हुआ था, पहला वाक्य अब हमें याद नहीं आ रहा है मैं भूल गया, दूसरा वाक्य लिखा था– "प्राण अपना सही कार्य कर कर रहे हैं, ब्रह्मरंध्र शुद्धता की ओर है"। ये शब्द धधकते हुए अंगारे के समान प्रकाश के द्वारा लिखे हुए थे, वहाँ पर सैकड़ों सूर्य के सामान तेज प्रकाश फैला हुआ था।

अर्थ- साधकों! जो लड़की मुझे मार्गदर्शन कर रही थी और मेरे साथ में खाना खाकर अदृश्य हो गयी थी, वह कुण्डलिनी शक्ति थी। जो मैंने खाना खाया था वह इसलिए नहीं दिखाई दे रहा था, क्योंकि वास्तव में वह स्थूल खाना नहीं था बल्कि वह अध्यात्मिक प्रसाद था। श्री माता जी के रूप में गुरुतत्व था जो सूक्ष्म रूप में चैतन्यमय शक्ति होती है, वही श्री माता जी के रूप में दिखाई दे रही थीं। वहाँ पर स्थूल शरीर वाली माता जी नहीं थीं, ऐसी स्थिति में स्वयं श्री माता जी को मालूम नहीं होता है, कि उनका चैतन्यमय तत्व किसका मार्गदर्शन कर रहा है। चैतन्यमय तत्व सभी जगह व्याप्त रहता है तथा शिष्य के शरीर में भी व्याप्त होता है वही सूक्ष्म नाड़ियों में प्रवेश होकर कार्य करता है।

नाभि पर जोर

कुछ दिनों से ध्यानवस्था में मेरा सिर नीचे की ओर दबाव देने लगता है। ध्यान के शुरुआत के समय मैं बिलकुल सीधा बैठता हूँ मगर थोड़ी देर बाद मेरा सिर नीचे की ओर दबाव देने से गर्दन बिल्कुल सिकुड़ जाती है। सिर का निचला भाग कन्धों पर आ जाता है तथा सारा शरीर धीरे-धीरे सिकुड़ने लगता है। ऐसा लगता है रीढ़ भी नीचे की ओर सिकुड़-सी रही है। उस समय सारे शरीर का जोर नाभि पर पड़ता है, यह अवस्था बहुत समय तक बनी रहती थी। कुछ दिनों पश्चात नाभि अत्यधिक गर्म होने लगी, कभी-कभी ऐसा लगता था,कि नाभि आग का गोला-सा है। उसी समय भस्त्रिका भी चलने लगती है, इससे नाभि की गर्मी ऊपर की ओर बढ़ती है। पेट पर इतना दबाव पड़ता था कि पेट दुखने लगता था। मैं नीचे की ओर इतना सिकुड़ता हूँ कि मेरा शरीर बिलकुल छोटा-सा ही रह जाता है।

अर्थ- साधकों! जब साधक की अवस्था आज्ञाचक्र पर या इससे ऊपर की हो जाती है तब यह क्रिया होती है। इससे सिर में स्थित उदान वायु नीचे की ओर आती है, नीचे की वायु ऊपर जाती है इससे कुण्डलिनी को उग्र होने में सहायता मिलती है। ध्यान से उठने के बाद मैं शवासन किया करता था ताकि नाभि की नाड़ियाँ सही अवस्था में आ जाएँ,जिससे पेट में किसी प्रकार की परेशानी न हो।

श्री माता जी के एक शिष्य शिरीष जोशी जी है, वह इस समय आश्रम में आए हुए हैं। शिरीष जोशी श्री माता जी को बचपन से ही जानते हैं। हमारी इनकी घनिष्ठता बहुत दिनों से है, इन दिनों शिरीष जोशी बड़ौदा (गुजरात) में रहते हैं, ये सिंडीकेट बैंक में मैनेजर हैं, रोजाना 50-55 किलोमीटर ड्यूटी के लिए आते-जाते हैं। एक दिन शाम के समय दोनों एक साथ ध्यान करने के लिये बैठे, फिर मुझे इनके विषय में कुछ जानकारी मिली, मैं समझ गया इनके साथ कुछ गड़बड़ जरुर हुआ है। मैंने इनके विषय में दिव्यदृष्टि के द्वारा सब कुछ जान लिया, कि ये बैंक से सम्बन्धित थोड़ा परेशान है। सुबह शिरीष जोशी को मैंने सब कुछ बता दिया– “जब आप ड्यूटी पर जाते हैं, तब इस प्रकार का पुल व जंगल-सा रास्ते में पड़ता है, रास्ते में भूमि इस प्रकार की है, रेलवे का पुल मिलता है, पुल बहुत ऊँचा है, रेल की सिंगल लाइन है, नदी में पानी बहुत कम बह रहा है, नदी बरसात में बहुत ज्यादा बढ़ जाती है। ऑफिस में आपके प्रति कुछ लोग अच्छे विचार नहीं रखते हैं”। मैंने आफिस का उन्हें सब कुछ बता दिया, अब शिरीष जोशी जी आश्चर्यचकित हो गए। वह मुझसे बोले– “आपको मेरे बारे में इतनी बारीकी से सब कुछ कैसे मालूम हो गया है”। मैं बोला– “दिव्यदृष्टि के द्वारा सब कुछ जाना जा सकता है”। फिर मैंने उनका भविष्य भी

बता दिया ताकि वह सतर्क हो जाएँ। मेरे द्वारा बतायी गयी सारी बातें उन्होंने श्री माता जी को बता दी और पूछा– मेरे विषय में आनन्द कुमार को सारी बातें कैसे मालूम हो गयी हैं? श्री माता जी बोलीं– "आनन्द कुमार को अनुभव सही आते हैं, क्योंकि ध्यान में उसकी स्थिति अच्छी है"।

आपका प्रसाद इधर है

मैंने अनुभव में देखा– मैं किसी जगह पर खड़ा हुआ हूँ, मेरे सामने थोड़ी ऊँची सी जगह है, वहाँ पर कुछ पुरुष खड़े हुए हैं, मैं उन पुरुषों को देख रहा हूँ। उसी समय आवाज आयी– "आपका प्रसाद इधर है"।आवाज पीछे की ओर से आ रही थी, मैंने पीछे मुड़कर देखा– तो अंतरिक्ष में तीन देवियाँ खड़ी हुई दिखाई दी। बायीं ओर शेर पर सवार देवी खड़ी हुई थी, बीच में कमल पर एक देवी बैठी हुई थी, दाहिनी ओर एक देवी हंस पर सवार थी। तभी शेर पर सवार देवी, कमल पर बैठी देवी के अन्दर विलीन गयी। फिर हंस पर बैठी देवी, कमल पर बैठी देवी के अन्दर विलीन हो गयी। कमल पर बैठी देवी का तीसरा नेत्र खुला हुआ था। कमल पर बैठी देवी ने कहा– "आपका प्रसाद हमारे पास है, आगे बढ़ो और मुझसे अपना प्रसाद ले लो"। इतने में मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! जो देवी हमें प्रसाद देने को कह रही थी वह माता कुण्डलिनी थी। उसी से सारी देवियाँ प्रकट हुई हैं, इसलिए मुझे दोनों देवियाँ उसी में लीन होती हुई दिखाई दीं। मात्र कुछ क्षणों में यह सम्पूर्ण दृश्य दिखाई दे गया।

भाई का सूक्ष्म शरीर

ध्यानावस्था में मेरे भाई का सूक्ष्म शरीर मेरे पास आया और बोला– "मुझे अपने मृत्यु के बारे में अच्छी तरह से जानकारी है, क्योंकि वह मेरे हृदय पटल पर लिखी हुई है। पिछले जन्म में मेरा नाम 'भानुप्रताप' था"। मैंने इस भाई का पिछला जन्म देखा तो पाया, उसका सूक्ष्म शरीर सत्य कह रहा है, क्योंकि सूक्ष्म शरीर को सब कुछ मालूम होता है। यह तीसरे नम्बर के भाई का सूक्ष्म शरीर था। मगर भाई को जानकारी नहीं है उसका सूक्ष्म शरीर ने मुझसे बात की है।

दूसरे लोक में जाना

यह अनुभव मुझे जुलाई माह में आया– मैं एक लता (बेल) को पकड़-पकड़ कर उसी के सहारे तीव्र गति से ऊपर की ओर चढ़ रहा हूँ, यह लता सीधी ऊपर आकाश की ओर गयी थी, लता बिलकुल नाजुक और पतली सी है। मैं यह भी देख रहा हूँ– लता पर चढ़ते समय आकाश के जिस क्षेत्र गुजर रहा हूँ वह आकाश हल्के नीले रंग के तेज प्रकाश से युक्त है। उस आकाश में सूर्य, चन्द्रमा, तारे आदि नहीं हैं, आकाश स्वप्रकाशित है। चढ़ते-चढ़ते मैं किसी आधार पर खड़ा हो गया, मगर आधार दिखाई नहीं दे रहा था, सिर्फ महसूस हो रहा था, वह लता यही तक आयी हुई थी, अब मैं अदृश्य आधार पर आगे की ओर चलने लगा, मुझे सामने की ओर एक जगह पर स्त्री व पुरुष खड़े हुए दिखाई दिये। मैं भी वही पर जाकर खड़ा हो गया, वहाँ पर स्त्रियों की संख्या कम थी। उसी समय मैंने अपने आप को एक स्त्री के सामने खड़ा हुआ पाया, मेरे सामने ओर एक स्त्री ऊँचे स्थान पर बने सिंहासन पर बैठी हुई थी, वह स्त्री एक ओर को मुँह किये हुए थी। वहीं पर उपस्थित कुछ पुरुष उस स्त्री से कहने लगे– "माँ, यह पुरुष बहुत दूर से आया हुआ है कृपया आप इसे दर्शन दे दीजिए"। उन पुरुषों के कहने पर उस स्त्री ने अपना चेहरा मेरी ओर कर लिया, मैंने उस स्त्री को नमस्कार किया। उस समय स्त्री के चेहरे से तेज निकल रहा था, उसका रंग हल्का साँवला या नीला सा था। सिर पर ऊँचा सा मुकुट लगाए हुए थी, मुझसे कद में वह बहुत ही ज्यादा ऊँची थी, वहाँ के पुरुष व स्त्री सभी बहुत ऊँचे कद वाले थे। उस स्त्री के लम्बे-लम्बे बाल खुले हुए थे, फिर वह स्त्री सिहांसन से ही अन्तर्ध्यान हो गयी। इतने में कुछ पुरुष मेरे पास आए और बोले– "आप कहाँ से आए हैं ?" क्षणभर के लिए मैं सोचने लगा, ये लोग मुझसे ऐसा क्यों पूछ रहे हैं? फिर दूसरे पुरुष ने पूछा– "आप किस लोक से आए हुए हैं?" मैंने तुरन्त जवाब दिया– "मैं पृथ्वी लोक से आया हूँ"। इतने में वहाँ उपस्थित कुछ लोग कहने लगे– "अच्छा, अच्छा आप पृथ्वी से आए हो। वहाँ पर दिन-रात बहुत ही छोटे-छोटे होते हैं तथा ज्यादातर पुरुष अधर्म में लगे रहते हैं, मगर आप तो योगी हैं इसीलिए यहाँ तक आ पाये हो"। मैं सोचने लगा ये लोग ऐसा क्यों कहते हैं। उनमें से एक पुरुष बोला– "यहाँ पर कभी रात्रि नहीं होती हैं, अब आप यहाँ से जाइए, यहाँ पर आप ज्यादा देर तक नहीं ठहर सकते हैं, फिर कभी भविष्य में आना"। उसी समय मैं वहाँ से नीचे की ओर गिरने लगा। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! अनुभव पढ़कर आप समझ गए होंगे कि मैं किसी ऊपर के सूक्ष्मलोक में चल गया था, क्योंकि वह स्त्री हल्के नीले रंग की या सांवले रंग की थी। वह स्त्री देवी काली या देवी चंडी का बदला हुआ स्वरूप हो सकता है, क्योंकि नीले शरीर वाली स्त्री और कौन देवी हो सकती है। वहाँ का अंतरिक्ष

हल्के नीले रंग से स्वप्रकाशित सा था। मैं जिस लता (बेल) के सहारे मैं ऊपर चढ़ रहा था, वह हमारी सुषुम्ना नाड़ी है।

संकल्प करो सारे चक्र खुल जाएँ

आजकल मेरा मन बहुत दुःखी रहने लगा था, क्योंकि मुझसे अकारण अपमान जनक शब्द कहे जाते थे। मैंने श्री माता जी से इस बात की शिकायत की, तो उन्होंने हमारी शिकायत नहीं सुनी, बल्कि हमारे अन्दर के दोष जरुर निकलने लगीं। उनका कहना था– "मैं गुरु (श्री माता जी) के प्रति रूखा हूँ"। हमारी समझ में यह नहीं आया कि सदैव अतिश्योक्ति में गुरु की स्तुति करने से क्या योग का अभ्यास हो जाएगा, अगर सदैव अतिश्योक्ति में गुरु की स्तुति करते रहने से योग का अभ्यास हो जाता, तो फिर किसी को योग का अभ्यास करने की आवश्यकता नहीं होती, सभी स्तुति करके योग में पूर्णता प्राप्त कर लेते, कर्म का महत्व ही नहीं जाता। आप यह सोच रहे होगें– क्या मैं गुरु विरोधी था, ऐसा नहीं है। यदि मैं ऐसा होता तो मैं आश्रम में नहीं रहता और न ही मुझे आश्रम में रख जाता। मुझे सिर्फ साधना करने की लगन थी, अगर यह लगन न होती तो मैं आश्रम में स्वयं नहीं रुकता। आश्रम में मुझे ढेरों परेशानियाँ होती थीं। शुरुआत में मैं बिलकुल अकेला रहता था, उस समय वहाँ पर बिजली भी नहीं थी। मुझे रहने के लिये स्वच्छ स्थान भी नहीं था। बिलकुल कम पैसों में खर्च चलता था। किसी ने कभी यह नहीं पूछा– इतने कम पैसों में खर्च कैसे चलता है आदि। मैं किसी की बुराई नहीं कर रहा हूँ, सिर्फ बात बता रहा हूँ। मैंने आश्रम में रहकर श्री माता जी के प्रिय शिष्यों की बहुत उलटी-सीधी बातें सुनी है। श्री माता जी के प्रिय शिष्य जो अकारण कुछ न कुछ बोलते रहते थे, उनकी साधना की अभी तक शुरुआत भी नहीं हो पाई है और न ही अभी शुरुआत होगी। मेरी दृष्टि में अभी वर्षों बाद तक भी साधक नहीं बन पाएँगे। ये पंक्तियाँ लिखे जाने तक उन साधकों को 25-30 वर्ष हो गये हैं, अभी तक अभ्यास में शून्य है। मैंने साधना के लिए त्याग किया है, सब कुछ छोड़ दिया, मैं अपना समय व्यर्थ में नहीं गंवाना चाहता हूँ। मेरी साधना ऐसी अवस्था पर आ गयी है कि मैं अच्छा बुरा सब कुछ समझता हूँ। श्री माता जी को क्या यह ज्ञात नहीं है, जब मैं दूसरों के विषय में जान लेता हूँ, क्या श्री माता जी के विषय में नहीं जानता हूँ। हमारी दिव्यदृष्टि अत्यन्त तेजस्वी होने के कारण क्या वह अपने आपको बचा सकती है कि उनके विषय में हमें जानकारी न हो। मैंने श्री माता जी के पिछले पाँच जन्मों को देखा है और वर्तमान का मैं सब कुछ जानता हूँ।

साधकों मैं गुरु विरोधी नहीं हूँ, श्री माता जी से मैं बहुत प्रेम करता हूँ, मगर सत्य श्रेष्ठ होता है, मैं सत्य का अनुसरण करता हूँ। जो साधक गुरु विरोधी होता है वह व्यक्ति इस संसार में सबसे निकृष्ट होता है। आजकल हमारे सम्पूर्ण कार्य गुरु पर अटूट श्रद्धा के कारण ही सम्पन्न होते है। गुरुनिष्ठ होने के कारण ही आज मैं सफल हूँ। इसलिए साधकों! गुरु निष्ठ बनो।

गुरु पूर्णिमा का अवसर आ गया, दूर-दूर से साधकगण श्री माता जी के घर आने लगे। हमारे पिताजी भी श्री माता जी के पास आये हुए थे। गुरु पूर्णिमा पर उसी समय श्री माता जी के प्रिय शिष्य ने शब्दों से मेरा बहुत अपमान बहुत किया। मगर इस विषय पर श्री माता जी कुछ नहीं बोलीं, जबकि वह भी उस समय सुन रही थीं। मुझे बड़ा दुःख हुआ। मैंने पिताजी से पूछा– "क्या मैं घर वापस चलूँ, आपको कोई परेशानी तो नहीं होगी?" पिता जी बोले– "आप चलिए, हमें कोई परेशानी नहीं है"। मैंने श्री माता जी को पत्र लिखा, उसमें सारी बातें लिखकर यह भी लिखा– मैं घर जा रहा हूँ, आश्रम में किसी अन्य साधक की व्यवस्था कर दीजिए। श्री माता जी को पत्र दे दिया, गुरु पूर्णिमा उत्सव मेरा दुःख में ही व्यतीत हुआ। उसी समय ध्यानावस्था में अनुभव आया– एक सन्यासी जी मेरे पास आए और बोले– "पुत्र अभी तुम घर नहीं जाओगे, यहीं पर साधना करो"। मैंने बहुत सोच विचार कर घर जाने का मन त्याग दिया, गुरु पूर्णिमा मिरज के एक कार्यालय में मनाई गयी थी, गुरु पूर्णिमा के बाद बहुत से साधक वापस चले गये थे, कुछ साधक अभी यहीं पर थे। मैं आश्रम में वापस लौट आया, मैं अकेला ही आश्रम में आया था, अभी सभी साधक मिरज में ही थे। मुझे थकान-सी महसूस हो रही थी। थकान के करण मुझे नींद आ गयी।

स्वप्नावस्था में मुझे दिखाई दिया– चौदह-पंद्रह साल का एक लड़का मेरे पास आया, उसके हाथ में एक गिलास था। वह गिलास उसने मुझे दे दिया, मैंने गिलास में देखा दही जैसी कोई वस्तु है, उसने उसे पीने का इशारा किया। मैं उस दही जैसी वस्तु को पीने लगा, जैसे ही मैंने दही जैसी वह वस्तु को पिया और वह मेरे मुँह के अन्दर गया ही होगा, तभी वह लड़का बोला– "संकल्प करो कि सारे चक्र खुल जाएँ"। अचानक मेरे मुँह से मजाक में निकला– "क्यों संकल्प करूँ कि हमारे सारे चक्र खुल जाएँ"। मैं फिर गिलास में स्थित उस वस्तु को पीने लगा, वह वस्तु देखने में दही जैसी थी मगर उसका स्वाद हल्का मीठा था, दही जैसा स्वाद नहीं था, मैंने सारा गिलास पीकर खाली कर दिया। वह लड़का हमारी ओर देखकर मुस्करा रहा था, लड़के के चेहरे से बहुत तेज प्रकश निकल रहा था। वह लड़का देखने में बहुत सुन्दर था, मैं भी उसे देखकर मुस्कराने लगा। फिर मैं बोला– "चलो आप कहते हैं तो मैं संकल्प किये लेता हूँ, कि हमारे सारे चक्र खुल जाए"। मैं इतना ही कह पाया था कि लड़का मेरे सामने ही से अन्तर्ध्यान हो

गया, उसी समय हमारी आँखें खुल गयी। मैं उठकर बैठ गया और अनुभव के विषय में सोचने लगा। वह लड़का बहुत सुन्दर था, अच्छा लग रहा था। उसने मुझसे बड़े प्यार से कहा था।

अर्थ- साधकों! गिलास में दही जैसी वस्तु, सात्विक शक्ति थी अथवा आध्यात्म था। यही लड़का भविष्य में भी दो-तीन बार मिला तथा इसने साधना में मेरी बहुत सहायता की और योग में मुझे उच्च स्थान पर पहुँच दिया। मैं इस लड़के के विषय में नहीं जानता हूँ, कि यह कौन है? अनुभव में लड़का ग्लास में दही जैसी वस्तु को पीने के लिए कह रहा है। जब कभी दही जैसा पदार्थ अभ्यासी ध्यानावस्था या योगनिद्रा में पिये, तब समझ लेना चाहिए अभ्यासी की आध्यात्म में उन्नति होने वाली है उस लड़के ने मुझसे कहा– “संकल्प करो कि तुम्हारे सारे चक्र खुल जाएँ”। मनुष्य के शरीर में मुख्य रूप से सात चक्र होते हैं। वह लड़का सातों के खुलने का संकल्प करवा रहा था अर्थात सहस्त्रार चक्र के खुलने के लिये भी कह रहा है। यह लड़का हमारे आध्यात्मिक जीवन में कई बार दिखाई दिया। सदैव हमारी सहायता करता था, फिर अदृश्य हो जाता था।

मीठापन

यह बात जून माह की है। मैं श्री माता जी के पास गया हुआ था। श्री माता जी ने एकांत में पूछा– “आनन्द कुमार, आपने कभी महसूस किया कि आपके गले में कुछ मीठापन-सा घुला रहता है, ऐसा लगता है जैसे कोई मीठी चीज खाई हो, मैं सोच रही थी शायद आप मुझसे पूछेंगे, मगर आपने नहीं पूछा”। मैं बोला– “श्री माता जी, हमारे गले में मीठा-मीठा-सा स्वाद बहुत दिनों से बना रहता है। मगर इसलिए नहीं पूछा, मैंने सोचा शायद मेरे मुँह का स्वाद खराब रहता होगा, इसलिए ऐसा हो रहा है। कभी-कभी गले में ऐसा लगता है जैसे शहद-सा घुला हुआ है। यह शहद-सा गाढ़ा तरल पदार्थ सिर के ऊपरी भाग से नीचे की ओर गिरता-सा जान पड़ता है। फिर बहुत समय तक गला मीठा बना रहता है, यह मीठापन बहुत अच्छा लगता है।” श्री माता जी ने कहा यह अनुभव आपका बिल्कुल सही है।

साधकों! इस मीठेपन की अनुभूति कण्ठचक्र खुलने के बाद होती है, ब्रह्मरंध्र के द्वार के पास से विशेष प्रकार का द्रव्य नीचे की ओर गिरा करता है, इसका स्वाद मीठा होता है तथा द्रव गाढ़ा-गाढ़ा होता है। इस मीठेपन को सिर्फ साधक ही अनुभूति कर सकता है। जो साधक खेचरी मुद्रा करना जानते हैं अर्थात

खेचरी मुद्रा में परिपक्व हैं, वह इस द्रव का अपनी जिह्वा के अग्र भाग से स्वाद लेते हैं। इस क्रिया से साधक की भूख मिट जाती है अथवा उसे बिलकुल थोड़ी ही भूख लगती है। मुझे ध्यानावस्था में एक क्रिया होती रहती है, ध्यानावस्था में सिर नीचे की ओर दबाव देता है। उस समय यह द्रव सीधे नाभि पर गिरता है जिससे जठराग्नि शांत हो जाती है। भूख कम लगती है। किसी-किसी जगह पर इस द्रव का अमृत शब्द से उल्लेख मिलता है।

मुझे अनुभव आया– मैं किसी साफ-सुथरे रास्ते पर तीव्र गति से चला जा रहा हूँ, मुझे आगे का रास्ता दूर-दूर तक साफ दिखाई दे रहा था। अचानक उस रास्ते पर सामने ओर से एक घोड़ा हमारी ओर आता हुआ दिखाई दिया, मैं भी उसी रास्ते पर आगे की ओर चला जा रहा था। मैं सोचने लगा– यह घोड़ा कहाँ से आ गया, घोड़ा देखने में ऊँचे कद का था और उसका मुँह बहुत डरावना सा था। घोड़ा हमारे नजदीक आता जा रहा था, मैं छिपने के लिए एक खेत की ओर चला गया। उस खेत में स्थित पेड़ों पर कांटे लगे हुए थे, इसलिए मैं आँखें बन्द करके खेत के किनारे बैठ गया। कुछ क्षणों बाद मैंने आँखें खोलकर देखा– तो घोड़ा बड़े आराम से मुझसे थोड़ी दूरी पर खड़ा हुआ था। मैं उस घोड़े को मिट्टी के ढेले फेंककर मारने लगा, मगर वह घोड़ा अपनी जगह से नहीं हटा। मैं सोचने लगा– घोड़ा यहाँ से जा क्यों नहीं रहा है। उसी समय मुझे सामने ओर से एक सन्यासी आते हुए दिखाई दिये, सन्यासी जिस रास्ते से आ रहे थे, मुझे उसी रास्ते पर जाना था। वह सन्यासी गेरुए वस्त्र धारण किये थे, उनके हाथ में चमकती हुई एक रस्सी थी, उस सन्यासी की उम्र बिलकुल कम थी, वह सिर्फ 25 वर्ष के लगते थे। सन्यासी हमारी पास आ रहे थे, यह जानकर हमारे मन में बहुत खुशी हुई। सन्यासी ने थोड़ी दूरी पर खड़े होकर, रस्सी का फंदा घोड़े की ओर फेंका, रस्सी का फंदा फेंकते ही घोड़ा अदृश्य हो गया। उसी समय सन्यासी भी अदृश्य हो गया, इतने में मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! घोड़ा मन का प्रतीक होता है। कभी कभी इंद्रियाँ भी घोड़े के रूप मे दिखाई देती हैं हो सकता है कोई इन्द्रिय हमारे योग मार्ग में अवरोध डालना चाहती हो, मगर किसी महापुरुष ने आकर मुझे बचा लिया।

ध्यानावस्था में आगे की ओर झुकना

साधकों! गुरु पूर्णिमा उत्सव मानाने के बाद मैं आश्रम में आ गया था। कुछ समय बाद बहुत से साधक मिरज से आश्रम में आ गये थे, अब आश्रम में काफी भीड़ हो गयी थी। दूसरे दिन श्री माता जी भी आश्रम में आ गयी, आश्रम में सामूहिक रूप से ध्यान हुआ करता था। अब मुझे फिर से आगे की ओर झुकने की क्रिया होने लगी थी, ध्यान पर बैठते ही बड़ी वेग से कुण्डलिनी ऊपर चढ़ती थी, ब्रह्मरंध्र द्वार पर टक्कर मारते ही मैं आगे कि ओर झुक जाता था। मेरा मस्तक भूमि पर स्पर्श करने लगता था, उसी समय जालंधर बन्ध भी लगता था, ठोड़ी सीने से चिपक जाती थी, सिर का ऊपरी भाग (ब्रह्मरंध्र वाला) भूमि पर स्पर्श करने लगता था। ऐसा लगता था मानों मैं सिर के बल खड़ा हो जाऊँगा, तीनों बन्ध तथा बाह्य कुम्भक भी लगता था, बाह्य कुम्भक के कारण श्वांस अन्दर ही नहीं आता था। ऐसा लगता था– "यदि थोड़ी देर श्वांस वापस न आई तो मेरी मृत्यु हो जाएगी"। बाह्य कुम्भक बहुत देर तक लगता था, जब श्वांस अन्दर आ जाए, तब आंतरिक कुम्भक लग जाता था, श्वांस बाहर निकलने का नाम नहीं ले रहा था। उसी समय समय कुण्डलिनी ब्रह्मरंध्र द्वार पर टक्कर मारती थी तब उसकी और पीड़ा होने लगती थी। यही अवस्था हमारी एक डेढ़ घन्टे तक बनी रहती थी, मूलाधार चक्र के आस-पास का क्षेत्र ऊपर की ओर उठने लगने के कारण मैं सिर के बल खड़ा होने के लिए मजबूर होने लगता था। साधकों! उस समय हमारे शरीर को घोर पीड़ा होती थी, मगर मैं क्या कर सकता था। घोर कष्ट झेलता रहता था, मेरा ध्यान देर तक लगने के कारण सभी साधक मेरी ओर देखते रहते थे क्योंकि अन्य सभी साधक 20-25 मिनट तक ध्यान करने के बाद आँखें खोल देते थे। जब मैं ध्यान से उठता था तब श्री माता जी हमारी ओर देखती थीं, मैं उनके देखने के भाव से ही समझ जाता था कि श्री माता जी क्रोध में देख रही हैं।

एक दो दिन बाद एकांत में मैंने श्री माता जी से उनके पास जाकर पूछा– "श्री माता जी, हमें आगे की झुकने की क्रिया क्यों होती है?" श्री माता जी बोलीं– "मैं देख रही थी आपको यह क्रिया होती है, यह आपका बुरा कर्म है। आनन्द कुमार, आपकी शादी हुई और पत्नी भी मर गयी। आप इस मार्ग में आ तो गए, मगर आपको गृहस्थ में रहना चाहिए था। ठीक है आप यह मार्ग पकड़े हुए हैं, मगर आपका कर्म गृहस्थ का था।" यह सुनकर मैं बहुत दुःखी हुआ और सोचने लगा– अगर मेरा कर्म गृहस्थ का था तब हमारी योग में इतनी तीव्र गति क्यों है, अनुभव इतने अच्छे-अच्छे क्यों आते हैं। इस समय श्री माता जी के शिष्यों में मैं दूसरे नम्बर का साधक क्यों हूँ? श्री माता जी के सैकड़ों शिष्य हैं, उनकी इतनी तीव्र साधना क्यों नहीं है। यह सोचकर मैं रोने लगा, यह बात मैंने अपने पिताजी को भी बतायी थी, क्योंकि उस समय

वह वहीं पर उपस्थित थे, मैं खड़ा हुआ रो रहा था। मेरा कर्म पिछले जन्मों का इतना गन्दा है तो मैं क्या करूँ? मुझे अपार मानसिक कष्ट हुआ। अब मैं ध्यानावस्था में आगे झुकते ही ध्यान तोड़ देता था, चुपचाप आँखें खोलकर बैठा रहता था। मैंने अपना ध्यान कम कर दिया, जिससे हमें आगे की ओर झुकने की क्रिया ही न हो। ध्यान कम हो जाने के कारण कुछ दिनों बाद आगे झुकने की क्रिया होनी बन्द हो गयी, अब मैं ध्यानावस्था में सीधा बैठा रहता था। कुछ दिनों बाद श्री माता जी जलगाँव चली गई।

उन्मनी अवस्था

आजकल हमारी आदत पागलों की भाँति हो गयी थी, मैं हर बात को भूल जाता था। मैं सोचता था– अबकी बार अमुक बात याद रखूँगा, बिलकुल नहीं भूलूँगा, मगर मैं भूल जाता था। हमारी समझ में नहीं आता था, मैं ऐसा क्यों हो गया हूँ। मैं चुपचाप गुमसुम-सा बैठा रहता था। मैंने आज दूध पिया है कि नहीं पिया है, यह भी मैं यह भी भूल जाता था, क्योंकि मैं अन्न बिलकुल नहीं खाता था। मैं पड़ोसी से दूध ले लिया करता था, कभी-कभी मैं उसके पास दुबारा दूध लेने के लिये पहुँच जाता था। जब वह पड़ोसी बताता था– "आनन्द कुमार आप दूध ले गए,अब आप दुबारा दूध लेने आ गये है। तब हमें याद आता था, मैं तो दूध ले गया हूँ अब दुबारा दूध लेने आ गया हूँ। कभी मैं दोपहर तक दूध लेने नहीं जाता था, तब वह स्वयं दूध दे जाते थे। बस मैं ध्यान करता रहता था, पेड़ों को पानी डाला करता था, जब कोई नयी इमारत बनती थी तब मैं उसमें तराई करने के लिये पाइप से पानी डाला करता था। कभी-कभी पेड़ों पर दुबारा पानी डालने पहुँच जाया करता था, मेरा रोज दूध उबल जाया करता था। मैं यह सोच कर बैठ जाता था– कि आज दूध नहीं उबलने दूँगा, मगर जब मैं दूध गर्म करने लगता था, तब कुछ समय बाद मैं दूध उबलते हुए सामने देखता रहता था और उबलते हुए को देखकर हंसता था कि दूध उबाल रहा है।

अकेले में मैं अपने गालों पर थप्पड़ मारा करता था, थप्पड़ इतने जोर से व बेरहमी से मारता था कि गालों में दर्द होने लगता था, तब मैं मारना बन्द कर देता था, तब हमारी कभी-कभी इच्छा चलती थी– कि सिर को दीवार में मारो, मैं सिर दीवार में मारने लगता था। एक बार सिर दीवार पर इतने जोर से मारा, कि सिर से खून बहने लगा। मैं सिर पकड़कर दर्द के कारण रोने लगा, मुझे लगा मैं पागल हो जाऊँगा। जब अपने थप्पड़ मारता अथवा दीवार में सिर पटकता था तब थोड़े समय बाद मैं ठीक हो जाता था। कुछ दिनों बाद धीरे-धीरे यह क्रिया बन्द हो गयी।

अर्थ- साधकों! उसी समय मुझे स्वामी मुक्तानन्द की एक पुस्तक 'चिद्शक्ति विलास' पढ़ने को मिली थी। उसमें एक जगह पर लिखा था– "साधक की एक ऐसी अवस्था आती है, साधक स्वयं अपने थप्पड़ मारा करता है, उसकी इच्छा चलती है कि मैं अपने थप्पड़ मारूँ"। साधकों! यह चित्त की एक अवस्था होती है। उस समय साधक को लगता है, मैं अपने थप्पड़ नहीं मार रहा हूँ बल्कि मैं इस जड़ शरीर को मार रहा है, उस समय वह अपने स्थूल शरीर को अपना नहीं मानता है। यह क्रिया हर साधक को नहीं होती है, इस क्रिया को पागलपन नहीं कह सकते हैं। बल्कि उस समय चित्त पर सात्विता का प्रभाव ज्यादा होता है, पागल व्यक्ति का चित्त तमोगुण से आच्छादित रहता है तथा मस्तिष्क और बुद्धि सदैव के लिये सही रुप से कार्य नहीं कर पाते हैं। साधक की यह अवस्था समान्य व्यक्ति से बहुत ही ज्यादा उच्च श्रेणी की होती है, इसे 'उन्मनी अवस्था' कहते है। यह अवस्था सभी साधकों को प्राप्त नहीं होती है। इस अवस्था में साधक को अपना होश नहीं रहता है, सत्वगुण के प्रभाव से मन अन्तर्मुखी रहता है, इसलिये उसे वाह्य पदार्थों का भान नहीं रहता है।

कुण्डलिनी शक्ति द्वारा भोजन कराना

ध्यानावस्था में अनुभव आया– चाँदनी रात की तरह प्रकाश फैला हुआ था, मैं बिलकुल शांत वातावरण में बैठा हुआ था। मैं सोच रहा था– कितना शांत वातावरण मन को लुभाने वाला है, तभी हमारे सामने बहुत सीधी-सादी, साधारण से कपड़े पहने हुई, एक स्त्री प्रकट हो गयी। उसकी आँखें बिल्कुल शांत थीं, चेहरा मासूम सा था। वह अपने दोनों हाथों से एक थाली पकड़े हुए थी, वह थाली उसने हमारे सामने रख दी। मैंने देखा– उस थाली में दूध और चावल हैं, वह स्त्री भी हमारे सामने आकर बैठ गयी। हम दोनों के बीच में भोजन की थाली रखी हुई थी, उसने मुझे खाने का इशारा किया। मैंने उस थाली में खाना शुरू कर दिया, वह स्त्री भी मेरे साथ उसी थाली में खाना खा रही थी। जब चावल थाली के समाप्त हो गए तब थाली में दूध बच गया। थाली का आधा दूध पहले वह स्त्री ने पी लिया, फिर उसने थाली को मुझे दे दिया, उस थाली का शेष दूध मैंने पी लिया। खाली थाली को मैंने उसके सामने रख दी, वह स्त्री खाली थाली लेकर खड़ी हुई और अदृश्य हो गयी। मैं सोचने लगा– यह स्त्री कितनी शांत थी, मुझे खाना खिलाकर अदृश्य हो गयी, मैं अपने आप में तृप्त हो चुका था। उसी समय मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! जब तक मैंने अन्न ग्रहण नहीं किया तब तक ऐसे अनुभव आते रहे थे। इस प्रकार भोजन करने के बाद मेरा सूक्ष्म शरीर तृप्त हो जाता था। कभी कभी 8-10 वर्ष की लड़की मुझे खाना खिलाया करती थी। मैंने कई महीनों तक अन्न ग्रहण नहीं किया था, इसलिए हमारी साधना इतनी तीव्र थी। आजकल मैं अन्न नहीं खाया करता था अर्थात भोजन नहीं करता था। ध्यानावस्था में स्त्री अथवा कम उम्र की लड़की खाना हमें खिलती थी। इससे मेरा सूक्ष्म शरीर तृप्त हो जाता था, फिर हमें भूख की अनुभूति नहीं होती थी। वैसे मैं आजकल एक कप दूध व दो केले खाया करता था। शुद्धता के कारण ऐसा लगता था मानो पीठ जली जा रही है। शेष कार्य कुण्डलिनी शक्ति कर दिया करती थी, मेरी कुण्डलिनी बहुत ही ज्यादा उग्र थी। अनुभव में बार-बार कुण्डलिनी शक्ति स्वरुप बदल कर मुझे खाना खिलाती थी।

छोटा बच्चा

मैंने ध्यानावस्था में देखा– एक बिलकुल छोटा सा बच्चा है, जिसकी उम्र एक वर्ष के लगभग होगी। बच्चे के शरीर पर कोई वस्त्र नहीं है, सिर्फ कमर में एक काला धागा बँधा हुआ है, बच्चा बहुत सुन्दर है, मेरी ओर घुटनों के बल चलकर आ रहा है। रास्ता ऊबड़-खाबड़ और पथरीला है, इसलिए उसे परेशानी हो रही होगी, ऐसा मैं सोच रहा हूँ, मगर उस बच्चे को कोई परेशानी नहीं हो रही है, क्योंकि वह बच्चा हँस रहा है। क्षण भर में मैंने देखा– वहीं पर पारदर्शी सूक्ष्म शरीर में श्री माता जी भी खड़ी हुई हैं। श्री माता जी उस बच्चे से बोलीं– "खड़ा हो जा, खड़ा हो जा"। फिर उस बच्चे ने घुटने के बल चलना बन्द कर दिया, खड़ा होने का प्रयास करने लगा। बच्चा खड़ा होते समय अपने शरीर का जोर लगा रहा था तथा मुस्करा भी रहा था। बच्चा खुश होकर 'ॐ ॐ ॐ'की आवाज निकाल रहा था। श्री माता जी बोलीं– *"शाबाश, खड़ा हो जा"*। बच्चा खड़ा हो गया। फिर श्री माता जी बोलीं– *"चल आगे पैर बढ़ा, बढ़ा आगे पैर"*। वह बच्चा पैर आगे बढ़ाने का प्रयत्न करने लगा और क्षण भर में आगे पैर रख दिया। श्री माता जी फिर बोलीं– *"वह भी आगे की ओर पैर बढ़ा"*। बच्चा ओम-ओम कहता हुआ दूसरा भी पैर आगे रख देता है। श्री माता जी बोलीं– *"चल आगे आऽऽजा"*। फिर बच्चा प्रयत्न करके आगे आ गया। श्री माता जी बोलीं– *"शाबाश ऐसे ही चलना"*। इतने में बच्चे के बगल में एक स्त्री प्रकट हो गयी और बोली (बच्चे से कहा) – *"यह बात किसी से नहीं कहना"*। मैं चौंक पड़ा, सोचा यह स्त्री कौन है! वह स्त्री पारदर्शी सूक्ष्म शरीर में स्पष्ट दिखाई दे रही थी। मुझे आश्चर्य यह हुआ कि मैं भी सूक्ष्म शरीर में वहीं पर

खड़ा हुआ था, फिर मैं उस बच्चे के शरीर में प्रवेश हो गया और मैं हँसने लगा। यह बच्चा और कोई नहीं मैं स्वयं ही था। श्री माता जी बोलीं– *"आनन्द कुमार तुम अब अपने पैरों से चलने लगे हो, भविष्य में भी तुम्हें अपने पैरों पर चलना होगा"*। वह पारदर्शी शरीर वाली स्त्री बोली– *"तुम अपने पैरों पर स्वयं चलने लगे हो, भविष्य में तुम स्वयं अपने पैरों से चलोगे"*। अनुभव समाप्त हुआ।

अर्थ- साधकों! पारदर्शी शरीर वाली स्त्री माता कुण्डलिनी शक्ति थी तथा श्री माता जी (गुरु तत्त्व) ने मुझे अपने पैरों से चलना सिखाया दिया, भविष्य में मैं निश्चित ही अपने पैरों पर चलूँगा। मुझे स्वयं श्री माता जी की आवश्यकता नहीं पड़ेगी, ऐसा यह अनुभव से ज्ञात होता है।

आँखों में खिंचाव

अब हमें भिन्न-भिन्न तरह के नाद सुनाई देते हैं, ये नाद ध्यानावस्था और जाग्रत अवस्था में भी सुनाई देते है। नाद अक्सर जोर से सुनाई देते हैं। ध्यान पर बैठते ही मेरा प्राण ब्रह्मरंध्र द्वार पर आ जाता है, क्योंकि छोटा मस्तिष्क और आज्ञाचक्र भी खुल गया है। कण्ठचक्र से ऊपर प्राण दो भागो में बँटकर, दोनों अलग-अलग मार्गों से (पूर्व मार्ग व पश्चिम मार्ग) चलकर फिर ब्रह्मरंध्र द्वार पर एक हो जाते हैं, मगर ब्रह्मरंध्र द्वार न खुलने के कारण प्राण वहाँ ज्यादा देर तक नहीं ठहरता है, वापस आज्ञाचक्र पर आ जाते हैं। फिर आज्ञाचक्र पर प्राण दबाव मारता है। आजकल मैं शक्तिमंत्र का जाप बहुत ज्यादा किया करता हूँ, शक्तिमंत्र जाप करते समय ध्यान आज्ञाचक्र पर लग जाता है। प्राण के साथ मन भी यहीं पर रहता है, तब मन बिलकुल एकाग्र हो जाता है। इस कारण मस्तक पर नाड़ियों में जोर से खिंचाव होता है, नाड़ियाँ चटकती-सी सुनाई देतीं हैं। कभी-कभी ऐसा भी लगता है– मानों मस्तक पर हजारों चीटियाँ काट रही हों, कभी-कभी यहाँ जलन भी होती है। यही हाल आँखों और पलकों में होता है, इसलिए आँखों व पलकों में खुजली-सी होती रहती है। कुछ क्षणों बाद आँखों पर अपने आप दबाव पड़ता है, आँखें जोर से बन्द हो जातीं हैं। फिर आँखें अन्दर की ओर खिंचतीं हैं, कभी-कभी आँखें इतनी अन्दर की ओर खिंचतीं हैं, तब ऐसा लगता हैं– जैसे आँखें टूटकर लघु मस्तिष्क की ओर आ जाएँगी। आँखों में दर्द होने से मुझे ध्यान तोड़ना पड़ता हैं, आँखें अन्दर की ओर जाने की क्रिया बहुत दिनों तक होती रही है।

अर्थ- साधकों! अभ्यासी की जब यह अवस्था आती है, तब आँखें अन्दर की ओर दबाव मारती हैं। ऐसा लगता है कि आँखें अब टूट जाएँगी, खिंचाव ब्रह्मरन्ध्र द्वार की ओर को हुआ करता हैं। यह क्रिया प्राणों के कारण होती है, समस्त प्राणों का खिचाव ब्रह्मरंध्र द्वार की ओर होता हैं। ऐसी अवस्था में आँखों पर बहुत अधिक दबाव रहता है। ऐसी क्रिया सिर्फ उन्ही साधकों को होती है, जिनकी साधना अत्यन्त उग्र होती है तथा पूर्व काल के योगी होते हैं।

नीचे के लोकों में जाना

यह अनुभव हमें योग निद्रा में आया– मैं पृथ्वी के अन्दर तेजी से नीचे की ओर चला जा रहा हूँ, नीचे जाने के लिए कोई आधार नहीं था और न ही सीढ़ियाँ थीं। उस समय मैं खड़ा हुआ था, अपनी जगह पर खड़े हुए ही अपने आप नीचे की ओर चला जा रहा था। जब नीचे की ओर जा रहा था, उस समय रास्ते में प्रकाश भी नहीं था, सिर्फ धुँधला अंधकार-सा था। मैं सुरंग जैसी जगह से नीचे की ओर अति तीव्र गति से चला जा रहा था। नीचे जाकर मैं पानी के बीच में खड़ा हो गया। हमारे चारों ओर ऊपर-नीचे पानी-ही-पानी भरा हुआ था, मगर पानी से हमें किसी प्रकार की कोई परेशानी नहीं हो रही थी। मैं पानी के अन्दर विचरण करने लगा, वहाँ पर हमें विभिन्न प्रकार के जीव-जंतु और मनुष्य भी मिले। कुछ समय तक मैं वहाँ पर घूमता रहा, फिर जोरदार धमाका हुआ, फिर मुझे कुछ याद नहीं रहा। जब मुझे अपना होश-सा आया तब मैंने अपने आप को अंधकार में खड़ा हुआ पाया। वहाँ पर नीचे दलदल था, मैं थोड़ी देर तक खड़ा रहकर अंधकार में देखने का प्रयास करने लगा, तब थोड़ा धुंधले प्रकाश में दिखाई सा देने लगा। मैंने नीचे की ओर देखा– तो बिलकुल छोटे-छोटे मनुष्य दिखाई दिये, मैं इन मनुष्यों को देख कर आश्चर्यचकित हुआ,और सोचने लगा– इतने छोटे मनुष्य भी हो सकते हैं, जिनकी लम्बाई मात्र तीन-चार इंच होगी। वह दलदल में खड़े हुए थे, दलदल (कीचड़) से निकालकर कुछ खा रहे थे। मेरा मन दुःखी सा होने लगा, कि मैं कहाँ गन्दगी में आ गया। इतने में फिर धमाके की आवाज़ सुनाई दी, फिर मैंने अपने आप को पथरीली, ऊबड़-खाबड़ सतह पर खड़ा पाया, यहाँ पर धुँधला प्रकाश फैला हुआ था। थोड़ी दूर तक स्पष्ट दिखाई दे रहा था, वहाँ पर भी उस समय इधर उधर घूमते हुए स्त्री व पुरुषों को देखा, वह मुझे देखते ही मुझसे दूर भाग गए। मैंने सोचा– यह लोग मुझे देखकर दूर क्यों भाग गये है, कुछ समय तक मैं वहाँ पर घूमता रहा। फिर मैं अति तीव्र गति से ऊपर की ओर आने लगा। मैं जिस जगह से नीचे की ओर गया था, वहीं पर

आकर पृथ्वी पर खड़ा हो गया। फिर मेरी आँखें खुल गईं, मैं सोचने लगा– इस अनुभव का क्या अर्थ हैं– मैं ध्यान पर संकल्प करके बैठ गया, कि इस अनुभव का अर्थ क्या है– तभी आवाज आयी, “ये सभी नीचे के लोक हैं, तुमने कुछ लोकों में भ्रमण किया, शेष कुछ लोकों में भविष्य में भ्रमण करोगे”।

अर्थ- साधकों! यह अनुभव अति संक्षेप में लिखा है, इन लोकों में सूक्ष्म शरीरधारी मानव रहते हैं, ये मानव अपने कर्मों का भोग किया करते हैं, ये मानव ईश्वर चिंतन नहीं कर सकते हैं। चौदह लोकों में से ये नीचे के लोक है, ये सभी सूक्ष्म लोक है, इन लोकों की जीवात्माएँ अपने निम्न श्रेणी के कर्म भोगा करते है। यहाँ सदैव धुँधला अंधकार रहता है। इसीलिये इन लोकों को नीचे के लोक कहे गये हैं।

संसारी न रहो

यह अनुभव आज 29 अगस्त को आया– मैं कुछ कार्य कर रहा हूँ, उसी समय याद आया, मुझे वहाँ जाना है। मैंने देखा– मेरे सामने बहुत दूर-दूर तक पानी भरा हुआ था, वहाँ जाने के लिए मैं पानी में कूद पड़ा और तेजी के साथ तैरता हुआ आगे की ओर बढ़ने लगा। मैं थोड़ा आगे की ओर चला ही था तभी आवाज आयी– “आनन्द कुमार”। मैं चौंका, आवाज की तरफ देखने लगा और सोचा मेरा नाम किसने लिया है, मगर मुझे कोई दिखाई नहीं दिया। फिर आवाज आयी– “यह संसार है, तुम जिस पानी में तैर रहे हो, जिसे तुम वास्तव में पानी समझ रहे हो, वह पानी है ही नहीं, सिर्फ भ्रम मात्र है। अब देखो पानी कहाँ है, इतने में सारा पानी अदृश्य हो गया। अब मैं अकेला आधारहीन खड़ा हुआ था जिस तरह भ्रम रूपी पानी को वास्तविक समझ रहे थे। इसी तरह संसार है, संसार भ्रम मात्र है। इसलिए आप संसार में रहते हुए संसारी न रहे, तुमने अपना जन्म विशेष कार्य करने के लिए लिया है, वह कार्य करो”। फिर आवाज आनी बन्द हो गयी, यह आवाज अंतरिक्ष से आ रही थी।

कल्पवृक्ष

यह अनुभव आज दोपहर 30 अगस्त को आया, मैं ग्यारह बजे ध्यान पर बैठा था। मैंने देखा– मैं अंतरिक्ष में ऊपर की ओर तीव्र गति से चला जा रहा हूँ, फिर एक जगह पर अपने आप रुक गया। हमारे बिलकुल पास एक पेड़ खड़ा हुआ है, वह पेड़ बहुत सुन्दर था, मैं पेड़ के नीचे खड़ा हो गया। पेड़ से चारों

ओर को प्रकाश निकल रहा था, इतने में उस पेड़ से हमारे दाहिनी ओर एक फूल गिरा, वह फूल सफेद व चमकदार था, फूल से भी प्रकाश निकल रहा था। कुछ क्षणों बाद दूसरा फूल हमारे बायीं ओर गिरा, मैं नीचे की ओर देख रहा था। उसी समय लगा, एक फूल मेरे ऊपर गिरने वाला है। मैंने अपने दोनों हाथ ऊपर की ओर उठा दिये ताकि मैं फूल को अपने हाथों में पकड़ लूँ, मगर फूल हमारे पकड़ में नहीं आया। वह फूल मेरे सिर के ऊपर गिरा और सहस्त्रार चक्र के अन्दर समा गया, मैं बहुत प्रसन्न हो रहा था और मुस्करा रहा था। हमारे बगल में गिरे दोनों फूल अदृश्य हो गये, मुझे फूल बहुत अच्छे लग रहे थे, इसलिए मैंने पेड़ की ओर देखा, मगर पेड़ पर एक भी फूल नहीं लगा था। अब मैं और पेड़ अंतरिक्ष में थे, पेड़ इतना अच्छा लग रहा था, कि मैं उसे देखता रहूँ। उसी समय आकाशवाणी हुई– "आनन्द कुमार आपका ब्रह्मरंध्र अब शीघ्र ही खुल जाएगा, जिस वृक्ष के नीचे खड़े हो वह कोई साधारण वृक्ष नहीं है, यह दिव्यवृक्ष कल्पवृक्ष है"।

अर्थ- अनुभव में जिस वृक्ष के नीचे मैं खड़ा हुआ था, वह दिव्य वृक्ष, कल्पवृक्ष था। यह स्वर्ग में विद्यमान रहता है इसके स्वामी देवताओं का राजा इंद्र है, इस वृक्ष के विषय में शास्त्रों में वर्णन मिलता है। शास्त्रों के अनुसार– इस वृक्ष के नीचे खड़ा होकर जो वस्तु को माँगा जायगा, वह वस्तु उस व्यक्ति को प्राप्त हो जायेगी। मगर मैंने कभी भी इस वृक्ष से कुछ भी नहीं माँगा, फिर भी मुझे ब्रह्मरंध्र खुलने का आशीर्वाद प्राप्त हो गया।

ब्रह्मरंध्र और अंधकार

यह अनुभव सितम्बर माह में आया, मैं शक्तिमंत्र का जाप रात्रि के समय बहुत करता हूँ। मंत्र अत्यन्त गुप्त होने के कारण कमरा बन्द कर लेता हूँ ताकि बाहर का कोई व्यक्ति मेरी आवाज न सुन सके। मंत्र के कारण मेरा शरीर बहुत शुद्ध हो चुका है, मंत्र जाप करते ही शरीर की नाड़ियों में कम्पन होने लगता है। ऐसा लगता है सिर की नाड़ियाँ खिंच रही हैं, इन नाड़ियों की चटकने की आवाज आती है मानों सिर की नाड़ियाँ खिंच कर टूट रही हैं। कुण्डलिनी भी मंत्र के प्रभाव से तीव्र गति से ऊर्ध्व होकर ब्रह्मरंध्र द्वार पर जोरदार टक्कर मरती है, ऐसा लगता है गर्म-गर्म सूआ (सूजा) चुभ गया है। ध्यानावस्था में आजकल कई दिनों से लाल रंग का गोला अक्सर दिखाई देता है, जैसे सर्दियों के दिनों में उगता हुआ सूर्य दिखाई देता है। जब कुण्डलिनी ब्रह्मरंध्र द्वार पर टक्कर मारती है तब यह गोला बड़ी जोर से कम्पन करता है तथा

अंतरिक्ष में इधर-उधर घूमने लगता है, इस क्रिया को देखकर मुझे हँसी आने लगती है। अब मैं सोचने लगा– कुण्डलिनी टक्कर ब्रह्मरंध्र द्वार पर मारती है, तब यह सूर्य अंतरिक्ष में चक्कर काटने लगता है यह कैसा सूर्य है? यह अनुभव अक्सर ध्यानावस्था में आया करता था।

ध्यान पर बैठते ही हमें अंधकार दिखाई देने लगा, यह अंधकार अत्यन्त काले रंग का था। हमारी समझ में नहीं आ रहा था, कि इतना काला अंधकार क्यों दिखाई दे रहा है। ऐसा अंधकार तो कण्ठचक्र में दिखाई देता था, यह अंधकार कण्ठचक्र से भी ज्यादा काला था। ध्यानावस्था में अब तो सदैव प्रकाश ही दिखाई देता था, आज अंधकार क्यों दिखाई दिया? फिर मुझे अपना होश आने लगा, इस कारण ध्यान हल्का सा हो गया। मगर कुछ क्षणों बाद मैं फिर अपने आपको भूल गया। मुझे गहरा अंधकार निगलता जा रहा था, उस समय मेरी आँखें बहुत जोर से अन्दर की ओर खिंच रही थीं। मैं कितने समय तक अंधकार में बना रहा, मैं बता नहीं सकता हूँ, अंधकार में ज्यादा घबराने के कारण मेरा ध्यान हल्का पड़ने लगा और फिर टूट गया। अनुभव समाप्त हो गया, मगर फिर इस तरह का अनुभव नहीं आया।

अर्थ- लाल रंग का गोला जो सूर्य के समान दिखाई दे रहा था वह मेरे ही ब्रह्मरंध्र के अन्दर का भाग है। कुण्डलिनी जब वेग के साथ ब्रह्मरंध्र द्वार पर टक्कर मरती थी, उस समय ब्रह्मरंध्र के अन्दर हलचल होती थी, इसलिये लाल रंग का सूर्य के समान गोला अंतरिक्ष में घूमने लगता था अथवा हलचल करने लगता था। दूसरे अनुभव में जो अंधकार दिखाई दे रहा था, वह मेरा ही तमोगुणी अहंकार था।

नीलमय पुरुष

साधकों! अबकी बार जिस प्रकार से भगवान शंकर जी के दर्शन हुए, उन्हें देखकर मैं आश्चर्य में पड़ गया था, क्योंकि ऐसा चित्र उनका मैंने कभी देखा नहीं है और न ही पुराणों में पढ़ा है। मैंने देखा– समुद्र से भी ज्यादा विस्तार में पानी भरा हुआ है, उस पानी के ऊपर पृथ्वी गेंद के समान गोल-गोल तैर रही है। उसी पृथ्वी के ऊपर भगवान शंकर खड़े हुए थे, उनके शरीर की ऊँचाई बहुत ज्यादा थी वह सम्पूर्ण अंतरिक्ष में खड़े हुए थे। मैंने उन्हें नीचे से ऊपर की ओर देखना शुरू किया, तब उनका सम्पूर्ण शरीर देख पाया। मैं उन्हें एक बार में नहीं देख पा रहा था, उनकी दो भुजाएँ थीं, हाथ में बहुत लम्बा त्रिशूल लिए थे, कमर में व्याघ्र-चर्म लपेटे हुए थे, व्याघ्र-चर्म घुटनों तक था। गले में रुद्राक्ष की माला थी, सिर पर बालों का

बहुत ऊँचा जूड़ा लगा हुआ था, वह बिलकुल शांत खड़े थे। उनके गले में सर्प नहीं थे, उनका रंग हल्का नीला था तथा अंतरिक्ष में चारों ओर नीला प्रकाश फैला हुआ था। उनका स्वरुप देखकर मैं सोचने लगा– क्योंकि भगवान शंकर बहुत सुन्दर लग रहे थे, वह इतने सुन्दर थे कि मैं वर्णन नहीं कर सकता हूँ। उनके त्रिशूल की लम्बाई एक किलोमीटर रही होगी, इससे ज्यादा भगवान शंकर की ऊँचाई थी।

अर्थ- भगवान शंकर का दर्शन मैंने दिव्यदृष्टि के द्वारा किया था। यह दृश्य कारण जगत का था, क्योंकि बहुत दिनों से मैं कारण शरीर में प्रवेश कर चुका हूँ। योग में इन्हें "नीलमय पुरुष" कहते हैं। जब अभ्यासी तीव्र गति से कठोरता के साथ साधना करता हुआ आगे बढ़ता है और पूर्व काल का योगी होता है, उसी साधक को इस 'नीलमय पुरुष' का दर्शन होता है, सभी साधकों को इनका दर्शन नहीं होता हैं।

कुछ अनुभव हमें नीचे के लोकों के आए। मैं यहाँ पर उन अनुभवों को लिखना उचित नहीं समझता हूँ, क्योंकि लेख बहुत ज्यादा हो जाएगा। ध्यानावस्था में नीचे के लोकों को कई बार देखा। मैं संक्षेप में बता दूँ– उन लोकों में धुँधला प्रकाश या हल्का-सा प्रकाश विद्यमान रहता है। उबड़-खाबड़ जगह, पथरीली जगह, छोटे-छोटे टीले, कहीं पर पानी-ही-पानी भरा हुआ है, एक लोक में वायु-ही-वायु भरी हुई है, एक लोक बिलकुल अंधकार से युक्त है उसमें दलदल या कीचड़ भरा हुआ है आदि। ये सभी लोक सूक्ष्म है फिर भी आपस में घनत्व के आधार पर भिन्नता है। इन लोकों में सूक्ष्म शरीर धारी जीवात्माएँ कर्म भोगा करती हैं।

स्थूल जगत

ध्यानावस्था में देखा– अंतरिक्ष में किसी स्थान पर खड़ा हुआ हूँ, इतने में एक पुरुष मेरे पास आया। उसने मुझसे पूछा– "यह अपराध तुमने किया है"। मैं उस पुरुष को देखकर भागा, आगे चलकर मुझे नीचे की और बहती हुई एक नदी दिखाई दी, यह नदी बहुत ही डरावनी और गन्दी थी। उसी समय ऐसा लगा, जैसे किसी ने मुझे उठाकर नदी में फेंक दिया हो, नदी में गिरते ही मैं तैरने लगा। उस समय मुझे लगा– मैं कितनी अच्छी जगह पर था, वह जगह स्वप्रकाशित थी, अब मैं इस गन्दगी में आकर गिर गया हूँ। इस नदी में आकर मुझे कष्ट महसूस होने लगा। मैं नदी से बाहर निकलने का रास्ता ढूँढने लगा, मैं नदी में इधर-उधर भटक रहा था, मगर किनारा नहीं मिल रहा था। यह नदी बहुत विशाल थी, इसका किनारा

किधर है ये पता ही नहीं लग रहा था है। इतने में मेरा परिचित एक मित्र मिल गया, वह भी मेरे समान ही नदी में तैर रहा था। मैं बोला– “चलो इस नदी का किनारा ढूंढते हैं, मुझे किनारा ढूँढने में बहुत परेशानी हो रही है”। वह मित्र बोला– “मुझे किनारा नहीं ढूँढना है, मुझे इसमें अच्छा लगता है।" उसी समय मैंने ऊँचाई पर एक स्त्री को खड़े हुए देखा, मैं उस स्त्री की ओर तैरता हुआ गया, स्त्री ने अपना हाथ बढ़ाकर मुझे पकड़ लिया फिर उस नदी से बाहर की ओर निकाल लिया। नदी से बाहर निकलते ही मैंने अपने आप को एक अच्छी जगह पर पाया। इतने में एक और स्त्री आ गयी, उसने मेरा बायाँ हाथ पकड़ा और मुझे लेकर चल दी। मैंने पहले वाली स्त्री की ओर देखा, वह बिलकुल शांत खड़ी हुई थी, तथा सीधी-सादी दिखाई दे रही थी। मुझे जो दूसरी स्त्री पकड़े हुए लिये जा रही थी, उसने लाल रंग की साड़ी पहन रखी थी, उसका मुँह सुन्दर था और मुँह से तेज निकल रहा था। वह मुस्कराती हुई आगे की ओर चली जा रही थी, फिर एक जगह खड़ी हो गयी। वह स्त्री मेरा हाथ अब भी पकड़े हुए थी, वह हमारे हाथ में मालिश-सी करने लगी। मुझे लगा– कि यह तो माँ के समान मालिश-जैसी क्रिया कर रही है, उसी समय मेरे मुँह से निकला, “माँ”। मेरे द्वारा माँ कहते ही वह स्त्री हँसी और बोली– *“माँ, किसको कहा मुझे”*। मैं बोला– “हाँ आपको”। वह बोली– *“अच्छा, अच्छा”*। जब वह हँस रही थी तब हँसते समय उसके दाँतों से किरणें जैसी निकल रही थीं। फिर उस स्त्री ने मुझे आगे जाने का मार्ग बता दिया, मैं अकेला ही आगे की ओर बढ़ा तभी मैंने अपने आपको तेज प्रकाश के अन्दर विद्यमान पाया। उस समय मैं बहुत प्रसन्न हो रहा था, मुझे किसी प्रकार का कोई दुःख नहीं था। मैं अंतरिक्ष में आधारहीन इच्छानुसार आगे की ओर जाने लगा। तभी मुझे नीचे की ओर एक नदी बहती हुई दिखाई दी, इतने में अंतरिक्ष से आवाज़ आयी– *“यह नदी दिव्य है, दुःखों तथा कष्टों से भरी हुई है, अब आपको यह नजर नहीं आएगी”*। मैं तीव्र गति से और आगे की ओर चला जा रहा था। उसी समय विचार आया– वह नदी कहाँ पर है जिसमें मैं तैर रहा था, उसे मैं देखना चाहता हूँ। फिर मैंने अपनी दृष्टि नीचे की, तो वही नदी बहती हुई दिखाई दी। मैं नीचे की ओर आ गया और नदी के ऊपर अंतरिक्ष में खड़ा हो गया।

मैंने देखा– असंख्य स्त्री-पुरुष उस नदी में कष्ट भोग रहे हैं, नदी को पार करने के लिए नदी में ही डूबा हुआ एक रास्ता दिखाई दिया। यह रास्ता नदी के पानी के अन्दर लगभग एक मीटर डूबा हुआ झूला पुल की तरह था, उस रास्ते पर कुछ पुरुष खड़े हुए थे, मगर वह पार नहीं कर पा रहे थे। इतने में एक और रास्ता दिखाई दिया, इस रास्ते से स्त्री-पुरुष नदी में आते थे। इसी रास्ते पर एक स्त्री आती हुई दिखाई दी, ऐसा लगा जैसे जबरदस्ती किसी ने उसे ढकेल दिया है, वह स्त्री नदी में गिरने से पहले ही बेहोश हो गयी।

मैंने सोचा– इस स्त्री को यहाँ पर आने के लिये किसने मजबूर किया है। उसी समय आवाज़ आयी– *"इस स्त्री के कर्मों ने"*। फिर मैं तीव्र गति से ऊपर की ओर चला गया और अत्यन्त तेजस्वी प्रकाश में विलीन हो गया। उसी समय मेरा अनुभव समाप्त हुआ।

अर्थ- साधकों! इस अनुभव में पहले मैं डर कर भागने लगा, उसी समय मुझे लगा मानो किसी ने मुझे नदी में फेंक दिया हो– मुझे मेरे कर्मों ने फेंक दिया था। नदी यही स्थूल जगत है। किनारा ढूँढते समय एक स्त्री ने हाथ बढाकर निकाल लिया, यह स्त्री गुरुतत्व है उसी ने मुझे स्थूल जगत से हाथ पकड़ कर बाहर निकाला। दूसरी स्त्री कुण्डलिनी शक्ति है, उसने हाथ पकड़ कर आगे का मार्ग बता दिया। नदी में मेरा एक मित्र भी तैर रहा था उसने बहर जाने से मना कर दिया इसका अर्थ है वह अभी संसार में रहना चाहता है, वर्तमान समय में वह बहुत बड़ा व्यापारी है वह कर्नाटक में रहता है। इस अनुभव में एक और महत्वपूर्ण बात दिखी– उस नदी में डूबा हुआ एक ऐसा रास्ता विद्यमान है जिस पर चलकर नदी को पार किया जा सकता है, अर्थात नदी के ही अन्दर वह रास्ता है। इससे स्पष्ट होता है– संसार में रहते हुए इस मार्ग को पकड़ कर संसार से पार हुआ जा सकता है। योगी पुरुष इसी मार्ग को पकड़कर संसार सागर से पार हो जाता है। मैं स्वप्रकाशित अंतरिक्ष में पहुँच गया, अपना भौतिक शरीर छोड़ने के बाद अपने लोक में चला जाऊँगा वह लोक स्वप्रकाशित है।

ब्रह्मरंध्र का खुलना

यह अनुभव तीन सितम्बर को आया। मैं पहले लिख चुका हूँ कि जब मैं अपनी साधना तेज कर देता था तब ध्यानावस्था में मेरा सिर आगे की ओर झुककर भूमि पर स्पर्श करता था। उसी समय बाह्य कुम्भक और उड्डियान बन्ध जोर से लगता था। प्राण वायु का दबाव ब्रह्मरंध्र पर होता था। कभी-कभी मुँह पर इतना दबाव होता था कि मुँह दुखने लगता था। उसी समय कुण्डलिनी भी ऊर्ध्व होती थी। जब ब्रह्मरंध्र द्वार पर कुण्डलिनी टक्कर मारती थी, तब उड्डियान बन्ध और बाह्य कुम्भक भी जोर से लगता था। उसी समय कुण्डलिनी अपनी ऊर्जा बाहर की ओर छोड़ती थी तब ऐसा लगता था सारा शारीर आग से जला जा रहा है। कभी-कभी ऐसा लगता था जैसे सम्पूर्ण सिर में व मुँह में सुइयाँ सी चुभोई जा रही हैं, उस स्थिति में सारा शरीर कष्ट ही कष्ट भोगता था। मैं सीधा नहीं हो सकता था, ऐसा लगता था– शरीर पर मेरा नियंत्रण नहीं रह गया है, मैं किसी दूसरे के नियंत्रण में हूँ। उड्डियान बन्ध और बाह्य कुम्भक के

समय सिर का दबाव भूमि पर ज्यादा हो जाता था। मस्तक के बाद सिर का ऊपरी भाग (सहस्त्रारचक्र वाला क्षेत्र) भी भूमि पर लग जाता था। ऐसा लगता था, मैं सिर के बल खड़ा हो जाऊँगा। शरीर का निचला भाग मूलाधार चक्र वाला क्षेत्र ऊपर की ओर उठने लगता था, आसन (सहजासन) लगा रहता था। मैं घुटनों के बल हो जाता था। तब मेरे स्थूल शरीर की आकृति ऐसी दिखाई देती थी, जैसे बच्चा घुटनों के बल चलता है। मगर आसन मजबूती से लगा रहता था, उसी समय भस्त्रिका चलने लगती थी तब सारा प्राण मूलाधार चक्र पर व ब्रह्मरंध्र द्वार पर जोर जोर से टक्कर मारता था। ऐसा सोचता था– मेरे प्राण शरीर से निकल जाये तो अच्छा है, कुछ समय तक यही क्रिया होती रही। उसी समय मुझे याद आया कि श्री माता जी आगे झुकने वाली क्रिया पर बहुत नाराज होती है। मगर मैं क्या करूँ जब साधना तेज करता हूँ तब यही क्रिया होने लगती है। मैं इस क्रिया को रोक नहीं सकता हूँ, मुझे अपने आप पर बहुत क्रोध आ गया। मैंने सोचा– अब देखता हूँ यह क्रिया कब तक होती है, अपनी साधना और ज्यादा करूँगा। मैं जानता हूँ साधना ज्यादा करना बुरी बात नहीं है। अगर यह क्रिया होती है तो होने दूँ।

यह क्रिया बहुत देर से हो रही थी, मेरा शरीर थक कर चूर हो गया, मैं सीधा नहीं बैठ सकता था। बाह्य कुम्भक लगने के बाद श्वांस अन्दर आने का नाम नहीं ले रहा था, कुण्डलिनी बेरहमी से ब्रह्मरंध्र द्वार पर टक्कर मारती थी, तभी मुझे लगा अब मैं मर जाऊँगा। मेरा शरीर घुटनों के बल हो गया था मगर आसन लगा हुआ था। कभी कभी ऐसा लगता था मैं सिर के बल खड़ा हो जाऊँगा, उसी समय मेघों की भयंकर गर्जना सुनाई दी, मानो बादल फटे जा रहे हैं, मेघों की गर्जना से मेरे कानों को कष्ट होने लगा। उसी समय अनुभव आया– स्वच्छ आकाश में उगते हुए सूर्य के समान गोला है, वह अंतरिक्ष में इधर-उधर तेजी से घूमने लगा। ऐसा लगा रहा था, मानो सम्पूर्ण अंतरिक्ष में कम्पन हो रहा है। फिर मेघों की गर्जना सुनाई दी। मैंने सोचा– कि आकाश में बादल नहीं हैं, फिर बादल कैसे गरजने लगे। सूर्य के समान गोला बुरी तरह से अपनी जगह पर कम्पन कर रहा था, उसी समय मुझे अपना होश आ गया। मेरा शारीर उसी मुद्रा में बना हुआ था तथा बाह्य कुम्भक लगा हुआ था। मुझे लगा मैं सिर के बल हो जाऊँगा, मगर ऐसा नहीं हुआ। तभी कुण्डलिनी ने ब्रह्मरंध्र द्वार पर जबरदस्त टक्कर मारी, ऐसा लगा गरम-गरम सूजा (सुआ) मेरे सिर में घुस गया है। फिर हमें कुछ भी याद नहीं है, क्योंकि मैं चेतना शून्य हो गया था।

मुझे चेतना शून्य वाली अवस्था कितने समय तक रही है, मैं यह सही रूप से कह नहीं बता सकता हूँ, क्योंकि मुझे कुछ याद नहीं रहा था, मैं बेहोश हो गया था। जब मुझे होश आया तब ऐसा लगा– कि मेरे शरीर में प्राण नहीं है और मैं चेतना शून्य हूँ। मेरी आँखें खुल गयी थीं, मुँह के ऊपर ढेर सारी मक्खियाँ बैठी

हुई थीं मगर मैं उन मक्खियों को उड़ा नहीं सकता था। मुझे मेरे स्थूल शरीर की अनुभूति नहीं हो रही थी, मैं हिल भी नहीं सकता था। मुझे लगा अगर मैं मर गया तो पड़ोस के लोग भी नहीं जान पाएँगे कि मैं मर गया हूँ। मेरे कमरे की कुंडी अन्दर से बन्द है, कौन उसे खोलेगा। कुछ क्षणों बाद मुझे अपने मुँह की त्वचा पर चेतना-सी महसूस हुई, तब मेरी आँखों की पलकें सबसे पहले झपकनी शुरु हुई, पलकें झपकने से आँखों पर बैठी हुई मक्खियाँ उड़ने लगी मगर सम्पूर्ण मुँह पर अब भी मक्खियाँ बैठीं हुई थी। कुछ क्षणों बाद गर्दन तक चेतना आ गयी, तब मुझे याद आया– मैं अब भी सिर के बल हूँ तथा मेरा आसन लगा हुआ है, सिर और घुटनों पर मेरे स्थूल शरीर का बोझा है। मगर मैं पैरों को खोल नहीं सकता हूँ, मेरे दोनों हाथों की उगलियाँ आपस में फंसी हुई थी और दोनों हाथ पेट से चिपके हुए थे। क्योंकि गर्दन से नीचे की ओर चेतना ही नहीं थी। सिर्फ याद आ रहा है कि हमारा स्थूल शरीर इस मुद्रा में है। लगभग पाँच मिनट बाद हमारी चेतना पूरी शरीर में वापस लौट आयी, चेतना तो वापस आ गयी मगर शरीर में शक्ति नहीं रह गयी थी कि मैं अपने दोनों पैर खोल लूँ। हमारे दोनों हाथ पेट में चिपके हुए थे, मैं एक ओर को आसन पर ही लुढ़क गया और चुपचाप वैसा ही लेटा रहा।

उसी समय हमारी निगाह घड़ी पर गयी,तब मैं चौंका– क्योंकि ध्यान पर बैठे हुए तीन घन्टे हो चुके थे, मुझे याद आ रहा है, जो क्रिया हो रही थी वह मुश्किल से आधे घन्टे तक हुई होगी, फिर चेतनाशून्य (बेहोश) हो गया था। मैं सोचने लगा– "क्या मैं दो-ढाई घन्टे बेहोश बना रहा, मगर बेहोश क्यों हो गया था, यह मैं समझ नहीं पा रहा था। क्या यह योग की क्रिया है, मगर श्री माता जी ने कभी ऐसी कोई बात हमें नहीं बतायी थी"। फिर यह क्या था, मैं लेटे-लेटे सोच रहा था अब मुझे याद आया– बेहोश होने से पहले कुण्डलिनी हमारे ब्रह्मरंध्र द्वार में घुस गयी थी, उसी समय बेहोश हो गया था। अब मुझे सिर का ऊपरी भाग बहुत विचित्र-सा लग रहा था, क्योंकि उसमें ढेर सारी वायु भरी हुई थी। तथा सिर के ऊपरी भाग में गुदगुदी हो रही थी। जीवन में पहली बार ऐसी अनुभूति हो रही थी, कि सिर के ऊपरी भाग में प्राणवायु के कारण गुदगुदी हो रही हो। यह गुदगुदी सिर्फ साधक ही अनुभूत कर सकता है। मै सोचने लगा– क्या मेरा ब्रह्मरंध्र खुल गया है, फिर मैंने निश्चित किया मेरा ब्रह्मरंध्र ही खुल गया है। मेरे शरीर के अन्दर बड़ी तीव्र गति से फुर्ती आ गयी। मैं उठकर बैठ गया, वहीं पर स्वामी मुक्तानन्द जी की पुस्तक चिद्शक्ति-विलास रखी हुई थी। मैंने उस पुस्तक को पढ़ना शुरू कर दिया, कि शायद मुझे अपने अनुभव के विषय में उस पुस्तक से कुछ जानकारी मिल सके। कुछ समय बाद मैंने निश्चय कर लिया कि मेरा ब्रह्मरंध्र खुल गया है। हालांकि उस पुस्तक में लिखने का तरीका हमारे अनुभवों से भिन्न था मगर उसका

अर्थ समझ में आ जाता था। स्वामी जी ने लिखा था– “जब साधक का ब्रह्मरंध्र द्वार खुलता है तब वह कुछ समय के लिए चेतनाशून्य हो जाता है। कभी-कभी साधक का मल और मूत्र भी छूट जाता है आदि”। श्री माता जी की पुस्तक में ब्रह्मरंध्र खुलने के विषय में अनुभव नहीं लिखा है तथा एक और साधिका से पूछने पर मालूम हुआ उसे ब्रह्मरंध्र खुलते समय ऐसा कुछ नहीं आया था। मैंने सोचा– जिनकी कुण्डलिनी उग्र होती है उन्हें इस प्रकार का अनुभूति होती है। मध्यम व शांत स्वाभाव वाली कुण्डलिनी के साधकों को ऐसी अनुभूति नहीं होती।

साधकों! जिस समय मैं बेहोश हुआ था उस समय क्षण भर के लिए एक अनुभव आया था, फिर मुझे होश नहीं आया। मैं देख रहा था– मैं अंतरिक्ष में बैठा हूँ, वह सूर्य के सामान गोला मेरे सिर के ऊपरी भाग में है। जब कुण्डलिनी ब्रह्मरंध्र द्वार पर टक्कर मारती थी, तब वह गोला बहुत जोर से कम्पन करता था और आकाश में इधर उधर गति करता था, फिर कुण्डलिनी ने जोरदार टक्कर मारी, वह सूर्य के समान के गोला फट गया, सम्पूर्ण अंतरिक्ष में करोड़ों सूर्य के समान प्रकाश सर्वत्र फैल गया। मैं उस प्रकाश में नहा (स्नान) गया, उस समय ऐसा लगा– अंतरिक्ष में बैठा हुआ मेरा शरीर बहुत ही बड़ा हो गया है, प्रकाश इतना तेज था कि आँखें चकाचौंध होने लगीं। उसी समय मुझे बहुत नीचे ओर सम्पूर्ण पृथ्वी दिखाई दे रही थी। जब आग का गोला फटा था उसी समय भयंकर मेघ की गर्जना हुई थी। मैं उस अत्यन्त तेज प्रकाश में खड़ा हुआ बहुत प्रसन्न हो रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

इस अनुभव के विषय में थोड़ा लिखना अनिवार्य समझता हूँ, क्योंकि बड़े बड़े अभ्यासी यहाँ पर भ्रमित हो जाते हैं और अज्ञानता में बने रहते हैं। उनका सोचना होता है– यह जो उगते हुए सूर्य के समान जैसा गोला फट गया है और करोड़ों सूर्यों के सामान प्रकाश फैल गया है, खुद अभ्यासी उसी प्रकाश में खड़ा होता है अथवा अपने आपको प्रकाश के बीच विद्यमान पाता है, इसे निर्गुण ब्रह्म का स्वरूप समझता है। अभ्यासी सोचता है – मुझे निर्गुण ब्रह्म का दर्शन हुआ है, मैं निर्गुण ब्रह्म के बीच में विद्यमान हूँ, हमारी साधना पूर्ण हो गयी है क्योंकि मुझे निर्गुण ब्रह्म का साक्षात्कार हो गया है आदि आदि। अभ्यासी मालूम नहीं अज्ञानतावश क्या-क्या सोच लेता है, मैं यहाँ पर एक बात स्पष्ट करना चाहता हूँ– अगर अभ्यासी ऊपर लिखे शब्दों के अनुसार ही सोचता है– तो वह गलत है। सत्य तो यह है– यह अहंकार की एक अत्यन्त सात्विक सशक्त वृत्ति मात्र ही है यह ब्रह्मरंध्र खुलने पर कुछ अभ्यासियों को दिखाई देती है। सभी अभ्यासियों को यह अनुभव नहीं आता है क्योंकि ऐसा अनुभव न आने वाले अभ्यासियों की साधना उतनी उग्र नहीं होती है।

अभी ऐसे अभ्यासियों की अवस्था ब्रह्मरंध्र में ही है, यह स्थान अहंकार का क्षेत्र होता है। आजकल कई अभ्यासी ऐसे भी हैं जिनका ब्रह्मरंध्र खुला हुआ है। इसी को समझ लेते है कि यह सहस्त्रार चक्र खुल गया है, ऐसा साधक अपने आपको पूर्ण समझने की भूल में बने रहते हैं। जबकि वास्तविक साधना की अभी शुरुआत हुई है, उसे ऐसा समझना चाहिये। मैं ऐसे अभ्यासियों को कहना चाहूँगा– अभी आपका ब्रह्मरंध्र खुला है, अभी आपको बहुत लम्बी यात्रा तय करनी है, अभी सहस्त्रार चक्र के विषय में मत सोचिये। सहस्त्रार चक्र अंतिम जन्म में खुलता है, सहस्त्रार चक्र विकसित होते समय तत्वज्ञान की प्राप्ति होती है।

साधकों! आपको ज्ञात होगा श्री माता जी आगे झुकने के लिए मुझे मना किया करती थीं। मुझे मना ही नहीं करती थीं बल्कि नाराज व क्रोधित भी हुआ करती थीं। आगे झुकने के कारण मुझसे यह भी कहा था– "आपका कर्म बहुत बुरा है, आपको गृहस्थी में रहना चाहिए। आप यह मार्ग पकड़े हुए हैं, ठीक है आपका कर्म गृहस्थ का है"। उस समय हम पर क्या बीती थी, आप अंदाज नहीं लगा सकते हैं। मगर मेरा ब्रह्मरंध्र, स्थूल शरीर आगे की ओर झुककर सिर भूमि पर लगकर ही खुला है। हमें याद आ रहा है, जब मैं दशहरा पर्व पर जलगाँव गया था, उस समय भी मैं आगे की ओर झुकता था, तब श्री माता जी बहुत नाराज हुई थी। फिर जून 1989 में मिरज गया था, उस समय भी हमें यही क्रिया आगे की ओर झुकने की हुई थी। उस समय श्री माता जी बोलीं– "आनन्द कुमार तुम सीधे होकर बैठ जाओ, यह योग नहीं है"। फिर मैं सीधा होकर बैठ गया। फिर क्रोध में मुझसे बोलीं– "हमारे पास कितने दिनों से आते हो, मगर आपकी गन्दगी अभी साफ नहीं हुई है"। हर समय यही कहतीं थी– "तुम्हारा कर्म बहुत गन्दा है, इसलिए तुम्हें यह क्रिया होती है"।

हमारी समझ में अभी तक यह नहीं आया– मेरा कर्म गन्दा था, गृहस्थी में रहना चाहिए था, यह योग नहीं है, आदि, फिर मेरा ब्रह्मरंध्र इसी क्रिया से क्यों खुल गया? साधकों! अब मैं लिख रहा हूँ– यह क्रिया मुझे क्यों होती थी? ध्यानवस्था में आगे की ओर झुकना, मस्तक का सामने की ओर भूमि पर स्पर्श होना, इस क्रिया को 'महायोग मुद्रा' कहते हैं। इस क्रिया में साधक की श्वांस मूलाधार चक्र में सीधी टकराने लगती हैं। ऐसी अवस्था में यदि भस्त्रिका चलनी शुरू हो जाए तो और भी अच्छा है। यह क्रिया मूलाधार चक्र पर खिंचाव करती है, जिससे कुण्डलिनी ऊर्ध्व होने में सहायक होती है। मुझे जब यह क्रिया जलगाँव में हो रही थी, उस समय अगर मेरी कुण्डलिनी ऊर्ध्व कर दी जाती तो अवश्य ऊर्ध्व हो जाती। मगर जून 1989 में इस क्रिया के होने पर मेरी कुण्डलिनी उठने का प्रयास कर रही थी, मगर श्री माता जी ने

कुण्डलिनी ऊर्ध्व करने की जगह मुझे डाँट पिलाई थी और कहा था– “यह योग नहीं है”। फिर अभी गुरु पूर्णिमा पर मेरा ब्रह्मरंध्र इस क्रिया से खुलना था, मगर श्री माता जी ने मुझे अच्छा खासा उपदेश दिया। इससे अच्छा उपदेश मेरे लिये और क्या हो सकता है। मैंने जानबूझकर साधना कम कर दी थी। मगर तीन सितम्बर को इसी क्रिया से मेरा ब्रह्मरंध्र खुल गया।

साधकों! सदैव एक बात याद रखना– सभी साधकों को एक जैसे अनुभव आएँगे, यह जरूरी नहीं है। इसी तरह जरुरी नहीं कि सभी साधकों को एक ही जैसी मुद्राएँ अथवा क्रियाएँ हों। जिस साधक की कुण्डलिनी अति उग्र होती है, वह आगे की ओर झुकता है। कुण्डलिनी सुषम्ना नाड़ी के सहारे ऊपर की ओर चढ़ती है, उस समय साधक का शरीर बिलकुल सीधा बैठा होता है। यदि गौर पूर्वक ध्यान दें, भौतिक शरीर का संतुलन आगे की ओर ज्यादा होता है इसलिए आगे की ओर झुकता है। यह एक तर्क है। सत्य यह है– इस अवस्था में महायोग मुद्रा लगने से कुण्डलिनी को ऊर्ध्व होने में सहायता मिलती है। मुझे महायोग मुद्रा होती थी, उसी के कारण यह क्रिया होती थी। कुण्डलिनी का वेग इतना इतना ज्यादा होता है कि साधक आगे की ओर झुक जाता है। मुझे जानकारी है कि श्री माता जी को यह क्रिया उनके साधना काल में नहीं हुई थी, इसीलिये वह मेरी इस क्रिया का विरोध करती थीं। इसलिए अच्छा है मार्गदर्शक को योग की हर जानकारी होनी चाहिए। मार्गदर्शक बनना साधारण बात नहीं है। इसलिए मेरी और श्री माता जी के बीच कुछ दूरी बढ़ने लगी। श्री माता जी के कारण ब्रह्मरंध्र खुलने में डेढ़ माह की देरी हो गयी। साधकों! महायोग मुद्रा से कुण्डलिनी कुण्डलिनी को ऊर्ध्व होने में सहायता मिलती है।

ऊपर के लोक

यह अनुभव एक सितम्बर को आया था। मैंने देखा– मैं अपने आश्रम के एक कमरे में बैठा हुआ हूँ, इतने में तीन-चार नवयुवक काले रंग के मेरे पास आए। यह नवयुवक कहाँ से आ गए, यह तो मैं नहीं जान सका, उनका रंग काला था मगर वे सभी तेजस्वी थे। इतने में मैं बोला– “यह आश्रम है, आप सभी लोग कहाँ से आ गए, बिना आज्ञा के आप सभी अन्दर आ गए”। सभी युवक मुझसे थोड़ी दूर पर खड़े हुए थे। जब मैंने उनसे कहा– आप सभी लोग अन्दर कैसे आ गए? तब पीछे खड़ा हुआ एक युवक क्रोधित हो गया, मगर सबसे आगे खड़ा हुआ युवक समझदार लग रहा था, उसका स्वाभाव शांत-सा था। उसने अपने साथियों को रुकने का इशारा किया, क्योंकि उसके पीछे खड़े उसके साथी हमारी ओर क्रोध में आने वाले

थे। आगे वाले युवक ने हमें गौर से देखा, फिर अपने साथियों से कहा– "चलो वापस चलते हैं"। मगर पीछे खड़े क्रोधी स्वाभाव वाले साथी ने कहा– "क्यों ?" आगे वाले समझदार युवक ने कहा– "यह आश्रम में रह रहा है ओर यह योगी है"। फिर अपने साथियों से आँख का इशारा किया, वह सभी बिना कुछ बोले वापस चले गए। मैं आश्चर्य में पड़ गया। कि यह काले युवक कौन थे, जो जबरदस्ती अन्दर आ गए। फिर मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अब हमारे अन्दर यह जानने की इच्छा हुई, आखिरकार ये युवक कौन थे और कहाँ से आए थे। मैं ध्यान करने के लिये बैठ गया, कुछ क्षणों बाद मुझे अपना कुछ याद नहीं रहा, फिर मैंने अपने आपको अपने स्थूल शरीर से बाहर खड़ा हुआ पाया। मेरा सूक्ष्म शरीर अत्यन्त तीव्र गति से ऊपर की ओर जाने लगा, कुछ क्षणों में बहुत विशाल दरवाजे के अन्दर से होता हुआ एक जगह पर खड़ा हो गया। उस जगह पर हल्का सा प्रकाश (ज्यादा तेज प्रकाश नहीं) विद्यमान था, मैंने चारों ओर को अपनी दृष्टि की। उसी समय हमारे सामने थोड़ी दूरी पर खड़े हुए वही नवयुवक दिखाई दिये तथा और भी स्त्री पुरुष खड़े हुए थे। उस समझदार युवक ने हमें एक बार फिर गौर से देखा, मैंने भी उसे देखा। वहीं पर वह युवक भी खड़ा था, जो पहले हमारे लिए क्रोधित हो रहा था। वह युवक मुझे बहुत दुष्ट लग रहा था, क्योंकि वह युवक पुरुषों को पकड़कर (जो वहाँ पर खड़े थे) बुरी तरह से लात-घूंसों का प्रहार कर रहा था तथा धक्के मार-मारकर आगे की ओर ढकेल रहा था। स्त्री-पुरुष रोते-चिल्लाते, तड़पते हुए आगे अंधकार में बढ़ते जा रहे थे। आगे अंधकार में कहाँ जा रहे थे यह मैं नहीं जानता हूँ, क्योंकि अंधकार के कारण मुझे स्वयं दिखाई नहीं दे रहा था। वहाँ पर स्त्री व पुरुषों की बहुत ही भीड़ थी, मगर सभी लाइन में खड़े थे। वह काले रंग पुरुष सभी को बेरहमी से लात-घूंसों से पीट रहे थे। मैं क्षण भर बाद वहाँ से वापस चलने चाहा, क्योंकि मुझे वहाँ का दृश्य अच्छा नहीं लग रहा था। इतने में वहीं क्रोधी स्वभाव वाला नवयुवक हमारे सामने आ गया, उसने मुझे भी धक्का देना चाहा। मगर मैंने निर्भय होकर कहा– "आप हमारी गिनती इन पुरुषों में मत कीजिए, नहीं तो बहुत बुरा होगा"। मैं भी उसके सामने अकड़ कर खड़ा हो गया, और बोला– "अभी तू इनकी पिटाई लगा रहा है, फिर मैं तेरी पिटाई लगाऊँगा"। इतने में समझदार नवयुवक आ गया। उसने अपने साथी को सख्ती के साथ मना किया। फिर वह युवक कुछ नहीं बोला। इसके बाद मैं वहाँ से चल दिया।

कुछ क्षणों में मैं तीव्र गति से उड़ता हुआ ऊपर की ओर अंतरिक्ष में चला गया। मुझे सामने ओर फिर एक दरवाजा मिला, जैसे ही मैंने दरवाजे से अन्दर की ओर जाने का प्रयास किया, तभी दरवाजा अपने आप सँकरा हो गया, मैं दरवाजे में फँस गया। अन्दर जाने के लिये बहुत जोर लगाया, मगर अन्दर न

जा सका। उसी समय मेरे मुँह से अपने आप ओम का उच्चारण निकलने लगा, दरवाजा अपने आप पूर्व स्थिति में आ गया, फिर मैं अन्दर चला गया। मैं जैसे ही अन्दर की ओर आगे चला, सामने सीढ़ियाँ दिखाई दी, मैं सीढ़ियों पर चढ़ता हुआ बहुत ऊपर चला गया। फिर एक और दरवाजा मिला, उस दरवाजे को पार किया। दरवाजा पार करते ही मैं बहुत अच्छी जगह पर पहुँच गया, वह जगह प्रकाशमान थी, मैं स्वतंत्र होकर वहाँ घूमने लगा। आगे चलकर महलनुमा जगह मिली, मैं महलनुमा जगह के अन्दर चला गया। वहाँ पर बहुत से स्त्री-पुरुष दिखाई दिये, वहाँ पर बैठने व लेटने की बहुत अच्छी व्यवस्था थी। वहाँ के स्त्री-पुरुष सभी प्रसन्न थे, वहाँ का वातावरण बहुत अच्छा था। वहाँ पर वृद्ध स्त्री व वृद्ध पुरुष नहीं थे। मैंने एक-दो पुरुषों से बातें भी कीं और फिर आगे की ओर बढ़ गया, आगे चलकर एक जगह मैं कुछ देखकर अपने आप रुक गया। वही पर एक स्त्री गुमसुम सी दुःखी बैठी हुई थी। मैंने पूछा– "आप दुःखी क्यों है, यहाँ पर हमें सभी प्रसन्न दिखाई दे रहे है"। मगर वह स्त्री कुछ नहीं बोली, फिर मैंने वहीं पर बैठी हुई एक तरूण लड़की से पूछा– यह स्त्री क्यों दुःखी है? वह लड़की बोली– "अब यह इस लोक से जाने वाली है, इसके जन्म का समय आ गया है, जन्म लेने के डर से यह दुःखी हो रही है"। मैंने देखा– वहाँ पर सभी स्त्री पुरुष प्रसन्न थे, सभी बुरे विचारों से रहित थे। मैंने सोचा– यह जगह तो बहुत अच्छी है यहाँ पर किसी प्रकार का दुःख नहीं है। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! काले रंग के नवयुवक यमदूत थे। फिर मैं ध्यानावस्था में स्थूल शरीर से निकल कर सूक्ष्म शरीर के द्वारा भुवर्लोक पहुँच गया। भुवर्लोक में नरक वाले क्षेत्र में पहुँचा था। वहीं पर नवयुवक (यमदूत) सभी की पिटाई लगा रहे थे, वे सभी स्त्री और पुरुष यमदूतों की मार खाते हुए आगे अंधकार में किसी नरक के ओर चले जा रहे थे। फिर मैं वहाँ से आगे पितर लोक में पहुँच गया। पितर लोक में किसी प्रकार का दुःख नहीं होता है। सभी लोग प्रसन्न रहते हैं,क्योंकि पुण्य के प्रभाव से ही इस लोक की प्राप्ति होती है, जब तक जीवात्मा के अन्दर उचित मात्रा में पुण्य होता है, तब तक जीवात्मा उस लोक में रह सकती है, पुण्य के क्षीण होने पर हर जीवात्मा का पतन हो जाता है, फिर उसे भू-लोक पर जन्म लेना पड़ता है। इसी लिये वह स्त्री दुखी हो रही थी। जन्म के समय जीवात्मा को घोर कष्ट उठाना पड़ता है। उस पितर लोक में सिर्फ सुख की अनुभूति होती है किसी प्रकार के दुख की अनुभूति नहीं होती है।

अब ध्यानावस्था के समय आँखों में तीव्र जलन के कारण बहुत परेशानी हो रही थी। कुण्डलिनी जब ऊर्ध्व होती थी तब आँखों में बहुत गर्मी महसूस होती थी तथा पलकों व आँखों में जोर से चीटियाँ सी काटती थीं। आँखों के किनारों में ऐसा लगता था जैसे ब्लेड से काटा जा रहा है। मैं जितनी ज्यादा साधना

करता था उतनी ही ज्यादा पीड़ा बढ़ती जाती थीं, गहरे ध्यान के समय आँखों में अन्दर की ओर खिंचाव होता था, उसी समय अन्दर की ओर पुतलियाँ घूमने लगती थी। आँखें अन्दर की ओर घुसती चली जातीं थी, इससे ऐसा लगता था,आँखें टूटकर सिर के पीछे की ओर चली जाएँगी, इसी प्रकार कई घण्टे का ध्यान करता था। सामान्य अवस्था में तेज धूप में आँखें नहीं खुलती थीं, ऐसा लगता था आँखों में और पलकों के अन्दर जख्म हो गये हैं।

ब्रह्मरंध्र में साधना

आजकल मेरा मन अधिक प्रसन्न रहता था। दिन कब गुजर गया समझ में नहीं आता था क्योंकि ध्यान, प्राणायाम, मंत्र जाप आदि करता रहता था। ध्यान पर बैठते ही मेरा प्राण ब्रह्मरंध्र के अन्दर चला जाता था, उस समय ब्रह्मरंध्र के अन्दर बहुत गुदगुदी होती थी, क्योंकि मन और प्राण दोनों ब्रह्मरंध्र के अन्दर एक साथ रहते थे। मैं बहुत ऊपर आ गया हूँ, ऐसी अनुभूति होती थी। कुछ समय बाद आँखों में फिर खिंचाव होने लगता था। आँखें अन्दर की ओर खिंचतीं थी, इससे आँखों में दर्द होता था। पुतलियाँ चारों ओर घूमती थी, तब ऐसा लगता था मेरे आँखों की रोशनी न चली जाए, मैं अन्धा न हो जाऊँ। श्री माता जी अपने घर में नहीं थीं, बहुत दिनों से जलगाँव गयी हुई थी। फिर इस अनुभव के विषय में किससे पूँछूं, कि इसका अर्थ क्या होता है।

मैं ध्यान करने के लिये बैठ गया, ध्यान पर बैठते ही फिर पहले जैसी क्रियाएँ होने लगीं। पहले मैंने सोचा– कि ध्यान से उठ जाऊँ और आँखें खोल दूँ, मगर तब आँखें खुल नहीं रहीं थीं। ऐसा लग रहा था कि जैसे किसी ने मेरी आँखें बन्द कर दी हों, मस्तक में भी पीड़ा होने लगी थी। ब्रह्मरंध्र के अन्दर प्राण कुछ समय के लिए आया था, फिर प्राण वापस ब्रह्मरंध्र द्वार पर आ गया था। उसी समय कुण्डलिनी ऊर्ध्व होने लगी, उड्डियान बन्ध भी बहुत जोर से लग गया, बाह्य कुम्भक भी लगा हुआ था। तब कुण्डलिनी के कारण पेट, पीठ, हृदय, गर्दन और सिर आग के समान गर्म हो गया, शरीर में भयंकर वेदना होने लगी, मुझे लगा मेरी मृत्यु हो जाएगी। प्राण फिर ब्रह्मरंध्र के अन्दर चला गया, फिर मुझे अपना होश नहीं रहा। मुझे अनुभव आया– करोड़ों सूर्य के समान तेज प्रकाश है, मैं उसी प्रकाश में खड़ा हुआ हूँ। कुछ समय बाद यह प्रकाश अदृश्य हो गया, मैंने अपने आपको हल्के नीले प्रकाश में उपस्थित पाया। सम्पूर्ण अंतरिक्ष नीले

प्रकाश से प्रकाशित था अन्तरिक्ष स्वच्छ निर्मल था। यह अन्तरिक्ष अच्छा लग रहा था। अनुभव समाप्त हुआ, मेरा ध्यान साढ़े तीन घन्टे का लगा था।

श्री माता जी भी 6 सितम्बर को जलगाँव से मिरज आ गयी थी। मैं श्री माता जी के घर 7 सितम्बर को गया तथा श्री माता जी से आग का गोला फटने का अर्थ पूछा– श्री माता जी बोलीं– "यह अनुभव आपका बहुत अच्छा है, आग का गोला फटने का अर्थ होता है– ब्रह्मरंध्र का खुलना। जो प्रकाश चारों ओर फैल गया था, वह प्रकाश इसी ब्रह्मरंध्र के अन्दर का है"। श्री माता जी के मुँह से ब्रह्मरंध्र खुलने की बात सुनकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई, श्री माता जी को मैंने ब्रह्मरंध्र खुलते समय वाली क्रिया बतायी थी– "मैं आगे की ओर झुका था, मेरा सिर भूमि पर स्पर्श कर रहा था। मगर आप तो हमें आगे झुकने के लिए मना करती थीं, मगर मेरा ब्रह्मरंध्र तो आगे झुककर ही खुला है"। मेरी इस बात पर श्री माता जी कुछ नहीं बोलीं। जब उनसे मैंने दुबारा इसी बात को पूछा– "तब वह उठकर किचन में चली गयी। मैं समझ गया कि मेरी बात का उत्तर श्री माताजी के पास नहीं है, क्योंकि वह अनुभवहीनता के कारण मुझसे गलत कह रहीं थी। अब भी श्री माता जी हमारी बात का जवाब नहीं दे सकती हैं। मुझे आगे झुकने के कारण इन्होंने कई बार सभी के सामने बहुत कुछ सुनाया था।

हमारे शरीर में कमजोरी अधिक हो गयी थी मगर मेरा ध्यान बहुत अच्छा लगता था। एक बार श्री माता जी आश्रम में आईं थी, फिर उन्होंने मुझे खाना भी खिलाया था। अब मैं दिन में एक बार भोजन किया करता था। वह भी अल्प भोजन करता था। ध्यान की अधिकता के कारण मैं बिलकुल दुबला-पतला हो गया, मगर हमारे ध्यान की अवधि बहुत बढ़ गयी थी। एक बार में साढ़े तीन घन्टे से चार घन्टे तक ध्यान लगता था। जब मैं ध्यान में बैठता था तब निर्विकल्प समाधि लगती थी। निर्विकल्प समाधि में साधक को अनुभव नहीं आते हैं, न ही किसी प्रकार के विचार आते हैं। हालांकि इस अवस्था में साधक के संस्कार शेष रहते हैं, फिर भी विचार नहीं आते हैं। क्योंकि प्राण और मन एक साथ ब्रह्मरंध्र के अन्दर रहते हैं।

आजकल हमारी समाधि बहुत समय तक लगती थी। फिर प्राण थोड़ा नीचे वापस ब्रह्मरंध्र द्वार पर आ जाता था, तब उस समय अनुभव आ जाते थे। जब साधक का ब्रह्मरंध्र खुलता है तब प्राण थोड़े समय के लिए ब्रह्मरंध्र के अन्दर जाकर ठहरता है, फिर वापस ब्रह्मरंध्र द्वार पर आ जाता है। कभी-कभी आज्ञाचक्र पर आ जाता है। जैसे-जैसे अभ्यास बढ़ता जाता है वैसे-वैसे प्राण ब्रह्मरंध्र के अन्दर ज्यादा देर

तक ठहरने लगता है, अभ्यास परिपक्व होने पर प्राण, फिर ब्रह्मरंध्र के अन्दर ध्यानावस्था में सदैव बना रहता है।

मैं पहले लिख चुका हूँ, ध्यानावस्था में शरीर में बहुत उष्णता हो जाती थी। आँखों में जलन होती रहती थी तथा आँखों के किनारे कट गये थे, ऐसा लगता था सम्पूर्ण सिर जल जाएँगा। आज पाँच सितम्बर को रात्रि के समय ध्यान करने के लिये बैठा हुआ था, उसी समय लगा ब्रह्मरन्ध्र से बर्फ के समान एक धारा आज्ञाचक्र की ओर आ रही है, यह ठण्डी धारा आज्ञाचक्र के चारों ओर फैलने लगी जिससे सम्पूर्ण मस्तक और आँखें भी ठण्डी हो गई। सिर में अभी जो गर्मी के कारण बुरा हाल था, उसमें भी सभी जगह ठण्डक हो गयी। अब ऐसा लग रहा था- जैसे मुझे कभी गर्मी का असर हुआ ही नहीं है, यह ठण्डक बहुत अच्छी लग रही थी। मगर मेरा गर्दन से नीचे का शरीर आग में तप रहा था। इस कारण मेरा शरीर कष्ट महसूस कर रहा था।

मृदंग की आवाज

6 सितम्बर के सुबह 3.30 बजे मैं जाग गया। ऐसा लगा जैसे मैं किसी कारण से मै जाग गया हूँ, उसी समय अनुभूति हुई मेरे कानों में बड़ी जोर से मृदंग की आवज आ रही थी, मैं उठकर बैठ गया। ऐसा लगा कमरे के बाहर हजारों मृदंग एक साथ बज रहीं हैं। शुरुआत में मृदंग की आवाज अच्छी लग रही थी, क्योंकि उसकी आवाज ही अच्छी होती है। मैं चुपचाप बैठा हुआ मृदंग की आवाज सुनता रहा, मगर फिर आवाज ने कानों में दर्द पैदा कर दिया। आवाज इतनी तेज सुनाई दे रही थी कि कानों में ऐसा लगा था कि कान फट जाएँगे, मैं कमरे से उठकर बाहर आ गया और बाहर घूमने लगा। मैंने सोचा– खुले वातावरण में टहलने से आवाज आनी बन्द हो जाएँगी, मगर आवाज आनी बन्द नहीं हुई। उस समय लगता था कि चारों दिशाओं में मृदंग बज रही है, लगातार आवाज सुनते-सुनते मैं बेचैन हो गया। फिर मैंने आवाज बन्द होने का संकल्प किया, तब कानों में आवाज सुनाई देनी बन्द हो गयी। फिर मैं फ्रेश होकर ध्यान पर बैठ गया। ध्यानावस्था के समय आवाज आनी पूरी तरह से बन्द हो गई, ध्यान बहुत अच्छा लगा।

अर्थ- साधकों! इस तरह से विभिन्न प्रकार की आवाजे ध्यानावस्था में कई बार सुनाई दी थी, मुरली की आवाज अक्सर सुनाई देती थी, यह आवाज मेरे सिर के अन्दर से आया करती है, इसे नाद कहते हैं। साधक को एक निश्चित अवस्था में यह नाद सुनाई देते है।

यह अनुभव 7 सितम्बर को आया है। मैं सुबह 3.30 बजे जाग गया, क्योंकि मेरे जागने का समय हो गया था, मैं रोजाना 3.30 बजे जागता हूँ। जैसे ही मेरी आँखें खुली, तब मुझे लगा कि धीमी-धीमी आवाज सुनाई दे रही है। मैंने गौर करके आवाज सुनने का प्रयास किया, तो मुझे ॐ, ॐ, ॐ की लगातार आवाज सुनाई दे रही थी। आवाज बहुत ही धीमी थी। ऐसा लग रहा था जैसे बहुत दूर हजारों मील से गुफा के अन्दर से आवाज आ रही है। आवाज बहुत समय तक सुनता रहा, फिर मैं ध्यान पर बैठ गया, तो मालूम हुआ आवाज और कहीं से नहीं बल्कि मेरे ब्रह्मरन्ध्र के अन्दर से आ रही है। ध्यानावस्था में हमारा प्राण ब्रह्मरन्ध्र के अन्दर आ गया। तभी ऐसा लगा जैसे अन्तरिक्ष में बहुत ऊपर से आवाज आ रही है, फिर आवाज आनी बन्द हो गई, मैं समाधि में लीन हो गया।

अर्थ- साधकों! आजकल ध्यानावस्था में ब्रह्मरन्ध्र के अन्दर का प्रकाश अक्सर दिखाई देता है। मैं अपने आप को प्रकाश में खड़ा हुआ पाता हूँ। वह प्रकाश करोड़ों सूर्य के समान होता है।

दिव्य-दृष्टि द्वारा कार्य लेना

यह अनुभव 8 सितम्बर को आया। ध्यान पर बैठते ही कुण्डलिनी तीव्रता के साथ ऊपर पहुँच गयी। अबकी बार मेरा ध्यान आज्ञाचक्र पर स्थिर हो गया, फिर मैंने देखा– मस्तक पर तीसरी आँख दिखाई दे रही है, वह खड़े आकार में है। आँख धीरे-धीरे खुलने लगी है, मैं आँख के अन्दर देखने लगा, तभी मेरी दिव्यदृष्टि कार्य करने लगी। इतने में मुझे लगा– मैं सुनहली जगह पर खड़ा हूँ, चारों और सुनहरा प्रकाश फैला हुआ है, तभी मुझसे बहुत दूर एक नीले रंग का बिन्दु दिखाई दे रहा है। यह बिन्दु बहुत चमकीला था, मुझे बहुत अच्छा लग रहा था, मगर कुछ क्षणों में यह बिन्दु अदृश्य हो गया। यह बिन्दु दिव्यदृष्टि के द्वारा देखा गया था।

अर्थ- ये बिन्दु कारण जगत (कारण शरीर) से सम्बन्धित है।

कर्म

ध्यानावस्था में देखा– मैं किसी जगह प्रकाश में खड़ा हूँ। इतने में वहीं पर एक कुत्ता प्रकाश में प्रकट हो गया, कुत्ता बहुत अच्छा दिख रहा था। वह पूँछ हिला कर मेरी ओर देख रहा था, कभी मुझे सूँघता था, कभी मेरे चारों ओर चक्कर लगाता था, मैं भी उसे बड़े प्यार से देख रहा था। फिर मैं सोचने लगा कि कुत्ते की शक्ल कितनी अच्छी है, मगर मुझे यह सूँघ क्यों रहा है। कुछ क्षणों बाद कुत्ता अदृश्य हो गया।

अर्थ- पाठकों! यह कुत्ता हमारा ही कर्म है अर्थात हमारा कर्म ही कुत्ते के रूप में दिखाई दे रहा है। इसलिए वह मुझे बड़े प्यार से देख रहा है। जिस साधक के जिस प्रकार के कर्म होते हैं, कर्मानुसार ही वह पशु के रुप में दिखाई देते हैं।

एक बार मैं लेटा हुआ था। मेरी आँखें बन्द थीं, मगर मैं सो नहीं रहा था। उसी समय देखा– अन्तरिक्ष से एक कुत्ता दौड़ता हुआ चला आ रहा है, वह कुत्ता मेरे ऊपर सीने पर खड़ा हो गया। उसी समय मैंने हड़बड़ाकर अपनीआँखें खोल दीं, और मैं सोचने लगा कि यह कुत्ता मुझे बार-बार क्यों दिखाई देता है।

अर्थ- साधकों! यह कुत्ता हमारा ही कर्म हैं जो इस रूप में दिखाई दे रहा है। आजकल मेरे सिर में बहुत उष्णता रहती है जिससे कभी-कभी मेरी हालत पागलों की भाँति रहती है, मुझे कभी-कभी बुखार आ जाता है। इस तरह के बुखार में किसी प्रकार की दर्द निवारक दवा काम नहीं करती है। कभी-कभी ऐसा सोचने लगता था, मैं योग का अभ्यास करके बुरा फँस गया हूँ, क्योंकि अब स्थूल शरीर उष्णता के कारण बुखार में तपता रहता है। फिर मस्तक पर कपड़े की गीली पट्टी भी चढ़ाता हूँ और पीठ में गीला कपड़ा भी रखता हूँ।

भगवान श्री कृष्ण

यह अनुभव 10 सितम्बर शाम को आया था। मैंने देखा चारों ओर पानी ही पानी भरा हुआ है, जहाँ तक दृष्टि जाती थी वहाँ तक पानी के सिवाया कुछ और दिखाई नहीं देता था, मैं पानी के ऊपर चला

जा रहा था। ऐसा लगता रहा था जैसे पानी अन्तरिक्ष में भरा हुआ हैं, वहाँ पर पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र, आदि कुछ भी दिखाई नहीं दे रहे थे। मैं पानी के ऊपर कितने समय तक चलता रहा, यह नहीं बता सकता हूँ। मुझे ऐसा लगा, जैसे मैं बहुत चल चुका हूँ, फिर कुछ थकान-सी महसूस होने लगी। पानी मुझे बहुत दूर तक दिखाई दे रहा था, उसी समय मैंने कुछ दूरी पर, कोई वस्तु पानी के ऊपर तैरती हुई देखी। मैं उसी वस्तु की ओर चल दिया, जब उसके नजदीक पहुँचा, उस समय वहाँ का दृश्य देखकर मैं प्रसन्न हो गया। मैंने देखा– एक बड़े से पत्ते के ऊपर बालरूप में भगवान श्रीकृष्ण लेटे हुए थे। उनका रंग साँवला था, भगवान श्रीकृष्ण के सिर पर मोर पंख लगा हुआ दिखाई दे रहा है। उनके बड़े-बड़े घुँघराले बाल थे, वह दाहिने पैर के अँगूठे को, अपने दोनों हाथों से पकड़कर मुँह में लगाने वाले थे, तभी मैं उनके सामने जाकर खड़ा हो गया और उन्ही को देखने लगा, वह हमारी ओर देखकर मुस्करा रहे थे, दृश्य बहुत ही सुन्दर था। उसी समय मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! भगवान श्रीकृष्ण जी का स्वरुप बहुत ही अच्छा लग रहा था। मुझे याद आ रहा है, पुराण के अनुसार प्रलय का दृश्य मार्कण्डेय जी को दिखाया गया था। उन्होंने देखा– प्रलय के कारण चारों ओर जल-ही-जल था, जल के सिवाय कुछ दिखाई नहीं आ रहा था। वह उसी जल में आगे की ओर चले जा रहे थे, उसी समय उन्हें भगवान श्रीकृष्ण के इसी स्वरूप के दर्शन हुए थे। मार्कण्डेय जी जल में चल-चल कर थक गए थे। फिर वह गिर पड़े थे, उसी समय पत्ते के ऊपर भगवान श्रीकृष्ण का बाल स्वरूप का दर्शन हुआ था।

कुण्डलिनी आँखों पर

मैंने पहले लिखा है, आँखों में तीव्र जलन के कारण मैं अधिक परेशान हो रहता था। ऐसा लगता था आँखें आग से जली जा रही है। ध्यानावस्था में भी जलन और भी बढ़ जाती थी। जलन इतनी तेज होती थी कि उँगलियों से आँखें स्पर्श नहीं कर सकते थे। फिर एक दिन मैंने शीशे में देखा कि आँखों की पलकें कट गई हैं, जैसे किसी ब्लेड से काट दिया हो। तब हमारी समझ में आया कि आँखें इतनी क्यों दुखती है।

11 सितम्बर को ध्यानावस्था में देखा– कुण्डलिनी सीधे मार्ग से होकर ब्रह्मरन्ध्र द्वार पर पहुँची, फिर ब्रह्मरन्ध्र द्वार से मुड़कर आगे की ओर मस्तक पर आ गयी, मुझे कुण्डलिनी का पूरा शरीर दिव्यदृष्टि के द्वारा दिखाई दे रहा था। उसका मुँह नाग की तरह है तथा शरीर लाल सुर्ख तपे हुए लोहे के समान है। कुण्डलिनी का मुँह भृकुटि के पास है, जैसे ही मैंने उसे देखा– कुण्डलिनी ने पहले एक-दो बार जीभ बाहर निकाली, फिर मुँह से आग सी उगलने लगी। उसी समय ऐसा लगा मानों मस्तक पर आग बरस रही है। कुछ समय बाद हमारा ध्यान टूट गया, तब हमारी समझ में आया, कुण्डलिनी के कारण हमारी आँखों का बुरा हाल है। अब हमारी आँखे बहुत ही तेजस्वी हो गयी थी।

मैंने श्रीमाता जी को बताया कि हमारी कुण्डलिनी ब्रह्मरन्ध्र से उलट कर आँखों पर आ गयी है। श्री माता जी थोड़ा रोष में बोलीं– "आनन्द कुमार! जैसा आप सोचते हैं ऐसा नहीं है, कुण्डलिनी ब्रह्मरन्ध्र खोलकर इतनी जल्दी वापस नहीं उलटती है। आप को भ्रम हुआ है, आपका ब्रह्मरन्ध्र खुल गया है ये अच्छी बात है, आप अच्छे साधक हैं। अब आप संन्यासी बनने के योग्य हो गए हैं। आपको स्वामी चिदानन्दजी से (ऋषिकेश के) संन्यास की दीक्षा भविष्य में दिलवा दूँगी। फिर आपकी इच्छा आए तो आश्रम में रहिए अथवा आप अपनी इच्छानुसार कहीं भी जा सकते हैं।" मैं बोला– "श्री माता जी, मेरी कोई इच्छा नहीं है कि मैं संन्यास की दीक्षा लूँ, अभी मेरा लड़का बहुत छोटा है। जब तक वह बड़ा नहीं हो जाएगा, तब तक मैं संन्यासी नहीं बनाना चाहता हूँ।" श्री माता जी फिर कुछ नहीं बोली चुप बनी रही। मैंने सोचा– मैं अगर संन्यासी बन गया, तो मैं कहाँ रहूँगा, क्योंकि यहाँ पर मेरे और श्री माता जी के विचार मेल नहीं करते है, अभी मैं अपने घर तो लौट सकता हूँ, संन्यासी बनकर कहाँ रहूँगा। अभी-अभी मैंने जो दिव्यदृष्टि के द्वारा अनुभव देखा है कि ब्रह्मरंध्र द्वार से कुण्डलिनी उलट कर आँखों पर आ गयी है। श्री माता जी मेरे इस अनुभव को कहती हैं– "यह सत्य नहीं भ्रम है", क्योंकि श्री माता जी हर अनुभव को और क्रिया को अपनी साधना से जोड़ती हैं। उनका कहना है– कण्ठचक्र खुलने में 12 वर्ष तो लग ही जाते हैं। मैं कहता हूँ– कण्ठचक्र खुलने में 12 वर्ष से ज्यादा भी सकते हैं और कम भी सकते है। अब मैं इतना छोटा साधक नहीं रह गया कि योग के विषय में मैं न जान सकूँ। कभी-कभी स्वयं मैं अपनी दिव्यदृष्टि से श्री माता जी के स्थूल व सूक्ष्म कार्यकलाप देख लेता था, मगर मैं किसी से कुछ नहीं कहता था।

अनुभव नहीं आने चाहिए

ध्यानावस्था में प्राण तेजी से पाँचवे, छठे चक्र को पार करता हुआ ब्रह्मरन्ध्र द्वार तक पहुँच जाता है। ब्रह्मरन्ध्र में ध्यान लगता है, लगभग पाँच मिनट बाद अबकी बार मुझे लगा, मैं ब्रह्मरन्ध्र के अन्दर हूँ। सम्पूर्ण शरीर का भाव मिट गया। मुझे कुछ मालूम नहीं रहा कि मैं हूँ भी कि नहीं हूँ। यह स्थिति कब तक बनी रही, यह मैं स्वयं नहीं बता सकताहूँ। फिर मुझे अपना भान होने लगा और ध्यान टूट गया। श्री माता जी ने तीन-चार दिन बाद बताया आपको अनुभव नहीं आने चाहिए। अनुभव आने से आगे की अवस्था प्राप्त होने में रुकावट आती है। अनुभव आते समय बुद्धि व विचार कार्य करते हैं। आगे की अवस्था निर्विकल्प समाधि की है, समाधि अवस्था में मन विलीन हो जाता है। फिर श्री माता जी ने कविता दीदी का उदाहरण दिया और कहा– कविता मेरे से ज्यादा बताने में सामर्थ्य हैं, सभी को मेरी आज्ञा के बिना भी बताती रहती है, मुझे मालूम नहीं होता है। बताने का कार्य करने लगे तो आगे की साधना रुक जाता है, बताने का सामर्थ्य इतना अधिक बढ़ जाता है, कि सभी के प्रकार के प्रश्नों का तुरन्त उत्तर दिया जा सकता है। दिव्यदृष्टि तो एक प्रकार की सिद्धि जैसी ही है, यदि इससे कार्य लेना शुरुकर दो तो आगे की अवस्था में देरी से प्राप्त होती है। आपको जो अनुभव आए हैं, वे सभी दिव्य हैं। इन अनुभवों को देखने का कार्य दिव्यदृष्टि करती है। अब आपको अनुभव नहीं आने चाहिए, आगे आपको अनुभव नहीं आएँगे। पहले तो आपको निराशा होगी, अनुभव आने क्यों बन्द हो गए मन में ढेरों शंकाएँ उठेंगी। फिर मन शान्त हो जाएँगा और आनन्द की प्राप्ति होगी। यह सब इसलिए बताया क्योंकि कभी मैं यहाँ पर होती हूँ, कभी मैं नहीं होती हूँ। आप एक बात को याद रखिए, आप कुछ दिनों बाद घर जाने वाले हैं, आपको सभी पूछेंगे, समाज आपको दूध से नहलाएगी और अपके पीछे पड़ जाएँगी। आप उनकी समस्याँये सुलझाएँगे, फिर सब कुछ आपको भोग करना पड़ेगा, आप वहीं रुक जाएँगे। आप सभी से स्पष्ट बोल देना, कि श्री माता जी ने मना कर दिया है, उल्टा-सीधा कार्य करने को रोका है। आप बिलकुल शान्त रहिए। आगे बढ़िए।

गुरु तत्त्व का स्वरूप

यह अनुभव 13 सितम्बर को आया– श्री माता जी और मैं किसी सँकरे से दरवाजे नुमा जगह से आगे की ओर चलने लगे, जैसे ही सँकरी सी जगह पार की, तभी मैं और श्री माता जी बहुत तेज प्रकाश में

पहुँच गए। ऐसा लगता था यहाँ पर करोड़ों सूर्य का प्रकाश फैला हुआ है। श्री माता जी मेरे आगे चल रही थीं, मैं उनके पीछे चल रहा था, उस प्रचण्ड तेज प्रकाश में मेरे और श्री माता जी के शरीर तेज से युक्त थे। कुछ समय तक मैं और श्री माता जी चलते रहे, फिर हम दोनों रुक गए, श्री माता जी मेरे आगे खड़ी हुई थीं। फिर क्षण भर बाद श्री माता जी आगे की ओर चली, मैं आपनी जगह पर खड़ा रहा। श्री माता जी 5-6 मीटर आगे चलकर थोड़ा सा ऊपर की ओर चलीं। इतने में उनके शरीर से बहुत तेज प्रकाश निकलने लगा। प्रकाश इतना तेज था कि श्री माता जी का शरीर पूरी तरह से स्वरुप रहित होकर प्रकाश में परिवर्तित हो गया। उस जगह पर बहुत तेज प्रकाश दिखाई दे रहा था, फिर यही तेज प्रकाश मेरे सामने सम्पूर्ण प्रकाश में मिल गया। जैसे ही श्री माता जी सम्पूर्ण तेज प्रकाश में विलीन हो गयी, उसी समय मेरे मुँह से जोर से आवाज निकली– "माँ"। फिर मैं क्षण भर के लिए रुक गया और सोचने लगा– "माँ" मुझे छोड़कर प्रकाश में लीन हो गई, उस समय मुझे थोड़ा सा दुख हुआ। फिर मैं जोर से बोला– " माँ, मैं भी आपके पीछे आऊँगा, मुझे भी आप में विलीन होना है। मैं भी इसी प्रकाश में विलीन होऊँगा।" अनुभव समाप्त हुआ।

अर्थ- यह अनुभव निःसन्देह ब्रह्मरन्ध्र के अन्दर का था। इस अनुभव को देखने को देखने के लिये दिव्यदृष्टि कार्य कर रही थी। साधकों! यहाँ पर मैंने श्री माता जी के स्वरूप का वर्णन किया है, यह श्री माता जी का शरीर नहीं था बल्कि गुरुतत्त्व का स्वरुप था। गुरुतत्त्व चैतन्यमय शक्ति होती है, शक्तिपात के समय शिष्य के शरीर में व्याप्त होकर सूक्ष्म रूप से कार्य करती रहती है, श्री माता जी को मालूम नहीं होता है कि उनकी शक्ति क्या कार्य कर रही है। श्री माता जी पंचभूत से बने स्वरूप में रहती हैं, जो कर्मों के कारण बन्धन में बँधा होता है, मगर गुरुतत्त्व तो चैतन्यमय शक्ति होती है। गुरु द्वारा जब शिष्य पर शक्तिपात किया जाता है जो शक्ति शिष्य के अन्दर प्रवेश करती है उसे गुरु तत्त्व कहते है। उसी गुरु तत्त्व को साधक उच्चावस्था में उस शक्ति को निराकार रूप में देख सकता है, मगर साधक को अभ्यास के शुरुआत में, यही शक्ति गुरु के स्थूल शरीर वाले स्वरूप में दिखाई देती है। साधक को जो ध्यानावस्था में अपने गुरु दिखाई देते हैं, वही गुरुतत्त्व होता है।

दूध का पीना

यह अनुभव 16 सितम्बर को आया, मैंने ध्यानावस्था में देखा– मैं अपने कमरे में बैठा हुआ ध्यान कर रहा हूँ। उसी समय कुछ पदार्थ (मिट्टी के कण की तरह) उड़कर कमरे के अन्दर आ रहे है। मैं सोचने

लगता हूँ– यहाँ आश्रम में कमरा तो बन्द है फिर भी यह धूल जैसे कण (मगर धूल नहीं), कमरे के अन्दर कैसे आ रहे हैं। मुझे वे कण अच्छे नहीं लग रहे थे, क्योंकि हवा में उड़-उड़कर मेरे ऊपर भी आ रहे थे। मैंने सोचा– यह गन्दगी कौन उड़ा रहा है और मेरे ध्यान में विघ्न डाल रहा है। उसी समय मैं अपने स्थूल शरीर से निकलकर बाहर खड़ा हो गया। मैं सूक्ष्म शरीर से अपने कमरे की छत पार करता हुआ ऊपर की ओर तीव्र गति से चल दिया, जिधर से धूल जैसे कण आ रहे थे उसी ओर जानें लगा, कुछ क्षणों बाद मैंने अपने आपको एक अपरिचित जगह में पाया, वहाँ पर प्रकाश फैला हुआ था। मैंने देखा– जो धूल जैसे पदार्थ के कण, मेरे कमरे में आ रहे थे उसे एक लड़का उड़ा रहा था। जैसे किसान अपने गेहूँ की उड़ाई खलिहान में करता है। वह लड़का तसले से जो उड़ाई कर रहा था, उससे चमकीली वस्तु वहीं पर गिर रही थी। चमकीली वस्तु का आकार सुनहले सिक्कों व मणियों के समान था। इन सिक्केनुमा वस्तु से तथा मणियों से प्रकाश निकल रहा था। धूल और मिट्टी जैसे कण उड़कर अन्तरिक्ष में होते हुए मेरे कमरे के अन्दर आ रहे थे। मैं उस लड़के को बोला– "बन्द करो यह उड़ाई करना, यह गन्दगी मेरे कमरे में जाती है।" लड़के ने उड़ाई करना बन्द कर दिया। मैं वहीं पर खड़ा होकर चारों ओर देखने लगा। अब मुझे दूर-दूर तक दिखाई देने लगा। फिर मुझे अपना आश्रम भी दिखाई देने लगा, जब मैंने चारों ओर देखना बन्द कर किया, तब मैंने अपने आपको उसी चमकीली वस्तु के ढेर के ऊपर खड़ा हुआ पाया। मैं उन चमकीले सिक्कों के ढेर से नीचे उतर आया, तब मुझे दूर-दूर तक का दिखाई देना बन्द हो गया, सिर्फ थोड़ी दूरी तक ही दिखाई देता रहा। तभी मेरी ओर एक पुरुष आता हुआ दिखाई दिया, मेरे पास आकर वह पुरुष बोला– "आनन्द कुमार, आप इतनी दूर से आए हैं, आप भूखे होगे, आप यह दूध पी लीजिए।" उसके हाथ में एक बहुत छोटा सा एक बर्तन था, उस बर्तन में दूध था, वह बर्तन उसने मुझे दे दिया। उस बर्तन के अन्दर दूध मुश्किल से 50 ग्राम ही भरा होगा, इससे ज्यादा दूध उस बर्तन में आ ही नहीं सकता था। मैंने मन में सोचा– "इतने दूध में मुझे क्या होगा"। वह व्यक्ति तुरन्त बोला– "आप यह मत सोचिए, आपको और दूध मिल जाएँगा।" तभी मैं उस व्यक्ति की बात सुनकर चौंक पड़ा। मैंने सोचा– इस पुरूष ने मेरी मन की बात कैसे जान ली, मैं तुरन्त दूध पीने में लग गया और सोचा, एक ही घूँट में सारा पी जाऊँगा, मगर दूध समाप्त होने का नाम नहीं ले रहा था। मैंने फिर जबरदस्ती करके सारे दूध को पी लिया। मुझे आश्चर्य हुआ कटोरी में तो दूध थोड़ा सा ही था, मगर बड़ी मुश्किल से मैंने पी पाया। वह पुरुष मुझसे बोला– "क्या आपको और दूध चाहिए ?" मैं बोला– नहीं– "मेरा पेट भर गया है।" वह पुरुष बोला– "मैंने ही आप को दूध पीने के लिए यहाँ बुलाया है"। मैं उसकी बात सुनकर अचम्भित हुआ फिर उस पुरुष से मैं बोला– "अच्छा मैं

चलूँ"।उसने इशारे से जाने की इजाजत दे दी, मैं वहाँ से चल दिया। प्रकाश चारों ओर फैला हुआ था, रास्ता व आसपास की जगह बहुत सुन्दर थी। अनुभव समाप्त हुआ।

अर्थ- साधकों! मैं किसी दूसरे लोक में चला गया था। वह लोक कौन-सा था, मैं नहीं कह सकता हूँ, क्योंकि एक ही लोक में विभिन्न प्रकार के स्थान व विभिन्न प्रकार के पुरुष पाए जाते हैं। दूध का पिलाना आध्यात्म अथवा सात्विक शक्ति प्रदान करना होता है। वैसे आध्यात्म में दूध का अर्थ ज्ञान भी होता है।

हिरण्यमय पुरुष

हमारी इच्छा रात्रि 12.30 बजे ध्यान के लिए होने लगी, मैं लेटा हुआ था उठकर बैठ गया। ध्यान करने के लिए आँखें बन्द की ही थी तभी एक बहुत तेजस्वी पुरुष दिखाई दिया, उसके सिर पर बड़े-बड़े सफेद रंग के बाल थे, उसकी खूबसूरत दाढ़ी के बाल सीने तक थे, दाढ़ी के बाल सफेद व सुनहले थे। आँखों से तेज निकल रहा था, चेहरे का रंग तपे हुए सोने की तरह सुर्ख लाल था। उनका सम्पूर्ण शरीर सुनहरा था तथा तेज से ओतप्रोत था, सुनहरा प्रकाश उनके शरीर से निकल रहा था। वह मुझे देख रहे थे, मैं उन्हें देख रहा था, उसी समय उन्होंने हँस दिया। उनके खूबसूरत दाँत चमकने लगे, दाँतों की पंक्तियाँ बच्चों के समान सुन्दर थी। उनके हँसने में एक विचित्र सा भाव समझ में आ रहा था,ऐसा लग रहा था जैसे वह मुझसे बहुत प्रसन्न हो। मेरी साधना की उन्नति में उन्हें अति प्रसन्नता हो रही है। वह मेरे शुभचिन्तक से लग रहे थे, मुझे ऐसा लगा जैसे कोई बिछुड़ा हुआ बहुत पुराना मित्र मिल गया हो, उनकी आँखों में मेरे लिए प्रेम था। ऐसा लगा रहा था, जैसे कई जन्मों बाद मिले हों। उन्होंने अपना दाहिना हाथ ऊपर उठाकर मुझे आशीर्वाद दिया। फिर वह अदृश्य हो गए। मैंने अपनी आँखें खोल दीं। मुझे लगा मैं अभी ध्यान पर बैठा ही नहीं था सिर्फ आँखें बन्द की थीं।

अर्थ- साधकों! इन्हें "हिरण्यपुरुष" कहते है, ब्रह्मा भी कहते हैं जो सृष्टि की रचना करते है, ये ब्रह्मलोक में रहते हैं।

ब्रह्माण्ड जननी

यह अनुभव सुबह 18 सितम्बर को आया, मैंने ध्यानावस्था में देखा– मैं बहुत तेज प्रकाश में उड़ता हुआ तीव्र गति से ऊपर चला जा रहा हूँ। जैसे-जैसे मैं आगे जाता था वैसे-वैसे प्रकाश प्रचण्ड तेज होता जाता था। कुछ क्षणों बाद लगा– जैसे लाखों-करोड़ों नहीं बल्कि असंख्य सूर्य एक साथ प्रकट हों गए हों, अब आगे की ओर जाना मुश्किल था। क्योंकि आगे कुछ दिखाई नहीं आ रहा था। ऐसा लगता रहा था जैसे भीषण गर्मी से मैं जला जा रहा हूँ। फिर भी आगे की ओर जाना बन्द नहीं किया, जैसे आगे बढ़ने के लिये कोई प्रेरणा दे रहा हो। आगे की ओर जाते समय मैंने अपने दाहिने हाथ की हथेली, अपने आँखों के सामने लगा रखी थी और मुँह को एक ओर को मोड़ लिया था, क्योंकि प्रकाश का तेज मेरी आँखें सहन नहीं कर पा रही थीं। इसी प्रकार कठिनाई में मैं आगे की ओर बढ़ रहा था। जिस जगह पर मैं चल रहा था उस जगह पर प्रचण्ड तेज प्रकाश उबल रहा था। क्षण भर के लिए ऐसा लगा जैसे मैं इस प्रकाश के उद्गम (स्त्रोत) में मैं खड़ा हूँ, क्योंकि प्रकाश जोर-जोर से ऊपर की ओर उबल रहा था। उस समय मुझे कुछ सूझ नहीं रहा था। मुझे लगा कि मेरा तीसरा नेत्र खुला हुआ है। फिर भी मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा था, मैं कहाँ चला जा रहा हूँ। अत्यधिक तेज प्रकाश के कारण आगे की ओर जाना रुक सा गया था। आँखें जोर लगाने पर भी नहीं खुल रही थीं, फिर भी मैंने आगे बढ़ने का प्रयास किया, मैंने देखा– जहाँ पर प्रकाश उबल रहा है उससे थोड़ी दूरी पर एक छोटी सी लड़की खड़ी हुई है, उसकी उम्र लगभग 10 वर्ष होगी। उसने राजस्थानी तरह का लहँगा और ब्लाउज पहन रखा था। कपड़ों का डिजाइन भी स्पष्ट दिखाई दे रहा था। लहँगे के डिजाइन में पीले रंग का प्रयोग ज्यादा हुआ था, ब्लाऊज उनके शरीर पर चिपका हुआ था, सिर पर चुनरी थी, आगे का सिर थोड़ा सा खुला हुआ था। चुनरी सिर पर होते हुए शरीर के दोनों तरफ लटक रही थी, उस समय लड़की धीमे-धीमे हँस रही थी। उसके सुन्दर दाँत चमक रहे थे, आँखें भी बहुत सुन्दर थीं, चेहरा अद्वितीय सुन्दर था। उसी समय मेरे अन्दर विचार आया– “यह लड़की कौन है” ? तभी प्रकाश के उद्गम की जगह से आवाज आयी– *“यह ब्रह्माण्ड जननी है”*। मैं थोड़ा सा सोच मुद्रा में हुआ, फिर धीरे से बोला– “ब्रह्माण्ड जननी”! इतने में वह लड़की अदृश्य हो गई, कुछ क्षणों में उसी जगह पर एक लड़का दिखाई देने लगा। वह लड़का भी अद्वितीय सुन्दर था, उसकी उम्र लगभग 12-13 वर्ष होगी, उसका वर्णन करने में मैं असमर्थ हूँ। उस तेज प्रकाश में उसके शरीर का रंग हल्का नीला था तथा उसके शरीर से हल्के नीले रंग का प्रकाश तेजी से चारों ओर को निकल रहा था। क्षण भर में उसे देखकर मेरे मुँह से निकला– यह तो भगवान श्रीकृष्ण जी हैं, मगर मुझे उनके सिर पर मोर पंख दिखाई नहीं दे रहा

था। भगवान श्रीकृष्ण क्षण भर में अदृश्य हो गए। फिर मुझे उसी जगह पर भगवान श्रीकृष्ण और पहले वाली लड़की एक साथ दिखाई देने लगे। लड़की श्री कृष्ण जी के बायीं ओर खड़ी हुई थी, दोनों को देखते ही मेरे मुँह से निकला– ये तो राधा जी और कृष्ण जी हैं। राधा जी तो पहले के समान थीं, मगर भगवान श्रीकृष्ण गले में एक बहुत बड़ी रंग-बिरंगी खूबसूरत माला पहने हुए थे, ऐसा लग रहा था माला घुटनों तक आ रही है। दोनों को देखकर मैंने कहा– "मैं आपको नमस्कार करता हूँ।" फिर मैं वापस आने के लिए पीछे की ओर मुड़ गया। तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! यह दर्शन साधक के लिए अत्यन्त दुर्लभ होता है। इस प्रकार का दर्शन हर एक साधक को नहीं हो सकता है। साधक अत्यन्त उच्चावस्था में इस प्रकार का प्रकाश उद्गम देख पाता है, मैं तो उस जगह कारण शरीर में खड़ा था। यह सम्पूर्ण दृश्य दिव्यदृष्टि के द्वारा देखा गया। इस अनुभव में मुझे श्रीराधा जी और श्रीकृष्ण जी के छोटी अवस्था वाले स्वरूप के दर्शन हुए है। पाठकों– कुछ वर्षों पूर्व ध्यान के माध्यम से मेरा श्री राधा जी व श्रीकृष्ण जी से सम्पर्क बना रहा है। इसीलिए मुझे ध्यान में श्री कृष्ण के बहुत अनुभव आते थे। इनके इस स्वरूप का दर्शन करना अत्यन्त कठिन होता है।

मुक्ति

यह अनुभव सितम्बर माह के तीसरे सप्ताह का है। मैंने देखा– मैं अन्तरिक्ष में खड़ा हुआ हूँ, चारों ओर हल्का नीला रंग का प्रकाश फैला हुआ है, मुझे बहुत दूर तक नीला प्रकाश दिखाई दे रहा है। एक ज्योति के आकार का प्रकाश पुञ्ज उस नीले अन्तरिक्ष में विलीन हो गया। कुछ प्रकाशपुञ्ज वहीं अन्तरिक्ष में इधर-उधर गति कर रहे थे। इस क्रिया को कुछ क्षणों तक देखता रहा। फिर सोचा– यह क्या हो रहा है? कुछ प्रकाशपुञ्ज नीले अंतरिक्ष में विलीन हो जाते है फिर उनका अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है और कुछ प्रकाश पुंज इधर-उधर गति कर रहे है। उसी समय अन्तरिक्ष में से आवाज आयी– *"यह मुक्ति है"*। मेरी समझ में आ गया ये प्रकाशपुञ्ज जीवात्माओं का स्वरुप हैं, जो इधर-उधर घूम रहे हैं, उन्हें अभी मुक्ति नहीं मिली। उसी समय अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस प्रकार से मुझे मुक्ति के विषय में बताया गया। मगर सत्य तो यह है यह दृश्य मुझे वृत्तियों के द्वारा समझाया गया है। वास्तविक मुक्ति के विषय में बताया ही नहीं जा सकता है, सिर्फ अनुभूति का

विषय है। तत्त्वज्ञानी पुरुष शरीर त्यागने के बाद इस अपरा-प्रकृति को त्याग कर परा-प्रकृति में विद्यमान हो जाता है।

एक बार

यह अनुभव भी सितम्बर माह के तीसरे सप्ताह का है, मैंने देखा– प्रकाशित अन्तरिक्ष में एक लड़की खड़ी हुई है, लड़की बहुत सुन्दर है, वह जोर-जोर से हँस रही है। वह मुझसे बोली– "आनन्द कुमार! एक बार मेरे लिए इसमें स्नान कर लो"। मैंने सोचने लगा– "किसमें स्नान कर लूँ"। फिर मैंने नीचे की ओर देखा– एक नदी बह रही है, मैं उस नदी के बिलकुल किनारे पर खड़ा हुआ हूँ, मेरे पैरों के पास पानी बह रहा है। मैंने उस लड़की से कहा– "मैं क्यों इसमें स्नान कर लूँ, मुझे क्या मतलब है।" वह फिर बोली– "आनन्द कुमार, मेरे लिये इसमें स्नान कर लीजिए, सिर्फ एक बार"। क्षणभर में मैंने सोचा और निर्णय किया– "चलो इसके लिये एक बार स्नान किए लेता हूँ"। वह प्रकाशित अंतरिक्ष में खड़ी हुई बराबर हँसे जा रही थी। मैं स्नान करने के लिए अपने कपड़े उतारने लगा, मेरे शरीर के सारे कपड़े अपने आप अलग हो गए। मैं देखा– मैं निर्वस्त्र हो गया हूँ। क्षण में सोचा– वह लड़की क्या सोचेगी मैं निर्वस्त्र हूँ। फिर विचार आया– उसे सोचने दो, वह क्या सोचती है उससे मुझे क्या लेना देना है। मैं निर्वस्त्र होकर पानी के ऊपर चलने लगा, अन्तरिक्ष में खड़ी लड़की मुझे देख कर मुस्करा रही थी। मैं नदी के बीच में खड़ा होकर सोचने लगा– मैं स्नान कैसे करूँगा, मैं तो नदी में पानी के ऊपर खड़ा हूँ, पानी के अन्दर कैसे जाऊँगा। लड़की बोली– "आप संकल्प कीजिए नदी में स्नान करने के लिये"। मैंने नदी में स्नान करने के लिये संकल्प किया, संकल्प करते ही मैं पानी के अन्दर नीचे की ओर जाने लगा। मुझे ऐसा लगा– पानी के अन्दर कोई खींच रहा है, मैं न चाहते हुए भी पानी में अन्दर की ओर चला जा रहा था। तभी मुझे डर सा लगने लगा, डर के कारण मेरे मुँह से जोर से निकली– "मुझे धोखा हुआ है"। वह लड़की खिल-खिलाकर हँसने लगी। उसकी हँसी में कामयाबी दिखाई दे रही थी। जैसे ही मुझे ऐसा लगा– कि धोखा हुआ है, मैं बिजली के समान गति से पानी के ऊपर एक झटके में आ गया और उस नदी से बाहर की ओर भागने लगा, वह लड़की अन्तरिक्ष से पानी में मेरे पास ही कूद पड़ी। उस लड़की की अदृश्य शक्ति के कारण मैं पानी के अन्दर जाने लगा, तभी घबराहट के कारण मेरे मुँह से आवाज निकली– "ॐ त्र्यंबकम

यजामहे...”, मैं मृत्युंजय मंत्र का जाप करने लगा। मंत्र जाप के प्रभाव से मैं तुरन्त पानी के ऊपर आ गया, तभी लड़की अदृश्य हो गई। मेरा अनुभव भी समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! नदी यही स्थूल जगत है। लड़की प्रकृति का स्वरूप थी। उसने एक बार स्नान के लिए कहा, और मैंने उसी के अनुसार ही किया। इसका अर्थ है– प्रकृति मुझे एक बार और संसार मे आने के लिए कह रही है। मैं आने के लिए तैयार भी हो गया। मगर उसी समय मेरी समझ में आ गया– मुझे धोखा हुआ है, फिर मैं बाहर निकल आया। इसका अर्थ हुआ– अब मैं दुबारा इस संसार में नहीं आऊँगा, यही हमारा आखिरी जन्म होगा।

आजकल मुझे अपना कर्म कुत्ते के रूप में बहुत दिखाई देता है। वह कुत्ता मुझे चारों ओर सूँघता है, फिर अदृश्य हो जाता है। मगर कभी-कभी मेरे शरीर के अन्दर विलीन हो जाता है।

भगवान दत्तात्रेय

यह अनुभव 23 सितम्बर सुबह 3.30 बजे आया। मैंने देखा– मैं अन्तरिक्ष में खड़ा हूँ, उसी समय मेरे सामने अत्यन्त तेज प्रकाश फैल गया, जैसे सैकड़ों सूर्य एक साथ प्रकट हो अये हो। कुछ क्षणों बाद उस प्रकाश के अन्दर भगवान दत्तात्रेय को खड़े हुए देखा, वह बहुत सुन्दर दिखाई दे रहे थे। उन्होंने भगवा धोती पहन रखी थी, कमर से ऊपर के शरीर पर कोई वस्त्र नहीं था, वह जनेऊ पहने हुए थे। दाहिने हाथ में लम्बा सा त्रिशूल था, उनके शरीर से प्रकाश निकल रहा था, वैसे भी वह तेज प्रकाश में खड़े हुए दिखाई दे रहे थे। वह अपने बायीं ओर को देख रहे थे, उनके बायीं तरफ संन्यासिनी वेश में एक स्त्री खड़ी थी, उसके सिर पर भी बालों का जूड़ा बालों का जुड़ा बना हुआ था। उसने भी भगवा वस्त्र वस्त्र धारण कर रखा था, वह स्त्री भी तेजस्विनी दिखाई दे रही थी। संन्यासिनी वेष में बायीं तरफ खड़ी स्त्री को देखकर मैं चौंका, कि यह स्त्री कौन है? वह स्त्री भी भगवान दत्तात्रेय को देख रही थी। मैं कुछ क्षणों तक भगवान दत्तात्रेय की सुन्दरता को देखता रहा। फिर वह अंतर्ध्यान हो गए। अनुभव समाप्त हुआ।

ध्यानावस्था में भगवान दत्तात्रेय के दर्शन हो गये, यह मेरे लिये बहुत अच्छी बात है। क्योंकि उनके दर्शन साधकों को बहुत ही कम हो पाते है, मगर उस संन्यासिनी को मैं पहचान नहीं सका। यह अनुभव मैंने श्री माता जी को बताया और संन्यासिनी के विषय में पूछा– तो श्री माता जी ने बताया “यह संन्यासिनी

योगिनी है, भगवान दत्तात्रेय ने इसे वरदान भी दिया था।” कहानी इसी प्रकार है– जब भगवान दत्तात्रेय तपस्या करते थे तो प्रतिदिन कृष्णा नदी के बीच में जाया करते थे, कुछ समय बाद वह वापस आ जाते हैं। किसी ने उसका पीछा किया तो देखा, नदी के अन्दर सुन्दर नगर बना हुआ है, उस नगर में 64 योगिनियाँ भगवान दत्तात्रेय की पूजा कर रही हैं। इसलिए भगवान दत्तात्रेय जी उन योगनियों को दर्शन देने जाया करते थे। उन 64 योगिनियों में आठ प्रमुख थीं। जब भगवान दत्तात्रेयजी तपस्या करके जाने लगे तब उन्होंने योगिनियों को उन्होंने वरदान दिया– “ तुम जब नदी से बाहर मेरे स्थान पर आओगी, तब तुम्हें हमारा दर्शन प्राप्त होगा।” यह वही योगिनी है।

श्री माता जी पर बाधा

एक बार श्री माता जी के घर में मैं ध्यान कर रहा था। श्री माता जी ध्यान हाल में बैठी हुई थीं। मैं देखा– श्री माता जी के पीछे एक गन्दी सी काली औरत खड़ी हुई है, वह देखने में अच्छी नहीं लग रही थी, साधारण सी धोती पहने हुए है। उसे देखते ही मैंने कहा– “यह औरत अच्छी नहीं है, इसका यहाँ पर क्या काम है, और श्री माता जी के पीछे क्यों खड़ी हुई है?” मैंने श्री माता जी को बताया तब उन्होंने मुझसे कहा– “मेरे पीछे एक बाधा रहती है वह 25 जनवरी को अपना प्रभाव दिखाया करती है, यह बाधा किसी दूसरे की भेजी हुई है। किसी को काली, औरत तो किसी को घूमता हुआ चक्र दिखाई पड़ता है”। फिर मैं सोचा– “काश! ऐसी बाधा मेरे पास आती तो देखता भेजने वाला कितना शक्तिशाली है”।

गरुण और हंस का दर्शन

मैंने ध्यान में देखा– मैं एक विशालकाय पक्षी को देख रहा हूँ, वह ईगल पक्षी की तरह लगता है। उसकी दोनों आँखें आग के गोले जैसे थीं, वह मुझे देख रहा था, मैं उसे देख रहा था। कुछ क्षणों बाद वह पक्षी अदृश्य हो गया। फिर उसी जगह पर दूसरा सफेद पक्षी बहुत बड़ा सा दिखाई देने लगा, पक्षी बिल्कुल सफेद व सुन्दर था।

अर्थ- इस अनुभव में मुझे गरुड़ और हंस का दर्शन हुआ है, ईगल जैसा पक्षी गरुड़ ही है। गरुड़ नाम का पक्षी इस ब्रह्माण्ड में सिर्फ एक ही है, भगवान विष्णु का वाहन यही गरुड़ पक्षी है, इसका अर्थ होता है– "विजय प्राप्त होना"। चित्त की अधिक शुद्धता होने पर, साधक को उच्चावस्था में इसका दर्शन होता है तथा साधक को अभ्यास में सफलता प्राप्त होती है। साधक को उच्चावस्था में हंस का दर्शन होता है, इस अवस्था में साधक को माया के विषय में थोड़ा सा ज्ञान होने लगता है।

दिव्यदृष्टि से कार्य लिया

आज 20 सितम्बर को सभी सत्संगी श्री माताजी का जन्म दिन मना रहे थे। तभी सायंकाल को मालूम हुआ, दिल्ली के एक साधक का एक्सीडेंट हो गया। दुर्घटना 16 सितम्बर को हुई है, आज चार दिन बाद श्री माता जी को एक्सीडेंट के विषय में फोन द्वारा बताया गया है। दिल्ली के एम्स अस्पताल में उसका इलाज चल रहा है, साधक की हालत गम्भीर बनी हुई है, उसे होश नहीं आया है। मुझे भी यह जान कर दुख हुआ, क्योंकि हमारी और उस साधक की उस समय बहुत बनती थी। वह स्वभाव के बहुत अच्छे थे तथा श्री माता जी के प्रिय शिष्य भी थे। श्री माता जी के जन्म उत्सव समारोह मनाने के बाद मैं आश्रम लौट आया।

21 सितम्बर को श्री माताजी के साथ कुछ साधिकाएँ आश्रम में आईं थी, मुझे भी दिल्ली वाले साधक की याद आ रही थी। हम सभी साधक भाई-बहिन आश्रम में ध्यान करने के लिए बैठे हुए थे। मुझे अब ध्यानावस्था में शीघ्र कुछ भी दिखाई नहीं देता था, क्योंकि अब हमारी निर्विकल्प समाधि लगती थी। ध्यान पर बैठते ही निर्विकल्प समाधि लग गयी, कुछ समय बाद मेरी अवस्था थोड़ी सी नीचे आ गयी, तब मुझे ध्यानावस्था में सुनाई दिया– "दिल्ली का साधक ठीक हो जाएँगा, अभी उसकी हालत बहुत ज्यादा खराब है"। यह बात मैंने सभी साधिकाओं को बतायी, कुछ समय बाद श्री माता जी और साधिकाएँ वापस चली गयी।

28 सितम्बर को आश्रम में अपने कमरे में 3½ बजे सुबह ध्यान करने के लिए आसान पर बैठ गया। कुछ क्षणों में हमारी निर्विकल्प समाधि लग गयी। मैं समाधि अवस्था में था, मुझे ऐसा लगा, जैसे बाहर से जोर से आवाज आ रही है, इससे मेरी समाधि टूट गयी, मैंने अपनी आँखें खोल दी। कमरे के

बाहर से फिर आवाज आयी, मैं आवाज को पहचान गया, बाहर पंकज कौशिक (मेरठ का लड़का) मुझे बुला रहा था। उसकी आवाज सुनकर मुझे आश्चर्य सा हुआ– कि इतने सुबह मिरज से आश्रम क्यों आया है और मुझे बुला रहा है। हमारी दृष्टि घड़ी पर गयी, तो देखा सुबह के 5½ बज रहे थे। मैं कमरे के अन्दर से ही बोला– पंकज क्या बात है इतने सुबह यहाँ आकर मुझे क्यों बुला रहा है? वह बोला– अरे, दरवाजा तो खोलो फिर बताऊँगा, मैं क्यों आपके पास आया हूँ। मैंने दरवाजा खोला, पंकज कौशिक कमरे के अन्दर आ गया और बोला– आनन्द कुमार तुम्हें श्री माता जी ने अभी इसी समय बुलाया है। मैं बोला– "क्या कोई बात हो गयी है, श्री माता जी ने मुझे क्यों याद किया है?" पंकज बोला– "मुझे मालूम नहीं है, माता जी ने मुझसे कहा है,कि आनन्द कुमार को अभी मेरे पास लेके आओ"। मैं बोला ठीक है मैं स्नान कर लूँ फिर तुम्हारे साथ चलता हूँ, थोड़ी देर में मैं तैयार होकर उसके साथ मोटर साइकिल द्वारा माता जी के घर के लिए चल दिया। हम दोनों 10 मिनट में श्री माता जी के घर पहुँच गये।

मैंने माता जी को प्रणाम किया। तभी श्री माता जी ने पंकज को बाहर जाने के लिए कहा– "पंकज तुम बाहर जाओ, जब तक मैं तुम्हें न बुलाऊँ तब तक अन्दर नहीं आना और नहीं किसी को आने देना"। पंकज कौशिक बाहर चला गया। श्री माता जी ने मुझे बताया– "आनन्द कुमार, दिल्ली से फोन आया है उस साधक को अब भी होश नहीं आया है, तुम ऐसा करो पूजा बाद में करना, पहले ध्यान के लिए 5-10 मिनट बैठो। उस साधक के विषय में देखो और जानकारी करो, शायद कुछ संदेश मिले तो मुझे बताना"।

श्री माता को मालूम है मुझे निर्विकल्प समाधि के कारण अब तुरन्त दर्शन नहीं होता है, मैं श्री माता जी के ये शब्द सुनकर हैरान हो गया, लेकिन गुरु आज्ञा कैसे टाल सकता था। मैं ध्यान करने के लिये बैठा गया, प्राण सीधे ऊपर जाकर ब्रह्मरंध्र के अन्दर चला गया। मैंने प्रयत्न किया कि प्राण थोड़ा नीचे की ओर आ जाएँ, मगर वह नीचे नहीं आया। फिर कुछ समय बाद प्राण ब्रह्मरंध्र द्वार पर आ गया, तब संदेश आना शुरू हो गया– "जब इतनी शक्तियाँ उसके साथ कार्य कर रही हैं फिर चिंता क्यों करते हो, तुम्हारा दोस्त ठीक हो जाएँगा"। फिर ध्यान थोड़ा सा हल्का हो गया, क्योंकि कमरे में कोई आ गया था। इस ध्यान में अवरोध आ गया था। कुछ क्षणों बाद मैं फिर ध्यान पर बैठा गया। तब आकाश से आवाज आयी– "साधक अगर स्वयं संकल्प करे तो उसे अधिक लाभ होता है, फिर भी यदि कुछ शेष रह जाएँ तो कर्म समझकर स्वीकार कर लेना चाहिये"। मुझे साधक के विषय में ढेरों जानकारियाँ प्राप्त हुई, फिर मैंने श्री माता जी को ध्यान में प्राप्त हुई सभी बातें बतायी, मेरे द्वारा बतायी गयी आखिरी जानकारी उन्हें अच्छी नहीं लगी। श्री माता जी बोलीं– "शर्मा जी (साधक) बेहोश पड़े हुए हैं, वह संकल्प कैसे करेंगे, यह तुम्हारा

विचार होगा"। फिर मैं मन्दिर की पूजा करने में लग गया, कुछ समय बाद कविता दीदी भी आ गई। उन्हें अच्छी तरह ध्यान में दिखाई देता है, उन्होंने भी उस साधक के विषय में बताया, उनकी जानकारी और मेरी जानकारी लगभग मेल कर रही थीं, फिर मैं आश्रम में आ गया।

रात्रि के समय जब मैं ध्यान पर बैठा, तब संकल्प के द्वारा दिव्यदृष्टि से कार्य लेने का प्रयत्न किया, उसी समय मुझे अपनी दिव्यदृष्टि दिखाई देने लगी। फिर दिव्यदृष्टि के द्वारा साधक की दुर्घटना से, कुछ क्षण पूर्व का दृश्य दिखाई देने लगा, वह अपनी पत्नी को स्कूटर पर बैठाए हुए लिये जा चले रहे थे और दुर्घटना हो गई। दुर्घटना के समय उनका दायाँ पैर स्कूटर के नीचे दब गया, वह दायाँ पैर स्कूटर के साइलेंसर के नीचे आ गया था। इसलिए दायें पैर के निचले हिस्से में उन्हें ज्यादा परेशानी बढ़ गई थी, क्योंकि दायाँ पैर साइलेंसर द्वारा जल गया था। फिर अस्पताल का दृश्य आने लगा, वह बेहोशी हालत में लेटे हुए हैं, उन्हें सुई चुभोने का असर नहीं होता है, कभी-कभी उन्हें थोड़ा सा होश आता है, तब वह आँखें खोल देते हैं, फिर बन्द कर लेते हैं, ऐसा उन्होंने तीन बार किया है। उन्हें अपना कुछ भी याद नहीं आता है। मेरी शर्मा जी (साधक) के सूक्ष्म शरीर से बात होने लगी, उसने अपना दाहिना हाथ मुझे दिखाया और बोले– मुझे इस जगह पर बहुत कष्ट हो रहा है। मगर मैं उस जगह पर कुछ भी देख नहीं पा रहा था शायद अन्दर की नाड़ियों में कुछ परेशानी थी। उन्होंने बताया– उनके शरीर में दो जगह दर्द ज्यादा हो रहा है, एक दाहिने हाथ में, दूसरा दाहिना पैर के नीचे भाग में। और भी कुछ बातें बतायी मगर उन बातों को लिखना मैं ठीक नहीं समझता हूँ। मैं शर्मा जी के विषय में यह तो समझ गया कि ये ठीक हो जाएँगे, मगर ये पूर्ण रूपसे कभी ठीक नहीं हो सकते है। इनके मस्तिष्क में थोड़ी सी कमी बनी रहेगी। मस्तिष्क की कमी शर्माजी को कभी भी मालूम नहीं पड़ेगी। मगर दूसरा व्यक्ति ज्यादा गौर करने पर यह जान जायेगा इनके मस्तिष्क कुछ कमी है, फिर मैं सुबह श्री माता जी के पास गया और शर्मा जी के विषय में सम्पूर्ण बातें बतायी। तब श्री माता जी बोलीं– "आप कहते हैं, शर्मा जी आँखें खोलते हैं और आँखें बन्द करते हैं। मगर ऐसा नहीं है, क्योंकि वह विस्तर पर बेहोश पड़े हुए हैं, आँखें कैसे खोल सकते हैं"। मैं बोला– "श्री माता जी मैंने ध्यानावस्था में ऐसा ही देखा है कि उन्होंने अपनी आँखें खोली हैं"। श्री माता जी बोलीं– "यह सही नहीं है। वह बेहोश पड़े हुए है, यह तुम्हारे अपने विचार है"। फिर मैं कुछ नहीं बोला, कुछ समय बाद मैं आश्रम लौट आया।

फिर दूसरे दिन सुबह श्री माता जी ने मेरे पास खबर भेजी– आपका अनुभव बिलकुल सत्य है। शर्मा जी आँखें आँखें खोलते है और बन्द कर लेते है। उसकी पत्नी का फोन दिल्ली से आया है,उन्होंने

इस बारे में बताया है। मुझे लगा पता नहीं, श्री माता जी मेरी बातों पर विश्वास क्यों नहीं करती हैं। श्री माता जी ने शर्मा जी के विषय में जानने के लिये बहुत प्रयत्न किया था, मगर कुछ भी जानकारी हासिल नहीं कर सकीं। तब मुझसे उस साधक के विषय में जानकारी लेने के लिए कहा था।

इस अनुभव में मैं बहुत सी बातें नहीं लिख रहा हूँ, क्योंकि उचित भी नहीं है ऐसी बातों को समाज के सामने व्यक्त नहीं करना चाहिये। मैं यह स्पष्ट कर दूँ– मेरे और श्री माता जी के बीच बहुत सी ऐसी बातें है जो कभी भी समाज नहीं जान पायेगा क्यों कि वह मेरी बहुत अच्छी गुरु के साथ माँ भी है। वर्तमान समय में लोगों को कुछ गोपनीय बातें की जानकारी हो गयी है, जैसे– श्री माता जी हमसे आध्यात्मिक कार्य लिया करती थी। यह सत्य है, मगर मैंने कभी किसी को इस विषय में नहीं बताया है। इसीलिए श्री माता जी की बहुत इच्छा थी कि मैं मिरज आश्रम में ही रहूँ, वह मुझे आश्रम में ऊँचा पद भी देने वाली थी तथा मैं भविष्य में साधकों का मार्ग दर्शन करूँ, उनकी ये प्रवल इच्छा थी, मगर मैं उनकी इच्छा को पूर्ण नहीं कर सका। क्योंकि कुछ ऐसे कारण थे, मैं आश्रम में रह नहीं सकता था, फिर मैं वापस अपने गाँव आ गया।

श्री माता जी का दिव्य स्वरूप

यह अनुभव मुझे योग निद्रा में आया– मैं आश्रम में अपने कमरे में लेटा हुआ था, मुझे आश्रम से श्री माता जी के घर तक का रास्ता स्पष्ट दिखाई दे रहा था। इस रास्ते की आश्रम से श्री माता जी के घर की दूरी लगभग 6-7 किमी की होगी, मुझे सिर्फ रास्ता ही नहीं, बल्कि सड़क के किनारे खड़े पेड़, खेत और सूक्ष्म से सूक्ष्म कण भी दिखाई दे रहे थे। सम्पूर्ण रास्ते में प्रकाश फैला हुआ था, मुझे यह भी दिखाई दे रहा था, कि मैं कमरे के अन्दर लेटा हुआ हूँ। कमरे की दीवारें मुझे अवरोध नहीं कर रही थीं, दीवारे पारदर्शी वस्तु की भाँति लग रही थीं, कमरे से बाहर का सब-कुछ दिखाई दे रहा था। आश्चर्य की बात यह थी– कोई भी मनुष्य दिन में ज्यादा दूर तक नहीं देख सकता है, मगर मैं 6-7 किलोमीटर तक की दूरी स्पष्ट देख रहा हूँ, वह भी एक बार में दिखाई दे रही थी। कुछ क्षणों बाद मुझे सड़क पर एक रथ आता हुआ दिखाई दिया। रथ दो पहियों वाला था, उस रथ में एक सारथी भी था, वह घोड़ों की लगाम पकड़े हुए रथ को हाँक रहा था। उस रथ पर श्री माता जी विराजमान थीं, श्री माता जी के सिर पर ऊँचा मुकुट लगा हुआ था, उसमें बहुत चमकीली मणियाँ लगी हुई थीं, वह मणियाँ चमक रहीं थीं। श्री माता जी ने सफेद साड़ी पहन रखी

थी, मगर उनका शाल हल्के लाल रंग का था, वह शाल प्रकाश से झिलमिला रहा था, शाल उन्होंने अपने ऊपर ओढ़ रखा था। श्री माता जी रथ पर बैठकर चली आ रही थीं, मैं कमरे के अन्दर लेटे हुए देख रहा था। वह रथ सड़क पर चलता हुआ आश्रम की ओर आ रहा था, फिर रथ मेरे कमरे के सामने सड़क पर रुक गया। श्री माता जी रथ से उतर कर, शाल ओढ़े हुए मेरे कमरे की ओर आने लगीं। मैं यह देख रहा था– मेरे कमरे का दरवाजा बन्द है, उसी समय श्री माता जी ने दरवाजे पर खड़े होकर बुलाया– “आनन्द कुमार, आनन्द कुमार”। मेरे मन के अन्दर बिजली सी दौड़ गयी, मैंने सोचा– श्री माता जी दरवाजे पर खड़ी हैं और मैं लेटा हुआ हूँ, मैं जल्दी से उठकर खड़ा हो गया और दरवाजे के पास जाकर मैंने श्री माता जी से कहा– “श्री माता जी जरा ठहरो, मैं दरवाजा खोल रहा हूँ, दरवाजा अन्दर से बन्द है”। आश्चर्य की बात यह है कि बिना दरवाजा खोले ही मैं कमरे के बाहर खड़ा हो गया। मगर दरवाजा ज्यों-का-त्यों बन्द था, दरवाजे से बाहर निकलते समय मैं बड़े आराम से बाहर निकल गया। दीवार और दरवाजे से मुझे कोई अवरोध नहीं हुआ। दरवाजे के बाहर खड़े होकर मैंने यह भी देखा– “आनन्द कुमार का स्थूल शरीर चारपाई पर लेटा हुआ है”। मैं श्री माता जी से कमरे के बाहर खड़े होकर बातें कर रहा हूँ।

कुछ क्षणों बाद आया– श्री माता जी रथ से उतरकर कमरे तक पैदल आई हैं, तो मैंने सोचा– उनके पैरों में मिट्टी लग गयी होगी, मैं उनके पैर पोछ दूँ। मैं पैर पोंछने के लिए, उनके पैरों की ओर झुका तो दिखायी दिया– “श्री माता जी के पैर भूमि पर नहीं हैं, वह भूमि से थोड़ा ऊपर (लगभग एक फीट) खड़ी हुई हैं, मुझे यह जानकर बड़ा आश्चर्य हुआ। वह भूमि से थोड़ा ऊपर आधारहीन आकाश में खड़ी हुई थीं। जैसे ही मैंने उनके चेहरे की ओर देखा, तब उन्होंने मुस्करा दिया। उस समय उनके चेहरे से तेज प्रकाश निकाल रहा था, उनका सम्पूर्ण शरीर प्रकाशित था। इतने हमारी आँखें खुल गयी, उस समय सुबह के 3.30 बजे थे। मेरे शरीर में आग सी फैली हुई थी, क्योंकि कुण्डलिनी ऊपर तक चढ़ी हुई थी। कुछ समय बाद मै ध्यान पर बैठ गया।

अर्थ- साधकों! मुझे श्री माता जी के घर से आश्रम तक 6-7 किलोमीटर की जगह एक बार में दिखाई दे रही थी। यह सम्पूर्ण दृश्य दिव्यदृष्टि के द्वारा देख रहा था, तभी इस प्रकार से एक बार में ही 6-7 किमी. दिखाई दे रहा था। मेरे पास श्री माता जी का सूक्ष्म शरीर आया था, इसलिए मुझे ऐसा दिखाई दे रहा था। हमारा सूक्ष्म शरीर कमरे से निकलकर बाहर खड़ा हो गया था। अगर अनुभव में गौर करें तो आनन्द कुमार चारपाई पर ही लेटा हुआ था। मेरे अन्दर का शरीर अर्थात सूक्ष्म शरीर के द्वारा ही सम्पूर्ण कार्य हो रहा था। मेरे कमरे का दरवाजा बन्द था फिर भी मैं बाहर निकलकर खड़ा हो गया अर्थात सूक्ष्म शरीर को

दरवाजा व दीवारों का अवरोध नहीं होता है। हमारी दिव्य दृष्टि अत्यन्त तीव्र गति से कार्य कर रही थी। इसी कारण इतना अस्पष्ट दृश्य दिखाई दे रहा था।

पूर्णता प्राप्त करो

यह अनुभव 2 अक्टूबर का है, ध्यानावस्था में सुबह 10 बजे आया। आजकल कभी-कभी मानसिक स्थिति कुछ क्षणों के लिए खराब-सी हो जाती है, इसका कारण यह है कोई न कोई व्यक्ति अपमान जनक बात कह जाता है। मैं सोचने लगता हूँ– मेरा क्या कसूर है, जो ये लोग अपमान कर जाते हैं, मैं जानता हूँ इसका हल कुछ भी नहीं है, कभी-कभी मन में आता है, यह आश्रम छोड़ दूँ। कई बार निर्णय किया कि आश्रम छोड़ दूँगा और कहीं साधना करूँगा, मगर जब ध्यान पर बैठता हूँ तब अन्दर से आवाज आती है कि अभी आश्रम नहीं छोड़ना है। इसी कारण कभी-कभी मन बहुत उदास हो जाता है और मन में खींचातानी होती रहती है, मगर ध्यान में बैठकर मन में शान्ति मिल जाती थी। फिर मुझे ध्यान में आने वाली आवाज से चिढ़ लगती है कि ऐसी क्यों आवाज क्यों आती है। इसी खींचातानी में सुबह से बैठा हुआ था, क्योंकि आज सुबह सात बजे श्री माता जी के पास जाना था, मगर वहाँ पर नहीं जा पाया। मैंने निश्चय किया– अब मैं श्री माता जी के पास मिरज नहीं जाऊँगा, ध्यान बिना गुरु के भी हो सकता है, मेरी तो योग में अब उच्चावस्था हो गई है। श्री माता जी को अपने योग पर बहुत बड़ा अभिमान है, इसीलिए मेरे अनुभवों अथवा क्रियाओं को गलत बताती रहती हैं। जबकि बाद में वह अनुभव और क्रियाएँ सही निकलती हैं, ये कैसी गुरु या मार्गदर्शक हैं। मैंने निश्चय किया– अब मैं श्री माता जी से ज्यादा साधना करूँगा तथा योगबल भी श्री माता जी से ज्यादा मेरे पास होगा, आदि। मैं ये सब बातें सोच रहा था।

तभी हमारी आँखें बन्द होने लगीं, मैं ध्यान पर बैठ गया। ध्यान पर बैठते ही बहुत तेज प्रकाश दिखाई दिया, जैसे ढेरों सूर्य चमकने लगे हों, चारों ओर तीव्र प्रकाश फैला हुआ था, मैं भी प्रकाश में खड़ा हुआ था। कुछ क्षणों में उसी तेज प्रकाश के अन्दर एक संत पुरुष प्रकट हो गये, उनका कद मध्यम श्रेणी का था, शरीर हृष्ट-पुष्ट था, भगवे वस्त्र धारण किये हुए थे। उन्होंने हल्के लाल रंग की कीमती शाल ओढ़ रखी थी, शाल ओढ़ने का ढंग थोड़ा विचित्र सा था, शाल औरतों के समान ओढ़े हुए थे, अर्थात सिर का पिछला भाग साल से ढका हुआ था। रंग उनका हल्का साँवला सा था, यह महापुरुष मुझसे थोड़ी दूरी पर खड़े हुए थे। फिर वह महापुरुष जी मुझसे बोले– ‘‘बेटा, तुम्हें पूर्णता हर हालत में प्राप्त करनी है, आगे

चलकर तुम्हें बहुत कार्य करना है, भविष्य को तुम्हारी जरूरत है"। मैं उन्हें टकटकी लगाए हुए देख रहा था मैं उनसे कुछ नहीं बोला, वह फिर बोले– "जाओ अपने गुरु के पास"। वह महापुरुष इतना कह कर चुप हो गए। फिर मेरे ही सामने वह अदृश्य हो गये, इतने में मेरी आँखें खुल गयी। फिर मैं तैयार होकर श्री माता जी के पास चला गया।

मैंने यह अनुभव श्री माता जी को यह अनुभव सुनाया, मगर श्री माता जी अनुभव सुनकर उत्तर में कुछ नहीं बोलीं। मैं समझ गया, श्री माता जी को हमारा अनुभव अच्छा नहीं लगा होगा। मेरा सोचना था– जो शब्द उन संन्यासी जी ने कहे थे, उसे सुनकर श्री माता जी मेरे अनुभव से प्रसन्न हो जायेगी, मगर प्रसन्नता की जगह उन्हें कुछ और ही महसूस हुआ,आपकी सोच को गुरुदेव धन्य है। शिष्य की कामयाबी पर गुरु को प्रसन्नता होनी चाहिए, मगर मेरे गुरुदेव चुप है।

अर्थ- साधकों! ये संन्यासी कोई साधारण सन्यासी नहीं थे, ये भगवान गौतम बुद्ध के प्रिय व वरिष्ठ शिष्य थे इनका नाम आनन्द था। इस समय ये तपलोक के उच्चस्तर पर रहते हैं जहाँ पर ब्रह्मलोक और तपलोक मिलता है। यह बात सन् 1996 के जनवरी माह में मालूम हुई थी।

मेरी दिव्यदृष्टि बहुत ही तेज होने के कारण, दूर-दृष्टि तेज गति से कार्य करती है, दूर-दृष्टि योगनिद्रा में भी कार्य करती है। जब मैं सो जाता हूँ तब मेरा प्राण ब्रह्मरन्ध्र के अन्दर चला जाता है, उसी समय हमारी दूर-दृष्टि कार्य करती है। दूर-दृष्टि सिद्ध होने के कारण मुझे ध्यानावस्था में दूर-दूर तक दिखाई देता है तथा योगनिद्रा में भी कुण्डलिनी ऊपर तक चढ़ती उतरती रहती है। जब कुण्डलिनी के कारण शरीर में गर्मी अधिक बढ़ जाती है तब सोते समय में मेरी नींद खुल जाती थी,क्योंकि गर्मी के कारण शरीर को पीड़ा होने लगती है। यदि मैं इस अवस्था में एक माह और बना रहता तो अवश्य ही बहुत सारे अनुभव आते। अब पृथ्वी की वर्तमान समय में घटने वाली घटनाएँ और ऊपर के लोक के विषय में ढेरों सूक्ष्म जानकारियाँ मिलती रहती थीं, यह सारी जानकारियाँ दिव्यदृष्टि के द्वारा प्राप्त होती थीं। आजकल मेरे शरीर में बहुत ज्यादा शुद्धता बढ़ गई थी। किसी के नजदीक बैठना मुझे अच्छा नहीं लगता था, बस अकेलापन ही अच्छा लगता था। उस समय खाने की भी इच्छा नहीं होती थी। कोई मेरे पास से निकल जाएँ या बात करके चला जाएँ, तो भी अच्छा नहीं लगता था। कभी-कभी मुझे अपने आप से झुंझलाहट सी महसूस होती थी, मेरी याददाश्त बहुत कमजोर हो गई थी, यह संसार अच्छा नहीं लगता था। अब मेरे मन में मोह नहीं रह गया था। बस यही लगता था, कठोर साधना करके पूर्णता प्राप्त करूँ।

मैंने एक बार सोचा, एक-डेढ़ साल हो गया है अब मैं घर हो आऊँ। मैंने घर (कानपुर) जाने का निश्चय कर किया, फिर मैंने श्री माता जी को बताया कि मैं घर जाना चाहता हूँ, श्री माता जी ने कहा– "आप एक माह के लिए घर हो आइए, तुम मेरे साथ 7 अक्टूबर को निकलो, मुझे जलगाँव जाना है। सतारा, पूना होते हुए जलगाँव रुकना, फिर अपने घर चले जाना। क्योंकि कुछ साधकों की इच्छा है आनन्द कुमार पूना व जलगाँव में आये, इसलिए आप मेरे साथ चलिए"। मैंने 7 अक्तूबर को घर जाने की तैयारी कर ली, मगर मेरी स्थिति तो ऐसी थी मुझे किसी के द्वारा स्पर्श से वेदना होती थी। किसी से बात करना अच्छा नहीं लगता था, बहुत दिनों से मेरी वाचासिद्धि कार्य कर रही थी। जब मैं सतारा, पूना और जलगाँव जाऊँगा, तब सभी शहरों में साधकों से बातें भी करनी होगी, और सभी जगह खाना भी खाना होगा। इसीलिए अपने शरीर को अशुद्ध करना शुरू कर दिया ताकि मुझे साधकों के द्वारा प्राप्त अशुद्धता से परेशानी न उठानी पड़े। मैंने अपनी साधना कम कर दी, फिर श्री माता जी ने मुझे बताया– "आपको सतारा इसलिए लिए जा रहे हैं, किसी के साथ आपको सज्जनगढ़ भेज देंगे, वहाँ पर समर्थ गुरु रामदास जी की समाधि है, समाधि के दर्शन करना"। मैंने श्री माता जी से प्रार्थना की– "मेरी इच्छा यह भी है कि मैं आलिंदी में संत ज्ञानेश्वरजी की समाधि के दर्शन करूँ"। श्री माता जी ने मुझे आज्ञा दे दी।

सज्जनगढ़ की यात्रा

7 अक्टूबर को सुबह मैं श्री माता जी के साथ सज्जनगढ़ के लिए कार से चल दिये। साथ में कुछ और भी सत्संगी थे। कार जब सज्जनगढ़ के पास पहुँची तब श्री माता जी मुझसे बोलीं– "आनन्द कुमार, सामने जो वह पहाड़ी दिख रही है, वह सज्जनगढ़ है"। उस समय मैं कार के अन्दर से ही सज्जनगढ़ के आसपास की प्राकृतिक-सौंदर्य देख रहे थे। आसपास का क्षेत्र बहुत अच्छा दिखाई दे रहा था जिसका मैं शब्दों में वर्णन नहीं कर सकता हूँ। यदि किसी साधक को सृष्टि-सौंदर्य व आध्यात्म का आनन्द लेना हो तो सज्जनगढ़ अवश्य जाएँ। कुछ समय बाद मैं सज्जनगढ़ की पहाड़ी पर पहुँच गया। कार ऊपर तक नहीं जा सकती थी, क्योंकि कार के लिए आगे का रास्ता नहीं था। कार से उतरकर हम सभी को सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ीं। श्री माता जी ने बताया– "सड़क यहाँ तक अभी बनी है, पहले सारी पहाड़ी सीढ़ियों द्वारा चढ़ कर तय करनी पड़ती थी। पहाड़ी की ऊँचाई बहुत ज्यादा थी, पहले बहुत परिश्रम करके ऊपर चढ़ना पड़ता था। अब तो थोड़ी ही सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ती हैं, क्योंकि पहाड़ी पर सड़क बन गई है"। हम सभी साधक

पहाड़ी के ऊपर पहुँच गये। थोड़ा आराम करके समर्थ गुरु रामदास की समाधि पर गया, वहाँ पर समाधि के दर्शन किए। फिर हम सभी साधकों ने थोड़ा सा वहीं पर ध्यान भी किया, दोपहर को सभी ने प्रसाद भी पाया। श्री माता जी आराम करने लिये एकांत में चलीं गईं। हम सभी साधक सज्जनगढ़ में घूमने लगे, फिर एक ओर जाकर पहाड़ी पर बैठ गए। वहाँ से चारों ओर दूर-दूर तक प्राकृतिक सौंदर्य दिखाई दे रहा था। हरी-भरी छोटी-छोटी पहाड़ियों का आकर्षण इतना ज्यादा था, कि मेरा मन कह रहा था यहीं पर बनें रहो, वहाँ पर तीन-चार घन्टे का समय कब बीत गया मालूम ही हुआ। फिर वहाँ से सतारा के जाने के लिए हम सभी चल दिये। सतारा पहुँच कर मालूम हुआ यहाँ पर मुझे तीन दिन रुकना है, सतारा में तीन दिनों तक सत्संग किया। फिर 10 अक्टूबर को सुबह मैं पूना के जाने के लिए श्री माता के साथ चल दिये।

आलिंदी यात्रा

पूना मुझे 5 दिन रुकना था। पूना पहुँचने के दो दिन बाद आलिंदी जाने का प्रोग्राम बना, श्री माता जी ने कहा– “आप आलिंदी जा रहे हो तो सिद्धपीठ अवश्य जाना, यह आलिंदी से एक डेढ़ किलोमीटर की दूरी पर है। आलिंदी में तो ज्ञानेश्वर जी की समाधि है, मगर सिद्धपीठ में ज्ञानेश्वर जी की तपोभूमि है”। मेरे मन में संत ज्ञानेश्वर जी के लिए बहुत आकर्षण था। मुझे ध्यान में भी कभी इनके दर्शन नहीं हुए, अब मुझे इस बात का संतोष था कि मुझे उनकी समाधि के दर्शन होगें। सुबह 6-7 बजे कुछ साधकों के साथ बस द्वारा आलिंदी पहुँच गया। सभी ने आलिंदी में समाधि के दर्शन किए, फिर हम सभी कुछ समय के लिए ध्यान पर बैठ गए। ध्यान में मुझे एक संत के दर्शन हुए, उनके सिर पर मराठी ढंग की पगड़ी बँधी हुई थी। मस्तक पर चन्दन का तिलक लगा था उस संत की उम्र भी ज्यादा लगा रही थी। मैं उनका ज्यादा वर्णन नहीं कर सकता हूँ, क्योंकि मैंने उन्हें पहले कभी नहीं देखा था। ध्यान लगभग 15-20 मिनट का किया था। फिर मैंने वहीं पर एक फोटो देखा, मैंने एक साधक से पूछा– “यह फोटो किसका है?” तब उस साधक ने बताया– यह फोटो संत ज्ञानेश्वर जी के बड़े भाई निवृत्तिनाथ जी का है। मैं तुरन्त समझ गया मुझे इन्हीं का दर्शन हुआ है। फिर कुछ समय बाद पैदल चल करहम सभी सिद्धपीठ पहुँच गये। वहाँ पर कुछ समय बाद हम सभी साधक ध्यान करने के लिए बैठ गए।

ज्ञानेश्वरजी व मुक्ताबाई आदि के दर्शन

मेरी साधना अच्छी चल रही थी, इसलिए आसन पर बैठते ही ध्यान लग गया। मैंने संत ज्ञानेश्वर जी से प्रार्थना की– “मेरी बड़ी इच्छा है कि मुझे आपके दर्शन हों, कृपया आप मुझे दर्शन देकर मेरी इच्छा पूरी कर दीजिये”। मै संकल्प करके ध्यान में करने गया। कुछ क्षणों बाद आवाज आई– “हृदय में ध्यान करो”। आवाज सुनकर मैंने सोचा– मैं हृदय में ध्यान कैसे करूँ? आवाज आते ही मैंने हृदय पर ध्यान लगाने का प्रयत्न किया, मगर हृदय में मन एकाग्र नहीं हुआ। मुझे ऐसा लगा कि अब मेरा ध्यान ही नहीं लगेगा, मगर इसी खींचातानी में मन कब एकाग्र हो गया मुझे मालूम नहीं हुआ। वैसे मेरा मन ब्रह्मरन्ध्र के अन्दर सीधे पहुँचता था, मगर अबकी बार मुझे महसूस हुआ कि प्राण और मन दोनों ही आज्ञाचक्र में एक साथ रुक गए। इस कारण आज्ञाचक्र पर दबाव पड़ने लगा। मुझे लगा– मैं आज्ञाचक्र के अन्दर प्रवेश कर रहा हूँ। क्षणभर में मस्तक पर खड़े आकार में एक आँख दिखाई देने लगी, वह आँख इन स्थूल आँखों से बड़ी थी, यह आँख पूरी तरह से खुली हुई थी, आँख बिलकुल स्वच्छ और तेज थी, कुछ समय तक मैं इस आँख को देखता रहा फिर यह आँख दिखाई देनी बन्द हो गई।

उसी समय दूसरा दृश्य आ गया। मुझे एक लड़की दिखाई देने लगी, वह लड़की तरुण थी। लड़की का रंग गोरा था, उनका चेहरा बहुत तेजस्वी था उसने नाक में गोल रिंग पहन रखी थी। उसका चेहरा मेरे अति नजदीक था, वह मुस्करा रही थी। कुछ क्षणों में मेरा ध्यान कमजोर पड़ गया, कुछ क्षणों बाद मैं गहरे ध्यान में लीन हो गया, फिर मुझे वही आँख खड़े आकार में मस्तक पर दिखाई देने लगी, इसी आँख के द्वारा मुझे अपने सामने एक नवयुवक दिखाई देने लगा, वह नवयुवक मुझसे थोड़ी दूर पर बैठा हुआ था। उसका रंग गोरा था, मगर वह ज्यादा गोरा नहीं था। सुडौल, सुन्दर शरीर था, उम्र 18-19 वर्ष के लगभग रही होगी। कमर से ऊपर शरीर पर कोई कपड़ा नहीं था। कमर में धोती पहने हुए था। उसके सिर के बाल थोड़े घुँघराले से व लम्बे थे, बाल कन्धों पर रखे हुए थे। बाल ऐसे लग रहे थे जैसे अभी-अभी स्नान करके बैठा है, क्योंकि उसके बाल कुछ उलझे हुए से थे। सम्भवतः उसके शरीर की लम्बाई साढ़े पाँच फीट से 6 फीट के बीच रही होगी, वह नवयुवक मेरी ओर देखते हुए मुस्करा रहा था। उसे देखते ही मुझे आवाज सुनाई दी– “ये संतज्ञानेश्वर जी है”। ये शब्द सुनते ही मेरा ध्यान फिर कमजोर पड़ने गया। मैं अपने अन्दर प्रसन्न हो रहा था, फिर से गहरा ध्यान लग गया, तभी मुझे मस्तक पर खड़ी आकार में आँख दिखाई देने लगी। इतने में एक विशाल आकार वाला मानव चेहरा सामने आ गया, उनके सिर के बाल सफेद व लम्बे-लम्बे थे। मस्तक पर त्वचा की सिलवटें साफ दिखाई दे रही थीं, चेहरे का रंग सुर्ख लाल था, चेहरे

से आग जैसा प्रकाश निकल रहा था। वह मुझे शान्त मुद्रा में देख रहे थे। उनकी आँखें बिलकुल शान्त थीं। इन महापुरुष को देखते ही मेरे मन में आया कि ये महा पुरुष इस युग के नहीं हैं। क्योंकि उसका चेहरा विशाल व तेजस्वी था।

अर्थ- इस अनुभव के बाद फिर मेरा ध्यान कमजोर हो गया। मेरा मन तो नहीं कर रहा था कि मैं ध्यान से न उठूँ, मगर मेरा शरीर थक गया था। आज्ञाचक्र का क्षेत्र बुरी तरह से दुखने लगा था, आँखें में दर्द सा होने लगा था। मैं लगभग डेढ़-दो घन्टे ध्यान पर बैठा रहा। मन हमारा बहुत अधिक प्रसन्न हो रहा था, क्योंकि मेरी इच्छा पूरी हो गई थी। मुझे याद आया– आजकल फोटो में जैसे संत ज्ञानेश्वर जी बहुत सुन्दर दिखते हैं, वास्तव में इतने सुन्दर नहीं थे। लेकिन वह बहुत तेजस्वी बहुत थे, उनका रंग गेन्हुआ (ज्यादा गोरा नहीं) था। हाँ उनकी छोटी बहन मुक्ताबाई गोरी थी और बहुत सुन्दर भी थी, ये भी अत्यन्त तेजस्वी थी। मुझे जो लड़की दिखाई दी वह संत ज्ञानेश्वर जी की बहिन मुक्ताबाई थी, मगर मैं उन महापुरुष को नहीं पहचान सका,जिनका चेहरा बहुत बड़ा व सिर के बाल सफेद थे। ध्यानावस्था में मुझे बार बार एक आँख दिखाई देती थी, वह मेरी दिव्यदृष्टि थी। दिव्यदृष्टि के द्वारा मुझे ये सभी अनुभव आए थे।

ध्यान से उठकर हम सभी साधकों ने खाना खाया। फिर मैंने अपने अनुभव सभी साधकों को सुनाए, कुछ देर तक वहाँ पर बैठे रहे, फिर आलिंदी के लिये वहाँ से चल दिये। पूना आकर श्री माता जी को सभी अनुभव सुनाए, अनुभव सुनकर श्री माता जी बहुत प्रसन्न हुई। 14 अक्तूबर की रात्रि को पूना से ट्रेन द्वारा जलगाँव के लिए चल दिये। जलगाँव आकर मुझे वहाँ पर 6-7 दिनो तक रुकना पड़ा। यहाँ पर जलगाँव के साधकों के साथ आध्यात्मिक आनन्द लेता रहा, सभी साधकों के प्रश्नों के उत्तर देने में मैं सामर्थ्य रखता था तथा किसी भी साधक का कुछ भी जान सकता था। साधक बन्धु आध्यात्म से हटकर भी संसार के विषय में भी पूछते थे, तब मैं कुछ क्षणों में ही उनका सटीक उत्तर दे देता था। जलगाँव के साधकों से हमारी बहुत बनती थी, जलगाँव से कई साधक-बंधुओं के साथ कण्वाश्रम भी गया था। फिर जलगाँव से 12-13 किमी. दूर जाफराबाद में महान सिद्ध पुरुष जिप्पू्र अण्णा की समाधि पर गया,वहाँ पर थोड़ा सा ध्यान भी किया था। फिर वापस आ गया। दूसरे दिन अजन्ता की गुफाएँ देखने कुछ साधकों के साथ गया था। अजन्ता की गुफाओं में भगवान बुद्ध के जीवन चरित्र पर चित्रकारी व शिल्पकारी देखने को मिली, ये सभी गुफाएँ बहुत सुन्दर थी। फिर 20-21 अक्टूबर को घर के लिए (कानपुर) चल दिया। घर में एक माह तक रहा, उस समय अनुभव भी आए थे, मगर यहाँ पर उन अनुभवों को लिखना उचित नहीं

समझता हूँ। फिर दिल्ली होते हुए जलगाँव आ गया। अबकी बार जलगाँव में 8 दिनों तक रुका, फिर मैं अकेले ही मिरज आ गया। श्री माता जी जलगाँव में ही बनी रहीं।

अब श्री माता जी मुझे ध्यान में अक्सर दिखाई दिया करती थी। ध्यानावस्था में अनुभव ज्यादा नहीं आते थे, कभी-कभी आ जाते थे। अब अनुभव योगनिद्रा में आने लगे थे– अनुभव में मैं कुछ भी कर रहा हूँ, तभी श्री माता जी उपस्थित हो जाती थीं। मैं कहीं जा रहा हूँ, तभी दिखाई देने लगता था कि मेरे साथ श्री माता जी भी चल रहीं हैं। कभी-कभी श्री माता जी से मुझे डर लगने लगता था, क्योंकि वह हर समय मेरे साथ रहती थीं। एक बार श्री माता जी आश्रम में आईं, तब मैं उनसे पूछा– "श्री माता जी जब मैं सो जाता हूँ आप स्वप्न में मेरे साथ रहती हैं। कहीं भी घूम रहा हूँ (अनुभव में) तो आप मेरे आगे ओर और दायें या बायें ओर होतीं हैं। कभी-कभी स्वप्न में कोई कार्य करने लगूँ तो आप उसी समय वहीं पर उपस्थित हो जाती हैं। कभी-कभी कार्य करने के लिये आप मना भी कर देती हैं। श्री माता जी यह कैसे होता है कि आप अब सदैव मेरे साथ रहती हैं"। श्री माता जी ने बताया– "आपकी साधना की जो स्थिति है उसके कारण आपमें और मुझमें कोई ज्यादा दूरी नहीं रह गई है, आप मेरे अति नजदीक आ गए हैं। इसलिए मैं हमेशा आपको स्वप्न में दिखाई देती हूँ। मगर जब गुरु और शिष्य एक हो जाता है तब इस तरह दिखना बन्द हो जाता है। इस अवस्था में कौन किसे देखेगा, क्योंकि दोनों एक ही हो जाते हैं"। फिर उन्होंने स्वामी जी का उदाहरण दिया, स्वामी जी के रूप में कभी मैं साधकों को दिख जाती हूँ। कभी मैं और स्वामी जी एक साथ होते हैं। मैंने स्वामी जी से पूछा– तो स्वामी जी ने बताया, "जब हम और आप एक हो गये हैं, तो तुम्हें कैसे दिखाई दूँ ?"

दो दल का कमल

यह अनुभव 31 दिसम्बर का है, सुबह ध्यानावस्था में देखा– मैं तेज प्रकाश में खड़ा हुआ हूँ, चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश है। मेरे सामने बहुत बड़े आकार का एक कमल का फूल खिला हुआ दिखाई दे रहा है, इस कमल के फूल में दो ही पंखुड़ी हैं। यह कमल का फूल रंगीन नहीं है बल्कि प्रकाश के सतरंगी किरणों से दोनों पंखुड़ियाँ बनी हुई हैं। रंगहीन होते हुए भी कमल का फूल बहुत अच्छा लग रहा है, उसी फूल को देखकर मैं मुस्करा रहा हूँ। मैंने तुरन्त कहा– "यह कैसा कमल का फूल है, इसकी दो ही पंखुड़ियाँ हैं"। उसी समय आवाज आई– *"यह आज्ञाचक्र का कमल है, इसमें दो ही पंखुड़ियाँ होती हैं। आनन्द*

कुमार, तुम्हें बहुत बुरा लगता है जब लोग अकारण उल्टा-सीधा बोलते हैं, इन सभी को बोलने दे, खूब बोलने दे। त्याग इसको, सब कुछ त्याग, आगे की ओर बढ़ और आगे।" फिर, कुछ क्षणों बाद आवाज आई– *"तुम आपने को साधक समझते हो, अभी मेरी दृष्टि में साधक नहीं बने हो। शान्त हो जाओ, बिलकुल शान्त, शान्त, योग में उच्चतम अवस्था को प्राप्त करो"*।

वाचा सिद्धि का प्रयोग

मेरे अन्दर योगबल द्वारा कोई नया प्रयोग करने की इच्छा जागृति हुई थी। मैंने यह प्रयोग गुरु पूर्णिमा से पहले किया था, मेरा ये प्रयोग पूरी तरह से सफल रहा था। आश्रम में एक कुतिया अक्सर आया करती थी। कुतिया का शरीर सिर्फ हड्डियों का ढाँचा मात्र था। मैं दोपहर को खाना खाया करता था तब उस कुतिया को भी थोड़ा सा डाल दिया करता था, शाम के समय मैं खाना ही नहीं खाया करता था, मगर कुतिया शाम को भी खाना का इन्तजार किया करती थी और वापस चली जाती थी, फिर दोपहर को वह खाने के एक घण्टा पहले आ जाती थी और खाना का इन्तजार किया करती थी। धीरे-धीरे वह मेरे पास बैठ जाया करती थी, तब मैं प्यार से उसके शरीर पर हाथ फिराया करता था तथा शाम के लिए कुतिया को खाना देने के लिए रख लिया करता था। मैं शाम को खाना नहीं खाता था मगर कुतिया को अवश्य खिलाता था, कभी-कभी कुतिया के लिए शाम को नमकीन चावल बना लिया करता था। उस समय मेरे मन में एक और बात आई– क्या मैं जानवरों के वलय द्वारा जानवरों के मन की बात जान सकता हूँ, यह प्रयोग मुझे करना था उसके लिये मैंने इसी कुतिया को ही चुना था। उस समय मेरा शरीर बहुत ज्यादा शुद्ध हो गया था, मैं ध्यान बहुत अधिक किया करता था और मंत्र जाप भी बहुत किया करता था। इसीलिए किसी पुरुष के निकट आने पर, उसके वलय के द्वारा उसकी ढेरों जानकारियाँ मुझे हो जाती थी। मैं उस पुरुष के विषय में बहुत कुछ जान लेता था।

मैंने कुतिया पर प्रयोग के लिए उसके शरीर पर हाथ फिराना शुरू कर दिया, वह घास पर लेटी हुई थी। उसने आँखें भी बन्द कर रखी थीं, मैंने उसके आगे के पैर पकड़कर जोर से ओंकर किया। ओंकार करते समय कुतिया के शरीर में कम्पन होने लगा। कुतिया ने आँखें खोल दी और फिर बन्द कर लीं। मैं अपनी आँखें बन्द करके ध्यान करने लगा, मैं ध्यान करते समय कुतिया के आगे के पैर पकड़ रखे थे। कुछ

समय बाद संकेत मिलना शुरू हो गया– "वह उस समय भी भूख से पीड़ित थी, उसे खाना खाने की इच्छा थी, मेरा स्पर्श उसको अच्छा लग रहा था, मेरे स्पर्श से कुतिया को शान्ति की अनुभूति हो रही थी।

कुछ दिनों बाद मेरे एक गुरु बंधु पूना से आये हुए थे, वह डॉक्टर थे। मैंने डॉक्टर साहब को मैं सारी बातें बताईं। एक दिन श्री माता जी के यहाँ से डॉक्टर साहब मेरे पास आए और बोले– आपको और मुझे श्री माता जी ने सुबह बुलाया हुआ है। दूसरे दिन सुबह हम दोनों श्री माताजी के पास पहुँच गये। श्री माता जी के यहाँ मुझे बहुत समय लग गया, अब मेरा मन कुतिया की ओर गया, कि वह आज भूखी रह जाएँगी।। मैं और डॉक्टर साहब श्री माता जी के यहाँ से रात्रि 10 बजे आश्रम में आ पाए। उस समय आसपास में घने बादल छाए हुए थे तथा हल्की-हल्की बारिश हो रही थी। हम दोनों कमरे की ओर आ रहे थे, डॉक्टर साहब आगे-आगे चल रहे थे, घोर अंधकार था, कुछ भी दिखाई नहीं देता था। कमरे के दरवाजे पर पहुँचते ही डॉक्टर साहब बोले– आनन्द कुमार जी यहाँ पर कुछ है, मेरे पैर के नीचे कुछ पड़ गया है, डॉक्टर साहब पीछे की ओर लौट आए। मैं बोला– "डॉक्टर साहब, वहाँ पर सर्प होगा, पीछे की ओर आ जाओ। मैं पड़ोसी से टार्च माँग के लाता हूँ।" उसी समय डॉक्टर साहब बोले– "आ जाइए आनन्द कुमार जी, यहाँ पर आपकी कुतिया है"। मैंने आगे बढ़कर दरवाजा खोला, लाइट जलने पर मालूम हुआ कि कुतिया पूरी तरह से भीग चुकी है, वह ठन्ड से काँप रही है। मुझे उसकी हालत देखकर बहुत दुःख हुआ, मैं कुतिया को भर पेट खाना भी नहीं दे सकता था, सिर्फ थोड़े से भोजन के लिए यह बारिश में बैठी हुई भीग रही थी, जाने कब से मेरा इन्तजार कर रही होगी। मैं यह बता दूँ– यह पालतू कुतिया थी, मगर इसका मालिक शायद खाना नहीं देता था अथवा पेट भर के खाना नहीं खिलाता था। वह मजदूरी का काम करता था तथा आश्रम से थोड़ी दूरी पर रहता था

आश्रम वापस आते समय श्री माता जी ने थोड़ा खाना मुझे दे दिया था। मैंने डॉक्टर साहब से पूछा– "कितनी रोटियाँ है"। डॉक्टर साहब बोले– "चार रोटियाँ हैं"। मैं बोला– एक रोटी कुतिया को निकाल दो, मैं खाना नहीं खाऊँगा। एक रोटी कुतिया को दे दी गयी, फिर तीन रोटियों में ही दोनों ने खाना खाया, क्योंकि डॉक्टर साहब ने मुझे खाने के लिए मजबूर किया था, फिर दोनों सो गए। सुबह मैं दुःखी सा था, मैं निश्चित किया कुतिया को इस शरीर से छुड़ा दूँगा, क्योंकि कुतिया की हालत रोज-रोज देखी नहीं जाती थी। उसी समय कुतिया भी वहीं पर आ गई, मैंने कुतिया को पकड़ कर भूमि पर लिटा दिया। मैंने कुतिया के सिर के ऊपर स्पर्श करके ओंकार किया, फिर उस पर वाचा सिद्धि का प्रयोग किया और कहा– "इस कुतिया को शीघ्र ही इस शरीर से छुटकारा मिल जाये"। आज शुक्रवार का दिन था हम दोनों श्री

माता जी के पास चले गए, डॉक्टर साहब को वापस पूना भी जाना था वह श्री माता जी के पास ठहर गये। मैं रात्रि के समय मिरज से अकेला आश्रम वापस आ गया। मैंने इधर-उधर कुतिया देखी मगर कुतिया कहीं भी दिखाई नहीं दी। मैंने जोर-जोर से कुतिया को बुलाना शुरू कर दिया, मगर कुतिया नहीं आयी। फिर पड़ोसी ने आकर बताया– आनन्द कुमार आपकी कुतिया ट्रक के नीचे आ गई है और वह मर गई है। मैं मन में बहुत खुश हुआ, चलो इस शरीर से उसे मुक्ति तो मिली। फिर मैंने संकल्प किया– "कुतिया का मालिक भी यहाँ से चला जाएँ"। फिर 10-15 दिन बाद मुझे बताया गया, कुतिया का मालिक वापस कर्नाटक चला गया है। उसका लड़का बीमार था और उसके पास रुपये नहीं थे।

अर्थ- साधकों! मैंने वाचा-सिद्धि से और भी कार्य लिए है। मगर मैं उन कार्यो के विषय में लिख नहीं रहा हूँ,क्योंकि लिखना आवश्यक नहीं समझता हूँ। वाचा-सिद्धि से अच्छे कार्य किये जा सकते है और अधर्म से युक्त भी कार्य किये आ सकते है इसलिये यह सिद्धि अच्छी भी होती है और बुरी भी होती है। यह साधक के ऊपर है वह इस सिद्धि से कैसा कार्य लेना चाहता है। वाचा सिद्धि के समय साधक को बहुत सम्भल कर बोलना होता है। इस सिद्धि के द्वारा मैंने बहुत से साधकों का मार्गदर्शन का कार्य किया है।

साधकों! अगर योग में साधक की उच्चतम स्थिति है तो ध्यान के माध्यम से आप पेड़ों से सूक्ष्म संदेश ग्रहण कर सकते हैं तथा अन्य कई प्रकार की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। ऐसे प्रयोग मैंने ढेरों बार किए हैं। पेड़ों में भी कई प्रकार की जातियाँ होती हैं, कुछ पेड़ों में शुद्धता ज्यादा होती हैं कुछ पेड़ों में शुद्धता कम होती है। यों तो सभी पेड़ों में जड़तत्त्व की प्रधानता होती है, फिर भी कुछ पेड़ अच्छे होते हैं। अच्छे पेड़ों में फलदार वृक्षों की संख्या अधिक है। यदि आप पेड़ों से दूसरों के विषय में जानकारियाँ प्राप्त करना चाहें तो कर सकते हैं। पेड़ों में भी तो चेतन तत्त्व होता है, इसी चेतन तत्त्व के कारण सारे कार्य सम्पन्न होते हैं। पेड़ों पर प्रयोग कैसे करते हैं, इसका उल्लेख मैं नहीं कर रहा हूँ क्योंकि इस कार्य को करने के लिए साधक की उच्चतम अवस्था होनी अति आवश्यक है।

सन् 1993

संकल्प करो आत्मा साक्षात्कार हो

श्री माता जी जनवरी के प्रथम सप्ताह में कुछ साधिकाओं के साथ आश्रम में आयीं थी। फिर वह दो तीन दिनों तक आश्रम में रुकी थी। उस समय हम सभी साधक श्री माता जी के सामने ध्यान पर बैठ हुए थे। फिर 8 जनवरी की रात्रि को श्रीमाता जी ने मुझे समझाया– "आनन्द कुमार आप बैठते ही ध्यान करना शुरू कर देते हैं, आपका ध्यान भी लग जाता है, आप कुछ संकल्प आदि नहीं करते हैं। आपको संकल्प करना चाहिए, बिना संकल्प के आपको क्या प्राप्त होगा, कुछ लक्ष्य तो होना चाहिए। मेरी समझ में नहीं आया– क्या संकल्प होना चाहिए, क्या लक्ष्य होना चाहिए। मैंने श्री माता जी से पूछा– "मुझे क्या संकल्प करना चाहिए?" श्री माता जी बोलीं– "आपको संकल्प करना चाहिए, मुझे ज्ञान की प्राप्ति हो, तभी मालूम होगा इस जगत का निर्माण क्यों हुआ, हम कहाँ से आए हैं, क्यों आए हैं। आप को यह भी संकल्प करना चाहिए, मुझे आत्मसाक्षात्कार हो। यही आपका लक्ष्य होना चाहिए, फिर मन में व्यापकता और आएगी। अब आपके अन्दर ज्ञान प्राप्त की इच्छा प्रबल होनी चाहिए, ताकि आपको ज्ञान प्राप्त हो सके।

महापुरुष

ध्यानावस्था में अनुभव आया– मैं चबूतरे जैसी आकार वाली जगह पर बैठा हुआ हूँ, मेरे समाने एक पात्र में कुछ रखा हुआ है। उस पात्र में क्या रखा हुआ है, मैं नहीं बता सकता हूँ। पात्र में कुछ है ऐसा भासित हो रहा है, मगर क्या है यह मुझे मालूम नहीं है। इतने में मेरे पास एक महापुरुष आते हुए दिखाई दिये, जब वह मेरे पास आ गए तो मैंने देखा– उनका कद लम्बा है, लगभग साढ़े छह फीट रहा होगा। सिर पर बड़े-बड़े बाल थे तथा दाढ़ी के बाल भी लम्बे-लम्बे थे, सिर और दाढ़ी के बाल खिचड़ी थे। यह महापुरुष तेजस्वी दिखाई दे रहे थे, इससे स्पष्ट होता था, कि ये उच्चकोटि के योगी है। जब महापुरुष मेरे पास आए तो बोले– "वह देखो आपका पात्र ले गई"। मैं उनका यह वाक्य सुनकर अचम्भित हुआ और सोचा कि कौन मेरा पात्र ले गयी! इतने में मैंने देखा जो पात्र मैं अपने गुरु के पास ले जाने वाला था, वह पात्र एक स्त्री लेकर चली गई। इतने में मैंने उस स्त्री का शीघ्रता से पीछा किया, वह स्त्री थोड़ा सा ही आगे

जा पाई थी, फिर वह एक जगह बैठ गई, वह स्त्री अपने हाथ में उस पात्र को लिये हुए थी। मैं उसके सामने खड़ा हो गया, फिर मैं बोला– "यह पात्र मेरा है"। मगर वह स्त्री कुछ नहीं बोली सिर्फ मुस्कराई, उस स्त्री ने पात्र के अन्दर भरा हुआ पदार्थ पी लिया। मुझे लगा– यह मैं अपने गुरु के लिए ले जा रहा था, यह तो इसने पी लिया। फिर मैं बोला– "जो आपने पी लिया है उसे पात्र समेत वापस करो"। वह स्त्री कुछ नहीं बोली सिर्फ मुस्करा दी, अब मैं उस स्त्री को गौरपूर्वक देखने लगा– वह अत्यन्त सुन्दर थी, उसके शरीर से तेज आभा निकल रही थी तथा वह स्वयं प्रकाश में बैठी हुई थी। मैं भी प्रकाश में उसी के सामने खड़ा हुआ था। मैं फिर उससे बोला– "मुझे वह पात्र व उसका पदार्थ चाहिए"। इतने में अन्तरिक्ष से आवाज आई– "उसके बदले में तुम्हें शीघ्र ही दूसरा मिल जाएँगा"। मगर अब भी वह स्त्री हमारी ओर मुस्करा रही थी। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! यह स्त्री कुण्डलिनी शक्ति थी जो उस पात्र को लेकर चली गयी थी, मगर पात्र में क्या भरा हुआ था मैं नहीं समझ सका। उसमें सात्विक शक्ति थी, वह स्वयम् कुण्डलिनी शक्ति ने पी लिया। वह अब मुझे भविष्य में मिल जायेगा। इस अनुभव में वह महापुरुष मेरे दो जन्म पूर्व के पिता श्री थे।

दो जन्म पूर्व का दृश्य

अभी मैंने पिछले अनुभव में मैंने जिस महापुरुष का वर्णन किया है, उन्हीं महापुरुष के इस अनुभव में मुझे दर्शन हो गये। बिलकुल पहले वाला वही ऊँचा कद, सुडौल शरीर, वही सिर पर सफेद-काले बाल व दाढ़ी थी। एक पेड़ के नीचे चबूतरानुमा जगह थी, उसी चबूतरेनुमा जगह पर आसन बिछाकर बैठे हुए थे। उनके हाथों में संस्कृत की एक मोटी पुस्तक थी। उनके सामने चबूतरे के नीचे एक युवक भी बैठा हुआ था, युवक की उम्र 20-22 वर्ष के लगभग रही होगी। उसका कद भी उन्हीं (महापुरुष) के समान ऊँचा था, सुडौल व गठीला शरीर था। उस युवक का रंग गोरा था, उसने सिर्फ सफेद धोती पहन रखी थी, चेहरे पर हल्की सी दाढ़ी भी आ गई थी। युवक बहुत सुन्दर व आकर्षक था, यह युवक भी एक पुस्तक हाथों में लिए हुए था। वह महापुरुष उस युवक को संस्कृत भाषा में कुछ पढ़ा रहे थे, ऐसा लगता था युवक को वेदों के मंत्रों का उच्चारण करना सिखा रहे थे, वह युवक भी मंत्रों का उच्चारण शीघ्रता से करता जा रहा था।

अर्थ- साधकों! यह दृश्य मेरे दो जन्म पूर्व का था। वह नवयुवक मैं ही था, जो महापुरुष मुझे पढ़ा रहे थे वह मेरे पिताश्री थे, वही मेरे उस जन्म में गुरुदेव भी थे, मेरे पिताश्री महान योगी थे। वर्तमान समय में वह तपलोक में उच्चस्तर में समाधि में लीन रहते हैं। हमारी पिता श्री से एक बार बात हुई थी, यह बात काफी लम्बी हुई थी। यह बात दिसम्बर सन् 1995 की है। साधकों, अपने पिछले कई जन्मों के विषय में जानता हूँ जिसका वर्णन मैं थोड़ा सा मैं आगे करूँगा।

कुण्डलिनी शक्ति

यह अनुभव 18 जनवरी का है। मैंने देखा– छह सीढ़ीनुमा छोटे-छोटे जलाशय हैं, जैसे पहाड़ों पर क्रमशः ऊपर की ओर सीढ़ियाँ बनी होती है। इन जलाशयों को थोड़ा दूर से तथा अन्तरिक्ष में खड़े होकर देखा जाएँ तो ऐसा दिखाई देता था जैसे सीढ़ियों की क्रमशः एक से दूसरे की ऊँचाई ज्यादा होती जाती है। इसी प्रकार जलाशय बने हुए है, एक जलाशय से दूसरा जलाशय आगे की ओर थोड़ा सा ऊपर विद्यमान है। मैंने गिनकर देखा वह छोटे-छोटे छह(6) जलाशय बने हुए हैं, छठवें जलाशय के ऊपर से बिलकुल स्वच्छ पारदर्शी पानी प्रकट हो रहा है और तीव्र धारा के रूप में छठवें जलाशय में आ जाता है, छठवें जलाशय के दूसरे ओर से पानी निकलकर पाँचवें जलाशय में आ जाता है। फिर पाँचवें जलाशय का पानी दूसरे ओर से निकलकर चौथे जलाशय में आ जाता था। इसी प्रकार सबसे नीचे पहले वाले जलाशय में पानी आता है। सबसे नीचे पहले वाले जलाशय का पानी अपने आप अदृश्य हो जाता है, उसमें पानी की मात्रा बढ़ती नहीं है बल्कि पहले जैसे बनी रहती है। इस प्रकार छठवें जलाशय के ऊपर से पानी प्रकट होकर नीचे की ओर पहले जलाशय तक आता है फिर उसी में विलीन होता रहता है।

जिस जगह से पानी प्रकट हो रहा है वहाँ पर स्रोत दिखाई नहीं दे रहा है बल्कि अन्तरिक्ष से अपने आप पानी प्रकट हो रहा है। जहाँ से पानी प्रकट हो रहा है, मैं वहीं पर खड़ा हुआ इन जलाशयों को देख रहा हूँ, उसी समय पानी के अन्दर एक सर्प दिखाई दे रहा था, वह साधारण सर्पों की तरह नहीं है। उसका शरीर सुर्ख लाल तपे हुए सोने की भाँति है, ऐसा लग रहा है वह अग्नि से बना हुआ है। उस सर्प का शरीर बहुत लम्बा है, उसकी पूँछ निचले प्रथम जलाशय में है, और उसका मुँह छठवें जलाशय से ऊपर है, सर्प का शरीर सभी जलाशयों से होता हुआ ऊपर तक विद्यमान है। सर्प जोर लगाकर पानी के उद्गम तक जाता है और फिर फिसल कर थोड़ा सा नीचे की ओर आ जाता है, उसी समय मेरे मुँह से आवाज आयी– यह

सर्प साधारण सर्पों की तरह नहीं है यह कुण्डलिनी शक्ति है, कुण्डलिनी शक्ति बहुत साधना करने के बाद जाग्रत होती है। कुछ क्षणों में पानी अपने आप स्थिर हो गया, सर्प पानी के उद्गम के पास आया और पानी के ऊपरी सतह के ऊपर कुण्डली मार कर बैठ गया। उसका मुँह (फन) ऊपर की ओर उठा हुआ था, मैं उसे देख रहा था, वह मुझे देख रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस प्रकार का अनुभव मैंने पहली बार देखा है कुण्डलिनी का स्वरूप सुर्ख लाल तपे हुए सोने के समान है तथा पानी के ऊपर कुण्डली मारे बैठी हुई मुझे देख रही थी। महत्वपूर्ण बात यह है– वह छठवें जलाशय से ऊपर उद्गम क्षेत्र में कुण्डली मारे बैठी थी पानी अपने आप जहाँ का तहाँ रुक गया था। जब मैंने यह अनुभव श्री माताजी को सुनाया तब उन्होंने जो अर्थ मुझे बताया, उससे मैं संतुष्ट नहीं हुआ। उनके द्वारा निकाला गया अर्थ मेरे योगाभ्यास से मेल नहीं करता था, क्योंकि मैं अपनी स्थिति अच्छी तरह जाता था। ये छह जलाशय जो सीढ़ीनुमा दिखाई दे रहे है, वह मेरे सूक्ष्म शरीर के छै (6) चक्र है। उसके ऊपर पानी का उद्गम क्षेत्र मेरे शरीर में स्थित ब्रह्मरन्ध्र है। कुण्डलिनी शक्ति सबसे ऊपर उद्गम क्षेत्र में कुण्डलिनी मारकर स्थिर हो गई– कुण्डलिनी ब्रह्मरन्ध्र के अन्दर नहीं जाती है, बल्कि ब्रह्मरन्ध्र द्वार को खोलकर ध्यानावस्था में सीधी खड़ी रहती है, फिर साधक की साधना के अनुसार कुछ दिनों बाद अथवा ज्यादा दिनों में कुण्डलिनी ब्रह्मरन्ध्र द्वार होते हुए आज्ञा चक्र पर आती है। फिर आज्ञा चक्र से सीधे-नीचे की ओर अपना मार्ग बनाते समय तालू को कटते हुए हृदय में आ जाती है, फिर हृदय में स्थित कर्मों को अभ्यासानुसार जलाने लगती है,तथा हृदय में स्थित वायु को सोखने लगती है। इस अवस्था में कुण्डलिनी का आकार बहुत ही लम्बा हो जाता है। मूलाधार से लेकर ब्रह्मरन्ध्र तक, फिर ब्रह्मरन्ध्र से आज्ञा चक्र होते हुए तालू को काटते सीधे हृदय में प्रवेश कर जाती है। कुण्डलिनी की लम्बाई सम्भवतः इतनी हो जाती है, साधक के भौतिक शरीर की लम्बाई के बराबर से, थोड़ी सी कम लम्बाई रह जाती है। ध्यान समाप्त होने पर कुण्डलिनी हृदय से वापस फिर मूलाधार चक्र में चली जाती है, और मूलाधार चक्र में स्थित शिवलिंग पर लिपट जाती है। जब कुण्डलिनी समाधि के अभ्यास द्वारा स्थिर हो जाती है तब वापस मूलाधार में वापस नहीं आती है, बल्कि वह अपने अग्नि तत्त्व वाले स्वरुप को त्याग कर वायु तत्त्व में विलीन होकर सारे शरीर में व्याप्त हो जाती है। इसे कुण्डलिनी की पूर्ण यात्रा अथवा कुण्डलिनी का स्थिर होना कहते हैं। क्योंकि साधक ने अग्नि तत्त्व से सम्बन्धित सूक्ष्म शरीर का विकास कर लिया है, अब उसे वायु तत्त्व से सम्बन्धित अपना सूक्ष्म शरीर का विकास करना है।

साधकों! इस अनुभव में कुण्डलिनी स्थिर होने का दृश्य देखा था। हमारी कुण्डलिनी बहुत ही शीघ्र स्थिर हो गई थी, ऐसा मेरे पिछले जन्मों का कठोर अभ्यास तथा वर्तमान जन्म का त्याग और कठोर अभ्यास के कारण हुआ है। मैं जानता हूँ ब्रह्मरन्ध्र खुलने के बाद कुण्डलिनी स्थिर होने में साधक को अभ्यास करते हुए कई वर्ष बीत जाते है, तब कुण्डलिनी स्थिर हो पाती है। किसी-किसी साधक को सम्पूर्ण जीवन ही बीत जाता है मगर कुण्डलिनी स्थिर नहीं हो पाती है। स्वयं श्री माता जी को ब्रह्मरन्ध्र खुलने के बाद कुण्डलिनी स्थिर करने के लिये कई वर्षों तक अभ्यास करने के बाद ही सम्भव हुआ था, ऐसा मैंने दिव्य दृष्टि के द्वारा देखा था।

जिन साधकों की कुण्डलिनी अत्यन्त उग्र होती है, उनकी कुण्डलिनी स्थिर शीघ्र ही हो जाती है। मध्यम श्रेणी की कुण्डलिनी वाले साधकों को कुण्डलिनी स्थिर होने में कई वर्ष लग जाते है। शान्त स्वभाव वाली कुण्डलिनी के साधकों को कुण्डलिनी ऊर्ध्व होने के बाद स्थिर करने के लिए निश्चित ही कई वर्ष लग जाते हैं। कभी-कभी एक जन्म में स्थिर नहीं होती है। मैं ऐसे कुछ साधकों को जानता हूँ जिनकी कुण्डलिनी ऊर्ध्व हुए 20 वर्ष बीत गए मगर कण्ठचक्र नहीं खोल पाये हैं, ऐसे साधकों की कुण्डलिनी की पूर्ण यात्रा होकर स्थिर कब होगी, यह मुझे मालूम नहीं है। एक– ऐसे साधक साधना कम करते है इसलिए इतना समय लग जाता है, इसलिए किसी के विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता है, कि कुण्डलिनी कब स्थिर होगी। दो– यदि साधक के पिछले जन्म देखे जाएँ तथा वर्तमान साधना के अनुसार अनुमान लगाया जाएँ तो कुछ बताया जा सकता है।

ईश्वर

यह अनुभव 27 जनवरी को आया। ध्यानावस्था में यह जानकारी अपने आप दी गयी। *मूर्ति पूजा से चित्त में शुद्धि होती है इससे मन एकाग्र करने में सहयता मिलती है। क्या ईश्वर सिर्फ मूर्ति के अन्दर बैठा हुआ है? ईश्वर तो सर्वत्र व्याप्त है सभी प्राणियों में तथा सम्पूर्ण जड़ पदार्थ में भी व्याप्त है। ईश्वर ब्रह्म का सगुण स्वरूप होता है, जिस तरह से ब्रह्म के अन्दर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड व्याप्त है, उसी तरह से ईश्वर के अन्दर भी ब्रह्माण्ड व्याप्त होता है। ईश्वर का शरीर परा-प्रकृति के द्वारा बना हुआ होता है फिर भी वह प्रकृति से परे होता है, क्योंकि परा-प्रकृति चाहे जितनी स्फूर्ति वान हो, फिर भी वह जड़ ही है, ईश्वर के शरीर को महाकारण शरीर कहते है, तत्त्वज्ञानी योगी भी स्थूल शरीर त्यागने के बाद महाकारण जगत में (परा-*

प्रकृति) स्थित हो जाता है। योगी चाहे जितनी साधना कर ले मगर वह कभी ईश्वर नहीं बन सकता है, क्योंकि ईश्वर अजन्मा है। प्रकृति का प्रभाव ईश्वर पर नहीं पड़ता है इसलिए ईश्वर ही सर्व श्रेष्ठ है, वह सर्वत्र है, और व्यापक है। ईश्वर की त्रिगुणात्मक प्रकृति साम्यावस्था में रहती है, इसलिए ईश्वर की व्यापकता असीमित है। यदि हम सिर्फ मूर्ति में ही ईश्वर को देखेंगें तो समझना चाहिए मेरे विचार संकुचित हैं। मूर्ति को तो शिल्पकार ने पत्थर से बनाया होता है, यदि हम ईश्वर को मूर्ति में देखते हैं तो क्यों न हम ईश्वर को पहाड़ो में, नदियों में, पेड़-पौधों में, पशु-पक्षियों में तथा मनुष्यों में देखें तो अच्छा है। सत्य तो यही है ईश्वर अतिसूक्ष्म होने के कारण कण-कण में व्याप्त रहता है। ईश्वर को हर रूप में सर्वत्र देखो। यहाँ पर मुझे ईश्वर के विषय में समझाया गया है कि वह सर्वव्यापक है। मगर मैं किसी भी साधक को शुरुआती अवस्था में अवश्य ही मूर्ति पूजा के लिए कहूँगा। ये भक्ति मार्ग में आता है, इस मार्ग के साधकों का अंतःकरण निर्मल होता है, तथा उसके स्वभाव में सरलता आती है। हमारे शास्त्रों में मूर्ति पूजा के लिए बताया गया है।

गुरु

यह अनुभव भी ऊपर लिखे अनुभव के बाद आया। *गुरु एक ऐसा सुपात्र होता है जो प्रकृति के नियमों को जानकर, प्रकृति के नियमों के अन्दर रहकर, अपने शिष्य का मार्ग दर्शन करता है। ऐसा समझो ईश्वर आपके सामने प्रत्यक्ष तो आएगा नहीं आयेगा, वह गुरु को ही माध्यम बनाता है और अपने सारे कार्य अदृश्य रूप से, इसी गुरु रूपी माध्यम से करवाता रहता है, इसलिए कुछ योगियों व कवियों ने गुरु को ईश्वर से श्रेष्ठ है की उपाधि दे दी है, जबकि ईश्वर ही श्रेष्ठ होता है। गुरु अपने कर्मों के द्वारा प्रकृति के बंधनों में बँधा हुआ है, मगर गुरु के द्वारा मार्ग दर्शन दिए जाने के कारण शिष्य का सम्पर्क ईश्वर तक हो जाता है अथवा मोक्ष तक पहुँच जाता है, इसलिए गुरु श्रेष्ठ कहा गया है। मनुष्य का कर्म जब ईश्वर की ओर जाने के लिए प्रेरित करता है, तब मनुष्य के कर्मानुसार गुरु की प्राप्ति होती है। वही गुरु दीक्षा देकर अपनी चैतन्यमय शक्ति शिष्य के शरीर में प्रवेश करा देता है। वही चैतन्यमय शक्ति शिष्य के शरीर में व्याप्त होकर मार्गदर्शन का काम करती है। अज्ञानरुपी अंधकार को दूर कर ज्ञानरुपी प्रकाश में साधक गमन करता है, इसमें शिष्य का कर्म व गुरु द्वारा मार्गदर्शन मुख्य भूमिका निभाते हैं।*

संसार नष्ट हुए के समान हुआ

यह अनुभव 28 जनवरी को सुबह आया, ध्यानावस्थामें देखा– मैं एकान्त जगह पर खड़ा हुआ हूँ, वह जगह प्रकाशमान है, उसी समय मैंने देखा मुझसे थोड़ी दूरी पर नीचे की ओर छोटी सी, मगर गन्दी नदी बह रही है, एक पुरुष नदी को पार करता हुआ उस पार चला जा रहा है। मैंने सोचा यह पुरुष उस पार कहाँ जा रहा है? उधर तो प्रकाश ही प्रकाश है। मेरे मन में भी आया चलो नदी को देखा जाएँ यह कैसी है? यह सोचकर मैं चल दिया। मैं नदी के पास पहुँचा और किनारे खड़ा हो गया, जैसे ही मैंने नदी में प्रवेश करना चाहा तभी नदी सूख गई। नदी का पानी अपने आप अदृश्य हो गया, जहाँ पर नदी में पानी भरा हुआ था उस जगह पर रेत चाँदी के समान चमकने लगा, मैं उसी रेत के ऊपर चलने लगा। उस समय मुझे लग रहा था कि यहाँ पर कभी पानी भरा रहा होगा। मैंने सोचा– नदी में प्रवेश करते ही इसका पानी सूख क्यों गया, मैंने निश्चित किया इस नदी के उद्गम (स्रोत) स्थान पर जाऊँगा। संकल्प करते ही उद्गम के स्थान पर पहुँच गया, तब उद्गम से पानी निकलना बन्द हो चुका था, उस स्थान की भूमि ढह चुकी थी। फिर मुझे आश्चर्य हुआ यह उद्गम क्यों सूख गया। मैं आगे की ओर चल दिया, आगे चलने पर ऊँची-ऊँची चढ़ाइयाँ दिखाई देने लगीं। मैं उन चढ़ाइयों को बड़े आराम से चढ़कर आगे की ओर चला जा रहा था। जैसे-जैसे चढ़ाइयाँ रास्ते में मिलती जा रही थी, मैं तीव्र गति से चलता हुआ और चढ़ाई पर चढ़कर पार करता हुआ आगे की ओर चला जा रहा था। ऐसी कई चढ़ाइयाँ मेरे सामने आईं, मैं बिना रुके पार करता हुआ चला जाता था। अब मैं जिस चढ़ाई को चढ़ रहा था, उसी समय वहीं पर मुझे एक स्त्री दिखाई दी, वह स्त्री भी मेरे साथ चलने लगी, ऐसा स्पष्ट दिखाई दे रहा था। उस समय वह स्त्री जोर से हँसते हुए कहकहा लगा रही थी, इससे स्पष्ट हो रहा था उसे मेरी सफलता पर खुशी हो रही है। अनुभव समाप्त हो गया।

कुछ क्षणों बाद मुझे एक अनुभव और आया, मैं अपने घर पहुँच गया हूँ, उस समय घर में मेरे पिताजी व माताजी हैं। मैं उनके सामने निर्वस्त्र खड़ा हूँ, निर्वस्त्र देखकर पिताजी एकदम चौंक पड़े। उनको हमारी निर्वस्त्रता अच्छी नहीं लगी, जबकि मेरी माँ को किसी प्रकार की प्रतिक्रिया नहीं हुई। मैंने पिताजी से कहा– मैं आपका पुत्र आनन्द कुमार हूँ, आप मुझे इस अवस्था में देखकर अचम्भित क्यों हो गए? मगर वह उत्तर में कुछ नहीं बोले। मैं विकारों से रहित होकर उनके सामने खड़ा हुआ था।

अर्थ- नदी– यही स्थूल जगत है। पानी सूख जाने का अर्थ है– स्थूल जगत मेरे लिये नष्ट हुए के समान हो गया। स्थूल जगत का मुझ पर किसी प्रकार का प्रभाव नहीं होगा। मेरी आसक्ति स्थूल जगत में

नहीं है, इसलिए ऐसा दिखाई दे रहा है, मेरा सम्बन्ध कारण जगत से है। उद्गम का सूख जाना, योग के अभ्यास कारण मेरी उच्च स्थिति को दर्शा रहा है। यह दृश्य एक तरह से मोक्ष को दर्शाता रहा है। मैं चढ़ाई चढ़ता जा रहा हूँ– अभ्यास के मार्ग में आने वाले सभी प्रकार के अवरोधों को पार करता जा रहा हूँ। मेरे साथ-साथ चलने वाली स्त्री हँस रही है– वह स्त्री कुण्डलिनी शक्ति है। दूसरे अनुभव में मैं अपने पिताजी व माताजी के सामने निर्वस्त्र खड़ा हूँ, इसका अर्थ है– मेरे अन्दर के विकार समाप्त हो गए है। यह अवस्था मुझे भविष्य में प्राप्त होगी।

सप्त ऋषियों से मिलना

ध्यानावस्था में मैंने देखा– मैं आसमान को छूती हुई हिमशिखरों की ऊँचाइयों पर चढ़ता चला जा रहा हूँ। वहाँ सिर्फ सफेद उज्ज्वल बर्फ ही बर्फ के सिवाय और कुछ नहीं दिखाई दे रहा है। वहाँ पर वायु के प्रभाव की अनुभूति भी नहीं हो रही है। बहुत से हिमशिखरों को चढ़कर पार करने के बाद, मैं सबसे ऊँची चोटी पर खड़ा हो गया। वह बर्फीली चोटी आसमान को छू रही थी, चारों ओर देखने पर नीचे की ओर बर्फीली चोटियाँ दिखाई दे रही थीं। ऐसा लगता था मैं आसमान में खड़ा हूँ। वहीं सर्वोच्च शिखर पर थोड़ी सी समतल भूमि थी, उसी स्थान पर मुझे कुछ महापुरुष दिखाई दिए, उनके शरीर अत्यन्त पारदर्शी थे। मैंने उन सभी महापुरुषों को नमस्कार किया. मगर वह उत्तर में कुछ नहीं बोले, सिर्फ आशीर्वाद मुद्रा में ऊपर की ओर हाथ उठाया। फिर कुछ क्षणों तक खड़े रहने के बाद सभी महापुरुष और मैं गोलाकार रूप में बैठ गए, मैंने देखा– मेरे पास एक तरुण स्त्री भी बैठी हुई है, उन महापुरुषों की संख्या सात थी। उन महापुरुषों के साथ एक स्त्री भी थी, वह स्त्री महान तपस्वी दिखाई दे रही थी। उन सभी महापुरुषों के कद वर्तमान मनुष्यों से बहुत ऊँचे, विशाल शरीर, सिर व दाढ़ी के बाल सफेद थे। दाढ़ी नाभि तक बढ़ी हुई थी, सिर में बालों का जूड़ा लगा हुआ था, उन सभी तपस्वियों के शरीर पर पारदर्शी वस्त्र थे। उनका सम्पूर्ण शरीर तेजस्वी दिखाई दे रहा था, ऐसा लग रहा था– बहुत साधना या तपस्या के कारण उनका शरीर तेजोमयी हो चुका है। जो महापुरुष मेरे सामने बैठे हुए थे उन्हें देखकर मेरे अन्दर विचार आया– यह तो वशिष्ठ जी हैं। उसी समय अन्तरिक्ष से आवाज आई– *"योगी, तुम्हारा सोचना सही है। यह ब्रह्मा जी के मानस पुत्र वशिष्ठ हैं तथा उनके साथ उनकी पत्नी अरुंधती है। अब तुम समझ गए होगे ये महापुरुष कौन हैं?"* फिर मैं सभी महापुरुषों को गौरपूर्वक देखने लगा, सभी महापुरुष लगभग एक समान ही दिखाई दे रहे थे। वहीं पर सभी

महापुरुष ध्यान मुद्रा में बैठ गये थे, जो मेरे पास स्त्री बैठी हुई थी मैंने उस स्त्री से कहा– "आप भी ध्यान पर बैठिए, इस जगह पर बिलकुल शान्ति है। साधना ही मेरा मुख्य लक्ष्य है। ऐसा लगता है मैं इसी जगह पर साधना करता रहूँ"। फिर हम सभी ध्यान पर बैठ गए, उस समय वह महापुरुष कुछ भी नहीं बोले थे, सभी बिलकुल शान्त थे।

अर्थ- साधकों! ये महापुरुष सप्तऋषि थे। उनका शरीर अत्यन्त पारदर्शी था इसलिए मैं उनके विषय में ज्यादा नहीं लिख सकता हूँ। जो तरुण स्त्री मेरे पास बैठी हुई थी वह कुण्डलिनी शक्ति थी। अतिसूक्ष्म जगत का दृश्य था। इस अनुभव में सप्त ऋषियों के पास चला गया था।

धर्म

यह अनुभव आज 28 जनवरी की शाम को ध्यानावस्था में आया, अन्तरिक्ष से आवाज सुनाई दी– *"धर्म क्या है?"* उत्तर में मैं चुप रहा। मैं क्या बोलता, क्योंकि मैं धर्म की परिभाषा नहीं जानता था। कुछ समय बाद मेरे अन्दर आवाज आई– *"धर्म सभी को मानवता का ज्ञान करता है। सभी धर्म एक समान हैं, सभी धर्मों का निचोड़ तत्त्व रुप से एक ही है। सभी धर्मों की शिक्षाएँ एक जैसी ही हैं, इन धर्मों के अनुयाइयों को देखने पर और उनके अनुसरण करने के तरीके में एक जैसा प्रतीत नहीं होता है। सभी धर्मों में अहिंसा, परोपकार व प्रेम के लिए बताया गया है। सबसे पुराना धर्म सनातन धर्म है"*।

शत्रु

यह अनुभव 28 जनवरी को सुबह आया। ध्यान में अन्तरिक्ष से आवाज सुनाई दी– *"आपका सबसे बड़ा शत्रु कौन है?"* मैं बोला– "मेरी इंद्रियाँ ही मेरी सबसे बड़ी शत्रु है"। हर मनुष्य की इन्द्रियाँ उसके पतन का कारण बनती हैं। यदि इन्हीं इन्द्रियाँओं को अन्तर्मुखी कर दिया जाए तो मनुष्य का उत्थान होना निश्चित है।

29 जनवरी की शाम को ध्यानावस्था में जानकारी मिली– *"ब्रह्माण्ड की संरचना स्वमेव हुई है। संरचना से पूर्व नाद प्रकट हुआ है, नाद के साथ ब्रह्माण्ड की संरचना हुई।" "तुम अधिकारी बनो।" "तुम यह जान चुके हो यह संसार भ्रम मात्र है, तुम्हारी मंजिल बहुत आगे है, निरन्तर ध्यान करते रहो।"*

योगबल व कर्म

यह अनुभव 30 जनवरी को सुबह आया– मैं एक कमरे में चुपचाप शान्त बैठा हुआ हूँ, कमरे की एक खिड़की खुली हुई है, मैं उसी से बाहर का दृश्य देख रहा हूँ। मुझे एक हाथी जाता हुआ दिखाई दिया, वह बड़े आराम से चला जा रहा है। मैंने सोचा जब हाथी निकल जाए तब मैं बाहर को निकलूँगा, क्योंकि हाथी से मुझे डर लग रहा था। तभी हाथी पलट कर हमारी ओर आने लगा, कमरे के पास आकर उसी खिड़की से अन्दर की ओर हमारी तरफ देखने लगा। मैं कमरे के अन्दर बैठा हुआ डर रहा था, मैं सोचने लगा– कि हाथी ने मुझे देख लिया है, उसी समय हाथी ने खिड़की तोड़ दी और उसने अपनी सूँड को कमरे के अन्दर हमारी ओर को करने लगा। मैं हाथी को देखकर कमरे से निकल कर भागने लगा। जबकि हाथी की बड़ी-बड़ी आँखें बिलकुल शान्त थीं, उसकी आँखों में किसी प्रकार की दुष्टता या क्रोध दिखाई नहीं दे रहा था। इस हाथी का शरीर, सामान्य हाथी के शरीर से बहुत ज्यादा बड़ा था। मैं सीढ़ियों द्वारा चढ़ता हुआ कमरे की छत पर चला गया, मैंने देखा– वह हाथी छत पर भी बड़े आराम से चला आ रहा था। मैंने सोचा– इतना विशालकाय हाथी कमरे की छत पर कैसे आ गया, यह तो मेरा पीछा नहीं छोड़ रहा है, मैं छत से कूदकर भागने लगा। मैं हाथी को चकमा देने के लिये इधर-उधर को भाग रहा था। मगर उसे मैं चकमा नहीं दे सका, क्योंकि हाथी बड़े आराम से मेरे पीछे-पीछे चला आ रहा था। कुछ क्षणों बाद मैं एक स्थान पर बैठ गया, फिर हाथी दिखाई नहीं दिया। मैं शान्तिपूर्वक से बैठा हुआ था तभी अचानक देखा– मेरे हाथ की उँगली को बिल्ली अपने मुँह में दबा कर काट सी रही है, मुझे बिल्ली की इस क्रिया से बड़ी पीड़ा होने लगी। क्योंकि बिल्ली के नुकीले दाँत हमारी ऊँगलियों में सुई के समान चुभ रहे थे। मैंने अपना हाथ झटक कर बिल्ली को छुटाना चाहा, मगर बिल्ली नहीं छूटी। उसने मेरे हाथ को मजबूती से पकड़ रखा था। मेरी इस क्रिया से बिल्ली अत्यधिक क्रोधित हो गयी, फिर मैंने अपना हाथ ऊपर की ओर उठाकर जोर से बिल्ली को पटक दिया। मेरे द्वारा पटकने जाने से बिल्ली को बिलकुल परेशानी नहीं हुई, हमारा हाथ बिल्ली के मुँह से छूट गया, मगर बिल्ली ने फिर शीघ्रता से मेरा हाथ पकड़ लिया और हाथ

को अपने नुकीले दाँतों से काटने लगी, इससे मुझे बहुत पीड़ा हुई। अब मैं बिल्ली को उल्टा-सीधा करके पटकने लगा, मगर बिल्ली को किसी प्रकार की कोई परेशानी नहीं हो रही थी। बल्कि वह मुझसे अत्यधिक क्रोधित हो गई, मैं उसका कुछ नहीं बिगाड़ पाया। अब मैं उससे मानसिक रुप से परेशान सा हो गया, मैंने उसे बड़ी जोर से झटका मारा, फिर वह मेरे हाथों से छूट गई। मैं आगे के ओर को चल दिया, थोड़ा सा ही आगे की ओर चला था, तभी उसने मुझे बिल्ली ने आगे से घेर लिया और वह जोर-जोर से गुर्राने लगी। डर के कारण मेरा बुरा हाल हो रहा था। हमारा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! विशाल शरीर वाला हाथी मेरा योगबल है। मगर उस समय उसका अर्थ न समझ पाने के कारण मेरे अन्दर डर उत्पन्न हो गया, क्योंकि मैं उसे सिर्फ विशाल हाथी के रुप में देख रहा था। बिल्ली के रुप में मेरा शेष क्लेशात्मक कर्म है। ये क्लेशात्मक कर्म मुझे भोगने ही होगे, इन्हें भोगते समय मुझे घोर कष्टों से गुजरना होगा। इसीलिये मैं अनुभव में बिल्ली (कर्मों) को परास्त नहीं कर सका। अनुभव में दिखाई देने वाले हाथी के कई प्रकार के अर्थ होते है, इसलिये इसका अर्थ निकालते समय अभ्यासी को बुद्धि का प्रयोग करना चाहिये।

यह जानकारी मुझे 31 जनवरी को शाम के समय मिली– मनुष्य के सुख और दुःख के लिये ईश्वर जिम्मेदार नहीं होता है, बल्कि यह सब मन का खेल है, और इंद्रियों की उथल-पुथल है। स्वयं उसी के कर्मो के अनुसार सुख और दुख कि प्राप्ति पर होती है।

यह जानकारी मुझे 31 जनवरी को मिली। ध्यान पर बैठते समय मैंने संकल्प किया– “मेरी साधना पूर्ण कब होगी, अथवा मुझे पूर्णता कब प्राप्त होगी”। उसी समय अंतरिक्ष से आवाज आई– “तुम्हें पूर्णता शीघ्र प्राप्त होगी, निरन्तर साधना करो, मगर वास्तव में पूर्ण होना अत्यन्त दुर्लभ है”।

प्रवचन करना

यह अनुभव आज 2 फरवरी को आया। मैं किसी स्थान पर आसन के ऊपर बैठा हुआ हूँ, मेरे सामने दो व्यक्ति मेरी ओर मुँह किये हुए बैठे हैं, मुझसे थोड़ी दूरी पर कुछ व्यक्ति व स्त्रियाँ अर्धचंद्राकार में बैठी हुई हैं। इतने में दोनों व्यक्तियों ने कुछ शब्द कहे, उन व्यक्तियों के शब्द सुनकर मैं चौंक पड़ा तथा प्रसन्नता भी हुई कि सभी व्यक्ति सत्संगी हैं क्योंकि उन दोनों व्यक्तियों ने आध्यात्मिक बातें कहीं थीं। मैं

भी कुछ क्षणों में बोला– "साधना का स्तर बदलने के साथ-साथ मन का भी स्तर बदलता है"। मेरे शब्द सुनकर सभी उपस्थित व्यक्ति और स्त्रियाँ मेरी ओर देखने लगीं, मेरे पास बैठ हुए दोनों व्यक्ति सम्मानसूचक शब्दों में मुझसे बोले– "आप थोड़ा इधर बैठ जाइए"। सामने ओर बैठे दोनों व्यक्ति एक तरफ को हट गए, फिर उन्होंने मुझे सम्मानित जगह पर बिठा दिया, वहाँ पर उपस्थित सभी लोग टकटकी लगाए हुए मेरी ओर देख रहे थे। फिर एक व्यक्ति मुझसे बोला– "कृपया आप मुझे योग के विषय में बताइए"। कुछ क्षणों के पश्चात मैं उन सभी के सामने योग के विषय में बोलने लगा। उसी समय हमारा अनुभव समाप्त हो गया।

यह अनुभव 2 फरवरी का है, मैंने ध्यानावस्था में देखा– मैं अपने स्थूल शरीर से निकल कर थोड़ी दूरी पर खड़ा हूँ, मेरा स्थूल शरीर ध्यानमुद्रा में बैठा हुआ है। उसी समय देखा– मेरे स्थूल शरीर पर एक गिरगिट चढ़ा हुआ है वह शरीर पर ऊपर-नीचे चारों ओर घूम रहा है। वह क्षणभर रुककर चारों ओर देखता है फिर शरीर पर चारों ओर चक्कर लगाने लगता था, इस क्रिया को मैं स्पष्ट देखा रहा था। आसन पर बैठा हुआ मेरा शरीर स्पष्ट दिखाई दे रहा था, गिरगिट अपनी क्रिया बड़ी तीव्रता से कर रहा था। मैंने अपने स्थूल शरीर के पास एक स्त्री को खड़ा हुआ देखा, उस स्त्री ने अपना हाथ बढ़ाकर उस गिरगिट को पकड़ना चाहा। उसी समय मैंने उस स्त्री से कहा– "इसे मत पकड़ो यह स्वयं मुझे छोड़कर चला जाएँगा"। वह स्त्री रुक गई, मेरे देखते ही गिरगिट अदृश्य हो गया।

कुछ समय बाद मेरे स्थूल शरीर के पास तीन स्त्रियाँ प्रकट होकर वहीं पर खड़ी हो गयी, यह स्त्रियाँ एक साथ प्रकट हुई थी, उन तीनों कि वेशभूषा अलग-अलग थी। मैं तुरन्त जान गया कि ये तीनों स्त्रियाँ देवियाँ है यह स्पष्ट समझ में आ रहा था। वह तीनों देवियाँ ध्यान पर बैठे हुए मेरे शरीर को मुस्कराते हुए देख रही थीं, मगर वह कुछ नहीं बोलीं, कुछ क्षणों बाद अदृश्य हो गईं मैं अब भी अपने स्थूल शरीर को ध्यान पर बैठा हुआ देखा रहा था। उसी समय आकाश से आवाज आई– *"यह चूड़ियाँ अब उसके हाथ में नहीं आएँगी"*। यह शब्द सुनकर मैं हैरान हो गया, फिर मैंने सोचा क्या मैं कोई स्त्री हूँ, चूड़ियों का मेरे हाथ से क्या लेना देना। मैंने अन्तरिक्ष की ओर मुँह उठाकर कहा– "मैं चूड़ियों का अर्थ नहीं समझा, यह चूड़ियाँ क्या है"। अन्तरिक्ष से आवाज आई– *"यह चूड़ियाँ बन्धन है"*। मैं समझ गया क्योंकि चूड़ियाँ पहनाई जाती हैं। अब मुझे माया के बन्धन में कोई नहीं बाँध सकता है।

अर्थ- इस बार का ध्यान बहुत अच्छा लगा, जब मैं ध्यान से उठा तब ऐसा लगा था कि मैं शायद 5 मिनट के लिए ध्यान पर बैठा रहा हूँ, मगर घड़ी देखने पर ज्ञात हुआ कि पूरे तीन घन्टे तक ध्यान पर बैठा

रहा हूँ। समाधि लग जाने के कारण समय का अनुमान नहीं हो पाता है। जब सविकल्प समाधि में रहता हूँ तब अनुभव आते हैं। साधकों, गिरगिट माया का प्रतीक है। जिस स्त्री ने उस गिरगिट पकड़ना चाहा, वह स्त्री कुण्डलिनी शक्ति है। प्रकट होने वाली तीनों देवियाँ लक्ष्मी जी, पार्वती जी व सरस्वती जी थीं।

यह अनुभव तीन फरवरी दोपहर 11:30 बजे ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा– एक घोड़ा मेरे सामने खड़ा हुआ है, घोड़े की पूँछ वाला भाग हमारी ओर है। मुझे यह देखकर मुझे आश्चर्य हुआ, कि घोड़ा का शरीर कुत्ते के शरीर के बराबर है, उसे देखकर मैंने सोचा यह घोड़ा इतना छोटा क्यों है? उसी समय हमारा ध्यान टूट गया। फिर मैं संकल्प करके ध्यान पर बैठा गया, इस अनुभव का अर्थ क्या है? जवाब आया– *घोड़ा मन और इंद्रियों का प्रतीक है, इंद्रियाँ जब कमजोर हो जाती है अथवा उनका प्रभाव कम हो जाता है, तब वह छोटे घोड़े के रूप में दिखाई देने लगती हैं।* मुझे याद आया– पहले भी घोड़ा बहुत बड़ा दिखाई दिया था, उस घोड़े से संन्यासी ने छुटकारा दिलवाया था, अब यह स्वयं ही छोटा हो गया है। मैं समझ गया साधना का उत्तरोतर बढ़ने के कारण ऐसा हुआ है।

यह अनुभव 4 फरवरी को दोपहर को आया। मैं गहरे ध्यान पर बैठा हुआ था, मुझे अपना आभास नहीं हो रहा था, क्योंकि मैं समाधि में लीन था। अचानक मेरे सिर में जबरदस्त झटका लगा, मैं अपने आसन पर उछल गया और मेरा शरीर बाईं ओर को झुक गया, इतने में मुझे अपना होश आने लगा, मेरा ध्यान टूट गया। मैं तुरन्त नहीं समझ सका कि यह क्या हुआ, मैं सीधा बैठ गया। सोचने लगा– कि मुझे क्या हुआ था। तब महसूस हुआ, मेरे लघु मस्तिष्क के ऊपरी भाग में पीड़ा सी हो रही है। ऐसा लगा कि जैसे कोई नस टूट गई हो, उस जगह पर आग सी फैली हुई थी। इसीलिए जलन भी हो रही थी सम्पूर्ण शरीर गर्म हो रहा था। अबकी बार प्राणवायु लघु मस्तिष्क के ऊपरी भाग में दबाव मार रहा था। मैं सोचने लगा था अबकी बार उल्टी क्रिया क्यों हुई, कुछ समय बाद अनुभूति हुई, कि गर्दन की नसें टूट रहीं हैं अथवा चटक रही हैं, मुझे स्पष्ट सुनाई पड़ रहा था। जब मैं कण्ठ चक्र में था उस समय भी गर्दन की नसें टूटती या चटकती हुई सुनाई देती थी, मगर अब उस स्थान पर नहीं चटक रही थीं अबकी बार गर्दन के पिछले भाग में टूटती या चटकती हुई सुनाई दे रही थी। क्योंकि जब कुण्डलिनी उलट कर वापस हृदय की ओर जाती है तब कण्ठचक्र से नहीं जाती है बल्कि कण्ठचक्र के बगल से एक मार्ग बनाकर हृदय की ओर जाती है। इसलिए गर्दन के पिछले भाग में नसें चटकती सुनाई देती थी।

अर्थ- साधकों! लघु मस्तिष्क में जो नसें टूटती हुई सुनाई दे रही थी वह वास्तव में टूटती नहीं थी, बल्कि वह नसें खुल रही होती थी अथवा क्रियाशील हो रही थी, इसलिए नस चटकती हुई सुनाई दे रही थी, ऐसे समय में नसों (नाड़ियों) में कभी-कभी खिंचाव बहुत होता है।

तेजस्वी कण

यह अनुभव 8 फरवरी को सुबह आया था, मैंने देखा– मेरा शरीर अत्यन्त विशाल है, मैं बैठा हुआ अपने विशाल शरीर को देख रहा हूँ। चारों ओर चमकीला हल्के नीले रंग का प्रकाश फैला हुआ है, कुछ क्षणों बाद मैंने देखा– मैं बिलकुल शान्त बैठा हुआ हूँ। मेरे शरीर के अन्दर से अत्यन्त तेजस्वी कण निकल कर बहुत दूर-दूर तक चले जाते हैं। ऐसा लगता था जैसे फुलझड़ी से चमकीली चिंगारियाँ तीव्र गति से बाहर की ओर निकल रही हैं, उसी तरह अत्यन्त तेजस्वी कण मेरे शरीर से निकल रहें हैं। फिर मैंने सोचा– यह तेजस्वी कण कहाँ चले जा रहे हैं। इतना सोचते ही मुझे बहुत दूर तक दिखाई देने लगा, मैंने देखा तेजस्वी कण आगे चलकर अपने आप नष्ट हो जातेहैं। कुछ तेजस्वी कण थोड़ी दूरी तक जाकर हमारी शरीर में वापस विलीन हो जातें हैं। कुछ तेजस्वी कण बहुत दूर जाकर ज्योति के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं, फिर आगे बढ़ जाते हैं। उत्सुकता बस ज्योति रूप वाले कणों को मैं देखने लगा– कि आगे जाकर इनका क्या होता है? तब मैंने देखा– आगे चलकर ज्योतियों का प्रकाश कमजोर पड़ जाता है। ये सभी ज्योतियाँ एक जलाशय में विलीन हो जातीं हैं, जलाशय बहुत बड़ा है। उस जलाशय को मैं पूर्णरुप से नहीं देख सकता था और नहीं जलाशय का किनारा दिखाई दे रहा था। उस जलाशय से मैंने अपनी दृष्टि हटा ली, मैं अपनी ओर देखने लगा। अब भी वही तेजस्वी कण मेरे शरीर से निकल रहे थे। एक बार फिर, मैंने अपनी दृष्टि दूरगामी की तो वही पहले वाला दृश्य दिखाई देने लगा– वही तेजस्वी कणों का स्वरुप बदल कर जलाशय में विलीन हो रहा था। उस समय हमारी दृष्टि बहुत दूर तक देखने में समर्थवान थी। यह सम्पूर्ण दृश्य मैं हल्के नीले प्रकाश में देख रहा था।

अर्थ- साधकों! मेरा यह अनुभव सबसे उच्च अवस्था वाला है, ये तेजस्वी कण जो आगे चलकर ज्योति के रुप में दिखने लगते थे, वह जीवात्माओं का प्रतीक हैं। जलाशय ब्रह्माण्ड का स्वरुप है इसीलिए मैं सम्पूर्ण जलाशय एक बार में नहीं देख सका। अनुभव में देख रहा हूँ– कि तेजस्वी कण रूपी जीवात्माएँ मेरे शरीर से प्रगट हो रहीं हैं, ऐसा लगता है कि ब्रह्म मैं ही हूँ, क्योंकि जीवात्माओं का प्राकट्य इसी प्रकार

होता है। मुझे अपना स्वरुप दिखाया गया, यह मुझे वृत्तियों के द्वारा दिखाया गया है। प्रलय के बाद फिर से दुबारा जीवात्माएँ इसी प्रकार अपरा प्रकृति के विशेष क्षेत्र से प्रकट होकर जन्म धारण करने के लिये चल देती है। ये वो जीवात्माएँ होती है जो प्रलय के समय अपरा-प्रकृति के अन्दर विद्यमान हो जाती हैं

यह जानकारी 8 फरवरी को सायंकाल को मिली है। ध्यानावस्था में कुछ प्रश्न और उत्तर हुए, मैंने पूछा– 'मैं हूँ' यह कहनेवाला कौन है? क्योंकि ब्रह्म अविकारी है, अगर अविकारी है तो 'मैं ब्रह्म हूँ' वह यह कैसे कह सकता है। उत्तर– *"मैं ब्रह्म हूँ" यह अपने आप स्वयं शब्द निकलता है, अहंकार ही ब्रह्म की ओर से निर्देशन करता है।* मैं बोला–यदि यह अपने आप निकलता है तो यह क्रिया कौन कराता है? क्योंकि ब्रह्म के सिवाय और कोई नहीं है, किसी कार्य को करने वाला अवश्य कोई होता है। सारे कार्य अगर ब्रह्म के द्वारा होते हैं तो वह अकर्ता कैसे हुआ? जबाब– *सारे पदार्थ व क्रियायों का प्रादुर्भाव ब्रह्म से ही हुआ है, इन सभी का आधार होते हुए भी वह विकार से रहित है और अकर्ता कहा गया है।* मेरी समझ में ये नहीं आया, सम्पूर्ण क्रियाएँ उसी के द्वारा सम्पन्न होती हैं फिर भी उसको अकर्ता कहते हैं। उत्तर– *कमल कीचड़ में होते हुए भी कीचड़ का प्रभाव उस पर नहीं पड़ता है।*

फिर कुछ समय बाद मैंने प्रश्न किया– मैंने जो अनुभव लिखा है उसका क्या अर्थ है? उत्तर– *"जो आपको मालूम है वही इसका अर्थ है"*। प्रश्न– क्या मैं अपने अनुभव को सही समझूँ ? उत्तर– *"अवश्य"*। प्रश्न– क्या मैं योग में पूर्ण हो गया हूँ? उत्तर– *"नहीं"*। प्रश्न– अनुभव का अर्थ योग में पूर्णता को भासित करता है? उत्तर– *"आप जिस पूर्णता की बात करतें हैं वह अत्यन्त दुर्लभ है"*। इस तरह का वार्तालाप ध्यानावस्था में हुआ, इसलिए पूर्ण रूप से याद नहीं है कि क्या-क्या वार्तालाप हुआ, जो बातें याद आ गयीं, उन्हीं को लिखा गया है, क्योंकि ध्यान की गहराई में वार्तालाप हुआ था।

आत्मसाक्षात्कार

यह अनुभव 9 फरवरी को आया। आजकल ध्यानावस्था में मैं निर्विकल्प समाधि में चला जाता हूँ, इस बार मैं फिर ध्यान की अनन्त गहराई में चला गया। ध्यानावस्था में मुझे दिखाई दिया– हृदय में अत्यन्त तेजस्वी दीप शिखा के समान एक ज्योति जल रही है। मैं उसे देखने लगा, उस ज्योति का प्रकाश आसपास चारों ओर फैल रहा था। वह सामान्य ज्योतियों से बहुत बड़ी व तेजस्वी थी। कुछ समय बाद

मुझे अपना आभास होने लगा। मेरा ध्यान हल्का होने लगा, तब मन में विचार आया– हृदय में इस प्रकार की ज्योति पहली बार दिखाई दी है, इसका अर्थ क्या है? ऐसा संकल्प करके मैं ध्यान करने लगा। मुझे एक बार फिर हृदय में पहले के समान ज्योति दिखाई देने लगी– हृदय में आले (niche) के समान जगह है उसी के अन्दर दीप शिखा के समान एक ज्योति जल रही है। वह ज्योति हिलती डुलती नहीं है बिल्कुल स्थिर है वहाँ पर चारों ओर प्रकाश फैला हुआ है,। मैं उसे देख कर प्रसन्न हो रहा हूँ। मैंने जो संकल्प किया था उसका उत्तर मुझे नहीं मिला, बल्कि पहले के समान के समान दुबारा फिर अनुभव दिखाई दिया।

अर्थ- ध्यान समाप्त होने के बाद सोचने लगा– यह तो आत्मा का दर्शन हो रहा था। इसका अर्थ है मुझे आत्मसाक्षात्कार हो रहा था। क्योंकि मैं कुछ समय से सोच रहा था– मेरी कुण्डलिनी की स्थिति क्या है, बहुत प्रयास करने पर भी कुण्डलिनी दिखाई नहीं देती थी और ऊर्ध्व होते हुए महसूस भी नहीं होती थी, मैं समझ नहीं पा रहा था ऐसा क्यों हो रहा है। मुझे याद आ रहा है ध्यान में बैठते समय जब कुण्डलिनी ऊर्ध्व होती थी, तब मुझे अच्छी तरह से अनुभूति होती थी, मगर अब बिलकुल ही अनुभूति नहीं होती है। मैं चाहे जितना ज्यादा आंतरिक कुम्भक लगाऊँ अथवा प्राणायाम करूँ, मेरा तो शरीर अपने आप गर्म रहता है। साधकों! मेरी कुण्डलिनी अब स्थिर हो चुकी है, कुछ दिन पूर्व स्थिर होने के कारण अग्नि तत्त्व वाला स्वरूप छोड़कर वायुतत्त्व में विलीन हो गयी है। कुण्डलिनी स्थिर होने के बाद ही, साधक को आत्म साक्षात्कार चित्त में दीपशिखा के सामान जलती हुई लौ के रूप में होता है।

ज्यादातर मार्गदर्शकों का कहना होता है यही आत्मा का स्वरुप है, यही आत्म साक्षात्कार है। बहुत से भक्त भी कहते हैं– हृदय के अन्दर जो लौ जला करती है उसी का चिन्तन करना चाहिए। मुझे मालूम है बहुत से अभ्यासी अपने आप को यही पर पूर्ण समझ लेते हैं। उनका कहना होता है– मुझे हृदय में आत्मा का (लौ का) साक्षात्कार हो चुका है। मैं यह बता दूँ– यह आत्मा का स्वरुप नहीं होता है, बल्कि चित्त की एक अत्यन्त सात्विक सशक्त वृत्ति होती है जो दीप शिखा के समान स्वरुप को धारण कर लेती है। उस समय चित्त पर स्थित उसकी (ज्योति) अन्य सहयोगी वृत्तियाँ इस वृत्ति का सहयोग करती है। अज्ञानता के कारण अभ्यासी इस वृत्ति को आत्मा समझने की भारी भूल करता है। आत्मा की व्यापकता और सूक्ष्मता चित्त से कहीं ज्यादा होती है। फिर वह चित्त के अन्दर इस स्वरुप में कैसे दिखाई दे सकती है। अज्ञानता की अवस्था में आत्मा चित्ताकार भासित होती है, मगर ज्ञान की अवस्था में चित्त आत्माकार हो जाता है। साधकों! सदैव याद रखना आत्मा कभी भी दिखाई नहीं दे सकती है। आत्मा को कौन देख सकता है, आत्मा में स्थित हुआ जाता है, जिसे आत्मस्थिति कहते हैं।

शिवलोक जाना

ध्यानावस्था में मैं किसी दुर्गम रास्ते पर चला जा रहा हूँ। वह रास्ता अच्छा नहीं है, इसलिये उस रास्ते पर चलते समय बहुत तकलीफ हो रही है। रास्ते में बाएँ तरफ ऊँची दीवार या पहाड़ जैसी जगह है, दाहिने तरफ बहुत गहरी खाई है। खाई में बड़े-बड़े गड्ढे हैं, उसमें गंदा पानी भरा हुआ है। यह रास्ता बाएँ तरफ की दीवार काटकर बनाया गया है, रास्ता बहुत सँकरा है ऐसा लगता है रास्ता दीवार काटकर बनाया गया है। रास्ते की चौड़ाई सिर्फ 6 ईंच होगी। मेरे शरीर का बायाँ भाग दीवार से सटा हुआ है। मैं धीरे-धीरे आगे की ओर सम्भल कर चल रहा हूँ, हर समय डर रहा है अगर जरा भी दाहिने तरफ को मेरा शरीर झुक गया अथवा फिसल गया तब गहरी खाई में गिर जाऊँगा, फिर ऊपर आ पाना असम्भव हो जायेगा है। नीचे गिरते ही मेरी हड्डी-पसली टूट जाएँगी। मैं धीरे-धीरे डर-डरकर आगे की बढ़ रहा हूँ, कहीं-कहीं पर रास्ता एक या दो मीटर तक टूटा हुआ मिल रहा है। तब सम्भल कर और छलांग लगाकर आगे जाना पड़ता है, रास्ता बहुत ही ज्यादा खराब है, मगर वह रास्ता स्वप्रकाशित है, प्रकाश की कमी नहीं है। मैं आगे की ओर चला जा रहा था, उसी समय मुझे लगा– कोई मेरे पीछे से आ रहा है। मैंने मुड़कर पीछे की ओर देखा– मेरे पीछे थोड़ी दूर पर एक हाथी बड़े आराम से चला आ रहा है, हाथी के ऊपर महावत बैठा हुआ है। मैं आश्चर्यचकित हुआ और सोचा– इस सँकरे रास्ते पर मुझे चलना मुश्किल हो रहा है, यह विशाल हाथी कैसे बड़ी मस्ती से चला आ रहा है। मेरे मन में थोड़ा सा हाथी के प्रति डर उत्पन्न होने लगा, इसलिये मैंने अपनी गति तेज कर दी ताकि हाथी मेरे पास ना आ पाए।

तभी मुझे सामने ओर एक दरवाजा दिखाई दिया, दरवाजा बहुत सुन्दर व विशाल आकार वाला था। मैं दरवाजे के अन्दर प्रवेश कर गया, दरवाजे के अन्दर प्रवेश करते ही मैंने अपने आप को बहुत सुन्दर प्रकाशित क्षेत्र में पाया। चारों ओर हल्का नीला प्रकाश फैला हुआ था, बिलकुल शान्ति थी वहाँ आसपास कोई दिखाई नहीं दे रहा था, सिर्फ मैं अकेला था। वहाँ पर पहुँचते ही मन के अन्दर प्रसन्नता आ गयी, मैं इधर-उधर घूमने लगा। हाँ, मुझे इस समय बहुत दूर तक दिखाई देने लगा था, मुझसे थोड़ी दूरी पर बरगद का एक पेड़ दिखाई दिया, उत्सुकतावश मैं उधर की ओर चल दिया। जब मैं बरगद के पेड़ के नीचे पहुँचा, तब ऐसा लगा यहाँ पर अभी-अभी सफाई की गयी है। उसी समय मुझे सामने की ओर बहुत बड़े आकार में एक शिवलिंग दिखाई दिया, शिवलिंग के पास विशाल आकार में नंदी की भी मूर्ती विद्यमान थी। यह जगह मुझे बहुत अच्छी लगी, बरगद का पेड़ देखने पर हजारों साल पुराना लगता था। उसकी शाखाएँ बहुत लम्बी-लम्बी थीं। मैंने अनुमान लगाया– इसकी शाखाएँ 2-3 किलोमीटर लम्बी अवश्य

होंगी। उसकी शाखाओं से जड़ें निकलकर भूमि के अन्दर चली गयी थीं, उन जड़ों ने तने का स्वरूप धारण कर लिया था, इस प्रकार उन जड़ों से सैकड़ों तने बन गये थे। मैं उन तनों के बीच में घूमने लगा। फिर मुझे लगा यह बरगद सामान्य पेड़ नहीं है क्योंकि बरगद का अन्त दिखाई नहीं दे रहा था। मैं जितना आगे की ओर बढ़ता था, बरगद का पेड़ उतना ही अधिक विस्तृत दिखाई देता था। अब यह जानना असम्भव हो गया, कि शाखाएँ और तने कितनी दूरी तक फैले हुए है। फिर मैं शान्त होकर एक तने के नीचे बैठ गया, वहाँ तो वायु के कम्पन का आभास ही नहीं हो रहा था। मेरे अन्दर विचार आया– यह जगह ध्यान करने के लिये बहुत ही अच्छी रहेगी, मैं यहीं पर समाधि लगाऊँ तो हमारी समाधि बहुत ज्यादा अवधि तक लगी रहेगी। इतने में आवाज सुनाई दी– *"मुझे भेजा गया है और कहा गया है मेरे पुत्र को हाथी पर बिठाकर घुमाया जाये"*। मैं आवाज की ओर देखने लगा जिधर से आवाज आयी थी– सोचा यहाँ पर तो कोई नहीं है यह आवाज किसकी सुनाई देर ही थी, कौन किससे बातें कर रहा था। इच्छा करते ही मुझे और ज्यादा दूर तक दिखाई देने लगा, वहीं पर खड़ा होकर देखने लगा. नीचे की ओर बहुत दूरी पर दिखाई दिया– एक विशाल दरवाजा है, उस दरवाजे पर एक पुरुष खड़ा हुआ है, एक स्त्री उसी पुरुष से बातें कर रही है। पुरुष बोला– "वह कहाँ पर है?" स्त्री बोली– "वह यहीं पर कहीं है"। फिर वह दोनों चुप हो गए, वह हमारी ओर देखने लगे। मैं उनसे बहुत दूरी पर खड़ा हुआ था, शायद वह मुझे नहीं देख पा रहें होंगे, क्योंकि मैं बरगद के पेड़ के तनों के बीच खड़ा हुआ था। मेरे अन्दर विचार आया– इस स्त्री को किसने भेजा है? आवाज आई– *"पुत्र, धर्म ने भेजा है"*। मैंने फिर सोचा– यहाँ पर तो सिर्फ मैं हूँ ये पुत्र किसे कह रही है। तभी आवाज आई– *"आपको कह रही है"*। मुझे लगा– धर्म मुझे पुत्र कह कर सम्बोधित कर रहे हैं। अन्तरिक्ष से आवाज आई–*"हाँ"*। मैंने पूछा– "जब धर्म अपना पुत्र कह कर सम्बोधित कर रहे हैं तो मुझे अपना दर्शन क्यों नहीं दे रहें हैं"। अन्तरिक्ष से आवाज आई– *"क्योंकि आप पूर्ण रूप से सत्यवादी नहीं हैं इसलिए उनके दर्शन आपको नहीं हो सकते हैं, उनका दर्शन होना अत्यन्त दुर्लभ है"*। तभी मैं स्वयम् अपने आप कहने लगा– "मैं समझ गया हूँ, यह इन्द्र का ही ऐरावत है। मैं उस पर क्यों बैठूँ, उस पर सिर्फ इन्द्र को ही बैठने का अधिकार है, मुझे उस पर नहीं बैठना है। उस पर बैठना तो दूर की बात है, मैं उसके नगर में भी नहीं जाऊँगा। हाथी पर बैठाकर आप मुझे ऐश्वर्यवान बनाना चाहते हैं। मुझे सुख नहीं चाहिए, मेरा स्थान स्वर्ग में नहीं है, जिस स्थान पर मैं खड़ा हूँ वही मेरा स्थान यह है"।

कुछ क्षणों के बाद मैंने ईश्वर से प्रार्थना की– "प्रभु मुझे यही स्थान दे दो, मैं इसी स्थान पर ध्यान करूँगा, मुझे और कुछ नहीं चाहिए, इससे सुन्दर स्थान मेरे लिए और कोई नहीं हो सकता है यहाँ वायु का

भी शोर भी नहीं है”।अन्तरिक्ष से आवाज आई– योगी! तुम्हें मालूम नहीं है, इस स्थान पर ध्यान करने के लिए योगियों को योग में उच्चतम अवस्था प्राप्त करनी होती है, फिर भगवान शिव की कृपा से यह स्थान प्राप्त होता है, सिर्फ उच्चतम अवस्था प्राप्त कर लेना ही पर्याप्त नहीं है, भगवान शिव को भी प्रसन्न करना आवश्यक होता है, क्या तुम ऐसा कर सकोगे? मैं बोला– “मैं कठोर साधना करने से घबराता नहीं हूँ, मैं वह योगी नहीं हूँ जो कठिनाइयों के सामने आने से अपने मार्ग से विचलित हो जाऊँ, भगवान शिव को प्रशन्न करने की जो बात आपने बताई है, उसके लिए अत्यन्त कठोर साधना करूँगा, उन्हें प्रसन्न होना ही होगा”। अन्तरिक्ष से आवाज आई– “तो फिर जाओ अत्यन्त कठोर साधना करो, अपने शेष कर्मों को भी भोग कर नष्ट कर दो, कर्म नष्ट करते समय तुम्हारी बहुत दुर्गति होगी”। फिर मैं बोला– “मुझे ये सब मंजूर है”। फिर मुझे अन्तरिक्ष से आवाज सुनाई नहीं दी। मैं बरगद का तना पकड़े हुए खड़ा था। मैं नीले प्रकाश को देख रहा था, अनुभव समाप्त हुआ।

अर्थ- साधकों! अनुभव में मैं चला जा रहा था तब हाथी मेरे पीछे आ रहा था, वह हमारा योगबल है। रास्ता सँकरा और टूटा हुआ है– अब योगमार्ग पर चलना बहुत कठिन होगा। दाहिने ओर खाई है– भविष्य में मुझे सम्भल कर चलना होगा, नहीं मैं तो परेशानी में पड़ सकता हूँ। यह शिवलोक का द्वार था, मैं शिवलोक में चला गया था। बरगद का पेड़ अत्यन्त विशाल था, उस समय मेरी दिव्य दृष्टि भी बरगद का पूरा स्वरूप देख पाना दूर की बात है, वह एक डाली को भी पूर्ण रुप से नहीं देख पाई थी। यह बरगद का पेड़ दिव्य पेड़ है, यहीं पर आवाज सुनाई दी थी। मैंने नीचे की ओर बहुत दूर दरवाजा देखा था, जहाँ मेरे लिए स्त्री-पुरुष बात कर रहे थे; वह स्वर्ग का दरवाजा था। ऐरावत पर चढ़ने का अर्थ होता है– “यश और धन से परिपूर्ण होना”, मगर मुझे ये दोनों नहीं चाहिए। ज्यादातर योगियों को अनुभव आता है वह स्वर्ग गए, उनका स्वागत किया गया तथा स्वर्ग को घूमा अथवा घुमाया गया है। ऐसे योगियों को पृथ्वी पर अवश्य ही कुछ-न-कुछ यश व धन की प्राप्ति होती है, मगर मैंने कभी स्वर्ग नहीं घूमा है। इसलिए उसका वर्णन मैं ज्यादा नहीं कर सकता हूँ। मैंने स्वर्ग घूमने के बदले उस लोक में बरगद के पेड़ के नीचे ध्यान करने के लिए माँगा था। इससे साफ स्पष्ट होता है, मैं ध्यान अन्तिम समय तक करता रहूँगा। मेरे दिन गरीबी में व परेशानी में गुजरेंगे क्योंकि मुझे कर्मशून्य होना है। निश्चय ही शिवलोक की यात्रा हमारी सफल रही। मुझे अनुभव में जो हाथी दिखाई देता है वह मेरा योगबल है। मगर कभी-कभी एक और अर्थ निकलता है– उसका अर्थ कर्म होता है। अनुभव में जब हाथी सुन्दर दिखाई दे व सफेद रंग का हो तब उसका अर्थ होता

है– ‘योगबल’ और कभी कभी बहुत ही ‘शुभ’ व ‘यश का प्राप्त होना’ होता है। जब हाथी काला दिखाई दे तब उसका अर्थ होता है– ‘तमोगुणी कर्म’।

श्री माता जी के दर्शन बन्द हो गए

यह अनुभव 3-4 फरवरी को आया था मगर उस समय लिखा नहीं था, मैंने देखा– एक अत्यन्त प्रकाशित जगह है, ऐसा लगता है मैं सम्पूर्ण क्षितिज के नीचे अन्तरिक्ष में बैठा हूँ। मेरे सामने श्री माता जी और एक ब्राह्मण पुरुष (श्वेत वस्त्रधारी संन्यासी) बैठा हुआ है, तीनों के बीच में एक थाली में भोजन रखा हुआ है। कुछ क्षणों में हम तीनों एक साथ भोजन करने लगे। श्री माता जी मुझे देखकर बार-बार हँस रही थीं, वह मुझसे बहुत प्रसन्न थीं। श्री माता जी के साथ भोजन करने के कारण मुझे थोड़ा आश्चर्य सा हुआ, क्योंकि स्थूल रुप से कभी ऐसा अवसर नहीं आया था कि एक थाली में खाना खाया हो। ब्राह्मण बिलकुल शान्त था। अनुभव समाप्त हुआ।

इस अनुभव के बाद मुझे श्री माता जी के दर्शन होने पूर्णरूप से बन्द हो गए, क्योंकि बाद में मुझे 9 फरवरी को चित्त में जलती हुई लौ दीप शिखा के समान दिखाई दी थी। इस अवस्था के बाद चित्त में स्थिरता बहुत ही ज्यादा बढ़ जाती है। अभ्यासी को अनुभव भी कम आने लगते हैं, मैं और श्री माता जी एक हो गए है, फिर कौन किसे देखे या दर्शन दे? हाँ, श्वेत वस्त्रधारी ब्राह्मण का अर्थ है– अब मेरा आध्यात्मिक स्वरुप इसी ब्राह्मण के समान हो गया है।

भयंकर उष्णता

आजकल मेरे शरीर का ताप कभी-कभी इतना बढ़ जाता था कि उस ताप को सहन करना मुश्किल होता था, जबकि फरवरी महीना होने के कारण हल्की सी ठन्ड पड़ रही थी, फिर भी शरीर के अन्दर भयंकर गर्मी होने के कारण कष्ट की अनुभूति हो रही थी। उस समय पीठ, नाभि और हृदय में आग ही आग के सिवाय कुछ भी दिखाई नहीं देता था। शरीर की गर्मी सहन करने के लिये पीठ पर गीले कपड़े की चौड़ी सी पट्टी चढ़ाकर पेट के बल लेटा रहता था, उसी अवस्था में ध्यान भी लग जाता था, मुझे

चार-पाँच घण्टे पेट के बल लेटा रहना पड़ता था। उस समय मेरे साथ में जलगाँव के एक सत्संगी रह रहे थे। उनसे मुझे बहुत सहायता मिलती थी, वह गीला कपड़ा करके मेरी पीठ पर रख देते थे। इस तरह गीले कपड़े से पीठ की ऊपरी त्वचा पर थोड़ा सा आराम मिलता था, मगर अन्दर की उष्णता तो सहनी ही पड़ती थी इसके अतिरिक्त अन्य कोई रास्ता नहीं था। श्रीमाता जी ने मुझे बताया– "आप किसी के हाथ का बना खाना मत खाइए, स्वयं खाना बनाइए और खाइए, एकान्त में रहिए, किसी से ज्यादा बात मत कीजिए, अत्यन्त शुद्धता से रहिए क्योंकि आपको शुद्धता की बहुत जरुरत है"।

मैं ब्रह्म हूँ

मुझे अनुभव आया– चारों ओर हल्के नीले रंग का तेज प्रकाश फैला हुआ है, मैं उसी प्रकाश में खड़ा हुआ हूँ। मेरे मुँह से अपने आप आवाज निकल रही है– "मैं हूँ", "सिर्फ मैं ही हूँ", "मैं ही हूँ", "मैं ही ब्रह्म हूँ", यह शब्द मैं कह रहा था, मेरे द्वारा आवाज इतनी तेज निकल रही थी कि सम्पूर्ण आकाश गूँज रहा था। मैं यही शब्द जोर-जोर से नीले प्रकाश में खड़े होकर कह रहा था। उसी समय ऊपर अंतिरिक्ष की ओर से 'ॐ' की बहुत तेज आवाज आई, ऐसा लगा 'ॐ' की तेज आवाज से आकाश फट जाएगा। इधर मेरे द्वारा भी अपने आप आवाज निकल रही थी– "मैं ही ब्रह्म हूँ" मेरी आवाज से आकाश गूँज रहा था। तभी मेरा ध्यान टूट गया। मेरे स्थूल शरीर से भी आवाज आ रही थी– "मैं ही ब्रह्म हूँ"। मेरा स्थूल शरीर ताप के कारण गर्म हो रहा था।

अर्थ- साधकों! आप सोच रहे होंगे– मैं ध्यानावस्था में अपने ही मुँह से कह रहा था– "मैं ही ब्रह्म हूँ"। जब योगी समाधि के द्वारा उच्चत्तम अवस्था प्राप्त करता है, तब अहंकार का साक्षात्कार होता है उसी अहंकार के द्वारा ये शब्द निकलते है–"मैं ही ब्रह्म हूँ"। क्योंकि अहंकार के द्वारा ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड कि उत्पत्ति होती है, यह अहंकार चित्त की ही एक वृत्ति होती है। यह वृत्ति (अहंकार वाली) ब्रह्म कि ओर से निर्देशन करती है। यह वृत्ति अत्यन्त शुद्ध, सात्विक और व्यापक होती है।

बाधा दूर की

यह बाधा जलगाँव की एक साधिका को थी। जून सन् 1989 में इस साधिका के साथ डेढ़ माह श्री माता जी के घर मिरज में रहने का अवसर मिला था, उस समय मेरे और साधिका के बीच में घनिष्ठता हो गयी थी। उसी समय मेरी समझ में आ गया था, कि इसे किसी प्रकार की बाधा है। फिर अक्टूबर सन् 1992 में श्री माता जी के साथ जलगाँव गया था, तब मैं इसी साधिका के घर में रुका था, तभी मैंने इस बाधा को स्पष्ट रूप से देखा था। इसी बाधा के कारण इस साधिका की साधना रुकी हुई थी तथा ध्यानावस्था में विचित्र क्रियाएँ किया करती थी। मैं समझ गया था– यह साधना नहीं बल्कि एक रुकावट है। सुबह का समय था, साधिका ध्यान पर बैठी हुई थी। मैं भी उसी समय अपनी दिव्य दृष्टि को प्रेरित करके उस साधिका के पीछे आँखें बन्द करके बैठ गया। तभी मुझे बाधा दिखाई दी, वह बाधा दुष्ट स्वभाव की थी। उसने मेरे सामने अभद्रता का व्यवहार किया। थोड़ा सा क्रोध के साथ मेरे मुँह से निकला– "बद्तमीज"। मेरे द्वारा बोले गये इस शब्द से उसके ऊपर कोई असर नहीं हुआ। उसकी इस क्रिया से मेरे अन्दर क्रोध आ गया, मगर मैं कुछ नहीं बोला। फिर यह बात मैंने साधिका को बतायी। कुछ समय के बाद श्री माता जी के पास चला गया वह अपने लड़के के पास रुकी हुई थी। मैंने श्री माता जी को बताया– "उस साधिका को कोई बाधा है"। श्री माता जी बोलीं– "हाँ उस साधिका को कोई बाधा है"। फिर मैं अपने घर (कानपुर) जाकर मिरज वापस आ गया। शिवरात्रि पर जलगाँव के कुछ साधक मिरज आश्रम आए हुए थे। मैंने प्रयोग के तौर पर बाधा को दूर करने का निश्चय किया, मैंने सोचा इससे मेरा अनुभव और बढ़ेगा।

जलगाँव के सभी साधक आश्रम में रुके हुए थे। 15 फरवरी सुबह चार बजे, मैंने उस साधिका को अपने सामने बैठने को कहा, सभी साधक वहीं पर ध्यान कर रहे थे। ध्यानावस्था में मैंने उस बाधा को देखा, जो उस साधिका के अन्दर विद्यमान थी। मैंने बाधा से कहा– "कृपया आप इस साधिका को छोड़कर चली जाए"। फिर ईश्वर से प्रार्थना की– "प्रभु, इस बाधा के कारण इस साधिका की साधना रुकी हुई है, आप इस पर कृपा करें। इसका कर्म भी एक निश्चित मात्रा में धीरे-धीरे जल जाएँ"। ऐसा संकल्प करके मैंने साधिका पर शक्तिपात किया, फिर मैं शान्त होकर बैठ गया और दिव्यदृष्टि के द्वारा मैं उस साधिका के अन्दर की सूक्ष्म हलचल देखने लगा। मैंने देखा– वह बाधा उस साधिका को छोड़कर जाने को तैयार नहीं है। फिर क्या था मुझे थोड़ा सा क्रोध आ गया। मैंने साधिका पर अबकी बार जबरदस्त शक्तिपात किया, शक्तिपात होते ही बाधा के शरीर में जोरदार कम्पन हुआ और साधिका के शरीर से जाने को तैयार हो गयी, मैं अब भी थोड़ा क्रोध से उसे देख रहा था। उस बाधा ने अपने हाथ जोड़े और

गिड़गिड़ा कर बोली– “योगी जी मैं जा रहीं हूँ”। मैं बोला– “आज के बाद इस साधिका की ओर मुड़कर भी न देखना वरना मैं तुम्हारी दुर्गति कर दूँगा”। बाधा बोली– “क्षमा करें, मैं अब कभी नहीं आऊँगी”।

बाधा को निकालकर मैं ध्यान की गहराई में डूब गया, ध्यान टूटने के बाद मैं आश्रम के कार्यों में लग गया। मैंने उस साधिका से कुछ नहीं बताया, कि मैंने उसके साथ क्या किया है। शाम को उस साधिका ने मुझसे पूछा– भैया आपने सुबह क्या किया था? मैंने बोला– “कुछ नहीं”। उसने कहा– आपने मेरी बाधा निकाल दी है और आप कहते हैं कुछ नहीं किया। मैंने पूछा– आपको कैसे मालूम हुआ कि मैंने बाधा निकाल दी है। फिर साधिका ने अपना अनुभव मुझे सुनाया– आपके द्वारा शक्तिपात करने के बाद मुझे एक स्त्री दिखाई दी थी, वह शक्ल में अच्छी नहीं थी। वह स्त्री हाथ जोड़े हुए खड़ी थी, मुझसे बोली– “अब मैं जा रही हूँ मुझे क्षमा कर दो, अब मैं आपके पास कभी नहीं आऊँगी”। यह कहकर वह स्त्री चली गयी, फिर मेरे अन्दर से आवाज सुनाई दी– “आपके कर्म धीरे-धीरे एक निश्चित मात्रा में जल जाएँगे”। फिर कुछ क्षणों के बाद एक ज्योति दिखाई दी।

मैंने श्रीमाता जी को मैंने सारी बात बतायी, तब उन्होंने मुझे समझाया– ऐसा कार्य करने से पहले आप अपना कवच बना लिया करें फिर ऐसा कार्य करें, नहीं तो ऐसी बाधाएँ आप पर भी हमला कर सकती है। उन्हें संतुष्ट करके भेजना चाहिए, कि उन्हें क्या चाहिये, क्योंकि ऐसी दुष्ट शक्तियाँ भोजन, आदि भी माँगतीं हैं। साधकों! मुझे श्री माता जी ने समझाया था– मुझे इस प्रकार से बाहर नहीं निकालना चाहिए था। मैंने अपने जीवन में ढेरों प्रयोग विभिन्न प्रकार के किए हैं, बड़ी-बड़ी तामसिक शक्तियों से से मेरा झगड़ा भी हुआ है। मगर मैंने कवच कभी भी नहीं बनाया, इसका कारण यह है मेरे पास योगबल की कभी भी कमी नहीं हुई है। ऐसी शक्तियाँ मेरा वलय देखकर ही भाग जाती हैं। मैं भुवर्लोक की तामसिक शक्तियों से भी लड़ सकता हूँ। मैं चाहूँ तो उन्हें मूल स्रोत में विलीन कर दूँ। मुझे एक विशेष प्रकार की शक्ति प्राप्त है इसलिये मैं इस प्रकार की शक्तियों से नहीं डरता हूँ।

भगवान् यीशु, भगवान् श्री कृष्ण और श्री माता जी

यह अनुभव एक मार्च को आया था, मैं रात्रि के 11 बजे लेटा हुआ था, मेरी आँखें अपने आप बन्द हो गयी। मुझे दिखाई दिया– अन्तरिक्ष में सुनहले रंग की लम्बी लाइन तेज प्रकाश की जोर से चमकी,

जैसे बरसात में बादलों के बीच में बिजली चमकती है। तेज प्रकाश की लाइन के चमकते ही उसमें विस्फोट हो गया, विस्फोट होते ही सम्पूर्ण आकाश तेज प्रकाश से युक्त हो गया। उसी तेज प्रकाशित आकाश में एक प्रकाश स्तम्भ दिखाई देने लगा। उसी प्रकाश स्तम्भ में भगवान यीशु के दर्शन होने लगे, उनका शरीर तेज प्रकाश से बना हुआ था। मैं तुरन्त बोला– "आप तो प्रभु यीशु हैं", मेरे शब्द सुन कर वह मुस्कराने लगे, फिर उन्होंने मुझे आशीर्वाद दिया, मैंने उन्हें प्रणाम किया। प्रभु यीशु कुछ नहीं बोले, फिर अदृश्य हो गए। हमारा भाव प्रभु यीशु की ओर विद्यार्थी जीवन से ही रहा है। मैंने बाइबल का भी बहुत अध्ययन किया है, इसलिए प्रभु यीशु मुझे अच्छे लगते हैं।

प्रभु यीशु के अदृश्य होने के कुछ क्षणों बाद ही उसी स्तम्भ पर भगवान कृष्ण दिखाई देने लगे, भगवान कृष्ण का स्वरूप युवा था और उनका शरीर तेज प्रकाश से बना हुआ था। मेरे मुँह से आवाज निकली–"प्रभु आप" वह मुस्कुरा रहे थे, उसी समय मेरी आँखें खुल गयी। मैं सो नहीं रहा था, सिर्फ मेरी आँखें बन्द थी। मैं प्रभु यीशु और भगवान श्री कृष्ण के विषय में सोच रहा था, फिर दोबारा मेरी आँखें बन्द हो गई। तभी श्री माताजी का पारदर्शी शरीर दिखाई देने लगा। उसी समय अंतरिक्ष से आवाज आई– *"यह सूक्ष्म शरीर तुम्हारे गुरु का है"*। उस पारदर्शी सूक्ष्म शरीर में सभी चक्र दिखाई दे रहे थे तथा कुण्डलिनी भी दिखाई दे रही थी। मूलाधार चक्र से ब्रह्मरन्ध्र तक फिर ब्रह्मरंध्र से हृदय तक आई हुई थी। इतने में मेरी आँखें खुल गई, मैं उठकर बैठ गया।

साधकों! ये सभी दृश्य दिव्यदृष्टि के द्वारा दिखाई दे रहे थे, फिर मैं थोड़ी देर के लिए ध्यान पर बैठ गया। मुझे ध्यान में ब्रह्मरन्ध्र के अन्दर से ऊपरी भाग दिखाई दिया, ब्रह्मरंध्र की ऊपरी सतह विशेष प्रकार से चमक रही थी, ऐसा लगता था जैसे पारदर्शी काँच हो। उसी समय आवाज आई– *"यह ब्रह्मरन्ध्र का ऊपरी भाग है"*। योगी शरीर छोडते समय अपना सूक्ष्म शरीर यहीं से बाहर निकालते हैं। यह दृश्य लगातार दो अनुभवों में आया था।

ब्राह्मण नहीं

यह अनुभव 12 मार्च दोपहर 11 बजे आयाथा। मैंने ध्यान में देखा– मैं किसी प्रकाशमान जगह पर बैठा हुआ हूँ। मेरे सामने बहुत मोटा ग्रन्थ रखा हुआ है, मैं उसे पढ़ रहा हूँ। क्या पढ़ रहा हूँ यह मुझे अब

मालूम नहीं है। ग्रन्थ पढ़ते समय मेरी ऊँगली एक लाइन पर रुक गई। फिर मैं थोड़ा तेज आवाज में बोला– "जो ब्राह्मण सत्य का अवलम्बन नहीं करता है वह ब्राह्मण कहलाने योग्य नहीं है। ब्रह्म की अनुभूति करने वाला ही ब्राह्मण होता है"। इतना पढ़ते ही मेरा हाथ वही पर रुक गया, फिर मैं आगे कुछ नहीं बोला। उसी समय मुझे अपना आभास होने लगा।

श्री माताजी

यह अनुभव मुझे योगनिद्रा में 15 मार्चको आया था, मैं अकेला ही कहीं चला जा रहा था। चारों ओर सुनहरा प्रकाश फैला हुआ था। कुछ क्षणों बाद मुझे ऐसा लगा जैसे मेरे बायीं ओर कुछ है, मैंने अपनी दृष्टि बायीं ओर की, तो आश्चर्य में पड़ गया। मेरे बायीं ओर मुझसे कई फीट ऊँचा बिना आधार के पानी स्थित था। आश्चर्य यह था कि पानी दीवार की भाँति बिलकुल हिलेडुले बिना ही रुका हुआ था, जबकि पानी को दीवार की भाँति ठहरने के लिए कुछ आधार होना चाहिए। वह असीमित पानी बर्फ के सामान स्थिर था। पानी अत्यन्त स्वच्छ और पारदर्शक था। मैं थोड़ा आगे की ओर बढ़ा और अपने आप रुक गया। उसी जगह पानी के ऊपरी सतह पर कुछ हलचल सी होने के कारण हल्की-हल्की तरंगे उठ रहीं थी, वहीं पर मुझे एक विशाल मछली तैरती हुई दिखाई दी। मछली पानी के ऊपरी सतह पर तैर रही थी, मेरी दृष्टि जैसे ही मछली पर पड़ी, यह मुझे बहुत बुरा लगा– कि स्वच्छ पानी में इस मछली का क्या कार्य है। इतने में वह मछली थोड़ी मेरी ओर आई और मुझे टकटकी लगाकर देखने लगी। मछली अत्यन्त खूबसूरत थी, उसकी त्वचा चाँदी के सामान चमक रही थी। जब वह मेरी तरफ देख रही थी उस समय मेरे अन्दर विचार आया– "चाहूँ तो इस मछली को पकड़ सकता हूँ"। मैं अपनी जगह से थोड़ा ऊपर की ओर होकर, मछली की ओर बढ़ा। मैंने मछली पकड़ने के लिए अपना हाथ आगे की ओर बढ़ाया, इच्छा करते ही मेरे हाथ की लम्बाई अपने आप बढ़ने लगी। जैसे ही मैं उस मछली को पकड़ने वाला था, तभी आवाज आई– "नहीं"। मैंने उस आवाज की ओर देखा, जिधर से आवाज आई थी। मैंने देखा– मुझसे थोड़ी दूरी पर, घुटनों तक उसी पानी में खड़ी हुई, श्रीमाता जी दिखाई दी। वह मेरी ओर देख रही थीं और मुस्कुरा भी रही थी। मैं तुरंत समझ गया 'नहीं' शब्द श्री माता जी ने ही कहा है। श्रीमाता जी फिर बोलीं– "आप उस मछली को मत पकड़ो, उसको उसी पानी में रहने दो"। श्री माता जी द्वारा यह शब्द सुनकर मैं दंग रह गया, मेरे मन में विचार आया, ये शब्द माताजी को नहीं कहने चाहिए। मैं दुखी भाव से श्री माता

जी को देख रहा था, मैंने फिर मछली को देखा– मछली मुझे अब भी देख रही थी, उस समय मुझे ऐसा लग रहा था मानो मछली कह रही हो, तुम मुझे सिर्फ देखते रहो पकड़ने का साहस मत करो। कुछ क्षणों में मेरे देखते ही देखते मछली फिर पानी के ऊपरी सतह पर फुदकने लगी। मैं दुखी भाव से आगे की ओर बढ़ गया। मैं सोच रहा था– कितनी शुद्ध जगह में यह मछली है, बड़े दुःख की बात है।

अर्थ- साधकों! मैं इस अनुभव का अर्थ नहीं लिख रहा हूँ, यदि इस अनुभव का अर्थ लिख दूँगा तो मेरे ओर श्री माता जी के विषय में जानकारी हो जाएगी। आप अपने ज्ञान के द्वारा अर्थ निकाल लीजिए मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मैं इतना अवश्य लिखूँगा, मुझे श्रीमाता जी के विषय में इस जानकारी से दुःख हुआ।

त्रिनेत्री स्त्री

यह अनुभव मुझे योग निद्रा में आया, मुझे लगा मैं किसी सँकरे छिद्रनुमा जगह से नीचे की ओर गिर गया। नीचे गिरते ही ऐसा लगा कि मैं किसी ढलान पर गिरा हूँ। मैं अपने हाथों से भूमि को पकड़ रहा था, फिर भी भूमि मेरे हाथों में पकड़ में नहीं आ रही थी, मैं नीचे की ओर फिसलता जा रहा था। कुछ समय के बाद मैंने अपने को स्थिर कर लिया और खड़ा हो गया तब मैंने देखा– मैं किसी गन्दी नदी के किनारे खड़ा हूँ, उसका पानी अत्यन्त गंदा है। मुझसे थोड़ी दूरी पर कुछ स्त्री-पुरुष खड़े हुए थे। इनमें से कुछ स्त्री-पुरुष नदी में गिरते थे और गायब हो जाते थे, कुछ स्त्री पुरुष नदी के किनारे खड़े हुए नदी को गौर से देख रहे थे। वह सभी लोग डरे हुए से लग रहे थे, कुछ क्षणों बाद ये सभी स्त्री पुरुष नदी में गिरकर अदृश्य हो गए।

इसी प्रकार अन्तरिक्ष से स्त्री-पुरुष गिरते और फिसलते हुए नदी में गिरकर अदृश्य हो रहे थे। उसी समय मेरे अन्दर विचार आया– यह स्त्री और पुरुष नदी में क्यों गिर रहे हैं? तुरन्त आकाश से आवाज आई– *"ये स्त्री-पुरुष जो नदी में गिरकर समा गए, वे संसार में जन्म लेने के लिये आ गए हैं, जो नदी के किनारे खड़े हुए हैं वह भी संसार में कुछ समय बाद जन्म लेंगे"*। अब मेरी समझ में आ गया, यह नदी अपना ही मृत्युलोक है। मैंने अपने आप से कहा– "नहीं, मुझे इसमें (मृत्युलोक में) नहीं जाना है, मैं जिधर से आया हूँ उधर वापस जाऊँगा"। इतने में मैंने ऊपर की ओर देखा जिधर से मैं आया था, मेरे ऊपर एक

सँकरा सा छेद था, उस सँकरे से छेद के ऊपर की ओर तेज प्रकाश दिखाई दे रहा था, थोड़ा सा प्रकाश छेद से आकर मेरे ऊपर भी पड़ रहा था। मैं सोच रहा था– इस सँकरे छेद से ऊपर कैसे जाऊँगा? उसी समय मैं अपने आप ऊपर की ओर उठने लगा, उस सँकरे छिद्र में मेरा शरीर समाने लगा। मुझे आश्चर्य हो रहा था, छिद्र बिलकुल सँकरा होने के बावजूद मेरा शरीर बिना कष्ट के उस छिद्र से होता हुआ ऊपर चला गया। छिद्र पार करते ही मैं नई जगह पर पहुँच गया।

नई जगह पहुँचाने पर देखा– वहाँ पर सुनहरा तेज प्रकाश फैला हुआ था। उस समय मेरी दृष्टि दूरगामी हो गयी थी, मुझसे कुछ दूरी पर उसी तेज प्रकाश में एक स्त्री बैठी हुई दिखाई दी। वह स्त्री अत्यन्त खूबसूरत थी, लाल साड़ी पहने हुए थी, उसके खूबसूरत लम्बे-लम्बे बाल थे। वह स्त्री इतनी सुन्दर थी इसका वर्णन मैं यहाँ पर नहीं कर सकता हूँ। वह स्त्री निष्भाव से बैठी हुई मेरी ओर देख रही थी, उस सुन्दर स्त्री को देखते ही मैं आश्चर्य में पड़ गया, कि अत्यन्त सुन्दर तेजस्वी स्त्री यहाँ पर अकेली बैठी हुई मेरी ओर देख रही है। उसी समय मैंने देखा– उस स्त्री के तीन नेत्र हैं, उसका तीसरा नेत्र खुला हुआ है, यह नेत्र बहुत ही सुन्दर दिखाई दे रहा है मैं उस स्त्री के पास पहुँचा। उस समय मैं भी उसे निष्भाव से देख रहा था। मैंने अपने दोनों हाथों से उस स्त्री का मुँह बच्चों के समान पकड़ लिया, जैसे ही मैंने उसके मुँह को स्पर्श किया, उसी समय उसका तीसरा नेत्र अपने आप अदृश्य हो गया, मैं इस क्रिया से बड़ा दुखी हुआ। मैंने उस स्त्री से पूछा– आपका तीसरा नेत्र अदृश्य क्यों हो गया है? वह उत्तर में कुछ नहीं बोली, मुझे निष्भाव से देखे जा रही थी। तभी मुझे लगा– उसके मुँह को मैंने अपने हाथों से पकड़ रखा है, उसका स्पर्श मुझे अच्छा लग रहा था, उसका मुँह (दोनों गाल) की त्वचा अत्यन्त मुलायम हैं, ऐसा मुँह सामान्य स्त्रियों जैसा नहीं होता है। ऐसा विचार मेरे मन में आते ही वह स्त्री बोली– "बेटा! मैं तुम्हारी माँ हूँ"। उसके द्वारा यह शब्द कहते ही मुझे अपने अन्दर शर्म सी आ गई, उसका मुँह मेरे हाथों से अपने आप छूट गया, शर्म से हमारा सिर नीचे की ओर झुक गया। और मैं सोचने लगा– मुझे माँ के प्रति विकार क्यों आ गया, इससे बड़े दुःख की बात और क्या हो सकती है। मैंने फिर उसी स्त्री की ओर देखा, उसी क्षण उस स्त्री के शरीर से ढेरों स्त्रियाँ प्रकट होने लगी, ये सभी स्त्रियाँ त्रिनेत्रधारी थीं। अन्तरिक्ष से आवाज आई– *"विश्व की सम्पूर्ण स्त्रियाँ तुम्हारी माँ हैं"*। हमारा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- मैं नींद से जाग कर बैठ गया और सोचने लगा– मेरे अन्दर विकार क्यों आ गया? मुझे समझते देर नहीं लगी, मैं शिवरात्रि के अवसर पर सभी के हाथों का बना खाता रहता हूँ, इसलिए मेरे अन्दर विकार आ गया। मुझसे श्री माताजी ने पहले ही कहा था आप स्वयं अपने हाथों से खाना बनाकर

खाइए, सभी से दूर रहिए। तुम्हें शुद्धता की अत्यन्त आवश्यकता है। मैं जिस छिद्र से नीचे की ओर गया था फिर उसी छिद्र से ऊपर वापस आ गया था, अन्य स्त्री-पुरुष अपने आप अन्तरिक्ष से गिरते हुए दिखाई दे रहे थे। यह त्रिनेत्री स्त्री कुण्डलिनी शक्ति थी। मुझे अनुभव में दिखाया गया, जन्म लेने के समय किस प्रकार से स्त्री-पुरुष ऊपर से नीचे की ओर गिर रहे थे और नदी रूपी संसार में अदृश्य हो रहे थे। संसार में आकर मनुष्य अपने आप को भूल जाता है।

कुछ दिनों पश्चात मैंने ध्यानावस्था में देखा– लाल साड़ी पहने हुए सिर पर मणियों से युक्त मुकुट लगाए हुए माता कुण्डलिनी शक्ति बैठी हुई हैं, वह मेरी ओर देख रहीं हैं, उसके पीछे आग सी जल रही है।

यह दर्शन मुझे हृदय में हुआ है। अब हृदय में दर्शन शायद इसलिए हुआ क्योंकि कुण्डलिनी हृदय में आकर स्थिर हो चुकी है, धीरे-धीरे कर्मों का नाश भी होने लगा है, कर्मों के जलने का दृश्य भी जलती हुई आग के रूप में दिखाए दे रहा है। अब ज्यादातर अनुभव हृदय में आते हैं।

श्री माताजी की इच्छा

मैंने देखा– श्रीमाता जी चली आ रहीं हैं, उनके पीछे-पीछे और कभी-कभी बगल में शेर चल रहा है। श्रीमाता जी अपने हाथों में कोई वस्तु लिए हुए हैं, शेर को वह वस्तु डालती जार रही हैं, शेर उस वस्तु खा लेता है। इसी प्रकार श्रीमाता जी आगे की ओर चली जा रहीं हैं, एक स्थान पर खड़ी होकर उन्होंने ढेर सारी वस्तु शेर के सामने डाल दी, शेर पूँछ हिलाता हुआ उस वस्तु को खाने लगा, श्रीमाता जी वहीं खड़ी होकर देखने लगीं।

अर्थ- मेरे अन्दर विचार आया– श्रीमाता जी को शेर के लिए कुछ भी नहीं डालना चाहिए, शेर मन और क्रोध का प्रतीक होता है। मुझे दुःख हुआ आखिरकार श्रीमाता जी को क्या चाहिए जो यह सब कुछ कर रही हैं। यदि भविष्य में सतर्कता से काम न किया तो पतन होना निश्चित है।

गधे की सवारी

मैंने अप्रैल माह में ध्यानावस्था में देखा– मैं गधे पर सवार हूँ, गधा मुझे कहीं लिए जा रहा है, उसकी चलने की गति बहुत ही तेज है। मैंने बायीं ओर अपने दोनों पैर लटका रखे हैं, गधा दौड़ता भी जा रहा है और अपना मुँह मोड़कर मेरे पैरों के तलवे भी चाटता जा रहा है। मैं सोच रहा था– मेरे पैर के तलवे क्यों चाट जा रहा है? मगर गधा यही क्रिया करता रहा, पैरों के तलवे भी चाटता जा रहा है और दौड़ता भी जा रहा है। गधे के भागने की गति अत्यन्त तीव्र थी। मैं बोला– अरे धीरे-धीरे चलो, नहीं तो गिर जाओगे। गधा बोला– "नहीं, मैं नहीं गिरूँगा"। अनुभव समाप्त हो गया।

मैंने अपना अनुभव श्रीमाता जी को बताया तब श्रीमाता जी बोलीं– "आपकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है, क्योंकि गधा बुद्धिहीनता का प्रतीक होता है"। श्री माताजी ने इस अनुभव का अर्थ बहुत अच्छा निकाला है, मगर यह क्यों नहीं देखतीं हैं, कि गधा मेरे तलवे चाट रहा है और दौड़ता भी जा रहा है। मैं कामयाबी पर सवार हूँ, कामयाबी मेरे तलवे चाट रही है, भविष्य में मैं कहीं जाऊँगा। क्योंकि गधे पर बैठकर जा रहा हूँ वहाँ तीव्र गति से कामयाबी मिलेगी। लोग गधे को बुद्धिहीन कहते हैं, सच तो यह है गधा सबसे बड़ा बुद्धिमान व सहनशील जानवर होता है। स्वभाव से सीधा होने का अर्थ बुद्धिहीन होना तो नहीं है, मगर अब मेरा भविष्य निश्चित करेगा कि क्या होगा। एक अर्थ यह भी है कि भविष्य में मुझे परेशानियाँ आएँगी। गधे का अर्थ होता है– 'परेशानी या कष्ट'। मैं परेशानी पर सवार हूँ, परेशानियाँ मेरे तलवे चाट रहीं हैं, अर्थात भविष्य में मुझे परेशानियाँ अवश्य आएँगी, मगर वे परेशानियाँ मेरा कुछ नहीं बिगाड़ पाएँगी, बल्कि मैं उन परेशानियों पर सवार होकर तीव्रगति से आगे का मार्ग तय करता जाऊँगा।

यह जगह छोड़ दो

लगभग डेढ़ माह हुआ ध्यान में अक्सर अंतःकरण से आवाज आया करती थी– "कुछ समय के लिए इस जगह को छोड़ दो"। पहले मैंने इन शब्दों पर कोई ध्यान नहीं दिया, सोचा– शायद गहराई में पड़े हुए विचार निकल रहे है इसलिये ऐसे शब्द सुनाई दे रहे है। मगर ध्यानावस्था में यही शब्द बार-बार सुनाई देने लगे, तब मैं चिंतित सा हुआ, मेरे अन्दर से ऐसी आवाज क्यों निकलती है, अवश्य ही कोई कारण होगा। फिर मैंने संकल्प करके पूछा– "ये शब्द मेरे मन की उथल-पुथल है अथवा मेरे लिए यह निर्देश है?'

उत्तर मिला– *“क्या ध्यान में सुनाई देने वाले हर शब्द मन की ही उथल-पुथल होते हैं?”* मैं आश्चर्य में पड़ गया– प्रश्न का उत्तर प्रश्न से मिला। फिर अंतःकरण से आवाज आई– *“आपको यह जगह कुछ समय के लिए छोड़नी ही होगी”*। मैं कुछ नहीं बोला, ध्यान समाप्त करके सोचने लगा– क्या बात है, क्या होने वाला है समझ में नहीं आता है, बार-बार यही शब्द सुनाई देने पर मन खिन्नता सी होने लगी, कि मुझे और कहीं कुछ समय के लिए जाना चाहिए। मेरी समझ में नहीं आ रहा था मैं क्या निर्णय लूँ, निर्णय लेते समय यही आवाज आने लगती थी– *“तुम्हें यहाँ से जाना ही होगा”*। उसी समय मैं सोचने लगता था– अब मैं कहाँ जाऊँगा? अंतःकरण से आवाज आई –*“आपको यह अवस्था ध्यान द्वारा मिली है फिर भी आप घबराते हैं। आपके साथ यही होगा न कि आपको कष्ट मिलेंगे, कष्ट और त्याग के बिना कोई वस्तु प्राप्त नहीं होती है। योग का मार्ग वैसे भी कठिनाइयों और दुखों से भरा हुआ होता है, तुम्हें कठोर साधना करनी होगी”*। अब मेरे अन्दर आत्मविश्वास जागा और सोचा– “ठीक है, मैं यहाँ से कुछ समय के लिए चला जाऊँगा”। मैं जब भी ध्यान में बैठता, तब यही आवाज सुनाई देती थी– *“तुम्हें हर हालात में यह जगह छोड़नी होगी”*। फिर मैं ध्यान में संकल्प करके बैठ गया और पूछा– “मुझे यह जगह कितने दिनों के लिए छोड़नी होगी?”। अन्तरिक्ष से आवाज सुनाई दी– *“कम से कम तीन वर्ष के लिए छोड़ना है, इस अन्तराल में तुम किसी सत्संगी से पत्र व्यवहार या सम्पर्क नहीं करोगे, यहाँ तक कि श्री माताजी से भी सम्पर्क नहीं करोगे”*। मैंने पूछा– “कृपया आप मुझे बता दीजिये, मैं कहाँ चला जाऊँ?” अन्तरिक्ष से आवाज आई– *“उत्तर भारत”*। मैंने पूछा– “उत्तर भारत में किस जगह जाना है?” अन्तरिक्ष से आवाज आई– *“चाहो तो कुछ समय के लिए घूमने के तौर पर किसी आश्रम में जा सकते हो, मगर साधना के उद्देश्य से नहीं जाना, क्योंकि आपकी साधना किसी अन्य आश्रम में होने वाली नहीं है, और न ही आश्रम में इतना समय मिलेगा, कि तुम वहाँ पर साधना कर सको”*। मैंने पूछा– हे प्रभु! मैं कहाँ चला जाऊँ, मेरे रहने और खाने का इंतजाम कहाँ होगा? अन्तरिक्ष से आवाज आई– *“आप स्वयं नहीं जा रहे हो, बल्कि भेजे जा रहे हो, इसलिए भेजने वाला स्वयं इंतजाम करेगा, तुम चिंता करने वाले कौन होते हो? तुम्हें भविष्य में साधना के बल पर ढेर सारे कार्य करने हैं”*। मैंने पूछा– “भविष्य में मुझे क्या-क्या कार्य करने हैं? अन्तरिक्ष से आवाज आई- *“अभी जानने की कोशिश न करो, भविष्य स्वयं तुम्हारे सामने होगा। हाँ, कठोर साधना के समय तुम्हें बहुत से शारीरिक और मानसिक कष्ट उठाने होंगे, उसके लिए हमेशा तैयार रहो। बिना कष्ट भोगे साधना नहीं होती है, जितना ज्यादा कष्ट उठाओगे, साधना में उतनी ही ज्यादा सफलताएँ मिलेगी”*।

फिर कई दिनों तक मैं सोच में बना रहा कि क्या किया जाए,कुछ समझ में नहीं आ रहा है। उस जगह की कहाँ तलाश करूँ,जहाँ पर मुझे जाना है? फिर कुछ दिनों बाद मैं ध्यान में संकल्प करके बैठ गया और पूछा– प्रभु, कृपा करके मुझे बता दो जिस जगह पर जाना है? अन्तरिक्ष से आवाज आई– *"तुम्हारी सहायता मैं करूँगा, निश्चिन्त हो जाओ, तुम्हें अपने पिताजी की कृपा पर या पिताजी द्वारा इंतजाम करा दिया जाएगा, मगर एक बात का ध्यान रखना, तुम बहुत कम बोलोगे और ढेर सारी बातें अकारण सुननी पड़ सकती हैं"*। मैंने पूछा– मुझे कब जाना होगा? अन्तरिक्ष से आवाज आई– *"अप्रैल के अन्तिम दिनों में जाना है, अब तुम्हारी साधना यहाँ पर नहीं होगी जैसी साधना तुम करना चाहते हो"*। ये सभी बातें एक-डेढ़ माह में मालूम हुई थीं।

इधर श्रीमाता जी से मैं कैसे कह सकता था कि मैं यहाँ से जाना चाहता हूँ। आश्रम छोड़ने का स्थूल कारण तो कुछ भी नहीं बनता था। मैं स्वयं चिन्तित हो रहा था, क्योंकि श्री माता जी मुझसे बहुत प्यार करतीं थी, उस प्यार को देखकर मेरे अन्दर साहस नहीं हो पा रहा था, कि मैं उनसे कैसे कह दूँ– "श्रीमाता जी, मैं आश्रम छोड़कर जा रहा हूँ"। हाँ! मैंने कुछ समय ऐसा देखा है– मेरी साधना के लिए समय और जगह की उन्हें पहले जैसी कोई परवाह नहीं रह गयी थी। इधर आश्रम में लोग आकर रहने लगते थे, इससे मुझे कभी-कभी साधना में अवरोध भी होता रहता था। मैंने देखा– मेरा अपमान हमेशा होता रहता है, उसका कोई हल भी नहीं था, इसलिए आश्रम से हमारा मन ऊबने सा लगा था। जब से आश्रम में साधना करने के लिये आया हूँ, तबसे किसी न किसी की अकारण सुनता ही रहता हूँ। फिर भी मेरे लिए कहा जाता है कि आनन्द कुमार कुछ काम नहीं करता है, अर्थात आश्रम का काम नहीं करता हूँ। यही बात मुझसे कई लोगों ने कही, मगर मैं सुनकर टाल देता था, क्योंकि मुझे अपनी साधना करनी थी। इसलिये मेरी मजबूरी का लाभ उठाया जा रहा था।

आजकल जलगाँव से एक लड़का कुछ समय के लिये आश्रम में रहने के लिए आया हुआ था, वह आश्रम से श्रीमाता जी के पास रोजाना जाया करता था। उसने सात अप्रैल को मुझे बताया– आज मुझे साइकिल के कारण बहुत डाँट पड़ी है, अण्णा जी क्रोधित हो रहे थे साइकिल यहाँ (मिरज में) मत रखा करो, इसे आश्रम में रखो। उस समय श्रीमाता जी बोलीं– "आनन्द कुमार कुछ काम नहीं करता है, काम के लिए मना कर देता है"। शेखर कुलकर्णी से कहा– "क्या मैं नौकर हूँ, चारपाई भी उसने नहीं बनवाई, गमले ले जाने के लिए उसने मना कर देता है, इसलिए साइकिल नितिन को काम के लिए दी है"। (नितिन, यही लड़का जो जलगाँव से आश्रम में आया है)। यह सब सुनकर मैंने अपने आप में सोचा– "आनन्द कुमार!

लानत है तुझ पर, सिर्फ खाने के लिए इस आश्रम में रुका हुआ है"। मुझ पर श्रीमाता जी ने झूठे आरोप लगाए, गुरु और योगी होकर इतना बड़ा झूठ बोलती हैं। मैंने तुरन्त निर्णय लिया, मैं अभी आश्रम छोड़ता हूँ। नितिन को एक पत्र लिखकर श्रीमाता जी के लिए दे दिया, वह पत्र लेकर श्रीमाता जी के पास गया और मेरा पत्र श्री माता जी को दे दिया। उत्तर में फिर श्रीमाता जी ने मुझे एक पत्र लिखा– "आपको जाना है तो जाओ, मन कुछ परेशान हुआ तो कुछ कह दिया होगा"। मैंने फिर एक पत्र श्रीमाता जी के लिये लिखा और नितिन द्वारा श्रीमाता जी के पास भेजा। श्रीमाता जी ने पत्र का जबाब दिया, जो अति संक्षेप में इस प्रकार है– "हमारी कोई इच्छा नहीं है कि आप आश्रम छोड़कर जाएँ, आप अपनी मर्जी से जा रहें हैं"। मुझे इस पत्र पर बहुत क्रोध आया, मेरी बेइज्जती भी की जा रही है और यह कहा जा रहा है कि हमारी कोई मर्जी नहीं है आप अपनी मर्जी से जा रहे हैं।

उस समय मेरे पास घर जाने के लिए किराया नहीं था तथा कुछ लोगों के यह कहने पर मैं रुक गया– यदि आप अभी चले जाएँगे तो अन्य साधक क्या सोचेंगे! श्रीमाता जी ने कुछ कह दिया होगा, श्रीमाता जी की बदनामी होगी, तथा जब तक आश्रम में व्यवस्था न हो जाएँ तब तक रुके रहिए, अचानक चले जाने से लोग सोचेंगे, आनन्द कुमार क्यों चला गया? यह बात मुझे उचित लगी, मुझे अचानक नहीं चले जाना चाहिए। यह बात मुझे वाघमारे जी (श्री माता जी के शिष्य) ने कही थी। इसलिए 15-20 दिनों के लिए रुक गया। अक्षय तृतीया (24 अप्रैल) के बाद चला जाऊँगा। सोचा, जब जा ही रहा हूँ तो झगड़ा करके क्यों जाऊँ, आराम से जाऊँ इसलिए चुप हो गया। बहुत से साधकों ने मुझसे पूछा– "आप क्यों आश्रम छोड़कर जा रहे हैं?" मैं बोला– अपनी मर्जी से जा रहा हूँ। श्रीमाता जी का साधकों से कहना था– "आनन्द कुमार दो-चार महीने में आ जाएँगा, उसके घर में उसके सामने कोई ऐसी बात हो जाएँगी, वह फिर यहाँ पर आ जाएगा।"

मिरज (महाराष्ट्र) से चलते समय श्री माता जी ने मुझसे कहा– "तुम दो चार महीने के लिये जहाँ भी चाहो घूम आओ, फिर घूम के यहाँ आश्रम में आ जाना, क्योंकि तुम्हारी घर में तो साधना नहीं होगी"। मैं श्रीमाता जी की हाँ में हाँ मिलाता रहा, क्योंकि वह मेरी गुरु हैं। अब देखना है कि मैं कितने दिनों बाद आश्रम में रहने के लिए वापस आता हूँ। मेरी साधना घर में नहीं होगी अथवा अन्य कोई घटना घटेगी कि नहीं घटेगी, यह मेरा भविष्य बताएगा। श्रीमाता जी हमेशा सोचती रहीं हैं कि आनन्द कुमार की घर में बनती नहीं है साधना के लिए यहाँ पर रहना उसकी मजबूरी है। इसलिए श्रीमाता जी का गुणगान गाने वाले साधक मुझे आए दिन कुछ-न-कुछ सुनाते रहते थे। जब मैं श्री माताजी से इस बात को कहता था, तब वह

मुझे ही डाँटने लगती थी और कहती– “पता नहीं आजकल लोग कितनी ईर्ष्या करने लगें हैं, शिकायत करने चले आते हैं। थोड़ा बहुत किसी ने कुछ कह भी दिया तो कुछ सुन नहीं सकते हैं।” मैं चुपचाप सुनकर वापस आ जाता था।

मैं यहाँ पर कुछ बातें बताना चाहता हूँ– आश्रम का सम्पूर्ण कार्य मैं ही करता था, जैसे– पेड़ों को पानी देना, घास निकालना, स्लेप या दीवार पर पानी देना (जब नई दीवार बनती थी), आदि। फिर भी समझ में नहीं आता है कि मुझसे श्रीमाता जी क्या काम लेना चाहतीं थीं, क्योंकि वह सदैव कहतीं रहती थीं– “आनन्द कुमार काम नहीं करता है”, ये सब मेरे सामने नहीं कहतीं थीं, दूसरे साधकों से कहतीं थीं।

श्री माता जी को मेरी साधना की सफलता पर भी विश्वास नहीं होता था। उन्होंने मुझसे कई बार कहा– “आनन्द कुमार इतनी जल्दी अगली सफलता साधना में नहीं मिलती है जितना तुम समझते हो”। कई बार उन्होंने मेरी अवस्था पर ही प्रश्न चिन्ह लगा दिये थे। मैंने श्री माता जी को एक बार बताया– “मेरी कुण्डलिनी ब्रह्मरंध्र द्वार से मुड़कर भृकुटी तक आ गयी है। इस पर श्रीमाता जी नाराज सी हो गयी और वह बोली– “आप जैसा समझते है ऐसा नहीं होता है, कुण्डलिनी इतनी जल्दी उलट कर भृकुटी पर नहीं आती है। जबकि मैं ध्यानावस्था में देखा करता था मेरी कुण्डलिनी उलट कर भृकुटी पर आ गयी है। एक बार जलगाँव का लड़का सचिन पाटिल आश्रम में आया हुआ था, उसने मुझसे कहा– “भाई साहब, आप सदैव भ्रम में रहते है, आप अपनी साधना को बढ़ा-चढ़ा कर बोलते रहते है”। मेरे पूछने पर उसने बताया– ऐसा मुझसे श्री माता जी ने बताया है। वह बोल रही थी– “आनन्द कुमार कह रहा था मेरी कुण्डलिनी उलट कर भृकुटी पर आ गयी है, मगर ऐसा सत्य नहीं है। कुछ भी बोलता रहता है।” मैं सचिन पाटिल की बात सुनकर दंग रह गया।

श्री माता जी ने मुझसे एक बार कहा– “आनन्द कुमार, आपको यहाँ आये हुए बहुत समय हो गया है, आप अभी तक हिन्दी ही बोलते हैं। आपको मराठी भाषा बोलनी चाहिये, अभी तक आपने मराठी बोलना क्यों नहीं सीखा है। अब आपको मराठी बोलना चाहिए”। मैं बोला– “श्री माता जी, मराठी भाषा बोलना नहीं आती है, मैं मराठी भाषा की पुस्तकें पढ़ता रहता हूँ”। श्री माता जी बोली– “यहाँ रहना है तो मराठी बोलना सीखना होगा”। मैं चुपचाप बैठा हुआ सुनता रहा, कुछ बोल भी नहीं सकता था। मैं दुखी होकर आश्रम आ गया और सोचने लगा– श्री माता जी ने ऐसा तो किसी से नहीं कहा है, फिर इन्होंने मुझसे ऐसा क्यों कहा, मेरी समझ से बाहर की बात है। फिर मुझे मराठी बोलने के लिये कई बार कहा गया, मगर मैं सुनता रहता था।

एक बार आश्रम में जलगाँव का रहने वाला श्री माता जी का शिष्य आया, उसे श्रीमाता जी ने आश्रम में मेरे साथ रहने के लिये कह दिया। वह साधना नहीं करता था, मेरी और उसकी बिलकुल नहीं बनती थी। एक दिन उसने मुझसे कहा– "आनन्द कुमार मुझसे मराठी में बात किया करो, हिन्दी में बात मत किया करो, यहाँ हिन्दी नहीं बोली जायेगी। उसने कई साधकों से कहा– "आनन्द कुमार से कोई हिन्दी में बात नहीं करेगा, मुझसे माता जी ने कहा है"। मैं सब कुछ समझ गया,अब मेरा यहाँ रुकना मुश्किल है, यहाँ पर अब हिन्दी, मराठी भाषा की भी बात होने लगी। मैंने इस विषय में किसी से नहीं कहा, मैं चुपचाप सहता रहा, मैं समझ गया अब मैं बहुत दिन यहाँ ठहर नहीं पाऊँगा। अब आजकल ये साधक पूना में रहता है, ऐसे विरोधी साधक के साथ मैंने बहुत दिन बिताये। वह किसी न किसी प्रकार से मुझे परेशान करता रहता था। यह बात मैंने श्री माता जी को बताई थी, वह कुछ नहीं बोली। फिर मैंने कुछ समय बाद आश्रम छोड़ देने का निर्णय कर लिया था।

शिवरात्रि उत्सव के बाद मैंने आश्रम में ही श्रीमाता जी से एकान्त में पूछा– "श्री माताजी, अब आपका मेरे बारे में क्या विचार है? मैं आपसे स्पष्ट जानना चाहता हूँ। मैं जब आश्रम में आया था उस समय मैंने आपसे स्पष्ट नहीं पूछा था। तब आपका विचार था कि मैं आश्रम में रहकर पूर्णता प्राप्त करूँ।" श्री माता जी बोली– "तब हमारा विचार था, आप यहाँ रहकर पूर्णता प्राप्त करें। अब चाहें तो आप रुक सकतें हैं, यहाँ के लोग आपसे प्रेम करते हैं, मेरे बाद भी आपका रुकना सम्भव हो सकता है, आपकी जैसी इच्छा हो वैसा करें। अभी साधना करने के लिए हम आपकी झोपड़ी ठीक करा देते हैं, कुछ समय के बाद आप झोपड़ी में रहिए, उसी में आप खाना बनाइए। मैं आपको उसमें लाइट नहीं दे पाऊँगी, क्योंकि झोपड़ी में आग लगने का खतरा रहेगा। मैं सोचतीं हूँ कि आपके पिताजी 500 रु० झोपड़ी मरम्मत के लिए दे दें तो अच्छा रहेगा, बकाया मैं स्वयं लगा दूँगी। आपको इस समय साधना के लिए बड़ी परेशानी होती होगी। आपके लिए एकान्त में जगह नहीं होने के कारण साधना नहीं हो पाती है"। श्रीमाता जी फिर बोलीं– "मुझसे कुछ लोगों ने कहा है, आनन्द कुमार कह रहा था– "मैं उत्तरकाशी जाऊँगा"। मैंने उनलोगों से कहा– "आनन्द कुमार शौक से जाएँ, हम आश्रम में 100-200 रु. ज्यादा देकर कोई नौकर रख लेंगे, वैसे भी हम आपको 300 रु. देते हैं। आपके जाने से मुझे क्या फर्क पड़ेगा।"। यह शब्द सुनकर मुझे बड़ा दुःख हुआ। मैंने श्रीमाता जी से कुछ नहीं कहा, मगर मैं समझ गया कि वह क्या कहना चाहती हैं। मैं आश्रम में रहता हूँ, झोपड़ी रिपेयरिग के लिए 500 रु० मेरे पिताजी से लिये जाएँगे। मेरी पिताजी से नहीं बनती है, श्री माता जी को अच्छी तरह मालूम है। उधर ध्यान में अक्सर सुना करता था– *"आनन्द कुमार,*

यह जगह छोड़ दो, यहाँ के लोग आपकी बड़ी बेइज्जती करते हैं"। यह आवाज सदा अन्तरिक्ष से आया करती थी।

हमारी जब कुण्डलिनी स्थिर हो गयी तब मुझे अपने आप में लगा– मेरे अन्दर कुछ विशेषता दिखाई नहीं दे रही है। मैं तो एक साधारण पुरुष की भाँति हूँ। मैं अपनी आंतरिक शक्ति को आजमाना चाहता हूँ ताकि मुझे जानकारी हो, मेरे अन्दर शक्ति है या नहीं है। मगर शक्ति आजमाने के लिए योग्य पात्र भी चाहिए ताकि उसका भी भला हो जाय। मैं सोचने लगा मुझे अपनी शक्ति कैसे आजमानी चाहिए, फिर सोचा– मैं किसी नए साधक की कुण्डलिनी उठाऊँगा, परिपक्व अवस्था वाले साधक की तो कुण्डलिनी सभी उठाते हैं या उठा सकते हैं। मैं नए साधक की कुण्डलिनी उठाना चाहता हूँ, जिसने बिल्कुल साधना न की हो, उसे किसी प्रकार की क्रिया या परेशानी भी नहीं होने दूँगा। मुझे कुण्डलिनी उठाने के लिए दो सुपात्र जलगाँव में दिखाई दिये, यह दोनों सुपात्र लड़कियाँ थी। मैंने सोचा– जब अपने घर वापस कानपुर के लिये जाऊँगा तब यह कार्य करूँगा। इन दोनों लड़कियों में एक लड़की को ज्यादा सुपात्र समझा। फिर मिरज आश्रम में रात्रि के समय ध्यान पर बैठा। उस लड़की के सूक्ष्म शरीर से सम्पर्क किया, फिर उसके सूक्ष्म शरीर से कहा–आप 15-20 मिनट के लिए ध्यान पर बैठा करें। फिर वह लड़की अपने आप ध्यान पर बैठने लगी, उस समय वह लड़की शायद बी-टेक. कर रही थी। यह प्रयोग मेरा महत्व पूर्ण था, मुझे किसी ने नहीं बताया था और न ही मैंने किसी से पूछा था कि मैं उस लड़की से किस प्रकार से सम्पर्क स्थापित करूँ, उसका सूक्ष्म शरीर भी मेरी बात मान ले। फिर मैंने सम्पर्क करके स्वयं अपने ज्ञान से पूछा– मैं इस लड़की (जलगाँव की) को कैसे सन्देश दूँ? मेरे ज्ञान ने मुझे बता दिया, फिर मैंने वैसा ही किया। उस लड़की का सूक्ष्म शरीर मेरी बात मान गया, फिर वह लड़की अपने आप ध्यान पर बैठने लगी। मिरज शहर से जलगाँव शहर की दूरी शायद 700 कि. मी. होगी। मगर आध्यात्म में स्थूल दूरी का महत्व नहीं होता है।

मेरे पास घर से पत्र आया, घर में शादी थी इसलिए 20 अप्रैल तक बुलाया हुआ था। मुझे मिरज से 19 अप्रैल को निकलना था, मगर जलगाँव रुकने के कारण मैंने 17 अप्रैल को रुकने का निश्चय किया। अब मैं घर जा रहा था इसलिए कविता दीदी से मिलना जरूरी समझा। 15 अप्रैल को मैं उनसे मिलने के लिये उनके घर मालगाँव पहुँच गया, वहाँ उनके पास बैठकर पूरे साढ़े सात घण्टे तक बराबर बातचीत करता रहा। बातें समाप्त होने का नाम नहीं ले रहीं थी। फिर कविता दीदी बोलीं– "क्या आपको पूना की साधिका का पत्र मिला है?" मैं बोला– "मुझे नहीं मिला है"। दीदी बोली– "उसने आपके पास मिरज में

तीन पत्र डाले हैं, वह पत्र किसी के पास होंगे शायद वह आपके पास नहीं पहुँचा पाए"। उन पत्रों में लिखा है– "मेरे ऊपर जो पीड़ा है कृपया आप दूर कर दीजिए, माता जी कहती हैं आपके पिछले जन्मों का फल है। यह समाप्त होगा या नहीं?" दीदी फिर बोलीं– "आप घर जा रहे हैं तो पूना रुकते हुए जाइए, आप उससे मिल लेना उसे आपसे राहत मिलेगी, आप उसकी कुण्डलिनी उठा दीजिए। वह बहुत सीधी-साधी भी हैं"। मैं दीदी से बोला– "मैं प्रयत्न करूँगा अगर रुक सका तो रुक जाऊँगा"। मैंने कविता दीदी को नमस्कार किया और मिरज के लिए चल दिया।

शाम के समय नितिन माता जी के घर से आश्रम आ गया था क्योंकि वह दिन में माता जी के पास जाया करता था। मैंने नितिन से पूछा– श्री माता जी मेरे सम्बन्ध में क्या बातें किया करती हैं। वह बोला– जब आपने घर जाने का निश्चय किया कर लिया तब माता जी व अन्य साधकों ने मुझे बहुत डाँटा और कहा– "ये बातें आनन्द कुमार से नहीं कहनीं चाहिए थीं"। और यह भी कहा- "अब कोई भी बात आनन्द कुमार से नहीं कहना"। वह बेचारा लड़का था इसलिए डर गया। फिर कोई भी बात उसने मुझे नहीं बतायी, मेरे पूछने पर उस लड़के ने साफ मना कर दिया। जब मैंने उसे काफी समझाया और कहा– मैं तुम्हारे कारण नहीं जा रहा हूँ बल्कि मुझे तो यहाँ से जाना ही था, तुम मेरे जाने का कारण अवश्य बन गए। हम किसी से कुछ नहीं कहेंगे तुम मुझे बता दो। फिर कुछ क्षणों तक सोचने के बाद बताया– आज वाघमारे जी (श्रीमाता जी के एक शिष्य) श्रीमाता जी से पूछ रहे थे, आनन्द कुमार चला जाएगा फिर वापस आएगा कि नहीं आयेगा, तब तक आश्रम में कौन रहेगा? श्रीमाता जी बोलीं– आनन्द कुमार नवम्बर-दिसम्बर तक वापस आ जाएगा, उसके साथ अवश्य कोई घटना घटेगी जिसके कारण उसे यहाँ आना पड़ेगा। उसे साधना के लिए एकान्त चाहिए, वह एकान्त किसी आश्रम में नहीं मिलेगा। इसलिए वह यहाँ पर फिर आ जाएगा, तब तक कोई नौकर रख देंगे। मैं नितिन के शब्द सुनकर दंग रह गया, फिर मैंने सोचा– क्या सचमुच नवम्बर-दिसम्बर में मुझे आश्रम में वापस आना पड़ेगा, अब मेरा भविष्य बताएगा कि मैं कब आश्रम में आऊँगा।

इसी समय एक-दो दिन के लिए नितिन के पिताजी आश्रम में आए हुए थे। वह भी जलगाँव जाने वाले थे, सोचा हम दोनों 17 अप्रैल को सुबह जलगाँव के लिए निकलेंगे। मैं और नितिन के पिताजी 16 अप्रैल की शाम को अपना सामान लेकर मिरज आ गए। रात्रि के समय हम दोनों एक साधक के घर में रुक गये। सुबह 6 बजे श्री माता जी के घर उनसे मिलने के लिये गया, चलते समय श्री माता जी हँसकर मुझसे बोलीं– "जल्दी वापस आ जाना"। मैंने कोई जबाब नहीं दिया। फिर कुछ क्षणों के बाद बोला– "सत्य तो

यह है मैं यहाँ से नहीं जा रहा हूँ, मुझे यहाँ से भेजा जा रहा है, जब ईश्वर की कृपा होगी, तब आ जाऊँगा"। इतने में अण्णा जी बोले– "पत्र व्यवहार करते रहना"। मैं बोला– "पत्र अवश्य डालता रहूँगा"। मिरज से चलते समय दुःख अवश्य था, पहले जब मिरज आया था तब कितना प्रसन्न था। जब मैं उच्चावस्था को प्राप्त हो गया हूँ, तब मैं दुखी होकर जा रहा हूँ, क्योंकि माहौल ही ऐसा बन गया है। यही सोचकर श्रीमाता जी के घर से कदम आगे की ओर बढ़ा दिए। मुझे विश्वास था जो शक्ति मुझे आश्रम छोड़कर चले जाने की प्रेरणा दे रही है वही शक्ति अवश्य आगे भी मार्गदर्शन करेगी।

दोपहर 12 बजे ट्रेन पूना पहुँची। प्लेटफार्म पर पूना के साधक बहन-भाई मुझसे मिलने के लिये आए। सभी ने पूछा– "क्या बात हो गयी भाई साहब! आप अचानक चल दिए"। मैं बोला– हाँ, अवश्य कोई बात हुई होगी इसीलिए तो घर वापस जा रहा हूँ, अब मैं नहीं आऊँगा"। सभी से थोड़ी देर तक क्रमशः बातें हुईं। पूना की एक साधिका को ध्यान में अच्छी स्थिति प्राप्त हुई है, वह बोली– "भाई साहब,अक्षय तृतीया पर आपके सामने ध्यान पर बैठने की मेरी बहुत इच्छा थी, मगर आप उससे पहले ही चल दिए"। प्लेट फार्म से 20 मिनट के बाद ट्रेन चल दी, मैंने सभी को नमस्कार किया। तब तक ट्रेन प्लेटफार्म छोड़ने लगी थी। रात्रि के समय जलगाँव शहर पहुँचा। सुबह 18 तारीख को मैंने उस लड़की के पास सन्देश भेजा– उस लड़की से कहना आनन्द भैया आएँ हैं, आप से मिलना चाहते हैं। उस लड़की का सन्देश आया– "मैं 12 बजे दोपहर को आऊँगी"। मैं जलगाँव में पहले भी नितिन के घर ठहरता था, इसलिए मैं अबकी बार भी नितिन के घर ठहरा हुआ था। दोपहर को वह लड़की कालेज से सीधी मेरे पास आ गयी। मेरी उससे ध्यान के विषय में बातें हुई, वह ध्यान करने के लिए तैयार पहले से ही थी। हम दोनों नितिन के घर के बगल वाली साधिका के घर में चले गए, क्योंकि उस साधिका के घर में एकान्त था। वह लड़की बोली– "मैं 15 दिनों से 20-25 मिनट के लिए ध्यान पर रोजाना बैठती हूँ। हाँ भैया, मेरी बहुत इच्छा है कि मैं साधना करूँ, अब मैं रोजाना ध्यान पर बैठा करूँगी।" मैंने अपनी दृष्टि पैनी की, ताकि उस लड़की के विषय में अन्दर तक की जानकारी हो सके। मैंने देखा– वास्तव में इस लड़की की साधना करने की बड़ी इच्छा है। मैं बोला– क्या मेरे सामने आप ध्यान पर बैठेंगी। वह बोली– आपके सामने ध्यान पर बैठना मेरे लिये सौभाग्य होगा। हम दोनों आसन लगाकर ध्यान पर बैठ गए, पहले मैंने उसे मन के विषय में समझाया। वह लड़की बोली– "मेरे मन में कोई विचार नहीं है", फिर वह लड़की ध्यान करने लगी। मैंने आदिशक्ति माता कुण्डलिनी से प्रार्थना की, आप इसके शरीर में जाग्रत हो जाइए। फिर मैंने वैशाली (इस लड़की का नाम) के सिर पर हाथ रखकर जोरदार ओंकार किया और कुण्डलिनी जाग्रत करने का संकल्प

किया। फिर मैं शान्त होकर ध्यानस्थ हो गया। मैंने अपनी दिव्य दृष्टि से देखा– उसकी कुण्डलिनी थोड़ी सी हिली है और उसने अपना मुँह थोड़ा सा ऊपर की ओर किया। फिर मैंने अपना ध्यान तोड़ दिया, तो मैंने देखा– वैशाली शान्त भाव से चुपचाप ध्यान पर बैठी हुई है, उसे किसी प्रकार की वाह्य क्रिया नहीं हो रही थी। हम भी यही चाहते थे कि इसे किसी प्रकार की वाह्य क्रिया न हो तथा मैंने निश्चय किया इसे वाह्य क्रिया नहीं होने दूँगा। उसने आधे घण्टे का ध्यान किया, फिर आँखे खोल दी। तब मैंने उससे पूछा–"क्या आपको कोई अनुभव आया?" वह बोली– "हाँ, मैंने देखा है कि मैं बहुत हल्की हो गई हूँ, मैं हवा में उड़ रही हूँ,अन्तरिक्ष में उल्टा-पुल्टा हो रहीं हूँ। उस समय बहुत अच्छा लग रहा था।" मैं बोला– "आपका अनुभव अच्छा है। मैं जो चाहता था बिलकुल वैसा ही हुआ।" मैंने उससे कहा– "आप कल सुबह आ जाना"। वह लड़की अपने घर चली गई।

कुण्डलिनी ऊर्ध्व की

दूसरे दिन वह लड़की कालेज से सीधे मेरे पास सुबह दस बजे आ गई। कुछ समय बाद हम दोनों ध्यान पर बैठ गए, मैंने विशेष तरह का संकल्प करके शक्तिपात किया। वह लड़की आधे घण्टे तक ध्यान में बैठी रही। मैं समझ गया था कि मुझे कामयाबी मिल चुकी है, क्योंकि मैं अपनी दिव्यदृष्टि से सब कुछ देख रहा था। ध्यान टूटने के बाद उसने बताया– "एक नाग कुण्डली मारे फन ऊपर उठाए हुए, मेरे मुँह के सामने फूँफकार मार रहा था, मगर मुझे डर नहीं लग रहा था। कुछ समय बाद लगा, मैं एक हवन-कुण्ड देख रही हूँ। वह हवन-कुण्ड बहुत अच्छा बना हुआ है, उसमें आग जल रही है। वहीं पर एक स्वर्ण कलश रखा हुआ है, उस कलश के मुँह पर नारियल रखा हुआ है, उस नारियल के आसपास आम के पत्ते जैसे पत्ते हैं। कलश के चारों ओर प्रकाश फैला हुआ है। मैं कल रात्रि ध्यान पर बैठी हुई थी, मुझे लगा– मेरा पेट अन्दर की ओर खिंचा जा रहा है।"

अर्थ- मैं उस लड़की से बोला– "आपको जो नाग दिखाई दे रहा था, वह आपकी कुण्डलिनी शक्ति थी। जो आपको हवन-कुण्ड व कलश दिखाई दिया है, वह आपका मूलाधार चक्र का क्षेत्र है। पेट का पीछे की ओर जाना बहुत अच्छी बात है, इसे उड्डियान बन्ध कहते हैं। अब आप अपने घर जाइए फिर शाम को आ जाना।"

दिव्य दृष्टि खोली

शाम के समय वैशाली अपने पिता जी के साथ आ गयी, कुछ समय बाद हम दोनों ध्यान पर बैठ गए, अन्य सभी को कमरे से बाहर निकाल दिया। मैंने फिर उसे शक्तिपात करना चाहा, उस समय मैंने सोचा– क्यों न इसकी कुण्डलिनी थोड़ी सी ऊर्ध्व कर दी जाए। वैशाली ध्यान पर बैठी हुई थी, मैंने शक्तिपात कर कुण्डलिनी को ऊपर की ओर उठाने का प्रयास किया, तब कुण्डलिनी थोड़ी सी ऊपर की ओर आ गयी, मैंने दिव्यदृष्टि से देखा– उसकी कुण्डलिनी नाभिचक्र तक आ गयी थी। फिर मेरे मन में आया– इस लड़की का अगर तीसरा नेत्र खोल कर देखा जाए तो क्या अभी से तीसरा नेत्र खुल सकता है अथवा नहीं खुल सकता है। ऐसा सोच कर उसके मस्तक पर जबरदस्त शक्तिपात किया, फिर मैं स्वयम् ध्यान करने लगा। आधे घण्टे के बाद मैं ध्यान से उठकर बाहर आ गया, बाहर सभी लोग बैठे हुए थे। कुछ क्षणों बाद वह लड़की भी आ गयी, फिर उसने अपने अनुभव सुनाए,वह बोली– "अबकी बार मुझे नाग फिर से दिखाई दिया था। उसके फन के ऊपर मणि चमक रही थी, उस मणि का प्रकाश बहुत तेज था। कुछ क्षणों तक मैं उसे देखती रही, फिर वह नाग अदृश्य हो गया। कुछ क्षणों के बाद वह नाग फिर से दिखाई देने लगा, उसके फन के ऊपर मणि चमक रही थी, उस मणि का प्रकाश बहुत ही तेज था। थोड़े समय तक मैं उसे देखती रही फिर वह नाग अदृश्य हो गया। कुछ क्षणों के बाद वह नाग फिर दिखाई दिया, वह नाग फन उठाए हुए खड़ा था, अबकी बार उसके फन पर अनेकों मणियाँ चमक रहीं थीं, मणियों का प्रकाश ऐसा था जैसे ढेरों सूर्य निकल आए हों, उन मणियों के प्रकाश से आसमान प्रकाशमान हो रहा था। इसके बाद महसूस हुआ, आप मेरे मस्तक पर शक्तिपात कर रहे हैं, फिर मैं ध्यान में डूब गयी। मैंने देखा– मस्तक पर मेरे एक आँख खड़े आकार में हैं वह आँख धीरे-धीरे खुलनी शुरू हो गयी है, कुछ क्षणों में वह पूरी तरह से खुल गयी। उसके अन्दर से बाहर की ओर प्रकाश की किरणें निकल रही थी, ये किरणें आगे चलकर प्रकाश के रूप में फैलनी शुरू हो गईं, उसी प्रकाश में शिरडी के साईं बाबा दिखाई दिए, वे मुझे आशीर्वाद दे रहे थे।" मैं उस लड़की से बोला– यह अनुभव अभी किसी को नहीं बताना।

मेरे लिए यह एक बड़ी कामयाबी थी, इस लड़की ने साधना नहीं की थी, फिर भी मैंने इसका तीसरा नेत्र खोल दिया था। क्योंकि मैंने ऐसा किसी पुस्तक में नहीं पढ़ा है कि बिना साधना किये शक्तिपात द्वारा तीसरा नेत्र खोल दिया जाए, मुझे अपनी सफलता पर अन्दर से बहुत खुशी हो रही थी। अब मुझे अपने पर यकीन हो गया कि मैं शक्तिशाली हूँ। ऐसा कार्य करने की विधि मुझे किसी ने बताई नहीं थी स्वयं अपने ज्ञान के द्वारा सीखी थी। अब मुझे यकीन हो गया था, कि मैं मार्गदर्शन कर सकता हूँ।

मुझे अपने घर भी आना था, मुझे भुसावल से ट्रेन पकड़नी थी, भुसावल तक छोड़ने के लिए दो साधक भी मेरे साथ आए थे। मैंने सोचा– मेरी घनिष्ठता उन दोनों साधिकाओ से थी जिनके घर में ठहरा करता था, मगर अध्यात्मिक सुपात्रता के लिए वैशाली का नाम आया। इसे पूर्वकाल के अच्छे कर्म कहते हैं। यदि यह लड़की साधना करेगी तो कुण्डलिनी ऊर्ध्व बनी रहेगी, वरना फिर मूलाधार चक्र में सुषुप्त अवस्था में चली जाएगी। मैंने इस लड़की पर जो प्रयोग किए वे सारे प्रयोग पूर्ण रूप से सफल रहे क्योंकि कुण्डलिनी बिलकुल आसानी से जागृत होकर ऊर्ध्व हो गयी थी। सबसे जटिल कार्य था– जिस व्यक्ति ने साधना बिलकुल न की हो, उसका तीसरा नेत्र खोल दिया जाए। मैं इस कार्य में सफल रहा, क्योंकि उस लड़की की दिव्य-दृष्टि कार्य कर रही थी, इस प्रकार के कार्य पूर्वकाल की योगी भी नहीं करते थे। अभी तो मैं साधना ही कर रहा हूँ और छोटा सा ही साधक हूँ। इन प्रयोगों के बाद मेरा आत्मविश्वास बहुत ही बढ़ गया। मुझे लगाने लगा– मैं अच्छी तरह से साधकों का मार्गदर्शन कर सकता हूँ। सफल मार्गदर्शन करने के लिए दिव्यदृष्टि का तेज गति से कार्य करना अति आवश्यक होता है तथा योगबल का भण्डार भी होना आवश्यक है। क्योंकि योगबल के द्वारा ही सम्पूर्ण कार्य सम्पन होते हैं। यदि मार्गदर्शक की दिव्यदृष्टि कार्य नहीं कर रही है, तथा योगबल भी कम है, ऐसे मार्गदर्शक सदैव ही असफल रहतें हैं, सिर्फ शिष्य बना लेने से कोई लाभ नहीं होता है। अर्थात ऐसे गुरुओं को शिष्य नहीं बनाना चाहिए, उसे कठोरता के साथ अपनी साधना करते रहना चाहिये।

21 अप्रैल को मैं अपने घर आ गया। भाई की शादी थी तो शादी के काम काज में व्यस्त बना रहा, इस समय मैं ज्यादा ध्यान नहीं कर सका था। मिरज आश्रम में मेरी बात मेरठ (उ.प्र.) के एक साधक से हो गयी थी। उन्होंने कहा था, मैं आपको शाकम्भरी के आश्रम में इन्तजाम करवा दूँगा। मैं वहाँ के विषय में जानकारी लेकर, मेरठ से आपको पत्र पोस्ट करूँगा। शाकम्भरी तीर्थस्थल सहारनपुर जिले (उ.प्र.) में है, शक्ति के 108 नामों में एक नाम शाकम्भरी देवी का भी है, इस देवी का मन्दिर शिवालिक पहाड़ियों की घाटियों में बना हुआ है, वहाँ पर बिलकुल शान्त वातावरण है। मेरठ का साधक मिरज से, मुझसे दो दिन पहले ही मेरठ के लिए निकल पड़े थे। मेरठ के साधक का पत्र मुझे 19 मई को प्राप्त हुआ था, उसमें आश्रम का सारा विवरण लिखा हुआ था। मैंने उस पत्र के उत्तर में एक पत्र डाला था। उस पत्र में लिखा था– मैं अभी बीमार हूँ, जब ठीक हो जाऊँगा तब मैं आपके पास आ जाऊँगा। कुछ दिनों बाद मैं ठीक हो गया फिर स्वास्थ्य लाभ लेता रहा। मेरे मन में विचार आया– मेरी साधना तो हो गयी है, अब मुझे कुछ खोज भी करनी चाहिए। मेरे मस्तिष्क में विचार आया– परकाया-प्रवेश सिद्धि के विषय में खोज करनी

चाहिए। अब मुझे परकाया-प्रवेश सिद्धि के विषय में जानने के लिए उत्सुकता ज्यादा बढ़ गयी। एक बार मैं ध्यान पर बैठा हुआ था उस समय मैंने संकल्प किया– परकाया प्रवेश सिद्धि के विषय में जानने के लिए, किन किन बातों का होना जरूरी है। तब ज्ञान ने मुझे बताया– इस सिद्धि के विषय में जानने के लिये कुछ बातें साधक के लिये अत्यन्त जरूरी है। 1. कठोर साधना, 2. अत्यन्त कठोर इन्द्रियसंयम, 3. इस विषय में पारंगत मार्गदर्शक। पहले की दोनों बातें मेरे लिये बिलकुल सरल है, मगर तीसरी बात को पूर्ण कर पाना बड़ा मुश्किल है, मुश्किल ही नहीं बल्कि असम्भव सा है। इसका कारण है– एक तो यह विद्या धीरे-धीरे लुप्त सी हो रही है, दूसरे जो महापुरुष इस विद्या को जानने वाले होंगे, वह मुझे क्यों बताएँगे कि मैं इस विद्या में पारंगत हूँ। मुझे मालूम है इस विद्या का गुरु नहीं मिलेगा, फिर भी मैं इस सिद्धि की जानकारी अवश्य करूँगा। फिर मैंने निश्चय किया– जहाँ तक हो सकेगा इस विद्या की जानकारी का प्रयास करता रहूँगा, साथ साथ मेरी साधना भी चलती रहेगी। इसके लिए मुझे पूर्ण रुप से एकान्त चाहिए, वह एकान्त शायद शाकम्भरी में मिल जाए। जब मैं मिरज आश्रम में था,उस समय मैंने इस सिद्धि के विषय में श्री माता जी से बात की थी, वह नाराज हो गयी थी।

मैं मेरठ जाने के लिए तैयार हो गया क्योंकि मेरठ होकर मुझे शाकम्भरी जाना था, मैं फिर बीमार हो गया। मैं जब मेरठ जाने के लिए तैयार होता था, तभी मैं बीमार हो जाता था, ऐसा तीन-चार बार हुआ। मैंने सोचा ऐसा क्यों हो रहा है, जरूर कोई बात है। ध्यान पर बैठने पर मालूम हुआ– कि मुझे मेरठ जाने के लिए अवरोध डाला जा रहा है, यह जान कर मैं दुखी हुआ। मेरे पिताजी ने कहा– आप मत जाइए अगर अवरोध आ रहा है, हम आपका यहीं इंतजाम कर देंगे। मैं बोला– मैं मेरठ अवश्य जाऊँगा, मुझे चाहे वापस आना पड़े, मेरे लिए कितना अवरोध खड़ा किया जाता है यह मुझे देखना है। मैं 29 जुलाई को अपने घर से मेरठ जाने के लिए चल दिया। मेरठ में कुछ दिनों तक सत्संगियों के साथ रहा। मेरठ के सत्संगियों ने मुझसे कहा– आप मेरठ में ही रुक जाइए, आपका सारा इंतजाम यहीं पर कर दिया जाएगा। मैंने कहा मुझे शाकम्भरी जाना है, मैं आपके लिए बोझ नहीं बनाना चाहता हूँ, फिर कुछ दिनों बाद उस साधक के साथ शाकम्भरी के लिये चल दिया।

मैं शाकम्भरी पहुँचा

पहले मैं आपको शाकम्भरी के विषय में बता दूँ। आदिशक्ति देवी के 108 नाम में से शाकम्भरी देवी का भी एक नाम है। दुर्गा सप्तशती में शाकम्भरी का नाम आया है। यह तीर्थस्थल सहारनपुर से लगभग 45 किलोमीटर दूर शिवालिक पहाड़ियों में बना हुआ है। हरे-भरे पहाड़, वहीं पर बहती हुई छोटी सी नदी है, चारों ओर हरियाली छाई हुई है, वहाँ का प्राकृतिक सौंदर्य बहुत ही अच्छा है। यहीं शाकम्भरी में शंकराचार्य जी का एक आश्रम है। मैं इसी आश्रम में आ गया हूँ, यह आश्रम बहुत ही बड़ा है। इसमें एक संस्कृत विद्यालय भी है, बहुत से विद्यार्थी यहाँ पर पढ़ते हैं। इन विद्यार्थियों का सारा खर्च आश्रम वहन करता है, यह संस्कृत विद्यालय, सम्पूर्णानन्द विश्वविद्यालय की एक शाखा है। जब मैं आश्रम पहुँचा तो आश्रम के अध्यक्ष स्वामी अभयानन्द जी मिले, वे (मेरठ वाले) साधक को पहले से पहचानते थे। उस साधक ने मेरा परिचय स्वामी जी से कराया, मेरी और स्वामी जी की कुछ समय तक बातचीत होती रही, फिर स्वामी जी ने मेरे लिए एक कमरा दे दिया और बोले– “आप इस कमरे में रहिए”। फिर मैंने शाम 5.30 से 8.30 बजे तक ध्यान किया। ध्यान में मुझे एक अनुभव आया।

मैंने देखा– मेरे सामने एक विशाल शरीर वाला एक पुरुष खड़ा हुआ है, उस पुरुष का रंग काला है। उसके सिर पर बड़े-बड़े बाल स्त्रियों की भाँति पीठ पर रखे हुए थे। उसका चेहरा देखने में अच्छा नहीं लग रहा है, उसका चेहरा अफ्रीकी पुरुषों से मिलता जुलता है, चेहरा डरावना सा है। मैं उसे देखकर दंग रह गया, यह कैसा विशालकाय पुरुष है। वह कुछ क्षणों के बाद अदृश्य हो गया। फिर आवाज सुनाई दी– “आनन्द कुमार आप यहाँ ज्यादा दिन तक ठहर नहीं सकते हैं”। मैंने सोचा– यह आवाज मुझे क्यों सुनाई दी, ध्यान समाप्त होने पर वहीं आश्रम में खाना खाने के लिए चला गया। दूसरे दिन सुबह वह साधक जी वापस मेरठ जाने लगे, उन्होंने मुझसे कहा– “यदि आपको कोई परेशानी हो तो मुझे पत्र डालना”। फिर वह थोड़ी देर बाद चले गए। शाम के समय मैं नदी के किनारे दूर तक घूमने चला गया, आगे पहाड़ों की घाटियाँ व सुनसान जगह थी1 मैं वहीं नदी के बीच में एक पत्थर पर बैठ गया। और सोचने लगा– उस अनुभव में काला विशाल पुरुष कौन है? यह कोई अच्छी बात नहीं है कि ध्यानावस्था में ऐसा पुरुष काला कुरूप पुरुष दिखाई दे। मैं आश्रम वापस आ गया, मेरे ध्यान का समय हो चुका था। मैं कमरे में आकर ध्यान पर बैठ गया। तभी कुछ समय बाद सामूहिक रूप से बोला जाने वाला मंत्रोच्चारण सुनाई देने लगा, आश्रम में रहने वाले छात्र हवन कुण्ड में हवन कर रहे थे, हवन करते समय मंत्रोच्चारण सुनाई दे रहा था।

मेरा कमरा दूसरी मंजिल पर था,वहीं नीचे बगल में हवन हो रहा था, इसलिये विद्यार्थियों द्वारा बोले जाने वाला मंत्र मुझे सुनाई दे रहा था। कुछ समय बाद मेरा ध्यान गहरा लग गया।

मैंने देखा– जिस जगह पर हवन हो रहा है, उस जगह पर काले कपड़े पहने हुए एक छोटा सा बच्चा बैठा हुआ है। तभी एक हाथ आगे की ओर बढ़ा (सिर्फ हाथ नजर आ रहा था), उस बच्चे को हाथ पकड़ कर खड़ा कर दिया। वह बच्चा खड़ा होते ही पूरी तरह से पुरुष बन गया। इस पुरुष का सम्पूर्ण शरीर कोयले के सामान काला था। उसके सिर के बाल बड़े-बड़े खुले हुए थे, उसकी अत्यन्त डरावनी शक्ल लग रही थी। मैंने सोचा– जहाँ दिन-रात रोजाना हवन होता हो, वहाँ इस प्रकार की तामसिक शक्तियों का क्या काम है। मैं कुछ क्षणों बाद मैं सब कुछ समझ गया, मैंने अपना ध्यान समाप्त कर दिया। मुझे जानकारी हो गयी यहाँ पर तामसिक शक्तियों का राज है। हवन का सूक्ष्म भाग तामसिक शक्तियाँ ही ग्रहण कर लेती हैं, इसलिए ये इतनी बलिष्ठ हैं।

फिर मैं ग्यारह बजे ध्यान पर बैठा, एक घन्टा ध्यान करके मैं लेट गया, मैं गहरी नींद में सोया हुआ था। फिर सोते समय अचानक मेरे मुँह से जोरदार आवाज निकली– ॐऽऽऽ। फिर एक झटके के साथ उठकर मैं बैठ गया। उसी समय मुझे अनुभूति हुई जैसे मेरे मुँह पर नुकीले पंजे जैसी चीज चुभी हो, दर्द इतना ज्यादा हुआ कि मेरी चीख निकल गयी, क्षणभर में सम्पूर्ण क्रिया हो गयी। कमरे में अन्धेरा छाया हुआ था। मैं तखत से उठकर खड़ा हो गया, फिर सोचा– कमरे की लाइट ऑन कर दूँ, स्विच आन करने पर मालूम हुआ कि आश्रम में बिजली नहीं है। मैंने टॉर्च जलाकर सारा कमरा अन्दर से देखा, मगर कमरे में कुछ भी नहीं दिखाई दिया। मैंने सोचा– शायद मेरे ऊपर छिपकली गिरी होगी, उसके पंजे मेरे मुँह पर चुभ गये होंगे, मगर कमरे में छिपकली भी नहीं थी। मैं सोचने लगा– छिपकली के चारों पंजे मेरे दोनों गालों पर नहीं आ सकते हैं। मुझे समझते देर नहीं लगी, यहाँ अवश्य ही कोई गड़बड़ है, नींद जोर से लगी हुई थी, इसलिए मैं फिर दुबारा सो गया। कुछ ही देर हुई थी, मैं नींद में उछल पड़ा और एक ही झटके में मैं उठकर बैठ गया, मेरे मुँह से जोर से चीख निकली। अबकी बार मुझे लगा– "मेरे पेट में दो पंजे अत्यन्त नुकीले घुस गए और पेट का सारा माँस खींच लिया"। मैं उठ कर बैठ गया था, फिर भी मेरे पेट में दर्द हो रहा था, मुँह में तो पहले से ही दर्द हो रहा था। मैं देखा– चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था, मैं दूसरी मंजिल के कमरे पर था, इसलिए दूर-दूर तक अंधकार दिखाई दे रहा था। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि यह क्या है और इस समय क्या किया जाए। मगर मुझे डर बिलकुल नहीं लगा रहा था, क्योंकि मैं निडर हूँ। मैं फिर कुछ समय बाद सो गया।

तामसिक शक्तियों ने दुर्गति की

जब मैं फिर सो गया, तब स्वप्न में मैंने देखा– मैं कहीं पर लेटा हुआ हूँ, मेरे ऊपर बहुत वजन की कोई वस्तु रखी हुई है, ऐसा मुझे लग रहा था। उस वजनदार वस्तु के कारण मेरी नस-नस टूटी जा रही है, मैंने अपनी आँखें खोल दी (स्वप्नावस्था में), क्योंकि उस समय मेरी आँखें बन्द थीं। आँखें खोलते ही मैंने देखा– मेरे ऊपर कोई पुरुष लेटा हुआ है, मैं उस पुरुष को एक तरफ ढकेलने का प्रयत्न करने लगा, मगर उसका बहुत भारी शरीर मुझसे हिल नहीं रहा था। मैं सोच रहा था– यह पुरुष मेरे ऊपर क्यों लेटा हुआ है? मेरे द्वारा बहुत जोर लगाने पर वह पुरुष धीरे-धीरे बायीं ओर लुढ़क गया, मैं उठकर बैठ गया। मेरा शरीर बुरी तरह से दुःख रहा था, जैसे ही मैं उठकर बैठ गया। तब मैंने देखा– वह पुरुष एक तरफ पड़ा हुआ है, उस पुरुष को देखते ही मेरे होश उड़ गए। मुझे ऐसा लगा कि उस पुरुष की किसी ने हत्या करके, लाश मेरे ऊपर फेंक दी गई हो। मैं सोचा– यह लाश किसने मेरे ऊपर फेंकी है, मैंने चारों ओर देखा– तीन पुरुष खड़े हुए मेरी ओर घूर-घूरकर देख रहे थे। मैंने उनसे पूछा– यह लाश मेरे ऊपर किसने फेंकी है। उत्तर में वह तीनों पुरुष कुछ नहीं बोले– बल्कि उनके देखने का ढंग ऐसा था, मानो वह मुझे खा जाएँगे। तभी मुझे एक व्यक्ति ज्यादा उम्र का दिखाई दिया। मैं उसके पास गया और कहा– देखो किसी ने इस पुरुष की हत्या कर दी है, उसकी लाश वह पड़ी है, मुझे मालूम नहीं यह लाश किसने मेरे ऊपर फेंकी दी है। वह व्यक्ति बोला– "किसने किसकी हत्या कर दी, इससे तुम्हें कुछ लेना देना नहीं है, तुम यहाँ से चले जाओ"। मैं यह शब्द सुनकर अचम्भित हो गया, वह व्यक्ति मुझसे क्रोध में बोल रहा था। मैं वहाँ से चल दिया, अभी थोड़ा ही आगे की ओर चला था, तभी उस व्यक्ति ने बदतमीजी से हमें बुलाया– "ऐ इधर आ"। मैं उस व्यक्ति के पास पहुँचा, फिर वह व्यक्ति गुर्राकर बोला– "मैंने क्या कहा है, तुम यहाँ से चले जाओ"। मैं सोचने लगा– ये महाशय कहाँ से जाने के लिये कह रहे हैं। वह व्यक्ति फिर बोला– "मैं इस आश्रम को छोड़कर जाने की बात कर रहा हूँ वरना दुर्गति कर दी जाएगी"। इतने में मेरी आँखें खुल गई।

मैं तख्त पर लेटा हुआ था, मगर मेरा स्थूल शरीर अब भी दुःख रहा था। मैंने घड़ी में देखा– तो सुबह के लगभग चार बज रहे थे। मैं फ्रेश होकर ध्यान पर बैठ गया। मैंने संकल्प किया– अभी-अभी जो अनुभव मैंने देखा है, ये लोग कौन हैं, यहाँ पर किसकी हत्या कर दी गई है तथा ये लोग मुझे आश्रम छोड़कर जाने के लिए क्यों कह रहे हैं, मुझे इस विषय में जानकारी हो। ध्यानावस्था में मुझे सम्पूर्ण जानकारी हो गई। ध्यान समाप्त करने के बाद मैं सोचने लगा– ये तामसिक लोग हैं और शक्तिशाली भी हैं,

ये गिनती में बहुत हैं। इसी विद्यालय के प्रधानाध्यापक की हत्या कर दी गई है। यह प्रधानाध्यापक उत्तर प्रदेश के पूर्वी इलाके के थे, यहाँ पढ़ाने आये थे, आदि।

दोपहर के समय मैं आश्रम के अध्यक्ष स्वामी अभयानन्द जी से मिला और उनसे कहा– “मैं आपसे एकान्त में मिलना चाहता हूँ”। वह बोले– “मैं आपसे अवश्य मिलूँगा”। मैं शाम के समय नदी के किनारे-किनारे पहाड़ों पर घूमने चला गया था, फिर शाम को 6 बजे मैं आश्रम में वापस आ गया। मैं अपने कमरे में बैठा हुआ था, तभी 6.30 बजे स्वामी अभयानन्द जी मेरे पास आ गए, और बोले– “क्या बात आपको करनी थी”। मैं बोला– “स्वामी जी पहले मैं अपने विषय में आपको बताता हूँ”। स्वामी जी बोले– “मैने आपके विषय में पहले ही जानकारी कर ली है, आप बताइए मुझसे बात करने का आपका उद्देश्य क्या है, मैं भी उसे जानूँ”। पहले मैंने अपने विषय में संक्षेप में बताया, फिर मैंने कहा– “मुझे एकान्त में परकाया-प्रवेश के सम्बन्ध में जानकारी लेनी है”। स्वामी जी बोले– “यह विद्या अत्यन्त जटिल और खतरनाक है”। मैं बोला– “यह मुझे मालूम है, इसीलिए एकान्त चाहिए”। स्वामी जी बोले– “मेरी ओर से आपको एकान्त मिलेगा, इसीलिए यह कमरा मैंने आपके लिए चुना है, आप स्वयं अपनी साधना कीजिए तथा हम सभी को भी यहाँ पर योग सिखाइये। एक समय निश्चित कर लेगें, उसी समय हम सभी विद्यार्थी योग सीखा करेंगे, तथा मैं यहाँ पर सभी लोगों से आपका परिचय करा दूँगा,आपका नाम दूर-दूर तक हो जाएगा। मैंने स्वामी जी से हाथ जोड़े और बोला– “कृपया आप मेरे विषय में किसी से कुछ भी न बताएँ, मैं गुप्त रूप से यहाँ रहना चाहता हूँ”। स्वामी जी ने बताया– “मैं भी एयरफोर्स में क्लास वन आफिसर था। रिटायर हुए बहुत समय हो गया है, अब मुझे पेन्सन मिलती है, फतेहपुर शहर में मेरी एक कोठी है। अब मैंने संन्यास ले लिया है, और यहाँ पर इस समय व्यवस्थापक हूँ”। फिर स्वामी जी चले गए, मैंने रात्रि वाली घटना नहीं बताई।

मैं रात्रि के समय ध्यान करके सो गया। मुझे स्वप्नावस्था में अनुभव आया– कुछ व्यक्ति मुझे पकड़कर लिए जा रहे हैं, उन्होंने मुझे बेरहमी से पकड़ रखा है। उन लोगों ने एक व्यक्ति के सामने मुझे लाकर खड़ा कर दिया है, वह व्यक्ति थोड़ा ऊँचे स्थान पर बैठा हुआ था। वह व्यक्ति मुझसे बोला– मैंने तुमसे कहा था, यहाँ से चले जाओ, मगर तुम यहाँ से नहीं गए, अब बताओ तुम यहाँ से जाओगे कि नहीं जाओगे? उस व्यक्ति को मैंने उत्तर नहीं दिया और न ही मैं उससे कुछ बोला। मैं सोचने लगा– ये लोग हमें जाने के लिए क्यों कहते हैं। मेरे न बोलने से वह व्यक्ति क्रोधित हो गया, उसने उन व्यक्तियों से कुछ इशारा किया, जो मुझे पकड़कर लाए थे। इतने में कुछ पुरुषों ने मिलकर मुझे पेट के बल जोर से पटक दिया और

मेरी पीठ पर पैरों से प्रहार करने लगे। उन लोगों की मार से मेरे शरीर की नस-नस टूटी जा रही थी, वह मुझे बेरहमी से मारे जा रहे थे। ऊँची जगह पर बैठा हुआ व्यक्ति बोला– "तोड़ दे इसका हाथ"। फिर दो व्यक्ति मेरी दाहिनी हाथ पर लातों (पैरों) का प्रहार करने लगे, इनकी मार से मैं कुछ ही देर में बेहोश हो गया। मुझे होश कितने समय बाद आया यह मैं नहीं बता सकता हूँ। जब मुझे होश आया तब कुछ व्यक्तियों ने मुझे पकड़कर खड़ाकर दिया, मुझसे खड़ा नहीं हुआ जा रहा था। वह बैठा हुआ व्यक्ति मुझसे फिर बोला– "बोल यहाँ से जाएगा कि नहीं जाएगा"। मैं कुछ समय पश्चात बोला– "मैंने आपका क्या बिगाड़ा है जो आप मुझे मार रहे हो"। उस बैठे हुए व्यक्ति ने मेरी ओर घूरकर देखा और जोर से 'हूँ' की आवाज निकाली। फिर बोला– "तू क्या तेरा बाप भी यहाँ से जाएगा"। फिर उन व्यक्तियों से बोला– "चढ़ा दे इसके लेप"। ये शब्द कहते ही उसी समय अत्यन्त तेज दुर्गन्ध आनी शुरू हो गई। मैंने सामने की ओर देखा– सामने ढेर सारा सड़ा हुआ माँस रखा था। एक व्यक्ति ने अपने हाथ में ढेर सारा सड़ा हुआ माँस लिया, फिर मेरे सिर पर लेपकर दिया। वह सड़ा हुआ माँस लेप होते ही, मेरे सिर में चिपक जाता था फिर वह मेरा ही मेरा अंग (शरीर) बन जाता था। उस व्यक्ति ने मेरे सिर पर काफी मोटा लेप चढ़ा दिया। वह जैसे-जैसे मेरे सिर पर लेप चढ़ता जाता था, वैसे वैसे उस जगह की उसी समय मेरी चेतना लुप्त सी होती जाती थी, फिर शरीर के उस स्थान पर किसी प्रकार की अनुभूति नहीं होती थी वह स्थान शून्य हो जाता था।

मैंने सिर पर सड़े हुए माँस का लेप पकड़कर देखा– तब महसूस हुआ यह मेरा ही शरीर (अंग) है। माँस का लेप लगभग पाँच इंच मोटा चढ़ाया गया था। मेरा सिर बहुत ही बड़ा हो गया था, मेरी पागलों जैसी हालत हो गई थी। अब मेरी आँखें जोर लगाने पर थोड़ी सी खुलती थीं, मात्र थोड़ी दूरी तक ही बिलकुल धुँधला सा दिखाई पड़ रहा था, अब मुझे कम दिखाई देने लगा था। फिर उस व्यक्ति ने दोनों कन्धों और दोनों बाजुओं में भी मोटा सा लेप चढ़ा दिया। मेरी पीठ पर लेप चढ़ाने के बाद, मेरी पीठ पर 15-20 किलो माँस नीचे की ओर लटकने लगा था। सिर के दोनों तरफ तीन-चार माँस पिण्डों में 2-3 किलो के टुकड़े (माँस पिण्ड) लटक रहे थे, हाथ में भी (दाहिने) ढेर सारा माँस लटक रहा था। ये सभी टुकड़े (माँस पिण्ड) बिलकुल पतली नाड़ियों के सहारे लटक रहे थे, चिपका हुआ माँस या लटका माँस मेरा शरीर महसूस हो रहा था। मैं इधर-उधर छटपटाता हुआ चल रहा था, आँखों से लगभग दिखाई देना बन्द हो गया था, सिर्फ एक दो मीटर दूर धुँधला सा दिखाई दे रहा था। उस समय मेरे कानों में जोर-जोर से हँसने की आवाज आ रही थी। मुझे कोई व्यक्ति दिखाई नहीं दे रहा था, इतने में मेरे कानों में आवाज गूँजी– "तुम अपनी पत्नी को देखोगे, देखो तुम्हारी पत्नी वह खड़ी है"। मैंने सोचा– यहाँ मेरी पत्नी कहाँ से

आ गयी, वह तो मर चुकी है। उस समय मैं माँस के वजन के कारण झुक कर चल रहा था, सिर को थोड़ा सा तिरछा करके फिर आँखों से कुछ देखने का प्रयास किया। तो देखा– वास्तव में मेरी पत्नी मुझसे थोड़ी दूरी पर खड़ी हुई थी। हमारे और उसके बीच एक पारदर्शी झिल्ली जैसी दीवार थी। मैं अंधकार में खड़ा हुआ था मेरी पत्नी प्रकाश में खड़ी हुई थी। फिर आवाज आई– "वह तुझे कभी भी याद नहीं करती है, तू उसे कभी-कभी याद करता है। उसके पास जाएगा? मैं तुझे वहाँ पहुँचा सकता हूँ"। मैंने कहा– 'मुझे उसके पास नहीं जाना है'। फिर उसने कहा– "तेरी पत्नी तेरे पिताजी के कारण मरी है, तूने साले उसकी हत्या क्यों नहीं कर दी?" मैंने कहा– "यह मेरा व्यक्तिगत मामला है"। फिर वह व्यक्ति बोला– "तू क्या उसकी हत्या करेगा, तू तो बुजदिल है, इसीलिए तेरी दुर्गति होती है"। यह आवाज मैं पहचान गया, उसी बैठे हुए व्यक्ति की थी। मैं अपने शरीर पर लेप किये हुए सड़े माँस का बोझा ढोते हुए आगे बढ़ रहा था, इतने में सामने ओर से आता हुआ एक पुरुष दिखाई दिया। उसका शरीर स्वस्थ था, उसके सिर पर बाल नहीं थे,वह संत जैसे दिखाई दे रहे थे। मैंने उस पुरुष से कहा– कृपया आप लटकता हुआ माँस काट दीजिए मुझे बहुत वेदना हो रही है। वह पुरुष कुछ भी नहीं बोला, उसने पीठ पर और सिर पर लटकता हुआ माँस काट दिया, हाथ का लटकता हुआ माँस काटने लगा। मैंने कहा– "मेरा यह दायाँ हाथ काम नहीं कर रहा है, इसी दाएँ हाथ में बहुत मारा है"। तब तक उस पुरुष ने हाथ का लटकता हुआ माँस काट दिया। मैंने उससे कहा– "मेरे मस्तक पर कुछ बन्धा हुआ सा है, ऐसा महसूस हो रहा है, कृपया आप इसे खोल दीजिये अथवा इसे काट दीजिये। वह पुरुष बोला– "मैं उसे नहीं काट सकता हूँ क्योंकि उसमें शक्ति लगी हुई है, इसे काटना मेरी सामर्थ्य के बाहर है"। मैं चौंका और सोचने लगा, कहाँ पर शक्ति लगी हुई है। मैंने उस शक्ति को देखने का प्रयास किया, मगर मुझे कुछ नहीं दिखाई दिया, सिर्फ महसूस हो रहा था कि कोई सर्पाकार वस्तु लिपटी हुई है, इतने में मैंने देखा– वह महापुरुष जा चुके थे। शायद मेरा कार्य करने के लिए ही मेरे पास आए थे, मैंने ऐसा अनुमान लगाया। इतने में मेरी नींद खुल गई, मैं तख्त पर लेटा हुआ था, सारे शरीर का दर्द से बुरा हाल था। मैंने सोचा– तख्त से उठकर कमरे की बिजली जला दूँ, मगर मैं उठ नहीं सका। क्योंकि सारा शरीर बुरी तरह से दर्द कर रहा था।

जो अनुभव आया था उसे मुझे समझते देर नहीं लगी, परन्तु मुझे डर बिल्कुल नहीं लग रहा था। मैंने अपना दाहिना हाथ ऊपर की ओर उठाने का प्रयास किया, मगर हाथ ऊपर की ओर उठा नहीं सका। वह निष्क्रिय सा एक ओर पड़ा हुआ था। मैं अपना हाथ देख कर घबरा सा गया और सोचा– "मेरा दाहिना हाथ खराब तो नहीं हो गया है, नहीं तो मुझे अपना जीवन एक बोझे के तरह ढोना पड़ेगा"। कमरे के चारों

ओर सन्नाटे की आवाज आ रही थी, मैं कमरे में चुपचाप अकेले मजबूर सा लेटा हुआ था, इस समय किसी को बुला भी नहीं सकता था, क्योंकि आश्रम के सभी लोग निचली मंजिल में मुझसे दूर सोए हुए थे। फिर मैंने अपने पास रखी हुई टार्च जलायी और घड़ी की ओर देखा– घड़ी में लगभग सुबह के तीन बजने वाले थे, फिर मैं चुपचाप लेटा रहा मुझे नींद नहीं आई। मै सोचने लगा– यह घटना मेरे साथ क्यों घटी, मेरा हाथ अगर खराब हो गया तो मैं जीवन में कुछ नहीं कर पाऊँगा, ऐसी अवस्था में अब क्या मैं यहाँ पर साधना कर पाऊँगा? यह जगह मेरे लिए खतरे से खाली नहीं है। मैं यहाँ पर परकाया प्रवेश सिद्धि की खोज करने आया हूँ, ये लोग इस सिद्धि की खोज करते समय मार ही डालेंगे। मेरी मृत्यु यहाँ पर निश्चित है, इससे अच्छा है मैं यहाँ से सुबह चला जाऊँ। यदि मैं अपनी शक्ति का प्रयोग करके कुछ दिन रुक भी गया, तब भी मैं अपना कार्य यहाँ पर नहीं कर पाऊँगा, फिर यहाँ पर रुकने से क्या लाभ होगा? मैं इस विषय में यही सोचता रहा, फिर मैंने निर्णय किया कि मैं यहाँ से सुबह चला जाऊँगा।

मैंने लेटे-लेटे ही ध्यान किया, लगभग 45 मिनट का लगा। फिर मैं उठकर बैठ गया, मेरा दाहिना हाथ एक ओर को लटका हुआ था, मैंने बाएँ हाथ से अपना दाहिना हाथ सहलाया, फिर धीरे-धीरे हाथ उठाने का प्रयास किया, कुछ समय बाद हाथ में चैतन्यता सी आनी शुरू हो गई। थोड़ी देर बाद मैंने स्वामी जी को एक पत्र लिखा, उस पत्र में मैंने बहुत संक्षेप में रात वाली घटना लिखी और आश्रम से जाने के लिए आज्ञा माँगी। फिर स्वामी जी के कमरे में जाकर उस पत्र को उन्हें दे दिया और मैं फ्रेस होने को बाहर चला गया। जब फ्रेस होकर मैं कमरे की ओर चला जा रहा था उसी समय एक विद्यार्थी मेरे पास आया और मुझसे वह बोला– “योगी जी आपको स्वामी जी बुला रहे हैं”। मुझे मालूम था स्वामी जी मुझे अवश्य बुलाएँगे। मैं स्वामी जी के पास पहुँचा और उनसे पूछा– “स्वामी जी क्या आपने मुझे बुलाया है”। स्वामी जी बोले– “हाँ, आपको मैंने बुलाया है, आपने पत्र में जो लिखा है वह सच है, मगर हम आपको जाने की आज्ञा नहीं देंगे। यदि आप चलें जाएँगे तो मेरी उन सब बातों का क्या होगा, जिन आशाओं को पूरा करने के लिये मैंने आपको यहाँ बुलाया है और आपको आश्रम में रखा है?” फिर मैंने रात्रि वाली सारी घटना स्वामी जी को सुना दी और मैं बोला– “मेरा सारा शरीर दर्द से पीड़ित है तथा मैंने अपना दाहिना हाथ भी उन्हें दिखाया”। स्वामी जी बोले– “योगी जी, आप इतने बलवान हैं, आप उन्हें भगा नहीं सकते है, आप उनसे युद्ध करो। जब आपका यह हाल है तब हम सब आपसे साधना कैसे सीखेंगे, मेरी योजना अधूरी रह जाएगी”। मैं बोला– “स्वामी जी! मैं शान्ति मार्ग का साधक हूँ, बिना मतलब मैं किसी से झगड़ा मोल नहीं लेता हूँ”। स्वामी जी बोले– “आश्रम के कल्याण के लिए आपको यह कार्य करना ही पड़ेगा”। फिर मैं

निरुत्तर हो गया। स्वामी जी बोले– “आज मैं जल्दी में हूँ, पानीपत जा रहा हूँ, कल मैं आ जाऊँगा, तब तक आप कही नहीं जाएँगे। आप अपने कमरे में जाओ और आराम करो”। मैं कमरे में आ गया, और सोचा– कल्याण के चक्कर में मैं अपना हाथ ही न गवाँ बैठूँ। अब मैं समझ गया– जिस कार्य के लिए मैं यहाँ पर आया था, वह कार्य यहाँ पर नहीं हो सकता है।

मैंने स्वामी जी को पत्र में लिखा था– यहाँ के एक अध्यापक की पूर्वकाल में हत्या कर दी गई थी, मैं उन हत्यारों को जानता हूँ क्योंकि मैंने दिव्य दृष्टि के द्वारा उनको देखा है। उस अध्यापक को किस प्रकार से आश्रम से दूर ले जाकर कुछ लोगों ने उसकी हत्या कर दी थी। स्वामी जी ने बताया था– आश्रम में मेरे आने से पहले यहाँ के प्रधानाचार्य की हत्या कर दी गयी थी ऐसा मैंने सुना है, वही प्रधानाचार्य यहाँ आश्रम की व्यवस्था भी देखते थे।

अर्थ- साधकों, इसी प्रधानाचार्य का सूक्ष्म शरीर भी मेरी दुर्गति के समय था, अनुभव में जो शरीर मेरे ऊपर लाश की तरह रखा हुआ था, वह प्रधानाचार्य जी का सूक्ष्म शरीर था। अब ये इन तामसिक शक्तियों के अधिकार में थे। ये पूर्वी उत्तर प्रदेश के रहने वाले थे। जिस सन्यासी पुरुष ने मेरे शरीर पर चिपका हुआ सड़ा माँस काट कर मेरी सहायता की थी, उनका नाम ज्वाला प्रसाद जी था, इन्होंने ही इस आश्रम को बनवाया था और इसी आश्रम में अपना सन्यासी जीवन व्यतीत किया था। इस आश्रम में तामसिक शक्तियाँ रहती है। मैंने बारीकी से देखा– आश्रम के विद्यार्थी सुबह-शाम मंत्रों द्वारा यज्ञ कुण्ड में आहुति दिया करते थे, उनके द्वारा मंत्र बोलने का तरीका गलत था। इसलिये उन आहुतियों को ये तामसिक शक्तियाँ ग्रहण कर लेती थी, इन्हीं आहुतियों को ग्रहण कर लेने के कारण ये सभी शक्तिशाली हो रहे थे। ये तामसिक शक्तियाँ अकारण ही सात्विक शक्तियों से द्वेष करती हैं, इसीलिये इन्होंने मेरे साथ ऐसा व्यावहार किया और मुझे आश्रम छोड़ कर चले जाने के लिये कह रही हैं।

मैंने सोचा– मैं कल चला जाऊँगा। मैं 11 बजे दोपहर को ध्यान पर बैठा, ध्यान पर बैठते ही मुझे आवाज सुनाई दी– “अभी गया नहीं, आज रात्रि को तुम्हारा दूसरा हाथ भी तोड़ दिया जाएगा”। इतना सुनते ही मैंने ध्यान को तोड़ दिया और निश्चय किया, मुझे अपना हाथ नहीं गँवाना है। कमरे में रखे हुए अपने सामान को सूटकेस में रखा और मैं सूटकेस को लेकर नीचे पहुँच गया। मैनेजर मुझसे बोला– “क्या बात है योगी जी, आप तो यहाँ रहने आए थे, अब आप जा क्यों रहे हैं?” मैं बोला– “आश्रम में मैं रहने ही आया था, इसीलिये मुझे यहाँ बुलाया गया था, मगर मैं यहाँ से मजबूरी में जा रहा हूँ”। इसी विद्यालय में एक शास्त्री जी पढ़ाया करते थे, उन्होंने भी मुझसे पूछा– “आप तो यहाँ पर सभी को योग सिखाने वाले थे,

मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई थी। क्या आपको आश्रम की ओर से व्यवस्था में कोई कमी की अनुभूति हुई है,आप क्यों जा रहे हैं?" फिर मैंने संक्षेप में शास्त्री जी को सभी बातें बताई। फिर उन शास्त्री जी ने मुझे बताया– आज मैं यहाँ पर अध्यापक हूँ, पहले इसी आश्रम में एक छात्र के रूप में रहता था, उस समय दूसरी मंजिल पर एक तांत्रिक रहा करता था। उसके पास दो छात्र आया करते थे, तांत्रिक ने उन छात्रों से कहा था– हम आपको पी०सी०एस० की परीक्षा पास करा देंगे, कुछ समय बाद एक छात्र परीक्षा में पास भी हो गया था। इसलिये दूसरे छात्र को यह निश्चय हो गया कि तांत्रिक द्वारा मुझे भी अवश्य पास करा दिया जाएगा। मगर कुछ समय बाद इस छात्र की पानी में डूबने से मृत्यु हो गई। लोग कहते हैं उसे तांत्रिक ने ही मार डाला था। वह तांत्रिक उस छात्र की अधजली हड्डियाँ भी लेकर अपने कमरे में आया था। वह तांत्रिक अपने कमरे से नहीं निकलता था, मालूम नहीं कमरा बन्द करके वह क्या किया करता था। इन्हीं स्वामी अभयानन्द से उस तांत्रिक की कहासुनी हो गई थी। फिर उस तांत्रिक की पुलिस वालों ने बहुत पिटाई की थी। उसने अपना सारा जुर्म कबूल कर लिया था, उसके कमरे की तलाशी लेने पर उसके बक्से से उसी विद्यार्थी की हड्डियाँ निकली थी, उसके पास 'ॐ' का एक चित्र भी निकला था। फिर मैंने चलते समय शास्त्री जी से कहा– "मैं कुछ दिनों बाद फिर आश्रम में आऊँगा"। मैं वहाँ से मेरठ के लिये चल दिया।

मेरठ आकर शाकम्भरी वाली घटना मैंने सभी को सुनाई। सभी साधक लोग उस घटना को सुन आश्चर्यचकित हो गए, मेरा दाहिना हाथ अब भी बुरी तरह से दर्द कर रहा था, उस हाथ को मैं ऊपर की ओर नहीं उठा सकता था और नहीं उस हाथ से मैं बजन उठा सकता था, ऐसा लगता था मानों उस हाथ में लकवा सा मार गया हो। मुझे किसी ने विशेष प्रकार की मालिश कराने की राय दी, फिर रात्रि के समय मैंने एक साधक से हाथ की मालिश करवायी,वह साधक मालिश करने में परिपक्व था, कुछ दिनों तक मालिश होती रही फिर मेरा हाथ धीरे-धीरे ठीक होने लगा। मैंने सोचा– मैं अपने घर चला जाऊँ तो अच्छा है, किसी के घर में रहना उचित नहीं है। मगर कुछ दिनों बाद मेरठ से 10 किलोमीटर दूर एक आश्रम में मेरी व्यवस्था हो गई। यह आश्रम योग से सम्बन्धित नहीं था, यहाँ पर प्राकृतिक चिकित्सा होती थी। हर शुक्रवार को मैं मेरठ आ जाता था, शनिवार को वापस आश्रम चला आता था।

परकाया प्रवेश की जानकारी

यह अनुभव सितम्बर माह में आया था, ध्यानावस्था में देखा– मैं किसी सुरंग जैसी जगह में प्रवेश करता चला जा रहा हूँ, कुछ समय तक चलने के बाद वह सुरंग सँकरी सी होकर आगे की ओर बन्द थी, आगे बन्द होने के कारण मैं वहीं पर खड़ा हो गया। सोचने लगा– "यह सुरंग आगे की ओर बन्द है अब मैं आगे की ओर कैसे जा पाऊँगा"। उसी समय मुझे जानकारी मिली– *इस बन्द जगह के खुलने के बाद आप अपने स्थूल शरीर से अलग हो जाएँगे*। फिर मेरे मन में तुरन्त विचार आया– स्थूल शरीर से अगर बाहर भी हो गया, फिर वापस नहीं आ पाया तब मेरी मृत्यु हो जाएगी। उसी क्षण मुझे होश आने लगा कि मैं ध्यान पर बैठा हूँ, अनुभव समाप्त हो गया।

अनुभव समाप्त होने के बाद मैं सोचने लगा– अब मुझे क्या करना चाहिए, यह बन्द जगह कभी न कभी तो खुल ही जाएगी, अगर इस शरीर से निकलने के बाद मैं वापस नहीं आ पाया तो अवश्य मृत्यु हो जाएगी। इसके लिए इस मार्ग का जानकार गुरु अवश्य होना चाहिए, इस मार्ग का पारंगत गुरु मिलना पूर्णरुप से असम्भव है। मगर यह कार्य गुरु के बिना अत्यन्त मुश्किल है, क्योंकि मुझे वापस आने का मार्ग और जानकारी मालूम नहीं है। एक दिन मैं ध्यान पर बैठा हुआ था। मैंने देखा– मैं उसी सुरंग जैसी जगह में आगे की ओर चला जा रहा हूँ, आगे चलकर मैं रुक गया, क्योंकि वह सुरंग जैसी जगह आगे की ओर बन्द थी। मैं वही पर खड़ा हो गया, आगे की ओर जाने के लिए मार्ग ही नहीं था। फिर वही विचार आया– यदि मैं आगे जाकर निकल भी गया, फिर वापस नहीं आ पाया तो मेरे मृत्यु निश्चित है, यही विचार आते ही मेरा ध्यान कमजोर हो गया। मुझे अपना होश आने लगा गया कि मैं ध्यान पर बैठा हुआ हूँ।

मैं बैठ कर सोचने लगा– अब क्या किया जाए, मुझे अपने आप पर विश्वास था। कि मैं बाहर अवश्य ही निकाल जाऊँगा, बाहर निकलने के लिए सिर्फ कुछ दिन ही लगेंगे, मगर वापस शरीर में न आ पाया तब मेरी मृत्यु निश्चित ही हो जाएगी। फिर शीघ्र ही दुबारा जन्म लेकर साधना करनी पड़ेगी, अभी मेरी उम्र बहुत शेष है, इसलिए परकाया प्रवेश का विचार त्याग देना चाहिए। मगर मेरे मस्तिष्क में तो परकाया प्रवेश का भूत सवार था। मैंने कई बार ज्ञान से पूछा कि परकाया प्रवेश के बारे में मुझे बता दो, वह भी कुछ नहीं बोलता था। फिर एक बार मुझे आवाज सुनाई दी– *यदि यह सिद्धि तुम्हें मिल भी गई तो तुम इस सिद्धि से क्या प्राप्त करना चाहते हो, अपना अमूल्य समय व्यर्थ न करो, योग के अभ्यास में आगे की ओर बढ़ने का प्रयास करते रहो, यही तुम्हारे लिए हितकर है।*

साधकों! अनुभव में मुझे दिखाई देता है मैं एक सुरंग में प्रवेश करता चला जा रहा हूँ, वह सुरंगनुमा जगह आगे की ओर बन्द है– वास्तव में वह एक नाड़ी है इस नाड़ी के द्वारा चित्त बहा करता है, यह अति सूक्ष्म नाड़ी चित्त में स्थित रहती है। मुझे ऐसा लगा– परकाया प्रवेश करने वाले योगी इसी नाड़ी का प्रयोग करते है क्योंकि नाड़ी आगे की ओर बन्द है, मैं बाहर ही नहीं जा सकता हूँ, मगर संकल्प और अभ्यास के द्वारा यह नाड़ी अवश्य खुल जाएगी, ऐसा मुझे विश्वास था। उसी समय मेरे अन्दर अज्ञानता के कारण डर उत्पन्न हो जाता है और ध्यान टूट जाता है। मगर मैंने हार नहीं मानी तथा इसी की खोज में लगा रहा। मैं ध्यान करते समय सदैव संकल्प किया करता था तथा ज्ञान को प्रेरित करता था। ज्ञान तुम स्वयं मेरा मार्गदर्शन करो, क्योंकि मैं जानता हूँ परकाया प्रवेश सिद्धि को अगर छोड़ दूँ, तो योग के अभ्यास में आगे का मेरा मार्गदर्शन कौन करेगा। ज्ञान ने बताया– *"आपका मार्गदर्शक उत्तर भारत में है, ढूँढ़ने का प्रयास करते रहो, एक न एक दिन वह अवश्य मिल जाएगा, वह तुम्हारे सभी प्रश्नों का उत्तर देगा। वह अत्यन्त उच्चकोटि का योगी होगा।"* मैंने सोचा– उत्तर भारत में ऐसा कौन सा योगी हो सकता है, क्योंकि उसका योगबल और योग्यता मुझसे भी ज्यादा होगी। योगबल का मैंने भी भंडार कर रखा है। हर एक योगी का योगबल मुश्किल से ज्ञात होता है, योग्यता अवश्य जल्दी मालूम पड़ जाती है। ऐसे योगी उत्तर भारत में मुझे दो ही समझ में आये, एक– स्वामी शिवानन्द के शिष्य और शिवानन्द आश्रम के अध्यक्ष स्वामी चिदानन्द जी। इनका ऋषिकेश में आश्रम है, इन पर मुझे पूरा विश्वास है, योग में मेरी समस्याओं का हल कर सकते हैं। दूसरा– दलाई लामा। ये तिब्बत के धार्मिक गुरु है आजकल ये धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश में रहते हैं। इन दोनों से मिलना बहुत ही मुश्किल है।

माता कुण्डलिनी शक्ति

मैंने ध्यानावस्था में देखा– मैं ऊँची जगह पर बैठा हुआ हूँ, मेरी बाई ओर एक स्त्री मुझसे चिपकी हुई बैठी है। जब मुझे महसूस हुआ कि मेरे बगल में एक स्त्री बैठी हुई है और मैं उससे चिपका हुआ बैठा हूँ, तब मुझे अपने पर बड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि मैं स्त्रियों से दूर ही रहता हूँ। मैंने उस स्त्री को गौर से देखा– वह एक बहुत ही सुन्दर युवती थी, उसका कद मुझसे भी ऊँचा था। मैं उसकी सुन्दरता देख रहा था मगर मेरे मन में किसी प्रकार के भाव नहीं थे और न ही उस स्त्री के चेहरे से किसी प्रकार के भाव दिखाई दे रहे थे। मैंने अपना थोड़ा सा सिर ऊपर की ओर उठाकर देखा, वह स्त्री मेरी ओर गौर पूर्वक देख रही थी।

उसी समय उसका शरीर ओर ऊँचा हो गया, मैं उसके सामने बिल्कुल छोटा-सा लग रहा था। उसने अपना दाहिना स्तन कपड़ों से बाहर की ओर निकाला और मुझे बच्चों के समान उठाकर अपनी गोदी में लिटा लिया। मैं उस समय पूरी तरह से वर्तमान की भाँति, शरीर वाला पुरुष था। उसने मुझे अपनी गोदी में लिटा कर मेरे सिर पर हाथ रखा, फिर हाथ के दबाव से मेरा मुँह उसने अपने स्तन में लगा दिया, मैं स्तनपान करने लगा। उस समय मैं बहुत प्रसन्न हो रहा था। मुझे दूध का स्वाद हल्का मीठा लग रहा था, कुछ क्षणों तक मैं स्तनपान करता रहा, फिर उसने मुझे उठाकर खड़ा कर दिया। अपना स्तन कपड़ों के अन्दर ढक लिया, वह तरुण स्त्री खड़ी होकर मुस्कराने लगी। मेरी इच्छा थी– "मैं अभी और स्तनपान करूँ"। उसी समय वह स्त्री थोड़ा सा ऊपर की ओर अंतरिक्ष में खड़ी हो गई। उसके कपड़े अपने आप बदल गए। वह सितारेदार लाल साड़ी पहने हुए थी, उसके सिर पर ऊँचा-सा मुकुट लगा हुआ था, वह स्त्री अण्डाकार प्रकाश वलय के अन्दर खड़ी हुई थी। मैं तुरन्त समझ गया कि यह स्त्री माता कुण्डलिनी शक्ति है। मैं बोला– "हे माता! मैं आपको प्रणाम करता हूँ"। उत्तर में माता कुण्डलिनी ने हाथ उठाकर मुझे आशीर्वाद दिया। मैं बोला– "हे माता! मैं आपसे कुछ प्रार्थना करना चाहता हूँ"। माता कुण्डलिनी कुछ नहीं बोली, सिर्फ मुस्करा रही थी। मैं बोला– "माता! आप मुझे आशीर्वाद दें कि मैं महान योगी बनूँ"। माता कुण्डलिनी बोली– *"भविष्य में तुम अवश्य महान योगी बनोगे, ढेर सारी शक्तियों से युक्त होगे तथा ज्ञान की प्राप्ति होगी"।* मैं बोला– "माता उत्तर भारत में कौन-सा मेरा गुरु है जिससे मुझे ज्ञान प्राप्त करना होगा?" माता कुण्डलिनी बोली– *"भविष्य में वह स्वयं आपके पास आ जाएगा"।* फिर माता कुण्डलिनी अदृश्य हो गई, मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

साधकों, यह अनुभव मेरे लिए बहुत ही अच्छा था, क्योंकि इस प्रकार के अनुभव साधकों को बहुत कम आते है, अबकी बार स्तनपान के समय मैं बच्चा नहीं था, बल्कि वर्तमान उम्र वाला शरीर था। सच तो यह है इस प्रकार का अनुभव विरले साधकों को आता है। जब इस प्रकार से कुण्डलिनी शक्ति स्तनपान कराए, तब अभ्यासी को समझ लेना चाहिए, भविष्य में कुण्डलिनी शक्ति की विशेष प्रकार की कृपा होने वाली है तथा ज्ञान की प्राप्ति होगी। ऐसा अभ्यासी निश्चय ही पूर्वकाल का महान योगी होता है।

मुझे मेरठ में मालूम हुआ कि दिल्ली में अमुक दिन मीटिंग है, फिर मैं तथा एक साधक (आशुतोष) मेरठ से दिल्ली गए। अब वहाँ मालूम हुआ श्री माता जी फरवरी माह में दिल्ली आना चाहती हैं तथा दो साधक दिल्ली से जलगाँव श्री माता जी का जन्म दिन मनाने के लिए जा रहे हैं। श्री माता जी का जन्मदिन 20 सितम्बर को मनाया जाता है। मैंने और मेरठ के साधक ने भी प्रोग्राम बना लिया कि श्री

माता जी के जन्मदिन पर जलगाँव जाएँगे। हम दोनों के साथ मेरठ के दो ओर साधक श्री माता जी का जन्मदिन मनाने के लिए तैयार हो गए। इसलिए 18 सितम्बर को मेरठ से चार और दिल्ली से दो साधक जलगाँव के लिए रेल द्वारा चल दिए। जलगाँव पहुँचने पर पाँचों साधक श्री माता जी के पास चले गए। मगर मैं अंजू दीदी (नितिन की माँ) के घर आ गया, क्योंकि मेरी और इस परिवार की बहुत बनती थी।

मैं जलगाँव पहुँच कर वैशाली के विषय में सोच रहा था, क्योंकि मैंने उसकी कुण्डलिनी पहले ऊर्ध्व की थी। दोपहर को एक डेढ़ बजे वैशाली स्वयं आ गई, मगर किसी कारण से वैशाली से योग के विषय में बात नहीं हो सकी। मैं स्वयं शाम को वैशाली के घर पहुँच गया, मैंने वैशाली से पूछा– मैंने जो तुम्हारी कुण्डलिनी उठाई थी उसके विषय में श्री माता जी ने तुमसे क्या कहा था? उसने बताया श्री माता जी ने गुरुपूर्णिमा (सन् 1993) पर एकांत में बुलाकर पूछा– "आनन्द कुमार ने जो कुण्डलिनी उठाई थी, उसका आपको क्या अनुभव आया"। मैंने अपने सभी अनुभव सुना दिए, तब श्री माता जी बोलीं– अनुभव आपको आए वह ठीक है मगर आपकी कुण्डलिनी नहीं उठी है, उसके लिए बहुत नाड़ी शुद्ध चाहिए, वह ऐसे नहीं उठती है। यदि उठ भी गई तो बैठ जाएगी, उसका बैठ जाना अच्छा है? मैं यह शब्द सुनकर दंग रह गया कि यह शब्द एक सिद्धता को प्राप्त स्त्री कह रही हैं– "कि कुण्डलिनी नहीं उठी है"। मैं सोचने लगा उन्होंने ऐसा क्यों कहा, जबकि 100 % (प्रतिशत) सत्य है कि कुण्डलिनी ऊर्ध्व हुई थी। मैं बोला– यदि कुण्डलिनी न ऊर्ध्व हुई हो तो मैं अपनी सारी साधना त्याग दूँगा और कभी भी साधना का नाम नहीं लूँगा। उस समय वैशाली के सभी घर के सदस्य और पड़ोसी बैठे हुए थे। यह शब्द श्री माता जी ने किस भाव से कहे थे यह मैं नहीं समझ पाया था। फिर मैंने सोचा– क्या उन्हें दिव्य दृष्टि से दिखाई नहीं देता है कि कुण्डलिनी को वह सिर्फ परिपक्व अवस्था में ऊर्ध्व करती हैं, ऐसी अवस्था में नाम मात्र के शक्तिपात से कुण्डलिनी ऊर्ध्व हो जाती है। नए साधक की कुण्डलिनी उठाना श्री माता जी के बस की बात नहीं है, क्योंकि ढेर सारा योग बल लगाना पड़ता है। श्री माता जी ने ईर्ष्या भाव से यह बात कही है कि कुण्डलिनी नहीं उठी है, क्योंकि आनन्द कुमार का यश फैलेगा और उसका नाम ऊँचा होगा, यह बात श्री माता जी को सहन नहीं होती है, मुझे अपने गुरु पर बड़ा गर्व था कि मेरे गुरु इतने महान हैं आज मेरा गर्व चकनाचूर हो गया।

एक साधिका ने मुझे बताया– जिसकी कुण्डलिनी जबरदस्ती उठाई जाती है, जब सिर तक पहुँच जाती है, तब वह साधक पागल हो जाता है? यही श्री माता जी ने प्रवचन में कहा था। इसी प्रकार मुझे बहुत-सी बातें बताई गई। हमारे समझ में आ गया कि उन्होंने ऐसा क्यूँ कहा, ताकि आनन्द कुमार से मार्ग

दर्शन के लिए कोई साधक तैयार न हो। मुझे और भी ढेरों आरोप सुनने पड़े थे। मगर मैं चुप रहा, क्योंकि मैं समझ गया था, श्री माता जी जानबुझ कर झूठ बोल रही हैं, अब उनको आदत सी पड़ गई। इसका प्रायश्चित भविष्य में उन्हें करना पड़ेगा। यह सच है कि जबरदस्ती उठाई गई कुण्डलिनी के लिए साधक को अधिक साधना चाहिए तभी वह ऊर्ध्व रह सकेगी, वरना कुण्डलिनी सुषुप्त अवस्था में चली जाएगी। मैंने अबकी बार देखा- जो साधक मुझसे बहुत प्रेम करते थे, अब वही मुझसे बात करने से भी कतराते हैं। अब मेरी समझ में आ गया, श्री माता जी मुझे जलगाँव में रुकने के लिए सदैव क्यों मना किया करती थीं।

श्री माता जी से मेरी कोई खास बात नहीं हुई, सिर्फ श्री माता जी ने हालचाल पूछा- मैंने उसका जवाब दे दिया। फिर मैंने परकाया प्रवेश के विषय में बात की। मैंने श्री माता जी को बताया– मैं परकाया प्रवेश सिद्धि के विषय में काफी खोज कर रहा हूँ, क्या आप मुझे कुछ इस विषय में बताएँगी। श्री माता जी बोलीं– ऐसी सिद्धियों को मैं पसन्द नहीं करती हूँ मुझे परकाया प्रवेश के विषय में ज्ञान नहीं है। फिर मैं श्री माता जी के पास से चला आया। जब मैं मिरज में रहता था तब मैंने श्री माता जी से इस सिद्धि के विषय में पूछा था। उस समय श्री माता जी नाराज हो गई थी, मैं उनके पास से उठ कर बाहर चला आया था।

मुझे 29 सितम्बर को आश्रम में (मेरठ के पास) प्रवचन करना था, क्योंकि मेरे कारण आश्रम में दूर-दूर से लोग बुलाए गए थे तथा योग की शिक्षा देनी थी। मैं 25 सितम्बर को जलगाँव से मेरठ के लिए चल दिया। चलते समय श्री माता जी ने परकाया प्रवेश की सिद्धि के लिए मना कर दिया कि इस सिद्धि को छोड़ दीजिए यह सिद्धि अच्छी नहीं है। 28 सितम्बर को दिल्ली होते हुए मैं मेरठ आ गया। मुझे यह जानकारी मिली थी कि मेरठ के साधक ने शाकम्भरी वाली घटना श्री माता जी तक पहुँचाई थी, मेरठ में मेरा मजाक उड़ाया गया था। मेरी समझ में नहीं आ रहा था– "मैं किस पर विश्वास करूँ और किस पर विश्वास न करूँ"। इसलिए मैंने निश्चिय किया मेरठ से दूर रहा जाए, ताकि यहाँ के साधकों से ज्यादा न मिल सकूँ। इस विषय में मैंने किसी से राय नहीं ली। मैंने सोचा– मैं अभी घर भी नहीं जाऊँगा, एक बार अब मैं शाकम्भरी देवी अवश्य जाऊँगा। कुछ दिनों के लिए मैंने अपना लक्ष्य बदल दिया। अब मैं उन तामसिक शक्तियों से झगड़ा करना चाहता था जिन शक्तियों ने मेरी इतनी दुर्गति कर दी थी। अब मैं शाकम्भरी देवी रुकता हूँ कि नहीं रुकता हूँ, मेरे मन में सिर्फ तामसिक शक्तियों से झगड़ा करने का इरादा था। मैंने सोचा– मैं भी दिव्य शक्तियों से युक्त हूँ, फिर इनसे डर क्यों रहा हूँ। पहले मैं इनसे झगड़ा नहीं करना चाहता था, मगर अब उन तामसिक शक्तियों से झगड़ा करने ही जा रहा था, मुझे मालुम था कि अभी मेरी मृत्यु तो नहीं हो सकती है। मैं 4 अक्टूबर को शाकम्भरी देवी (सहारनपुर) में शंकराचार्य आश्रम

में आ गया। फिर मैं उसी पहले वाले कमरे में ठहरा था, अबकी बार मेरे मन में इच्छा शक्ति बहुत ही दृढ़ थी। मैंने सोचा– जब तक शाकम्भरी देवी में मैं रुकूँगा तब तक ये तामसिक शक्तियाँ मेरी ओर भूलकर भी नहीं देखेंगी। शंकराचार्य आश्रम में स्वामी जी बहुत प्रसन्न हुए, क्योंकि मैं वापस आश्रम में आ गया था।

जीव और कर्म

4 अक्टूबर की शाम 6.30 बजे मैं ध्यान पर बैठ गया, पहले अपने शरीर के चारों ओर मृत्युंजय मंत्र द्वारा कवच ओढ़ लिया, फिर संकल्प किया– "अरे तामसिक शक्तियों तुम कहाँ हो, अबकी बार मैं नहीं, बल्कि तुम यह इलाका छोड़ कर भाग जाओगे, तुम्हारी सहायता करने वाला कोई भी इस भूलोक लोक पर तो क्या भुवर्लोक से भी नहीं आएगा"। फिर मैं ध्यान की गहराई में चला गया। मैंने ध्यानावस्था में देखा– एक बहुत सुन्दर आकर्षक गाय मेरे कमरे के अन्दर आ गई है, जबकि कमरा अन्दर से बन्द था। गाय सफेद रंग की बहुत प्यारी लग रही थी। मैं गाय का अर्थ तो समझ गया। फिर कुछ क्षणों बाद देखा– मेरे सामने एक कुत्ता बड़े आराम से चुपचाप बैठा हुआ है, इतने में मैंने देखा– एक पुरुष ने कुत्ते को हाथ से कुछ इशारा किया कि वह कुत्ता मेरी ओर देखे, मगर कुत्ते ने सिर हिला कर मना कर दिया और आँखें बन्द करके चुपचाप बैठ गया।

अर्थ- साधकों गाय का अर्थ है– गाय जीवात्मा का प्रतिक होती है। कुत्ते का अर्थ– मेरे चित्त पर स्थित शेष कर्म है। वह आँखें बन्द करके चुपचाप बैठ गया– मेरा कर्म बहिर्मुखी होने को तैयार नहीं हो रहा है। एक पुरुष ने कुत्ते को इशारा भी किया कि मुझे देखे मगर नहीं देखा– यह पुरुष प्राकृतिक-बंधन है। यदि कुत्ता मेरी ओर क्रोध में देखता– तब मुझे अपना कर्म भोगना पड़ता अर्थात तामसिक शक्तियाँ फिर मुझ पर हावी हो जाती, मगर मेर कर्म चुपचाप है, मैंने कर्म से कहा– तुझे एक न एक दिन जाना ही होगा अर्थात नष्ट होना ही होगा।

सन्यासी का प्रणाम

एक दिन मैं शाम के समय ध्यान कर रहा था। मुझे अनुभव आया– मैं किसी स्थान पर थोड़ी सी ऊँचाई पर बैठा हुआ हूँ। मेरे सामने थोड़ी दूरी पर एक नवयुवक सन्यासी किसी से बात कर रहा था। नवयुवक सन्यासी किसी से कह रहा था– *"वह तत्वज्ञानी है, आप उसकी बराबरी नहीं कर सकते हैं"।* मैंने अपनी दृष्टि इधर-उधर की ओर की और सोचा– यह नवयुवक सन्यासी किससे बात कर रहा है। फिर नवयुवक सन्यासी ने मेरी ओर उंगली उठाकर कहा, *"यह तत्वज्ञानी है, आप इसके चक्कर में न पड़िए, आप इसकी बराबरी नहीं कर सकते हैं"।* उसी समय मुझे उस नवयुवक सन्यासी के सामने एक पुरुष खड़ा हुआ दिखाई दिया। मैं समझ गया, यह सन्यासी इसी से बात कर रहा है, जबकि नवयुवक सन्यासी की मुझसे किसी प्रकार की बात नहीं हुई थी। दोनों मेरे सामने अदृश्य हो गए।

कुछ क्षणों बाद मैंने देखा– मेरे सामने अत्यन्त तेजस्वी सन्यासी प्रकट हो गया, उसकी उम्र 30-35 साल के लगभग होगी। उसने गेरुवे वस्त्र धारण कर रखे थे। उसके सिर पर बाल नहीं थे और दाढ़ी भी नहीं थी। उसका शरीर स्वस्थ था लम्बाई 6 फीट के लगभग रही होगी, यह सन्यासी बहुत ही ज्यादा तेजस्वी था। उसके शरीर के चारों ओर प्रकाश फैला हुआ था। क्षणभर तक वह खड़ा हुआ मुझे देखता रहा, फिर वह मुस्कुराया और मुझे नमस्कार करने के लिए आगे की ओर बढ़ा। मुझे बहुत आश्चर्य हुआ एक तेजस्वी सन्यासी मुझे नमस्कार क्यों कर रहा है। मैं तुरन्त पीछे की ओर हट गया। फिर मैं उस सन्यासी से बोला– *"मैं आपसे नमस्कार कैसे ले सकता हूँ, आप तो सन्यासी हैं, मैं किसी सन्यासी का नमस्कार नहीं ले सकता हूँ"*, मगर मेरी बातों का उस सन्यासी पर कोई असर नहीं हुआ। वह मुझसे लगभग दो फीट दूर जमीन पर नमस्कार करने लगा। उसी समय मैंने भी बड़ी तेजी के साथ उस सन्यासी से लगभग एक फीट की दूरी से जमीन पर उसे नमस्कार किया, फिर मैं खड़ा हो गया। हम दोनों आमने-सामने खड़े हुए मुस्करा रहे थे। उसकी मुस्कराहट में कुछ विशेषता सी थी, जिसे मैं नहीं समझ सका। उसने बस इतना ही कहा– *"आप तत्वज्ञानी हैं"।* मैं उसके शब्द सुनकर अचम्भित हो गया, इतने महान सन्यासी मुझे तत्वज्ञानी कह रहे हैं। सन्यासी जी फिर बोले– "तुम महान योगी हो, इसलिए तुम्हें जन कल्याण के लिए कुछ करना चाहिए"। मैं सन्यासी जी के कहने का अर्थ नहीं समझ सका। मैं उनसे बोला– *"कृपया आप स्पष्ट कहिए, ताकि मैं आपके शब्दों का अर्थ समझ सकूँ"।* सन्यासी जी बोले– *"आप योग पर लेख लिखिए"।* मैं बोला– *"मेरे अन्दर इतनी योग्यता नहीं है, मैं लेख कैसे लिख सकता हूँ, वह भी योग पर लेख लिखना तो और भी मुश्किल कार्य है। योग पर लेख लिखने का अर्थ है योग में परिपूर्ण होना, तभी यह सम्भव हो*

सकता है"। सन्यासी जी बोले– *"तुम अपने आप को अयोग्य क्यों समझते हो, तुम लेख लिखना शुरू कर दो, तुम्हारे अन्दर क्षमता स्वमेव आ जाएगी। भविष्य में तुम योग के विषय में परिपूर्ण होगे। मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है, ऐसा समझो मैं इसीलिए तुम्हारे पास आया हूँ, ताकि तुम्हें योग पर लेख लिखने की प्रेरणा दूँ"।* मैं बोला– *"आपकी आज्ञा का पालन होगा, मैं लेख लिखने का प्रयास करूँगा, कृपया आप अपना मुझे परिचय दें"।* सन्यासी जी बोले– *"सबसे बड़ा मेरा परिचय यही है, मैं भी योगी हूँ और तुम्हारे सामने खड़ा हूँ। पूर्वकाल में मैंने भी पृथ्वी पर जनकल्याण हेतु योग का प्रचार किया था। तुम स्वयं जान जाओगे मैं कौन हूँ?"* इतना कहकर सन्यासी अदृश्य हो गए। मेरा ध्यान टूट गया।

मैं सोचने लगा ये कि ये सन्यासी जी कौन थे जो मुझे तत्वज्ञानी कह रहे थे तथा उन्होंने मुझे नमस्कार भी किया था, यह इस सन्यासी की महानता है। फिर उन्होंने मुझे योग पर लेख लिखने के लिए प्रेरित किया, मैंने ध्यान पर बैठकर संकल्प द्वारा जानने का प्रयास किया कि ये सन्यासी जी कौन थे। तभी अंतरिक्ष से आवाज आई– *"आदिगुरु शंकराचार्य"।* नाम उनका नाम सुनकर मैं आश्चर्यचकित हो गया। फिर योग पर लेख लिखने का प्रयास शुरू कर दिया। यह लेख अब आपके सामने प्रस्तुत है। प्रिय पाठकों! जब मुझे आदिगुरु शंकराचार्य जी ने तत्वज्ञानी शब्द से सम्बोधित किया था, उस समय मुझे तत्वज्ञान की प्राप्ति नहीं हुई थी। तत्त्वज्ञान की प्राप्ति सन् 2000 के बाद होना शुरु हुआ था। वह सब कुछ जानने में सक्षम है इसलिए उन्होंने मुझे पहले से ही तत्त्वज्ञानी शब्द से सम्बोधित कर किया, आदिगुरु शंकराचार्य जी स्वयं तत्त्वज्ञानी हैं।

मैं सारे ब्रह्माण्ड की माँ हूँ

यह अनुभव मुझे नवम्बर माह में रात्रि के समय ग्यारह बजे ध्यानावस्था में आया था, मैंने देखा– थोड़ी सी ऊँची जगह है उस जगह पर एक स्त्री बैठी हुई है। वह सफ़ेद रंग की उज्ज्वल साड़ी पहने हुए है, उसका सारा शरीर तेज प्रकाश से चमक रहा है। वह स्त्री अत्यन्त खूबसूरत है, मैं उसे देखते ही उसके पास गया। मैंने अपने दोनों हाथों से उसके दोनों पैरों के घुटनों को पकड़कर उसके सामने जमीन पर बैठ गया। मैंने अपनी दृष्टि उसके चेहरे पर जमा दी, उसका चेहरा मुझे अत्यन्त खूबसूरत लग रहा था। वह स्त्री मन्द-मन्द मुस्कराने लगी। मुझे उसका सारा शरीर व सफेद उज्ज्वल साड़ी अच्छी लग रही थी, क्योंकि साड़ी से चमक (हल्का प्रकाश) निकल रही थी। जब मैंने उसके शरीर की बनावट देखी तब समझ गया यह स्त्री

पृथ्वी लोक की नहीं है। मैं ऐसा सोच ही रहा था कि तभी वह स्त्री बोली– *"मैं यहाँ की रानी हूँ"*। मैं उसके शब्द सुनकर चौंका और बोला– "आप यहाँ की रानी हैं"। यहाँ तो पहाड़-ही-पहाड़ हैं"। वह स्त्री फिर बोली– *"हाँ, मैं यहाँ की रानी हूँ और तुम्हारी माँ भी हूँ"*। आखिरी शब्द सुनते ही मेरे हाथ जो उस स्त्री के घुटनों पर रखे थे वह कांपने से लगे। मैं उससे बोला– "क्या आप मेरी माँ हैं?" वह फिर बोली– *"मैं सारे ब्रह्माण्ड की माँ हूँ"।* इन शब्दों को सुनते ही मैं समझ गया यह कौन हैं, मैंने उस स्त्री को प्रणाम किया। वह स्त्री बोली– *"मेरा इस रूप में दर्शन इसलिए हुआ है, क्योंकि तुमने कई बार इसी रूप में दर्शन के लिए संकल्प किया था"।* फिर वह मेरे सामने अंतर्ध्यान हो गई।

साधकों! मैंने कई बार संकल्प किया था कि माता शाकम्भरी के मुझे दर्शन हों। इसलिए मुझे यह दर्शन हुए है, क्योंकि मैं शाकम्भरी के दर्शन के लिए तीन-चार बार मन्दिर गया था। वहाँ की मूर्ति तो साधारण सी दिखाई देती है, मगर मैंने वास्तव में माता शाकम्भरी के दर्शन के लिए प्रार्थना की थी।

प्रिय साधकों! मुझे विभिन्न प्रकार के अनुभव आए, कुछ अनुभव ऐसे आए जो पढ़ने में अच्छे नहीं लगेंगे। हालांकि ऐसे अनुभव भी योग की एक अवस्था में आते हैं तथा योग में उनका कुछ-न-कुछ अर्थ होता है। मगर मैंने ऐसे अनुभवों को नहीं लिखा है, मैंने बहुत से अनुभव छोड़ दिए है। एक अनुभव मुझे आया– यह मेरी उच्चावस्था को भाषित करता है, मगर सांसारिक दृष्टि से यह पढ़ने में थोड़ा अच्छा-सा नहीं लगता है, इसलिए मुझे क्षमा करना। एक बार ध्यानावस्था में मैंने देखा– "मैं अद्वितीय सुन्दर स्त्री बन गया हूँ, मैं अपनी गोद में एक छोटा-सा बच्चा लिए हुए हूँ। वह मेरा स्तन पान कर रहा है। बच्चे ने दूसरे स्तन को अपने हाथ से पकड़ रखा है, इससे मुझे गुदगुदी सी हो रही है। मैंने बच्चे का हाथ पकड़ कर एक तरफ कर दिया, उसने फिर से मेरा दूसरा स्तन पकड़ लिया। इस क्रिया से मुझे बहुत गुदगुदी हो रही है, इसलिए मैं हँस रहा हूँ। फिर मैंने सोचा– "यह बच्चा ऐसा क्यों कर रहा है"। उसी समय मुझे अपना याद आई कि मैं तो पुरुष था, फिर स्त्री कैसे बन गया। अब मैं क्या करूँ, यह बच्चा भी मेरा है। फिर मैंने अपने शरीर को देखा तो पाया, मैं बहुत ही ज्यादा सुन्दर स्त्री हूँ। मेरे सिर पर मुकुट भी लगा हुआ है, मैं बहुत अच्छे गहने भी पहने हुए हूँ। तभी मुझे लगा, मैं तो कुण्डलिनी देवी के समान स्वरूप वाला बन गया हूँ। उसी समय मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में मैं अपने आप को कुण्डलिनी समझ रहा हूँ– मैं अपने आपको शक्ति के रुप में देख रहा हूँ। कुण्डलिनी जागरण के समय भी ऐसा अनुभव आया था, मैं पुरुष स्वरुप में हूँ और स्त्री स्वरुप में भी हूँ, दोनों स्वरुप आमने-सामने खड़े हुए है। उस बच्चे के अर्थ है– वह मेरा ही स्वरुप था, योग के

अभ्यास की दृष्टि से मेरा स्वरुप बच्चे के समान ही है। साधकों, यह योग में मेरी सबसे उच्चावस्था है, क्योंकि पुरुष भी मैं ही हूँ, और स्त्री भी मैं ही हूँ। ब्रह्म से शक्तिमान (ईश्वर) व शक्ति दोनों प्रकट हुए हैं। इसलिए अपने आपको कुण्डलिनी के रूप में देखना उच्चावस्था का प्रतीक है। कभी-कभी साधक अभ्यास के समय इसी अवस्था में भ्रम में हो जाता है, वह अपने आप को अवतार समझने लगता है, जबकि ऐसा होता नहीं है। मनुष्य कभी भी अवतार नहीं बन सकता है।

मैंने एक साधक की कुण्डलिनी फिर ऊर्ध्व की

मैं शाकम्भरी से घूमने के लिए फिर मेरठ आ गया था, क्योंकि सर्दी के कपड़े मेरे यहीं पर रखे हुए थे। पिछली बार जब मैं शाकम्भरी गया था, तब मेरठ में किसी को बोलकर नहीं गया था कि मैं शाकम्भरी जा रहा हूँ। इसलिए मेरठ वालों को मालूम नहीं था कि मैं कहाँ पर हूँ। जिस साधक के घर में रुका था सिर्फ उन्हें ही मालूम था। मुझे याद आया जब मैं जलगाँव से वापस लौट था तब आशुतोष ने मुझसे कहा था– *"आप एक बार मुझ पर प्रयोग करके देख लें कि मेरी कुण्डलिनी जागृत होती है या नहीं होती है, क्योंकि जलगाँव में यह कहा गया था कि वैशाली की कुण्डलिनी जागृत नहीं हुई है"।* उस समय मैंने आशुतोष को कोई जवाब नहीं दिया था। लेकिन अब मैंने आशुतोष से कहा- *"यदि आपकी इच्छा हो तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। आपकी कुण्डलिनी उठाने को मैं तैयार हूँ"।* एक बात का ध्यान रखना यदि आपसे कोई पूछे, चाहे श्री माता जी ही क्यों न हो पूछे– तो आपको अपने ऊपर जिम्मेदारी लेनी होगी, क्योंकि आपकी और वैशाली की कुण्डलिनी ऊर्ध्व करने में फर्क है। वैशाली पर मैंने अपना प्रयोग किया था। उस प्रयोग में आशा से अधिक सफल हुआ था। आशुतोष ने कहा– *"आप मेरी कुण्डलिनी उठा दीजिए, मेरी स्वयं इच्छा है"।* मैं बोला- *"ठीक है आप सुबह कमरे में आ जाना"।* दूसरे दिन सुबह ही आशुतोष आ गया। मैंने उसे अपने सामने ध्यान पर बैठाया, अबकी बार निश्चय किया कि नाभि से नीचे स्पर्श करके कुण्डलिनी को ऊर्ध्व करूँगा।

आशुतोष मेरे सामने ध्यान पर बैठ गया। कुछ क्षणों बाद मैंने शक्तिपात करने के लिए आशुतोष की नाभि के नीचे स्पर्श किया और जबरदस्त ओंकार किया, फिर मैं ध्यान पर बैठ गया। मैंने दिव्यदृष्टि का प्रयोग किया तो देखा– उसकी कुण्डलिनी बड़े आराम से सोई सोई हुई है। यह मुझे स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि वह शिवलिंग पर गोलाकार चक्कर लगाए लिपटी हुई चुपचाप सो रही है। मैं समझ गया पर्यात साधना

न होने के कारण वह तुरन्त ऊर्ध्व नहीं हो सकी है। फिर मैं गहरे ध्यान में चला गया, ध्यानावस्था में देखा– उसकी कुण्डलिनी दिखाई दे रही है कुण्डलिनी ने मुँह से अपनी पूंछ उगल दी है, अब वह अपना मुँह धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठा रही है, उसने अपना फन थोड़ा-सा चौड़ा किया। तब मुझे अपने आप में संतोष हुआ, मैंने आधे घन्टे तक ध्यान किया फिर लेट गया। 40-45 मिनट बाद आशुतोष ने भी ध्यान खोल दिया। उसने मुझसे कहा– *"मैं ड्यूटी पर जा रहा हूँ, छुट्टी लेकर वापस जल्दी लौट आऊँगा"।*

वह मेरे पास दोपहर 12 बजे वापस आ गया। मैंने उससे पूछा– *"क्या कोई अनुभव आया था?"* वह बोला– *"मुझे अनुभव तो आया था, मगर वह जल्दी की वजह से आपको बता नहीं पाया था"।* मैंने देखा– एक मानव आकार मेरे सामने खड़ा हुआ है, उसने एक हाथ से नाग को पकड़ कर उठा दिया है। नाग का रंग हल्का लाल है, उस नाग ने अपनी बन्द आँखें भी खोल दी है वह अपना मुँह भी खोले हुए है, मैं उसे देख रहा हूँ। मैं बोला– *"आपकी साधना पर्याप्त न होने के कारण मुझे जोर से शक्तिपात करना पड़ा था। यह नाग आपकी कुण्डलिनी शक्ति है, मानव आकार में मैं ही हूँ।"* उसने फिर एक बार ध्यान पर बैठने की इच्छा व्यक्त की, फिर हम दोनों थोड़ी देर में ध्यान करने के लिए बैठ गए। सायंकाल के समय मैं उसके घर ध्यान करने के लिए चला गया, कुछ समय बाद हम दोनों ध्यान करने के लिए बैठ गए। अबकी बार तीसरा नेत्र खोलने के लिए उसके मस्तक पर शक्तिपात किया। फिर मैंने देखा– उसकी गर्दन पीछे की ओर जा रही है, संकल्प करके गर्दन को पीछे जाने से रोक दिया, अब वह बिल्कुल सीधा बैठ गया। अबकी बार उसके चेहरे पर शांति के भाव दिखाई दे रहे थे, उसका ध्यान सवा घन्टे का लगा था तथा उसे कुछ अनुभव भी आए। उसने मुझे अपने अनुभव भी बताए– *"मैंने देखा एक बहुत बड़ा जलाशय है, उस जलाशय के पानी के ऊपर कुण्डली मारे हुए एक काला नाग बैठा हुआ है, उस पानी के ऊपर पेड़ के हरे-हरे पत्ते गिर रहे हैं, जैसे ही पेड़ से पत्ते गिरते है उसी समय वह नाग उन पत्तों को खा जाता है। कुछ क्षणों तक मैं यही देखता रहा"।*

फिर मैंने दूसरा अनुभव देखा– एक मानव आकार का पारदर्शी सा शरीर है, वह शरीर उज्वल सफेद तेज प्रकाश से बना हुआ है, उसके चारों ओर लोहे के काँटेदार तारों जैसा जाल बना हुआ है। मेरे देखते ही वह मानव आकार ऊपर अंतरिक्ष की और जाने लगा, थोड़ा सा ऊपर जाकर काँटेदार तारों का जल टूट गया और टुकड़े टुकड़े होकर बिखर गया, मानव आकार ऊपर अंतरिक्ष में चला गया।

कुछ क्षणों बाद फिर अनुभव आया– "बहुत बड़ा जलाशय है, उसके पानी के काफी ऊपर कमल का फूल खिला हुआ है, उस कमल के फूल के चारों ओर हल्का नीला प्रकाश फैला हुआ है" जब मैंने

पूछा– *"उस खिले हुए कमल के फूल में कितनी पंखुड़ियाँ थीं"* तब उसने कहा– *"मैं यह नहीं बता सकता हूँ कि उस फूल में कितनी पंखुड़ियाँ थी।*

कुछ क्षणों बाद फिर अनुभव आया– "एक बहुत सुन्दर शिवलिंग है उसके ऊपर सफेद रंग के बहुत सुन्दर फूल रखे हुए हैं"।

फिर एक और अनुभव आया– मुझे खड़े आकार में मस्तक पर एक आँख दिखाई दी, वह आँख इन आँखों से बड़ी थी, वह बिल्कुल स्वच्छ और चमकीली थी"।

अर्थ- मैंने इन अनुभवों को समझाना शुरू किया। पानी के ऊपर नाग पत्ते खा रहा है– नाग आपकी कुण्डलिनी है, पत्ते जड़ तत्त्व या पृथ्वी तत्व है, कुण्डलिनी जागृत होते ही पृथ्वी तत्व को खाना शुरू कर देती है, क्योंकि वह स्वयं चैतन्यमय है, कुण्डलिनी स्वयं अग्नि तत्त्व स्वरूप से प्राणियों के शरीर में विद्यमान रहती है। मानव आकार– स्वयं आपका सूक्ष्म शरीर है। कांटेदार तारों का जाल– आपके स्वयं के बंधन हैं। खिला हुआ कमल का फूल– आपका कोई चक्र है, यदि आप उस फूल की पंखुड़ियाँ गिन लेते तो आपको मालूम हो जाता कि आपका कौन-सा चक्र खुला हुआ है, क्योंकि हर चक्र के कमल के फूल की पंखुड़ियाँ अलग-अलग संख्या में होती है। अनुभव में आपको एक आँख दिखाई दी– वह आपकी तीसरी आँख है, उसे मैंने शक्तिपात करके खोल दी है ताकि आपको बारीकी से अनुभव दिखाई दे। मगर आपकी साधना पर्याप्त नहीं होने के कारण आपको दिव्य वस्तुएँ ज्यादा नहीं दिखाई देगी। यह आँख कुछ दिनों बाद अपने आप बन्द हो जाएगी, क्योंकि मैंने शक्तिपात करके जबरदस्ती खोल दी है।

दूसरे दिन आशुतोष ने बताया– शेर पर सवार एक तेजस्वी स्त्री दिखाई दी, मैं तुरन्त समझ गया की यह शेरा वाली (अम्बा देवी) है, उसके चारों ओर प्रकाश का गोलाकार वलय घूम रहा था। कुछ क्षणों बाद वह शेर से उतरी और मेरी ओर आशीर्वाद मुद्रा में हाथ उठाया, फिर वह अदृश्य हो गई।

मैंने बताया– यह अनुभव आपका बहुत ही अच्छा है, क्योंकि अम्बा देवी और कुण्डलिनी शक्ति दोनों एक ही हैं। आपके शरीर में जागृत होने के कारण आशीर्वाद देने की मुद्रा में दिखाई दे रही हैं, फिर मैंने कुछ प्राणायाम व आसन बताए। अगले दिन मैं शाकम्भरी जाने को तैयार हो गया, शाकम्भरी चलते समय मैंने आशुतोष से कहा– *"आपको कठोर साधना करनी है तभी कुण्डलिनी ऊर्ध्व रह पायेगी वरना मूलाधार चक्र में बैठ जाएगी"।* मेरे जाने के बाद आपको अनुभव कम आएँगे अथवा नहीं आएँगे, कम से कम तीन घन्टे रोजाना साधना अवश्य करना। अब मुझे अपने आप पर पूरा विश्वास हो गया कि मैं

शक्तिपात कर कुछ समय के लिए दिव्यदृष्टि भी खोल सकता हूँ। इतना अवश्य ज्ञान हुआ, गृहस्थ वालों की कुण्डलिनी उठाने के लिए अधिक शक्तिपात करना होता है। वैशाली (जलगाँव) को मैंने हल्का-सा शक्तिपात किया था, क्योंकि उस समय उसकी शादी नहीं हुई थी, इसलिए मुझे सफलता मिल गई थी। मैं 26 नवम्बर को मेरठ से शाकम्भरी में शंकराचार्य आश्रम आ गया।

शाकम्भरी आकर मेरे मन में विचार आया– वे तामसिक शक्तियाँ कहाँ चली गईं, मुझे दिखाई क्यों नहीं देती हैं? फिर मैंने संकल्प किया– "मुझे वही तामसिक शक्तियाँ दिखाई दें अथवा मुझसे झगड़ा करें"। मगर दो-तीन दिनों तक मुझे इन तामसिक शक्तियों के विषय में कोई जानकारी नहीं मिली। अब मुझे अपने आप पर क्रोध आने लगा। पहले इन्होंने मुझे भगा दिया था, अब नजर नहीं आ रहे हैं। एक दिन मैं रात्रि के समय मैं लेटा हुआ था, मुझे ऐसा लगा जैसे मुझे किसी ने स्पर्श किया है। मेरे शरीर में कम्पन सा हुआ, मुझे समझते देर नहीं लगी। मैं उठकर बैठ गया, मैंने अपनी आँखें बन्द कर ली और जोर से बोला– *"हरामजादों, कुत्तों, देखो मैं तुम्हारा बाप हूँ। मैं तुम पर प्रहार कर रहा हूँ अपने को बचा सको तो बचाओ"।* उसी समय मैंने उन सभी तामसिक शक्तियों पर, अपनी शक्ति का जबरदस्त प्रहार किया, मेरी शक्ति के प्रहार से वह सभी अंतरिक्ष में मुझसे दूर भागने लगी। उसी समय मुझे मेरे ज्ञान ने बताया– "तुम अपने सिद्ध मंत्र का प्रयोग करो"। मैंने फिर दुबारा शक्तिमंत्र का प्रयोग किया, वह सभी अंतरिक्ष में ऊपर की ओर जाने लगी। फिर मैंने और मंत्र शक्ति का प्रयोग किया, शक्ति मंत्र द्वारा निकली शक्ति ने उन सभी को गोल घेरे में कैद कर दिया, मैं मंत्र बल का तीव्र गति से प्रयोग कर रहा था। वह तामसिक शक्तियाँ गिनती में दस थीं। मगर शक्ति मंत्र द्वारा बने उस घेरे को वह सभी तोड़ नहीं सके, अब मैं बेरहमी से उन दसों को बुरी तरह से यातना देने लगा। वे सभी बुरी तरह से तड़प रहे थे तथा दर्द के कारण चीख भी रहे थे। उनमें से कुछ तामसिक शक्तियाँ बीज मंत्र भी बोल रहीं थीं। मैंने संकल्प करके कहा– *"है कोई इन्हें बचने वाला, मुझसे आकर भिड़े। अब मालूम हो जाएगा कि एक योगी से दुष्टता देने का क्या परिणाम होता है"।* यातना देते समय कुछ तामसिक शक्तियाँ काली डरावनी कुरुप शक्लों में बदल गए। मैं तुरन्त समझ गया कि अब ये तामसिक शक्तियाँ अपने वास्तविक स्वरुप में आ गई हैं। कुछ समय तक मैंने जमकर इनकी दुर्गत की, फिर मेरे सामने एक योगी जी प्रकट हो गए ओर बोले– *"बेटा, यह कार्य योगियों को शोभा नहीं देता है, इन्हें छोड़ दो"।* मैं बोला– *"जिस समय ये सभी मेरी दुर्गति कर रहे थे, उस समय आप कहाँ थे"।* योगी जी बोले– *"बेटा, तुम ज्ञानी हो, इसलिए तुम्हें अपना कर्म समझ कर शांत हो जाना चाहिए, उन्हें कभी न कभी अवश्य दण्ड मिलेगा"।* मैं योगी जी से बोला– *"योगी जी, कृपया आप जाइए मेरे सामने*

एक ही उद्देश्य है, मेरी दुर्गति अथवा इनकी दुर्गति"। वह योगी जी तुरन्त अदृश्य हो गए। मैं योग बल व सिद्धमंत्र की शक्ति का प्रहार किए जा रहा था, वह तड़प रहे थे। उसी समय अंतरिक्ष से आवाज आई– *"इन दुष्टों को छोड़ दो, अब ये तुम्हारे पास आने का साहस नहीं करेंगे"।* मैं बोला– *"प्रभु आपकी जो आज्ञा"।* मैं फिर उन तामसिक शक्तियों से बोला– *"अरे दुष्टों, यह मत समझ लेना पृथ्वी पर योगी नहीं रह गए है, देखो मैं बिल्कुल छोटा-सा योगी हूँ, तब भी तुम्हारी यह गति कर दी है। जब तक मैं पृथ्वी पर हूँ, जब तुम्हारी इच्छा चले झगड़ा करने के लिए आ जाना"।* मैंने अपनी शक्ति वापस ले ली, मेरी शक्ति मेरे शरीर में विलीन हो गई। वह दुष्ट भी अदृश्य हो गए। फिर कभी उन्होंने मेरी ओर नहीं देखा।

मैं अद्वितीय सुन्दर स्त्री के रूप में

यह अनुभव हमें 2 दिसम्बर को आया– मैं नदी के किनारे खड़ा हुआ हूँ, नदी का पानी एकदम स्वच्छ है। मैं पानी को देखकर कह रहा हूँ, मुझे इसमें स्नान करने की कोई इच्छा नहीं है। मगर जब मैं यहाँ पर आया हूँ तो स्नान करना ही पड़ेगा। फिर मैं सोचने लगा– यदि मैं पानी का स्पर्श करूँगा, तो इस पानी का प्रभाव मुझ पर अवश्य पड़ेगा। जैसे ही नदी के अन्दर प्रवेश करने के लिए मैंने अपना पैर आगे की ओर बढ़ाया, उसी समय वहीं पानी से एक मगरमच्छ प्रकट हो गया और अपना मुँह खोलकर मुझ पर हमला करना चाहा। मैंने तुरन्त अपना पैर पीछे की ओर वापस कर लिया, फिर थोड़ा सा और पीछे की ओर होकर खड़ा हो गया, क्योंकि आगे की ओर पानी में मगरमच्छ अपना पूरा मुँह खोले हुए था। जैसे ही मैं पीछे की ओर को हुआ, उसी समय मेरी पीठ की ओर एक दीवार प्रकट हो गई। अब मैं पीछे की ओर नहीं हो सका, क्योंकि दीवार प्रकट हो गई थी। मेरा बुरा हाल था, क्योंकि पीछे की ओर जा नहीं सकता था, आगे की ओर मगरमच्छ के कारण पानी में प्रवेश नहीं कर सकता था। डर के कारण पीछे की ओर मैं पीठ के बल गिर पड़ा। उसी समय मगरमच्छ के बगल में एक अति सुन्दर स्त्री प्रकट हो गई। उस स्त्री ने हरे रंग की साड़ी पहन रखी थी, उसकी साड़ी में सितारे लगे हुए थे, सितारों से झिलमिलाता हुआ प्रकाश निकल रहा था। उसका रंग एकदम गोरा था, चेहरे पर तेज झलक रहा था, सिर पर ऊँचा सा मुकुट था जिसमे मणियाँ लगी हुई थीं। उन मणियों से हल्का-हल्का प्रकाश निकल रहा था। मुकुट के कारण उसका मस्तक थोड़ा सा दिखाई दे रहा था, आँखें बड़ी-बड़ी बहुत सुन्दर लग रही थीं। उसकी आँखों की पलकें स्पष्ट दिखाई दे रही थीं, दोनों भवें कमान के समान सुन्दर थीं। नाक में एक छोटा-सा आभूषण तथा कानों में

कुण्डल पहने हुए थी। उसके चेहरे की त्वचा चिकनी व आकर्षक थी, होठों पर हलकी-सी लालिमा विद्यमान थी। वह मन्द-मन्द मुस्करा रही थी, उसके बाल लम्बे-लम्बे खुले हुए पीठ पर से होते हुए कमर के नीचे तक लटक रहे थे। उसकी गर्दन खूबसूरत दिखाई दे रही थी, वह हरे रंग का ब्लाउज व साड़ी पहने हुए थी, उसके वक्षस्थल सुन्दर उभरे हुए थे। नाभि प्रदेश का भाग बिल्कुल सकरा था, नितम्ब उभरे हुए सुन्दर लग रहे थे, जांघें सुन्दर माँसल सी थीं। पैरों में आभूषण पहने हुए थी, हाथों में ढेर सारी सुन्दर चूड़ियाँ पहने हुई थी, कुल मिलाकर वह स्त्री अत्यन्त सुन्दर थी। उसका अंग-अंग खूबसूरत था, मुस्कराते समय कभी-कभी उसके दाँत चमक जाते थे। ऐसा लगता था जैसे- दाँतों में मणियों के समान चमक है, फिर उसी समय मैं अचम्भित हो गया कि इतनी सुन्दर स्त्री कहाँ से आ गई। फिर वह मुस्कराते हुए मुझसे बोली– *“यह लो इसे खा लो”।* उसने अपना दाहिना हाथ मेरी ओर बढ़ाया, मैंने देखा– उसके हाथ में पेंसिल की मोटाई के बराबर लगभग आधा इंच लम्बी वनस्पति औषधि सी थी। क्षणभर सोच कर में मैंने कहा– *“नहीं, मैं इसे नहीं खाऊँगा”।*

अब मेरा ध्यान मगरमच्छ की ओर गया, वह अब भी मुँह खोले हुए मुझे देख रहा था। मुझे अपनी जान की पड़ी हुई थी। वह स्त्री फिर बोली– *“लो इसे खा लो”।* अबकी बार मैंने उस वनस्पति औषधि को अपने हाथ में पकड़ लिया। अब मैं औषधि को हाथों में पकड़ कर उसे गौर पूर्वक देखने लगा। मुझे वह औषधि साधारण लकड़ी की भाँति महसूस हो रही थी। मैंने उस लकड़ी नुमा औषधि को अपने मुँह में रख लिया और उसे खाने लगा। जैसे ही मैंने औषधि को हाथ में पकड़ा, उसी समय वह मगरमच्छ अपने आप गायब हो गया। औषधि खाते ही मुझे हलकी-सी नींद या आलस्य सा आने लगा। तभी मेरे शरीर के अन्दर हल्की-सी हलचल की अनुभूति होने लगी, मुझे ऐसा लगने लगा– मेरे बाहरी शरीर में कुछ बदलाव-सा हो रहा है, मेरा शरीर कुछ क्षणों में अत्यन्त गोरे रंग का हो गया। स्त्रियों के समान मेरे वक्षस्थल बढ़ने लगे, मेरे शरीर पर सितारोंदार हरे रंग की साड़ी अपने आप दिखाई देने लगी, कुछ क्षणों बाद मैं पूर्ण रूप से स्त्री रूप में परिवर्तित हो गया। इस समय मैं अत्यन्त सुन्दर युवती के रूप में खड़ा हुआ था। मेरे सामने खड़ी हुई स्त्री मुझे देख कर मुस्करा रही थी, मुझे महसूस हो रहा था कि मेरे सिर पर मुकुट लगा हुआ है। मेरे भी सिर के लम्बे-लम्बे बाल कमर के नीचे तक लटक रहे हैं, हाँथो में चूड़ियाँ और शरीर पर आभूषण हैं। फिर मैंने सामने वाली स्त्री को देखा तो मुझे ऐसा लगा कि मेरा व उस स्त्री का स्वरुप बिल्कुल एक जैसा ही है। कपड़े व गहने, मुकुट व सिर के बाल भी एक समान ही हैं। उस समय ऐसा लग रहा था एक ही स्त्री के दो रूप हैं, दोनों एक जैसे ही हैं, अर्थात जैसा स्वरुप सामने खड़ी हुई स्त्री का था वैसा ही मेरा भी स्वरुप था।

मैं अपनी यह अवस्था देखकर अति प्रसन्न हो रहा था कि अब मैं अद्वितीय सुन्दर स्त्री के रूप में खड़ा हुआ था। हम दोनों एक दूसरे को देखकर मुस्करा रहे थे, इतने में वह स्त्री अदृश्य हो गई। उसी समय मेरे पेट में अजीब-सी क्रिया होती हुई महसूस होने लगी। मैंने अपनी दृष्टि अपने पेट पर डाली तो देखा कि मेरा पेट बहुत बड़ा हो चुका है। उसी समय मुझे लगा मेरे पेट में बच्चा है, अब मैं मानसिक तौर पर हल्का-सा परेशान हुआ और सोचने लगा– यह बच्चा अब पैदा होगा, यह सोचते ही मुझे डर सा लगने लगा। मुझे याद आया बच्चा पैदा होते समय माताओं को अत्यन्त कष्ट उठाना पड़ता है, उस समय सिर्फ मैं अकेला था। चारों ओर प्रकाश फैला हुआ था, मुझे चारों ओर कोई दिखाई नहीं दे रहा था। मुझे लगा– बच्चा पैदा होने में बहुत कष्ट होगा, सहायता के लिए यहाँ पर कोई नहीं है। एक बात मैं बता दूँ– मेरे पेट में किसी तरह का बोझा या कष्ट बिल्कुल नहीं हो रहा था। मुझे लगा– बच्चा अभी पैदा होगा- मैं अपने पैर सीधे करके बैठ गया, अपना शरीर थोड़ा सा पीछे की ओर झुकाया, मेरा शरीर सम्भवता 130-140 अंश का कोण बनाता हुआ पीछे की ओर झुका हुआ था, तभी नाभि के नीचे थोड़ी हलचल-सी महसूस हुई। मैं समझ गया बच्चा अभी पैदा हो जाएगा। उसी समय बड़ी विचित्र क्रिया हुई- नाभि के चार अंगुल नीचे से जहाँ बच्चे की हलचल महसूस हो रही थी, वहीं से नीले रंग की तेज प्रकाश की किरणें निकलनी शुरू हो गई, वह किरणें मुझसे दो-तीन फीट की दूरी पर गोलाकार रूप में एकत्र होने लगीं, फिर कुछ क्षणों बाद मेरा पेट सामान्य हो गया। गोलाकार रूप में एकत्र नीले रंग की तेजस्वी किरणें एक बच्चे के रूप में परिवर्तित हो गई, वह बच्चा बैठा हुआ मेरी ओर मुस्करा रहा था। मैं उसे बड़े प्यार से देखे जा रहा था, वह तेजस्वी बच्चा बहुत ही खूबसूरत था। मैं उस बच्चे का हाथ पकड़कर चल दिया, बच्चा पाँच वर्ष के बालक की भांति लग रहा था। मैं उस समय आधारहीन अंतरिक्ष में चला जा रहा था, चारों ओर प्रकाश फैला हुआ था। उसी समय किसी ने मेरे बच्चे के लिए पूछा– *"यह कौन है"।* मैं बोला– *"यह दिव्य शक्तियों से युक्त मेरा पुत्र है, इसे साधारण न समझो"।* मैं उस बच्चे का हाथ पकड़े हुए हल्के नीले रंग के प्रकाशित अंतरिक्ष में चला जा रहा था। लड़का भी धीरे-धीरे मेरे साथ चल रहा था। उस समय मैं अद्वितीय सुन्दर स्त्री के रूप में चला जा रहा था। ऐसा लगता था कि सारे ब्रह्माण्ड की रचना मैंने ही की है। अनुभव समाप्त हो गया, मैंने अपनी आँखें खोल दी।

अर्थ- साधकों, आप सभी समझ गए होंगे कि मेरा यह अनुभव अत्यन्त उच्चकोटि का है। नदी– स्थूल संसार है। संसार का स्पर्श करते ही माया का प्रभाव मुझ पर आ जाएगा, माया के कारण ही अज्ञानता आ जाती है। अज्ञानता के कारण तृष्णा उत्पन्न होती है, यही तृष्णा मगरमच्छ के रूप में दिखाई

दे रही है जिससे मैं डर रहा हूँ। हरी साड़ी पहने हुए माता प्रकृति देवी ही है, माता प्रकृति ने मुझे औषधि के रूप में बंधन से मुक्त होने के लिए अपना रहस्यमयी ज्ञान दिया है तथा मुझे आशीर्वाद भी दिया। साधकों जब तक आप प्रकृति के विषय में पूर्ण रूप से ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेते हैं, तब तक आपको जन्म लेना अति आवश्यक है। प्रकृति का ज्ञान हो जाने पर माया प्रभावित नहीं करती है, अज्ञान भी चला जाता है। ऐसा तभी होता है जब ज्ञान (तत्वज्ञान) प्राप्त हो जाता है। बाद में मैं फिर स्वयं प्रकृति देवी के समान बन गया, यह मेरी योग में अत्यन्त उच्चावस्था है। आगे चलकर मैं प्रकृति के बंधन से मुक्त हो जाऊँगा। इसलिए अनुभव में मैं प्रकृति देवी की तरह बन गया हूँ। यह बच्चा तत्त्वज्ञान से युक्त मेरा ही स्वरूप है, यह अवस्था मुझे भविष्य में प्राप्त हो जाएगी। साधकों! पुरुष होते हुए भी मुझे स्त्रियों की हर प्रकार की अनुभूति अनुभव के द्वारा प्राप्त हो चुकी है। अर्थात मैं पुरुष भी हूँ, और स्त्री भी हूँ। इसका अर्थ है– "मैं पूर्ण हूँ"। यदि आप मेरे अनुभवों को गौर से पढ़ेंगे, तो अवश्य कई जगह पूर्णता की झलक पढ़ने के लिए मिलेगी। यह अवस्था मुझे भविष्य में प्राप्त होगी। इस अनुभव से स्पष्ट होता है– मुझमें और प्रकृति में कोई अन्तर नहीं रह गया है अर्थात मैं प्रकृति हूँ और पुरुष भी हूँ।

त्राटक

आजकल मैं त्राटक का अभ्यास बहुत करता हूँ, एक बार मैं लगभग एक घन्टे तक त्राटक का अभ्यास करता हूँ। पहले मैं बिन्दु पर त्राटक करता हूँ, फिर दर्पण पर त्राटक करने लगता हूँ। इसके बाद मैं रात्रि के समय मोमबत्ती की लौ पर त्राटक करता हूँ। दिन के समय उगते हुए सूर्य पर और डूबते हुए सूर्य पर काफी समय तक त्राटक करता रहता हूँ। कभी-कभी ऊँचे-ऊँचे पहाड़ से पेड़ के ऊपर की नोंक पर त्राटक करता हूँ, तथा रात्रि के समय आसमान में तारों पर त्राटक करता हूँ। त्राटक का अभ्यास मैंने बहुत कर लिया है। त्राटक का अधिक अभ्यास होने पर आँखों द्वारा शक्तिपात किया जा सकता है, स्पर्श करने की आवश्यकता नहीं रहती है। सभी साधकों को त्राटक का अभ्यास अवश्य करना चाहिए, क्योंकि त्राटक के द्वारा मन एकाग्र होता है। आँखों की ज्योति बढ़ती है, मगर सूर्य पर त्राटक करने से पहले अपने मार्गदर्शक से अवश्य सम्पूर्ण जानकारी कर ले। त्राटक के विषय में ज्यादा जानकारी प्राप्त करने के लिए मेरे द्वारा त्राटक पर लिखी गई पुस्तक पढ़िए।

स्वामी चिदानन्द जी

यह अनुभव 25 दिसम्बर को सुबह 3 बजे आया– मैं किसी जगह भूमि पर खड़ा हुआ हूँ, चारों ओर सुनहरा प्रकाश फैला हुआ है, मेरे पैरों के नीचे हल्की-सी आवाज के साथ भूमि फट गई। मेरे दोनों पैरों के बीच में फटी हुई भूमि पर दरार चौड़ी होने लगी। उस दरार के अन्दर नीचे की ओर अंधेरी खाई सी दिखाई देने लगी। मैं बाईं ओर वाली फटकर अलग हुई भूमि की सतह पर किनारे खड़ा हो गया, दाहिनी ओर की भूमि की सतह काफी दूर तक खिसक गई थी। अब नीचे की ओर अंधकार युक्त खाई प्रकट हो गई थी। अब भूमि मुझे बहुत दूर तक फटी हुई दिखाई दे रही थी, उसी समय मुझे लगा– "मैं फटी हुई भूमि के अन्दर (खाई में) गिर जाऊँगा, मेरा शरीर खाई की ओर झुक गया। मगर तभी आकाश से नीचे की ओर एक रस्सी लटकती हुई दिखाई दी, मैंने उस रस्सी को दोनों हाथों से पकड़ ली। रस्सी पकड़ते ही बाईं ओर की भूमि बाईं ओर को खिसक गई, अब मैं रस्सी के सहारे लटका हुआ था। मैंने नीचे की ओर देखा– नीचे अंधकार से युक्त गहरी खाई थी, मेरे दाईं ओर की भूमि की सतह पर घोर अंधकार था। बाईं ओर की सतह पर प्रकाश था, बहुत आश्चर्य जनक दृश्य था। बाईं ओर भूमि की सतह पर प्रकाश था, दाहिनी ओर की भूमि की सतह पर घोर अंधकार था। नीचे काली अंधेरी खाई थी। उसी समय मुझे याद आया– जिस रस्सी पर मैं लटक रहा हूँ, वह रस्सी कहाँ से आ गई है। मैंने ऊपर कि ओर दृष्टि की तो देखा– मैं एक सफ़ेद रंग की मोटी रस्सी पकड़े हुए हूँ, रस्सी का निचला सिरा मेरे हाथों में है, रस्सी का दूसरा सिरा अंतरिक्ष में ऊपर जाकर अदृश्य हो गया है। अंतरिक्ष में ऊपर की ओर प्रकाश दिखाई दे रहा था, प्रकाश के कारण रस्सी का ऊपरी सिरा दिखाई नहीं दे रहा था। मैं रस्सी के सहारे खाई के ऊपर लटक रहा था, बाईं ओर की सतह (चट्टान या भूमि) मुझसे एक-डेढ़ मीटर दूर थी। मैंने रस्सी पर लटके हुए ही पैर को चट्टान की ओर बढ़ाया और सोचा शायद मेरा पैर चट्टान तक पहुँच जाएगा। मगर मेरा पैर भूमि की सतह तक नहीं पहुँच सका। अब मैंने दाहिनी ओर घोर अंधकार में देखने का प्रयास किया, घोर अंधकार में चट्टान (सतह) दिखाई नहीं दे रही थी। मगर थोड़ी दूर पर अंधकार में सुरंग सी दिखाई रही थी, उस सुरंग के अन्दर तेज प्रकाश फैला हुआ था। मगर मैं सुरंग के दरवाजे तक नहीं पहुँच सकता था, मुझे रस्सी पर लटके हुए बहुत समय व्यतीत हो गया था। अपने बचाव का रास्ता दिखाई नहीं दे रहा था इतने में बाईं ओर से एक लड़के ने मुझे जोरदार धक्का मारा। धक्का लगते ही मेरे हाँथो से रस्सी छूट गई मैं सुरंग के अन्दर जाकर गिर गया, वह लड़का भी मेरे साथ ही सुरंग के अन्दर जाकर गिर गया। मगर मुझे किसी तरह की चोट नहीं लगी। मैं

उठकर खड़ा हो गया और उस लड़के की ओर देखने लगा, जिसने मुझे धक्का मारा था। वह 12-13 वर्ष का गोरे रंग का खूबसूरत सा लड़का था। वह मुझे देख कर मुस्करा रहा था। फिर लड़का अदृश्य हो गया।

अब मैं सुरंग के अन्दर प्रकाश की ओर जाने लगा, क्योंकि उधर से प्रकाश आ रहा था, मैं थोड़ा ही आगे की ओर बढ़ा था, तभी सुरंग समाप्त हो गई। मैं खुली जगह में आ गया, मगर मैं उसी समय चौंका, क्योंकि मेरे सामने स्वामी चिदानंद जी खड़े हुए थे, वह मुझे देखकर हँस रहे थे। मैं प्रसन्नता पूर्वक उनसे से बोला– *''स्वामीजी आप?''।* स्वामीजी ने हाँ की मुद्रा में सिर हिलाया, स्वामीजी अब भी हँसे जा रहे थे। उनके दाँत स्पष्ट दिखाई दे रहे थे, उनका दुबला-पतला शरीर, चेहरे से निकलता हुआ तेज, घुटनों के नीचे तक (पिंडलियों तक) लुंगी पहने हुए थे। मैं बोला– *''स्वामीजी मेरी बड़ी इच्छा थी कि मुझे आपके दर्शन हों और आपसे बात करने का अवसर मिले''।* स्वामीजी बस हँसे जा रहे थे। फिर कुछ क्षणों बाद बोले– *''अच्छा''।* फिर मैं और स्वामी जी एक जगह पर बैठ गए। स्वामीजी ने मुझसे कुछ कहा- मगर मैं उनकी भाषा समझ नहीं पाया। मैं बोला– *''स्वामीजी, आपने मुझसे क्या कहा है, मैं समझ नहीं पाया हूँ''।* स्वामी जी दुबारा फिर कुछ कहा, मगर अबकी बार भी मेरे समझ में कुछ नहीं आया। स्वामीजी किस भाषा में बोल रहे थे मैं कुछ नहीं समझ सका। इतना अवश्य था वह उत्तर भारत या मध्य भारत की भाषा नहीं बोल रहे थे। मैं फिर बोला–*''स्वामीजी,मुझे आपकी गूढ़ भाषा समझ में नहीं आ रही है''।* स्वामी जी फिर बोले- *''चलो''।* मैं और स्वामीजी उठकर खड़े हो गए, स्वामी जी आगे चलने लगे, मैं उनके पीछे-पीछे चल दिया। कुछ समय बाद मुझे लगा– मैं किसी सीढ़ी पर चढ़ रहा हूँ, सीढ़ी बिल्कुल सीधी (90 अंश का कोण बनाती खड़ी हुई है) खड़ी हुई है, सीढ़ी की ऊँचाई बहुत ज्यादा थी। मैंने ऊपर की ओर देखा– तो स्वामीजी बड़े आराम से सीढ़ी पर चढ़ते चले जा रहे हैं, जैसे उन्हें किसी प्रकार का परिश्रम ही नहीं करना पड़ रहा हो। मैं बहुत थक चुका था, स्वामी जी सर्वोच्च सिरे पर पहुँचे और सीढ़ी से हल्की-सी छलांग लगाकर दूसरे ओर के सतह पर खड़े हो गए। मैं भी उनके पीछे-पीछे चढ़ता हुआ थका-सा सर्वोच्च सीढ़ी पर पहुँच गया फिर मैंने भी जोरदार छलांग लगाई और दूसरे ओर की सतह पर खड़ा हो गया। ऊपर पहुँच कर मैं सुनहले रंग के प्रकाश में आ गया, उस समय वहाँ पर मैं और स्वामीजी थे। मुझे लगा रहा था कि मैं और स्वामीजी अंतरिक्ष के सबसे ऊपरी भाग में खड़े हुए हैं। सिर पर अंतरिक्ष स्पर्श सा कर रहा था। दृश्य ऐसा लग रहा था जैसे मैं किसी तम्बूनुमा अंतरिक्ष में आ गया हूँ। उसी समय हमने देखा– स्वामीजी बैठे हुए हैं, उनके सामने एक थाली रखी हुई है, मैं भी उनके सामने बैठ गया। स्वामीजी पहले की भाँति हँस रहे थे, उनके दाँत स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। स्वामीजी मुझसे बोले– *''आनन्द कुमार, खाइए''।* मैं उसी

थाली में खाने लगा, मगर क्या खा रहा हूँ यह मुझे दिखाई नहीं दे रहा था। स्वामीजी भी उसी थाली में खा रहे थे अर्थात दोनों एक साथ थाली में खा रहे थे। कुछ समय बाद मैं उठकर खड़ा हो गया और जिस ओर सीढ़ी लगी हुई थी, उधर आ गया। मैंने नीचे की ओर देखा– जिस सीढ़ी से मैं और स्वामीजी ऊपर आ गए थे, उस पर एक लड़का बैठा हुआ है। यह वही लड़का है जिसने मुझे धक्का देकर सुरंग के अन्दर किया था, वह मेरी ओर देखकर मुस्करा रहा था। उसने सीढ़ी नीचे की ओर खिसका दी, तब मुझे दिखाई दिया– यह सामान्य सीढ़ी नहीं है, उसकी लम्बाई असीमित है। इसका मतलब यह है मैं बहुत ऊपर आ गया हूँ। मैंने उस लड़के से कहा- *"सीढ़ी नीचे की ओर क्यों खिसका दी, अब मैं उतर कर नीचे कैसे जाऊँगा?"* उस लड़के ने इशारे से मना कर दिया। उसके इशारे का अर्थ था– अब आप नीचे की ओर नहीं आ सकते हैं, वहीं ऊपर ही रहिए। मैं स्वामी जी के पास वापस लौट आया, स्वामीजी अब भी भोजन कर रहे थे, वह बोले– *"आप नीचे जाने के लिए क्यों चिंतित हो रहे हैं, अब आप यहीं रहिए, चलो मेरे साथ भोजन करो"।* मैं स्वामी जी के साथ भोजन करने लगा। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में मैंने जिस लड़के का वर्णन किया है, यही अनुभव पहले मिरज आश्रम में गुरुपूर्णिमा (सन् 1992) को आया था। इसी लड़के ने कहा था– संकल्प करो कि सारे चक्र खुल जाएँ, फिर दही जैसा पदार्थ पिला दिया था। अनुभव में स्वामीजी मुझे बहुत ऊपर ले गए थे– मुझे शीघ्र ही उच्च अवस्था प्राप्त होगी फिर उस अवस्था से कभी भी नीचे नहीं आऊँगा। उन्होंने मुझे अपने साथ भोजन कराया– यदि कोई सन्यासी अनुभव में अपने साथ भोजन कराए तो साधक को उस सन्यासी के समकक्ष हो गया है, ऐसा समझना चाहिए। अब आगे स्वामी चिदानन्द जी मुझे शायद मार्गदर्शन नहीं देंगे, क्योंकि तत्त्व रूप से मैं और स्वामीजी एक हो गए है। स्वामी चिदानन्द अत्यन्त महान योगी हैं। मैं उनका बहुत ही सम्मान करता हूँ। प्रत्यक्ष में वे मुझे नहीं जानते हैं। उनकी चैतन्यमय शक्ति मार्गदर्शन कर रही थी। उन्हें स्वयं मालूम नहीं होगा कि उन्होंने मुझे मार्गदर्शन किया है। ये स्वामी जी शिवानन्द आश्रम के अध्यक्ष हैं। यह आश्रम ऋषिकेश से थोड़ा आगे राम झूला के पास और गंगा नदी के किनारे बना हुआ है। इस अनुभव में दिखाई देने वाला लड़का योग में सदैव मेरी सहायता करता रहा है। इस लड़के ने कभी अपना परिचय नहीं दिया है।

यह अनुभव दिसम्बर माह में आया था। मैंने ध्यानावस्था में देखा– मैं पृथ्वी पर इधर-उधर घूम रहा हूँ, जिस ओर को मैं जाता हूँ उस ओर की सम्पूर्ण मानव जाति का विनाश हो चुका होता है। बहुत से मनुष्य मर रहे हैं, ऐसा लगता है जैसे ये सभी युद्ध में मारे गए हैं, मेरा मन दुःखी सा हो जाता है। फिर मैंने

सोचा– “अब मैं अकेले रहकर क्या करूँगा, मेरा कोई जानने वाला भी नहीं बचा है”। यही सोचता हुआ मैं अकेला आगे बढ़ता जा रहा हूँ, उसी समय आकाश से आवाज आई– “जब विनाश होता है तब ऐसी ही स्थिति हो जाती है और नया युग आ जाता है”। मेरे मन में विचार आया– नए युग के आने पर बचे हुए मनुष्यों को बहुत कष्ट उठाना पड़ता होगा, क्योंकि दूर-दूर तक मनुष्य का नामोनिशान तक नहीं होता है। मैं यही सोचता हुआ आगे की ओर बढ़ता चला जा रहा हूँ और फिर जंगल में प्रवेश करता हूँ। जंगल में पेड़-पौधों के अलावा कुछ भी नहीं है, सिर्फ मैं ही अकेला बचा हुआ हूँ। ऊँची जगह पर खड़ा होकर चारों ओर को दृष्टि दौड़ाता हूँ। सर्वत्र मानव विहीन ही पृथ्वी दिखाई देती है।

सन् 1994

अहंकार का त्याग करना

यह अनुभव मुझे जनवरी के तीसरे सप्ताह में आया। मैं किसी विशाल जलाशय के पास खड़ा हूँ, इच्छा करते ही जलाशय के पानी की सतह से कुछ ऊपर मैं चलने लगा हूँ, मैं पैरों से नहीं चल रहा हूँ। मैं अपनी जगह पर खड़ा हुआ था अपने आप तीव्र गति से आगे की ओर चला जा रहा हूँ अर्थात् मेरा शरीर अपने आप आगे की ओर खिसकता जा रहा था। मेरे पैर पानी की सतह से लगभग एक फीट ऊपर थे। कुछ क्षणों बाद मैंने विशाल जलाशय पार कर लिया, पार करते समय मन में अति प्रसन्नता थी। मैं सोच रहा था– इस विशाल जलाशय को पार करने में मुझे कोई परेशानी नहीं हुई, मैं जलाशय के उस पार खड़ा हो गया। वहाँ की भूमि बहुत चमकीली व हल्की सी प्रकाशित थी तथा बिल्कुल शांत वातावरण था। मैं थोड़ा सा आगे की ओर चला, तो देखा– एक पेड़ के नीचे, पेड़ के तने के पास, ऊँचे स्थान पर एक योगी जी ध्यान मग्न बैठे हुए हैं, उनके सिर के ऊपर जटाओं का एक जूड़ा लगा हुआ है। योगी जी का शरीर पारदर्शी है, मगर वह स्पष्ट दिखाई दे रहे है। वह पेड़ भी तेजोमय है, इन सामान्य पेड़ों जैसा नहीं है, पेड़ से हल्का सा प्रकाश निकल रहा है। मैं उस योगी के सामने जाकर खड़ा हो गया। उस समय मैं अपने दाहिने हाथ में एक काला नाग पकड़े हुए था, नाग अपना फन पूरी तरह से ऊपर की ओर उठाए हुए था, मगर वह नाग मुझे डरावना नहीं लग रहा था, क्योंकि वह बिल्कुल शांत सा था। ऐसा लग रहा था जैसे मैं कोई साधारण लकड़ी पकड़े हुए हूँ। कुछ क्षणों तक मैं उस योगी को देखता रहा, वह काफी गहन समाधि में थे। मैंने वह नाग उन्हीं के सामने पटक दिया और बोला- *"अब मैं इसके बिना चल सकता हूँ, मुझे इसकी कोई जरुरत नहीं है"।* उस नाग को योगी के सामने छोड़कर मैं वापस चल दिया और जलाशय के किनारे आकर खड़ा हो गया। मैंने सोचा- मैं जहाँ से आया हूँ वही वापस जाऊँगा। जैसे ही मैंने जलाशय के ऊपर पैर रखना चाहा, उसी समय आवाज आई- *"अब आप वापस नहीं जा सकते हैं"।* मैं आवाज सुनकर ठहर गया और सोचने लगा मैं वापस क्यों नहीं जा सकता हूँ ? उसी समय मेरा ध्यान टूट गया। मैंने आँखें खोल दी।

अर्थ- साधकों! मैं काला नाग पकड़े हुए हूँ– वह मेरा तामसिक अहंकार है। अहंकार को उस योगी के सामने छोड़ दिया- अहंकार का त्याग कर दिया। जलाशय– स्थूल जगत है, स्थूल जगत को मैंने पार

कर लिया, मगर फिर स्थूल जगत में वापस नहीं आ सका अर्थात् अब मुझे स्थूल जगत में वापस नहीं आना है। आजकल मैं अनुभवों में अक्सर देखता हूँ कि जलाशय को पार कर लिया है और फिर वापस नहीं आ पाया हूँ। इसलिए अब इस प्रकार के अनुभवों का उल्लेख नहीं करूँगा। अपने हाथों में मैं नाग को पकड़े हुए था वह नाग बिल्कुल शांत था– इसका अर्थ है मैं अहंकार के आधीन नहीं था, बल्कि अहंकार को अपने हाथों में पकड़े हुए था और उसे त्याग भी देता हूँ, यह तमोगुणी अहंकार है। इस अहंकार को त्याग देने से अथवा इस पर पूर्ण विजय प्राप्त कर लेने वाले अभ्यासी को स्थूल जगत में वापस नहीं आना पड़ता है,उसे जन्म-मृत्यु आयु से छुटकारा मिल जाता है।

परकाया प्रवेश सिद्धि के लिए मुझे मना किया गया

साधकों! मेरे मन में परकाया प्रवेश सिद्धि के विषय में जानकारी के लिए कुछ दिनों से फिर इच्छा जाग्रत होने लगी है। मैं सदैव इसी सिद्धि के विषय में सोचता रहता था कि वह बन्द जगह कैसे खोली जाए। मैं ध्यान पर बैठ कर जानकारी करने लगा, एक बार मुझे फिर वही क्रिया हुई, मैं सुरंगनुमा जगह के अन्दर आगे की ओर चला जा रहा था, आगे चल कर फिर वही बन्द जगह मिली, मैं वहीं पर खड़ा होकर सोचने लगा– कि बन्द जगह कैसे खोली जाए। उसी समय मेरे मुँह से दीर्घ ओंकार निकलने लगा, ओंकार के उच्चारण से बन्द जगह में थोड़ी सी हलचल-सी होने लगी, जिस जगह पर मैं खड़ा हुआ था वह जगह भी कम्पन कर रही थी। उसी समय मेरे ज्ञान ने मुझे समझाया– "तुम और ओंकार करो तथा यह संकल्प करो"। मैंने फिर दोबारा वहीं खड़े होकर जोर से दीर्घ ओंकार किया। फिर ऐसा लगा- जैसे बन्द जगह में तूफान-सा आ गया है, आकाश में भी उथल-पुथल हो रही है। मैं जोर से बोला- *"हे अवरोध तू दूर हो जा"।* मगर मेरे संकल्प करने से समस्या हल नहीं हुई, जब मैं लगातार ओंकार करने लगा, तब वह बन्द जगह खुलती-सी दिखाई देनी लगी। मगर तभी मेरे कानों में बहुत तेज आवाज सुनाई दी– *"योगी ऐसी भूल मत करना, तुम्हें अपने मार्ग में आगे बढ़ना चाहिए"।* उसी समय मेरा ध्यान टूट गया। मैंने अपनी आँखें खोल दी।

फिर मैं बैठ कर सोचने लगा, इस आवाज ने मुझे ऐसा क्यों कहा– *"ऐसी भूल मत करना"*। क्या मैं कोई पाप अथवा अधर्म कर रहा हूँ, यह भी तो योग ही है। मैंने सोचा– अब मैं ज्ञानचक्र के द्वारा बाहर निकलूँगा। मैं कुछ दिनों तक ज्ञानचक्र द्वारा निकलने का प्रयास करता रहा, मगर मुझे सफलता नहीं मिली।

मैं भी हारने वाला अभ्यासी नहीं हूँ। आखिरकार एक दिन कामयाबी मिल गई, मैंने ध्यानावस्था में देखा– ज्ञानचक्र दूर अंतरिक्ष से मेरे पास आता जा रहा है। वह अपनी जगह पर तीव्र गति से घूम रहा था। फिर धीरे-धीरे उसकी गति कम होती गई, कुछ क्षणों बाद वह बिल्कुल स्थिर हो गया। अब ज्ञानचक्र मेरे बिल्कुल पास आ गया तथा उसका आकार भी पहले की अपेक्षा बहुत बड़ा हो गया। मुझे ज्ञानचक्र के मध्य भाग में छिद्र का आकार बहुत बड़ा दिखाई दे रहा था, इसी छिद्र के द्वारा मुझे उस पार जाना था। मैं तेजी से अंतरिक्ष में ऊपर की ओर उठता हुआ उस छिद्र में प्रवेश कर गया और छिद्र में आगे की ओर बढ़ता गया, ज्ञानचक्र ने अपने स्थान पर गति करना शुरू कर दिया। मैं तीव्र गति से आगे की ओर चला जा रहा था, तभी मुझे लगा मैं अंतरिक्ष में आ गया हूँ। अंतरिक्ष में हल्का नीला चमकीला प्रकाश फैला हुआ था, उसी समय मैंने सामने की ओर देखा– मेरे सामने भगवान विष्णु विशालकाय शरीर में खड़े हुए थे, मैं उनके सामने बिल्कुल छोटा-सा लग रहा था। मैं भगवान विष्णु का सुन्दर शरीर देख रहा था, वह पीताम्बर पहने हुए थे, वह चारों भुजाओं में शंख, चक्र, गदा व पद्म धारण किए हुए थे। वह धीरे-धीरे मुस्करा रहे थे, मैं भी उन्हें देखकर मुस्करा रहा था। मैं बोला– *"प्रभू आप"।* वह सिर्फ मुस्करा रहे थे, कुछ क्षणों बाद वह बोले– *"योगी पुत्र, तुम इस सिद्धि के विषय में क्यों जानना चाहते हो"।* पहले मैं चुप रहा फिर मैं बोला– *"मैंने सोचा कुछ खोज की जाए, इसलिए इस सिद्धि के विषय में जानना चाहता हूँ, मैं इस सिद्धि को प्राप्त भी करना चाहता हूँ"।* भगवान विष्णु बोले– *"योगी पुत्र, तुम लौट जाओ तुम इस सिद्धि को प्राप्त करने यहाँ नहीं आए हो, तुम भूलोक पर ज्ञान प्राप्त करने के लिए गए हो,तुम्हें ज्ञान प्राप्त करना चाहिए,तुम योग का फल प्राप्त करो, यह सिद्धि तुम्हारे लिए अवरोध हैं"।* फिर भगवान विष्णु अदृश्य हो गए। उसी समय मैं ज्ञानचक्र के छिद्र से वापस आने लगा, फिर वापस आकर मैं अंतरिक्ष में खड़ा हो गया। तभी मेरी आँखें खुल गई। मैं सोचने लगा इस विषय में शायद अब ज्यादा नहीं जान पाऊँगा, क्योंकि मेरे मार्ग के आगे भगवान विष्णु खड़े हो गए हैं।

शाकम्भरी आश्रम छोड़ दिया

साधकों, मैं जिस आश्रम में रहता था, उसमें अक्सर बाहरी लोगों द्वारा भंडारा होता रहता था। इसलिए मुझे भी वहाँ पर कभी-कभी भोजन करना पड़ता था। तीर्थस्थल होने के कारण इस आश्रम में कभी-कभी बहुत भीड़ हो जाती थी, इस कारण मुझे ध्यान करने में थोड़ी असुविधा सी होती थी तथा वहाँ

पर सदैव अशुद्धता का राज्य रहता था। ऊपर से कभी कभी भंडारे का भोजन करना पड़ता था। आश्रम में हर प्रकार के लोग आते-जाते थे। पुलिस भी कभी-कभी उलटे-सीधे लोगों को पकड़ने के लिए आया करती थी, मेरा मन यहाँ से भर गया था। अब मेरी इच्छा यहाँ रुकने की बिल्कुल नहीं थी, क्योंकि मुझे शुद्धता वाली जगह चाहिए थी। यहाँ पर अशुद्धता ही अशुद्धता थी। मैंने सोचा- कुछ समय में यहाँ से चला जाऊँगा, व्यक्तिगति रूप से एकांत में स्वामी जी ने ध्यान करने के लिए सम्पूर्ण व्यवस्था कर रखी थी। फिर भी मेरा मन कह रहा था मुझे यहाँ से चला जाना चाहिए।

मार्च माह का दूसरा सप्ताह था, सर्दी बहुत पड़ रही थी। शाकम्भरी में मेला लगा हुआ था, इस कारण आश्रम में बहुत ज्यादा भीड़ थी। एक दिन सुबह तीन बजे शौच के लिए चल दिया, मैं आश्रम के अन्दर से होते हुए चला जा रहा था। आश्रम के मध्य भाग में एक कुँआ है, उसी में नल लगा हुआ है। मुझे नल से शौच के लिए पानी भरना था। आश्रम में सभी जगह तेज रोशनी का प्रबन्ध था, रात्रि के समय भी दिन जैसा प्रकाश बना रहता था। मैं कुएँ से पानी भरने जा रहा था, उसी समय मुझे नल चलाने की आवाज सुनाई दी। मैंने सोचा नल से कोई पानी ले रहा होगा। जैसे ही कुएँ के पास पहुँचा तो वहाँ का दृश्य देखकर मेरे पैर अपने आप स्तम्भित हो गए। मेरी आँखें खुली-की-खुली रह गई, मैं अपनी जगह से हिल नहीं सका, क्योंकि मेरे सामने 22-24 साल की स्त्री बिल्कुल निर्वस्त्र खड़ी हुई थी। शायद मेरे पैरों की आहट से उसे मालूम हो गया होगा कि कोई आ रहा है, इसलिए वह मेरी ओर देख रही थी। वह स्त्री स्नान कर रही थी, उसने अपने दोनों हाथ सिर के ऊपर बालों में लगा रखे थे। वह इसी मुद्रा में खड़ी हुई थी, उसके सिर के ऊपर तेज बल्ब जल रहा था। यह जगह आंगननुमा है तथा चारों ओर से खुली हुई है। मैं एक तरफ से आकर उसके सामने बिल्कुल पास आकर खड़ा हो गया था। कुछ क्षणों तक मैं उसे देखता रहा, वह मुझे देख रही थी। मुझे ऐसा लगा मानों मेरे शरीर में जान ही नहीं है। फिर वह स्त्री मेरी ओर पीठ करके बैठ गई, वहीं पर दूसरी स्त्री उसी उम्र की नल चला रही थी। उसने भी ऐसे कपड़े पहने हुए थे कि मुझे देखकर शर्म आ गई, मैंने भी अपनी पीठ उसी की ओर को कर ली। मुझे शौच जोर से आ रहा था, इसलिए परेशानी सी महसूस हुई। मैंने अपना लोटा आगे की ओर बढ़ा दियाऔर बोला– *"कृपया आप इस लोटे में पानी भर दें"।* नल चलाने वाली स्त्री ने मुझे पानी भर कर दे दिया, मैं शौच करने के लिए चला गया। शौच करके जब वापस आया तब दूसरी स्त्री स्नान कर रही थी। मैं दूसरी तरफ से होकर अपने कमरे में आ गया। फिर उन स्त्रियों के विषय में सोचने लगा, ध्यान करने का समय हो गया था इसलिए मैं ध्यान पर बैठ गया। बहुत प्रयास करने के बाद भी ध्यान नहीं लगा, क्योंकि मन दुखी हो रहा था। उसी समय मैंने निश्चिय

किया मैं शीघ्र ही आश्रम छोड़ दूँगा, मैंने अपनी बात स्वामी जी को बताई। स्वामी जी बोले– *"आपका इसमें क्या दोष है, मैंने यह सोच कर आपको रखा था कि आप हम सभी को योग सिखाएँगे, फिर भी आप जाना चाहें तो जा सकते हैं"।* बाद में मालूम हुआ कि वह दोनों स्त्रियाँ उच्च घराने की थीं, उन्हें भी धोखा हुआ होगा। उन्होंने सोचा होगा– आश्रम में सभी लोग सोए हुए हैं, इसलिए नग्न होकर स्नान कर रही थीं। यह मेरा दुर्भाग्य था कि मैं उनके सामने ऐसी अवस्था में पहुँच गया। मैंने निश्चय किया, मैं अब इस आश्रम में नहीं रहूँगा। मैंने दो दिन बाद शाकम्भरी आश्रम छोड़ दिया, फिर मैं मेरठ होते हुए मैं अपने घर आ गया।

भगवान बजरंगबली जी

यह अनुभव अप्रैल माह के प्रथम सप्ताह में आया था, ध्यानावस्था में देखा– मैं नदी के अन्दर पानी में चलकर उल्टे बहाव की ओर जा रहा हूँ, अर्थात नदी में जिस ओर से पानी आ रहा है। मैं अपने मन में सोच रहा हूँ कि इस नदी का उद्गम कहाँ पर है, यह मैं देखना चाहता हूँ। जिस समय मैं नदी के अन्दर पानी में चल रहा था उस समय पानी अपने आप दोनों ओर को हट जाता था अर्थात पानी मुझे रास्ता देता जा रहा था। मैं नदी के अन्दर रेतीली सतह पर चल रहा था, क्योंकि पानी अपने आप दो भागो में बँट जाता था, इससे नदी की भूमि प्रकट हो जाती थी। कुछ समय तक इसी प्रकार चलने के बाद नदी संकरी व उथली हो गई थी, मैं नदी के आखिरी किनारे पर आ गया। फिर मैंने देखा नदी का पानी एक गुफ़ा के अन्दर से आ रहा है, मैंने गुफ़ा के अन्दर प्रवेश किया। गुफ़ा के अन्दर की लम्बाई 15-20 मीटर रही होगी। जैसे ही मैंने गुफ़ा के अन्दर प्रवेश किया तो देखा– गुफ़ा के दाहिनी ओर भगवान बजरंग बली जी लेटे हुए हैं। मैंने उन्हें देखते ही कहा– *"प्रभु आप, आप यहाँ लेटे हुए हैं"।* मगर वह नहीं बोले, वह दाहिनी करवट के बल लेटे हुए थे। उनका शरीर विशाल आकार वाला था, उनके पैर गुफ़ा के दरवाजे की ओर थे, सिर गुफ़ा के अन्दर की ओर था। उनके सिर के पास ही गुफ़ा समाप्त होती थी। वह पानी से अलग भूमि पर लेटे हुए थे। उनका शरीर तेजस्वी था तथा उनके शरीर से हल्का सुनहरा प्रकाश निकल रहा था। मेरे बुलाने पर जब वह नहीं बोले तो मैं उनके पास आ गया। मैंने उनके पैरों पर नमस्कार किया, फिर मैं वहीं उनके पैरों के पास पानी में बैठ गया। मेरे बैठते ही पानी स्वमेव उतनी जगह से अलग हो गया, जैसे पानी ने मुझे बैठने के लिए जगह दे दी हो। पानी के ऊपरी सतह से मैं एक-डेढ़ फीट नीचे बैठा हुआ था। पानी मुझसे दूर होकर बह रहा था। मैंने एक बार भगवान बजरंगबली जी को जी भर के देखा, क्योंकि वह मुझे

बहुत सुन्दर लग रहे थे। वह बिल्कुल शांत लेटे हुए थे। मैं उनके पैरों के पास बैठा हुआ उनका चेहरा देख रहा था। फिर मैं उस उद्गम (स्रोत) को देखने लगा जहाँ से पानी निकल रहा था। वहाँ पर बिल्कुल छोटा-सा गड्ढा बना हुआ था। मैंने सोचा– मैं उस गड्ढे में हाथ डालकर देखूँगा कि यह गड्ढा कितना गहरा है और पानी कहाँ से आता है। उसी समय उद्गम से आवाज आई– "आप इस उद्गम में हाथ मत डालिए, यह सिर्फ देखने में छोटा-सा दिखाई देता है मगर यह अथाह है, आप अपना विचार त्याग दीजिए। जब से ब्रह्माण्ड की रचना हुई है, तब से लेकर आज तक कोई इसका थाह नहीं ले पाया है"। मैं सोचने लगा– इसमें ऐसी कितनी गहराई है जो आज तक कोई थाह नहीं ले पाया है। मैं यही सोच ही रहा था, तभी उद्गम के ऊपर कुण्डली मारे फन ऊपर उठाए हुए एक नाग दिखाई दिया। कुछ क्षणों के लिए मैं आश्चर्य चकित रह गया, फिर मैं हँसा और बोला– *"वाह, माँ मैं आपको पहचान गया आप कुण्डलिनी शक्ति हैं। मैं आपके इस स्वरुप से नहीं डरता हूँ"।* इतने में वह नाग पानी के ऊपर कुण्डली मारे हुए, पानी में बहता हुआ मेरे पास आ गया और मेरे शरीर को चाटने लगा। उसके चाटने से मेरे शरीर में विचित्र-सी गुदगुदी-सी होने लगी। इतने में मेरा अनुभव समाप्त हुआ।

अर्थ- नदी- स्थूल जगत है, मैं स्थूल जगत के उद्गम स्थान पर पहुँच गया था। मैं नदी के अन्दर चला जा रहा था पानी अपने आप अलग होता जा रहा था– स्थूल जगत का प्रभाव मुझ पर नहीं पड़ रहा था तथा उसका प्रभाव अलग हो जाता था। गुफ़ा के अन्दर का उद्गम क्षेत्र ब्रह्माण्ड का वह स्थान है जिस जगह से उत्पत्ति शुरू हुई है। वह स्थान अत्यन्त तेजोमयी है। वही यहाँ पर उद्गम के रूप में दिख रहा है चैतन्यमय शक्ति का केंद्र यही स्थान है। चैतन्यमय शक्ति अर्थात कुण्डलिनी शक्ति इसीलिए उद्गम स्थान के ऊपर दिखाई दे रही है। मुझे चाटने लगी अर्थात मुझसे स्नेह कर रही है, क्योंकि मैं उसका पुत्र भी हूँ। अनुभव में मुझे जो गुफ़ा दिखाई दी थी, फिर मैं उसके अन्दर चला गया– यह गुफ़ा प्राणियों के चित्त में हृदय-गुफ़ा के रूप में जानी जाती है। गुफ़ा के अन्दर बजरंगबली जी (हनुमान जी) लेटे हुए थे– बजरंगबली जी वायुतत्व से उत्पन्न हुए हैं। तथा संसार की संरचना भी वायुतत्व के द्वारा आकाश में अधिष्ठित होकर हुई है। इसलिए बजरंग बली जी अपने विशाल स्वरुप धारण किए हुए लेटें थे, वैसे भी वह ग्यारहवें रुद्र के अंशावतार हैं। संसार की उत्पत्ति के स्थान में ही, शक्ति स्वरुप कुण्डलिनी दिखाई दे रही है अर्थात अपरा-प्रकृति के प्राकट्य के साथ ही शक्ति स्वरुप कुण्डलिनी का प्राकट्य हो जाता है। इसलिए मुझसे कहा गया– *"उद्गम स्थान बहुत गहरा है"*, क्योंकि अपरा-प्रकृति का प्राकट्य परा प्रकृति के अन्दर ही हुआ है, अर्थात अपरा प्रकृति का अस्तित्व परा प्रकृति के अन्दर सिमित क्षेत्र में होता है। यह उत्पत्ति का केन्द्र

वृत्तियों के द्वारा दिखाया गया है, वास्तव में उत्पत्ति का केन्द्र भिन्न प्रकार का है, मैंने इसका वर्णन अन्य जगह पर किया हुआ है।

मेरी तरह बनो

15 अप्रैल का दिन था, घर में कुछ वाद-विवाद हो गया था, इसलिए थोड़ा चिंतित था। मैं सुबह ही गाँव की नदी के किनारे-किनारे दूर तक चला गया। कुछ दूर निकल कर नदी के किनारे बबूल के पेड़ के नीचे बैठ गया, यहाँ पर किसी प्रकार का कोलाहल नहीं था, वातावरण बिल्कुल शान्त था। मैं बबूल के पेड़ के नीचे घनी छाँव में बैठा हुआ था, बहुत तेज गर्मी के कारण यहाँ पर ठण्डक सी लग रही थी। मैं आसन लगाकर बैठ गया, चिंतित होने के कारण बहुत ज्यादा गहरा ध्यान नहीं लगा। फिर भी एक घन्टे का ध्यान किया, ध्यान के उपरान्त वहीं भूमि पर लेट गया। मन के अन्दर मन्त्रोचारण हो रहा था, साथ ही ईश्वर को भी याद कर रहा था। मैंने ईश्वर से कहा– “प्रभु! जब मेरे जैसे साधक का यह हाल है तो बेचारे नए साधकों का क्या हाल होता होगा। इतनी परेशानियों में वह अपने लक्ष्य से ही भटक जाएँगे, यह सही है साधकों को कभी-कभी बिना कारण के ही कष्ट उठाना पड़ता है, यह तो आदिकाल से चला आ रहा है”। उस समय लू बहुत चल रही थी, इसलिए गर्मी बहुत बढ़ गई थी। मेरी इच्छा ध्यान करने की हुई, मैं ध्यान पर बैठ गया। ध्यान लगभग डेढ़ घन्टे का लगा, ध्यान के कारण मन थोड़ा प्रसन्न सा हो गया, शरीर में थोड़ी थकान-सी हुई इसलिए मैं वहीं पर बबूल के पेड़ के नीचे लेट गया। मैंने अपनी आँखें बन्द कर ली और बबूल के पेड़ से पूछा– “हैलो मित्र, कैसे हो”। उत्तर मिला– “मैं नदी के किनारे खड़ा हुआ लहलहा रहा हूँ, ग्रीष्म ऋतु की चाहे चलती हुई लू हो, अथवा शरद ऋतु की चलती हुई ठण्डी हवाएँ हों, फिर भी मैं मस्ती में झूमता रहता हूँ। मनुष्य आकर कुल्हाड़ी से मेरी डालियाँ काटता है फिर भी मैं उफ नहीं करता हूँ। मेरे शरीर में काँटे हैं तो क्या हुआ, मनुष्यों को मैं शीतल छाया देता हूँ, उस समय मैं तेज धूप सहन करता हूँ। अब आप मेरी छाया में लेटे हुए हैं, मैं बिल्कुल प्रसन्न हूँ, एक आप हैं जो थोड़ी-सी बात पर चिंतित हो रहे हैं। आप अपने आपको साधक कहते हैं, अभी और साधना करो और मेरी तरह बनो। आप स्वयं कष्ट सहो और दूसरों की सेवा करो”।

अर्थ- बबूल के पेड़ ने कितनी शिक्षाप्रद बात कही है। साधक योग की उच्चतम अवस्था में पेड़ों के द्वारा दिए गए संकेत समझ सकता हैं। ये मनुष्य की तरह बात तो नहीं कर सकते हैं, मगर सूक्ष्म तरंगे

छोड़ते रहते हैं। योगी इन तरंगों का अर्थ समझ सकता है। इस विधि से सम्पर्क करने के लिए योगी को कारण अवस्था में होना जरूरी है। मैंने पेड़ों पर बहुत प्रयोग किए है, उन प्रयोगों के विषय में मैं नहीं लिख रहा हूँ, क्योंकि उनका लिखना उचित नहीं समझता हूँ।

साधकों, ध्यानावस्था में अब अनुभव नहीं आते हैं। अनुभव अब इस अवस्था में आने भी नहीं चाहिए, क्योंकि अनुभव आने से इस अवस्था में समाधि के लिए बाधा होते है। कभी-कभी अनुभव समाधि टूटने के बाद आ जाते है। जब प्राण ब्रह्मरन्ध्र से नीचे आ जाता है, अथवा बहुत समय के बाद योगनिद्रा में अनुभव आ जाते हैं, इस वर्ष के शुरुआत में एक दो अनुभव आए, उसके बाद फिर अनुभव नहीं आए। हाँ, जानकारियाँ आदि बराबर होती रहती हैं, उनको यहाँ पर लिखना उचित नहीं समझता हूँ। अब कुछ अनुभव अगस्त माह में आए हैं। एक-दो अनुभवों को लिख रहा हूँ।

अगस्त माह के प्रथम सप्ताह में अनुभव आया– अंतरिक्ष में चारों ओर हल्के नीले रंग का तेज प्रकाश फैला हुआ हैं, मैं उसी अन्तरिक्ष में इधर-उधर घूम रहा हूँ। तभी मुझे अपने सामने एक स्त्री दिखाई दी, उस स्त्री के तीन नेत्र थे, उसके तीनों नेत्र खुले हुए थे। मैंने उस स्त्री का चेहरा गौर पूर्वक देख रहा था, वह स्त्री बहुत सुन्दर थी। मैंने उस स्त्री से उसके तीसरे नेत्र की ओर इशारा करते हुए कहा– "आपके तो तीन नेत्र हैं सभी प्राणियों के तो दो नेत्र होते हैं"। वह स्त्री कुछ नहीं बोली सिर्फ मुस्करा दी, फिर 'हाँ' में सिर हिलाया। मैं सोच रहा था– इस स्त्री के तीन नेत्र हैं, यह कितनी अच्छी लग रही है। मैं समझ गया यह स्त्री सामान्य स्त्री नहीं है। मैं उस स्त्री से कुछ भी उत्सुकता बस पूछता तो वह 'हाँ' में सिर हिला देती थी। वह स्त्री कुछ क्षणों तक मेरे साथ अन्तरिक्ष में घूमती रही फिर अदृश्य हो गई।

अर्थ- साधकों! यह अनुभव कारण जगत का था, जब सारा अन्तरिक्ष हल्के नीले प्रकाश से चमक रहा हो तथा चारों ओर नीला प्रकाश ही दिखाई दे, उसका ब्रह्मरंध्र खुला हो, तब समझ लेना चाहिए कि यह दृश्य कारण जगत का है। योगी के लिए यही उच्च अवस्था की शुरुआत होती है।

विशालकाय हाथी

यह अनुभव शायद 11-12 अगस्त को आया था। मैं नीले रंग के आसमान में खड़ा हूँ, चारों ओर नीले रंग का तेज प्रकाश ही प्रकाश फैला हुआ है, मेरे अलावा वहाँ पर कोई नहीं है। मेरे पीछे की ओर मेरा

घर है (यह स्थूल घर नहीं)। उसी समय मैं बोलने लगा– “मैंने उसका त्याग कर दिया है, मेरे घर से उसे ले जाओ”। मेरे द्वारा इन शब्दों को बोलने से सम्पूर्ण आकाश गूँज उठा, मेरे द्वारा इतना कहते ही मेरे घर के अन्दर से एक हाथी निकल कर मेरी ओर सामने आ गया। मैंने हाथी को देखते ही कहा– “आप जाइए, मैं आपको ग्रहण नहीं करूँगा, मुझे आपकी जरूरत नहीं है”। इतना कहते ही वह हाथी एक और को चल दिया। थोड़ा सा आगे की ओर चलकर हाथी अन्तरिक्ष में ऊपर की ओर जाने लगा, मेरे देखते ही नीले प्रकाश में विलीन हो गया। मैं अन्तरिक्ष की ओर देखता रह गया। हाथी देखने में बहुत सुन्दर लग रहा था।

तभी कुछ क्षणों में देखा– विलीन होने के स्थान से वही हाथी फिर प्रकट होकर मेरी ओर आने लगा, अबकी बार उसके ऊपर एक महावत बैठा हुआ था, वह महावत हाथी को हाँक रहा था। अबकी बार हाथी का शरीर अत्यन्त विशाल व बहुत ऊँचा था, उसका इतना विशाल शरीर देखकर मैं आश्चर्य में पड़ गया। हाथी मुझसे 20-25 मीटर की दूरी पर आकर खड़ा हो गया। महावत मुझसे बोला– “यह आपके लिए ही है, आप इसे स्वीकार कर ले”। वह विशालकाय हाथी मेरी ओर निष्भाव से देख रहा था, महावत भी उतर कर नीचे खड़ा हो गया। मैं महावत से बोला– “मुझे यह हाथी नहीं चाहिए, मैं इसका त्याग कर चूका हूँ”। मगर महावत ने उत्तर में कुछ नहीं बोला– उसने नम्रता से अपने हाथ जोड़कर मेरे सामने झुका और अकेला वापस चल दिया। मैं हाथी से बोला– “कृपया आप जाइए, मुझे आपकी आवश्यकता नहीं है।” हाथी मेरी ओर देख रहा था। मैं भी हाथी को छोड़कर एक तरफ को चल दिया। मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- यह अनुभव भी कारण जगत से सम्बन्धित है, अनुभव में हाथी का अर्थ भिन्न-भिन्न प्रकार का होता है। जब काले रंग का हाथी दिखाई दे तथा कुछ डरावना सा लगे तब साधक को समझ लेना चाहिए यह उसका तमोगुणी कर्म है, ये कर्म उसे भोगने ही होगे। जब हाथी सफेद रंग का दिखाई दे तब साधक को समझ लेना चाहिए, उसे शीघ्र ही यस, कीर्ति और विभिन्न प्रकार का सुख भोगना ही होगा। यहाँ पर हाथी का अर्थ है– यश, कीर्ति, सुख और धन का प्राप्त होना है। मैंने हाथी को त्याग दिया है अर्थात मुझे यश, कीर्ति और सुख नहीं चाहिए। अन्त में महावत हाथी को मेरे सामने छोड़कर चला गया, फिर मैं भी हाथी को छोड़कर चल दिया। अर्थात भविष्य में मुझे यश, कीर्ति, सुख और धन ज्यादा नहीं मिलेगा, क्योंकि मैंने उसका त्याग कर दिया है। मगर हाथी मेरी ओर देख रहा है– इसलिए कभी न कभी यश का प्रभाव मुझ पर अवश्य पड़ेगा। ऐसा बहुत समय बाद भविष्य में होगा।

इस अनुभव के बाद मेरे चित्त में वैराग्य वाली वृत्तियाँ प्रकट होने लगीं– “कि इस संसार में आपके निकट-सम्बन्धी कोई नहीं हैं, सिर्फ कर्मों के कारण वह आपके सम्बन्धी बने हैं, वह अपना कर्म कर रहे हैं और भोग रहे हैं, आप भी अपना कर्म कर रहे है और भोग रहे हैं। तुम क्यों किसी की चिंता करते हो, तुम जो कर्म करते हो वही भविष्य में भोग करोगे। तुम संसार में अकेले हो, तुम्हें वहाँ जाना है जहाँ पर योगी जाता है। इसलिए अपने समय का सदुपयोग करो, त्याग दो संसार की सारी वस्तुओं को और मुक्त हो जाओ। तुमने अच्छा किया जो हाथी का त्याग कर दिया, अपने निज स्वरूप की ओर जाओ”। कभी-कभी लगता है जैसे मेरा मस्तिष्क खाली है, क्योंकि मैं कुछ भी नहीं सोच रहा होता हूँ। कभी-कभी मेरे मुँह से अपने आप निकलता है– “संसार भ्रम मात्र है”। यह योग के अभ्यास के माध्यम से पहले ही जान चुका हूँ।

अब मैंने योग पर लेख लिखना शुरु कर दिया था, क्योंकि शाकम्भरी में आदि गुरु शंकराचार्य जी ने मुझे प्रेरित किया था कि आप योग पर लेख लिखिए। मगर मेरे अन्दर ऐसी प्रेरणा जाग्रत हुई– “आप लेख लिखना रोक दीजिए, पहले कुछ समय तक कठोर साधना करो”। मैंने लेखन कार्य बन्द कर दिया। आजकल मैं घर में अकेला रहता था, घर के सभी सदस्य दिल्ली गए हुए थे, मैं कठोर साधना करने में लग गया। मैंने भोजन लेना भी बन्द कर दिया था। सुबह-शाम सिर्फ दूध लेता था, दोपहर के समय थोड़ा सा तरल पदार्थ लेता था, मैं कठोर साधना करने में लीन हो गया। मेरा शरीर दिन-पर-दिन दुर्बल होने लगा था। कुछ दिनों बाद मेरा शरीर बिल्कुल हड्डियों का ढाँचा बन गया, मुझे अब थकान भी आने लगती थी। मगर समाधि का समय बहुत ज्यादा बढ़ गया था, अब मेरी साधना सो जाने के बाद भी निद्रावस्था में भी हुआ करती थी। मैं ज्यादातर चुप ही रहता था, गाँव वालों से ज्यादा सम्बन्ध नहीं रखता था। अब मुझे अच्छी तरह मालूम हो चुका था, मेरी अवस्था बहुत उच्च हो गई है। शेष कर्म भी योग के अभ्यास के द्वारा सूक्ष्म व कमजोर होने लगे है। मुझे अपने आप में प्रसन्नता थी कि मैंने कठोर साधना करके इस अवस्था को प्राप्त कर लिया है। इस अवस्था को प्राप्त करने के लिए मैंने समाज का और अपने कहे जाने वालो का बहुत अपमान सहा है,इस समय मेरी बहुत ही दुर्गति हुई है, मगर मैंने योग नहीं छोड़ा और न ही कभी योग छोड़ने का विचार आया। एक बार मैंने अपने पिताजी से कहा– “आप मेरी चाहे जितनी दुर्गति करें, मेरा खर्च बन्द करें, मेरा भोजन चाहे जितने दिन बन्द रखें, मगर आप मेरा योग नहीं छुड़ा सकते हैं। आपके अन्दर सामर्थ्य नहीं है मेरे योग को बन्द करवा देने का। आपका मार्ग पाप का है, उसका फल अवश्य भोगेंगे, उस समय आपकी दुर्गति होगी। मैंने कष्ट सहकर योग का अभ्यास किया है, इसलिए योग में मेरी यह स्थिति है। वैसे आप मेरे साथ कल्याण का कार्य कर रहे हैं, आप कष्ट देकर मेरे कर्मों को नष्ट कर रहे

हैं तथा ये समझा रहे हो कि इस दुनिया में तेरा कोई नहीं है, मुझे इस व्यवहार से बहुत शिक्षा मिली है। हम आपके आभारी हैं"।

पृथ्वी का आशीर्वाद

यह अनुभव सितम्बर माह के आखिरी सप्ताह में आया था। मैं पृथ्वी पर किसी स्थान पर खड़ा हूँ, मुझसे 10-15 मी. की दूरी पर अचानक हल्की-सी आवाज के साथ पृथ्वी फट गई। उस फटे हुए भाग से ऊपर की ओर एक अत्यन्त सुन्दर स्त्री प्रकट हो गई। स्त्री के शरीर का कमर से ऊपर का भाग पृथ्वी के धरातल से ऊपर था, कमर से निचला भाग पृथ्वी के अन्दर समाया हुआ था। उस स्त्री ने हरे रंग की साड़ी पहन रखी थी, उसके सिर पर बहुत सुन्दर चमचमाता हुआ मुकुट था। उसका चेहरा अत्यन्त सुन्दर था, गले में सुन्दर माला थी। उस माला में मणियाँ चमक रही थीं। उसने अपने दोनों हाथ मेरी ओर बढ़ा दिए, मैं उससे बहुत दूरी पर खड़ा हुआ था। उसके हाथ मेरी ओर को लम्बे होते गए। उस स्त्री के 10-15 मी. लम्बे हाथ मेरे पास आ गए। वह हाथों में कुछ हाथ में लिए हुए थी, मगर मुझे यह दिखाई नहीं दे रहा था कि हाथो में वह क्या लिए हुए है। उस स्त्री ने वह वस्तु मुझे दे दी, मैंने दोनों हाथों में उस वस्तु को ले लिया, मगर मेरी समझ में यह नहीं आ रहा था कि मैंने उससे क्या ले लिया है। फिर वह स्त्री बोली– *"पुत्र, तुम जान गए होगे कि मैं पृथ्वी हूँ"।* मैं बोला– "हाँ माता, मुझे मालूम है कि आप पृथ्वी हैं"। वह बोली– *"जो मैंने दिया है वह ग्रहण करो, इससे भविष्य में तुम्हें बहुत लाभ होगा। जब तुम मेरा स्मरण करोगे, उस समय तुम्हारे शरीर का पृथ्वी तत्त्व निश्चित मात्रा में कम हो जाएगा। इससे शक्तिपात करने की क्षमता बढ़ जाएगी, क्योंकि योगी के लिए पृथ्वी तत्त्व अवरोध के समान है"।* मैं यह सुनकर प्रसन्न हो गया, मैंने दूर से ही अपने हाथों को जोड़कर उस स्त्री को नमस्कार किया, उन्होंने मुझे आशीर्वाद दिया। फिर वह धीरे-धीरे पृथ्वी के अन्दर में समा गई, उस स्थान पर फटी हुई पृथ्वी अपने आप जुड़ गई। उसी समय मेरा अनुभव समाप्त हो गया। मुझे यह अनुभव योगनिद्रा में आया था।

अर्थ- साधकों! पृथ्वी का यह आशीर्वाद मेरे लिए आजीवन कार्य करेगा तथा शक्तिपात करने की क्षमता भी बढ़ जाएगी, क्योंकि पृथ्वी तत्त्व में सबसे ज्यादा जड़ता होती है। इसलिए योगी के लिए यह तत्त्व सबसे ज्यादा अवरोध का कार्य करता है तथा अब पृथ्वी तत्त्व कम होने के कारण शीघ्र ही शरीर में सत्वगुण कि अधिकता बढ़ने लगेगी।

नाग

यह अनुभव मुझे एक अक्टूबर को योगनिद्रा में आया था। मुझे थोड़ी दूरी पर एक नाग (काला) फन चौड़ा किए हुए शान्त भाव से बैठा हुआ दिखाई दिया। कुछ लोगों ने मुझसे कहा– "इस नाग को मार डालो"। मैं बोला– "मैं जीवों को नहीं मारता हूँ"। फिर वह नाग एक ओर को चल दिया। मैं भी दूसरी ओर को चल दिया, उसी समय मुझे अपने पीछे प्रकाश-सा महसूस हुआ। मैंने मुड़कर देखा- तो वही नाग मुझसे थोड़ी दूरी पर फन ऊपर की ओर उठाए, मुँह खोले हुए खड़ा था, उसके मुँह में तेज प्रकाश भरा हुआ था। नाग अपने मुँह से वही प्रकाश उगल रहा था, इस कारण चारों ओर प्रकाश फैल रहा था। मैंने सोचने लगा– यह नाग कितना अच्छा है, इसके द्वारा इतनी जगह प्रकाशित हो रही है।

3 अक्टूबर की शाम को मेरी और पिताश्री की बहुत कुछ कहा-सुनी हो गई थी, वह घर की जमीन बेच रहे थे (पैतृक खेती)। मैंने उनका विरोध किया, इसी बात पर कुछ कहा-सुनी ज्यादा हो गई। मैं जानता था यह व्यक्ति इस घर को नष्ट करने में लगा हुआ है, यह व्यक्ति हर कार्य सुनियोजित ढंग से करता था। उसका उद्देश्य था कि मैं घर छोड़कर चला जाऊँ, मुझे लगने लगा कि साधना के द्वारा मेरी यह अवस्था प्राप्त हुई है, फिर भी मैं घर के प्रति मोह रखता हूँ। उसके बदले मुझ पर निकृष्ट आरोप लगाए जाते हैं। मैं यह भी जानता हूँ, वह अपने बुरे कर्मों का फल अवश्य भोगेगा। दूसरे दिन सुबह साढ़े तीन बजे ध्यान पर बैठा, उसी समय अन्तरिक्ष से आवाज आई– "अश्वत्थमेनं सुविरूढ़ मूलम् संग श्स्त्रेण दृढ़ेन छित्वा"। यह श्लोक गीता के पंद्रहवें अध्याय का तीसरा श्लोक है। यह आधा श्लोक है, फिर मैंने उठकर गीता पढ़ी, गीता में इस श्लोक का अर्थ भी पढ़ा, इससे इस अनुभव का अर्थ समझ में आ गया। तब मुझे प्रसन्नता हुई।

सन् 1995

मुझे बहुत दूर जाना है

यह अनुभव फरवरी माह के तीसरे सप्ताह में आया, मैं किसी स्थान पर बैठा हुआ हूँ। वह जगह कमरेनुमा जैसी दिखाई दे रही है। हल्का-सा प्रकाश चारों ओर फैला हुआ है, इतने में पूना की एक साधिका मेरे पास हँसती हुई आई। (इस जगह पर नाम लिखना उचित नहीं समझता हूँ) और मुझसे बोली– "आनन्द कुमार! इसमें मेरी सम्पूर्ण जीवनी लिखी है, आप इसे पढ़ लीजिए"। इतना कहते ही उसने मेरे सामने एक सुन्दर-सी पुस्तक रख दी, उसके चेहरे पर प्रसन्नता के भाव दिखाई दे रहे थे। मैंने उस पुस्तक को देखा, फिर उसे खोलकर पढ़ने लगा। जब वह 15 साल की थी तब से उसके विषय में उस पुस्तक में लिखा था। उसमें एक-दो घटनाएँ महत्त्वपूर्ण लिखी हुई थीं, मैं इन घटनाओं को पढ़कर गंभीर हो गया। उस पुस्तक से उसके जीवन काल की ढेरों बातों की जानकारी हो गई। मैं उन बातों को लिखना उचित नहीं समझता हूँ, क्योंकि ये घटनाएँ उसकी व्यक्तिगत थीं। जब मैंने सम्पूर्ण पुस्तक पढ़ ली, तब मैंने उस साधिका की ओर देखा, मगर वह साधिका दिखाई नहीं दी। मैंने सोचा– शायद वह बाहर चली गई होगी, इसलिए मैं भी बाहर आ गया। बाहर आते ही मैंने अपने आप को तेजस्वी स्थान पर उपस्थित पाया। उस समय उस स्थान पर श्री माता जी और वही साधिका भी थी। साधिका के मुँह से **"श्री राम, जय राम, जय जय राम"** निकल रहा था। मैंने उस साधिका को देखा, तब वह बहुत सुन्दर लग रही थी तथा उसके शरीर से तेज भी निकल रहा था। उसने सफेद रंग की उज्ज्वल साड़ी पहन रखी थी। उस समय वह देवी जैसी लग रही थी, सत्वगुण का प्रभाव उसके अन्दर दिखाई दे रहा था। मेरे मुँह से साधिका के लिए कुछ शब्द अपने आप निकल पड़े– आप देवी जैसी लग रही हैं, मगर वह कुछ नहीं बोली, सिर्फ मुस्करा दी। मैं उस साधिका से बोला- "चलो, मेरे साथ चलो।" वह बोली- "आप चलिए, मैं बाद में आऊँगी"। फिर मैं और श्री माता जी एक साथ आगे कि ओर चल दिए। फिर मैंने पीछे की ओर मुड़कर देखा– वह साधिका उसी स्थान पर बैठी हुई मंत्र जाप कर रही थी। फिर मैं और श्री माता जी आगे चलकर एक जगह पर रुक कर खड़े हो गए। वहीं से अलग-अलग दो रास्ते हो गए थे। मैं वहीं पर खड़ा होकर सोचने लगा– मेरा रास्ता अभी और आगे तक है, अभी मुझे बहुत दूर जाना है। श्री माता जी का रास्ता बाएँ ओर जाता है, उन्हें थोड़ी दूर तक जाना है वह शीघ्र ही पहुँच जाएँगी। मैंने फिर पीछे मुड़कर उस साधिका की ओर देखा, वह

वहीं पर बैठी हुई मंत्र जाप कर रही थी। मैं बोला– "इस साधिका को यहाँ तक (जहाँ मैं खड़ा था) आने में अभी बहुत समय लग जाएगा"। फिर मैं श्री माता जी से बोला– "श्री माता जी मैं चलता हूँ, मुझे अभी बहुत दूर जाना है, आप तो शीघ्र ही अपने लक्ष्य पर पहुँच जाएँगी। आपका मार्ग थोड़ा रह गया है"। उसी समय मैं आगे की ओर चल दिया, श्री माता जी उसी स्थान पर खड़ी हुई थी। उसी समय अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधिका का सुन्दर दिखाई देने का कारण यह था– उसकी कुण्डलिनी का जाग्रत हो गई थी, इसलिए वह सफेद साड़ी में सत्वगुणी लग रही थी। मेरे साथ वह कैसे चल सकती थी, वह अभी नई साधिका थी। श्री माता जी और मैं एक साथ चल रहे हैं, फिर थोड़ी दूर चलकर एक जगह पर खड़े हो गए। श्री माता जी अब ज्यादा दूर ओर नहीं जाएँगी, क्योंकि वहाँ से वह स्थान दिखाई पड़ रहा है जहाँ श्री माता जी को पहुँचना है। वह स्थान बिल्कुल थोड़ी-सी दूरी पर है। उसी समय मुझे अपना मार्ग दिखाई दिया, वह सीधा मार्ग बहुत दूर तक दिखाई दे रहा था। जिस जगह जाकर मुझे रुकना है, वह स्थान अभी बहुत ज्यादा दूरी पर है। इससे यह सिद्ध होता है कि अभी मुझे बहुत दूर तक जाना है। श्री माता जी वह हम एक साथ चल रहे थे, आगे चल कर दोनों ठहर गए। श्री माता जी को उस मार्ग से हटकर एक ओर थोड़ा सा चलकर ठहर जाना था– इसका कारण है श्री माता जी की आश्रम में इतनी आसक्त हो गई है कि आश्रम चलाने के लिए मूल मार्ग से थोड़ा एक ओर हो गई। जब कोई मार्गदर्शक आश्रम चलाने में व्यस्त हो जाता है, तब उसके आध्यात्मिक मार्ग में ठहराव सा आ जाता है। मगर जो योगी तत्त्वज्ञानी होते हैं वह कभी भी आश्रम आदि में आसक्त नहीं होते है। अनुभव में दिखाई दिया-अभी मुझे अपने मार्ग में बहुत आगे जाना है और आखिरी लक्ष्य– प्राप्त करना है।

त्रिनेत्री बालक

यह अनुभव 27 फरवरी को शिवरात्रि के दिन सुबह आया था– मैंने देखा मेरे सामने एक सुन्दर स्त्री बैठी हुई है। उसकी गोद में एक छोटा-सा बच्चा बैठा हुआ है, उसकी उम्र लगभग एक वर्ष होगी। वह बच्चा मेरी ओर देख रहा है और थोड़ा-सा हँस भी रहा है। मेरी दृष्टि बच्चे के मस्तक की ओर गई। बच्चे के मस्तक पर एक आँख भी थी, वह आँख सामान्य आँख से थोड़ी बड़ी थी, तथा वह आँख चमक भी रही थी। मेरे मुँह से निकला– इसकी तो तीनों आँखें खुली हुई हैं, उसी समय उसकी तीसरी आँख अन्दर

की ओर धसने लगी, तथा धीरे-धीरे मेरी दृष्टि से ओझल होने लगी। मेरे मुँह से अपने आप निकला– ॐऽऽऽ। ओम का उच्चारण करते ही उस बच्चे की तीसरी आँख फिर पहले की भाँति दिखाई देने लगी, मेरे द्वारा ओम कहते ही बच्चा प्रसन्नता से हँसने लगा। अब मैं ओम का बार-बार उच्चारण कर रहा था। वह बच्चा लगातार हँसे जा रहा था। इतने में वह स्त्री बच्चा लेकर चल दी। मैं बोला– "आप मत जाइए, यह बच्चा मुझे बहुत अच्छा लगता है, इसकी तीनों आँखें खुली हुई हैं"। फिर वह स्त्री व बच्चा दोनों अदृश्य हो गए। मेरा अनुभव भी समाप्त हो गया। मेरे मुँह से ओम-ओम का उच्चारण अपने-आप निकल रहा था। यह अनुभव मुझे योगनिद्रा में आया था।

भगवान नारायण

यह अनुभव मुझे मार्च महीने के मध्य में आया था। मैंने देखा– मैं नीले रंग के तेज चमकीले प्रकाश में खड़ा हुआ हूँ। चारों ओर नीले रंग के प्रकाश के अतिरिक्त कुछ नहीं था। उसी समय मेरी दृष्टि सामने की ओर थोड़ी-सी ऊर्ध्व हो गई। मैंने अपने से थोड़ी दूरी पर भगवान नारायण को देखा– वह शेषनाग की कुण्डली के ऊपर विशेष मुद्रा में लेटे हुए मुस्करा रहे थे। उनका शरीर भी हल्के नीले रंग का था, उनकी नाभि से एक कमल की नाल निकलकर ऊपर को चली गई थी। उस नाल के ऊपरी सिरे पर हल्के लाल रंग का एक फूल था। पहले मैंने भगवान नारायण को जी भर के देखा, क्योंकि वह मुझे अच्छे लग रहे थे। फिर मेरे मुँह से जोरदार आवाज निकली– "प्रभु, यदि आप सोचते होंगे कि आनन्द कुमार को धन का लोभ दिखाकर उधर को मोड़ देंगे और मैं धन प्राप्ति में लग जाऊँगा, तो ऐसा नहीं होगा। ईश्वर की प्राप्ति के लिए मैं लंगोटी लगाने को तैयार हूँ"। मेरी आवाज चारों ओर गूँज रही थी। भगवान नारायण पहले की भाँति मुस्कराए जा रहे थे। कुछ क्षणों में मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में कमल के फूल पर भगवान ब्रह्मा जी नहीं दिखाई दिए थे। लंगोटी लगाने का अर्थ था– भीख माँग लूँगा, मगर योग नहीं छोडूंगा, क्योंकि कुछ दिनों से धन प्राप्ति करने की वृत्ति उठ रही थी। शायद इसीलिए मैं भगवान नारायण से यह कह रहा था। इस अवस्था में भगवान नारायण के इस प्रकार के दर्शन होना श्रेष्ठता का प्रतीक माना जाता है।

मोक्ष पाना अत्यन्त दुर्लभ है

यह अनुभव मुझे 10 मई को आया था– मैं एक घर के अन्दर खड़ा हुआ हूँ, मुझे उस घर के अन्दर जानकारी मिली कि इस घर के अन्दर नाग प्रवेश करने वाला है। मेरे अन्दर प्रेरणा हुई, वह नाग आकर मुझे काट लेगा, उसी समय मैं घर से बाहर निकल आया। घर के बाहर निकलते समय दो-तीन साल की लड़की को मैंने गोद में ले लिए था। वह लड़की सुन्दर थी, यह लड़की कौन है मैं उसे नहीं जनता हूँ। घर के बाहर आते ही मैने अपने आपको एक खुले मैदान में पाया, मैं यह सोचकर चारों ओर देख रहा था कहीं नाग न आ जाए। मुझे नाग कहीं भी दिखाई नहीं दे रहा था। मैंने उस लड़की को गोद से उतार कर उसी समय खड़ा कर दिया, क्योंकि मैं अब भी उसे गोद में लिए हुए खड़ा था। लड़की को खड़ा करके मैं उससे बोला– "माँ, मुझे नागों से बड़ा डर लगता है, कुछ समय बाद मुझे नाग काट सकता हैं"। वह लड़की धीरे से मुस्करा दी। मैं उस दो-तीन साल की लड़की से 'माँ' शब्द का प्रयोग कर रहा था। इतने में मुझे अन्तरिक्ष से धीमी आवाज सुनाई दी– "जिस नाग के डर से तू परेशान है, वह नाग स्वयं यही लड़की है, जिसे माँ कह रहा है"। यह बात सुनकर मैं मुस्करा दिया और मन के अन्दर कहने लगा– "अच्छा, माँ ही वह नाग है"। मेरा डर एकदम दूर हो गया और मैं खुश हो गया। इतने में वही लड़की नाग के रूप में बदल गई, मैं आराम से निडर होकर वही पर खड़ा रहा। उस नाग ने मेरे पैर में जोरदार फूफकार मारकर काट लिया, फिर वह नाग अदृश्य हो गया। इसके बाद मैं आकाश की ओर टकटकी लगाए विचारों से रहित होकर देखने लगा। उसी समय मुझे अपने शरीर के अन्दर भगवान श्रीकृष्ण के दर्शन हो गए। उनका शरीर हल्के नीले रंग का था, वह मुस्करा रहे थे, मैं वहाँ से चल दिया। मुझे आगे रास्ते में दो पुरुष बैठे हुए दिखाई दिए। उन्होंने मुझसे प्रश्न किया– "क्या आपको मोक्ष मिलना सम्भव है"। अचानक ऐसा प्रश्न सुनकर मैं गंभीर हो गया, कुछ क्षणों बाद बोला– "अभी मुझे मोक्ष नहीं मिला है, क्योंकि मोक्ष मिलना अत्यन्त दुर्लभ है, मोक्ष के विषय में समझ पाना अत्यन्त जटिल है"। जिस समय मैं यह शब्द कह रहा था उस समय भगवान श्रीकृष्ण मुझे हृदय में दिखाई दे रहे थे। मैं फिर अन्तरिक्ष में आगे की ओर चल दिया।

अर्थ- साधकों, मैंने जो यहाँ पर नाग काटने का अनुभव लिखा है, इससे पहले दो बार और लिख चुका हूँ कि नाग ने मुझे काटा है। महान संत स्वामी मुक्तानन्द जी के अनुसार इसका अर्थ है– साधक को जब नाग काट ले तब उसे मोक्ष मिलना निश्चित होता है। मगर मैं अनुभव में स्वयं मोक्ष मिलने से इन्कार कर रहा हूँ। फिर आपस में दोनों के शब्दों में विरोधाभास है। जिस समय मुझसे पूछा गया था– "क्या तुम्हें मोक्ष मिलेगा?" उस समय की योग्यता के अनुसार मुझे मोक्ष मिलना सम्भव नहीं है, क्योंकि अभी मेरे

चित्त में कर्माशय विद्यमान है। जब तक अभ्यासी को तत्त्वज्ञान प्राप्त नहीं होता है तब तक मोक्ष मिलना सम्भव नहीं होता है, क्यों चित्त पर अज्ञान विद्यमान रहता है। इसका अर्थ है– भविष्य में मुझे तत्त्वज्ञान की प्राप्ति होगी, तभी मोक्ष मिलना सम्भव होगा।

आजकल मैं बहुत कठोरता से साधना कर रहा हूँ, प्राणायाम को महत्त्व थोड़ा ज्यादा दे रहा हूँ। दिन में कई बार प्राणायाम करता हूँ। भोजन भी बिल्कुल थोड़ा सा लेता हूँ, हालाँकि शरीर बहुत कमजोर हो गया है। प्राणायाम की अधिकता के कारण शरीर हल्का-सा हो गया है। प्राणायाम करने की एक विशेष विधि है, जिससे तमोगुण या रजोगुण कम हो जाता है और सत्वगुण की मात्रा अधिक हो जाती है। मुझे महसूस होने लगा है, पृथ्वी तत्त्व की कमी हो रही है, जलतत्त्व भी कम हो रहा है, अग्नि तत्त्व की अधिकता हो रही है। कभी-कभी जाग्रत अवस्था में भी चित्त की गहराई में चला जाता हूँ, उस समय मेरे अन्दर विचार उठने लगते हैं। वह विचार ऐसे होते हैं उनका समाधान करने के लिए ज्ञानी पुरुष चाहिए, मगर इस समय मैं किसी ज्ञानी पुरुष को नहीं जनता हूँ। मगर जो संतपुरुष योग के विषय में ज्यादा जानते हैं वह मुझसे बहुत दूरी पर हैं। उनके पास शायद समय भी नहीं होगा, इसलिए मेरा समाधान नहीं हो पा रहा है। कभी-कभी ऐसा लगता है– मैं शरीर में नहीं हूँ, मैं शरीर से बाहर हूँ। इसकी अनुभूति मुझे अच्छी तरह से हो रही है, इसका कारण यह भी है कि प्राणायाम के कारण मेरा शरीर बहुत हल्का हो गया है। हाथों व पैरों में ऐसा लगता है जैसे रक्त ही नहीं रह गया है, सिर्फ वायु ही भरी है। चैतन्यता अब अधिक बढ़ गई है, इस कारण रात में नींद बिल्कुल कम (डेढ़-दो घण्टे) आती है आँखें बन्द रखूँ, या खोले रहूँ, अथवा रात्रि के समय घोर अंधकार में रहूँ, तो भी मुझे सदैव नीले रंग का बिन्दु दिखाई देता रहता है। नीले बिन्दु के अन्दर सुई के नोक के बराबर, रंगों से रहित एक चमकीला बिन्दु क्षणिक देर के लिए चमक जाता है। कभी-कभी इसकी चमक इतनी तेज होती है कि सूर्य की चमक भी उसके सामने फीकी हो जाती है, जबकि बिन्दु का आकार सुई की नोक के बराबर होता है। नीले रंग का बिन्दु बराबर चमकता रहता है, मैं त्राटक भी बहुत करता हूँ।

नीले रंग के बिन्दु का उल्लेख योग की पुस्तकों में बराबर मिलता हैं। मगर बिन्दु के अन्दर सुई के नोक के बराबर अत्यन्त चमकीला रंगहीन बिन्दु का उल्लेख कही पढ़ने को नहीं मिलता है। यह बिन्दु शायद अत्यधिक प्राणायाम व त्राटक का अभ्यास करने के कारण दिखाई देता है। नीला बिन्दु का सम्बन्ध कारण जगत से है। यह बिन्दु उसके बीच में सुई की नोक के बराबर दिखाई देता है। झटके के साथ चमककर लुप्त हो जाता है। इसका अर्थ है– कारण जगत से परे का प्रकाश बिन्दु जिसे मैं भौतिक नेत्रों से

देख रहा हूँ। मेरा शरीर बहुत ज्यादा शुद्ध है तथा सिर में विद्यमान रहने वाली उदान वायु को जबरदस्ती मूलाधार से नीचे लाता हूँ। जिस समय मैं उदान वायु को मूलाधार से नीचे लाकर रोकता हूँ, उस समय मैं पौने तीन मिनट से तीन मिनट के बीच कुम्भक लगाता हूँ। तब ऐसा लगता है– यह शरीर गर्मी के कारण फट जाएगा। लगता है जैसे पुरे शरीर में आग ही आग भरी हुई है और मैं अपने स्थूल शरीर से थोड़ी दूरी पर खड़ा हूँ। इसीलिए मैं विशेष प्रकार का प्राणायाम करता था, इस विधि को मैं नहीं लिख रहा हूँ, क्योंकि यह विधि सिर्फ वही प्रयोग कर सकता है, जिस साधक ने अपनी कुण्डलिनी की पूर्ण यात्रा करके स्थिर कर ली है। इस प्राणायाम के लिए ब्रह्मरन्ध्र का खुला होना अति आवश्यक है। मैं इस प्राणायाम का प्रयोग जिस लक्ष्य के लिए कर रहा हूँ वह लक्ष्य मुझसे अभी बहुत दूर है। यदि मैं उस लक्ष्य को प्राप्त नहीं भी कर पाया, तो भी ढेरों प्रकार की शक्तियों का स्वामी अवश्य बन जाऊँगा। मेरा जो लक्ष्य है उसका मार्गदर्शक कोई नहीं है, इस विद्या का प्रचलन आदि काल में था। हाँ, स्थूल शरीर अवश्य घोर कष्ट भोगता रहता है। जब प्राणायाम करता हूँ तब ऐसा लगता है- मेरी जीवात्मा अभी शरीर का त्याग का देगी। उसी समय मैं स्वयं कहता हूँ– "देख जीवात्मा, मुझे जो कार्य करना है वह अवश्य करूँगा, तुम्हें अगर इस शरीर को त्यागना है तो अवश्य त्याग दो, मुझे फिर नया शरीर धारण करना होगा, मैं फिर योग का अभ्यास करूँगा, मुझे कोई आपत्ति नहीं है। इसलिए तू मेरा साथ दे"।

श्री माता जी का आशीर्वाद

यह अनुभव 13 मई का है। ध्यानावस्था में देखा– मैंने एक कमरे मैं प्रवेश किया, उस कमरे में सिंहासन नुमा एक कुर्सी पर श्री माता जी विराजमान थीं। उनके सामने फर्श पर साधिकाएँ बैठी हुई थीं, वहाँ पर कोई पुरुष नहीं था। उस कमरे के अन्दर चारपाई भी थी, मैं उसी चारपाई पर जाकर बैठ गया। श्री माता जी एक साधिका से बात कर रही थीं, मैंने कमरे में चारों ओर को दृष्टि दौड़ाई तो देखा कि सभी साधिकाएँ फर्श पर बैठी हुई थीं। मैं उनसे दूर चारपाई पर बैठा हुआ था। अब मुझे याद आया– "मैंने कमरे के अन्दर प्रवेश करते समय श्री माता जी को नमस्कार नहीं किया है"। इतने में श्री माता जी कुर्सी से उठकर कमरे के बाहर चली गईं, मैं क्षणभर के लिए अपनी जगह पर खड़ा हो गया। कुछ क्षणों बाद श्री माता जी दूर से आती हुई दिखाई दी। श्री माता जी ने कमरे के बाहर से आवाज दी– "आनन्द कुमार! इधर आ जाओ"। मैं कमरे से बाहर निकल आया, कमरे से बाहर अब प्रकाश फैला हुआ दिखाई दे रहा था। श्री

माता जी एक ओर भूमि पर बैठ गईं, उस समय भूमि पर कुछ भी नहीं बिछा हुआ था। श्री माता जी बहुत प्रसन्न मुद्रा में थीं, वह जोर-जोर से हँस रही थीं। उनकी इस प्रकार की प्रसन्नता पहली बार देखी थी, मैं श्री माता जी के सामने घुटनों व पंजों के बल बैठ गया, क्योंकि श्री माता जी को मैं नमस्कार करने वाला था। मैं श्री माता जी से बोला– "श्री माता जी, आपने भूमि पर कुछ भी नहीं बिछाया हुआ है, आप भूमि पर बैठ गईं है"। श्री माता जी जोर-जोर से हँसती हुई बोलीं– "अरे, मेरा शिष्य आया हुआ है, मुझे बहुत खुशी हो रही है, आसन बिछाने की जरूरत नहीं है"। उस समय श्री माता जी के हाथ में तीन फल बिल्कुल साफ-सुथरे थे, देखने में अच्छे लग रहे थे। मैं श्री माता जी से बोला– "श्री माता जी, आपने जो फल हाथ में ले रखे हैं वह बहुत ही सुन्दर हैं"। श्री माता जी बोलीं– "यह आपके लिए हैं, अपने शिष्य को प्रसाद दूँगी"। मैंने एक बार फिर श्री माता जी को गौरपूर्वक देखा– वह बहुत ही ज्यादा प्रसन्न थीं और हँस रही थीं, उनका शरीर तेज से नहाया हुआ था। मैंने श्री माता जी को नमस्कार करते समय अपना सिर उनके चरणों पर रख दिया। श्री माता जी ने अपना बायाँ हाथ मेरे सिर पर फिराया और दाहिने हाथ से मेरी पीठ थपथपाई। मुझे ऐसा लगा– मेरा शरीर हल्का व पारदर्शी हो गया है, मुझे अपने शरीर के सम्पूर्ण अवयव दिखाई देने लगे, उसी समय मेरे मुँह से निकला– 'माँ'। तभी मुझे बेहोशी आने लगी और मैं बेहोश हो गया।

यह अनुभव मुझे योगनिद्रा में आया था। जिस समय मैं जागा, उस समय मेरा स्थूल शरीर बहुत थका हुआ सा लग रहा था। कुछ क्षणों तक मैं उठ नहीं पाया, फिर मुझे चेतना-सी आ गई और सामान्य हो गया। इस अनुभव में दो बातें मुख्य हैं– **एक-** मैं श्री माता जी के सामने चारपाई पर बैठ गया, जबकि सभी साधिकाएँ नीचे फर्श पर बैठी हुई थी, उस समय मुझे भी नीचे बैठना चाहिए था। **दूसरा-** श्री माता जी ने आसन नहीं बिछाया था, मै उनके सामने बैठा हुआ था। दोनों जगहों पर मैं समकक्ष-सा हूँ। यह गुरुतत्त्व है, श्री माता जी को इस विषय में बिल्कुल मालूम नहीं होगा है, क्योंकि गुरुतत्त्व साधक का मार्गदर्शन करता रहता है।

प्रकृति परिवर्तनशील है

यह अनुभव 21 मई को योगनिद्रा में आया– यहाँ पर अनुभव तो नहीं लिख रहा हूँ, क्योंकि अनुभव बहुत विचित्र सा है। इसलिए मैं उसका अर्थ लिख रहा हूँ। उसका अर्थ है– प्रकृति परिवर्तनशील

है, उसके दृश्य कुछ ऐसे थे कि सम्पूर्ण पदार्थ परिवर्तित हो जाते है। फिर बहुत समय के बाद प्रकृति का स्वरूप पहले जैसा होने लगता है। उसी समय मेरे अन्दर विचार आया, यह क्या हो रहा है? अन्तरिक्ष से आवाज आई– "प्रकृति परिवर्तनशील है यह उसी के दृश्य हैं"। उन दृश्यों से ऐसा लगता था प्रकृति का जो आज स्वरूप है वह पहले भी आदिकाल में रह चुका है। इससे यह भी तर्क दिया जा सकता है प्रकृति का जो आज स्वरूप है वह कभी-न-कभी भविष्य में अवश्य आएगा, चाहे कई युगों अथवा प्रलय के बाद आए। मेरा यह अनुभव कहाँ तक सही है, इसे तत्त्वज्ञानी योगी ही सत्य बता सकते हैं।

शिव शक्ति का स्वरूप

यह अनुभव मई माह का है। जिस समय मैंने अन्न का त्याग कर दिया था और प्राणायाम की विशेष विधि अपना रहा था तथा कठोर साधना कर रहा था, उस समय यह अनुभव योगनिद्रा में आया था। मैंने अन्तरिक्ष में अपने सामने देखा– पेड़ का तना अथवा गोल खम्बा जैसा मेरे सामने है, मगर वह पेड़ का तना नहीं है। उसकी मोटाई बहुत ज्यादा थी, मगर उसकी मोटाई सभी जगह एक समान है। वह खम्बा स्वप्रकाशित सा लगता है, वह प्रकाश का बना हुआ है, उसकी आभा चारों ओर फैल रही थी। मैं उस खम्बे के अति समीप खड़ा हुआ हूँ, पहले मैंने उस खम्बे को ऊपर की ओर देखा– खम्बा अन्तरिक्ष में खड़ा हुआ था, मेरी दृष्टि बहुत ऊपर तक चली गई, क्योंकि मैं बहुत दूर तक देखने में सामर्थ्यवान था, फिर भी उस तने का आखिरी सिरा दिखाई नहीं दे रहा था। अब मैंने नीचे की ओर देखना शुरू कर दिया, मेरी दृष्टि बहुत नीचे तक चली गई, क्योंकि उस समय दिव्य दृष्टि कार्य कर रही थी। ज्यादा नीचे की ओर देखने पर अंधकार सा दिखाई देने लगा था। इसलिए मैंने उस तने का निचला सिरा भी नहीं देख पाया। कुछ क्षणों बाद मैं सोचने लगा– "इस खम्बे की लम्बाई इतनी ज्यादा है कि ऊपरी सिरा और नीचे का सिरा दिखाई नहीं दे रहा है"। मैंने खम्बे को फिर दुबारा देखा– तो मुझे दिखाई दिया, यह तो प्रकाश का बना हुआ लम्बे लट्ठे के समान दिखाई दे रहा है। सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में प्रकाश का मोटा लट्ठा-सा खड़ा हुआ है। यही मैं सोच रहा था– तभी मेरे सामने उस खम्बे पर लिपटा हुआ एक पीला तेजस्वी चमकदार नाग दिखाई दिया। उसने अपनी पूँछ से तने पर एक चक्कर लपेट रखा था और ऊपर की ओर फन उठाए हुए था। उसका फन मेरे सिर के ऊपर छतरी की तरह था, क्योंकि मैं उस प्रकाश के लट्ठे के पास खड़ा हुआ था। इसलिए ऐसा लग रहा था– "वह नाग अपना फन मेरे सिर के ऊपर छतरी के समान किए हुए मेरी रक्षा कर

रहा है”। मैंने अपने दृष्टि ऊपर की ओर को की तो देखा- मेरे सिर से उसके फन की ऊँचाई एक फीट रही होगी, मैं और नाग एक-दूसरे की आँखों में आँखें डालकर देख रहे थे। उसी समय मेरे मुँह से आवाज निकली, “वाह, आप तो मेरे सिर के ऊपर ऐसे फन उठाए हुए हैं जैसे मेरी रक्षा कर रहे हैं। करिए, करिए, मेरी रक्षा कीजिए, वैसे आपका स्वरुप बहुत सुन्दर हैं, ऐसे दिखाई दे रहे हैं जैसे कुछ जानते ही नहीं हैं, मगर मुझे कभी-कभी आपके इस स्वरूप से डर भी लगने लगता है, इसलिए मैं थोड़ा दूर खड़ा हो जाऊँ”। इन शब्दों के कहने के साथ ही मैं थोड़ा पीछे की ओर हट गया, ताकि नाग से थोड़ा दूर खड़ा हो जाऊँ। मैं जैसे ही उस जगह से थोड़ा पीछे की ओर हटा, उसी समय नाग ने जोरदार फूफकार मारी, वह नाग तना (प्रकाश का लट्ठा) समेत मेरे पास आ गया। मैं फिर अपनी जगह से थोड़ा पीछे की ओर हट गया, मगर तना (प्रकाश का लट्ठा) समेत नाग मेरे पास आ गया। मैं नाग से दूरी रखना चाहता था मगर ऐसा नहीं कर सका। इसी घबराहट में मेरी नींद खुल गई। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- मैं सोचने लगा– यह अनुभव कितना अच्छा व उच्चकोटि का आया है, यह अनुभव योगियों के लिए दुर्लभ है, प्रकाश का बना हुआ लट्ठा जो अन्तरिक्ष में ऊपर व नीचे की ओर असीमित दिखाई दे रहा है, शास्त्रों के अनुसार वह स्वयं भगवान शिव का निर्गुण स्वरूप माना गया है। उस प्रकाशित लट्ठे (खम्बा या तना) पर लिपटा हुआ नाग शक्ति स्वरूपा कुण्डलिनी शक्ति ही है। इस प्रकाशित लट्ठे का आदिकाल में भगवान ब्रह्मा और भगवान विष्णु भी दोनों सिरे नहीं ढूँढ पाये थे, क्योंकि वह परम शिव का रूप हैं। परम् शिव के साथ आदिशक्ति सदैव विद्यमान रहती है, इसलिए उसका नाम “शिवशक्ति” पड़ गया। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं. इसीलिए इनके दूसरे स्वरूप भगवान शंकर को अर्धनारीश्वर भी कहा गया हैं।

शुद्धता चरम सीमा पर

साधकों, मुझे इस समय एक विशेष प्रकार की अनुभूति हुआ करती है। मई माह में मेरे यहाँ भीषण गर्मी पड़ रही है। मगर धूप में मेरे शरीर पर लू का प्रभाव नहीं होता है, इसका कारण यह भी हो सकता है कि मेरे शरीर के अन्दर भी बहुत ज्यादा गर्मी विद्यमान है। तेज वायु के चलने पर भी मेरे स्थूल शरीर को वायु का स्पर्श महसूस नहीं होता है। मैं देखता करता हूँ– वायु के तेज चलने के कारण पेड़-पौधे जोर से हिल रहे हैं, मगर मुझे वायु के स्पर्श की अनुभूति नहीं होती है। कभी-कभी मैंने अपने आप पर गौर किया

तब मालूम हुआ मैं श्वांस भी सामान्य व्यक्तियों से बहुत देर में लेता हूँ अर्थात कम लेता हूँ। तथा श्वांस बहुत हल्की-सी लेता हूँ। रात्रि के समय में नींद बहुत ही कम या न के बराबर आती है। शरीर थक जाने के कारण यदि मैं सो जाऊँ तो दोनों हाथ मेरे आसमान की ओर उठ जाते है और ऐसे ही उठे रहते थे। तब मेरी आँखें खुल जाती है, उस समय लगता है मेरे हाथों व पैरों में सभी जगह वायु भरी हुई है, मैं बिल्कुल हल्का सा हो गया हूँ। ध्यान करते समय लगता है– "मैं अपने आसन से ऊपर की ओर उठ जाऊँगा"। मगर ऊपर की ओर उठता नहीं था। मेरा शरीर बहुत कमजोर हो चुका है, कमजोरी के कारण मैं कम साधना करने लगा हूँ, सामान्य अवस्था में मेरा चित्त स्थिर बना रहता है तथा मैं शरीर की भीषण गर्मी सहन नहीं कर पा रहा हूँ। मैंने सोचा– इस प्रकार की साधना फिर भविष्य में करूँगा, मुझे इस समय महसूस हो रहा था मैं बहुत ही ज्यादा आध्यात्मिक रूप से शक्तिशाली हो गया हूँ।

जून के अन्तिम दिनों में मैं दिल्ली चला गया था, मेरी माँ की तबियत ज्यादा खराब हो गई थी। मैं दूसरे नम्बर के भाई से बोला– "अम्मा की मृत्यु निश्चित है, मृत्यु कुछ दिनों बाद हो जाएगी"। अस्पताल में इलाज चल रहा था, कुछ दिनों बाद डॉक्टर के बताने के अनुसार माँ को मस्तिष्क कैंसर था। मैं 27 जुलाई को घर वापस आ गया। 24 अगस्त को मेरी माँ की मृत्यु हो गई। उनकी मृत्यु का मुझे दुःख तो नहीं हुआ, क्योंकि मुझे माँ के विषय में सब कुछ मालूम था, फिर भी स्थूल रूप से उनकी अनुपस्थिति महसूस होने लगी।

भगवान दत्तात्रेय

दिल्ली से मैं 27 जुलाई को घर वापस आ गया, यह अनुभव शायद 30-31 जुलाई का है। मैंने देखा– मैं नीले रंग के तेज चमकीले प्रकाश में खड़ा हुआ हूँ, ऊपर की ओर आकाश मुझसे थोड़ी ऊँचाई पर स्थित है, ऐसा भाषित हो रहा है। मेरा शरीर हल्के नीले रंग का पारदर्शी हैं, मुझे थोड़ी दूरी पर एक मानव आकृति दिखाई दी। उस मानव आकृति से दूसरी मानव आकृति प्रकट हो गई, दूसरी मानव आकृति धीरे-धीरे स्पष्ट होने लगी। स्पष्ट होने के बाद वह भगवान शंकर के रूप में दिखाई देने लगी। फिर उस (पहले वाली) आकृति से एक और मानव आकृति प्रकट हो गई, वह धीरे-धीरे स्पष्ट होकर भगवान विष्णु के रूप में परिवर्तित हो गई। कुछ क्षणों बाद उस मानव आकृति से एक और मानव आकृति प्रकट हो गई, वह भगवान ब्रह्मा के रूप में परिवर्तित हो गई। फिर तीनों देवता एक साथ पास में खड़े हो गए। मेरे मुँह से

अपने आप आवाज निकली– “वाह, भगवान विष्णु, भगवान शंकर व भगवान ब्रह्मा तीनों एक साथ”। अब मैं उस मानव आकृति की ओर देखने लगा, जिससे ये तीनों देवता प्रकट हुए थे। वह मानव आकृति धीरे-धीरे भगवान दत्तात्रेय के रूप में परिवर्तित हो गई। मेरे मुँह से आवाज निकली– “प्रभु, मैं आपको पहचान गया, आप भगवान दत्तात्रेय जी हैं”।

हम पाँचों आमने-सामने थोड़ी दूरी पर खड़े हुए थे, मैं प्रसन्न हो रहा था और मुस्करा भी रहा था। पाँचों के शरीर एक समान और एक जैसे ही तत्त्व से बने हुए थे। सभी के शरीर पारदर्शी व हल्के नीले रंग के थे मेरा शरीर भी उन्हीं की तरह बना हुआ था, मैं यह समझ गया। भगवान दत्तात्रेय से प्रकट होकर तीनों देवों का दिखाई देने का अर्थ क्या है, मुझे यह तो मालूम है। भगवान दत्तात्रेय तीनों देवताओं के अंश हैं तथा त्रिगुणात्मक शक्ति के प्रतीक हैं।

प्रकृति के नियमों का आदर करो

यह अनुभव मुझे अगस्त माह के प्रथम सप्ताह में योगनिद्रा में आया था। मैंने देखा– मैं किसी घर नुमा जगह में प्रवेश करने वाला हूँ, अन्दर की ओर प्रवेश करते ही सामने एक शेर खड़ा देखा, जैसे ही शेर ने मुझे देखा वह मेरी ओर झपटा, मैं डर के कारण वहाँ से बाहर की ओर दौड़ने लगा। जैसे ही मकान नुमा जगह से बाहर आया, मैंने देखा– एक नदी बह रही है, नदी उसी मकान नुमा जगह से निकली है, नदी का स्रोत भी उसी जगह है। मैं नदी के पानी के ऊपर तेज गति से दौड़ने लगा, क्योंकि शेर मेरा पीछा कर रहा था। मैं डर के कारण तीव्र गति से भागता जा रहा था। उसी समय मुझे मालूम हो गया– यह नदी सामान्य नदी नहीं है, इसकी बहुत ज्यादा गहराई है। कुछ समय नदी के ऊपर दौड़ने के बाद मैं अन्तरिक्ष में दौड़ने लगा, आगे चलकर मैं तेज प्रकाश में पहुँच गया। मैं आगे की ओर चलता गया, फिर मैंने देखा– 8-10 पुरुष मेरा मार्ग अवरोध किए हुए खड़े है, मैं वही पर रुक गया, मैं उन पुरूषों को गहरी दृष्टि से देखने लगा। वह सभी पुरुष काले व तेजस्वी दिखाई दे रहे थे, उन सभी पुरुषों में एक पुरुष प्रमुख लग रहा था, उन सभी पुरुषों ने विशेष प्रकार के अस्त्र ले रखे थे। मैंने अपने सामने खड़े हुए उस तेजस्वी प्रधान पुरूष से पूछा– “आप सभी मेरा मार्ग अवरुद्ध किए क्यों खड़े हैं?” मेरे शब्द सुनकर वह प्रधान पुरुष मुस्कराया, मगर कुछ नहीं बोला। उसी समय पीछे की ओर खड़ा एक पुरुष बोला– “तू अपने आप को बहुत सामर्थ्यवान समझता है, इसलिए हम तेरे सामने खड़े हुए हैं”। मेरी समझ में नहीं आया उस पुरुष के कहने का भाव क्या

है, उत्तर में मैं कुछ नहीं बोला, सिर्फ उन सभी को देखता रहा। वह पुरुष फिर बोला– "हम तुम्हारा सामर्थ्य देखने आए हैं"। मैं बोला– "आप क्या कह रहे हैं मेरी समझ में नहीं आ रहा है"। वह पुरुष बोला– "तुमने अपनी माँ की बीमारी को रोकने का प्रयास किया तथा मृत्यु भी रोकने का प्रयास कर रहे हो"। ये शब्द सुनते ही मेरा भाव बदला गया, मैं थोड़ा क्रोध में बोला– "वह मेरी माँ है, मैं उसके लिए कुछ भी करूँ, आपको क्या मतलब है। जहाँ तक मेरे अन्दर सामर्थ्यता की बात है, मैं माँ का कष्ट देख नहीं सकता था इसलिए ऐसा किया। मुझे मालूम है कि उसकी मृत्यु होने वाली है, फिर भी मृत्यु को आगे ढकेलने का प्रयास करूँगा"। मेरे शब्द सुनकर वह पुरुष क्रोधित हो गया, उसके साथ और भी पुरूष खड़े हुए थे, वह सभी क्रोधित भाव में दिखाई दे रहे थे। मगर सबसे आगे खड़ा हुआ प्रधान पुरुष अब भी मुस्करा रहा था, यह प्रधान पुरूष मुझे शान्त स्वभाव का व दयालु जैसा लगा। अन्य सभी पुरुष क्रूर जैसे थे, प्रधान पुरूष मुझसे बोला– "आप मेरे साथ चलिए"। यह सुनते ही मैंने आगे चलने के लिए कदम बढ़ाया, जैसे ही मैं चलने के लिए मुड़ा, उस पहले वाले क्रूर पुरुष ने कहा– "अपने आपको बहुत बड़ा योगी समझता है, देखता हूँ इसकी सामर्थ्यता"। यह शब्द कहते ही उसने आकाश में छलांग लगाई और मेरे दोनों कन्धों पर दोनों पैरों से प्रहार किया। फिर वह मेरी पीठ पर चढ़ गया क्षणभर के लिए मेरे कन्धों पर दर्द-सा महसूस हुआ, मगर उसी समय मैंने उसे फुर्ती से पीठ से उतारकर अन्तरिक्ष में पटक दिया, वह कुछ क्षणों तक नहीं उठ सका। मैंने गरजकर कहा– "मेरे योग सामर्थ्य को देखने के चक्कर में न पड़ो, तुम सब मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते हो। अगर हिम्मत है तो तुम सब मुझसे लड़कर देखो"। मेरी बात का किसी ने जवाब नहीं दिया, मैं क्रोध में खड़ा हुआ था। मैंने उस प्रधान पुरुष की ओर देखा– वह अब भी पहले की भाँति मुस्करा रहा था, उसका पुरुष का तेज और बढ़ गया। फिर वह मुझसे बोला– "आनन्द कुमार, मेरी बात ध्यानपूर्वक सुनो- मुझे मालूम है कि आप योगी हैं, मगर आपको प्रकृति के नियमों का आदर करना चाहिए। आपको योगबल पर प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करने का प्रयास नहीं करना चाहिए। आप ज्ञानी हैं, इसलिए पालन करना आपका कर्तव्य है। तुम्हें भी मालूम है और मैं भी कह रहा हूँ, आपकी माँ का समय पूरा हो गया है, इसलिए मृत्यु निश्चित है। उसकी मृत्यु के लिए किसी प्रकार का अवरोध न डालिए"। फिर सभी पुरुष अदृश्य हो गए। मैं अकेला उस प्रकाश में सोच मुद्रा में खड़ा हुआ था। मैं सोचने लगा– "यह प्रधान पुरुष कौन था, ज्ञानियों की भाँति मुझे शिक्षा दे रहा था, उसी समय वह प्रधान पुरुष मेरे सामने प्रकट हो गया, वह पहले की भाँति मुस्करा रहा था। उसका स्वरूप बदल गया, उसका शरीर तेज से युक्त हो गया, सिर पर ऊँचा मुकुट लगा हुआ था। उसके शरीर का रंग हल्का काला सा था। एक हाथ में गदा व दूसरा हाथ खाली था, वह सुन्दर राजाओं की भाँति वस्त्र पहने हुए था, मैं उसे देख रखा था, मगर मैं पहचान नहीं

सका। फिर अन्तरिक्ष से आवाज आई– "ये यमराज जी हैं"। कुछ क्षणों बाद अदृश्य हो गए। फिर मैंने निश्चय किया– "अब मैं अम्मा की मृत्यु के लिए कोई अवरोध नहीं डालूँगा"।

अर्थ- साधकों! इस अनुभव के समय मेरी माँ का इलाज दिल्ली के सबदरजंग अस्पताल में चल रहा था। ये सच है– मैंने माँ की बीमारी को दबाने का प्रयास किया था, मुझे अच्छी तरह ज्ञात कि कुछ दिनों बाद माँ की मृत्यु होना निश्चित है फिर भी मैं योगबल के द्वारा मृत्यु को आगे ढकेलने का प्रयास कर रहा था। इस अनुभव में नदी स्थूल जगत है। मैं इस स्थूल जगत के उद्गम क्षेत्र में पहुँच गया था। उसी समय शेर ने मेरा पीछा किया, शेर का अर्थ है– "मेरा अहंकार"। मुझे अपने आप में अहंकार था कि "माँ" को कैंसर होने के बावजूद मैं उसकी मृत्यु को कुछ माह आगे की ओर ढ़केल सकता हूँ। इसी कारण इस प्रकार का अनुभव आया है।

नीला वलय

यह अनुभव 11 अगस्त का है, मैं रात्रि के लगभग 2 बजे ध्यान पर बैठ गया। उस समय ध्यानावस्था में अनुभव आया– मैं अन्तरिक्ष में बैठा हुआ हूँ, मेरा शरीर विशाल स्वरूप वाला है। उस समय ऐसा प्रतीत हो रहा था, जितनी मेरे शरीर की ऊँचाई है, उतनी ही अन्तरिक्ष की ऊँचाई है। सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में सिर्फ मैं ही अकेला हूँ, क्योंकि नीचे धरातल पर मैं बैठा हुआ था, मगर मेरा सिर अन्तरिक्ष के ऊपरी भाग को छू रहा था। मैं सम्पूर्ण अन्तरिक्ष को देख रहा था, मेरे चारों ओर हल्के नीले रंग का तेज प्रकाश बहुत दूरी पर गोलाकार चक्कर लगा रहा था। वह नीले रंग का गोलाकार वलय सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में व्याप्त था, उस समय मैं पद्मासन की मुद्रा में बैठा हुआ मुस्करा रहा था। मेरे सामने थोड़ी दूरी पर नदी का उद्गम था, नदी आगे चलकर बहुत विस्तृत हो गई थी, उस नदी का अन्त भी मुझे दिखाई दे रहा था। कुछ समय तक नदी के उद्गम (स्रोत) से अन्त तक देखता रहा। वह नदी मुझे अच्छी नहीं लग रही थी, फिर अपनी दृष्टि नदी से हटाकर, चारों ओर चक्करदार घूमते हुए वलय पर की। तब मैं अपने आप कहने लगा– "मैं तो सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में व्याप्त हूँ। अच्छी न लगने वाली नदी में भी व्याप्त हूँ, बल्कि यह नदी (सम्पूर्ण नदी) मेरी व्याप्तता में मात्र थोड़ी-सी जगह में स्थित है"। इतने में मेरा ध्यान टूट गया।

साधकों! मैंने इस अनुभव में लिखा है– मैं रात्रि के दो बजे ध्यान करने के लिए बैठ गया। जबकि रात्रि के ग्यारह बजे से तीन बजे तक ध्यान नहीं करना चाहिए, क्योंकि अन्तरिक्ष में तामसिक शक्तियों का प्रभाव ज्यादा बना रहता है। मगर मुझे इस अवस्था में किसी प्रकार की तामसिक शक्तियों से कोई डर नहीं लगता है, इसलिए मैंने अब अपने ध्यान का समय रात्रि के 10 बजे से सुबह 6 बजे तक रखा है, इस अवधि में रात्रि के सन्नाटे में ध्यान बहुत अच्छा व गहरा लगता है, वातावरण में शान्ति बनी रहती है। मगर नए साधक रात्रि के ग्यारह से सुबह तीन बजे तक ध्यान बिल्कुल न करें तभी अच्छा है। रात्रि के समय में मैं बिल्कुल नहीं सोता हूँ, दिन में एक से दो घण्टे के बीच सोता हूँ। चौबीस घण्टे में मैं 10 बार प्राणायाम करता हूँ, दिन में भी ध्यान करता हूँ तथा मंत्रों का जाप भी करता हूँ। अभी चार-पाँच दिन हो गए, मैं एक मिनट भी नहीं सोया हूँ, शरीर में भयंकर गर्मी व्याप्त हो गई है। मुझे ऐसा लगने लगा है– उदान वायु पर मेरा अधिकार सा हो गया है, ऐसा ध्यान करने में मुझे बहुत अच्छा लगता था। स्थूल शरीर अत्यन्त कमजोर होने के कारण मैं ज्यादा बात नहीं करता हूँ, स्थूल शरीर के व सूक्ष्म शरीर के अंगों की मुझे बहुत सी जानकारियाँ मिलीं है। मैं साधकों से जरूर कहना चाहूँगा, अगर सफलता प्राप्त करनी है तो योग के लिए संयम बहुत ही अनिवार्य है। यदि साधक संयमित रहेगा, तो सफलता अवश्य मिलेगी। प्राणायाम भी ज्यादा मात्रा में करना चाहिए, अल्प मात्रा में सात्विक भोजन करना जरूरी है, तामसिक भोजन का पूर्ण रूप से त्याग कर देना चाहिए।

इस अनुभव में जो नदी है– वह यह स्थूल जगत है। स्थूल से लेकर सभी सूक्ष्म लोक परिवर्तनशील हैं, इसीलिए पाताल लोक से लेकर ब्रह्मलोक तक सभी लोक क्षण-भंगुर कहे गए हैं। मैं उस नदी रूपी सम्पूर्ण संसार का आदि और अन्त देख रहा हूँ, क्योंकि मैं सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में व्याप्त हूँ। यह सम्पूर्ण लोक मेरे शरीर में मात्र थोड़े-से भाग में स्थित हैं। अर्थात मैं अपने आपको विभु (व्यापक) रूप में देख रहा हूँ। हे साधकों, अपने आपको पहचानो, आप सिर्फ स्थूल शरीर नहीं हैं। संसार में आप जिस भूभाग में रहते हैं, वह कुछ समय बाद दूसरे का हो जाएगा, क्योंकि पहले आपका नहीं था और नहीं रहेगा, फिर आप अपना क्यों समझते हैं। क्या आपने श्मशान-भूमि नहीं देखी है, आप श्मशान भूमि में जाकर देखिए, और शिक्षा ग्रहण कीजिए। आप महान हैं, व्यापक हैं, और चेतन हैं। मगर अज्ञानता बस आप अपने को मात्र स्थूल शरीर ही समझते हैं तथा मृत्यु को प्राप्त होते हैं। आप प्रयास करके देखिए, कभी-न-कभी आपको अपने वास्तविक स्वरूप की अवश्य पहचान हो जाएगी।

भगवान गौतम बुद्ध जी

यह अनुभव 26 सितम्बर को सुबह आया, मैंने देखा– मैं भगवान बुद्ध के सामने बैठा हुआ हूँ, भगवान गौतम बुद्ध जी भी मेरे सामने आसन पर बैठे हुए हैं। कुछ क्षणों बाद मैंने उनसे प्रार्थना की– "आप मुझे मार्गदर्शन करने की कृपा करें, मगर भगवान बुद्ध जी कुछ नहीं बोले"। मैं उन्हें टकटकी लगाए देखता रहा, उसी समय उनके पास बैठे हुए एक और सन्यासी दिखाई दिए। मैं उन सन्यासी जी को देखकर पहचान गया, क्योंकि इन सन्यासी जी ने मुझे सन् 1992 में मार्गदर्शन किया था। फिर गौतम बुद्ध जी अपने स्थान से उठे और एक ओर को चले गए, फिर कुछ क्षणों में वापस आ गए। उस समय उनके हाथ में एक शॉल बहुत ही सुन्दर व आकर्षक था, वह शाल देखने में कीमती व राजसी लग रहा था। उस शॉल को दिखाते हुए मुझसे बोले– *"कभी-कभी साधकों को मैं इस शॉल को ओढ़े हुए दिखाई देता हूँ"*। उस शॉल को देखकर मैं पहचान गया कि इसी शॉल को ओढ़कर उस सन्यासी जी ने मुझे दर्शन दिए थे जिनका उल्लेख मैंने इस अनुभव में किया है। भगवान गौतम बुद्ध जी बोले– *"मुझे मालूम है पृथ्वी पर जिस तरह का मेरा चित्र प्रचलित है"*। फिर उन्होंने मुझे एक पुस्तक दिखाई, उस पुस्तक को खोलकर पेज पर ऊँगली से इशारा किया और बोले– *"देखो, मेरी यह शिक्षाएँ हैं"*। मैंने पुस्तक के उस स्थान पर देखा जहाँ पर गौतम बुद्धजी उंगली का इशारा कर रहे थे, मगर उस पुस्तक का लेख मेरी समझ में नहीं आ रहा था, उस पुस्तक का लेख अन्य किसी भाषा में था। मैं उनके अति नजदीक बैठा हुआ था। मैं उनसे बोला– "प्रभु, आप मुझे मार्गदर्शन दीजिए, मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ, मैं महान योगी बनना चाहता हूँ। अभी मेरे अन्दर बहुत कमियाँ हैं, उन्हें दूर करना चाहता हूँ, मुझे ज्ञात है मैं अभी आपके सामने बैठा हुआ हूँ। प्रत्यक्ष रूप से आपके सामने होने के कारण आप से बात कर सकता हूँ, अथवा किसी भी प्रकार की प्रार्थना कर सकता हूँ, फिर मुझे आपका दर्शन करना दुर्लभ होगा। कृपया, आप मेरा मार्गदर्शन कीजिए"। उत्तर में भगवान बुद्ध जी ने मुझ पर गहरी दृष्टि डाली, उस समय वह अत्यन्त शान्त मुद्रा में थे। मगर कुछ नहीं बोले। अनुभव समाप्त हो गया।

भगवान गौतम बुद्ध जी की लम्बाई 6 फीट से कम नहीं होगी। उनका अत्यन्त सुन्दर सुडौल शरीर था, उनका रंग गोरा था। उनका शरीर तेज से चमक रहा था, शरीर की त्वचा अंगूर के समान चिकनी थी, उनके सिर पर बाल नहीं थे और कानों में कुण्डल नहीं थे। वह योगी के रूप में बहुत सुन्दर दिखाई दे रहे थे, मैंने यहाँ पर जिस सन्यासी का वर्णन किया है, वह भगवान गौतम बुद्ध जी के शिष्य थे। उन्होंने मिरज आश्रम में मेरा मार्गदर्शन किया था, और मुझसे कहा था– "बेटा, अपने गुरु के पास जाओ और पूर्णता

प्राप्त करो, भविष्य में समाज को तुम्हारी जरूरत पड़ेगी"। वही सन्यासी जी यहाँ भगवान गौतम बुद्ध जी के पास विराजमान दिखाई दे रहे थे। साधकों! इस अनुभव के तीन-चार माह बाद मुझे गौतम बुद्ध जी ने अपनी कुछ शिक्षाएँ (बौद्ध धर्म की) दी थीं। मुझे अभी वह शिक्षाएँ कुछ याद हैं, यहाँ पर उनका उल्लेख नहीं कर रहा हूँ।

मेरे पिछले जन्म

साधकों! सभी योगियों की भाँति मुझे भी अपने पिछले जन्मों के दृश्य ध्यानावस्था में दिखाई दिए, ये अनुभव मुझे मिरज आश्रम (महाराष्ट्र) में आए थे, ये अनुभव मैंने लिखकर रखे भी हैं। उन अनुभवों का उल्लेख मैंने इस पुस्तक में अभी तक कहीं भी नहीं किया है। पिछले जन्मों के विषय में थोड़ा सा संक्षेप में अब लिख रहा हूँ। मुझे अपने तेरह पिछले जन्म याद आ रहे हैं, चाहूँ तो मैं और भी पिछले जन्म देख सकता हूँ, इसकी मैंने आवश्यकता नहीं समझी। मुझे अपने पिछले तीन-चार जन्म तो स्वमेव ध्यान में दिखाई दिए थे। लेकिन फिर किसी कारण वश मुझे और अपने पिछले जन्म देखने पड़े, ताकि मैं अपनी वर्तमान समस्याएँ हल कर सकूँ। मुझे अपना बारहवाँ जन्म याद नहीं है, क्योंकि ग्यारहवें जन्म से तेरहवें जन्म में आ गया था, उस समय बारहवें जन्म के विषय में जानने की जरूरत नहीं समझी। इसलिए बारहवें जन्म के विषय में मुझे मालूम नहीं है। मुझे अपने पिछले जन्म इस तरह याद हैं जैसे अभी-अभी कुछ दिन पहले घटना घटी हो।

साधकों, तुम सोचते होंगे यह पिछले जन्म किस प्रकार दिखाई देते है, अथवा यह कैसे निर्णय करते हैं कि यह पिछले जन्मों के दृश्य है अथवा कौन से जन्म का दृश्य है। जब साधक का कण्ठचक्र खुल जाता है, कुण्डलिनी आज्ञाचक्र पर आती है उस अवस्था में साधक की सविकल्प समाधि लगती है। समाधि के समय यह जानकारियाँ दृश्य के रुप में दिखाई देती हैं, क्योंकि पिछले कई जन्मों के संस्कार चित्त में स्थित रहते हैं उन्हीं संस्कारों के आधार पर जानकारी होती है। जब पिछले जन्मों की वृतियों (कर्माशय) से साक्षात्कार होता है तब उसके दृश्य दिखाई पड़ने लगते हैं। जो घटनाएँ पूर्व जन्म में घटती हैं वही संस्कार ध्यानावस्था में आपके सामने दृष्टिगोचर होते हैं। ज्ञान के द्वारा मालूम हो जाता है,– यह घटना किस जन्म की है, उस समय साधक की दिव्यदृष्टि भी कार्य करती है। साधक की अपनी-अपनी योग्यता योग में अलग-अलग स्तर पर होती है उसी योग्यतानुसार अपने पिछले जन्मों की घटनाएँ

बारीकियों से देख सकता है। यदि साधक ने उच्चतम अवस्था प्राप्त की है तो वह अपने पिछले कई जन्मों को देखने व अन्य जानकारियाँ प्राप्त करने में सामर्थ्यवान होता है। मेरा ज्ञान यह कहता है कि जब से वह ब्रह्म से अलग हुआ है तब तक के विषय में जाना जा सकता है, क्योंकि ब्रह्म से अलग अपनी अनुभूति करना ही अज्ञानता है इसी अज्ञानता के कारण आसक्ति उत्पन्न होती है, तभी से चित्त में संस्कार (कर्माशय) बनने शुरू हो जाते है। इन्हीं वृत्तियों (कर्माशय) के द्वारा पिछले जन्मों के विषय में जाना जा सकता है। उस जन्म की घटनाएँ स्पष्ट दिखाई देती है, ऐसा वृत्तियों के साक्षात्कार करने से होता है। इसी प्रकार उच्च कोटि का साधक दूसरों के चित्त पर स्थित संस्कारों के द्वारा अर्थात संस्कारों का साक्षात्कार करके पिछले जन्मों की घटनाएँ अपनी योग्यतानुसार जान सकता है। मुझे अपने पिछले जन्म की ढेरों जानकारियाँ सूक्ष्म रूप से याद हैं। वैसे किसी भी योगी ने अपने पिछले जन्म के विषय में अपने लेख या पुस्तक में नहीं लिखा होगा, क्योंकि उसने ऐसी बातें लिखना उचित नहीं समझा होगा। शायद मुझे भी इस विषय में नहीं लिखना चाहिए। फिर भी मैं अपने पिछले जन्मों के विषय में मात्र कुछ शब्दों में (अति संक्षेप में) लिख रहा हूँ।

वर्तमान जन्म- आपने इस लेख के द्वारा जान ही लिया होगा कि मैं योग का अभ्यास कर रहा हूँ, आदि। मैंने पच्चीस वर्ष की उम्र में योग का अभ्यास करना शुरु किया फिर कभी मुड़ कर नहीं देखा, कठोर अभ्यास करना और मार्ग में आए अवरोध स्वरुप सांसारिक पदार्थों का त्याग करता चला गया। बहुत से कष्ट आए उनकों भोगता हुआ आगे बढ़ता ही रहा। इसका श्रेय हमारी गुरु माता को जाता है। पूर्वकाल के कर्मों के अनुसार हमें निश्चय ही परम श्रेष्ठ गुरु माता मिली, उन्ही के मार्गदर्शन में आज मैं सफलता के चरम बिंदु पर आ गया हूँ।अब आप सभी का मार्ग दर्शन कर रहा हूँ।

दूसरा जन्म- मेरे पिछले जन्म में मेरा घर अत्यन्त गरीबी झेल रहा था, मुझे सात साल की उम्र याद आ रही है। मेरे घर में मैं, माताजी और पिताजी थे, उसी समय मेरी बहन ने जन्म लिया था। तभी मेरे पिताजी धन कमाने के लिए घर से चले गए, मगर फिर कभी वापस नहीं आए। एक दिन मैं भूख से व्याकुल होने के कारण, इसी अवस्था में जमींदार के लड़के से ज्वार छीन ली, बस इसी ज्वार के कारण मेरी जिन्दगी नरक बन गई। अर्थात इस लड़के से मेरी सदैव के लिए दुश्मनी हो गई। जब मैं 16-17 का हुआ, तब तक बुरा व्यक्ति बन चुका था, दूसरों की छिना-झपटी मेरा काम था। बस यही कार्य करता रहता था। मेरे नाम से इलाके वाले डरने लगे थे, क्योंकि मेरा शरीर बहुत ही बलिष्ट था, मैं बड़े-बड़े लोगों की दुर्गति कर देता था। इस अवधि में मैं बहुत मारपीट करता था। पुलिस (वर्तमान की तरह पुलिस नहीं

थी)कई बार मुझे पकड़ने आई, मगर मैं उस समय भाग जाता था, पुलिस वाले गिनती में चार-पाँच होते थे। जिस लड़के की मैंने बचपन में ज्वार छीनी थी वह अब मेरा सबसे बड़ा दुश्मन बन गया था, उसके साथ दो युवक और रहते थे। वही तीनों पुलिस की सहायता से मुझे पकड़वाना चाहते थे। अपने गाँव के अलावा भी अन्य गाँवों में, रास्ते अथवा आम व अमरूद के बागों में रोजाना छीना-झपटी करना मेरा काम था। एक दिन मैं अपने घर आया हुआ था, तब मेरी 12-13 वर्षीय बहन ने मुझसे कहा– "भैया, आप यह गन्दे कार्य क्यों करते हो, पुलिस घर आकर अम्मा को बुरा भला कहती है"। मैं बोला– "तुझे क्या मालूम, मैंने मजबूरी में यह कार्य किया है, अब मेरी यह आदत बन गई है"। मेरी उम्र लगभग 19-20 वर्ष की होगी, तब तक मैंने खूब अपराध वाले कार्य किए, मगर गरीबों से कभी भी छीना-झपटी नहीं की थी, हमेशा पैसे वालों से झगड़ा करता रहता था। मैंने पुलिस से भी एक बार झगड़ा किया था, इसी कारण पुलिस मेरे पीछे पड़ी रहती थी। एक दिन मैं घर पहुँचा तब मेरी माँ बोली– "तू इस घर को छोड़कर अभी चला जा, तेरे कारण मुझे लज्जित होना पड़ता है, घर से निकल जा"। उसी समय मुझे पकड़ने के लिए घर पर कई पुलिस वाले आ गए। मैं घर से बड़ी तेजी से भागा। कुछ दूरी पर एक नदी थी, मैंने नदी को पार किया, जंगलों से होकर आगे की ओर भागता रहा, क्योंकि पुलिस मेरा पीछा कर थी, मैं थककर चूर हो गया। रास्ते में पड़े हुए पत्थर की ठोकर लगी और मैं गिर पड़ा, फिर मुझे होश नहीं आया। कुछ समय बाद होश आया, मैं जोर लगाकर उठकर बैठ गया, मैंने देखा– मेरे ऊपर खून के छींटे पड़े हुए है। मैं चौंका, यह खून कहाँ से आया है। उसी समय मालूम हुआ मस्तक पर जोरदार चोट लगी है, उसी से खून बह कर निकला था वह अब सुख गया है। मैं उठकर आगे की ओर चलने को हुआ, तभी मैं चौंक पड़ा, क्योंकि मुझसे थोड़ी दूरी पर पेड़ के नीचे एक योगी जी आसन लगाए हुए मेरी ओर देख रहे थे। वह योगी जी मुझसे बोले- *"आओ पुत्र, मैं तुम्हारा बहुत समय से इंतजार कर रहा था"।* मैं योगी जी से बोला– "स्वामी जी मेरे पीछे पुलिस आ रही है। वह बोले– *"अब तुम्हारे पास पुलिस कभी नहीं आएगी, क्योंकि पुलिस से तुम बहुत दूर आ गए हो"।* मैंने थोड़ी राहत की श्वांस ली। योगी जी बोले– "तुम अपनी पिछली जिन्दगी भूल जाओ और मेरे साथ चलो, मैं तुम्हारा ही यहाँ इंतजार कर रहा था"। थोड़ी देर तक मेरी और योगी जी की बातें होती रहीं, फिर मैं चुम्बक की तरह खिंचा हुआ योगी जी के साथ चल दिया। वह मुझे एक आश्रम में ले गए। वह आश्रम बहुत बड़ा था, उस आश्रम के वह मालिक थे। मैं उसी आश्रम में रहने लगा, योगी जी ने मुझे दीक्षा दी, अब वह योगी जी मेरे गुरुदेव बन गए थे। मैंने योग का अभ्यास करना शुरू कर दिया, उस आश्रम में बहुत शिष्य रहते थे, मैंने कठोर योग का अभ्यास करना शुरू कर दिया। मैं अहंकारी स्वभाव वाला साधक बन गया था। मैं अपने गुरुदेव की बात अक्सर नहीं मानता था, सिर्फ योग का अभ्यास

करता रहता था। मेरे गुरुदेव का स्वभाव बहुत ही सरल था तथा वह अत्यन्त उच्चकोटि के योगी थे। मैंने आश्रम में रहने से इन्कार कर दिया, तब गुरुदेव ने आश्रम से बाहर मेरे लिए एक झोपड़ी बनवा दी, मैं उसी में रहने लगा था। मेरे लिए आश्रम से भोजन आ जाता था, कठोरता के साथ योग का अभ्यास करना ही मेरा कार्य था। जितना ज्यादा योग का अभ्यास करता था उतना ही ज्यादा मेरा अहंकार भी बढ़ता जाता था।

एक दिन ध्यानावस्था में एक अनुभव आया– मैं उस अनुभव का अर्थ नहीं समझ सका। मैंने अपने एक गुरू भाई को बुलाया और कहा– "जाओ, गुरुजी को बुला लाओ, मुझे अनुभव का अर्थ आकर समझाएँ"। वह गुरु भाई बोला– "आपको स्वयं गुरु जी पास जाना चाहिए, क्योंकि वह तुम्हारे गुरु हैं"। मैं बोला– "मुझे शिक्षा मत दे, उन्हें यहाँ पर आना ही होगा, क्योंकि मुझे योग के माध्यम से मुझे मालूम हो गया है कि मैं ही उनका उत्तराधिकारी हूँ"। गुरु भाई आश्रम के अन्दर मेरा सन्देश देने चला गया, कुछ क्षणों बाद श्री गुरुदेव जी आ गए। उस समय वह प्रवचन कर रहे थे, जैसे ही मेरा सन्देश उन्हें बताया गया, उन्होंने साधकों से कहा– "मुझे दो मिनट का कार्य आ गया है, इसलिए मैं जा रहा हूँ"। मेरे पास आकर उन्होंने मेरे अनुभव का अर्थ बताया और फिर वापस चले गए, मेरे गुरुदेव ऐसे थे। मुझे याद आ रहा है, एक बार वह मुझसे बोले– *"बेटा, तुम्हारे कर्म बहुत ज्यादा खराब हैं, योगबल से अपने कुछ कर्म जला दो"। मैं बोला– "गुरुदेव ये कर्म मैंने कमाए हुए हैं, इसलिए मैं ही इनका भोग करूँगा, योगबल से इन्हें नहीं जलाऊँगा"।* योगबल के द्वारा सिर्फ वही कर्म जलाए जा सकते हैं जो हल्के-फुल्के होते है, जो कर्म महत्त्व पूर्ण होते हैं अर्थात ऐसे कर्म जिन कर्मों से जीवन में महत्त्व पूर्ण घटना घटनी अनिवार्य है, वह कर्म नहीं जलाए जा सकते हैं तथा अशुद्धता भी निश्चित मात्रा तक ही जलाई जा सकती है।

मैं उस आश्रम का उत्तराधिकारी बनकर बहुत समय तक आश्रम में रहा और योग का मार्गदर्शन साधकों को करता रहा। स्थूल शरीर त्यागने के बाद मैं तपलोक होते हुए प्रकृति के आवरण में विद्यमान होकर समाधि में लीन हो गया। कुछ वर्षों बाद एक समय प्रकृति देवी ने मेरी समाधि भंग कर दी और बोलीं– *"पुत्र, भूलोक पर जाओ तुम्हारे जन्म का समय हो गया है"*। मैं प्रकृति देवी से बोला– "माते, अभी-अभी तो मैं यहाँ पर आया हूँ, इतनी जल्दी मेरा जन्म लेने का समय हो गया"। वह बोलीं– *"तुम्हारे लिए भू-लोक पर व्यवस्था कर दी गई है, अपना सम्पूर्ण कर्म भोग कर नष्ट कर देना, तुम्हें योग का फल मिलने वाला है"*। मैंने पृथ्वी की ओर देखा, तभी प्रकृति देवी ने मुझे बताया– "आप यहाँ जन्म लीजिए, इससे आपका कर्म नष्ट हो जाएगा, अगर अपने जीवन कुछ बदलाव करना है तो अभी कर सकते हो"। मैं

बोला– “नहीं माते”। मैंने दिव्यदृष्टि द्वारा अपना अगला जन्म (वर्तमान जन्म) देख लिया है और जन्म लेने के लिए प्रकृति का आवरण छोड़कर तपलोक होते हुए भू-लोक पर आ गया। साधकों! मेरे साथी तपलोक में अब भी समाधि में लीन हैं। मैं यहाँ पर योग का अभ्यास कर रहा हूँ तथा अपने कर्मों को भोग रहा हूँ। पिछले जन्म के गुरु जी से मेरी बातचीत सन् 1995-96 में हुई थी। मेरे मित्र (पिछले जन्म के) भी वहाँ पहुँचने का इंतजार कर रहे हैं। मैं बोला– “अभी मुझे भू-लोक पर कई वर्षों तक रहना है, योग करना है, अपने कर्म भोगने हैं तथा कुछ कार्य भी करने हैं। मेरे पिछले जन्म के कुछ शिष्य इस समय श्री माता जी के पास हैं, दो-तीन शिष्यों को मैंने पहचान लिया है।

प्रकृति देवी से मेरी जिस प्रकार से बातचीत हुई, इस प्रकार की बातचीत सिर्फ प्रकृतिलय अवस्था वाला योगी ही कर सकता है, इस अवस्था से नीचे वाला योगी इस प्रकार बात नहीं कर सकता है, क्योंकि प्रकृतिलय अवस्था वाले योगी को वर्तमान जन्म में अपने चित्त पर स्थित शेष-कर्म भोग कर नष्ट करना होता है, कर्माशियों से रहित हुआ चित्त समाधि की विशारदता को प्राप्त होता है, अभ्यासी के चित्त में ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य होता है। तब तत्त्वज्ञान प्राप्त करने का समय आता है।

तीसरा जन्म- मेरा तीसरा जन्म दक्षिण भारत में हुआ था। मेरे जन्म के बाद पिताजी घर छोड़कर चले गए, जंगल में योग का अभ्यास करने लगे। वह अपने पूर्व जन्मों के अनुसार महान योगी थे, इसलिए घर छोड़कर चले गए। किसी तरह से मेरी माता ने मेरा पालन पोषण किया। उस समय मेरी माता को ढेरों कष्ट झेलने पड़े। जब मेरी उम्र 10 वर्ष की हुई तब एक दिन पिताजी घर आ गए और मेरी माता से बोले– “इस पुत्र को मैं अपने साथ ले जाऊँगा और योग सिखाऊँगा”। मेरी माँ ने इस बात का विरोध किया, तब पिताजी ने मेरी माता को समझाया– “यह पूर्व जन्मों का योगी हैं, अगर मैं इसे नहीं ले जाऊँगा, तब यह कुछ समय बाद यह स्वयं घर छोड़कर चला जाएगा”। मगर मेरी माँ विरोध करती रही। मेरे पिताश्री मुझे लेकर जंगल में आ गए, उन्होंने मुझे शास्त्रों का अध्यन कराया और योग की शिक्षा दी। इस जन्म के दो अनुभव मैंने इस पुस्तक में लिखे हुए हैं, इस जन्म में मेरा शरीर लगभग 6 फीट की ऊँचा रहा होगा, मेरा रंग गोरा व बहुत सुन्दर था। उस जन्म में मैंने शादी नहीं की थी। जबकि किसी ने मुझ पर बहुत दबाव डाला था, मगर मैं और मेरे पिताजी शादी के लिए राजी न हुए। मेरी उम्र लगभग 55-60 वर्ष की रही होगी, उस समय मेरे पिताजी कहीं बाहर गए हुए थे। तभी एक नाग ने उसी समय मुझे डस लिया, और मेरी मृत्यु हो गई। मृत्यु के बाद मैं तपलोक पहुँच गया, उस समय मेरे पिताजी ने योग के माध्यम से मुझसे सम्पर्क भी किया था। मेरे पिताजी की भी कुछ वर्षों बाद मृत्यु हो गई, और वह भी तपलोक में आ गए। अब भी वह

तपलोक के उच्च स्तर पर समाधि लगाए हुए हैं। जनवरी सन् 1996 में मेरा और उनका सम्पर्क हुआ था। वह बोले– "तुम्हें पृथ्वी पर कर्म भोगकर आना है, ये शेष कर्म बहुत ही क्लेशात्मक हैं इसलिए कष्ट सहो"। **इन्हों ने ही इस जन्म में मेरी कुण्डलिनी ऊर्ध्व की थी फिर कुण्डलिनी कभी भी सुषुप्त अवस्था में नहीं गई।**

चौथा जन्म- मेरा चौथा जन्म भी मेरा दक्षिण भारत में हुआ। वर्तमान में शायद वह जगह कर्नाटक में या उसके आसपास होगी, क्योंकि ऐसे दृश्य आते हैं जो कर्नाटक या महाराष्ट्र की सीमा से मिलते-जुलते हैं। लगभग 22-24 वर्ष की उम्र में योग का अभ्यास करने लगा था। इस जन्म के दृश्य ज्यादा नहीं दिखाई दिए, मैंने भी ज्यादा जानने की इच्छा नहीं की।

पाँचवाँ जन्म- मेरा पाँचवाँ जन्म थोड़ा महत्त्व पूर्ण है। इसलिए इसे थोड़ा विस्तार से लिख रहा हूँ। मैं गरीब माता-पिता का पुत्र था। मैं छोटी जाति का नहीं था, मगर रहन-सहन मेरा छोटी जाति जैसा ही था। कभी-कभी माता-पिता को मजदूरी भी करनी पड़ती थी, तब पेट भरता था। कभी-कभी मैं भी भूखा ही सो जाता था। मेरी माँ एक बड़े घर में काम करने जाया करती थी। उस समय मैं भी उसके साथ जाया करता था। उस घर के लोग मुझे खाना दे दिया करते थे, जहाँ मेरी माँ काम करने जाया करती थी। एक दिन अत्यधिक भूख के कारण मैंने रोटियों की चोरी कर ली और मैं पकड़ा गया। मेरी माँ को मेरे कारण बहुत सुनना पड़ा था। पड़ोस के लड़के मुझे चोर कहकर संबोधित करने लगे, सभी मुझे अपने घर से भगा देते थे कि मैं चोर हूँ। एक दिन दुःखी होकर मैं अपने घर से भाग गया और जंगल में चला गया, मैं अपने घर से बहुत दूर निकल आया था। मैं जंगल में एक जगह बैठा हुआ था, उसी समय एक स्त्री मेरे पास आई, वह मुझे अपने साथ ले गई। वह स्त्री जंगल में रहा करती थी, उसकी झोपड़ी में मैं भी रहने लगा, वह स्त्री जंगल में योग का अभ्यास किया करती थी, मुझे प्यार भी बहुत करती थी। एक दिन किसी कुछ कारण बस उसने मेरे मुँह पर थप्पड़ मार दिया। मैं क्रोध में आकार वहाँ से चल दिया। वहीं पर एक छोटी-सी नदी बहती थी, उस नदी को पार करके मैं चल दिया। मुझे उस स्त्री ने वापस आने के लिए बहुत बुलाया, मगर मैं वापस नहीं गया। जंगल का रास्ता पकड़कर मैं दूर चला गया। मैं कितनी दूर तक चला गया, यह मुझे मालूम नहीं है। मैं भूख से व्याकुल होकर एक जगह रास्ते में लेट गया और सो गया। मुझे एक अपरिचित लड़के ने आकर जगा दिया, उस लड़के की उम्र 20-22 वर्ष रही होगी। उसने मुझसे पूछा– "तुम कौन हो, कहाँ से आए हो?" मैं बोला– मैं भागकर आया हूँ, मुझे बहुत भूख लगी है"। वह लड़का बोला– "तुम थोड़ी देर तक और रुको, मैं थोड़ी लकड़ी एकत्र कर लूँ, फिर मेरे साथ चलना"। उस लड़के ने पेड़ से

लकड़ी काटी और लकड़ियों को बाँधकर चल दिया, मैं भी उसके साथ पीछे-पीछे चल दिया। वह लड़का मुझे एक आश्रम में ले गया, कुछ समय बाद वह मुझे अपने गुरु के पास ले गया, उसके गुरु ने मुझे देखा और पूछा– "बेटा, कहाँ से आए हो"। मैं बोला– "मैं भागकर आया हूँ"। फिर मैंने अपनी सम्पूर्ण बात बताई, कुछ समय तक वह योगीजी (गुरुदेव) मुझे गहरी दृष्टि से देखते रहे। फिर बोले– "बेटा, अब तुम यहीं रहो"। मैं वही पर आश्रम में रहने लगा। मैं जंगल में जाकर लकड़ी लाया करता था, मैं भी वहीं पर योग का अभ्यास करने लगा। फिर यही योगीजी भविष्य में मेरे गुरुदेव बने। मैंने आजीवन इसी आश्रम में योग का कठोर अभ्यास किया।

साधकों, इसमें महत्त्व पूर्ण बात यह है जिस स्त्री के पास मैं जंगल में लगभग दो-तीन वर्ष रहा, वह स्त्री वर्तमान जन्म में मेरी गुरुदेव श्री माता जी ही है। श्री माता जी भी उस जन्म में जंगल में रहकर कठोर योग का अभ्यास किया करती थीं। इसमें कोई शक नहीं कि वह मुझसे बहुत प्यार करती थीं, उनका कोई पुत्र नहीं था। वह मुझे पुत्र के समान रखती थीं। जब मैं उनके पास से चला गया तब उन्हें बहुत दुःख हुआ। उन्होंने योगबल का प्रयोग कर संकल्प किया– "यह लड़का मुझे फिर मिल जाए"। उस जन्म में मैं मिल नहीं मिल सका, क्योंकि मैं आश्रम में योग का अभ्यास करने लगा था। उस जन्म के बाद मैं इस जन्म में श्री माता जी को मिला हूँ। इस जन्म में किस प्रकार मिला और उनसे अलग हो गया यह मेरे अनुभव पढ़कर आपने जानकारी प्राप्त कर ली होगी। अब आप यह कह सकते हैं, मैं इस जन्म में क्यों मिला, बीच के तीन जन्मों में क्यों नहीं मिला? इसका कारण स्वयं श्री माता जी के जन्म हैं। श्री माता जी की पिछले जन्म में किशोरावस्था में एक नाग के डसने से मृत्यु हो गई थी, उस जन्म में श्री माता जी को योग का अभ्यास करने का समय नहीं मिला, बीच के दो जन्म श्री माता जी के अन्य देह में चले गए। इस जन्म में श्री माता जी ने योग का अभ्यास किया है, मुझे भी उम्र के अनुसार योग का अभ्यास करना था। श्री माताजी ने पूर्व जन्म में जो संकल्प किया था, वह पूरा होना था। इसलिए मैं स्वयं माता जी के पास पहुँच गया फिर उन्होंने मुझे अपनी इच्छा से दीक्षा दी। मुझे कुछ वर्षों तक उनके पास रहने का अवसर मिला तथा योग का अभ्यास भी किया है। उस जन्म में मैं माता जी को छोड़कर चला गया था। इसी प्रकार पूर्व जन्मों के संस्कारों के कारण वर्तमान जन्म में मैं उनका आश्रम त्याग कर चला आया, क्योंकि मुझे उत्तर भारत में योग का अभ्यास करना था और बहुत से साधकों का मार्गदर्शन करना था।

मैं अन्य जन्मों के विषय में लिखना ऊचित नहीं समझता हूँ, क्योंकि इस पुस्तक में मैं अपने अनुभवों के विषय लिख रहा हूँ।

मैं त्रिकाल का गुरु

अब मैं एक बार फिर अपने घर की ओर आता हूँ। मैं पहले लिख चुका हूँ, मेरी माँ की मृत्यु दिल्ली में कैंसर के कारण हो गई थी, सारा परिवार दिल्ली में रहता था, मेरे लड़के की देखभाल मेरी माँ किया करती थी। माँ की मृत्यु के बाद पिताजी ने लड़के की पढ़ाई बन्द करा दी, लड़का घर आ गया। मैं उसे पढ़ा नहीं सकता था, क्योंकि मुझे स्वयं अपने खाने व खर्च के लिए परेशानी रहती थी। इस विषय में मैं ज्यादा नहीं लिखूँगा, क्योंकि मैं घोर कष्ट से गुजर रहा था। मैंने अपने लड़के को योग सिखाना शुरु कर दिया, मेरे पास और कोई रास्ता नहीं था। उसे 28 सितम्बर सन् 1995 की शाम को अपने सामने (लड़के को) ध्यान करने के लिए बैठाया, ध्यान पर बैठते ही उसकी भस्त्रिका चलने लगी, भस्त्रिका की आवाज सुन कर मैंने अपनी आँखें खोल दी। अब मैं सोचने लगा– इसे यह क्रिया क्यों हो रही है। फिर मैं ध्यान पर बैठ गया। मैंने ध्यानावस्था में देखा– लड़के की कुण्डलिनी जाग्रत होकर ऊर्ध्व हो रही है, अब मैं सोच में डूब गया, इसकी कुण्डलिनी कैसे ऊर्ध्व हो गई। तभी उसने अपनी आँखें खोल दी, फिर उसने मुझे बताया– "पापा, ध्यान में मैंने देखा– आकाश में एक शिवलिंग है, उसमें नाग लिपटा हुआ है, वह नाग फन उठाकर मुझे फूफकार रहा है। नाग के फन पर मणि है, वह चमक रही है। शिवलिंग पर फूल ऊपर से अपने आप गिर रहे हैं," मैंने उसे अर्थ समझाया और फिर बोला– "जाओ, जाकर सो जाओ, मैं सुबह चार बजे जगाऊँगा, तुम्हें फिर ध्यान करना है।" वह लड़का सोने के लिए घर चला गया।

अब मैं सोचने लगा– ध्यान पर बैठते ही इसकी कुण्डलिनी ऊर्ध्व हो गई, ऐसा किसी को कभी नहीं हुआ है। इसने अनुभव भी सुनाया, जबकि यह लड़का योग से अपरिचित है तथा उसकी उम्र भी बिल्कुल कम है, वह ध्यान पर लगभग 8-10 मिनट बैठा होगा। मैंने दूसरे दिन सुबह फिर उसे ध्यान पर अपने सामने बैठाया। तब उसकी कुण्डलिनी ऊर्ध्व होकर नाभि चक्र से ऊपर तक आ गई। मैं समझ गया कि यह अवश्य पिछले जन्म का महान योगी है, वह ध्यान पर सिर्फ 5-7 मिनट बैठता था। उतनी ही देर में उसकी कुण्डलिनी ऊपर तक चढ़ जाती थी, उसे अनुभव इतने अच्छे आते थे कि मैं आश्चर्य में पड़ गया। उसकी मात्र कुछ दिनों में कुण्डलिनी पूर्ण यात्रा कर स्थिर हो गई। मैंने समय का अनुमान लगाया कि साढ़े पाँच घण्टे से 6 (छै) घण्टे के बीच में कुण्डलिनी पूर्ण यात्रा करके स्थिर हो गई। वह ध्यान करने के लिए सिर्फ पाँच मिनट ही बैठता था, कभी-कभी तो वह दो मिनट ही बैठता था। कुण्डलिनी का वेग इतना ज्यादा था कि पीड़ा के कारण ध्यान से उसकी आँखें खुल जाती थी। जब वह ध्यान करता था तब मैं उसके सामने बैठता था, ताकि उसे किसी प्रकार की पीड़ा न हो। उसकी दिव्यदृष्टि कारण शरीर से खुली

हुई थी, वह सब कुछ स्थूल आँखों से देख सकता था। उसे खुली हुई आँखों से पृथ्वी के अन्दर का सब कुछ दिखाई देता था। ऊपर के कुछ लोक खुली हुई आँखों से देख सकता था। मुझे कुछ दिनों बाद मालूम हुआ उसका पिछले जन्म नाम त्रिकाल है, अर्थात तीनों कालों को जानने वाला है, वह सृष्टि के आरम्भ से लेकर आज तक की घटनाएँ बताने में सामर्थ्य रखता था। उसकी दिव्यदृष्टि से कुछ भी बच नहीं सकता था।

वह कुछ भी बता सकता था, उसका नाम दूर-दूर तक फैल गया, लोग दूर दूर से कुछ न कुछ पूछने के लिए आने लगे। मगर मैंने सभी को मना कर दिया और कहा– मैं योगी हूँ, सांसारिक कार्यों से मेरा कुछ नहीं लेना-देना है, कृपया आप सभी लोग वापस हो जाएँ। मैंने अपने लड़के से ब्रह्माण्ड के विषय में ज्ञान लेना शुरू कर दिया, मैं उससे कुछ भी पूछता तब वह तुरन्त उत्तर दे देता था, क्योंकि वह त्रिकालज्ञ था। मैंने उस लड़के से अपनी इच्छानुसार ज्ञान प्राप्त किया, फिर मैं तृप्त हो गया और सोचा अब मुझे इससे कुछ भी जानकारी नहीं लेनी है। अब मुझे याद आया, मुझसे पहले कहा गया था कि आपका गुरु उत्तर भारत में है। इस ज्ञान को प्राप्त करने के लिए मैं अन्य योगियों के विषय में सोचा करता था, मगर मुझे मालूम नहीं था कि मेरा ही लड़का मेरा मार्ग दर्शन करेगा। उसकी दिव्यदृष्टि महत्त्व पूर्ण थी, आजकल पृथ्वी पर किसी भी योगी की ऐसी दिव्यदृष्टि नहीं है। उसे पानी के अन्दर विद्यमान बैक्टेरिया भी दिखाई दे जाते थे। उसका सम्मान सूक्ष्म शक्तियाँ भी करती थे। इसी के कारण मैं कुछ समय में ढेरों शक्तियों का स्वामी बन गया।

मुझे बहुत प्रसन्नता थी, जब मेरे लड़के का नाम चारों ओर फैलने लगा, यह बात मेरे पिताजी को बहुत बुरी लगी, क्योंकि उनकी चाल फेल हो चुकी थी। मुझे ऊपर के लोक वाले त्रिकाल का गुरु कहते थे, अब मुझे गुरु शब्द अच्छा नहीं लगता था, क्योंकि मैं किसी का गुरु नहीं बनना चाहता था। मुझे मार्गदर्शक कहा जाए तो बुरा नहीं लगता था, मेरी ऊपर के लोक के योगियों से घनिष्ठता हो गई थी, मुझे प्रकृति के ढेरों रहस्य मालूम हो चुके थे। इस समय स्वामी शिवानन्द हम दोनों का मार्गदर्शन कर रहे थे, शिवानन्द स्वामी जी इस समय तपलोक में रहते हैं। वह भी मुझे कुछ न कुछ ज्ञान व लोकों के विषय में समझाते रहते थे। पृथ्वी पर जो भी कार्य मुझे करना होता था, वह बता देते थे। वह भी मुझे त्रिकाल का गुरु कहकर सम्बोधित करते थे।

त्रिकाल का वसुओं से मिलना

त्रिकाल जब साधना कर रहा था, तब उसे ध्यानावस्था में अनुभव आया– वह वसुलोक पहुँच गया, आठों वसु शिवलिंग की पूजा कर रहे थे, तभी त्रिकाल ने उन वसुओं को नमस्कार करना चाहा, उसी समय वसु बोले– *"त्रिकाल, तुम अपने गुरु को नमस्कार करो, क्योंकि मैं तुम्हारे गुरु के शरीर में विराजमान हूँ तथा तुम्हारे गुरु प्रत्यक्ष हैं"*। उसी समय उसका ध्यान टूट गया और फिर उसने मुझे नमस्कार किया, मैंने उससे पूछा तुमने मुझे नमस्कार क्यों किया, तब वह बोला– "पापा, मुझसे ऐसा कहा गया है"। फिर उसने मुझे सारी बातें बताई, मैं आश्चर्य में पड़ गया। वसु भी मुझे त्रिकाल का गुरु कहते हैं। मैं बोला– "ध्यान पर बैठो और वसुओं को मेरा प्रणाम कहना और बोलना मेरे पापा कहते हैं, मैं तुम्हारा गुरु नहीं हूँ"। त्रिकाल बोला– "शायद वही अनुभव नहीं आया तो"। मैं बोला– मैं शक्तिपात करता हूँ, तुम्हें वही अनुभव आएगा, फिर मैंने उसके ऊपर शक्तिपात किया, फिर वह ध्यान करने लगा। कुछ समय बाद उसने आँखें खोल दीं और उसने मुझे बताया– "मुझे वही अनुभव आया था, अनुभव में वसुओं ने मुझ से कहा, आओ त्रिकाल! तुम अपने गुरु की शक्ति पर हमारे पास आए हो"। फिर त्रिकाल ने अपनी बात उन सभी से कह दी– तब वसु बोले– *"त्रिकाल! तुम्हारे गुरु को अपना पिछला समय याद नहीं हैं, क्योंकि वह इस समय मृत्युलोक में है, प्रकृति की ओर से पूर्वकाल में निश्चित कर दिया गया था कि वही तुम्हारे गुरु होंगे"*। फिर मैं चुप हो गया, क्योंकि वसु कभी असत्य नहीं कह सकते है।

इस सृष्टि में वसुओं की संख्या सिर्फ आठ ही है, जिस लोक में ये आठो वसु रहते हैं उस लोक को वसु लोक कहा जाता हैं ये वसु शिव भक्त होने के कारण सदैव भगवान शिव की पुजा करते रहते हैं। महाभारत काल में देवी गंगा द्वारा जन्में आठो पुत्र यही वसु थे, आठवें वसु देवरथ थे जो भविष्य में कठोर प्रतिज्ञा के कारण भीष्म पितामह के नाम से जाने गए।

स्वामी शिवानन्द जी द्वारा मार्गदर्शन

स्वामी शिवानन्द ने ध्यानावस्था में एक बार मुझसे कहा– आप गाँव से बाहर एक झोपड़ी बनाइए, उसी में आप समाधि लगाया करो, भविष्य में तुम्हें उस झोपड़ी में कुछ कार्य करने होंगे। फिर मैंने नदी के किनारे गाँव से बाहर एक झोपड़ी बना ली और उसी में ध्यान करने लगा। मुझे गुप्त रूप से वही कुछ

सिद्धियाँ सिखाई गईं तथा मैंने समाधि के द्वारा अपना योगबल को बढ़ाना शुरू कर दिया। कुछ मंत्र मुझे पूर्वकाल से सिद्ध थे, उन मंत्रों का प्रयोग करके उनसे भी योगबल बढ़ाना शुरू कर दिया, फिर असीमित योगबल का स्वामी बन गया। मुझे कुछ वरदान मिले, उन वरदानों का उल्लेख मैं यहाँ पर नहीं करूँगा, क्योंकि ये वरदान अत्यन्त गुप्त है। मैं सिर्फ आदिशक्ति कुण्डलिनी के वरदान का विवरण थोड़ा सा दे रहा हूँ, क्योंकि इसका प्रयोग मैंने साधिकाओं पर किया है, उसे आगे लिखूँगा।

मैंने माता कुण्डलिनी शक्ति को प्रसन्न किया था। उसने मुझे वरदान दिया– "तुम्हें योगबल की कभी भी कमी नहीं होगी"। जिस समय मेरे वरदान का प्रयोग करोगे उस समय वह कार्य हो जाएगा, क्योंकि वरदान तुम्हें शक्ति का दिया गया है, मगर ध्यान रखना कभी मेरे वरदान से अनुचित लाभ नहीं लेना। यह वरदान तुम्हारे लिए मृत्यु के बाद भी काम करेगा, सदैव के लिए यह वरदान आपके पास रहेगा।

प्रिय साधकों! नवम्बर सन् 1995 से फरवरी सन् 1996 तक का समय मेरा ही बहुत अच्छा रहा, क्योंकि मुझे योग के विषय में जो जानकारी करनी थी वह जनकारी हो चुकी थी, मुझे जो प्राप्त करना था, वह मैंने प्राप्त कर लिया था। मैं तृप्त हो गया था, अब मुझे सिर्फ योग का अभ्यास करना था तथा शेष कर्मों को भोगकर नष्ट करना था।

सन् 1996

त्रिकाल को लेकर मिरज आश्रम जाना

स्वामी शिवानन्द जी के कहने पर श्री माता जी से पत्र व्यवहार करना शुरू कर किया, क्योंकि श्री माता जी के गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी ही हैं। मैंने पत्र में त्रिकाल के विषय में लिखा था, श्री माता जी और मेरा कुछ दिनों तक पत्र व्यवहार होने के बाद निश्चित हुआ कि मैं मिरज जाऊँगा, मेरी मिरज की तैयारी हो गई। मैं और त्रिकाल 15 फरवरी, 1996 को गोवा एक्सप्रेस से दिल्ली से निकले और दूसरे दिन शाम के समय पूना पहुँचा। पूना रेलवे स्टेशन पर कुछ साधक मुझसे मिलने आए, तब मुझे मालूम हुआ कि अण्णा जी का स्वर्गवास हो चुका है। मिरज आश्रम में शोक है, फिर मैं पूना में ही उतर गया और एक साधिका के घर चले गए, क्योंकि वह साधिका रेलवे स्टेशन पर मुझसे मिलने आई थी। उसी के घर से मैंने मिरज आश्रम में सम्पर्क किया, तब निश्चय हुआ मैं तीन-चार दिन बाद मिरज जाऊँगा। मेरी और उस साधिका से योग सम्बन्धी बातें होनी शुरू हो गई। उसे अपने सामने मैंने ध्यान पर बैठाया, तब मैंने उसे बताया- "आपकी कुण्डलिनी फिर बैठ गई है, मैंने कुण्डलिनी को ऊर्ध्व कर दिया। मेरे पास योगबल की कमी नहीं थी। मैंने कुण्डलिनी को ऊर्ध्व करके कण्ठचक्र तक पहुँचा दिया। दूसरे दिन शिवरात्रि थी, सुबह मैं और त्रिकाल उस साधिका के साथ आलिंदी चले गए। वहाँ पर संत ज्ञानेश्वरजी की समाधि पर कुछ समय तक ठहरे रहे, फिर दोपहर को वापस पूना आ गए।

वापस आते समय रास्ते में माता कुण्डलिनी शक्ति का संदेश मिला, आप इस साधका का कण्ठचक्र खोल दीजिए। मैं माता कुण्डलिनी शक्ति से बोला– "माता! मैं इसका कण्ठचक्र कैसे खोल सकता हूँ, इस चक्र को खोलने के लिए साधक को कई वर्ष अथवा कई जन्म लग जाते हैं"। माता कुण्डलिनी बोलीं– *"पुत्र, मेरे वरदान का प्रयोग करो, इसका कण्ठचक्र खुल जाएगा"*। उसी समय माता कुण्डलिनी शक्ति ने कण्ठचक्र खोलने की मुझे विधि बताई। वास्तव में यह विधि बहुत ही विचित्र थी और उतनी ही गुप्त भी थी।

पूना की साधिका का कण्ठचक्र खोलना और कुण्डलिनी ऊर्ध्व करना

आलिंदी से वापस आकर साधिका को उसके कण्ठचक्र के विषय में बताया, मेरी बात सुनकर साधिका बहुत प्रसन्न हो गई। कुछ समय बाद मैंने साधिका को अपने सामने बैठाया और बोला– "मैं आपका अभी कण्ठचक्र खोल दूँगा, मुझे माता कुण्डलिनी द्वारा आदेश मिला है"। वह साधिका प्रसन्न मुद्रा में थी, आखिरकार मुझे उसका कण्ठचक्र खोलना था, मैंने त्रिकाल से कहा– "तुम अपनी दिव्यदृष्टि से देखो, मैं इसका कण्ठचक्र खोल रहा हूँ"। उसी समय उसके कण्ठचक्र से (साधिका के) आवाज आई– "आप मुझे खोल रहे हैं, मगर इस जगह का कर्म कहाँ जाएगा। पहले कर्म का प्रबन्ध करो, मुझे बाद में खोलो"। उसी समय मेरे शरीर में कुण्डलिनी का वेग (वरदान का वेग) आने लगा। मैं तुरन्त बोला– "हे चक्र! तुम खुल जाओ, यह मेरा आदेश है, हे कर्म तू तीन भागों में बँट जा। एक भाग का कर्म ऊपर लोकों में चला जाए। दूसरा भाग कलियुग! तू ग्रहण कर ले। तीसरा भाग पृथ्वी के वायुमण्डल में व्याप्त हो जाए"। उसी समय साधिका के शरीर से काले-काले रंग के कणों के रूप में ढेर सारा कर्म निकलने लगा, कुछ क्षणों में निश्चित मात्रा में कर्म निकलकर, संकल्पानुसार जहाँ पहुँचना था, वहाँ चला गया। फिर मैंने उसका कण्ठचक्र खोल दिया, जो तरीका मुझे माता कुण्डलिनी शक्ति ने बताया था, उसी तरीके का प्रयोग मैंने किया था। साधिका ने फिर मुझे बताया– मेरा कण्ठचक्र खुल गया है, इसकी मुझे अनुभूति हो रही है। वह अचम्भित हो रही थी कि कण्ठचक्र ऐसे कैसे खुल गया। मैंने उसे बताया– "मुझे माता कुण्डलिनी शक्ति का वरदान प्राप्त है, उसी का प्रयोग किया है"। फिर बाद में मैंने उस साधिका की कुण्डलिनी आज्ञाचक्र तक ऊर्ध्व कर दी और उसका लघु मस्तिष्क भी खोल दिया। फिर 19 तारीख को सुबह मिरज के लिए निकल चल दिया।

मिरज आश्रम में त्रिकाल की परीक्षा ली गई

मिरज आश्रम में मैं दोपहर बाद तीन-चार बजे पहुँच गया, वहाँ कुछ परिचित साधक भी थे। वहाँ मुझे एक कमरा दे दिया गया। मैं और त्रिकाल उसी कमरे में आराम करने लगे। शाम के समय घूमने के लिए निकला, मैं तीन वर्ष बाद यहाँ आया था। इसलिए आश्रम के आसपास के लोगों से भी मिला, आश्रम का नक्शा ही बादल चुका था, पहले से अब बहुत अच्छा बन चुका था, कुछ कमरों का निर्माण

भी हो चुका था। शाम के समय श्री माता जी अपने घर से आश्रम आ गई थी, मैंने उन्हें प्रणाम किया फिर उनसे दो-तीन मिनट तक बातें की। दूसरे दिन शाम के समय दिल्ली के एक साधक त्रिकाल की परीक्षा लेने लगे, आश्रम में उस समय ढेरों साधक उपस्थित थे, त्रिकाल उनके प्रश्नों का उत्तर देता रहा, लगभग एक घण्टे तक उस साधक ने त्रिकाल से ढेरों प्रश्न किए, त्रिकाल उसका उत्तर देता रहा। फिर वह साधक शान्त हो गया, तब त्रिकाल बोला– "अंकल जी, आपने तो कुछ भी नहीं पूछा, सिर्फ निचले स्तर की बात करते रहे, थोड़ा ज्ञान के विषय में पूछते तो अच्छा रहता"। वह साधक बोले- "बेटा, ठीक है आपकी साधना अच्छी है"। त्रिकाल बोला– "अंकल जी, आप कहते हैं मेरी साधना ब्रह्मरन्ध्र में चल रही है, मगर मैं देख रहा हूँ आपका अभी कण्ठचक्र भी नहीं खुला है"। फिर वह साधक कुछ नहीं बोले, दिल्ली का ये साधक त्रिकाल से पूछ रहा था, उसका कहना है– मुझे गौतम बुद्ध ध्यान में योग के विषय में बताते हैं, मैं वही शब्द ध्यान के बाद लिख देता हूँ।

मिरज आश्रम में साधिका का कण्ठचक्र खोलना और कुण्डलिनी ऊर्ध्व करना

तीसरे दिन आश्रम में एक साधिका (जलगाँव की) का कण्ठचक्र खोलने के लिए माता कुण्डलिनी शक्ति का आदेश मिला। मैं उस सधिका से बोला– "मुझे माता कुण्डलिनी शक्ति का आदेश मिला है कि मैं आपका कण्ठचक्र खोल दूँ"। वह साधिका प्रसन्न हो गई, फिर अपने कमरे में उस साधिका को ध्यान में बैठाकर, पूना वाली साधिका की भाँति इसका भी कण्ठचक्र खोल दिया। कण्ठचक्र खुलने का इस साधिका को अनुभव भी आया, तथा कुण्डलिनी थोड़ी सी कण्ठचक्र से ऊपर की ओर चली गई। कण्ठचक्र खुलने का अनुभव साधिका ने श्री माता जी को सुनाया, मगर श्री माता जी उस साधिका से कुछ नहीं बोलीं। चौथे दिन श्री माता जी ने त्रिकाल को अपने कमरे के अन्दर बुलवाया, उसी समय मैं भी कमरे के अन्दर चला गया ताकि श्री माता जी को किसी प्रकार की बात करने में परेशानी न हो, क्योंकि उस समय श्री माता जी थोड़ा ऊँचा सुनती थीं। श्री माता जी ने कहा– "त्रिकाल! मैं पारवती का अवतार हूँ, क्या आपको मालूम है?" त्रिकाल बोला– "श्री माता जी आपको भ्रम हो गया है, आप माता पारवती का अवतार नहीं हैं"। इसी बात को लेकर वाद-विवाद हो गया, तब स्वामी शिवानन्द का संदेश आया, आप इसी समय मिरज आश्रम छोड़ दीजिए। श्री माता जी त्रिकाल से बोलीं– "आप पर तामसिक शक्ति का प्रभाव पड़ता है, इसलिए यह क्रिया होती है। मृत्युंजय मंत्र का जाप किया करो"। मुझे उस समय क्रोध आ

गया, मगर मैं कुछ नहीं बोला, फिर मैं और त्रिकाल जलगाँव की साधिका के साथ जलगाँव जाने के लिए चल दिए।

जलगाँव में साधिका का कण्ठचक्र खोलना और कुण्डलिनी ऊर्ध्व करना

दूसरे दिन सुबह जलगाँव आ गया। मैं अंजू बहन के घर में ठहर गया। फिर अंजू बहन ने इच्छा व्यक्त कर दी– "आनन्द भैया आप मेरा कण्ठचक्र खोल दीजिए"। उसकी अभी कुण्डलिनी भी ऊर्ध्व नहीं हुई थी। पहले मैंने उसे ध्यान पर बैठाया, फिर मैंने उसकी कुण्डलिनी ऊर्ध्व कर दी, कुण्डलिनी को धीरे-धीरे ऊर्ध्व करते हुए उसे कण्ठचक्र तक लाया। इस कार्य को करने के लिए मैं माता कुण्डलिनी का वरदान प्रयोग करता था। जब कण्ठचक्र मैं खोलने लगा, उसी समय कण्ठचक्र से आवाज आई– "आप कण्ठचक्र खोल रहे हैं, यहाँ पर स्थित कर्म कहाँ जाएँगे"। मैंने उसके कर्मो को वाहन करने के लिए अपने आपसे अनुमति माँगी, मेरे अंत:करण से आवाज आई– "मैं उसके कर्म का जिम्मेदार नहीं हूँ और इसका कण्ठचक्र खोलने के लिए मेरी आज्ञा नहीं है"। कर्म लेने के लिए कोई तैयार नहीं हुआ। मैंने कलियुग से कहा– "तुम अधर्म से युक्त हो, तुम्हारा स्वभाव पाप में लिप्त रहना है, तुम इस साधिका के थोड़े से कर्म ले लो"। वह बोला-"योगी! मैं उसके कर्म क्यों ग्रहण करूँ"। मुझे उसी समय क्रोध आ गया। मैं बोला– "इसका अर्थ यह है, मैं अपनी इच्छा से कुछ भी नहीं कर सकता हूँ"। उसी समय मैं बोला– "हे कण्ठचक्र! तू खुल जा, मैं माता कुण्डलिनी शक्ति के वरदान का प्रयोग करता हूँ"। कण्ठचक्र में खुलने की क्रिया होने लगी, तभी साधिका के कण्ठचक्र से तमोगुणी कर्म निकलने लगे। मैंने उन कर्मों से कहा– हे कर्म! तू कलियुग में प्रवेश हो जा"। उस साधिका के कर्म कलियुग के पास चले गए, मगर कलियुग ने कर्म लेने से इन्कार कर दिया। कर्म फिर वापस मेरे पास आ गए, मुझे फिर कर्मों के अन्दर से आवाज आई– "मैं कहाँ जाऊँ, कलियुग ने मुझे स्वीकार करने से इन्कार कर दिया है। मैंने कलियुग पर कुण्डलिनी के वरदान का प्रहार किया, फिर उसने कर्मों को ले लिया"। साधकों! मैंने यह कार्य बहुत गलत किया कि कलियुग पर कुण्डलिनी शक्ति का प्रहार कर दिया। फिर मेरा कलियुग के साथ इसी बात को लेकर झगड़ा हुआ। कलियुग बोला– "मैं अपने युग में योगियों की दुर्गति कर देता हूँ, तुम किस खेत की मूली हो"। मैं बोला– "मेरे जैसा योगी अभी नहीं मिला होगा, तुम क्या मेरी दुर्गति करोगे, मैं भविष्य में वैसे भी अपने शेष कर्मों

को भोगूँगा"। फिर मैंने उस साधिका की कुण्डलिनी आज्ञाचक्र तक कर दी। कुछ दिन जलगाँव रुककर मैं और त्रिकाल अपने घर कानपुर आ गए।

घर वापस आकार मैं अपने योग के अभ्यास में गया। मैं दिन के समय अपनी झोपड़ी में रहता था वहीं पर ध्यान किया करता था। रात्रि के समय घर आ जाता था। घर में रात्रि के समय भी ध्यान किया करता था, मगर त्रिकाल अब ध्यान नहीं किया करता था, वह इधर-उधर खेलता रहता था। मैंने कई बार उसे समझाया, अब ध्यान किया करो, तो वह कहता– "मेरा मन ध्यान में नहीं लगता है" मैं ध्यान नहीं करूँगा। उस पर मेरे पिता जी का प्रभाव होने लगा था।

मुझे श्राप मिला

एक बार अचानक ऊपर के लोक की एक शक्ति से मेरा झगड़ा हो गया। यह धन्वन्तरी के शिष्य थे, इनका नाम कल्याण था। मेरा और कल्याण का झगड़ा ज्यादा बढ़ गया, इन्होंने मुझे अचानक श्राप दे दिया। मैंने सोचा– "मैंने इनका क्या बिगाड़ा है जो इन्होंने मुझे श्राप दे दिया"। श्राप ऐसा था कि मुझे सहन नहीं हो रहा था, मैंने ब्रह्मा (आकाश) से कहा– "हे परम पिता! मुझे अकारण श्राप क्यों दिया गया?" मुझे आकाश से आवाज सुनाई दी– "योगी यह तो मेरी लीलाएँ हैं, मैं क्या करता हूँ, क्यों करता हूँ किसी को उत्तर देने के लिए बाध्य नहीं हूँ"। फिर मैंने प्रकृति देवी से कहा– "माता! मेरे साथ ऐसा व्यवहार क्यों किया गया?" मगर प्रकृति देवी चुप रहीं। मैंने सभी से सम्पर्क किया, मगर किसी ने कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं दिया। मैंने स्वामी शिवानन्द जी से पूछा तो वह बोले– "मैं इस विषय में कुछ नहीं कर सकता हूँ, मुझे जो ब्रह्मा आदेश देते थे, सिर्फ मैं उन्हीं कार्यों का मैं निर्देशन करता था"। इतना कहकर स्वामी जी समाधि में लीन हो गए। अब मैं समझ गया मेरे साथ अवश्य कोई घटना घटने वाली है, कुछ समय बाद मुझे क्रोध आ गया। मैं झोपड़ी में त्रिकाल को लेकर आ गया। मैंने त्रिकाल से कहा– "तुम अपनी दिव्यदृष्टि से मुझे सारा हाल बताते जाओ, क्योंकि तुम्हें मुझसे ज्यादा स्पष्ट दिखाई देता है"। मैं योगबल का प्रहार करता हूँ, मैं बोला– "कहाँ है कल्याण, सामने प्रकट हो जाओ, मैंने सदैव आपका आदर करता रहा और तुमने मुझे श्राप दे डाला"। कल्याण जी सामने अन्तरिक्ष में खड़े हुए दिखाई देने लगे। वह बोले– *"योगी, मेरी इच्छा थी मैंने तुम्हें श्राप दे दिया"।* मैं बोला– "तुम सूक्ष्म जगत में स्थित हो इसलिए यह मेरा दुर्भाग्य है। इस समय कलियुग का राज चल रहा है, मेरा यह स्थूल शरीर कलियुग के आधीन है, मगर यह मत समझना

कि इस समय पृथ्वी पर योगी ही नहीं रह गए। तुमने क्या समझकर मुझे श्राप दे दिया, तो अब सुन ले, अपने श्राप का यह दण्ड भोगो"। फिर मैंने एक विशेष प्रकार की क्रिया की, जिससे उन्हें कष्ट की अनुभूति होने लगी। लेकिन कुछ क्षणों के बाद एक शक्ति ने आकर मुझे समझाया– *"योगी! तुम्हें कुछ और भी कार्य करने हैं, इसके श्राप का कोई कारण रहा होगा"*। फिर और भी कुछ गुप्त बातें हुईं, इस कारण मैं उस शक्ति की बात मान गया।

साधकों! जब साधक कठोर साधना करता है. तब बहुत समय बाद उसके अन्दर शुद्धता आने पर उचित समय पर चक्र खुलने लगते है, अर्थात चक्र खोलने के लिए साधक को अपना आन्तरिक विकास करना पड़ता है इसके बाद तब चक्र खुलते है। आन्तरिक विकास न होने के कारण और अशुद्धता के कारण चक्र, अविकसित अवस्था में अशुद्धता से ढके रहते है। जब साधक कठोर अभ्यास रूपी कर्म करता है, तब चक्र के ऊपर ढकी अशुद्धता अभ्यासानुसार धीरे-धीरे कम होने लगती है। अशुद्धता के नाश होने पर शुद्धता के बढ़ जाने पर चक्र का विकास-क्रम शुरु हो जाता है। कण्ठचक्र खोलने के लिए साधक को कई वर्ष लग जाते है, ज्यादा तर साधकों को कण्ठचक्र खोलने के लिए अगले जन्म का इंतजार करना पड़ता है। अगर कण्ठचक्र दस वर्षों तक साधना करने के पश्चात खुलना है, तब साधक दस वर्ष तक परिश्रम करके चित्त से कर्मों का नाश किया करता है। सभी प्रकार के कर्मचित्त में विद्यमान रहते है, साधक अभ्यास के द्वारा चित्त से कर्मों का नाश करता है, तब चक्र खुलते है। जब तक चित्त से कर्मों का नाश नहीं होगा, तब तक चक्र का विकास नहीं होगा अर्थात चक्र नहीं खुलेगा। मैं कुण्डलिनी का वरदान प्रयोग करके चक्र खोलता था, ऐसी अवस्था में साधक के चित्त पर स्थित कर्म कहाँ जाए। उन कर्मो को कौन भोगेगा, कर्मों का नियम होता है उन्हें भोग कर ही नष्ट किए जा सकते है।

एक दिन त्रिकाल की दिव्यदृष्टि छीन ली गई, उसे दिखाई देना बन्द हो गया। मुझे और त्रिकाल को श्राप दे दिया गया। श्राप कुण्डलिनी देवी ने दिया, त्रिकाल के विचार बदल गए, उसने योग करना बन्द कर दिया। मैंने बहुत समझाया, मगर वह मुझसे ही बिगड़ गया, वह पिता जी के कहने पर चलने लगा। मैं समझ गया अब इसका पतन होना निश्चित है। मैंने योग के लिए त्रिकाल से कड़ाई की, पिताश्री प्लान के मुताबिक पहले से ही बैठे हुए थे। मेरे पिताश्री मेरे ऊपर डंडों से प्रहार करने लगे, बहुत समय तक मैं मार खाता रहा, फिर मैं भी पिता जी से भिड़ गया। मेरी और उनकी दुश्मनी हो गई, त्रिकाल भी मेरा दुश्मन बन गया। घर से मेरा खाना-पीना बन्द कर दिया गया, डेढ़ वर्ष तक मैंने गाँव वालों के यहाँ खाना खाया। उसी समय दिल्ली से सबसे छोटा भाई आया। उसने मेरा सामान जबरदस्ती छीन लिया। पिताजी से ज्यादा

त्रिकाल मेरा दुश्मन हो गया, वह मेरी दुर्गति पर प्रसन्न होता। मैंने उसे श्राप देकर योगबल जामकर दिया और भी ढेरों प्रतिबंध (योग सम्बन्धी) लगा दिए, ताकि पिताश्री त्रिकाल से योग से सम्बन्धित गलत लाभ न ले सकें। वर्तमान समय में वह योग का विरोधी हो चुका है। मैं नहीं जानता हूँ, वह कब ठीक होगा। उसे अब अपना पिछला श्राप भोगना है, जो उसे तपलोक में एक योगी ने दिया था।

सन् 1997

श्राप का प्रभाव कमजोर होना

कुण्डलिनी का श्राप एक साल के बाद मुझ पर कुछ कमजोर पड़ने लगा। मुझे श्राप मिला, खूब कष्ट भी भोगा, मगर योग बराबर करता रहा, क्योंकि मुझे ज्ञान के द्वारा सब कुछ मालूम होता रहता था। किसी में भी इतनी सामर्थ्य नहीं था कि कोई मेरे योग के अभ्यास को बन्द करा दे। मुझे चाहे जितना कष्ट भोगना पड़े, मगर मैं योग बन्द नहीं करूँगा। योग ही मेरा कर्म है, योग ही मेरा धर्म है। रही बात कष्टों की, मेरे स्वयं के कर्म ही मुझे किसी-न-किसी रूप में कष्ट दे रहे हैं। योगी वैसे भी सदैव कष्ट भोगता रहता है।

धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष

यह अनुभव मुझे 23 फरवरी, 1997 को आया। मैंने देखा, आसमान में घनघोर काले बादल छाए थे। बादल इतने काले थे कि आसमान ही नहीं दिखाई दे रहा था। मैं उन्हीं काले बादलों के नीचे भूमि पर लेटा हुआ बादलों को देख रहा था तथा सोच रहा था– कि इन बादलों का रंग इतना काला क्यों है। उसी समय मैंने देखा– काला बादल एक जगह से फटने लगा, काले बादलों के फटते ही ऊपर की ओर चकाचौंध कर देने वाला प्रकाश दिखाई दिया। उसी समय फटे हुए बादलों के बीच से मेरे ऊपर प्रकाश की किरणें पड़ने लगीं, जिससे मेरी आँखें चकाचौंध हो गईं। मैं अपनी आँखों के ऊपर हथेली लगाकर ऊपर की ओर देखने लगा। बादलों के बीच एक दरार हो गई थी। बादल बिखरे नहीं थे। कुछ क्षणों बाद फटे हुए बादलों के बीच दरार में कुछ आकृति सी बनने लगी। मैं गौरपूर्वक उस आकृति को देखने लगा। वह आकृति बादलों की दरार से प्रकाशपुंज के सहारे मेरी ओर आने लगी, उसी आकृति के कारण मेरे चारों ओर प्रकाश फैल गया। वह आकृति मेरे ओर नजदीक आ गई, तब वह स्पष्ट दिखाई देने लगी। मैंने देखा– एक मनुष्य घोड़े पर सवार था, वह मनुष्य घोड़े से नीचे उतरा और मेरे पास आकर खड़ा हो गया। उसका शरीर समान्य पुरुष से ज्यादा बड़ा और बलिष्ट था, उसने सिर पर कुछ पगड़ी-सी बाँध रखी थी, मेरे सामने खड़े होते ही उसने अपना दाहिना हाथ मेरी ओर बढ़ा दिया और बोला– "वह तो नहीं आए है अथवा ऐसा समझो उनके आने का अभी समय नहीं आया है। इन काले-काले मेघों के हटते ही वह आपके पास

उपस्थित होंगे, मुझे उनका दूत अथवा उनका पुत्र समझो। मुझे उन्हीं ने भेजा है, और यह लो अब आप इसके योग्य हो गए हो"। वह पुरुष अपना दाहिना हाथ मेरी ओर किए हुए यह सब बात कह रहा था। कुछ समय के लिए मैं सोच मुद्रा में हो गया कि यह व्यक्ति किसके लिए कह रहा है– "वह तो नहीं आए है"। उसी समय मेरे अन्त:करण से आवाज आई– "यह ब्रह्म के लिए कह रहा है"। मेरे अन्दर विचार आया– "अच्छा तो यह ब्रह्म का दूत अथवा पुत्र है, मैं उसी पुरुष को देख रहा था। वह खड़ा हुआ मुस्करा रहा था। उस पुरुष के दाहिने हाथ की हथेली मेरी ओर थी, वह कुछ देना चाहता था। उसकी हथेली पर कुछ रखा हुआ था, मगर मैं समझ नहीं पाया था कि हथेली में रखी वस्तु क्या चीज है। शायद वह पुरुष मेरे अन्दर की भावना को समझ गया होगा"। वह पुरुष बोला– "यह धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष हैं। यह तुम्हें देने के लिए मुझे भेजा गया है"। इतना कहते ही उसने मेरे दोनों हाथों की हथेलियों पर चारों वस्तुएँ रख दी, मैं उन चारों वस्तुओं को आश्चर्य चकित होकर देखे जा रहा था। फिर मैं उस पुरुष से बोला– "उनसे जाकर कहना, मुझे ये चारों वस्तुएँ क्यों दे दी हैं। धर्म, अर्थ व काम मुझे नहीं चाहिए, मुझे इनसे कोई काम नहीं है। मैं योगी हूँ, मुझे सिर्फ मोक्ष चाहिए"। मगर वह पुरुष कुछ नहीं बोला। सिर्फ कुछ क्षणों तक मुझे देखता रहा, फिर पीछे मुड़कर कुछ दूरी पर खड़े घोड़े पर सवार हो गया और वापस होकर प्रकाश पुंज में लुप्त हो गया। फटे हुए काले बादल आपस में जुड़ गए, फिर अंधकार छा गया।

अर्थ- जिस समय मुझे यह अनुभव आया था, उस समय मैं घोर कष्टों से गुजर रहा था। यह काले बादल मेरा तामसिक अहंकार है। इस अनुभव में घोड़े पर सवार जो पुरुष आया हुआ था, उसे योग की भाषा में "विवेक-ख्याति" कहते हैं। विवेक-ख्याति को ब्रह्म की ओर से भेजा हुआ दूत समझना चाहिये। विवेक-ख्याति ब्रह्म प्राप्ति का प्रवेशद्वार होता है। अभी मेरी यह अवस्था नहीं आई हैं, यह अवस्था भविष्य में शीघ्र ही आ जाएगी। अनुभव में मैंने सिर्फ मोक्ष को ही स्वीकार किया, अन्य तीनों धर्म, अर्थ, काम को वापस कर दिया। योगियों का इन तीनों से क्या लेना देना है, अर्थात ये तीनों वस्तुएँ मेरे लिये त्याज्य हैं। यह अनुभव सिर्फ उन्हें आता है जिन्हें भविष्य में तत्त्वज्ञान प्राप्त होना है।

सन् 1998

उन्नति की ओर

यह अनुभव जनवरी माह में आया था। उन दिनों मैं बहुत ज्यादा ध्यान करने लगा था, हमेशा ध्यान में लगा रहता था। मैं झोपड़ी में बैठा हुआ ध्यान कर रहा था, मैंने देखा- किसी ऊँचे स्थान पर कबूतर की तरह का एक पक्षी बैठा हुआ है। वह अपनी गर्दन मोड़-मोड़ कर, अपनी चोंच अपने पंखों में मार रहा है। फिर वह अपने पंख फैलाकर फड़फड़ाने लगा। यही क्रिया बार-बार कर रहा था। उस पक्षी को देखकर मैं बोला– "यह पक्षी उड़ना चाहता है" इतने में मेरा ध्यान टूट गया।

अर्थ- अब मैं सोचने लगा– इस पक्षी का मतलब क्या है, क्यों उड़ना चाहता है, कुछ समझ में नहीं आया। मैं आँखें बन्द करके ध्यान पर बैठ गया कि इस अनुभव का अर्थ क्या है। मैंने ज्ञान से पूछा- "इस अनुभव का अर्थ क्या है?" ज्ञान ने बताया– "योगी, जो पक्षी देख रहे हो वह तुम ही हो। पक्षी उड़ना चाहता है, इसका अर्थ है– अब तुम योग में शीघ्र ही तीव्रता से ओर आगे बढ़ोगे"। योग की भाषा में इसे विहंगम मार्ग कहते हैं।

यह अनुभव ऊपर लिखे अनुभव के कुछ दिन बाद आया। ध्यानावस्था में देखा– एक काला पक्षी आसमान में उड़ रहा है, वह ऊपर की ओर तीव्र गति से जा रहा है। फिर मैं ध्यान की गहराई में चला गया। कुछ समय बाद यह पक्षी फिर दिखाई दिया। अब वह अन्तरिक्ष में बहुत ऊपर चला गया। कुछ क्षणों में वह आँखों से ओझल हो गया। उसी समय मेरा ध्यान टूट गया। ज्यादा ध्यान करने के कारण शरीर दुर्बल हो गया था, शुद्धता की मात्रा अवश्य बढ़ गई थी।

यह अनुभव जनवरी के तीसरे सप्ताह में आया। ध्यानावस्था में देखा- अत्यन्त तेज प्रकाश से युक्त जगह है, वही काला पक्षी प्रकाश के अन्दर बैठा हुआ है जो मुझे पहले अनुभवों में दिखाई दिया था। मैं यह भी समझ गया था कि यह पक्षी अब इससे ऊपर के लिए उड़ान नहीं भर सकता है, क्योंकि इसके आगे आकाश ही नहीं था, बल्कि प्रकाश ही प्रकाश था। प्रकाश द्वारा छत जैसी बनी हुई थी। वह काला पक्षी छत के नीचे सटा हुआ बैठा था। मैं समझ गया इस पक्षी की उड़ान समाप्त हो गई है, तभी अनुभव समाप्त

हो गया। यह पक्षी काला इसलिए दिखाई पड़ रहा है, क्योंकि मेरा तमोगुणी अहंकार अभी समाप्त नहीं हुआ है। तमोगुणी अहंकार समाप्त होने पर यह पक्षी काला नहीं दिखाई देगा।

यह अनुभव चौथे सप्ताह में मंत्रोच्चारण करते समय आया, उस समय मैं **'ॐ'** मंत्र का उच्चारण कर रहा था। उसी समय मैंने प्रकाश को तेज पुंज के रूप में देखा। जब मैं ओंकार करता था तब तेजपुंज से नीले रंग के छल्ले निकलकर धीरे-धीरे गोलाकार रूप में बड़े होकर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त हो जाते थे। यह मंत्र मुझे पूर्व जन्म से सिद्ध भी है।

ब्रह्म आप मुझे दिखाई क्यों नहीं देते हैं

यह अनुभव 16 मार्च को आया। एक सफेद रंग का चबूतरा है, मैं उस चबूतरे पर लेटा हुआ हूँ, मेरा मुँह ऊपर आसमान की ओर है। हल्का-हल्का उजाला फैला हुआ है, मैने आसमान की ओर देखा– आसमान में कोयले के कणों की तरह काले काले कण उड़ रहें हैं। यह कण इतने घने और ज्यादा मात्रा में थे कि देखने में काले बादलों जैसे लगते हैं। आसमान काले बादलों जैसा प्रतीत होता था। उसी समय मैंने चबूतरे पर लेटे हुए ही ऊपर की ओर तेज आवाज में बोला– "ब्रह्म! आप मुझे दिखाई क्यों नहीं देते है? कृपया आप मुझे दिखाई दें"। मगर मुझे किसी प्रकार का उत्तर नहीं मिला, मैंने दुबारा तेज आवाज में बोला– "ब्रह्म! आप मुझे दिखाई क्यों नहीं देते हैं?" इस बार भी किसी प्रकार का उत्तर नहीं मिला। मैं क्षण भर आसमान की ओर देखता रहा, मैं फिर बोला– "क्या मेरी आवाज कोई सुन रहा है?" इतने में अन्तरिक्ष से आवाज सुनाई दी– "हाँ, मैं सुन रहा हूँ"। मैंने अपनी आँखें बन्द की तब मैंने देखा– "मेरे सामने अत्यन्त तेजस्वी प्रकाश ही प्रकाश है, इसी प्रकाश के मघ्य से आवाज अपने आप उत्पन्न हो रही थी"। मैं प्रकाश की ओर इतना आकर्षित हुआ कि टकटकी लगाकर देखने लगा, क्योंकि इतना आकर्षित प्रकाश मैंने कभी नहीं देखा था। इसी प्रकाश से फिर आवाज आई– "योगी, मैं तुम्हें इसलिए नहीं दिखाई देता हूँ, तुम यह काला अंधकार देख रहे हो, यह तुम्हारा अहंकार है। इस अहंकार को पहले समाप्त करो, फिर तुम्हें मेरे दर्शन हो सकेंगे"। उसी समय मैंने अपनी आँखें खोल दी, मैं सफेद चबूतरे पर लेटा हुआ था। आसमान में काला अंधकार छाया हुआ था। इतने में काले अंधकार को चीरता हुआ ऊपर की ओर से हल्के नीले रंग का चमकीला तेज प्रकाश आया और मेरे ऊपर पड़ने लगा, मेरी आँखें चकाचौंध हो गई। मेरा ध्यान टूट गया, मैंने अपनी आँखें खोल दीं।

मुझे अब भी तेज प्रकाश याद आ रहा था, क्योंकि इतना आकर्षक प्रकाश मैंने कभी नहीं देखा था। इस प्रकाश के सामने सूर्य के प्रकाश की कोई गणना ही नहीं थी। यह प्रकाश इतना सुन्दर था कि मैं कई दिनों तक उसी प्रकाश की याद करके सोचता रहा कि मुझे और कुछ नहीं चाहिए, बस इसी प्रकाश को देखता रहूँ।

प्रिय साधकों! जिस जगह से आवाज उत्पन्न हो रही थी, उस जगह पर 'ॐ' की ध्वनि सदैव उत्पन्न हुआ करती है, यह क्रिया वहाँ पर सदैव स्वमेव होती रहती है। जिस समय मैं ब्रह्म से यह कह रहा था– आप मुझे दिखाई क्यों नहीं देते हैं, उस समय मेरे मुँह से इतना जोर से योगबल निकल रहा था कि आसमान में छाया हुआ अंधकार अनन्त ऊपर की ओर उड़ता हुआ चला गया था। मेरे और ब्रह्म के बीच यही तमोगुणी अहंकार ही अवरोध है, यह तमोगुण धीरे-धीरे ही अभ्यास के अनुसार ही हटेगा। इस तमोगुणी अहंकार को समाप्त करते समय, समाज में ढेर सारे कष्ट तथा मानसिक क्लेश उठाने पड़ते हैं। इस अवस्था में योगी को कष्ट अपने आप आ जाते हैं। इसलिए योगी को ज्ञान का सहारा लेना पड़ता है, तभी उसका आगे का मार्ग तय होता है।

बुझे हुए अंगारे की तरह बनना

यह अनुभव ऊपर लिखे अनुभव के तीन-चार दिन बाद आया। ध्यानावस्था में देखा– मैं अन्तरिक्ष में बैठा हुआ हूँ, मेरे सामने थोड़ी दूरी पर एक तरुण लड़की बड़ी तेजी से मेरी ओर आ रही है। मैं उस लड़की को गौरपूर्वक देखने लगा, क्योंकि उसने हरे रंग का विशेष तरह से एक वस्त्र पहन रखा था, मैं सोचने लगा– इसके वस्त्र का रंग बहुत ज्यादा गहरा हरा है तथा वस्त्र पहनने का तरीका भी बड़ा विचित्र सा है। एक ही वस्त्र से लड़की के सम्पूर्ण अंग ढके हुए थे। मैं उसी की तरफ तटस्थ होकर देख रहा था, उसके चेहरे पर किसी तरह का भाव नहीं था। जब वह लड़की मेरे निकट आई- तब मैंने देखा– उसके हाथ में बहुत बड़ा बुझा हुआ अंगारा है। मैं उस बुझे हुए अंगारे की ओर देख रहा था। वह लड़की मेरे निकट आ गई और बोली– "योगी, तुम्हें इसके समान बनना है, देख रहे हो यह पूरी तरह से शान्त हो चुका है, सिर्फ राख का ढेर मात्र है"। उत्तर में मैं कुछ नहीं बोला– मैं बुझे हुए अंगारे की ओर देख रहा था, वह लड़की तेजी से आगे की ओर बढ़ गई। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- बुझे हुए अंगारे का अर्थ है- किसी अंगारे पर पानी डाल दो तो अंगारा बुझ जाएगा, अंगारे की अग्नि समाप्त हो जाएगी, सिर्फ राख का ढेर रह जाएगा। इसका अर्थ है– "पूरी तरह से शान्त हो जाना"। किसी प्रकार का विकार उत्पन्न न होना, सभी प्रकार के कर्मों का नष्ट हो जाना। बुझे हुए अंगारे के समान अवस्था प्राप्त करने को निर्वाण अथवा मोक्ष कहते हैं। यह लड़की प्रकृति (व्यष्टि प्रकृति) का स्वरूप है।

यह अनुभव 25-26 मार्च को आया। मैंने देखा– मैंने किसी स्थान पर खड़ा हूँ। मेरे सामने एक कुत्ता बैठा हुआ है, कुत्ता बहुत स्वस्थ है। उसी समय मेरे सामने एक व्यक्ति प्रकट हो जाता है, उस व्यक्ति का शरीर पारदर्शी है। उसने मुझसे कहा– "तुम इस कुत्ते को मार डालो"। उसी समय उस व्यक्ति ने मुझे एक धारदार हथियार भी दिया। मैंने उस व्यक्ति के हाथ से हथियार ले लिया तथा कुत्ते के शरीर पर प्रहार किया। कुत्ता जोर से चीखा तथा मुझसे बोला– "योगी, तुमने मुझे अकारण ही मार डाला, मैं तो वैसे भी चला जाता"। मैं कुछ नहीं बोला, कुत्ता मेरे सामने बुरी तरह से छटपटा रहा था।

अर्थ- साधकों! यह कुत्ता मेरा ही कर्म है, मैंने अपना कर्म बहुत ज्यादा मात्रा में नष्ट कर दिया है तथा भोगकर समाप्त भी कर दिया है अब भी मेरे चित्त पर शेष कर्म हैं।

लक्ष्मी जी का आशीर्वाद

यह अनुभव मार्च के अन्तिम सप्ताह में आया। रात्रि के समय ध्यानावस्था में देखा– एक सफेद रंग के विशाल हाथी के ऊपर एक स्त्री बैठी हुई है। मैं उसके सामने खड़ा-खड़ा मुस्करा रहा हूँ। स्त्री बहुत सुन्दर है, वह मुकुट भी धारण किए हुए है। वह स्त्री चार-पाँच इंच चौड़ा पारदर्शी फीता जैसी वस्तु मेरी ओर फेंक रही है, इस फीते से प्रकाश सा निकल रहा है। मेरे सामने थोड़ी दूरी पर फीते के रूप में प्रकाश पुंज सा जमा हो गया। मैं अपनी जगह पर तटस्थ खड़ा हुआ फीते को देख रहा हूँ। उस स्त्री ने फीता रूपी तेज पुंज को लेने का इशारा किया, मगर मैं कुछ नहीं बोला, क्षणभर के लिए उस स्त्री ने त्राटक की भाँति मुझ पर दृष्टि डाली, मैं अब भी शान्त खड़ा हुआ था। उसी समय फीते के रूप में तेज पुंज अदृश्य हो गया। स्त्री ने अपना मुँह खोला और दोनों हाथ की हथेलियाँ मेरी ओर की। मुँह व हथेलियों से विशेष तरह की चमकीली वस्तुएँ निकलकर नीचे की ओर गिरने लगीं। मेरे सामने चमकीली वस्तु का ढेर लग गया। मैं

तुरन्त समझ गया कि यह मणियों की तरह कोई कीमती वस्तु है। वह स्त्री बोली– "योगी, इन्हें ले लो, (मणियों की ओर इशारा करके)"। मैं बोला– "नहीं, मुझे यह सब नहीं चाहिए, आप कौन हैं, यह सब क्यों दे रही हैं?" वह स्त्री बोली- "योगी पुत्र, क्या तुम मुझे नहीं पहचानते हो, मुझे ध्यान से देखो, मैं कौन हूँ?" इतना कहते ही उस स्त्री ने मुस्करा दिया"। मैं बोला– "हाँ, माता मैंने आपको पहचान लिया है, मगर आप माँ होकर भी यह चमकीले पदार्थ क्यों दे रही हैं। यह मेरे किस काम के हैं, मैं योगी हूँ कृपया आप मुझे आशीर्वाद दीजिए, मैं महान योगी बनूँ"। माता बोलीं– "ऐसा ही होगा"। फिर वह अदृश्य हो गई और अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली स्त्री माता लक्ष्मी जी थीं। वह चमकीला फीता जैसी वस्तु मुझे लेने के लिए कह रही थी– मैं परोपकार रूपी बंधन में बंध जाता, फिर मुझे आश्रम या संस्था बनाकर चलाना पड़ता। अगर मैं चमकीली मणियों जैसी वस्तु ले लेता– तब इसी जन्म में मैं धनवान बन जाता, इससे मेरी यश और कीर्ति भी होती, मगर मैंने यह सब स्वीकार नहीं किया, इसीलिए सदैव धन के अभाव में जीवन व्यतीत होता रहा है। ये सब वस्तुएँ योगी को पतन में धकेल देती हैं।

तृष्णा और कुण्डलिनी

यह अनुभव भी मार्च के अन्तिम सप्ताह में आया– मैं किसी स्थान पर बैठा हुआ हूँ, चारों ओर सुनहरा प्रकाश फ़ैला हुआ है। मेरी दृष्टि सामने की ओर गई, सामने थोड़ी दूरी पर एक घोड़ा खड़ा हुआ है, घोड़ा सुडौल व हृष्ट-पुष्ट है। घोड़े के पास एक नाग प्रकट हो गया, नाग सुनहरा व बहुत सुन्दर है, ऐसा लग रहा था मानो अग्नि में तपाए हुए सोने का बना हुआ है। नाग ने अपना फन उठाकर घोड़े की ओर देखा– घोड़ा अपनी जगह पर चुपचाप खड़ा हुआ था। नाग ने अपना शरीर बहुत लम्बा कर लिया फिर घोड़े के पास पहुँचा, नाग ने घोड़े के चारों पैरों को अपने शरीर से दो-तीन चक्कर लगा कर लपेट लिया। फिर नाग अपना शरीर कड़ा करने लगा, इस क्रिया से घोड़े के चारों पैर एक जगह एकत्र होने लगे, इसलिए घोड़ा छटपटाने लगा। उसने अपना एक पैर नाग की पकड़ से बाहर निकाल लिया, उसी समय नाग ने बड़ी तेजी से उस पैर को फिर अपनी लपेट में ले लिया। फिर नाग अपनी लपेट कड़ी करने लगा, इससे घोड़े के पैरों की दूरियाँ कम होने लगीं। एक बार घोड़ा फिर छटपटाया, घोड़े ने अपना एक पैर नाग की पकड़ से फिर बाहर निकाल लिया। बस, यही क्रिया बराबर हो रही थी। नाग घोड़े के पैरों को अपनी लपेट में लेता था

और घोड़ा अपना (एक) पैर बाहर निकाल लेता था, यह क्रिया कुछ समय तक चलती रही। मैं दूर बैठा हुआ हँस रहा था, फिर सोचने लगा- यह सुनहरा नाग घोड़े के पैरों को क्यों तोड़ने में लगा हुआ है। इतने में नाग ने घोड़े के पैरों को अपनी लपेट में कड़ा करके घोड़े को गिरा दिया। फिर घोड़े के चारों पैरों को अपनी लपेट से तोड़ दिया। नाग ने अपनी लपेट के द्वारा घोड़े की पसलियाँ भी तोड़ दीं, घोड़ा बुरी तरह से छटपटा रहा था। नाग ने घोड़े के शरीर पर कई जगह डसा, फिर घोड़ा अपनी अन्तिम श्वांसे गिनने लगा, मगर घोड़ा मरा नहीं बल्कि जीवित बना रहा।

अर्थ- प्रिय साधकों! घोड़ा– मेरी तृष्णा है, जो घोड़े के रूप में दिखाई पड़ रही है। सुनहरा नाग– कुण्डलिनी शक्ती है। कुण्डलिनी अपने प्रभाव से मेरी तृष्णा नष्ट कर रही है, वैसे योग में घोड़ा मन का प्रतीक माना जाता है, पर यहाँ पर घोड़े का अर्थ तृष्णा से है। कुण्डलिनी मेरे अन्दर तृष्णा के प्रभाव को नष्ट कर करने का प्रयास कर रही है।

भुने हुए चने

यह अनुभव मार्च के अन्तिम दिनों में आया। ध्यानवस्था में देखा– मैं किसी स्थान पर बैठा हुआ ध्यान कर रहा हूँ। उसी समय आवाज आई– “योगी, यह लो”। मैंने अपनी आँखें खोल दी, एक लड़की अपनी मुट्ठी में कुछ लिए हुए मेरे सामने खड़ी हुई थी, उसकी मुट्ठी मेरे सामने थी। मैं समझ गया, इसी लड़की ने मुझे आवाज दी है। मैं सोचने लगा– “इस मुट्ठी में क्या है जो मुझे देना चाहती है”। इस लड़की से थोड़ी दूरी पर एक और लड़की खड़ी हुई थी। दोनों लड़कियों की उम्र 20-20 वर्ष लग रही थी। मुझे सोच मुद्रा में देखकर लड़की ने अपनी मुट्ठी खोल दी, उसकी हथेली में भुने हुए चने थे। मैं बोला– “यह तो भुने हुए चने हैं”। लड़की बोली– “योगी, तुम इन चनों को चबा लो, अब तुम इसके योग्य हो गए हो”। मैंने उस लड़की से भुने हुए चने ले लिए और चबाने लगा। कुछ क्षणों बाद दूसरी लड़की ने भी अपना हाथ मेरी ओर बढ़ा दिया, उसके हाथ में भी भुने हुए चने थे। मैं बोला– “मेरे पास अभी चने हैं, पहले मैं इन्हें चबा लूँ”। दोनों लड़कियाँ मुझसे थोड़ी दूरी पर जाकर बैठ गई, मैं भुने हुए चने चबा रहा था। दूसरी लड़की अपने हाथ में अब भी चने लिए हुए बैठी थी।

अर्थ- प्रिय साधकों! भुने हुए चने का अर्थ है– किसी भी बीज को आग में भूनने के बाद उसमें अंकुरण की क्षमता नष्ट हो जाती है, फिर उसके अन्दर से अंकुर नहीं निकल सकता है। इसी प्रकार योगी की योगाग्नि से चित्त के सम्पूर्ण कर्माशय जल जाते हैं। चित्त में किसी प्रकार की वृत्तियाँ नहीं रह जाती हैं। इस अवस्था में कर्मों के न रहने के कारण जीवात्मा को भोग करने के लिए जन्म ग्रहण नहीं करना पड़ता है। इसमें एक लड़की प्रकृति है, दूसरी लड़की माया है। प्रकृति के दिए चने तो हमने चबा लिए, माया के चने मैंने ग्रहण नहीं किए। इसका मतलब माया का प्रभाव मुझ पर अभी बना रहेगा। इस अनुभव के अनुसार मेरी अवस्था भविष्य में आएगी। इन अनुभवों से लगता है, कुछ समय बाद शेष कर्मों की समाप्ति हो जाएगी। फिर अभ्यासी के चित्त पर नये संस्कार नहीं बनते है। उसी समय तमोगुणी अहंकार भी नष्ट हो जाएगा।

सुवर्णमय पुरुष

यह अनुभव अप्रैल माह के प्रथम सप्ताह में आया– मैं अन्तरिक्ष में बैठा हुआ हूँ। अपने सामने थोड़ा नीचे की ओर देख रहा हूँ, नीचे की ओर एक नदी जैसी है, मगर इस नदी में सफेद उज्ज्वल दूध के समान सफेद पदार्थ उबल रहा है। इस नदी में बहाव नहीं है, बस यही सफेद तरल पदार्थ कहीं-कहीं पर स्रोत की तरह नीचे से ऊपर की ओर उबल रहा था। जगह-जगह पर उबलता हुआ सफेद पदार्थ बहुत ही सुन्दर दिख रहा था। उसी समय मैंने देखा– एक सुनहरे रंग का पुरुष है, उसके बाल भी सुनहरे ही हैं, इसका सम्पूर्ण शरीर सोने जैसे पदार्थ से बना हुआ है। उसका शरीर गठीला है, यह सुनहरा पुरुष अपने दोनों हाथों में एक लड़के को उठाए लिए चला जा रहा है। लड़के का शरीर भी स्वर्ण के समान सुनहरे रंग का बना हुआ है। सुनहरे रंग के पुरुष ने नदी के अन्दर प्रवेश किया, जब वह नदी के बीच में पहुँचा, तब मैं जोर से हँसा। मेरे हँसने का कारण यह था– "वह पुरुष जिस लड़के को लिए जा रहा था, वह लड़का कोई और नहीं बल्कि स्वयं मैं ही था। मैं अत्यन्त सुन्दर सुनहरे शरीर वाला था, मैं उसी की बाँहों में शान्त लेटा हुआ था, पुरुष बड़े आराम से नदी के अन्दर चला जा रहा था। मैं बोला– "देखो, यह पुरुष मेरे शरीर को लिए जा रहा है"। फिर मैं चौंका और सोचा– "मेरा शरीर पुरुष लिए जा रहा है, मगर मैं तो यहाँ उससे दूर अन्तरिक्ष में बैठा हुआ हूँ"। फिर मैंने अपने आपको देखा, तब मुझे अपना शरीर ही नहीं दिखाई दिया। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, मेरा शरीर ही नहीं है, मैं स्वयं अपने आप को नहीं देख पा रहा हूँ। सामने की ओर मेरा

शरीर सुनहरा पुरुष लिए जा रहा है, मैं अपने शरीर से बहुत ऊपर विद्यमान हूँ। जिस जगह पर मैं हूँ उस जगह पर मेरा शरीर ही नहीं है, मुझे सिर्फ भाषित हो रहा है कि मैं हूँ। उसी समय मुझे होश आने लगा। अनुभव समाप्त हुआ।

प्रिय साधकों! यह अनुभव बड़ा विचित्र सा है। इस अनुभव में मैं स्वयं अपने शरीर को नहीं देख पा रहा हूँ, मगर मेरा शरीर मुझसे निचले स्तर पर सुनहरे रंग का पुरुष लिए जा रहा है। सुनहरा पुरुष– इस पुरुष को "हिरण्यपुरुष और हिरण्यगर्भ" कहते है। हिरण्यगर्भ ब्रह्मा जी को कहते हैं, जो ब्रह्मलोक में रहते हैं तथा यही सृष्टि की रचना करने वाले हैं। मेरी वास्तविक स्थिति इस स्थान से बहुत ऊपर है, उस स्थान पर योगियों के शरीर अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं। इसीलिए मेरा शरीर सिर्फ भाषित हो रहा था कि मैं हूँ अथवा मेरी उपस्थिति है। इस स्थान पर योगी सिर्फ ध्यानस्थ रहता है, इच्छा से रहित होकर ध्यानस्थ होने के कारण समाधि का समय बहुत ही ज्यादा होता है। कर्मों के कारण जन्म का समय आ जाने पर, प्रकृति की प्रेरणा से समाधि भंग हो जाती है, अथवा जरूरत पड़ने पर जन्म ग्रहण करके कठोर योग का अभ्यास करते हुए प्रकृति के कार्यों में लग जाते हैं।

मैं स्वयं तृप्त हूँ

यह अनुभव अप्रैल के प्रथम सप्ताह में आया– मैं किसी अत्यन्त तेजस्वी स्थान पर बैठा हुआ हूँ, मेरे आसपास ढेर सम्पूर्ण साधक बैठे हुए हैं। मुझसे थोड़ी दूरी पर ऊँचे स्थान पर एक सन्यासी बैठा हुआ है। उसने अपने शरीर पर भगवां वस्त्र धारण किया हुआ हैं, तथा उसका शरीर अत्यन्त तेजस्वी हैं, वह योग के विषय में साधकों को कुछ बता रहा हैं। जब कोई साधक योग के विषय में कुछ पूछता है, तब सन्यासी जी उत्तर दे देते हैं। अपनी-अपनी समस्याओं के हल हो जाने पर सभी साधकगण उठकर चले जाते हैं। मैं भी वहीं पर बैठा हुआ उन्हें देखकर मुस्करा रहा हूँ, मेरे अन्दर भी उनके लिए बहुत श्रद्धा है। जब सभी साधकगण चले गए, सिर्फ मैं अकेला रह गया। तब उन्होंने मुस्कराते हुए मेरी ओर देखा, अपने स्थान पर बैठा हुआ ही मैंने सन्यासी जी को प्रणाम किया। मेरा प्रणाम स्वीकार करते हुए उन्होंने मुस्करा दिया। फिर सन्यासी जी बोले– "योगी, क्या तुम्हें भी कुछ पूछना है अथवा योग में तुम्हारी भी कोई समस्या है"। मैं बोला– "मैं स्वयं अपने आप में तृप्त हूँ", फिर सन्यासी जी सिर्फ मुस्कराए। उन्होने आशीर्वाद मुद्रा में मेरी ओर हाथ उठा दिया, हम दोनों एक-दूसरे की ओर देखकर मुस्करा रहे थे। अनुभव समाप्त हो गया।

मेरा शेष कर्म

यह अनुभव मध्य अप्रैल में आया– आसमान में सूर्य निकला हुआ है, सूर्य का प्रकाश चारों ओर फ़ैला हुआ है। उस प्रकाश में कुत्ते का एक छोटा-सा बच्चा खड़ा हुआ है, वह अपनी पूँछ हिला रहा है और मेरी ओर देख रहा है। मैं भी मुस्करा कर पिल्ले (कुत्ते का बच्चा) की ओर देख रहा हूँ। साधकों! यह पिल्ला (कुत्ते का बच्चा) मेरा कर्म है, जो भविष्य में धीरे-धीरे नष्ट हो जाएगा।

यह अनुभव अप्रैल माह के चौथे सप्ताह का है– मैं किसी स्थान पर बैठा हुआ हूँ, इतने में मेरे पास कुत्ते का नवजात शिशु आ गया। मैं बोला– "क्यों रे! तू इतना छोटा कैसे रह गया"। वह मेरे पैरों के पास आकर बैठ गया, मैंने अपने दोनों हाथों से पकड़कर उसे इतने जोर से दबाया, वह बुरी तरह से तड़पकर आवाज निकालने लगा। उसकी आवाज इतनी तेज थी कि मेरे कानों को चुभ रही थी। उसी समय मेरी आँखें खुल गई। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! दोनों अनुभवों से लगता है मेरा कर्म अत्यन्त कम हो गया है। आखिरकार मुझे कर्मों को शून्य पर ले जाना है।

चित्त पर सात्विकता का बढ़ना

यह अनुभव 2 मई को आया था। ध्यानावस्था में मैंने देखा– एक सफेद रंग की चिड़िया ने मेरे पास से ऊपर की ओर अन्तरिक्ष में उड़ान भरी और ऊपर अंतरिक्ष में उड़ी चली जा रही है। आसमान में सफेद रंग के बादल छाये हुए हैं, चारों ओर प्रकाश फ़ैला हुआ है। चिड़िया अपने पंजों में एक माला दबाए हुए उड़ रही थी, यह माला बहुत बड़े आकार में थी, वह माला पारदर्शी व तेज प्रकाश से युक्त थी। उस माला में नौ-दस गाँठ अथवा फूल थोड़ी-थोड़ी दूरी पर बने हुए थे। गाँठ अथवा फूल की दूरी आपस में बराबर थी। मैं कभी सुन्दर चिड़िया को देखता था, कभी विचित्रनुमा माला को देखता था, कभी आसमान में छाये हुए सफेद बादलों को देखता था।

अर्थ- साधकों! आकाश में छाये हुए सफेद बादल मेरे चित्त पर स्थित कर्माशय ही हैं, जो सात्विकता को लिए हुए हैं। काले पक्षी की जगह अब चिड़िया सफेद दिखाई दी थी। इसका अर्थ है- मेरे

अन्दर का तमोगुण धीरे-धीरे साफ हो रहा है। मैं जिस तरह बादल, पक्षी, कुत्ते का अर्थ लिख रहा हूँ, इसका मतलब यह नहीं है कि अन्य साधक भी इसी तरह से अनुभवों का अर्थ निकालें। हर साधक के योग की स्थिति के अनुसार, एक ही दृश्य के अलग-अलग अर्थ होते हैं।

निष्क्रिय इन्द्रियाँ

यह अनुभव 6 मई को ध्यानावस्था में आया– मैं झोपड़ी के अन्दर बैठा हुआ हूँ, बाहर से विचित्र-सी आवाज आ रही है। आवाज सुनकर मैं झोपड़ी से बाहर निकला तो देखता हूँ– झोपड़ी के बाहर बहुत सुन्दर हरा-भरा मैदान है, सुन्दर-सुन्दर पेड़ हैं। मैं उसी समय कहता हूँ– मेरी झोपड़ी कितने सुन्दर स्थान पर बनी हुई है, मैं यही सोच रहा था। फिर किसी जानवर की आवाज सुनाई दी। आवाज ऐसी थी जैसे घायल अवस्था में कराह रहा हो। मैंने आवाज की ओर देखा– मुझसे थोड़ी दूरी पर घोड़े के समान एक जानवर बुरी तरह से तड़प रहा है, वह भूमि पर पड़ा हुआ है। उस जानवर के पेट, मुँह और चारों पैरों में माँस नहीं है, सिर्फ हड्डी ही हड्डी है। उसकी रीढ़ और गर्दन में थोड़ा-सा माँस रह गया है। आश्चर्य यह था, उस अवस्था में भी तड़पने की आवाज आ रही है, इसे देख कर मैं सोचने लगा कि इसका माँस कौन खा गया। उसके शरीर से लगता था वह स्वयं पहले शक्तिशाली रहा होगा। इतने में मैं देखता हूँ- मुझसे बहुत दूरी पर (लगभग ½ किमी दूर) एक हाथी खड़ा हुआ मेरी ओर देख रहा था। हाथी से थोड़ी दूरी पर शेर खड़ा था। इसी प्रकार मुझे कई जानवर खड़े हुए दिखाई दिए, यह सभी जानवर अर्ध वृत्ताकर रूप में खड़े हुए थे। मैं यह देखकर थोड़ा सहम सा गया कि मेरे ऊपर ये जानवर हमला न कर दें। मैं झोपड़ी के अन्दर आ गया, झोपड़ी के अन्दर एक बहुत सुन्दर लौ (ज्योति) जल रही थी। क्षणभर तक मैं उस ज्योति को देखता रहा, क्योंकि वह बहुत सुन्दर थी, झोपड़ी के अन्दर प्रकाश फ़ैला हुआ था। मैं ज्योति से बोला– “अब तुम बुझ जाओ, झोपड़ी के अन्दर प्रकाश देखकर जानवर हमला न कर दें”। ज्योति अदृश्य हो गई। ज्योति के अदृश्य होने पर भी झोपड़ी के अन्दर प्रकाश फ़ैला हुआ था, अब झोपड़ी के अन्दर से मैं जानवरों को देखने लगा। झोपड़ी चारों ओर से बन्द थी, फिर भी जानवर मुझे दिखाई दे रहे थे। ऐसा लग रहा था मानो किसी ने इन्हें पत्थर की मूर्ति बना दिया हो। सभी जानवर बिल्कुल निष्क्रिय हुए खड़े थे। फिर मैं शान्त होकर आँखें बन्द करके ध्यान करने लगा। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! घोड़े की तरह घायल जानवर मेरी तृष्णा है जो अभी पूरी तरह समाप्त नहीं हुई है, क्योंकि वह घोड़े के रूप में अभी जीवित हैं। मुझे अर्धवृत्ताकार में खड़े मूर्ति के समान निष्क्रिय जानवर दिखाई दिए, वह मेरी इच्छाएँ आदि हैं, वह निष्क्रिय-सी हो गई हैं। यह ध्यान रखना– इन्द्रियाँ अन्तर्मुखी होकर निष्क्रिय-सी हो जाती हैं, तथा ज्यादा अभ्यास के कारण निष्क्रिय सी हो जाती है। यदि इन्द्रियों को अवसर मिल जाए, तो फिर क्रियाशील हो सकती है। झोपड़ी के बाहर जो हरा भरा सुन्दर मैदान दिखाई दे रहा है वह चित्त की भूमि है। झोपड़ी- चित्त का विशेष स्थान, जो आले के समान अभासी को दिखाई देता है, यहीं पर दीप शिखा के समान जलती हुई ज्योति दिखाई देती है। जलती हुई ज्योती चित्त की सात्विक वृत्ति होती है। मैं इसे बुझने के लिए कहता हूँ– चित्त वृत्ति रहित होने पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य होता है। फिर चित्त स्वप्रकाशित सा हो जाता है।

स्वच्छ हो जा

ऊपर लिखे अनुभव के 15-20 मिनट बाद अनुभव आया– मैं अपने बायें हाथ में एक मानव आकार लिए हुए हूँ। यह मानव आकार पूरी तरह से चैतन्यमय सा है, उसकी लम्बाई व आकार बिल्कुल थोड़ी सी है। मैं अपने दाहिने हाथ से मानव आकार की सफाई कर रहा हूँ, साफ करते समय कह रहा हूँ– "देख भाई! तू पूरी तरह से स्वच्छ हो जा"। इतना कहकर मैं फिर दाहिने हाथ से उसे स्वच्छ करने में लग गया तथा सोच रहा हूँ– "मैं इसे इतना स्वच्छ करूँगा कि इसके अन्दर गन्दगी नाम की कोई चीज नहीं रह जाएगी"। कुछ समय बाद वह मानव आकार स्वच्छ हो जाता है, अब मैं दोनों हाथों से उस मानव आकार को पकड़े हुए खड़ा हूँ। मैंने सोचा– "अब मैं इसका क्या करूँ" यही सोच रहा था, उसी समय मुझे लगा, यह मानव आकार मेरे अन्दर का शरीर है। फिर मैं सोचने लगा– "यह मानव आकार मेरे शरीर के अन्दर कैसे जाएगा"। बस सोचने भर की देर थी, मानव आकार मेरे हाथों से छूट कर मेरे शरीर के अन्दर प्रवेश करके अदृश्य हो गया। इस क्रिया पर मेरी हँसी छूट गई कि मानव आकार मेरे शरीर के अन्दर समा गया, जबकि मैं स्वयं मानव (मनुष्य) हूँ। मानव आकार चमकीले नीले रंग के प्रकाश से बना हुआ था।

अर्थ- साधकों! मानव आकर हल्के नीले रंग के प्रकाश से बने होने के कारण इसका अर्थ है– यह मेरा कारण शरीर है। कारण शरीर को स्वच्छ सिर्फ ज्ञान ही कर सकता है।

यह अनुभव 8 मई को आया– बिल्कुल स्वच्छ चमकदार हल्के नीले रंग का आकाश है, आकाश (अन्तरिक्ष) बहुत ही सुन्दर है। मैं गौरपूर्वक आकाश को देख रहा हूँ और बहुत ही प्रसन्न हो रहा हूँ, मैं आकाश के ऊपरी भाग में बैठा हुआ हूँ। मैंने अपनी दृष्टि थोड़ी नीचे की ओर की, तब उसी समय मुझे एक पीपल का पेड़ दिखाई दिया। ऐसा लगता है– पेड़ हजारों साल पुराना है, क्योंकि उसका तना बिल्कुल बेकार सा हो गया था। तने की बाह्य परत बिल्कुल बेकार सी व उसमें छोटे-छोटे गड्ढे जैसी हो गयी है तथा तना भी सूखा सा दिखाई दे रहा है। तने को देखकर लगता है यह पहले विशाल वृक्ष रहा होगा, अब तने से दो डालियाँ निकलकर ऊपर की ओर चली गई हैं। डालियाँ भी बिल्कुल बेकार सी हो गयी हैं, डालियों के अन्तिम सिरे पर मात्र कुछ पत्ते शेष रह गए हैं, हाँ यह पत्ते हरे अवश्य थे। जब मैंने इस पेड़ को देखा– तो बहुत बुरा लगा। मैंने सोचा– यह कितना अच्छा अन्तरिक्ष है। अन्तरिक्ष स्वप्रकाशित है, फिर यह गन्दा-सा पेड़ यहाँ पर क्यों खड़ा हुआ है। फिर मेरे अन्दर से आवाज आई– "ये दोनों डालियाँ भी ज्यादा दिन नहीं रह पाएंगी, ये स्वयं नष्ट हो जाएंगी"। इतने में मेरी आँखें खुल गई।

अर्थ- पीपल का पेड़ व डालियाँ मेरा शरीर व तृष्णा से युक्त इच्छाएँ हैं। पेड़ में डालियाँ सिर्फ दो ही हैं। यह सत्य है कि मेरी इच्छाएँ भी सिर्फ दो ही हैं, ये दोनों इच्छाएँ बुरी नहीं हैं, बल्कि अच्छी हैं। फिर भी इन इच्छाओं को नष्ट तो करना ही है, कुछ समय बाद नष्ट हो जाएँगी। आवाज भी सुनाई दी थी– "यह तना स्वयं नष्ट हो जाएगा"। हल्के नीले रंग के प्रकाश से युक्त स्वच्छ आकाश मेरा ही चित्त है। चित्त इसलिए प्रकाशित दिखाई दे रहा है, क्योंकि सत्वगुण का स्वभाव है– "प्रकाशित होना"। सत्व गुण की चेतन तत्त्व के अति नजदीक उपस्थिति रहती है तथा सत्वगुण में शुद्धता के कारण उसमें प्रकाशित होने का गुण आ जाता है। जैसे दर्पण पर सूर्य का प्रतिबिम्ब पड़ने पर दर्पण द्वारा प्रकाश किरणों को परिवर्तित कर दिया जाता है। उस समय ऐसा लगता है– दर्पण प्रकाशित हो रहा है। इसी प्रकार सत्वगुण स्वयं जड़ है मगर चेतनतत्त्व के अति नजदीक होने के कारण अभिव्यंजक प्रकाश प्रकट हो जाता है। इसलिए वह स्वयं प्रकाशित सा दिखाई सा पड़ता है, जबकि चित्त जड़ है।

अमृत वर्षा

यह अनुभव 16 मई को आया। मैं ध्यान करके बैठा हुआ कुछ सोच रहा था। उसी समय मेरी आँखें बन्द हो गई। मैंने देखा– "मेरे सामने अन्तरिक्ष में बहुत ही दूर से कोई वस्तु मेरी ओर आ रही है। कुछ

समय बाद मेरी ओर वह वस्तु नजदीक आ गई, तब उसका स्वरूप स्पष्ट दिखाई देने लगा। वह तांबे का एक बड़ा-सा लोटेनुमा पात्र था, लोटे का मुँह ऊपर की ओर था। वह लोटेनुमा पात्र मेरे सिर के ऊपर आकर रुक गया। अब उस पात्र का मुँह नीचे की ओर तिरछा होने लगा, तब मैंने देखा लोटेनुमा पात्र के अन्दर पानी जैसा तरल पदार्थ भरा हुआ है। वह पदार्थ पानी से थोड़ा ज्यादा गाढ़ा लग रहा था तथा रंग में भी मामूली-सा अन्तर था। उस पात्र का मुँह नीचे की ओर होते ही पानी जैसा पदार्थ मेरे सिर के ऊपर गिरने लगा। सिर के ऊपर गिरा वह तरल पदार्थ मेरे सम्पूर्ण शरीर के अन्दर व्याप्त हो रहा था, उस समय मुझे बहुत अच्छा लग रहा था। मुझे लोटेनुमा पात्र से गिरता हुआ तरल पदार्थ दिखाई दे रहा था, मुझे अपना सिर भी दिखाई दे रहा था, सम्पूर्ण शरीर में तरल पदार्थ व्याप्त होते हुए भी देख रहा था। कुछ समय तक उस पात्र से तरल पदार्थ गिरता रहा, मगर उस पात्र से तरल पदार्थ कम नहीं हो रहा था। फिर वह पात्र अपने आप सीधा हो गया, फिर मेरे सिर पर तरल पदार्थ गिरना बन्द हो गया, तब पात्र मुझसे दूर जाने लगा। जिस मार्ग से आया था उसी मार्ग से वापस जाने लगा, धीरे-धीरे मुझसे दूर होता हुआ अन्तरिक्ष में अदृश्य हो गया। मैं उस स्थान को देख रहा था जहाँ पर वह पात्र अदृश्य हुआ था।

कुछ क्षणों में उसी स्थान से फिर कुछ आकृति-सी प्रकट हो गयी, मैं उस आकृति को गौरपूर्वक देख रहा था, वह आकृति अनन्त दूर से मेरी ओर आने लगी। वह आकृति मेरे पास आने पर स्पष्ट दिखाई देने लगी, वह देखने में तांबे का कलश जैसा था। वह मुझसे थोड़ी दूरी पर आकाश में आकर रुक गया। फिर वह तिरछा होकर उसका मुँह थोड़ा-सा नीचे की ओर हुआ। मैंने देखा– इस कलश के अन्दर भी पहले जैसा तरल पदार्थ भरा हुआ था, कलश के तिरछा होते ही वह तरल पदार्थ नीचे की ओर गिरने लगा। कलश पूरी तरह से उल्टा हो गया, वह तरल पदार्थ बहुत ज्यादा मात्रा में नीचे की ओर गिर रहा था। मैंने सोचा– यह तरल पदार्थ किस जगह गिर रहा है, मैंने दृष्टि थोड़ी नीचे की ओर की तो देखा– एक बहुत बड़ा शिवलिंग है। वह तरल पदार्थ शिवलिंग पर गिर रहा है, शिवलिंग पर गिरा हुआ तरल पदार्थ वहीं पर अदृश्य हो जाता था। मैं यह देख कर मुस्करा रहा था तथा सोच रहा था कि ताम्र पात्र का पदार्थ कम नहीं हो रहा है, शिवलिंग पर गिरा हुआ पानी भी अदृश्य हो जाता है। थोड़ी देर में कलश सीधा अपनी जगह पर सीधा हो गया, उसमें तरल पदार्थ ज्यों-का-त्यों भरा हुआ था। कलश मुझसे दूर वापस अन्तरिक्ष में लौटने लगा, जिस मार्ग से आया था, उसी मार्ग से वापस जाने लगा। कुछ क्षणों में कलश अदृश्य हो गया।

यह अनुभव ध्यान में नहीं आया था,आँखें अपने आप बन्द हो गई थीं, उसी समय यह अनुभव आया था। मैंने लोटे और कलश की तरह पात्र का वर्णन किया है। यह दोनों पात्र लोटे और कलश के

समान मिलते-जुलते थे मगर पात्र बहुत सुन्दर थे। उनके बाहरी सतह पर नक्काशी बनी हुई थी, दोनों पात्रों में एक ही पदार्थ था। मैंने बाद में अपने ज्ञान से पूछा, तब ज्ञान ने बताया– यह तरल पदार्थ साधकों के लिए अमृत के समान होता है। वह पदार्थ गिरते समय सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त होकर अदृश्य हो रहा था, इस क्रिया से ऐसा लग रहा था मानों मैं तृप्त हो रहा हूँ, इसलिए मैं प्रसन्न हो रहा था।

ऊपर लिखे अनुभव के बाद यह अनुभव आया। ध्यान करने के पश्चात में **'ॐ'** मंत्र का जाप करने लगा, जाप करते समय ही मेरा ध्यान लग गया। उसी समय मुझे छोटा-सा अनुभव अपने शरीर के अन्दर आया। मैंने देखा– एक बिल्कुल छोटा-सा कछुए का बच्चा है, उसने अपने पैरों व मुँह को अपने शरीर के अन्दर से बाहर निकाल लिया। चारों पैरों व मुँह को भूमि में चिपकाए हुए वह बिल्कुल शान्त मुद्रा में बैठा हुआ है, वह बिल्कुल हिल-डुल नहीं रहा था। थोड़ी देर में उसके सम्पूर्ण शरीर पर छोटे-छोटे कांटे से उभर आए, शरीर पर कांटे उभरने के कारण छटपटाने-सा लगा। फिर कुछ क्षणों में उसकी मृत्यु हो गई। मैं चौंका– यह तो मर गया, यह सोच ही रहा था कि इतने में एक अदृश्य शक्ति ने कछुए के बच्चे को पीछे की ओर खींचा, फिर कुछ क्षणों में मरे हए कछुए का बच्चा अदृश्य हो गया।

अर्थ- मुझे इस अनुभव से बड़ी प्रसन्नता हुई। कछुए का बच्चा इंद्रियों के समूह का प्रतीक है। अनुभव में कछुए का बच्चा मरता हुआ दिखाई दिया, फिर कुछ समय में वह मर भी गया। इसका अर्थ है- मेरी इन्द्रियाँ मरे हुए के समान हो गयी है। ध्यान देने योग्य बात है– इन्द्रियाँ कभी मरती नहीं हैं, वह अभ्यास के प्रभाव से अन्तर्मुखी होकर, धीरे-धीरे सूक्ष्म अवस्था में चली जाती है। साधक को एक अवस्था ऐसी आती है, इन्द्रियाँ मरे हुए के समान हो जाती है। जब तक अभ्यासी को तत्त्वज्ञान की प्राप्ति नहीं हो जाती है, तब तक अभ्यासी को सदैव सतर्क रहना चाहिए, जरा सी भी असावधानी हुई, तो ये इन्द्रियाँ बहिर्मुखी हो सकती हैं और अभ्यासी का पतन भी हो सकता है। इसलिए अभ्यासी को सदैव सतर्क रहना चाहिए, कभी लापरवाही नहीं बरतनी चाहिए।

धर्म काँटा

यह अनुभव मुझे 22-23 मई की रात्रि को आया। मैंने योग निद्रा में देखा– हल्के नीले चमकीले रंग के प्रकाश वाला अन्तरिक्ष है। उस अन्तरिक्ष में एक तराजू है, तराजू इतना बड़ा व विस्त्रित है, वह सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में समाया हुआ है। मैं उस तराजू का काँटा देख रहा हूँ। काँटा कभी दाहिनी ओर होता है तो कभी

बायीं ओर होता है, यही क्रिया जल्दी-जल्दी हो रही है। मेरी दृष्टि तराजू के पलड़ों पर गयी। दोनों पलड़े क्रमशः ऊपर नीचे हो रहे हैं, मैं यही क्रिया देख रहा हूँ। मेरे अन्दर विचार आया– यह तराजू स्थिर क्यों नहीं हो रहा है। कुछ क्षणों बाद मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- जब मैंने अपनी आँखें खोली तो सोचने लगा- इस तरह तराजू क्यों दिखाई दे रहा था, ऐसा तराजू तो भगवान धर्मराज जी के पास है। वह तराजू ब्रह्माण्ड के धर्म-अधर्म का निर्णय करता है, यह तराजू मुझे क्यों दिखाई दिया तथा काँटा स्थिर क्यों नहीं था। इसका अर्थ है– धर्म अथवा न्याय की कहीं पर गड़बड़ी अवश्य है, अधर्म की मात्रा बढ़ गई है। साधकों! यह तराजू भगवान धर्मराज के सामने सदैव उपस्थित रहता है, यह धर्म-अधर्म और न्याय-अन्याय का निर्णय करता है।

मणिप्रभा

यह अनुभव मुझे जून में आया। मैंने देखा- मैं नीले अन्तरिक्ष में खड़ा हुआ हूँ। मुझसे थोड़ी दूरी पर ऊपर की ओर एक अत्यन्त उज्ज्वल (स्फटिक के समान) मणि चमक रही है, मुझे वह मणि बहुत अच्छी लग रही थी। उसी समय मैं मणि के पास अपने आप पेट के बल लेटे हुए पहुँच गया। मणि से मेरा मुँह मात्र एक फीट की दूरी पर था। जैसे ही मैं लेटे हुए मणि के पास पहुँचा, मणि का प्रकाश मेरे मुँह पर पड़ने लगा। मेरा शरीर मणि के चारों ओर चक्र के समान घूमने लगा। मणि अपनी जगह पर स्थिर बनी हुई थी, मेरा शरीर मणि के चारों ओर घूमने के कारण मुँह भी मणि के चारों ओर घूम रहा था। मगर मेरी दृष्टि मणि पर ही स्थिर थी। कुछ क्षणों बाद मेरा शरीर स्थिर हो गया, मैं मणि को अब भी टकटकी लगाए हुए देख रहा था। मैं मुस्करा रहा था तथा सोच रहा था– यह मणि कितनी सुन्दर है, मैं मणि की फैली हुई प्रभा को देखा रहा था, प्रभा में बहुत ही ज्यादा आकर्षण था। फिर यह मणि मुझसे थोड़ी दूर ऊपर की ओर हो गई है और अदृश्य हो गई। अब मैं नीले प्रकाशमान अन्तरिक्ष में खड़ा हुआ था, तभी मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! मैं नीले अन्तरिक्ष में खड़ा हुआ हूँ– यह नीला अन्तरिक्ष स्वयं मेरा चित्ताकाश है। नीला प्रकाशमान इसलिए दिखाई दे रहा है, क्योंकि वह कारण जगत से सम्बन्धित है। मणि- यह चित्त की एक सात्विक वृत्ति है जो मणि के रूप में दिखाई दे रही है। यह चित्त की उच्च अवस्था का प्रतीक है। जब साधक को इस प्रकार मणि दिखाई दे तो समझ लेना चाहिए कि कुछ समय बाद साधक को उच्चस्थिति

प्राप्त होने वाली है। साधक की कुण्डलिनी जब स्थिर जो जाती है, फिर भी वह समाधि का अभ्यास करता रहता है, तब बहुत समय बाद ध्यानावस्था में (समाधि अवस्था में) सूर्य दिखाई देता है। यह सूर्य एक बार अथवा कई बार दिखाई दे सकता है। फिर अभ्यास बढ़ने पर चन्द्रमा दिखाई देने लगता है। यह चन्द्रमा पूर्णिमा, अष्टमी अथवा अन्य तिथियों की भाँति दिखाई देता है, मगर यह चन्द्रमा बहुत सुन्दर होता है। चन्द्रमा में किसी प्रकार का धब्बा दिखाई नहीं देता है। वह बिल्कुल स्वच्छ उज्ज्वल होता है, स्थूल चन्द्रमा की तरह नहीं दिखाई देता है। साधक का अभ्यास जब और अधिक बढ़ता है उस समय शेष संस्कारों को भी भोगता रहता है। इस अवस्था में चित्त में तमोगुण विद्यमान रहता है। इस तमोगुण को समाप्त करने के लिए साधक को अति कठोर साधना करनी पड़ती है तथा इसी समय साधक पर घोर परेशानियाँ भी आ जाती हैं, क्योंकि शेष संस्कार भोग रहा होता है। यदि साधक की कठोर साधना चल रही है, तब उसे ध्यानावस्था में कभी-कभी आकाश में काले बादल दिखाई देंगे। ये साधक के तमोगुणी कर्माशय होते है जो इस रूप में दिखाई देते है, उसी घने काले बादलों के बीच में कभी-कभी एक चमकदार तारा (नक्षत्र) दिखाई देता है, फिर वह लुप्त हो जाता है। काले बादलों के बीच में यह तारा बहुत सुन्दर दिखाई देता है, ऐसा लगता है कि एक बार फिर दिखाई दे।

साधकों! इन संस्कारों को भोग लेने पर, यह काले बादल नष्ट हो जाते हैं, क्योंकि तमोगुण कम हो जाता है। इस अवस्था में साधक को स्थूल जगत में घोर अपमान सहना पड़ता है। इसलिए कहा गया है कि ये शेष कर्म क्लेशात्मक होते है। इन क्लेशात्मक कर्मों को भोगते समय साधक की तृष्णा कम होने लगेगी, क्योंकि जिसके प्रति तृष्णा होती है उसी से साधक को कष्ट मिलता है। अपने सगे सम्बन्धियों व मित्रों से कष्ट भोगना पड़ता है, वैसे समाज में किसी से भी कष्ट मिल सकता है। इन कष्टों के कारण उसे स्थूल जगत से अरुचि हो जाती है। यदि दूसरी ओर से सोचें तो यह कष्ट साधक के लिए लाभकारी होते हैं। इससे भौतिक संसार से लगाव छूट जाता है और ज्ञान मिलने लगता है। जब साधक को मणिप्रभा के दर्शन हों तो समझ लेना चाहिए कि उसे उच्चस्थिति प्राप्त होने वाली है। यह मणि स्फटिक के समान स्वच्छ होती है। कुछ समय बाद साधक का चित्त स्फटिक के समान स्वच्छ होने लगता है। यह चित्त की सबसे उच्च अवस्था होती है साधकों! कुण्डलिनी स्थिर होने के बाद कई वर्षों तक कठोर अभ्यास करने पर सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र व मणिप्रभा आदि दिखाई देती हैं, यह चित्त की अवस्थाएँ होती हैं, क्योंकि यह वृत्ति शुद्ध सत्वगुण की होती है। इसलिए मणि का स्वरूप धारण कर लेती है। इस अवस्था में चित्त पर अभी भी थोड़े से संस्कार-शेष विद्यमान रहते हैं जो कुछ वर्षों में साधक भोगकर समाप्त कर देता है। यह अवस्था साधक

को अन्तिम जन्म में मिलती है, जो बिरले साधकों को प्राप्त होती है, इस अवस्था को साधक इस भूलोक पर कितने है यह बता पाना बड़ा मुश्किल है।

सफलता पर सवार

यह अनुभव जून माह में आया– मैं नेवले के ऊपर सवार हूँ, नेवला अति तीव्र गति से मुझे लिए जा रहा है। मेरे सामने बहुत ही ऊँचा पहाड़ है, मगर नेवले ने अतिशीघ्र मुझे काले पहाड़ की चोटी पर पहुँचा दिया। पहाड़ की चोटी पर पहुँच कर मैंने चारों ओर देखा– नीचे की ओर बहुत गहरी खाई थी। मैं नेवले की पीठ से उतर कर गया खड़ा हो गया। नेवला तेजी से चोटी के थोड़ा सा (पहाड़ के) नीचे एक जगह पर बैठ गया, मैं जोर-जोर से हँस रहा था। मैं बोला– मुझे ऊपर चढ़ाकर आप (नेवला) नीचे जाकर कैसे आराम से बैठे गए। पहाड़ के सबसे ऊँची चोटी पर खड़ा हुआ मैं हँस रहा था। चारों ओर तेज सुनहरा प्रकाश फ़ैला था, अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! नेवला छोटा-सा ही प्राणी होता है। मगर मैं उसके ऊपर बड़े आराम से बैठा गया। पहाड़ की चोटी बहुत ऊँची थी, मगर वह तुरन्त चढ़ गया– मैं तीव्र गति से सफलता प्राप्त करूँगा। पहाड़ का रंग काला था– शेष संस्कार क्लेशात्मक और तमोगुणी होते है, पहाड़ इन्हीं का प्रतीक है। मैं काले पहाड़ के ऊपर चोटी पर खड़ा हो गया– अर्थात भविष्य में मैं तमोगुणी संस्कारों, परेशानियों व कष्टों पर विजय प्राप्त करूँगा।

माया और अविद्या

यह अनुभव 5 अगस्त को आया था– मैं किसी ऊँचे स्थान पर बैठा हुआ हूँ। मुझसे बहुत दूरी पर थोड़ा नीचे की ओर एक पुरुष खड़ा हुआ है। उस पुरुष के हाथ में (बायें हाथ में) दो रस्सियाँ हैं, इन दोनों रस्सियों का एक सिरा अपने बायें हाथ में पकड़े हुए है। इन रस्सियों के दूसरे सिरों पर दो स्त्रियाँ अलग-अलग बँधी हुई हैं। स्त्रियों के शरीर में रस्सियाँ लिपटी हुई थीं, फिर रस्सी का फंदा गले में फँसा हुआ था। पुरुष से ये दोनों स्त्रियाँ थोड़ी दूरी पर खड़ी हुई थीं। ये स्त्रियाँ पुरुष से बहुत डर रही थीं। दृश्य ऐसा था– जैसे

बन्दर नचाने वाला मदारी, बन्दर के गले में रस्सी बाँधे रहता है, ठीक इसी प्रकार पुरुष स्त्रियों के गले में रस्सी का फंदा डाले हुए था और रस्सियों का भी खिंचाव किए हुए था। पुरुष रस्सियों से झटका देकर स्त्रियों का खिंचाव कर रहा था, स्त्रियाँ उससे डर कर थर-थर काँप रही थीं। मैं दूर बैठा हुआ इस दृश्य को देख कर हँस रहा था और मन में कह रहा था– "पुरुष इन स्त्रियों को बन्दर की भाँति नचा रहा है"। पुरुष ने स्त्रियों से कुछ कहा– स्त्रियों ने 'हाँ' में अपना सिर हिलाया। उसी समय पुरुष ने एक स्त्री को रस्सी के सहारे झटका दिया और बोला– "चल इससे माफी माँग, फिर यहाँ से चली जा"। जो स्त्री आगे की ओर खड़ी हुई थी, वह फर्श पर दण्डवत रूप में लेट गई और माफी माँगने लगी। फिर बोली– "अब मैं उसे परेशान नहीं करूँगी, मेरा प्रभाव उस पर नहीं रहेगा"। मैं यह दृश्य बहुत देर से देख रहा था, मैं सोचने लगा– "यह माफी किससे माँग रही है" यह मुझे नहीं मालूम हुआ, ये स्त्रियाँ इस पुरुष से इतना क्यों डरती हैं, वह स्त्री अब भी फर्श पर पेट के बल लेटी हुई हाथ जोड़े माफी माँग रही थी। उसी समय मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! ये दोनों स्त्रियाँ सामान्य स्त्रियाँ नहीं थीं। एक स्त्री हरी साड़ी पहने हुए थी, एक स्त्री लाल साड़ी पहने हुए थी। दोनों की साड़ियों में सितारे लगे हुए थे तथा सिर पर छोटे-छोटे सुन्दर मुकुट लगे हुए थे। ये स्त्रियाँ माया और अविद्या थीं। जो स्त्री लेटकर माफी माँग रही थी, वह अविद्या थी। दूसरी स्त्री जो लाल रंग की साड़ी पहने हुए थी, वह माया थी। वह पुरुष जो दोनों स्त्रियों को रस्सी से बाँधे हुए था– वह पुरुष ज्ञान का प्रतीक है। इस अनुभव से एक बात स्पष्ट होती है। जब अविधा माफी माँगने लगे और स्वयं कहे उसका प्रभाव अभ्यासी पर नहीं रहेगा अथवा नहीं पड़ेगा, तब समझ लेना चाहिए अभ्यासी को भविष्य में तत्त्वज्ञान की प्राप्ति होने वाली है।

तराजू

यह अनुभव11अगस्त को आया था। मैंने देखा– मेरे सामने एक तराजू बहुत बड़े साइज़ का है, तराजू के दाहिने पलड़े पर मैं बैठा हुआ हूँ, बायें पलड़े पर कुछ रखा हुआ है। उस पलड़े में क्या रखा हुआ है यह मैं नहीं जान सका। उसी समय तराजू के दोनों पलड़े बराबर होने को हुए। मगर मेरे वाला पलड़ा ऊपर की ओर उठता, उसी समय मिट्टी की बनी बाँबी वहीं पर प्रकट हो गई। जिस पलड़े पर मैंने बैठा हुआ

था,वह पलड़ा बाँबी में अटक गया। मैंने खड़ा हुआ दूर से देख रहा था। मैं बोला– "यह बाँबी मेरे लिए अवरोध है"। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में मैं दो स्वरूपों में हूँ, **एक-** तराजू पर बैठा हुआ हूँ, **दूसरा-** मैं दूर खड़ा हुआ सम्पूर्ण दृश्य देख रहा हूँ। तराजू में तुलते समय मेरे वाला पलड़ा बाँबी में अटक गया– बाँबी में नाग रहता है। नाग अहंकार का प्रतीक होता है अर्थात अभी हमारे चित्त पर तमोगुणी कर्म हैं। तराजू में बैठा हुआ शरीर मेरा सूक्ष्म शरीर था। दूर खड़ा हुआ शरीर मेरा कारण शरीर था। यही कारण शरीर सम्पूर्ण दृश्य देख रहा था। अनुभव का अर्थ है– चित्त को अभी और शुद्ध करना है, क्योंकि अहंकारी वृत्तियों से युक्त है।

तमोगुणी अहंकार का मूल स्रोत में विलीन होना

यह अनुभव अगस्त के अन्तिम सप्ताह में आया था। मैंने दोपहर को ध्यानावस्था में देखा– मैं एक बहुत पुरानी बाँबी को देख रहा हूँ, जो बहुत ही पुरानी मिट्टी की बनी दिखाई दे रही है। मुझे उस बाँबी में एक छिद्र स्पष्ट दिखाई दे रहा था। मेरी दृष्टि उसी छिद्र पर स्थिर थी, कुछ क्षणों में उसी छिद्र से एक पुराना काला नाग निकलने लगा, वह नाग मेरी ओर आने लगा। उसकी लम्बाई सामान्य से ज्यादा थी, वह नाग जब मेरे नजदीक आ गया, उसी समय मैंने देखा– नाग के मुँह से पाँच-छः इंच पीछे पीठ की ओर एक मकड़ी के समान कोई प्राणी मजबूती से चिपका हुआ है। मैंने सोचा– इस काले नाग पर यह प्राणी इतनी मजबूती से कैसे चिपका हुआ है, नाग के शरीर पर कोई प्राणी इस तरह से नहीं चिपक सकता है। मैं यही सोच रहा था, तब तक नाग मेरे अति नजदीक आ गया। मैं चौंक पड़ा और सोचा– इस नाग को मुझसे क्या काम है? तभी उस भयंकर नाग ने अपना मुँह ऊपर की ओर उठाया और मेरे हृदय के अन्दर प्रवेश करने लगा। मैं तुरन्त बोला– *"ठहर जा, तू मेरे शरीर के अन्दर प्रवेश नहीं कर सकता है"।* तुरन्त ही मैंने ओंकार किया, ओंकार करते ही नाग अपनी जगह पर ठहर गया। मगर नाग के मुँह वाला भाग मेरे शरीर (हृदय) के अन्दर प्रवेश कर गया था, नाग का शेष शरीर बाहर था। उस समय मैं अनुभव में ध्यान मुद्रा में बैठा हुआ था। मैं नाग से बोला– *"तू मेरे शरीर से बाहर निकल जा"* उसी समय चित्त से आवाज आई– "योगी, इसे अन्दर प्रवेश करने दो, यह तुम्हारा तमोगुणी अहंकार है और यह अपने स्रोत में विलीन हो रहा है, फिर मैं कुछ नहीं बोला। नाग मेरे शरीर के अन्दर विलीन हो गया, अब मैं उस बाँबी को देखने लगा, जिस बाँबी से निकला हुआ था। उसी समय मेरा ध्यान टूट गया।

साधकों! बाँबी उसे कहते हैं जो दीमक का घर होता है। दीमक अपना घर मिट्टी का बनाती है, उसी में गहरे-गहरे छिद्र होते हैं, स्थूल रूप से सर्प इसी प्रकार के स्थानों पर रहते हैं। देखने में नाग बहुत पुराना लगता था, क्योंकि उसकी शक्ल ही ऐसी थी, नाग के मुँह के पास जो मकड़ी से मिलता-जुलता प्राणी (कीड़ा) बड़ी मजबूती से चिपका था। इसका अर्थ क्या है? इसे जानने के लिए मैं ध्यान पर फिर बैठा तथा जानकारी का प्रयास किया, तो मालूम हुआ वह प्राणी (कीड़े) के रूप में जिसका आकार मकड़ी के समान था, वह अविद्या का स्वरूप था। वैसे भी अविद्या की उत्पत्ति तमोगुणी अहंकार से ही होती है, क्योंकि अविद्या तमोगुणी अहंकार में बीज रूप में छुपी रहती है अर्थात् बीज रूप में विद्यमान रहती है। समाधि के समय अहंकार चित्त में अंतर्मुखी हो रहा था। समाधि भंग होने पर अहंकार फिर बहिर्मुखी होकर व्यवहार में आ जाता है। अहंकार कभी नष्ट नहीं होता है। समाधि के अभ्यास से तथा अन्य संयमों के द्वारा अहंकार धीरे-धीरे शुद्ध होने लगता है। जैसे-जैसे शुद्धता के अनुसार उसमें सात्विकता बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे अहंकार धीरे-धीरे अंतर्मुखी होने लगता है। तभी अविद्या भी धीरे-धीरे कमजोर पड़ने लगती है अर्थात् अभ्यासी के चित्त से अज्ञानता नष्ट होने लगती है। अहंकार जितना शुद्ध होगा उतना ही वह व्यापक होगा।

साधकों! आप समझ ही सकते हैं कि अनुभव उच्चावस्था का है। इस अवस्था को प्राप्त करने में मुझे अत्यन्त कष्ट सहना पड़ा है तथा मेरी खूब दुर्गति भी हुई, क्योंकि निर्विकार समाधि के बाद शेष-संस्कार रह गए थे। यह शेष- संस्कार अत्यन्त क्लेशात्मक होते है। ये संस्कार योगबल से नष्ट नहीं किए जा सकते हैं, सिर्फ भोग करके समाप्त किए जाते हैं। यही संस्कार मैं भोग रहा हूँ, कुछ समय बाद अवश्य इन संस्कारों से मुक्ति मिल जाएगी। मैंने योगबल से देखा कि मेरे चित्त में अब भी कुछ संस्कार-शेष हैं।

माता कुण्डलिनी शक्ति

सितम्बर माह के अन्तिम सप्ताह में नवरात्रि का समय था। मैं कई वर्षों से नवरात्रि में माता कुण्डलिनी को दूध पीने के लिए आवाहन किया करता हूँ, फिर अपनी दिव्यदृष्टि से देखता हूँ कि माता कुण्डलिनी को दूध मिला है कि नहीं मिला है। हमेशा की भाँति अब की बार भी दूध पीने के लिए आवाहन किया। 21 सितम्बर को दूध का सूक्ष्म भाग योगबल द्वारा माता कुण्डलिनी के पास भेज दिया और आँखें बन्द करके बैठ गया। कुछ क्षणों बाद मैंने देखा– आकाश से मेरे सामने खाली पात्र आकर

गिरा। आकाश से गिरा हुआ पात्र, उस पात्र में समा गया जिसमें मैं दूध लिए बैठा हुआ था। मैं समझ गया, दूध माता कुण्डलिनी ने पी लिया है।

साधकों! दूध पिलाते समय यही अनुभव आता था कि अन्तरिक्ष से दूध वाला पात्र (आकाश से) वापस आ जाता था और स्थूल पात्र में समा जाता था, क्योंकि योगबल पर पात्र का सूक्ष्म भाग भी दूध के साथ चला जाता था। यदि मैं दूध को किसी गिलास में लिए हुए हूँ, तो स्थूल गिलास व दूध से सूक्ष्म गिलास व दूध निकलकर अन्तरिक्ष में चला जाता था। फिर सूक्ष्म गिलास वापस आकर स्थूल गिलास में समा जाता था।

दूसरे दिन मैंने संकल्प किया– माता कुण्डलिनी इसी गिलास में (स्थूल गिलास में) दूध पिये। फिर मैं आँखें बन्द करके मैं बैठ गया और दिव्य-दृष्टि से देखने लगा। तभी मुझे दिखाई दिया– मेरे सामने बहुत बड़ा गिलास रखा हुआ है, उस गिलास में दूध भरा है। मैं उस दूध को देख रहा हूँ, दूध अपने आप कम होता चला जा रहा है, उसी दूध में मुझे एक नाग दिखाई दिया। वह नाग दूध में डूबा हुआ है और दूध पी रहा है, कुछ समय बाद दूध बिल्कुल समाप्त हो गया। सिर्फ स्वच्छ गिलास रह गया और उस गिलास में नाग रह गया, नाग अपना मुँह ऊपर उठाकर गिलास से बाहर निकला, फिर मेरे शरीर के अन्दर प्रवेश कर गया। उसी समय मेरी आँखें खुल गई। मैं समझ गया यह नाग माता कुण्डलिनी शक्ती का ही स्वरूप है। प्रत्यक्ष में स्थूल रूप से गिलास में दूध वैसा ही भरा रहता था, माता कुण्डलिनी शक्ति सूक्ष्म रुप से दूध पीती थी। साधकों! सदैव ध्यान रखना– दिव्य शक्तियाँ कभी भी भोजन नहीं करती है, वह सिर्फ अपने भक्त का सम्मान करती है। मेरी जिद के कारण कुण्डलिनी शक्ती ने ऐसा करके दिखाया है। अर्थात समर्पण भाव का सम्मान करते है बस।

इसके बाद मैं जब भी माता कुण्डलिनी को दूध पिलाता था, तब देखता था– गिलास का दूध अपने आप धीरे-धीरे कम हो जाता है, फिर खाली गिलास रह जाता है। मैं इस समय कुण्डलिनी शक्ति का मैं बहुत चिन्तन किया करता था, क्योंकि कुण्डलिनी के द्वारा मुझे असीमित योगबल प्राप्त हो गया था। स्वयं कुण्डलिनी शक्ति ने मुझे एक गुप्त विधि बताई थी– जिससे मेरा योगबल कभी भी किसी कार्य में कम नहीं पड़ता था। मैं नवरात्रि के समय कुण्डलिनी शक्ति की विशेष प्रकार से पूजा किया करता था, तभी उन्हें दूध भी पिलाता था। मैं योगबल से स्थूल दूध से सूक्ष्म दूध निकाल लेता था, फिर माता कुण्डलिनी शक्ति के पास भेज देता है। यह क्रिया मैं दिव्य दृष्टि से देखा करता था।

अहंकार

एक अक्तूबर को योग निद्रा में अनुभव आया। मैं पृथ्वी पर जिधर जाता हूँ उधर नाग-ही-नाग मिलते हैं, नाग हर पदार्थ के अन्दर दिखाई देते हैं। यदि मैं छोटे-छोटे पौधों को तोड़ूँ तो उसके अन्दर से भी अत्यन्त छोटा-सा नाग निकल आता था, मगर मुझे किसी प्रकार का डर नहीं लगता था। उसी समय मैंने एक पेड़ की अत्यन्त छोटी डाली तोड़ दी, तो उसके अन्दर से भी नाग निकल आया। मैं आश्चर्य में पड़ गया कि मुझे नाग ही नाग क्यों सर्वत्र दिखाई देते हैं, मैं ओर आगे की ओर चला। सामने की ओर चढ़ाई थी, मैं चढ़ता जा रहा था, रास्ते में छोटे-छोटे नाग लेटे हुए थे। मैंने सोचा– यह नाग मेरे पैर के नीचे न कुचल जाएँ, इसलिए मैं नागों को उठाकर फेंकने लगा। फिर आगे चढ़ाई चढ़ने लगा, उसी समय मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! बाद में मैंने सोचा– मुझे सर्वत्र नाग ही नाग क्यों दिखाई दिए तथा कण-कण में क्यों व्याप्त थे? कुछ समय बाद मुझे जानकारी हो गई। तत्त्व रुप में यह अहंकार है, अहंकार सर्वत्र व्याप्त होता है। इसलिए ऐसा दिखाई दे रहा था। अहंकार के द्वारा ही समस्त सृष्टि का सृजन हुआ है, वही ग्राह्य और ग्रहण के रूप विभक्त होकर बहिर्मुखी हो जाता है। साधकों कुण्डलिनी और अहंकार दोनों के स्वरूपों (नाग रुप में) में आपस में भिन्नता होती है।

तमोगुणी अहंकार

यह अनुभव मुझे 3 अक्तूबर को योगनिद्रा में आया था– मैं जंगलनुमा क्षेत्र को पार करते हुए चला जा रहा हूँ। उसी समय मैंने देखा– मेरे दाहिने हाथ में पेड़ की एक बहुत बड़ी डाली है। मैं उस डाली को अपने आगे किए हुए हूँ और उसे आगे की ओर ठेलता (डाली को) हुआ चला जा रहा हूँ। मुझे उस जंगल में आगे की ओर जाने में कोई परेशानी नहीं हो रही है। कुछ समय बाद मुझे लगा– कि मेरे शरीर में कोई चीज लिपटी हुई है, मैंने पीछे की ओर मुड़कर देखा तो मैं देखकर चौंका पड़ा, क्योंकि मेरी कमर में आधा नाग लिपटा हुआ था। नाग के पूँछ की ओर का आधा शरीर भूमि पर घिसट रहा था, मैंने नाग से छूटने का प्रयास किया, मगर मैं अपने आपको नहीं छुटा सका। मैंने अपने सामने की ओर देखा– मुझसे थोड़ी दूरी पर एक पुरुष खड़ा हुआ था। मैं उस पुरुष से बोला– मेरे पीछे की ओर कमर में एक नाग लिपटा हुआ है,

कृपया आप इसे अलग कर दीजिए। वह पुरुष कुछ नहीं बोला, बल्कि वह थोड़ा सा आगे की ओर चला, उसने मेरे हाथ से डाली छीनकर एक ओर को फेंक दी। उसी समय मेरे कमर में लिपटा हुआ नाग छूट गया और अदृश्य हो गया। मैं अपने आप सुनहरे रंग के प्रकाश में खड़ा हो गया। जंगलनुमा क्षेत्र अब भी था, रास्ता स्पष्ट नजर आ रहा था, मैं आगे की ओर बढ़ने लगा। मैंने देखा– रास्ते में और जंगल में हल्के सुनहरे व सफेद रंग के मरे हुए नाग पड़े हुए हैं। यह दृश्य देखकर मैं अचम्भित हो गया, कि यह नाग मरे हुए क्यों पड़े हैं? मैंने नागों को उठाकर देखा, उनका शरीर लकड़ी की भाँति जड़ था। मुझे एक बार फिर आश्चर्य हुआ, इन नागों का शरीर लकड़ी की भाँति जड़ क्यों है, इनका शरीर माँस का क्यों नहीं बना हुआ है? फिर मैं हँसा और बोला– *"ये तो जड़ ही है"।* अब मैं पैर की ठोकर से इन नागों के शरीर को एक ओर करता हुआ तथा कभी-कभी कुचलता हुआ आगे की ओर बढ़ने लगा, चारों ओर प्रकाश फ़ैला हुआ था। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! इस अनुभव का अर्थ लिख रहा हूँ– मैं जिस जंगल में अपने हाथ में डाली पकड़े हुए आगे की ओर चला जा रहा हूँ, वह जंगल यही स्थूल संसार है। डाली– इसी स्थूल संसार का एक अंश है। कमर में लिपटा हुआ नाग– मेरा अहंकार है, सम्पूर्ण सांसारिक पदार्थ त्याग देने पर अहंकार से मुक्त हो जाता है। हल्का धुँधला प्रकाश– तमोगुणी वृत्ति के कारण हल्का धुँधला प्रकाश दिखाई देता है। रास्ते में मृत सर्प (नाग) लकड़ी के समान जड़ रूप में मिले– जब अहंकार का साक्षात्कार हो जाता है तब अहंकार जड़ रुप में भाषित होने लगता है, क्योंकि अहंकार चित्त की विकृति है। जब किसी विकृति का साक्षात्कार हो जाता है, तब वह जड़ रूप में भाषित होने लगती है। अनुभव के अंत में– पहले उन मरे हुए जड़ नागों को रास्ते से एक ओर को पैर की ठोकर से कर देता हूँ, फिर कुचलता हुआ आगे की ओर चला जा रहा हूँ। मैं डाली का अर्थ लिख दूँ– क्योंकि मैं उसे पकड़े हुए हूँ, जब वह छूट जाएगी उस समय मेरी स्थिति अपने आप में हो जाएगी। मुझे सांसारिक सभी वस्तुओं का त्याग करना होगा, तथा मेरा ज्ञान भी यही कहता है– स्थूल वस्तुओं का त्याग कर दे, ईश्वर तुम्हारी जरूरत पूरी करेगा। साधकों! यह स्थिति मेरी कुछ समय बाद आएगी।

मेरा कर्म

4 अक्तूबर दोपहर को योग निद्रा में अनुभव आया– मेरे सामने कुत्ते का एक पिल्ला आ गया– यह पिल्ला (कुत्ते का बिल्कुल छोटा-सा बच्चा) स्वच्छ सफेद रंग का है। वह मुझसे थोड़ी दूरी पर खड़ा हो गया और मुझे भौंकने लगा, मैं उस पिल्ले को देख रहा था। उस पिल्ले की आवाज बहुत ज्यादा तेज थी, आवाज मेरे कानों को चुभ रही थी। मुझे आश्चर्य हो रहा था, इतने छोटे पिल्ले से इतनी तेज आवाज कैसे निकल रही है। तभी कानों में पिल्ले की आवाज चुभने के कारण मेरी आँखें खुल गई और अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- आँखें खुलने पर मैं तुरन्त समझ गया। सुन्दर छोटे से पिल्ले के रूप में यह मेरा कर्म है। मेरा शेष कर्म मुझ पर अपना प्रभाव दिखा रहा था, मगर वह मुझसे थोड़ी दूरी पर खड़ा था तथा किसी प्रकार का मुझे नुकसान भी नहीं पहुँचा रहा था। मुझे अपना विरोध अवश्य दिखा रहा था। मैं सोच रहा हूँ– शायद इसलिए नुकसान नहीं पहुँचा रहा था क्योंकि वह बिल्कुल छोटा-सा था तथा उज्ज्वल सफेद था, यह महत्त्व पूर्ण है। साधकों! यह मेरा शेष कर्म तो है मगर सात्विक रूप में है, क्योंकि पिल्ले का रंग बिल्कुल सफेद है तथा स्वच्छ भी है। संभवतः कर्म कुछ समय बाद बिल्कुल कम रह जाएगा, क्योंकि यह क्रियाशील होकर बहिर्मुखी हो गया है। इसलिए इसे अब कम ही होना है। अब यह भविष्य बताएगा कि मेरा कर्म कब समाप्त होगा।

सूखा हुआ पेड़

यह अनुभव 14 अक्तूबर को सुबह धायनवस्था में आया– धुँधले प्रकाश में एक सूखा हुआ पेड़ खड़ा हुआ है। उसकी मोटी-मोटी डालियाँ व तना दिखाई दे रहा हैं, ये डालियाँ व तना पूरी तरह से सुख चुका है। मैं इस सूखे हुए पेड़ को देख रहा हूँ। कुछ समय बाद इस सूखे हुए पेड़ की डालियाँ अदृश्य हो गयी, अब सिर्फ तना ही दिखाई दे रहा था। यह तना भी सुख कर बिल्कुल बेकार हो चुका है। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- आपने पहले भी पढ़ा होगा, मुझे एक अनुभव (8 मई को) आया था। उस अनुभव में एक पेड़ में दो डालियाँ हरी-भरी पत्तों से युक्त दिखाई दी थीं और जानकारी मिली थी– ये दोनों डालियाँ भी

ज्यादा दिन नहीं रहेंगी, तथा तना भी स्वयं नष्ट हो जाएगा। मगर आज के अनुभव में यह पेड़ पूरी तरह से सुख गया है। कुछ समय बाद सिर्फ तना रह गया था, वह भी सुख कर बेकार हो चुका था। यह अनुभव धुँधले प्रकाश में आया अर्थात् तमोगुणी वृत्ति के प्रभाव से दिखाई दिया। अब मेरी इच्छाएँ इस संसार के प्रति नहीं रह गई, इसीलिए पेड़ पूरी तरह से सूखा हुआ दिखाई दे रहा है। इससे स्पष्ट होता है कि मेरा कर्म भी लगभग क्षीण होने की ओर आ गया है, क्योंकि वृत्तियों के रूप में ही कर्म बाहर निकला करते हैं। मगर अभी सूखे हुए पेड़ का जड़ पदार्थ (सूखी लकड़ी) अभी चित्त में शेष है। चित्त को बिल्कुल स्वच्छ होना चाहिए, जिस प्रकार स्फटिक स्वच्छ होती है। अभी मेरे चित्त को स्वच्छ होने में समय लगेगा, स्वच्छ होते समय किसी-न-किसी प्रकार से इन कर्मों को भोगना होगा। अनुभव में सूखे पेड़ की जगह कुछ समय बाद सिर्फ तना ही बिल्कुल बेकार अवस्था में दिखाई दिया। इसका अर्थ है– कुछ समय बाद सूखे पेड़ के रूप में, चित्त में स्थित कर्म भी बिल्कुल कम हो जाएगा। यह सूखा पेड़ भी कर्म ही है, वह अब हरा-भरा नहीं हो सकता है। उसका अस्तित्व धीरे-धीरे क्षीण होकर समाप्त हो जाना निश्चित है, सूखे हुए पेड़ का कुछ समय बाद नामोनिशान मिट जाता है। उसका अस्तित्व पूरी तरह से प्रकृति में विलीन हो जाता है। इसी प्रकार जब सूखा पेड़ रूपी कर्माशय जब चित्त में नहीं रह जाएँगे, तब चित्त कर्मों से धीरे-धीरे शून्य होने लगेगा, ऐसा कई वर्षों तक अभ्यास करते-रहने पर होता है। उस अवस्था में प्रज्ञा का प्राकट्य हो जाता है, वही चित्त को निर्मल बनाती है, ऐसा अभ्यासी के अन्तिम जन्म में होता है।

यह अनुभव अक्तूबर माह के तीसरे सप्ताह में आया था। मैंने योगनिद्रा में देखा– सुनहरा प्रकाश फ़ैला हुआ है, मैं बहुत ऊँची व बहुत लम्बी चढ़ाई चढ़ता चला जा रहा हूँ। मैंने पीछे मुड़कर देखा तो मुझे लगा, कि मैं बहुत लम्बी चढ़ाई चढ़के आया हूँ, अभी थोड़ी ओर चढ़ाई शेष है। अब मुझे हल्की-हल्की थकान महसूस होने लगी है, मगर अभी थोड़ी सी चढ़ाई शेष थी इसलिए मैं रुका नहीं, बल्कि आगे की ओर चढ़ता जा रहा था।

अर्थ- इस तरह की चढ़ाई चढ़ने के अर्थ है– "भविष्य में सफलता का मिलना"। चढ़ाई जितनी ऊँची व लम्बी होगी, सफलता भी उतनी ही बड़ी होती है। यदि साधक को ध्यानावस्था में चढ़ाई दिखाई दे और साधक उस चढ़ाई नहीं चढ़ पा रहा हो, तो समझना चाहिए सफलता अभी नहीं मिलेगी। यदि साधक के मार्ग में अचानक दीवार प्रकट हो जाए अथवा ऊँचा पहाड़ प्रकट हो जाए, साधक को पार करना असम्भव हो तो उसका अर्थ है– "सफलता में अवरोध आ गया"। साधक ध्यानावस्था में आगे जा रहा हो, आगे खाई आ जाए, अथवा खाई प्रकट हो जाए, तो उसका अर्थ यही लगाना चाहिए- योग मार्ग में

अवरोध आ गया है। जब इस प्रकार के अनुभव साधक को आते हों, तब साधक को कभी-कभी स्थूल रूप से अवरोध आ जाते है।

प्रभा

यह अनुभव 21 अक्तूबर को सुबह ध्यानावस्था में आया– मैं जैसे ही समाधि की गहराई में गया, उसी समय प्रकाश प्रकट हो गया। मैं उस प्रकाश को देखकर चौंक पड़ा, मेरी आँखें खुल गई और ध्यान टूट गया। क्षणभर के लिए मुझे लगा कि मैं जिस कमरे में ध्यान करने के लिए बैठा हूँ उसमें प्रकाश कैसे प्रकट हो गया, यह बात मैंने क्षणभर में सोच ली। परन्तु जब आँखें खुल गई, तब दिखाई दिया कि कमरे में अन्धकार छाया हुआ है, क्योंकि सुबह नहीं हुई थी। मैं फिर आँखें बन्द करके ध्यान करने के लिए बैठ गया। आँखें बन्द करते ही पहले की भाँति प्रकाश प्रकट हो गया। मैं फिर चौंक पड़ा, मेरी आँखें फिर खुल गई। मैं कमरे के अन्दर अन्धकार में बैठकर सोचने लगा– इस प्रकाश के प्रकट होते ही मेरी आँखें क्यों खुल जाती हैं? मैं समझ गया यह प्रकाश मेरे चित्त के अन्दर प्रकट होता है। मैं फिर आँखें बन्द करके ध्यान करने के लिए बैठ गया, उसी समय एक बार फिर प्रकाश प्रकट हुआ, मगर अब की बार मेरा ध्यान नहीं टूटा। मैं ध्यान पर बैठा रहा, फिर मैं अपने आपको भूल गया और ध्यान की गहराई में चला गया।

अर्थ- यह अलौकिक प्रकाश सा था, यह प्रकाश ‘‘प्रभा’’ जैसा प्रकाश था अथवा चित्त ज्यादा निर्मल हो जाने पर प्रभा का ऐसा स्वरुप दिखाई देता होगा। प्रभा चित्त की अन्तिम सर्वोच्च स्थिति पर दिखाई देती है। इस अवस्था में चित्त बिल्कुल स्वच्छ निर्मल जो जाता है तथा योगी के अन्दर वैराग्य पूरी तरह आ जाता है।

बुझा हुआ अंगारा

यह अनुभव 22 अक्तूबर को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा– मेरे सामने बहुत बड़ा बुझा हुआ अंगारा रखा है, मैं उसे गौरपूर्वक देख रहा हूँ, फिर मैं सोचने लगा– ‘‘यह पूरी तरह से बुझ गया है’’। कुछ क्षणों बाद अंगारा अदृश्य हो गया, मैं गहराई में चला गया।

अर्थ- बुझे हुए अंगारे के विषय में थोड़ा पहले भी लिख चुका हूँ। इसका अर्थ होता है– "योगी बुझे हुए अंगारे के समान शान्त हो चुका है। उसकी सम्पूर्ण इच्छाएँ शान्त हो चुकी है, इन्द्रियाँ अन्तर्मुखी होकर शान्त हो चुकी हैं। अब भोग भोगने के लिए कुछ भी शेष नहीं रह गया है, जब योगी के अन्दर ये सभी योग्यताएँ आ जाती हैं, तभी वह बुझे हुए अंगारे के समान हो जाता है। योगी को निर्वाण की प्राप्ति के लिए बुझे हुए अंगारे के समान बनना होता है, तभी निर्वाण को प्राप्त होना सम्भव होता है। यह अवस्था मेरी कई वर्षों बाद आएगी।

माया

यह अनुभव ऊपर लिखे हुए अनुभव के बाद योग निद्रा में आया। ध्यान करने के पश्चात् मैं लेट गया, उसी समय मेरी आँखें अपने आप बन्द हो गई, मैं योग निद्रा में चला गया। तब मुझे अनुभव आया– मैं किसी स्त्री का पीछा का रहा हूँ। कुछ क्षणों में मैंने दौड़कर स्त्री को पकड़ लिया, मैं उस स्त्री का हाथ मजबूती से पकड़े हुए था। स्त्री देखने में बहुत सुन्दर थी, वह स्त्री मुझसे कुछ डर-सी रही थी। मैं अपने बायें हाथ से स्त्री का दाहिना हाथ पकड़े हुआ था, अपने दाहिने हाथ से उस स्त्री के मुँह पर विशेष प्रकार से यातना दे रहा था। स्त्री डरी-सी अपने मुँह पर अपना हाथ रख रही थी मैं उसका हाथ मुँह से हटकर उसके मुँह पर यातना दे रहा था। उसी समय मैं उससे बोला– "तूने मुझे धोखा क्यों दिया, तू मुझे भ्रम में क्यों डाले रही"। मैं यही शब्द बार-बार दोहरा रहा था, वह कुछ नहीं बोल रही थी। मैं अपने अन्दर सोच रहा था– यह पूर्वकाल में मेरी स्त्री थी फिर भी इसने मुझे धोखा दिया, मुझे भ्रम में डाले रही। उसी समय वह मेरे हाथ से छूट गई, क्योंकि मैंने अपने पकड़ ढीली कर दी थी। मेरी पकड़ से छूटकर भागते समय उस स्त्री का आकार बिल्कुल छोटी बच्ची के समान हो गया। अब वह दो-तीन साल की बच्ची (लड़की) लग रही थी। वह बड़ी तेजी से भाग रही थी, मगर मैंने दौड़कर उसे पकड़ लिया, क्योंकि वह दौड़ते समय गिर पड़ी थी। तभी मैं उस बच्ची के पास पहुँच गया, अब मेरा शरीर विशाल आकार का हो गया, मेरे हाथ बहुत लम्बे-लम्बे हो गए थे। मैंने उस बच्ची को अपनी मुट्ठी के अन्दर बन्द कर लिया और बोला– "अब तू मेरी पकड़ से कभी नहीं छूट पाएगी"। मैंने उस बच्ची को मुट्ठी के अन्दर जोर से दबाया, लड़की का आकार धीरे-धीरे कम होता चला गया, फिर वह अदृश्य हो गई। मैंने अपनी मुट्ठी खोली तो देखा– मुट्ठी के अन्दर वह लड़की

नहीं थी, मेरे मुँह से आवाज निकली– "यह सिर्फ भ्रम था"। तभी मेरी आँखें खुल गई। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव का अर्थ दर्शाता है– यह माया का स्वरूप था, क्योंकि मैं अनुभव में कहता हूँ- "तू मुझे भ्रम में क्यों डाले रही?" भ्रम में डालने का कार्य माया ही करती है। मगर मैं ऐसा क्यों सोच रहा हूँ, वह स्त्री पूर्वकाल में मेरी स्त्री थी फिर भी भ्रम में डाले रही? इस जगह पर पूर्वकाल का अर्थ– "आदिकाल तो नहीं है?" आजकल मेरे अन्दर भी सूक्ष्म रूप से बहुत बड़ा परिवर्तन आने लगा है। मेरे अन्दर पूरी तरह से वैराग्य आ गया है, यह वैराग्य बहुत समय से आ चुका है। परंतु बाहर से मैं संसारी जैसा दिखता हूँ, ऐसा इसलिए ताकि समाज वाले मेरा वास्तविक स्वरूप पहचान न सकें।

निजस्वरूप में अवस्थित होने का संकल्प करो

24 अक्तूबर को सायंकाल मैं ध्यान पर बैठा हुआ था। ध्यानावस्था में मेरे चित्त के अन्दर से आवाज आई– *"योगी, अब तुम्हें ब्रह्माण्ड की किसी भी वस्तु की इच्छा नहीं करनी चाहिए। अब सिर्फ इच्छा कीजिए कि तुम्हें ईश्वर की प्राप्ति हो अथवा निजस्वरूप में अवस्थिति हो जाए। इसके अलावा किसी भी वस्तु की प्राप्ति की इच्छा नहीं करनी चाहिए। अब किसी भी लोक और उस लोक के अमुक स्तर की भी इच्छा नहीं करनी चाहिए। पृथ्वी की किसी भी वस्तु की प्राप्ति का तुम्हारा लक्ष्य नहीं होना चाहिए। अब ध्यान पर बैठने से पूर्व सदैव आपको संकल्प करना चाहिए– ईश्वर की प्राप्ति हो अथवा निजस्वरूप में अवस्थित हो जाऊँ। इन दोनों में तुम्हें जो प्रिय हो उसी का संकल्प करने का निर्णय तुम्हें करना होगा"।* अब मैं ध्यानावस्था में इन शब्दों के विषय में सोचने लगा कि मुझे इन दोनों में से कौन-सी प्राप्ति के लिए संकल्प करना चाहिए। तभी मैंने निश्चय किया– "मुझे अपने निज स्वरूप में अवस्थित होने के लिए संकल्प करना चाहिए"।

अर्थ- यह आवाज मेरे चित्त से आई थी, ऐसी वृत्ति अत्यन्त सात्विक होती है। मैं पहले भी लिख चुका हूँ- मुझे अहंकार का साक्षात्कार हुआ है, अहंकार चित्त की पहली विकृति है। चित्त की पहली विकृति का साक्षात्कार होने के बाद अब मुझे अस्मिता का साक्षात्कार होना चाहिए। अस्मिता ऐसा

समझो जड़ और चेतन की गाँठ होती है। इसके साक्षात्कार होने पर आत्मा और चित्त की भिन्नता का ज्ञान होता है। इसलिए मुझे आत्मा में अवस्थित होने का मेरा लक्ष्य होना चाहिए।

अनुभव किसी को न बताएँ

25 अक्तूबर दोपहर को मैं किसी विषय पर लेख लिख रहा था। तभी मेरी आँखें बन्द होने लगी, मुझे ऐसा लगने लगा मुझे बहुत जोर से नींद आ रही है, क्योंकि मेरी आँखे अपने आप बन्द हो रही थी। मेरा स्वभाव है कि मैं दिन के समय सोता नहीं हूँ। मगर मुझे आज क्या हो गया है, सारा शरीर भारी-भारी हो गया, आँखें खुलने का नाम नहीं ले रही हैं। मजबूरी में मैंने लेख लिखना बन्द कर दिया, क्षण भर ले लिए आँखें बन्द करके सोचने लगा– यह क्रिया मुझे क्यों हो रही है, तभी आवाज सुनाई दी– "आप सो जाइए, आपको कुछ संदेश मिलने वाला है"। मैं उसी समय चारपाई पर लेट गया और मुझे नींद आ गई। तब योगनिद्रा में सुनाई दिया– "अब आप अपने योग के विषय में किसी को भी नहीं बताएँगे। आपको योग में जो सफलता मिली है अथवा इस समय योगमार्ग में जो आपकी स्थिति है, वह किसी को मालूम नहीं होनी चाहिए। आप जिस व्यक्ति को अपनी स्थिति बताना चाहते हैं, वह भविष्य में आपका मजाक उड़ाएँगे, ये लोग आपके भाव को नहीं समझेंगे। आपका स्वभाव है, अपनी योग्यता सभी को बता देते हैं, मगर अब आप अपने योग के विषय में किसी को न बताएँ।" इन शब्दों के बाद आवाज आनी बन्द हो गई, मेरी आँखें खुल गई। अब मेरी आँखों में नींद का नामोनिशान भी नहीं था।

कर्माशय देखने का संकल्प न करना

26 अक्तूबर को ध्यानावस्था में मैंने संकल्प किया– "अभी मेरा कितना और शेष-कर्माशय है, मुझे दिखाई दे"। उसी समय चित्त से आवाज आई– "योगी, अब शेष कर्माशय देखने का संकल्प कभी भी मत करना, क्योंकि अब आपके कर्माशय अत्यन्त कम रह गए हैं, कुछ विशेष प्रकार के कर्माशयों को भोगना होगा। इस अवस्था में कर्माशय देखने का संकल्प बिल्कुल नहीं करना चाहिए"। इन शब्दों को

सुनकर कुछ समय तक मैं इन्हीं शब्दों के विषय में सोचता रहा। मुझे ऐसे शब्द क्यों सुनाई दिए? फिर में ध्यान की गहराई में चला गया।

आज के दिन मेरे साथ एक सांसारिक घटना घट गई, इस घटना के कारण मैं चिन्तित-सा हो गया। मैंने बहुत सोचा की चिन्तित न होऊँ, मगर उस चिन्ता को अपने मस्तिष्क से निकाल नहीं सका। 27 अक्तूबर को सायंकाल के समय ध्यान के माध्यम से उस घटना के बारे में जानकारी हो गई। इस जानकारी में कुछ शब्द इस प्रकार के थे– "इस घटना के घटने के बाद निश्चय ही तुम्हारी अवस्था परम उच्च हो जाएगी, तू श्रेष्ठ योगियों की भाँति इस मार्ग पर आगे की ओर बढ़ता जाएगा"। इन शब्दों को सुनकर मैं प्रसन्न हो गया। उसी समय मेरा ध्यान टूट गया।

चित्त निर्मलता की ओर

28 अक्तूबर को दोपहर 11 बजे मैं झोपड़ी के अन्दर ध्यान करने के लिए गया। मेरा स्वभाव है जब मैं झोपड़ी में ध्यान करता हूँ, तब पहले एक माला शक्तिमंत्र का जाप करता हूँ। इसलिए मैंने शक्तिमंत्र का जाप करना शुरू कर दिया। तभी अंतरिक्ष से आवाज सुनाई दी– "तुम अपना कर्माशय देखना चाहते थे, मंत्रजाप करने के पश्चात ध्यानावस्था में तुम्हें तुम्हारे कर्माशय के कुछ अंश दिखाई देंगे"। मैंने एक माला शक्तिमंत्र का जाप कर लिया, फिर मैं ध्यान पर बैठ गया। ध्यानावस्था में आवाज सुनाई दी, "पहले आप संकल्प कीजिए कि आपको शेष-कर्माशय दिखाई दें"। मैंने संकल्प किया– "मुझे अपने शेष कर्माशय दिखाई दें"। कुछ क्षणों बाद मुझे दिखाई दिया, मुझसे बहुत दूरी पर स्वच्छ सफेद कोई वस्तु चमक रही है। फिर वह मेरे पास आने लगी, वह वस्तु मुझसे थोड़ी दूरी पर आकर ठहर गई। मैं उस सफेद स्वच्छ वस्तु को समझ नहीं सका कि यह क्या है? यह वस्तु बिल्कुल छोटे से ढेर की तरह थी, तभी उस सफेद स्वच्छ वस्तु के पास एक घड़ा प्रकट हो गया। घड़े का मुँह ऊपर की ओर था, वह स्वच्छ सफेद वस्तु अपने आप घड़े के अन्दर समाने लगी। जबकि स्वच्छ सफेद वस्तु और घड़े की आपस में लगभग एक फीट की दूरी थी। मैं दूर बैठा मुस्कराता हुआ इस क्रिया को देख रहा था। तभी मेरे अन्दर विचार आया– "इस घड़े का क्या अर्थ है? यह क्यों दिखाई दे रहा है?" तभी आवाज आई– "इस घड़े को चित्त समझो और उज्ज्वल सफेद वस्तु को ज्ञान का स्वरुप समझो, यह ज्ञान सम्पूर्ण चित्त में व्याप्त हो जाएगा"। उसी समय मुझे दूर से ही घड़े के अन्दर का दृश्य दिखाई देने लगा, घड़ा उस सफेद वस्तु से धीरे-धीरे भर

रहा था, कुछ समय में घड़ा ऊपर तक भर गया। अब घड़े के अन्दर स्वच्छ सफेद वस्तु मक्खन के समान दिखाई दे रही थी, इस मक्खन जैसी वस्तु से आभा सी निकल रही थी। तभी घड़े का मुँह एक ओर को थोड़ा सा तिरछा होकर, मक्खन के समान घड़े में भरी हुई वस्तु सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में फैलने लगी, अन्तरिक्ष में फैली सफेद वस्तु अपने आप अदृश्य हो जाती थी। उसी समय मुझे अंतरिक्ष से आवाज सुनाई दी– "योगी, तुम तृष्णा और सभी प्रकार की चिन्ताओं से मुक्त होकर, विचरण करते हुए, निर्भय होकर इस भूलोक पर रहो। भोजन की चिन्ता मत करो, ईश्वर स्वयं तुम्हारे भोजन की व्यवस्था करेगा। अब तुम अपने को नित्यमुक्त समझो, क्योंकि तू भविष्य में नित्यमुक्त हो जाएगा"। तभी मेरा ध्यान टूट गया।

मैं प्रसन्न मुद्रा में बैठा हुआ इन्हीं शब्दों को सोचने लगा– "तुम अपने को नित्यमुक्त समझो, तुम तृष्णा और सभी प्रकार की चिन्ताओं से रहित होकर विचरते हुए, निर्भय होकर पृथ्वी पर रहो"। मुझे इन शब्दों को सुनकर बहुत प्रसन्नता हुई। घड़े के द्वारा मक्खन जैसा पदार्थ सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में फ़ैलाया गया, इससे मेरा चित्त निर्मल होना शुरू हो जाएगा। चित्त के अत्यन्त निर्मलता से समाधि पारंगता प्राप्त होती है, जिसे समाधि की विशारदता भी कहते है। इससे बाद चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य होता है।

आत्मा और जीव

यह अनुभव भी ऊपर लिखे अनुभव के बाद आय। मैंने ध्यानावस्था में देखा– मुझसे थोड़ी दूरी पर सफेद उज्ज्वल आभा के समान प्रकाश प्रकट हो गया, वह प्रकाश गोलाकार रुप में था। मैं प्रसन्न मुद्रा में उस प्रकाश को देख रहा था, कुछ क्षणों में प्रकाश मेरे और थोड़ा नजदीक आ गया। उस आभा जैसे प्रकाश के अन्दर दो अत्यन्त छोटे पक्षी के बच्चे दिखाई दिए, पक्षी के बच्चे बहुत ही सुन्दर दिखाई दे रहे थे। यह पक्षी उज्ज्वल सफेद रंग के थे, इन्हें देखने पर ऐसा लगता था कि इन पक्षियों को देखता रहूँ। दोनों पक्षी मेरी ओर मुँह किए हुए बैठे थे, इन दोनों में एक पक्षी बिल्कुल शान्त स्वभाव का था, वह बिल्कुल हिल-डुल नहीं रहा था, चुपचाप बैठा हुआ था। मगर दूसरा पक्षी थोड़ा-सा चंचल स्वभाव का था, वह अपनी जगह पर इधर-उधर देख रहा था, कभी वह इधर-उधर अपनी गर्दन हिलाता था तथा कभी शान्त स्वभाव वाले पक्षी की ओर देखता था। इस चंचल स्वभाव वाले पक्षी की चोंच थोड़ी सी विचित्र-सी थी। मैं आश्चर्य चकित होकर उसकी चोंच की ओर देख रहा था, क्योंकि पक्षी की सुन्दरता के अनुसार चोंच इतनी सुन्दर नहीं थी। कुछ क्षणों में इसी चंचल स्वभाव वाले पक्षी ने, शान्त स्वभाव वाले पक्षी के गर्दन के

ऊपर अपना मुँह रख दिया, शान्त स्वभाव वाला पक्षी बिल्कुल शान्त व स्थिर बैठा हुआ था, उसने किसी प्रकार की क्रिया नहीं की। मैं इस चंचल पक्षी की चंचलता देखकर और शान्त स्वभाव वाले पक्षी की शान्त व स्थिरता देखकर मुस्करा रहा था। तभी मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! जो पक्षी शान्त व स्थिर स्वभाव वाला है, वह आत्मा का प्रतीक है। आत्मा के अन्दर किसी प्रकार का विकार नहीं होता है, वह सिर्फ दृष्टा के रूप में रहती है, इसीलिए वह पक्षी शान्त व स्थिर था। जो पक्षी चंचल है वह जीव का प्रतीक है। पक्षी रूपी जीव त्रिगुणात्मक, परिवर्तनशील प्रकृति में आसक्त हो रहता है, इसलिए सुख-दुख रूपी फल को खाता रहता है। जो पक्षी आत्मा रूप है वह कभी भी त्रिगुणात्मक प्रकृति पर आसक्त नहीं होता है, सिर्फ दृष्टा रूप में रहता है, इसीलिए वह शान्त दिखाई दे रहा था। दूसरे पक्षी (जीव) की चोंच अच्छी नहीं है– इसका कारण है, त्रिगुणात्मक प्रकृति में उसकी आसक्ति है, तथा सुख-दुख की अनुभूति करता है। अनुभव में एक महत्त्व पूर्ण बात यह है, जो पक्षी आत्मा का प्रतीक है उसके गर्दन पर दूसरे पक्षी ने अपना मुँह रख दिया, इसका अर्थ है– भविष्य में वह आत्मा की ओर उन्मुख होगा। ऐसा तभी हो सकेगा, जब वह त्रिगुणात्मक प्रकृति की ओर से अपनी आसक्ति हटा लेगा, अर्थात् अभ्यास के द्वारा भविष्य में मेरी आसक्ति संसार से हट जायेगी। फिर मैंने अपने स्वरूप में अवस्थित होने लगूँगा।

अशुद्धता का नष्ट होना निश्चित

मै 29 अक्तूबर को सुबह झोपड़ी में ध्यान कर रहा था। ध्यानावस्था में देखा– मेरे सामने बहुत सुन्दर स्वर्ण कलश प्रकट हो गया, कुछ पलों तक देखते रहने के पश्चात में मैंने देखा– उस स्वर्ण कलश को दो हाथ पकड़े हुए है, वह दोनों हाथ बहुत ही काले थे। मैं काले हाथों को देखकर चौंका, फिर सोचने लगा– “ये हाथ किसके हैं”। उसी समय मुझे कलश के अन्दर का दृश्य दिखाई देने लगा, कलश के अन्दर बहुत ही काला, गन्दा-सा तरल पदार्थ भरा हुआ है। मैं तुरन्त समझ गया, यह तमोगुण से संबन्धित है अर्थात् अशुभ का संकेत है। तभी मैं उन काले-काले हाथों को देखने लगा। हाथों के सहारे ऊपर की ओर दृष्टि की, मैंने सोचा– “यह कलश कौन लिए हुए है?”तभी मुझे दिखाई दिया– बहुत लम्बे-लम्बे हाथ अन्तरिक्ष में समाए हुए है। फिर मुझे पैर के घुटनों से लेकर सीने तक स्त्री का शरीर दिखाई देने लगा। मुझे बहुत आश्चर्य हुआ– सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में स्त्री के शरीर का सिर्फ इतना ही भाग दिखाई दे रहा था। पैर व

घुटनों से निचला भाग भी मुझे दिखाई नहीं दे रहा था। मैं अपनी दृष्टि बहुत नीचे की ओर की, फिर भी कुछ दिखाई नहीं दिया। उस स्त्री के सिर व कन्धे ऊपर की ओर अन्तरिक्ष में दिखाई नहीं दे रहे थे, क्योंकि उसके शरीर के सीने तक ही सम्पूर्ण अन्तरिक्ष था इसलिए ऊपर का शरीर दिखाई ही नहीं दे रहा था। अब मेरी दृष्टि स्वर्ण कलश की ओर गई, उस कलश का मुँह उन दोनों हाथों ने तिरछा कर दिया था। उससे काला गाढ़ा तरल पदार्थ नीचे की ओर गिरने लगा। तभी मैं बोला– "ठहरो, यह काला तरल पदार्थ अशुभ का संकेत है, मेरे ऊपर तो नहीं गिराया जा रहा है"। तभी आवाज आई– "नहीं, यह पदार्थ आपके ऊपर नहीं गिराया जा रहा है, तुम अपनी दृष्टि नीचे की ओर करो और देखो- यह किसके ऊपर गिर रहा है"। मैंने अपनी दृष्टि नीचे की और देखा– "यह पदार्थ एक स्त्री के ऊपर गिर रहा है, स्त्री अपने बाल बिखेरे हुए बैठी थी। स्त्री का रंग काला था, यह स्त्री मेरी ओर पीठ किए हुए बैठी थी। काला तरल पदार्थ स्त्री के सिर के ऊपर गिरकर अदृश्य होता जा रहा था"। तभी मुझे अनुभूति हुई– "मेरे शरीर की लम्बाई बहुत ज्यादा है"। अब कलश से काला तरल पदार्थ गिरना बन्द हो गया था, स्त्री आसन पर ध्यान मुद्रा बैठी हुई थी। स्त्री का शरीर अपने आप आगे की ओर खिसकने लगा, आगे की ओर पानी विस्तृत क्षेत्र में भरा हुआ था, मगर बहुत पानी बिल्कुल स्वच्छ था। स्त्री का शरीर ध्यान मुद्रा में बैठा हुआ पानी के ऊपर पहुँच गया, फिर स्त्री नीचे की ओर पानी के अन्दर समाने लगी। तभी मेरी दिव्य दृष्टि अत्यन्त तेजस्वी हो गई, क्योंकि स्त्री पानी के अन्दर अनन्त गहराई में प्रवेश करती जा रही थी। मुझे पानी के अन्दर अनन्त गहराई तक दिखाई दे रहा था। तभी स्त्री का शरीर पानी में विलीन होकर अदृश्य हो गया। अब मेरी दृष्टि स्वर्ण कलश की ओर गई, स्वर्ण कलश में ज्यों-का-त्यों पूरी तरह से काला तरल पदार्थ भरा हुआ था। फिर स्वर्ण कलश भी अदृश्य हो गया। उसी समय मैंने पूछा–*"यह स्त्री कौन थी, जिसके ऊपर काला तरल पदार्थ गिर रहा था, फिर पानी में विलीन क्यों हो गई?"* फिर आवाज आई–*"यह आपकी अशुद्धता थी, आपकी अशुद्धता विलीन हो चुकी है"।* अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- यह अशुद्धता ही योगमार्ग में अवरोध का कार्य करती है, वर्तमान युग कलियुग का है। कलियुग में अशुद्धता का राज्य चलता है, ध्यानावस्था में मेरी अशुद्धता से कई बार बातचीत हुई। जो स्त्री स्वर्ण कलश पकड़े हुए थी, उसका सम्पूर्ण शरीर मुझे नहीं दिखाई दे रहा था। उसके विषय में मैं अभी कुछ नहीं लिख सकता हूँ कि वह कौन थी? अपने साधना काल में इतने ऊँचे आकार का शरीर कभी नहीं देखा था। वैसे अशुद्धता (तमोगुण)की देवी काली देवी और चण्डी देवी है। यह दोनों स्वरूप आदिशक्ति के ही हैं।

यह अशुद्धता योगी के चित्त पर स्थित रहती है, निर्मल ज्ञान के द्वारा चित्त से अशुद्धता रूपी आवरण नष्ट हो जाने से, सांसरिक विषय वासना न उत्पन्न होने पर, उत्कर्ष अवस्था वाला ज्ञान उत्पन्न होता है। इस उत्कर्ष अवस्था वाले ज्ञान से योगी पुरुष आत्मा में अवस्थिति तक पहुँचता है। आत्मा में अवस्थिति का अभ्यास करने वाला योगी "जीवनमुक्त" कहा जाता है। इसलिए चित्त से अशुद्धता का दूर होना अति आवश्यक है। इस अशुद्धता के हटे बिना अभ्यासी आत्मा में अवस्थित नहीं हो सकता है। मैंने यहाँ पर अशुद्धता शब्द का प्रयोग किया है। यह अशुद्धता तमोगुणी कर्मों द्वारा आती है, तथा चित्त पर स्थित तमोगुण ही इसका कारण होता है। आज संसार में तमोगुण का ही व्यापार फ़ैला हुआ है। चित्त इसी कारण मलिन हो जाता है, चित्त की मलिनता ही अशुद्धता कही जाती है आदि। जिस स्त्री पर काला तरल पदार्थ डाला जा रहा है, वह मेरे चित्त पर ही स्थित है। काला पदार्थ जो डाला जा रहा है, वह भी अशुद्धता या तमोगुण से युक्त है, स्वच्छ पानी मेरे चित्त पर स्थित अच्छे कर्म है। यह स्त्री मेरे शेष-संस्कारों में विलीन हो गई। इसका अर्थ यह है– जब मैं अशुद्धता को अभ्यास के द्वारा तथा भोगकर नष्ट करूँगा, तब निश्चय ही मेरी दुर्गति होगी। मगर यह भी निश्चित है– चित्त पर स्थित अशुद्धता को नष्ट होना ही होगा। इसके बाद चित्त अत्यन्त निर्मल हो जाएगा।

स्थूल शरीर त्यागने के बाद ऊर्ध्वगमन का मार्ग

30 अक्तूबर को झोपड़ी में ध्यान कर रहा था। ध्यानावस्था में देखा– ऊपर की ओर अन्तरिक्ष में तेज प्रकाश चमकने लगा, तभी मेरी दृष्टि ऊपर की ओर हो गई, जहाँ पर प्रकाश चमका था। उस स्थान पर अब भी प्रकाश फैला हुआ था। यह प्रकाश धीरे-धीरे कम होता चला गया, प्रकाश लुप्त हो जाने पर प्रकाश के स्थान पर सफेद रंग के चमकीले बादल दिखाई देने लगे। इन सफेद बादलों में कहीं-कहीं पर हल्की-हल्की कालिमा भी थी। अब उन सफेद बादलों के बीच में एक छिद्र दिखाई देने लगा। फिर बादल भी नीचे की ओर आने लगे, मगर मेरी दृष्टि बादलों के बीच में बने छिद्र पर थी, छिद्र का आकार चन्द्रमा के आकार के बराबर था। कुछ क्षणों के बाद सफेद बादल मेरे सिर के पास आ गए, अब छिद्र मुझे बहुत बड़े आकार में दिखाई देने लगा। छिद्र मेरे सिर के ऊपर ही दिखाई दे रहा था, तभी मुझे ऐसा लगा जैसे यह छिद्र मेरे ब्रह्मरन्ध्र के ऊपरी भाग (सिर के ऊपरी भाग) पर है। क्षण भर के लिए मैं भूल गया कि यह छिद्र बादलों के बीच में था। अब छिद्र मुझे ब्रह्मरन्ध्र के ऊपरी भाग पर दिखाई दे रहा था। ऐसा लगता था- मेरे

सिर के ऊपरी भाग में ही यह छिद्र है। कुछ क्षणों बाद छिद्र ऊपर की ओर उठता चला गया, अब फिर मुझे बादलों की सतह दिखाई देने लगी। छिद्र बिल्कुल स्पष्ट दिखाई दे रहा था।

उसी समय अन्तरिक्ष से आवाज आई– *"योगी इस छिद्र को ध्यान पूर्वक देखो, योगी पुरुष सूक्ष्म शरीर के द्वारा इसी छिद्र से ऊपर आ जाता है, अब छिद्र के ऊपर का भाग देखिए"। उसी समय मैं बादलों के बीच से होता हुआ ऊपर की ओर चला गया। अब बादल मुझसे नीचे की ओर दिखाई देने लगे, मगर मेरी दृष्टि अब भी उसी छिद्र पर स्थिर थी। फिर अंतरिक्ष से अवाज आई- योगी पुरुष सूक्ष्म शरीर के द्वारा इसी छिद्र से ऊपर आ जाता है, ऊपर की ओर की ओर अन्तरिक्ष देखो, इसी अन्तरिक्ष में योगी निवास करता है"।* मैंने अपनी दृष्टि अन्तरिक्ष में चारों ओर दौड़ाई, अन्तरिक्ष एकदम स्वच्छ एवं शान्त था। तभी मैं बादलों के बीच से होता हुआ नीचे आ गया। बादल व छिद्र मुझसे थोड़ी दूरी पर स्थित थे। फिर आवाज आई- *"योगी पुरुष जैसे ही अपना स्थूल शरीर त्यागता है उसी समय सूक्ष्म शरीर इस छिद्र के ऊपर चला जाता है। योगी पुरुष का सूक्ष्म शरीर ब्रह्मरन्ध्र के ऊपरी भाग से बाहर निकलता है। उस ऊपरी भाग में एक छिद्र होता है, यह छिद्र अति सूक्ष्म रूप में विद्यमान होता है। बादलों के बीच जो छिद्र देख रहे हो, इसका सम्बन्ध ब्रह्मरन्ध्र के ऊपरी छिद्र से होता है। ब्रह्मरन्ध्र का ऊपरी छिद्र खुलते ही ऐसा लगता है उसका सूक्ष्म शरीर स्थूल शरीर से नहीं, बल्कि बादलों वाले छिद्र से ऊपर निकला है, क्योंकि ब्रह्मरन्ध्र का ऊपरी छिद्र और यह छिद्र एक ही है। यह छिद्र सूक्ष्म रूप में है, इसलिए यह तुमसे अलग दिखाई दे रहा है। तुम्हें यह दृश्य दिखाकर बताया गया है, वह छिद्र सिर के ऊपरी भाग में स्थित है ताकि तुम्हें दोनों छिद्रों में भिन्नता नजर न आए। यह मार्ग सिर्फ योगियों के लिए है"।*

अर्थ- इस अनुभव में मुझे दिखाया गया, योगी पुरुष अपना स्थूल शरीर छोड़ने के बाद किस मार्ग से ऊर्ध्वगमन करता है। मगर संसारी पुरुष स्थूल शरीर छोड़ने के बाद तृष्णा के कारण पृथ्वी के अन्तरिक्ष में वासनदेह में रहता है और मानसिक कष्ट भोगता रहता है। वासना देह वाली जीवात्माएँ इन बादलों की परत पार नहीं कर सकती हैं। वासनादेह नष्ट होने पर अथवा किसी योगी पुरुष द्वारा ऊर्ध्वगमन कराने पर ही सूक्ष्म शरीर इन बादलों से ऊपर जा पाती है।

चारों शरीर

एक नवम्बर को मैं अपने कमरे में ध्यान कर रहा था। ध्यानावस्था में देखा– मुझसे थोड़ी दूरी पर अन्तरिक्ष में जलती हुई मोटी लौ अत्यन्त सुन्दर दिखाई दे रही थी। लौ के चारों ओर अण्डाकार प्रकाश का आवरण बना हुआ था। इस आवरण से बाहर ओर चारों तरफ, थोड़ी दूरी पर एक और अण्डाकार प्रकाश का आवरण बना था। इसी प्रकार लौ के बाहर चारों ओर अण्डाकार थोड़ी-थोड़ी दूरी पर चार आवरण बने थे। मैं एक साथ चारों आवरण और लौ को देख रहा था। मेरी दृष्टि लौ पर केन्द्रित थी। मैं लौ का स्वरूप देखकर मुस्करा रहा था।

अर्थ- साधकों! आज तक जलती हुई लौ का कई बार साक्षात्कार किया, मगर अब की बार लौ का स्वरूप कुछ ज्यादा ही सुन्दर था। इसका कारण है अभी तक जिन वृतियों ने लौ का स्वरूप धरण किया था, उन वृत्तियों से यह वृत्ति अत्यन्त सात्विक व विभु (व्यापक) थी। अब चित्त में सिर्फ कुछ ही क्लेशात्मक संस्कार-शेष है। चित्त की अशुद्धता भी कम होती जा रही है। पहले की सात्विक वृतियाँ इतनी व्यापक नहीं हुई थीं, क्योंकि पहले चित्त पर अशुद्धता की मात्रा ज्यादा थी। जो लौ का दर्शन हुआ– यह अत्यन्त निर्मल वृत्ति थी। इस वृत्ति से भी आसक्ति हटानी होगी। लौ के चारों ओर चार आवरण मेरे चारों शरीर थे। **पहला आवरण-** महाकारण शरीर था। **दूसरा आवरण-** कारण शरीर था। **तीसरा आवरण-** सूक्ष्म शरीर का था। **चौथा आवरण-** स्थूल शरीर था। वर्तमान में मेरी स्थिति कारण शरीर में है। ये चारों शरीर आवरण रूप में वृत्तियों द्वारा दिखाये गये।

यह अनुभव ऊपर लिखे अनुभव के बाद आया। मैंने देखा– मेरे सामने ऊपर की ओर निर्मल वायु की लहरें उठ रही थी। मैं उन लहरो को गौरपूर्वक देख रहा था। लहर बिल्कुल निर्मल, रंगहीन, पारदर्शी है। उस पारदर्शी वायु की लहरों में एक-दो प्रकाश के कण इधर-उधर चमक जाते है। तभी मेरे मुँह से निकला– *"यह लहर कितनी स्वच्छ व पारदर्शी है"।* फिर आवाज आई– *"योगी, जो यह अत्यन्त निर्मल पारदर्शी वृत्ति देख रहे हो, तुम्हें इसके उस पार जाना है। तुम्हारा ही ज्ञान निर्मल पारदर्शी वृत्ति के रूप में दिखाई दे रहा है।"* कुछ क्षणों तक मैं उस वृत्ति को देखता रहा, तभी मेरे अन्दर विचार आया– "यह निर्मल पारदर्शी वृत्ति कितनी सुन्दर है"। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- यह जो अत्यन्त पारदर्शी निर्मल वृत्ति वायु के रूप में दिखाई दी, इससे स्पष्ट होता है– मेरा चित्त अब शीघ्रता से निर्मल होता जा रहा है।

चित्त निर्मलता की ओर

यह अनुभव एक नवम्बर को आया। मैंने देखा– मैं थोड़ा-सा आगे चलकर रुक गया हूँ, क्योंकि सामने का दृश्य देखकर मैं मुस्करा रहा था। मैं जिस स्थान पर खड़ा हुआ था, मेरे सामने की ओर लगभग एक फुट की सीधी ऊँचाई थी। यह ऊँचाई मेरे पैर के घुटने से भी कम थी। इस ऊँचाई से आगे की ओर हल्की-सी चढ़ाई थी, चढ़ाई लगभग तीन-चार मीटर लम्बी होगी। उस चढ़ाई से आगे की ओर मुझे बहुत ही सुन्दर प्रकाश का दर्शन हो रहा था। मैं इस छोटी-सी चढ़ाई व सुन्दर प्रकाश को देखकर मुस्करा रहा था। इस अनुभव में एक विशेषता थी, सम्पूर्ण दृश्य प्रकाशमान ही था, साथ में दृश्य की भूमि भी प्रकाशित थी। भूमि से भी प्रकाश निकल रहा था। उसी समय मेरी दृष्टि नीचे की ओर हो गई, जिस स्थान पर मैं खड़ा हुआ था। मैंने देखा– मेरे घुटनों के बराबर जो ऊँचाई थी, वहीं से ऊपर की ओर हल्की-सी चढ़ाई शुरू होती थी। लगभग एक फिट की चढ़ाई के बाद अत्यन्त स्वच्छ निर्मल पानी निकल रहा था। उस पानी का बहाव मेरी ओर आ रहा था, क्योंकि मेरी ओर ढलवा जमीन थी। पानी मेरी ओर आकार नीचे गिर रहा था। मैं अत्यन्त स्वच्छ पानी की ओर देखकर हँसा और बोला– “पानी कितना स्वच्छ है”। तभी मैंने देखा- पानी जिस स्थान से निकल रहा है, उस स्थान पर पानी का स्रोत नहीं है, बल्कि भूमि से लगभग एक-डेढ़ फीट ऊपर आकाश से पानी स्वयं प्रकट हो रहा है। मैं उस पानी से बोला– *“आप तो स्वयं प्रकट हो रहे हैं और मेरी ओर आ रहे हैं”।* मैं सोचा– “यह पानी कहाँ जा रहा है”। तभी मुझे आश्चर्य हुआ, क्योंकि पानी मेरे पैरों के पंजों के पास आकर अदृश्य होता जा रहा था। उस अत्यन्त छोटी-सी चढ़ाई के आगे प्रकाश अब भी अपनी जगह पर स्थिर था। तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! अनुभव में चित्त की भूमि से एक फीट ऊपर आकाश से, अत्यन्त स्वच्छ निर्मल पानी प्रकट होकर, मेरी ओर बहकर पैरों के पंजों पर आकर अदृश्य हो जाता है। यह जो पानी बह रहा है यह मेरे ही चित्त की वृत्तियों का स्वरूप है। चित्त की वृत्तियाँ पानी के रूप में मेरी ओर बहकर मेरे में ही लीन हो जाती है। चित्त में जिस क्षेत्र से वृत्तियाँ प्रकट होकर बाहर आती है, वही क्षेत्र स्पष्ट दिखाई दे रहा है। पानी रूपी निकली हुई अत्यंत निर्मल वृत्तियाँ मेरे अध्यात्म मार्ग में सहायक होगी।

इसी में अवस्थित होना

यह अनुभव भी एक नवम्बर को आया। मैंने अनुभव में देखा– मैं खड़ा हुआ हूँ, मेरा शरीर अत्यन्त विशाल है। मेरे सामने की ओर सिर्फ प्रकाश ही प्रकाश है, मैं उस प्रकाश से थोड़ा दूर खड़ा हुआ हूँ। उसी समय आकाश से आवाज आई– “आपको इसी प्रकाश में अवस्थित होना है,”। मैं सिर्फ उस चेतन्यमय प्रकाश को देखकर मुस्करा रहा था। तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! इस अनुभव में जो अति सुन्दर प्रकाश दिखाई दे रहा है, इसका वर्णन मैं शब्दों में नहीं कर सकता हूँ। मैं इस प्रकाश से थोड़ी दूरी पर खड़ा हूँ, क्योंकि मैं अभी उस प्रकाश तक नहीं पहुँचा हूँ। जब समाधि के अभ्यास द्वारा चित्त की वृत्ति को निरुद्ध कर दूँगा, तब उस प्रकाश में पहुँच जाऊँगा। आकाश ने मुझे बता भी दिया– *“आपको इसी प्रकाश में अवस्थित होना है”।* तब मैं अति प्रसन्न हुआ। साधकों! यह चैतन्यमय प्रकाश वास्तविक नहीं है, इसे वृत्तियों के द्वारा दिखाया गया। यह अवस्था भविष्य में आएगी।

भौतिक वस्तुओं को त्यागने का संकल्प

आपने मेरे पिछले अनुभवों को पढ़ा होगा। वर्तमान समय में मेरी जो अवस्था है, वह अवस्था साधक को तभी प्राप्त होती है, जब उसे सांसरिक पदार्थों के विषय में पूरी तरह से ज्ञान होने लगता है। तथा जो त्यागने योग्य है वह त्याग दिया है अर्थात् सांसारिक पदार्थ त्यागने योग्य हैं, क्योंकि सांसरिक पदार्थ परिवर्तनशील हैं। परिवर्तनशील पदार्थ दुःख स्वरूप होते हैं, ये पदार्थ सदैव समान रूप में नहीं रहते हैं। जब मनुष्य को किसी पदार्थ से राग हो जाता है, उस पदार्थ का स्वरूप बदल जाने पर, राग होने के कारण दुःख की अनुभूति करने लगता है। इसलिए सांसारिक पदार्थ त्यागने योग्य ही है। सांसारिक पदार्थों को बिना त्यागे ज्ञान की उत्कर्ष अवस्था प्राप्त नहीं की जा सकती है अथवा अभ्यास द्वारा जब ज्ञान की उत्कर्ष अवस्था आती है, तब योगी पहले ही सूक्ष्म रूप से सांसारिक पदार्थों को त्याग कर चुका होता है, क्योंकि बिना पदार्थों के त्यागे यह अवस्था प्राप्त नहीं की जा सकती है। मैं भी लगभग डेढ़ माह से सूक्ष्म रूप से और स्थूल रूप से त्याग कर चुका हूँ। तीन नवम्बर को मैंने अपनी झोपड़ी में संकल्प करके भौतिक वस्तुओं का त्याग कर दिया था। मैं झोपड़ी के अन्दर ध्यान करने के लिए बैठा, फिर संकल्प किया। पहले

मैंने अपने योगबल से कहा– *“हे योगबल, ये शब्द मेरे सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में गूँज जाएँ”।* क्योंकि मेरा योगबल ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में मेरे शब्द पहुँचाने का कार्य कर सकता है, फिर मैंने संकल्प किया–” हे ऊर्ध्व लोक के वासियों, योगियों, तपस्वियों, भक्तों, ऋषि-मुनियों, तपलोक के मेरे पूर्व परिचितों, मित्रों, सात्विक शक्तियों, आदिशक्ति के समस्त स्वरूपों, देवियों, देवताओं, मेरे इष्ट भगवान शंकर (भगवान विष्णु जी व भगवान श्रीकृष्ण जी) मेरे चारों गुरुवो व चेतन ब्रह्म, मैं आप सभी को प्रणाम करता हूँ तथा आप सभी को साक्षी मानकर संकल्प करता हूँ, पृथ्वी की जितनी भी वस्तुएँ मेरे अधिकार में हैं, मैं उनका त्याग करता हूँ। आप सभी से प्रार्थना करता हूँ कि यदि मेरे अन्दर सूक्ष्म रूप से भी किसी वस्तु के प्रति तृष्णा जागृत होने लगे, तो कृपया आप सभी मेरी सहायता करें। मुझे आशीर्वाद दो, मैं अपने द्वारा किए गए संकल्प का सदैव पालन करता रहूँ”। तभी अन्तरिक्ष से आवाज आई– *“हे योगी, तू निश्चय ही परम उच्चकोटि का योगी है, तूने पहले ही सूक्ष्म रूप से स्थूल पदार्थों का त्याग कर दिया है, फिर तूने स्थूल रूप से त्यागने का संकल्प करके अच्छा ही किया है, तुझे सफलता अवश्य मिलेगी। जब तक तेरा स्थूल शरीर है, तब तक संसारी वस्तुओं की आवश्यकता पड़ेगी। इसलिए स्थूल शरीर के लिए उचित मात्रा में स्थूल पदार्थ को ग्रहण करते रहो और अपने मार्ग पर आगे बढ़ते रहो। तुझे जिस कार्य के लिए पृथ्वी पर शीघ्र जाना पड़ा है, उस कार्य को पूरा करो, बस यही तेरा लक्ष्य होना चाहिए”।* मैं इन शब्दों को सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ, फिर मैं झोपड़ी के बाहर आ गया।

कर्माशयों का साक्षात् चित्त द्वारा तुरन्त करा देना

यह अनुभव मैं 6 नवम्बर को लिख रहा हूँ। लगभग 15-20 दिन हुए, ध्यानावस्था में मुझे यह अनुभव आया था। मैंने देखा– मेरे सामने एक छोटा-सा कुत्ते का बच्चा खड़ा हुआ है। जैसे ही मेरी दृष्टि उस कुत्ते पर पड़ी, वह कुत्ता अपने आप छोटा होता चला गया। जब उसका आकार एक पिल्ले के समान रह गया तो वह जीता जागता पिल्ला जड़ रूप में बदल गया। ऐसा लगा यह पिल्ला मिट्टी का बना हुआ है। कुछ क्षणों में मिट्टी के पात्र के समान फूट गया और जड़ पदार्थ के रूप में इधर-उधर बिखर गया। ऐसा लगा जैसे किसी बच्चे ने मिट्टी का खिलौना पटक दिया हो और टूटकर इधर-उधर बिखर गया हो। तभी मेरा अनुभव समाप्त हो गया। मैं बैठकर सोचने लगा, इस अनुभव का अर्थ क्या है? मगर कुछ समझ में नहीं आया।

दूसरे दिन फिर इसी प्रकार का मिलता-जुलता अनुभव आया, मैंने अनुभव की ओर ध्यान नहीं दिया। मैंने सोचा– ध्यानावस्था में कई प्रकार के अनुभव आते हैं, जरूरी नहीं कि सभी अनुभवों का अर्थ समझा जा सके। मगर जब एक सप्ताह तक बराबर इसी प्रकार के अनुभव आते रहे, तब मैं सोच में पड़ गया, इन अनुभवों का अर्थ अवश्य कुछ होगा। फिर एक दिन स्वयं ज्ञान ने मुझे बताया– इन अनुभवों का अर्थ है–*"चित्त द्वारा कर्माशियों का साक्षात् कर देना"*।जो कर्म अब आप कर रहे हैं और जो कर्माशिय आप वलय द्वारा दूसरों के ग्रहण कर लेते हैं, उन्हीं कर्मों का साक्षात्कार हो जाता है। अब ये कर्माशिय चित्त पर नहीं ठहरते हैं, चित्त पर कर्माशिय बनते हैं, इसलिए अनुभव के रूप में ऐसा दृश्य दिखाई देता है। पहले आपके कर्म चैतन्यमय से दिखाई देते हैं, फिर वही कर्म जड़ रूप भाषित हो जाते हैं, ऐसा इसलिए होता है। अब चित्त स्वच्छ निर्मल होने के कारण, चित्त पर बनने वाले कर्माशियों के वास्तविक स्वरूप का दर्शन (साक्षात्) करा देता है, पूर्ण रूप से यह योग्यता भविष्य में आएगी।

तृष्णा और विकार

यह अनुभव 13 नवम्बर को सुबह चार बजे योगनिद्रा में आया। योगनिद्रा में देखा– मैं आगे की ओर चला ही था, सामने का दृश्य देखकर मैं ठहर गया, क्योंकि सामने मुझसे थोड़ी दूरी पर घोड़े के समान शरीर वाला एक जानवर लेटा हुआ था। इस जानवर के गर्दन के ऊपर से होकर एक सुनहरा सर्प चला जा रहा था, इस घोड़े के समान जानवर को देखकर मेरे मुँह से निकला– *"यह तो मर गया है"*। फिर मेरी दृष्टि सर्प की ओर स्थिर हो गई, सर्प पूर्व दिशा की ओर चला जा रहा था। मेरा मुँह उत्तर दिशा की ओर था, बिल्कुल शान्त वातावरण था, दृश्य में दिखाई देने वली भूमि स्वप्रकाशित थी। सर्प के शरीर की लम्बाई अपने आप ज्यादा हो गई, सर्प बिल्कुल शान्त स्वभाव का था। मैं सर्प कि लम्बाई देखकर आश्चर्यचकित हो रहा था। इसकी लम्बाई लगभग दस मीटर रही होगी, तभी मेरे मुँह से अपने आप शब्द निकले– *"इसकी (सर्प की) लम्बाई इतनी नहीं होनी चाहिए"*। सर्प देखने में बुरा नहीं लग रहा था। वह पूर्व दिशा कि ओर बड़े आराम से चला जा रहा था,पूर्व दिशा में सर्प से थोड़ी दूरी पर अलौकिक सा तेज प्रकाश चमक रहा था, उसी समय मुझे अपने अन्दर आवाज सुनाई दी– *"यह सर्प इस प्रकाश में विलीन हो जाएगा"*। मैंने अपनी दृष्टि चारों ओर को घुमाई, चारों ओर बिल्कुल शान्त वातावरण था, अन्तरिक्ष भी

हल्के नीले रंग के प्रकाश से प्रकाशित था, पूर्व की ओर तेजस्वी प्रकाश फैला हुआ था। तभी अनुभव समाप्त हो गया। मेरी आँखें खुल गई, ध्यान पर बैठने का समय हो गया था।

अर्थ- घोड़े के समान जानवर– यह मेरी ही तृष्णा है जिसे मरा हुआ देख रहा हूँ। सच तो यह है तृष्णा जो मरी हुई दिखाई दे रही है वह कभी मरती नहीं है, बल्कि अति सूक्ष्म हो-हो कर उसका अस्तित्व समाप्त हो जाता है। भूमि व अन्तरिक्ष मेरा ही चित्त है। चित्त इस अनुभव में स्वप्रकाशित सा दिखाई दे रहा है। चित्त स्वप्रकाशित नहीं होता है, मगर जब चित्त में तमोगुण का प्रभाव कम होने लगता है, तब चित्त पर सत्वगुण का प्रभाव बढ़ने लगता है। सत्वगुण की अधिकता से चित्त प्रकाशित सा दिखाई देने लगता है।

श्री माता जी के लिए आदिशक्ति से प्रार्थना करना

यह अनुभव 14 नवम्बर को सुबह तीन बजे योगनिद्रा में आया– एक अद्वितीय सुन्दर स्त्री ऊँचे सिंहासन पर बैठी हुई है, उसके सिर पर मुकुट व सम्पूर्ण शरीर पर सुन्दर गहने पहने हुए हैं तथा लाल रंग की साड़ी पहने हुए है, साड़ी में चमकीले सितारे लगे हुए हैं। उसके सिर के बाल खुले हुए पीठ पर बिखरे हुए हैं। मैं उस सिंहासन से थोड़ा नीचे दाहिनी ओर खड़ा हूँ। उसी समय श्री माता जी सामने की ओर से आईं और सिंहासन से थोड़ी दूरी पर आकर खड़ी हो गईं। श्री माता जी अपने दाहिने हाथ में रोल किए हुए सफेद रंग का कागज लिए हुए हैं। श्री माता जी ने उस कागज को सिंहासन पर बैठी स्त्री के सामने आगे की ओर (देने की मुद्रा में) किया, मगर उस स्त्री ने श्री माता जी की ओर ध्यान नहीं दिया। उसी समय मैंने अपने दोनों हाथों को जोड़कर सिंहासन पर बैठी हुई स्त्री से बोला– *"हे आदिशक्ति माता, यह स्त्री मेरी सद्गुरु हैं तथा पुरुषार्थ का कार्य भी करती है, कृपया आप प्रार्थना स्वीकार कर लीजिए"*। उसी समय आदिशक्ति ने अपना हाथ आगे बढ़ाकर श्री माता जी के हाथों से कागज ले लिया और उसे पढ़ने लगी। तभी मेरे ज्ञान ने बताया- *"श्री माता जी, अभी और पुरुषार्थ करना चाहती हैं अर्थात् अभी और स्थूल शरीर में रहना चाहती हैं"* तभी मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- आदिशक्ति का स्वरुप ही सिंहासन पर बैठी हुई स्त्री है। आदिशक्ति ने क्या निर्णय लिया यह मैं नहीं बता सकता हूँ, क्योंकि तभी अनुभव समाप्त हो गया। मेरे इस अनुभव से लगता है कि श्री माता जी अभी और जीवन जीना चाहती हैं। साधकों! मैंने अपने कुछ साधक मित्रों से सन् 1990 में ही श्री

माता जी की मृत्यु के विषय में कहा था कि उनकी मृत्यु सन् 1999 में हो जाएगी। मगर यह ध्यान रखने वाली बात है कि योगी अपने योगबल पर कुछ समय के लिए अपनी मृत्यु को टाल सकता है। श्री माता जी महान योगी हैं, वह अपनी मृत्यु आगे बढ़ा सकती हैं। वैसे सन् 1999 में उनका स्थूल शरीर छूट जाना चाहिए था। मुझे अपनी मृत्यु के विषय में भी मालूम है। मगर मैं अपनी मृत्यु को आगे नहीं बढ़ाऊँगा। मुझे मालूम है कि मैं मृत्यु के बाद किस लोक में पहुँचूँगा। मगर जब तक मैं स्थूल शरीर में हूँ, तब तक इस शरीर का मैं पूरा लाभ उठाऊँगा, क्योंकि मेरा उद्देश्य योग मार्ग में आगे बढ़ते जाना है।

चित्त की वृत्ति और कारण शरीर

यह अनुभव 16 नवम्बर को ध्यानावस्था में आया– मैं जलती हुई लौ को देख रहा हूँ। लौ के प्रकाश से सम्पूर्ण जगह प्रकाशमान हो रही है। लौ का आकार तो छोटा है मगर बहुत सुन्दर है। लौ के चारों ओर विशेष प्रकार का पारदर्शी आवरण चढ़ा हुआ है। इस पारदर्शी आवरण के बीच में लौ प्रकाशमान हो रही है। लौ का प्रकाश पारदर्शी आवरण को पार करता हुआ सम्पूर्ण जगह को प्रकाशित कर रहा है। मैं लौ को भी देख रहा हूँ तथा अत्यन्त स्वच्छ पारदर्शी आवरण को भी देख रहा हूँ। कुछ क्षणों बाद लौ अदृश्य हो गई। मगर सम्पूर्ण जगह फैला हुआ प्रकाश पहले की भाँति ही अब भी विद्यमान था। अब मैं सिर्फ पारदर्शी आवरण के देख रहा था, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- जलती हुई लौ दिखाई दे रही है- वह चित्त की सात्विक सशक्त वृत्ति है जो इस रूप में दिख रही है। उसके ऊपर पारदर्शी आवरण मेरा ही कारण शरीर है, अब कारण शरीर मेरा पहले की अपेक्षा बहुत ही शुद्ध हो गया है।

जीव और शरीर

यह अनुभव 17 नवम्बर को सुबह 10 बजे झोपड़ी में आया। मैं मंत्र जाप कर चुका था, ध्यान करने के लिए आँखें बन्द की ही थीं, तभी मुझे अपनी ओर कुछ आता हुआ कुछ दिखाई दिया। मैंने अपनी दृष्टि उस वस्तु पर टिका दी, वह वस्तु अन्तरिक्ष में बहुत दूर से मेरी ओर आ रही थी। कुछ क्षणों में स्पष्ट होने लगा कि ये घोड़े के चार पैर हैं, घोड़े के पैर के बिल्कुल निचले भाग मुझे दिखाई दे रहे थे, घोड़े

के पैर छलांगें लगाते हुए मेरी ओर आ रहे थे। कुछ क्षणों बाद स्पष्ट हो गया एक घोड़ा तेजी से दौड़ता हुआ मेरी ओर आ रहा है। उसकी पीठ सुन्दर कपड़े से सुसज्जित थी। यह सुन्दर कपड़ा घोड़े के दोनों ओर नीचे तक लटक रहा था। कपड़े के कारण घोड़े के पैर के निचले भाग मात्र एक फीट या इससे कम दिखाई दे रहे थे। घोड़ा मुझसे थोड़ी दूरी पर आकार ठहर गया, घोड़ा एक रथ में जुता हुआ था। रथ में सिर्फ दो पहिए थे, रथ के ऊपर बडी़ सी छतरी लगी हुई थी, रथ पर बैठने का स्थान ऊँचा था। जब रथ और घोड़ा मेरे सामने आकार रुका, तब रथ और घोड़ा अपनी जगह पर खड़े हुए ही गोलाकार रूप में घूम गया। गोलाकार रुप में घूमने के कारण मुझे घोड़ा व रथ का सम्पूर्ण भाग दिखाई दे गया। उसी समय अन्तरिक्ष से आवाज आई, *"योगी, अब तू इस रथ पर बैठ और इस रथ को तू ही हाँक (सारथी का कर्म कर)"*। उत्तर में मैं कुछ नहीं बोला। मुझे रथ और घोड़ा जाने क्यों अच्छा नहीं लग रहा था, जबकि रथ और घोड़ा देखने में बहुत ही सुन्दर थे। उसी समय मैं अपने आप रथ के ऊपर बैठ गया, जबकि मैं रथ से दूर स्थित अपने स्थान से हिला-डुला नहीं था, मेरा एक शरीर राजाओं की भाँति रथ पर बैठा हुआ था तथा मैं दूर से बैठा हुआ दृष्टा रुप से सम्पूर्ण दृश्य देख भी रहा था। मेरे दोनों हाथों में घोड़े की लगाम थी, घोड़ा शान्त व सिर नीचे किए हुए खड़ा था। मैंने पूछा- *"इस रथ और घोड़े का अर्थ क्या है?"* अन्तरिक्ष से आवाज आई– *"रथ तेरा ही शरीर है, घोड़ा तेरा ही मन है, अब इस शरीर को व मन को जैसा चाहो वैसा चलाओ"*। मुझे अन्दर से घोड़ा व रथ अच्छा नहीं लग रहा था। मैं बोला– *"मुझे रथ और घोड़ा अच्छा नहीं लग रहा है"*। मगर इसका जवाब अन्तरिक्ष से नहीं आया।

जिस समय रथ पर मैं राजाओं की भाँति अपने आप बैठ गया, उस समय रथ व घोड़ा तथा मेरा शरीर रथ में बैठा हुआ स्पष्ट दिखाई दे रहा था। उस समय मुझे अपना शरीर (जो रथ पर बैठा है) भी अच्छा नहीं लग रहा था, जबकि मैं रथ पर राजाओं की भाँति कपड़े पहने हुए बैठा था। मैं राजा के समान प्रतीत हो रहा था, फिर भी मुझे तीनों (घोड़ा, रथ और अपना शरीर) अच्छे नहीं लग रहे थे। मेरी कोई इच्छा नहीं थी कि मैं रथ पर बैठूँ और घोड़े की लगाम पकड़ूँ, मगर क्या करता अपने आप सब कुछ हो रहा था। जबकि मैं तीनों को व चारों ओर फैले हुई प्रकाश को देख रहा था। उस समय मैं दृष्टा की भाँति दूर से देख रहा था, मुझे अब भी याद आ रहा है, मैं शरीर से रहित, आकार से रहित, सम्पूर्ण दृश्य का दृष्टा था। जब रथ पर बैठे मेरे शरीर ने घोड़े के लगाम पकड़ी और रथ को आगे की ओर हाँकना चाहा, तभी अनुभव समाप्त हो गया। घोड़े का रंग हल्का लाल था। रथ व मेरा शरीर और प्रकाश सफेद उज्ज्वल थे।

अर्थ- घोड़ा- मेरा मन है। रथ– मेरा शरीर है। यह घोड़ा रूपी मन शान्त व स्थिर खड़ा हुआ है, रथ मेरा ही शरीर है। मुझे अपना मन व शरीर अच्छा नहीं लग रहा है जबकि देखने में सुन्दर लग रहा है। इन दोनों को मैं हेय दृष्टि से देख रहा हूँ। आकाशवाणी हुई– *"योगी, तू इस रथ को हाँक।"* मगर मैं कुछ नहीं बोला, क्योंकि मैं रथ और घोड़े को हेय दृष्टि से देख रहा था। मैं चलकर रथ के ऊपर नहीं बैठा, बल्कि मैं बिना चले ही रथ के ऊपर अपने आप बैठ गया। रथ पर राजाओं की भाँति बैठा हुआ मेरा शरीर **जीव का प्रतीक** है। मैं दृष्टा रुप में दूर से सम्पूर्ण दृश्य देख रहा हूँ। मुझसे कहा गया– "इस रथ को हाँक"– अभी तक इस रथ रुपी शरीर को इन्द्रियाँ चला रही थी,अर्थात यह शरीर इन्द्रियों के आधीन था, अब अपनी इन्द्रियाँ, मन और शरीर को अपने आधीन कर अपने इच्छानुसार चलाओ। ऐसा सिर्फ योगी पुरुष ही कर सकता है। संसारी पुरुष सदैव अपनी इन्द्रियों के आधीन रहता है, इसीलिये वह इन्द्रियों का दास बना रहता है साधकों! सभी साधक का उदेश्य यही होना चाहिए कि वह आत्मा में अवस्थित हो सके। इस अवस्था को प्राप्त करने में अभ्यासी को कई जन्म लग जाते हैं।

सिर्फ 'ॐ' मंत्र का जाप करो

20 नवम्बर को सायंकाल ध्यान पर बैठा। ध्यान पर बैठने के कुछ क्षणों बाद आवाज सुनाई दी– *"योगी, अब तुम सिर्फ 'ॐ' मंत्र का ही जाप करो, अथवा आत्मा का स्मरण करो, अन्य मंत्रों का जाप बिल्कुल बन्द कर दो, क्योंकि तुम जिन मंत्रों का जाप कर रहे हो, वह सगुण रूप में है। शिव मंत्र का भी जाप कुछ समय के लिए बन्द कर दो"।* फिर मैंने शिवमंत्र का जाप बन्द कर दिया, क्योंकि मेरे अन्त:करण में शिवमंत्र का जाप चल रहा था। फिर मैं ध्यान की गहराई में चला गया।

साधकों! मुझे सभी सगुण मंत्रों का जाप करने के लिए मना कर दिया गया ताकि मेरा मन पूरी तरह से चेतन तत्त्व का ही चिन्तन करे अथवा उसमें अंतर्मुखी रहे। मैं ज्यादातर शक्तिमंत्र का जाप करता था, मुझे शक्तिमंत्र सिद्ध है, इसी के प्रभाव से मेरे अन्दर कभी भी योगबल कम नहीं हुआ। शक्तिमंत्र सिद्ध होने के कारण सदैव योगबल का भंडार मेरे पास रहता है। योग से सम्बन्धित किसी भी कार्य में मैं असफल नहीं हुआ हूँ। मगर अब सिर्फ 'ॐ' मंत्र का ही जाप करता हूँ। इसी मंत्र के प्रभाव से सभी प्रकार से आध्यात्मिक कार्य करता हूँ।

सन् 1999

व्युत्थान की वृत्तियाँ

नवम्बर 1998 के बाद मेरे अन्त:करण में व्युत्थान की वृत्तियाँ उत्पन्न होने लगीं। इन व्युत्थान की वृत्तियों के कारण मुझे सुख और दु:ख, मोह,आदि उत्पन्न होते हैं। इन वृत्तियों में अज्ञानता और अशुद्धता का मिश्रण होता है। इस प्रकार की वृत्तियों के कारण स्थूल संसार में लगाव-सा हो गया है जैसे अमुक व्यक्ति ने मेरे साथ दुर्व्यवहार किया, अमुक व्यक्ति ने मुझे धोखा दिया है। मैंने जान बूझकर अपनी साधना कम कर दी है ताकि व्युत्थान की वृत्तियों से मैं प्रभावित हो सकूँ। जब मैं ऐसी वृत्तियों से प्रभावित हो जाऊँगा, तब ऐसी वृत्तियों के विषय में मैं ज्यादा समझ सकूँगा। अब मेरी यह अवस्था है, इस प्रकार वृत्तियों से मैं पूरी तरह प्रभावित हूँ। मैंने इन वृत्तियों के विषय में बहुत ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

इस अवस्था में मैं अपने चित्त को पूरी तरह से देखता रहता हूँ। मैंने स्पष्ट देखा है– कि मेरा चित्त गन्दा होने लगा है। चित्त में विकार उठने शुरू हो गए हैं, इन्द्रियाँ, मन अहंकार आदि बहिर्मुखी होने लगे हैं। मैं इन सबको बहिर्मुखी देखकर हँसता हूँ, अब ये सब बहिर्मुखी होकर अपना-अपना काम करने में लग गए हैं। मैंने अनुभव में देखा– नाग का छोटा-सा बच्चा एकदम काला, बहुत ही फुर्तीला, मेरी ओर फन उठाकर बहुत जोर से मुझे फूफकार रहा है। मैं तुरन्त समझ गया कि यह मेरा अहंकार है। माया का दृश्य बहुत सुन्दर था। संक्षेप में लिख रहा हूँ।

माया नष्ट होने की ओर

मैं आगे की ओर चला जा रहा था, एक लड़की ने अपने पास आने का मुझे इशारा किया। वह लड़की सामने थोड़ी दूरी पर, मेरे मार्ग में एक ओर खड़ी हुई थी। लड़की को अपने सामने देखते ही मैं अपनी जगह पर ठहर गया, मैंने अपने मन में सोचा– मुझे इस लड़की से क्या लेना-देना है, मैं क्यों इसके पास जाऊँ। फिर मेरे मन में आया, देखता हूँ यह मेरा क्या कर लेगी? यही सोचकर मैं लड़की के पास चला गया, वह लड़की अत्यन्त सुन्दर थी। बहुत सुन्दर कपड़े पहने हुए थी, उम्र 16-17 साल जैसी लग रही थी।

मैं उसके पास पहुँचकर, उसकी सुन्दरता ध्यान पूर्वक देखी। फिर मैं बोला–*"आप वास्तव में बहुत सुन्दर हैं"।* वह लड़की उत्तर में कुछ नहीं बोली, सिर्फ मुस्कराई और मुझे आलिंगन कर लिया। मैं स्थिर खड़ा हुआ मुस्करा रहा था, कुछ क्षणों बाद लड़की स्वयं मुझसे अलग हो गई। मैं उससे बोला– *"आपने मुझे क्यों बुलाया?"* लड़की बोली– *"मैं आपकी हूँ, आपके साथ रहूँगी"।* मैं आश्चर्य भरे शब्दों में बोला– *"अच्छा"। कुछ क्षणों बाद मैं फिर बोला– "यदि आपकी इच्छा है तो आप मेरे साथ रह सकती हैं"।* वह लड़की प्रसन्न हो गई, फिर लड़की मेरी दाहिनी ओर कमर पर चिपक कर बच्चों के समान बैठ गई। मेरा दाहिना कन्धा मजबूती से पकड़ लिया। लड़की को इस तरह कमर पर बैठने को मैंने मना नहीं किया, बल्कि अपने दाहिने हाथ से सहारा दे दिया। अब मैं आगे की ओर तीव्र गति से बढ़ने लगा, मैं और लड़की दोनों प्रसन्न थे। जैसे-जैसे मैं आगे की ओर बढ़ता जा रहा था वैसे-वैसे लड़की का शरीर पारदर्शी होता जा रहा था, आगे की ओर जाने की मेरी गति तीव्र थी। लड़की का शरीर ऐसा लग रहा था, मानो पारदर्शी होकर नष्ट होता जा रहा है, मैं प्रकाश की ओर चला जा रहा था। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- लड़की स्त्रियों की भाँति कपड़े पहने हुए थी। साधकों! यही लड़की माया थी, माया का प्रभाव धीरे-धीरे भविश्य में नष्ट हो जाएगा, क्योंकि उसका स्वरूप धीरे धीरे परदर्शी होता जा रहा है।

हे साधकों! व्युत्थान की वृत्तियों को मैंने जान बूझकर लिखा है, ताकि आप सभी शिक्षा ले सकें। मैं इस प्रकार की वृत्तियों के विषय में अधिक जानकारी कर सकूँ, इसके लिए मैंने अपनी साधना अत्यन्त धीमी कर दी, ताकि ये वृत्तियाँ ज्यादा-से-ज्यादा प्रगट हो सकें। इस समय मेरे अन्दर इन्द्रियाँ, मन, अहंकार, आदि बहिर्मुखी हो गए हैं। पढ़ने से लगता है की मेरा पतन हो गया है। मगर वास्तव में ऐसा नहीं है, मैं तो अहंकार, आदि को पहले ही अंतर्मुखी कर चुका हूँ। इन सभी के विषय में मैं अच्छी तरह से परिचित हूँ, इसलिए अब ये मुझे अपने शिकंजे में नहीं जकड़ सकते हैं, क्योंकि एक बार मैं छूट चुका हूँ। अब न तो ये मेरे योग मार्ग को अवरोध कर सकते हैं और न ही ये मुझे भ्रमित कर सकते हैं। अब जब चाहूँगा कठोर साधना करके अंतर्मुखी कर दूँगा।

घर वालों को धन्यवाद

पाठकों, आजकल मेरे घर वालों ने ही मेरी खूब दुर्गति कर दी है। दुर्गति इसलिए कर दी गई की मैं उनके अनुसार क्यों नहीं चल रहा हूँ। मैं योगी होकर अपने परिवार वालों के अनुसार कैसे चल सकता हूँ,

आखिरकार मैं योग के नियमों के विरुद्ध नहीं जा सकता हूँ। मेरा सब कुछ छीन लिया गया, मेरे पास कुछ भी नहीं रह गया। कुछ दिन घर में भूखा भी रहा, फिर व्यवस्था हो गई। मुझे मालूम हैं– जो मेरे साथ गलत व्यवहार कर रहे हैं उन्हें स्वयं नहीं मालूम कि वह क्या कर रहे हैं, भविष्य में ये सभी अपना कर्म भोगेंगे।, ईश्वर इन्हें सदबुद्धि दे। साधकों! वैसे मुझे ऐसे पुरुषों को धन्यवाद देना चाहिए, क्योंकि ये मेरे बुरे कर्मों को धो रहे हैं, स्वयं बुरे कर्मों को ग्रहण कर लेते हैं। इस प्रकार के कष्टों को भोगते समय योगी का चित्त निर्मल होने लगता है, सत्य तो ये है कि लोग कारण बन जाते हैं। वैसे इस अवस्था को प्राप्त करने वाला योगी अत्यन्त शक्तिशाली होता है, चाहे तो स्वयं अपने योगबल से इनको दण्ड दे सकता है, मगर योगी को ज्ञान प्राप्त होने के कारण कभी भी दूसरों का अहित नहीं करता है। आजकल मैं अत्यन्त कष्ट से गुजर रहा था, मगर यह कष्ट सिर्फ समाज वालों की दृष्टि में थे। मैं अन्दर से सदैव प्रसन्न रहता था, क्योंकि हर घटना मैं पहले से ही जान लेता था। ये घटनाएँ कभी-कभी मुझसे आज्ञा भी लेती थी। मगर संसारी पुरुष क्या समझें की मैं क्या कर रहा हूँ, संसारी पुरुषों के निगाहों में मैं कष्ट भोग रहा होता हूँ। अकेले में मैं हँसा करता था।

जब सब कुछ त्याग देगा

यह अनुभव मार्च के दूसरे सप्ताह में आया। मैं किसी कारण से थोड़ी दुखी था, दोपहर के समय मैं झोपड़ी (कुटिया) के अन्दर ध्यान करने के लिये बैठ गया। कुछ क्षणों में मेरा गहरा ध्यान लग गाया। उसी समय अन्तरिक्ष से आवाज आई– *“हे माता कालिके! आपके इस भक्त योगी के दुःखों का अन्त कब होगा”।* उसी समय अन्तरिक्ष से स्त्री की आवाज आई– *“जब सब कुछ त्याग देगा, तब इसके दुःखों का अंत हो जाएगा”।* मेरी आँखें खुल गयी। मैं बैठकर सोचने लगा– यह माता काली की आवाज है, उनके कहने का अर्थ है, “मैं संसार की सभी वस्तुओं का त्याग का दूँ, क्योंकि स्थूल वस्तुओं से आसक्त होने के कारण दुःख प्राप्त होता है”।

सीढ़ियाँ दिखाई दीं

यह अनुभव अप्रैल के तीसरे सप्ताह में आया- मैं किसी स्थान पर अकेले चला जा रहा था। कुछ क्षणों बाद मुझे एक पुरुष दिखाई दिया। वह मुझसे बोला– *"आप मेरे पीछे-पीछे आइए"।* मैं उस पुरुष के पीछे-पीछे बिना कुछ सोचे-समझे चलने लगा, वह पुरुष मुझे एक घर के अन्दर ले गया। घर के अन्दर आँगन नुमा जगह में सीढ़ियाँ बनी हुई थीं। वह पुरुष सीढ़ियों पर चढ़ता हुआ ऊपर की ओर चला गया, फिर मेरी दृष्टि से ओझल हो गया। मैं भी सीढ़ियों पर तेजी से चढ़ने लगा। लगभग आधी सीढ़ियाँ चढ़ने के बाद ऊपर की सीढ़ियाँ सँकरी हो गई। अब मेरा शरीर सीढ़ियों में फँसने लगा। आगे चढ़ना मुश्किल हो रहा था। मैं उसी समय सीढ़ियों से नीचे कूद गया और बोला– *"मैं अन्य मार्ग से ऊपर की ओर आऊँगा" फिर मैं वापस चल दिया"।*

ऊपर लिखे अनुभव के एक सप्ताह बाद यह अनुभव आया– मैं हल्के नीले रंग के स्वप्रकाशित आकाश में खड़ा हूँ, मेरे सामने थोड़ी दूरी पर चार-पाँच सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। यह सीढ़ियाँ सीधी ऊपर की ओर बनी हुई हैं, मैं ऊपर वाली आखिरी सीढ़ी को देख रहा हूँ। ऊपर की आखिरी सीढ़ी बहुत चौड़ी और अच्छी है। सीढ़ी से स्वयं प्रकाश निकल रहा है। इस आखिरी सीढ़ी पर एकदम उज्ज्वल सफेद कपास जैसा छोटा-सा बादल का टुकड़ा उड़ रहा है और सम्पूर्ण आकाश में कहीं भी बादल नहीं है। तभी मेरे मुँह से अपने आप आवाज निकली– मुझे इसी अन्तिम सीढ़ी तक पहुँचना है। अनुभव समाप्त हो गया। यहाँ अन्तरिक्ष अत्यन्त कम घनत्व वाला था प्रकाश भी तेज फैला हुआ था।

अर्थ- प्रिय साधकों! इस अनुभव से मालूम हो जाता है कि मुझे अभी और आगे का रास्ता तय करना है। इसीलिए ये सीढ़ियाँ दिखाई दे रही हैं। चित्त पूरी तरह से अत्यन्त निर्मल नहीं हुआ है। सीढ़ियों का सँकरी हो जाना– अभी आगे की उन्नति के लिये अवरोध है। **दूसरे अनुभव में**– आखिरी सीढ़ी पर सफेद बादल का टुकड़ा है इसका घनत्व भी बहुत कम है– चित्त की और स्वच्छता के बाद बादल का टुकड़ा अदृश्य हो जाएगा। हल्का नीला अन्तरिक्ष मेरा चित्ताकाश है।

ज्ञान प्रदान किया गया

यह अनुभव मई माह के प्रथम सप्ताह में आया, आजकल मैं नदी के किनारे झोपड़ी बना कर रहता हूँ, सिर्फ खाना खाने की लिए घर जाता हूँ। एक दिन मैं भूख से पीड़ित था, दोपहर हो गई थी, लू भी अधिक चल रही थी। इसलिए झोपड़ी का दरवाजा बन्द किए हुए चारपाई पर लेटा हुआ था। खिड़की से कुटिया के अन्दर प्रकाश आ रहा था, चारपाई पर लेटे हुए ही मेरी आँखें बन्द हो गई। मुझे ऐसा लगा कि मेरे ऊपर कोई लेटा हुआ है, क्योंकि किसी के शरीर का भार मुझे महसूस हो रहा था। उसी समय मुझे दिखाई दिया, एक अति सुन्दर गोरे रंग की स्त्री मेरे ऊपर लेटी हुई है। मैं सीधा चारपाई पर लेटा हुआ था, वह स्त्री मेरे ऊपर पेट के बल लेटी हुई थी। उस स्त्री का दायाँ स्तन मेरे मुँह को स्पर्श कर रहा था, मैं भूख के कारण उसका स्तनपान करने लगा। कुछ क्षणों बाद उस स्त्री ने अपना बायाँ स्तन मेरे मुँह में लगा दिया, मैं उसका बायाँ स्तन पान करने लगा। मेरा मुँह उस स्त्री के वक्षस्थल के नीचे था, फिर भी स्त्री का सिर से नाभि तक का शरीर दिव्य दृष्टि के द्वारा दिखाई दे रहा था। स्त्री का शरीर अत्यन्त विशाल था, उसकी नाभि के पास मेरे पैरों के पंजे थे। उसका मुँह मेरे सिर के पीछे की ओर था, उसके सिर के बाल बहुत लम्बे थे। बाल लम्बे और घने होने के कारण, स्त्री की पीठ पूरी तरह से सिर के बालों से ढकी हुई थी। स्त्री का नाभि से निचला शरीर मुझे दिखाई नहीं दे रहा था, नाभि से ऊपरी भाग पर कोई भी वस्त्र नहीं था। स्त्री का मुँह मेरे सिर के पीछे होने के बाद भी मुझे स्पष्ट दिखाई दे रहा था। उस विशाल स्त्री के शरीर का भार मुझे महसूस हो रहा था, मगर मुझे किसी प्रकार की कोई परेशानी नहीं हो रही थी। स्त्री के शरीर से हल्की-हल्की खुशबू निकल रही थी। जब मैंने स्त्री के दोनों स्तन पान कर चुका, तब वह अदृश्य हो गई। मेरी धीरे-धीरे आँखें खुलने लगी, मुझे झोपड़ी के अन्दर से सूर्य का प्रकाश दिखाई देने लगा। मैं जागते हुए भी बेहोश जैसा था, मैं हिल-डुल नहीं सकता था।

कुछ क्षणों बाद मेरी आँखें फिर अपने आप बन्द हो गई। मुझे ऐसा लगा कि मेरे ऊपर कोई लेटा हुआ है। मुझे पहले जैसा दृश्य फिर दिखाई दिया– कि मेरे ऊपर गोरे रंग की स्त्री पहले की भाँति लेटी हुई है। मगर यह पहले वाली स्त्री नहीं है, बल्कि यह दूसरी स्त्री है। मैं उस स्त्री का दायाँ स्तन पान करने लगा। इसके शरीर से भी हल्की-हल्की सुगन्ध निकल रही थी, इस स्त्री का भी सिर से नाभि तक का शरीर दिखाई दे रहा था। सिर के बिखरे हुए लम्बे-लम्बे बाल स्त्री को व मुझे ढके हुए थे, उसका चेहरा अति सुन्दर था। कुछ क्षणों बाद में मैं बायाँ स्तन पान करने लगा। फिर यह स्त्री कुछ समय बाद अदृश्य हो गई, मेरी आँखें खुल गई।

मेरा शरीर शान्त स्थिर चेतना शून्य सा लेटा हुआ था, मेरी आँखें फिर बन्द हो गईं। मैंने अपने ऊपर एक साँवली स्त्री (पहले वाली स्त्रियों के समान शरीर वाली) को लेटा हुआ पाया। इस स्त्री का रंग साँवला होते हुए भी बहुत सुन्दर थी, उसकी आँखें अत्यन्त सुन्दर दिखाई दे रही थी। पहले की भाँति इस स्त्री का भी स्तन पान करने लगा, स्तनपान करते समय मुझे अपनी झोपड़ी की खिड़की के द्वारा आया हुआ, अन्दर की ओर का प्रकाश दिखाई दे जाता था। मैं पूरी तरह से जाग्रत अवस्था में था तथा यह भी देख रहा था कि मैं किसी स्त्री का स्तनपान कर रहा हूँ। मेरी बहुत विचित्र अवस्था थी। जाग्रत अवस्था में ही वह स्त्री मेरे ऊपर लेटी हुई थी। स्तनपान करते समय मैं भूल जाता था कि मैं झोपड़ी के अन्दर लेटा हुआ हूँ। मुझे एक बात ओर याद आ रही है– इस स्त्री के स्तन से दूध निकलना बन्द हो गया था, तब मैंने स्तनपान करना बन्द कर दिया। फिर यह स्त्री अदृश्य हो गई। तभी मैं हड़बड़ा कर उठकर बैठ गया और सोचने लगा– यह कैसा अनुभव है, क्योंकि मैं जाग्रत अवस्था में था, तीनों स्त्रियों के शरीर का स्पर्श और उनके शरीर का भार मुझे अब भी महसूस हो रहा था। फिर मैं कुछ क्षणों के लिए ध्यान पर बैठ गया।

ध्यानावस्था में मैंने ज्ञान से पूछा- इस अनुभव का क्या अर्थ है? ज्ञान ने बताया– *"योगी, तुम उस अनुभव का अर्थ समझ चुके हो फिर भी मुझसे पूछ रहे हो"।* मैं बोला– *"आप स्वयं मुझे बताने की कृपा करें कि इसका अर्थ क्या है?"* ज्ञान ने बताया– *"जिन्हें तुम स्त्रियाँ कह रहे हो वह आदिशक्ति के तीनों रूप हैं, स्तनपान करने का अर्थ है- "ज्ञान प्राप्त करना"। इसके प्रभाव की जानकारी तुम्हें कुछ समय बाद होगी। सूक्ष्म रूप से तुम्हारी इस समय भूख भी मिट गई है मगर स्थूल शरीर की भूख स्थूल भोजन से ही मिटेगी, घर जाओ और भोजन करो"।* मैंने ध्यान समाप्त कर दिया तभी मुझे महसूस हुआ मेरी भूख समाप्त सी हो गई है।

साधकों! यह अनुभव मुझे जाग्रत अवस्था में आया था तथा आँखें भी अपने आप बन्द हो जाती थी, उन स्त्रियों का स्तन पान करते समय मैं अपने आप को भूल जाता था। इस प्रकार का अनुभव मुझे पहले कभी नहीं आया था, सब कुछ जाग्रत अवस्था में अवस्था में अनुभूति हो रही थी। उन स्त्रियों के शरीर विशाल थे मुझे नाभि से नीचे का शरीर दिखाई नहीं दे रहा था। सम्भवतः उनके शरीर की लम्बाई 12-13 फीट रही होगी। स्त्रियों के अत्यन्त काले घने लम्बे बालों से उनका शरीर ढँका हुआ था। मैं यहाँ पर उनके शरीर के सुन्दरता का वर्णन नहीं कर रहा हूँ, मैं यही कहूँगा उनके शरीर की सुन्दरता का वर्णन करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। जैसे, माताएँ बच्चे को स्तनपान कराते समय बच्चों को गोद में ले लेती हैं अथवा अपने ऊपर लिटा लेती हैं, मगर इन अनुभवों में ये माताएँ मेरे ऊपर लेटी हुई थीं, क्योंकि मैं

चारपाई पर लेटा हुआ था। अनुभव जाग्रत अवस्था में मात्र आँखें बन्द होने पर आ रहा था। इन तीनों विशालकाय स्त्रियों ने मुझे अपना स्तनपान कराया। जब स्तन से दूध निकलना बन्द हो जाता था तब दूसरा स्तनपान कराने लगती थी। जब दूसरे स्तन से भी दूध निकलना बन्द हो जाता था, तब वह स्त्री अदृश्य हो जाती थी। इसी प्रकार पहली और दूसरी स्त्री ने किया था। मगर तीसरी स्त्री जो हल्के साँवले रंग की थी, जब उसने स्तनपान कराना शुरू किया, तब कुछ क्षणों बाद उसका स्तन सिकुड़ना शुरू हो गया, धीरे-धीरे उसका स्तन बिल्कुल सिकुड़ गया। ऐसा लग रहा था मानों वृद्ध स्त्री का मैं स्तनपान कर रहा हूँ, उस स्तन से दूध निकलना पूरी तरह से बन्द हो गया था। फिर उसने अपना दूसरा स्तनपान करना शुरुकर दिया, कुछ क्षणों बाद यह स्तन भी धीरे-धीरे सिकुड़ने लगा तथा दूध निकलना बन्द हो गया। इसका अर्थ है– "तीनों स्त्रियों के द्वारा मुझे ज्ञान प्रदान किया जाना"। अनुभव में तीसरी स्त्री के स्तन से दूध निकलना बन्द हो गया तथा स्तन भी सिकुड़ गया। इसका अर्थ है– "मुझे पूर्ण ज्ञान प्रदान किया गया है"। इस अनुभव से स्पष्ट है– भविष्य में मुझे तत्त्वज्ञान प्राप्त होगा तथा सम्पूर्ण प्रकृति मेरे लिये नष्ट हुए के समान हो जाएगी। यह ध्यान का अनुभव नहीं बल्कि प्रत्यक्ष अनुभूति थी।

कलियुग की कुदृष्टि

यह अनुभव मई के द्वितीय सप्ताह में आया। मैं दोपहर के समय ध्यान कर रहा था, तब ध्यानावस्था में देखा– दूर अन्तरिक्ष से एक अत्यन्त काला विशाल शरीर वाला पुरुष मेरी ओर चला आ रहा है। जब वह पुरुष मेरे पास आ गया, तब मुझे दिखाई दिया कि उसके सिर पर बड़ा-सा घड़ा रखा है तथा उसने एकदम श्वेत रंग के वस्त्र पहने हुए है, वह काला पुरुष और मेरे नजदीक आ गया। सिर पर रखा हुआ घड़ा अपने हाथों में ले लिया, फिर घड़े का मुँह धीरे-धीरे नीचे की ओर करने लगा। तभी घड़े के अन्दर से कोयले के समान काला गढ़ा तरल पदार्थ नीचे गिरने लगा। उसी समय मैं उससे बोला– *"यह गन्दा पदार्थ मेरे ऊपर क्यों डाल रहे हो, मुझसे दूर रहो?"* मैं काले तरल पदार्थ को घृणा की दृष्टि से देखने लगा। वह काला पुरुष बोला– *"मैं तुम्हारे ऊपर नहीं डाल रहा हूँ"।* मैंने देखा– मुझसे दस मीटर की दूरी पर उसने सारा घड़ा उलट दिया और पुरुष अदृश्य हो गया। वह काला तरल पदार्थ उस घड़े से बहुत ज्यादा मात्रा में निकला था। तरल पदार्थ मेरी ओर बहकर आने लगा, उस समय मैं बैठा हुआ था, तरल पदार्थ

मेरी ओर बहता हुआ हृदय में प्रवेश कर गया। मेरा मन घृणा से भर गया, मुझे अपने आप से अरुचि सी हो गई, क्योंकि न चाहते हुए भी वह तरल पदार्थ मेरे हृदय में प्रवेश कर गया। अनुभव समाप्त हो गया।

फिर ध्यान पर बैठकर मैंने कलियुग से पूछा– *"आपने काला गन्दा तरल पदार्थ मेरे शरीर में प्रवेश करा दिया"।* कलियुग बोला– "योगी, मैं भी तो ब्रह्म का ही स्वरूप हूँ, आप मुझसे इतनी घृणा क्यों करते हैं? मैं उत्तर में कुछ नहीं बोला। साधकों! अब मुझे उस तरल पदार्थ के कारण दिन भर आलस्य बना रहता है और बहुत सोता रहता हूँ। मेरी साधना बहुत कम हो गई है। मगर कुछ दिनों बाद मैंने दृढ़ता से काम लिया, फिर आलस्य कम होने लगा, इस काले गाढ़े से तरल पदार्थ का प्रभाव धीरे समाप्त हो गया। यह काला गाढ़ा पदार्थ तमोगुण था जिसे भोग कर मैंने समाप्त कर दिया।

सत्य और असत्य ब्रह्म का ही स्वरूप है

साधकों! मुझे बचपन से लेकर अभी तक चोरी करने वालों, झूठ बोलने वालों से तथा बेईमानों से अत्यन्त घृणा है। झूठ तो आजकल ज्यादातर लोग बोलते हैं, इसलिए मेरी किसी से नहीं बनती है। मैं कुछ रूखा सा हो गया हूँ और सोचता हूँ– लोग झूठ क्यों बोलते हैं? मुझे उच्चावस्था प्राप्त होने पर भी अभी तक झूठ बोलने वालों के प्रति घृणा समाप्त नहीं कर सका हूँ। मैं एक दिन ध्यान पर बैठा हुआ था, तभी अन्तरिक्ष से आवाज सुनाई दी– "पाप भी मैं हूँ, पुण्य भी मैं ही हूँ, तुम किससे घृणा करते हो, असत्य से? सत्य भी मैं हूँ, असत्य भी मैं हूँ, असत्य के रूप में मैं ही सभी जगह व्याप्त रहता हूँ। मेरे असत्य रूपी स्वरूप से तुम घृणा करते हो, असत्य के बिना सृष्टि असम्भव है, तुम मेरे सत रूपी स्वरूप को नहीं पहचान पाए हो, इसलिए तुम्हें कष्ट महसूस होता है। मेरे इस स्वरूप को पहचानते ही कष्टों से मुक्त हो जाओगे। सत्य और असत्य मेरे दोनों स्वरूपों को समभाव से देखो, जब तक मनुष्य अज्ञान से ग्रसित रहता है उसके द्वारा किए गए कर्मों से पाप और पुण्य रूपी कर्माशय बनते हैं। अज्ञान से रहित जो जाने पर उसके द्वारा किए गए कर्मों के कर्माशय नहीं बनते है, चाहे क्यों न उसने असत्य का सहारा लेकर कर्म किया हो। वह पाप का भागीदारी नहीं बनता है, क्योंकि ऐसा पुरुष (योगी) मेरी प्रेरणा से अथवा विधि के विधान के अनुसार कार्य करता है"। फिर मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

इस अनुभव के बाद मेरे अन्दर बहुत बदलाव सा आ गया, मेरी लगभग ज्यादा तर समस्याएँ सुलझ गईं। मैं एकांत में चुपचाप शान्त बैठा रहता हूँ, मुझे अब लगता है जानने के लिए अब कुछ शेष नहीं रह गया हैं। मैं सब कुछ जान गया हूँ जो जानना चाहिए था।

स्थूल जगत दिखाई क्यों नहीं देता

यह अनुभव 15 मई को आया– मैंने किसी सुनसान जगह में अकेला चला जा रहा हूँ, कुछ समय तक चलने के बाद मैं एक जगह ठहर गया। फिर गौर पूर्वक कुछ देखने लगा, कुछ क्षणों में मैं अपने आप बोला– पहले यहीं पर कहीं नदी थी, अब वह नदी कहाँ चली गई, मुझे क्यों नहीं दिखाई देती है? मेरा अन्तिम शब्द पूरा होते ही, मुझसे थोड़ी दूरी पर एक तरफ (बाईं ओर) नदी प्रकट हो गई। मैं फिर बोला– मुझे यह नदी पहले क्यों नहीं दिखाई दे रही थी, मेरे कहते ही अपने आप प्रगट होकर दिखाई देने लगी है। फिर मैं एक ओर को चल दिया, तभी मेरे सामने सीढ़ियाँ प्रकट हो गयी, मैं सीढ़ियों के ऊपर चढ़ने लगा। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! नदी– स्थूल जगत है। पहले स्थूल जगत दिखाई नहीं दे रहा दे रहा था, जब मैंने उसका स्मरण किया, तब वह प्रकट होकर दिखाई देने लगा। अर्थात मैं स्थूल जगत में रहते हुए भी स्थूल जगत में नहीं रहता हूँ, आवश्यकता पड़ने पर मैं अपने आपको स्थूल जगत में लाता हूँ। सीढ़ियों पर चढ़ना– भविष्य में आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त होगी।

भगवान शंकर का दर्शन

यह अनुभव 14 मई को सुबह आया– मैं समतल भूमि पर अकेला खड़ा हूँ, मेरे बाँयी तरफ मुझसे थोड़ी दूरी पर भूमि से थोड़ा ऊपर, बिना आधार के अत्यन्त स्वच्छ पानी भरा हुआ है। मैं उस स्वच्छ पानी को देख रहा था, तभी मैंने देखा– एक अत्यन्त सुन्दर स्त्री उस पानी में डूबी जा रही है, स्त्री के ऊपर उठे हुए हाथ दिखाई दे रहे हैं। कुछ ही पलों में ऊपर की ओर उठे हुए हाथ भी पानी में डूब गए। अब मेरी दृष्टि पानी की ऊपरी सतह पर स्थिर हो गई, कुछ क्षणों बाद मुझे ऐसा लगा– कि पानी के अन्दर कुछ हलचल

हो रही है, फिर पानी के अन्दर से ऊपर की ओर को एक पुरुष निकलता हुआ दिखाई दिया, वह विशालकाय सुन्दर पुरुष पानी के ऊपर खड़ा हो गया। उसके सिर के ऊपर बालों का जूड़ा लगा हुआ था, गले में नाग डाले हुए था।, कमर में मृगछाला लिपटी हुई थी। शेष शरीर पर कोई वस्त्र नहीं था, वह पुरुष मुस्कराता हुआ मेरे पास आ गया और मुझसे थोड़ी दूरी पर खड़ा हो गया। उसकी लम्बाई 15-16 फीट रही होगी। सिर पर बालों का जूड़ा और गले में नाग को देखकर मैं बोला– "आप तो भगवान शंकर जैसे दिखाई दे हैं"। मगर वह पुरुष कुछ नहीं बोला, सिर्फ मुस्कराता रहा। गले में लिपटे हुए नाग फन नहीं उठाए हुए थे, बल्कि दोनों नागों का मुँह आगे की ओर नीचे लटक रहा था। फिर नागों ने अपना मुँह उस पुरुष के नाभि पर चिपका लिया था। मैंने उसका शरीर पैरों के पंजों से लेकर ऊपर सिर तक देखा, सम्पूर्ण शरीर सुडौल व बलिष्ट था। तभी मैं उस पुरुष से बोला– आपके गले में लिपटे हुए नाग फन क्यों नहीं उठा रहे हैं, ये नाग अपना मुँह आपकी नाभि के पास क्यों चिपकाए हुए हैं? वह पुरुष मुस्कराता हुआ बोला– *"अच्छा! आपको ये नाग फन उठाए हुए दिखाई देने चाहिए"।* फिर वह पुरुष मेरी ओर थोड़ा सा बढ़ा, तभी नागों ने अपने फन ऊपर की ओर उठा लिये, मैं एक ओर को भागा और बोला– "नहीं, नहीं, मुझे नागों से डर लगता है"। तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में स्वच्छ पानी भूमि जल से भी थोड़ा ऊपर की ओर उठा हुआ स्थिर है, वह जल अथाह भरा हुआ है, स्वच्छ जल में डूबने वाली सुन्दर स्त्री माया है। स्थिर स्वच्छ जल मेरे चित्त का ही स्वरूप है। इस अनुभव में भगवान शंकर त्रिशूल नहीं लिए हुए हैं, उनका रंग गोरा हैं। जबकि भगवान शंकर के शरीर का रंग हल्का नीला हैं। नाग नीचे की ओर मुँह किए हुए हैं, इसका अर्थ है– मेरे लिए अब अहंकार अंतर्मुखी हो गया है।

भगवान शंकर द्वारा ज्ञान का उपदेश देना

यह उपदेश 14 मई को शाम 7 बजे ध्यानावस्था में दिया गया– मेरे ब्रह्मरन्ध्र के अन्दर से भगवान शंकर की आवाज आने लगी– "हे योगी पुत्र, तुम बार-बार कहते हो कि तीनों स्त्रियों ने मुझे स्तनपान कराया, ये स्त्रियाँ नहीं तुम्हारी माताएँ हैं, इन्हें सम्मान सूचक शब्दों का प्रयोग करो। अब ये तुम्हें स्तनपान कराने नहीं आएँगी, उन्हें प्रणाम करो। तुम क्यों बार-बार सोच रहे हो, अनुभव में मेरा रंग गोरा क्यों दिखाई दिया, सिर पर बड़ी-बड़ी जटाएँ क्यों नहीं थीं, वह मेरा ही स्वरूप था, भक्तों को मैं कभी-कभी विभिन्न

रूपों में भी दिखाई देता हूँ। जरूरी नहीं है कि जैसा तुमने सोच रखा है, कैलाश पर्वत वाले स्वरूप में ही दिखूँ। यह बात अच्छी तरह से जान लो, मैं ही प्रकाश हूँ, मैं ही अन्धकार हूँ, मैं ही पाप हूँ, मैं ही पुण्य हूँ, मैं ही क्षर हूँ, मैं ही अक्षर हूँ, मैं ही दीन हूँ, मैं ही अदीन हूँ, मैं ही सत्य निर्गुण ब्रह्म हूँ, मैं ही असत्य रूप में प्रकृति हूँ, मैं सभी प्रकार के कार्यों को करवाता हूँ, मैं ही सभी प्रकार के कार्यों को करता हूँ, मैं ही सृष्टि हूँ, मैं ही प्रलय हूँ, सदैव समाधि लगाने वाले योगियों में मैं ही हूँ, पाप कर्म करने वाले पुरुषों में मैं ही विराजमान हूँ, सभी मनुष्यों में मैं हूँ, सभी पशु पक्षियों में मैं हूँ, मैं सिर्फ कैलाश में ही नहीं हूँ, समस्त अन्तरिक्ष में व भूलोक में विद्यमान हूँ। तुम क्या समझते हो, ज्ञान प्राप्त होने पर भविष्य में तुम्हें दुःख नहीं मिलेगा? योगी को सदैव दुःख सहन करना पड़ता है। तुमने अभी तक इतना दुःख सहन किया है, फिर अब दुःखों से क्यो डरते हो। जब तक भूलोक पर रहोगे तब तक दुःख मिलेता रहेगा। आज तक सभी योगियों ने दुःख को सहन किया है। अभी जो बातें तुम्हें मैंने बताईं हैं उन पर अमल करो"। फिर भगवान शंकर के दर्शन दिव्य- दृष्टि के द्वारा होने लगे। फिर हमारी अपने आप आँखें खुल गयी।

अर्थ- साधकों! यह सब मुझे अनुभव में नहीं सुनाई दिया, ध्यान पर बैठते ही ब्रह्मरन्ध्र से आवाज सुनाई दे रही थी, मैं चुपचाप बैठा हुआ सुन रहा था, आवाज बहुत तेज आ रही थी। आवाज सुनने से लगता था कि बोलने में थोड़ा रूखापन है, अब मुझे लगता है शायद ज्ञान मुझे प्राप्त होने वाला है। दिव्य दृष्टि के द्वारा मैं भगवान शंकर के दर्शन कर रहा था। मुझे उपदेश तो बहुत दिया गया मगर लिखते समय जो याद रहा सिर्फ उसी को लिख सका।

उत्पत्ति का केन्द्र

यह अनुभव मई माह के तीसरे सप्ताह में आया। साधकों! मुझे क्षमा करना यह अनुभव पढ़ने में थोड़ा गन्दा सा लगता है मगर योग की दृष्टि में महत्त्व पूर्ण है इसलिए मैं यहाँ पर लिख रहा हूँ। अनुभव में देखा– मैं एक बहुत सुन्दर गोरे रंग की स्त्री के सामने खड़ा हूँ, वह सूत्री एकदम से निर्वस्त्र है, उसके शरीर के ऊपर एक भी वस्त्र नहीं है। मैं उसका अति सुन्दर निर्वस्त्र शरीर का एक-एक अंग बड़े ध्यान से देख रहा हूँ। उस समय मेरे मन में किसी प्रकार का भाव नहीं था। मैं बोला, *"माता, आप"।* वह स्त्री उत्तर में सिर्फ मुस्कराई। मैं फिर उस स्त्री से बोला– *"माता, आप सुन्दर बहुत हैं, आपका हर अंग सुन्दर है"।* वह स्त्री फिर भी कुछ नहीं बोली, वह स्त्री उसी स्थान पर बैठ गई जहाँ पर खड़ी हुई थी। मैं भी उसी के पास बैठ

गया, मेरी दृष्टि उसकी जननेन्द्रिय के स्थान पर गई, उस स्त्री की जननेन्द्रिय का स्थान स्पष्ट दिखाई दे रहा था, कुछ क्षणों में जननेन्द्रिय का आकार बढ़ने लगा। मेरी दृष्टि जननेन्द्रिय के स्थान पर केन्द्रित थी, तभी मैं उस स्त्री के जननेन्द्रिय के अन्दर प्रवेश कर गया। अन्दर आगे का मार्ग बिल्कुल बन्द था, मैंने दोनों हाथों से आगे का मार्ग बनाया। अन्दर की ओर जाते समय मैं दोनों हाथों से दोनों ओर की माँसनुमा दीवारें विपरीत दिशा में दाहिनी और बाईं ओर को ढ़केलता हुआ चला जा रहा था, यह कार्य बहुत आसानी से हो रहा था। अन्दर माँसनुमा दीवारों से स्वमेव हल्का सा प्रकाश निकल रहा था अर्थात् अन्दर का मार्ग प्रकाश से युक्त था। तथा मैं तीव्र गति से अन्दर की ओर चला जा रहा था। कितने समय तक अन्दर की ओर गति करता रहा, यह मैं नहीं बता सकता हूँ। फिर मेरे अन्दर विचार आया, मैं बहुत समय से अन्दर की ओर चला जा रहा हूँ, मगर इसका अन्तिम स्थान क्यों नहीं मिला? अन्तिम स्थान न मिलने के कारण कुछ क्षणों तक अपने स्थान पर ठहरने के बाद मैं वापस चल दिया। जब मैं जननेन्द्रिय से बाहर निकल आया, तब पहले की भाँति उस सुन्दर स्त्री को बैठा हुआ पाया। वह स्त्री खड़ी हो गई और मुस्करा रही थी। मैंने हाथ जोड़कर पूछा– *"माता, मैं आपकी जननेन्द्रिय के अन्दर बहुत दूर चला गया, मगर अन्तिम स्थान क्यों नहीं मिला?"* मेरे शब्द सुनकर वह स्त्री हँस पड़ी और बोली– *"पुत्र यह तुम्हारी उत्पत्ति का स्थान है, तुम उसका केन्द्र कैसे ढूँढ सकते हो? उत्पत्ति का केंद्र अनन्त है, इसलिए केन्द्र तक नहीं पहुँच सके। आदिकाल में ब्रह्मा जी ने भी उत्पत्ति का केंद्र नहीं ढूँढ पाए थे। तुम जिस केन्द्र को ढूँढ रहे थे, यह समस्त ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का केन्द्र है"।* मैं उस स्त्री के शब्द बड़े ध्यानपूर्वक सुन रहा था, फिर वह स्त्री अदृश्य हो गई। मेरा अनुभव भी समाप्त हो गया।

हे साधकों! यह अनुभव पढ़ने में थोड़ा विचित्र सा लग रहा होगा, मैं इस स्त्री को निर्वस्त्र भी देख रहा हूँ तथा माता कहकर सम्बोधन भी कर रहा हूँ, उस समय मेरे अन्दर किसी प्रकार का भाव नहीं था, ऐसा विकार रहित होने पर होता है। वह स्त्री अत्यन्त सुन्दर थी, सुन्दर क्यों न हो? आखिरकार वह ब्रह्माण्ड जननी थी।

कुण्डलिनी का श्राप व कलियुग की कुदृष्टि समाप्त हुई

साधकों! मैं पहले लिख चुका हूँ मुझे तीन वर्ष पूर्व माता कुण्डलिनी शक्ति ने मुझे श्राप दिया था। वह श्राप मैं अभी तक भोग रहा हूँ, इसी कारण भौतिक रूप से अत्यन्त कष्ट मिल रहा है। अभी कुछ दिन

पूर्व ध्यानावस्था में कलियुग ने मेरे सामने घड़े से गन्दा काला तरल पदार्थ उड़ेल दिया था। यह काला तरल पदार्थ मेरे हृदय में प्रवेश कर गया था, इसका वर्णन मैं पहले कर चुका हूँ। तब से मेरे शरीर में आलस्य इतना बढ़ गया कि मैं सदैव आलसी व्यक्तियों के भाँति अक्सर निद्रा ग्रस्त रहता था, ऐसा लगता था जैसे वर्षों से मैं सोया नहीं हूँ। सारा शरीर दुःखता रहता था तथा ध्यान भी थोड़ा ही कर पाता था। एक दिन ज्ञान ने मुझसे कहा– *"योगी, अब तू योगी नहीं रह गया है, बुजदिलों की तरह हार मानकर आलसियों की तरह सोया रहता है, ध्यान नहीं कर सकता है, तो क्या मंत्र जाप भी नहीं कर सकता है। ऊपर की सूक्ष्मशक्तियाँ कितना अवरोध डालेंगी, स्थूल रूप से मंत्रों का उच्चारण कर तो सकता है"।* उस समय मेरा स्थूल शरीर बहुत कमजोर हो गया था। इस समय मैं भोजन भी सीमित करता था।

मैंने शक्ति मंत्र जाप करने का निश्चय किया, क्योंकि कुण्डलिनी शक्ति ने ही मुझे श्राप दिया था। यह मंत्र मुझे सिद्ध भी है, मैंने शक्ति मंत्र जाप करना आरम्भ कर दिया। यह जाप सिर्फ आसन पर ही नहीं बल्कि स्थूल कार्य करते समय, चारपाई पर लेटे समय भी मेरा मंत्रजाप शुरू रहता था। जाप करते-करते जब मेरा मुँह थक जाता था, तब मन के अन्दर जाप करने लगता था तथा सूक्ष्म शक्तियों से कहता था– क्या आप मंत्र जाप करने में अवरोध डाल सकते हैं, यदि आप अवरोध डाल सकते हो तो अवश्य डालो, मैं आपके अवरोधों का स्वागत करूँगा। आखिरकार मैं मंत्र जाप बराबर करता रहा, एक बार मंत्र जाप करते समय मुझे लगा, सिर के चारों ओर बाहरी तरफ कोई वस्तु लिपटी हुई है तथा वह वस्तु हमारे सिर में कसाव कर रही है। कुछ क्षणों बाद मैंने देखा– एक काला नाग मेरे सिर में दो चक्कर लगाए हुए जोर से लिपटा है। नाग की पूँछ दाहिने कान की तरफ नीचे ओर लटक रही है, बायें कान की तरफ फन वाला भाग है। नाग अपना फन उठाए हुए हवा में (अकाश में) लहरा रहा है, मेरे जाप से मंत्र द्वारा जो शक्ति निकलती है वह उस नाग के मुँह के अन्दर चली जाती है अर्थात् मंत्र द्वारा निकली हुई शक्ति को नाग खा रहा है। मैं यह दृश्य देखकर मुस्कराने लगा तथा आसन पर बैठा हुआ मंत्र जाप करता रहा, मुझे स्थूल रूप से भी महसूस हो रहा था कि नाग अपने शरीर के द्वारा लगाए गए चक्कर से मेरे सिर का कसाव कर रहा है। जब मैंने मंत्र जाप करना बन्द कर दिया, तब मैं नाग से बोला– चाहे आप मेरा सम्पूर्ण योगबल खा जाएँ, मैं अपने कार्य से विचलित नहीं होऊँगा।

कुछ दिनों से मेरा कठोर मंत्र जाप चल रहा था। मंत्र जाप करते समय मुझे अपना स्थूल शरीर दिखाई देने लगा। सिर के ऊपरी वाला भाग मुझे स्पष्ट दिखाई दे रहा था, मैं मंत्र का जाप भी जोर-जोर से कर रहा था तभी मेरे सिर के ऊपर बाहरी हिस्से में जोरदार कम्पन हुआ कुछ क्षणों में सिर का ऊपरी हिस्सा

ढक्कन की तरह खुलकर एक ओर लटक गया। अब मैं ऊपर से सिर के अन्दर का भाग स्पष्ट देख रहा था, सिर के अन्दर मुलायम लुचलुचा माँस भरा हुआ था। जब मैं मंत्र बोलता था तब उस लुचलुचे माँस में जोरदार कम्पन होता था। मंत्र जाप के प्रभाव से सिर के अन्दर का माँस जोरदार कम्पन कर रहा था। कम्पन होने से सिर के अन्दर का माँस उबलने सा लगा था। इस माँस से काला धुएँ जैसा पदार्थ ऊपर की निकलने लगा, सिर के ऊपर का भाग खुला हुआ था, सिर के अन्दर से काला धुआँ-सा कुछ समय तक ऊपर की ओर निकलता रहा। जब धुएँ नुमा पदार्थ निकलना बन्द हो गया, तब ऐसा लगने लगा- सिर के अन्दर जो माँस भरा हुआ था, वह पूरी तरह से काले पदार्थ के रूप में बदल गया है। अब यह काला पदार्थ सिर से नीचे की ओर जाने लगा, मेरा सिर पूरी तरह से खोखला हो गया था। मैं यह सोच कर मुस्करा रहा था कि मेरा सिर अन्दर से खोखला हो गया है, सिर के अन्दर खाली जगह स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही थी।

मेरा मंत्र जाप जोर-जोर से चल रहा था। अब गले तक भरा हुआ काला पदार्थ नीचे की ओर जाने लगा। मैं ऊपर से झाँककर देख रहा था– कि मंत्र जाप के प्रभाव से गले से निचला भाग धीरे-धीरे खोखला हो रहा है, मैं सोच रहा था मेरे शरीर के अन्दर माँस, रक्त और हड्डियाँ ही नहीं हैं, सिर्फ कोयले के समान काला पदार्थ भरा हुआ है। अब वक्षस्थल (सीना) व पेट का अन्दर का भाग खाली हो चुका है, सिर से लेकर कमर तक मेरा शरीर अन्दर से खोखला हो चुका है। मैं अपने आसन पर बैठा हुआ मंत्र जाप एकाग्रता से कर रहा था, मेरे शरीर के अन्दर कमर से नीचे काला पदार्थ अब भी भरा हुआ था। स्थूल रूप से थक जाने के कारण, मंत्र जाप बन्द करना बन्द करके चारपाई पर लेट गया।

अब इस दृश्य के विषय में मैं सोचने लगा– मंत्र जाप करते समय मुझे अपना स्थूल शरीर ‘कवर’ या आवरण के समान दिखाई दे रहा था, इस शरीर के अन्दर सिर्फ कोयले के समान काला पदार्थ भरा हुआ था। मंत्र जाप के प्रभाव से यह तमोगुणी काला पदार्थ, काला धुँआ सा बन कर सिर के ऊपरी खुले हुए भाग से ऊपर की ओर निकल रहा था।

मैं जब भी आसन पर बैठकर मंत्र जाप करता था तब यही दृश्य आता था– मेरे सिर का ऊपरी भाग ढक्कन के समान खुला हुआ है, मैं उसी के अन्दर देख रहा हूँ, शरीर के अन्दर भरा हुआ काला पदार्थ सिर से नीचे की ओर चला जाता है, फिर सम्पूर्ण शरीर खाली हो जाता है। स्थूल शरीर खोखले के समान हो जाता है, यही खोखला शरीर मंत्र जाप कर रहा है, कुछ दिनों तक यही दृश्य आता रहा। एक बार मंत्र जाप करते समय, सिर के ऊपर खुले हुए भाग से, सिर के अन्दर से बाहर की ओर निकलता हुआ काला नाग देखा। यह नाग मेरे सिर से थोड़ा ऊपर (लगभग एक फीट) आकाश में कुण्डली मारने लगा, उस नाग के

फन के ऊपर एक लौ (दीप के समान) जल रही थी। मेरी दृष्टि नाग के फन के ऊपर लौ पर थी, उस समय मेरे अन्दर विचार आया– इसके फन के ऊपर लौ क्यों जल रही है? मैं देख रहा था अभी नाग के पूँछ वाला भाग मेरे सिर के अन्दर से निकल रहा था, तभी मेरे पास बाहर से कोई आ गया, मुझे मंत्र जाप करना बन्द करना पड़ा। अनुभव अधूरा ही रह गया।

अर्थ- इस अनुभव में मेरे सिर पर लिपटा हुआ नाग व मेरे सिर के अन्दर से निकला हुआ नाग कुण्डलिनी शक्ति द्वारा दिया गया श्राप है। यह श्राप मेरे शरीर से निकलकर ऊपर अन्तरिक्ष में चला गया। काला पदार्थ कलियुग द्वारा उड़ेला गया तमोगुण है तथा स्थूल शरीर में भी तमोगुण की मात्रा अधिक रहती है। आजकल स्थूल जगत में तमोगुण का ही व्यापार चलता है। इस प्रकार के दृश्य दिव्य-दृष्टि के द्वारा दिखाये जा रहे थे। मेरा स्थूल शरीर खोखला आवरण सा दिखाई दे रहा था, इस आवरण के अन्दर कोयले के समान काला पदार्थ भरा हुआ था। संसारी लोग इसी शरीर आसक्त होते है, मंत्र जाप के प्रभाव से यह शरीर कैसा दिखाई देता है।

संसार रूपी वृक्ष नष्ट हो गया

एक दिन में शक्ति मंत्र का जाप कर रहा था। मुझे वही दृश्य फिर दिखाई दिया– मेरे सिर में भरा हुआ काला पदार्थ गले तक आ गया, सिर खाली हो गया। तभी मुझे सिर के अन्दर एक और सिर दिखाई दिया, अन्दर वाले सिर का भी धीरे-धीरे ऊपरी भाग ढक्कन के समान खुल गया। इस सिर के अन्दर भी वही काला पदार्थ भरा हुआ था, फिर मैंने देखा– मेरे स्थूल शरीर के अन्दर एक और मानव शरीर (सूक्ष्म शरीर) विद्यमान है, इसी दूसरे शरीर का सिर मुझे दिखाई दे रहा है। फिर धीरे-धीरे दूसरे शरीर का भी काला पदार्थ कुछ दिनों में मंत्रजाप के प्रभाव से समाप्त हो गया, अब मुझे एक बार में दो-दो खोखले शरीर दिखाई देने लगे, जो एक के अन्दर दूसरा खोखला शरीर भरा हुआ था अथवा स्थित था।

28 मई को मंत्र जाप करते समय मुझे अनुभव आया– मेरे सिर के अन्दर बहुत सुन्दर घड़ा स्थित है, उसका मुँह ऊपर की ओर है। यह घड़ा मेरे सिर के खुले हुए ऊपरी भाग से निकलकर, सिर के ऊपर लगभग एक फीट की दूरी पर आकाश में स्थित हो गया। मेरी दृष्टि घड़े पर ही टिकी हुई थी, तभी घड़े का मुँह थोड़ा नीचे की ओर झुक गया तब मैंने देखा– घड़े के अन्दर बिल्कुल स्वच्छ पानी भरा हुआ है, घड़े

का मुँह थोड़ा और नीचे की ओर झुकने पर उसके अन्दर का भरा हुआ पानी मेरे शरीर पर गिरने लगा, मैं उस पानी में स्नान सा करने लगा। घड़े से गिरने वाले पानी का एक बूँद भी बाहर की ओर नहीं फैला था, इस पानी को मेरा स्थूल शरीर सोख लेता था। तभी मेरी दृष्टि फिर से सिर के अन्दर की ओर को हुई, मैंने देखा– हमारे सिर में, दूसरे शरीर के सिर के अन्दर, एक अत्यन्त सुन्दर सुनहले रंग का बिल्कुल छोटा सा बच्चा नीचे की ओर दृष्टि किए हुए बैठा है, मै उस सुनहले रंग के बच्चे को देख रहा था। तभी उस सुनहले बच्चे के शरीर के अन्दर एक वृक्ष दिखाई दिया, वह वृक्ष बड़ा विचित्र सा था। वृक्ष का स्वरुप बिल्कुल उल्टा था, जड़ें ऊपर की ओर, डालियाँ व पत्ते नीचे की ओर लटकी हुई थीं, वृक्ष की जड़ें बच्चे के सिर के ऊपरी भाग में व्याप्त थीं, कुछ क्षणों में डालियाँ और पत्ते ऊपर की ओर खिंचने लगे, फिर पेड़ की डालियाँ व पत्ते सुनहले बच्चे के सिर के ऊपर खिंचाव के कारण आ गए। पेड़ ऊपर की ओर सीधा हो गया, पेड़ सीधा होने के कारण उसका तना मेरे सिर के ऊपर बाहर की ओर आकाश में(एक-डेढ़ फीट) विद्यमान हो गया। पेड़ की जड़ें अब भी सुनहले बच्चे के सिर के ऊपरी भाग में व्याप्त थीं। यह पेड़ पीपल का था, जब पेड़ सीधा खड़ा होने लगा था, तब पेड़ की डालियाँ अपने आप अदृश्य होने लगी थी। पेड़ में सिर्फ तीन-चार पत्ते ही लगे रह गये थे। मैं अपने स्थूल शरीर व सूक्ष्म शरीर के खोखले सिर को भी देख रहा था। मैं यह दृश्य देखकर हँस रहा था, कि पीपल का पेड़ सुनहले बच्चे के सिर पर उगा हुआ है। मेरे शरीर पर अब घड़े का पानी गिर रहा था, तभी घड़े का पानी सिर के ऊपर खुले हुए भाग में गिरने लगा, पानी की धार सीधे सुनहले बच्चे के सिर पर गिर रही थी। पानी गिरने के कारण पीपल के पेड़ की जड़ें हिलने लगीं, तभी मेरे मुँह से आवाज निकली– ‘‘पानी की धार और तेज हो जाए ताकि पेड़ की जड़ें टूट जाएँ, और पेड़ नष्ट हो जाए’’। कुछ क्षणों में पीपल के पेड़ की जड़ें सुनहले बच्चे के सिर से उखड़ गईं, पीपल का पेड़ मेरे स्थूल शरीर से दूर जाकर गिर गया। उसी समय अनुभव समाप्त हो गया। मैं इस पेड़ के उखड़ जाने पर अति प्रसन्न हो रहा था।

अर्थ- साधकों! यह अनुभव मंत्र जाप करते समय आया, मैं सिर्फ आँखें बन्द किए हुए था, इन दृश्यों को दिव्य-दृष्टि दिखा रही थी। स्थूल शरीर व सूक्ष्म शरीर दोनों खोखले रुप में अथवा आवरण के रुप में दिखाई दे हैं। इनके अन्दर सिर्फ काला पदार्थ अथवा तमोगुण भरा हुआ है। मुझे दोनों शरीरों की वास्तविकता दिखाई गई है। सुनहरा बच्चा हिरण्यगर्भ का स्वरूप हैं, इन्हें भगवान ब्रह्मा भी कहते है। यह पीपल का पेड़– क्षणभंगुर चौदह लोकों की सृष्टि का प्रतीक है। इस सृष्टि का सृजन हिरण्यगर्भ (भगवान ब्रह्मा) करते है। इनके शरीर का रंग तपे हुए स्वर्ण के समान है इसीलिए बच्चा सुनहरा दिखाई दे रहा है।

इसी पीपल के पेड़ के विषय में गीता के 15 वें अध्याय के पहले, दूसरे और तीसरे श्लोक में विस्तार पूर्वक वर्णन मिलता है। पीपल के पेड़ का उखड़ जाने का अर्थ है– सृष्टि का प्रयोजन योगी के लिए समाप्त हो जाना है, ऐसा योगी स्थूल शरीर त्यागने के बाद ईश्वर के लोक में रहता है। ईश्वर का लोक इन चौदह लोकों (अपरा-प्रकृति) से अत्यन्त सूक्ष्म होता है। उस लोक के परा-प्रकृति का क्षेत्र भी कहते हैं। ईश्वर के लोक में पहुँचने वाली जीवात्माओं को कभी भी जन्म ग्रहण करने के लिए भूलोक पर नहीं आना पड़ता है। इन लोकों में वही योगी पहुँचता है, जिन्होने अपने सम्पूर्ण कर्माशय को समाप्त कर दिए हैं तथा निर्बीज समाधि का अभ्यास कर रहे हैं।

तुम्हें अगला जन्म लेना अनिवार्य

यह अनुभव 28 मई को मंत्र जाप करते समय आया, मंत्र जाप करते समय मेरी दिव्य दृष्टि हृदय (चित्त) के अन्दर का दृश्य लेने लगी। उस समय मुझे अपने हृदय के अन्दर कुछ धुँधला सा दिखाई दे रहा था। धुँधली आकृति जब साफ हुई, तब वह चतुर्भुजी स्त्री के रूप में दिखाई देने लगी। यह चतुर्भुजी स्त्री मेरे हृदय में बिल्कुल छोटे आकार में दिख रही थी। कुछ क्षणों बाद स्त्री के शरीर का आकार बहुत बड़ा हो गया, तभी हृदय में एक विशेष प्रकार की वस्तु प्रगट हो गयी, वह वस्तु हृदय से निकलकर भृकुटी पर आ गई, इस क्रिया को देखकर मैं बोला- यह क्या है, मेरी भृकुटी पर क्यों आ गई? चतुर्भुजी स्त्री बोली– "यह वस्तु तुम्हारी दिव्यदृष्टि में सहायता करेगी"। उसी समय वह वस्तु मेरी दिव्य दृष्टि में समा गई। चतुर्भुजी स्त्री का शरीर बड़ा होकर मेरे शरीर में व्याप्त हो गया, मेरा मंत्र जाप बराबर चल रहा था।

कुछ क्षणों बाद मुझे अपने हृदय में एक बिल्कुल छोटी चिड़िया बैठी हुई दिखाई दी। वह बड़े शान्त भाव में बैठी हुई थी, मैं उस चिड़िया को कुछ क्षणों तक देखता रहा। वह चिड़िया अण्डे के रूप में परिवर्तित हो गई, अब मेरे हृदय में एक अण्डा रखा हुआ था। वह अण्डा मेरे शरीर के अन्दर से निकलकर स्वमेव बाहर की ओर जाने लगा। मैं बोला– तू बाहर क्यों जा रहा है मेरे हृदय में स्थित रहो? अण्डे के अन्दर से आवाज आई– *"तुम्हें अगला जन्म लेना अनिवार्य है"।* वह अण्डा दूर जाकर अन्तरिक्ष में अदृश्य हो गया, मैं अन्तरिक्ष की ओर देख रहा था, फिर अन्तरिक्ष से आवाज आई– *"तुम्हें अगला जन्म लेना अनिवार्य है, इसीलिए ब्रह्म ने उसे अपने अधिकार में ले लिया है"।* मैंने अपनी आँखें खोल दी, मंत्र जाप करना बन्द कर दिया।

इस अनुभव में जो मुझे अण्डा दिखाई दिया है, यही अगला जन्म लेने के लिए मजबूर करेगा। यह अण्डा मेरा ही कर्माशय है। अगला जन्म ग्रहण करने के लिए कुछ-न-कुछ कारण तो चाहिए, इसलिए मेरे साथ यह क्रिया की गई है। योगबल से कर्माशय जलने के बाद उसका अवशेष रह जाता है, जैसे लकड़ी के जलने के बाद राख शेष रह जाती है। इसीलिये मैंने जो कर्म भोग लिए है वह समाप्त हो गए, मगर जो योगबल से जल गए उनका कुछ अवशेष बाकी रह गया। मैं इस जन्म में इस अवशेष रूपी कर्मों को भोगने को तैयार हूँ, मगर प्रकृति को ऐसा मंजूर नहीं है। इनका कहना है सृष्टि के कार्य हेतु आपको एक और जन्म लेना अनिवार्य है। जिस प्रकार कुम्हार का चाक बर्तन बनाने के बाद भी घूमता रहता है उस समय घूमने का कोई कारण नहीं होता है इसी तरह कर्मों की समाप्ती के बाद भी कुछ योगियों को लेने पड़ जाते हैं। इस प्रकार के जन्म धर्म प्रचार के लिए अथवा सृष्टि के अन्य कार्यों के लिए होता है। यदि यह कर्माशय रूपी अण्डा यदि मेरे हृदय में विद्यमान रहता, तब मंत्र जाप के प्रभाव से फट जाता अर्थात् अण्डा नष्ट हो जाता। अण्डे के अन्दर वह तत्त्व मौजूद रहते हैं जिनके द्वारा स्थूल शरीर का निर्माण होता है।

प्रिय पाठको! आप मेरी तीसरी पुस्तक तत्त्वज्ञान में पढ़ेंगे- यही मेरा अन्तिम जन्म है, अब मुझे अगला जन्म नहीं लेना पड़ेगा, क्योंकि मैंने वर्तमान जन्म में ही तत्त्वज्ञान प्राप्त कर चित्त पर स्थित अज्ञानता को नष्ट कर दिया है। चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा के प्राकट्य होने के कारण निर्बीज-समाधि का अभ्यास कर रहा हूँ। इससे बाद के अनुभव अब आप हमारी तीसरी पुस्तक "तत्त्वज्ञान" में पढ़ेगे।

प्रिय पाठकों! अभी आपने मेरे ध्यान में आए अनुभवों को पढ़ा। यह अनुभव मई सन् 1999 का है। मैंने मुख्य-मुख्य अनुभव लिखे, शेष अनुभवों को छोड़ दिया। अब मुझे शायद न के बराबर अनुभव आएँ। आपके अनुभव भले ही मेरे अनुभवों से मेल न करते हों, मगर ध्यानपूर्वक पढ़ने पर यह समझ में आ जाएगा कि किस अवस्था में कैसा अनुभव आता है। मुझे आशा है, मेरे अनुभवों को पढ़ने से आपको कुछ-न-कुछ आध्यात्मिक लाभ अवश्य मिलेगा। इन शब्दों के साथ अब मैं लिखना बन्द कर रहा हूँ। आप अपने मार्ग में आगे बढ़ते जाएँ, ईश्वर आप पर कृपा करे, आपको मेरी शुभकामनाएँ!

योगी आनन्द जी

प्रिय साधकों!

अभ्यास द्वारा आंतरिक विकास होने पर क्रमशः चक्रों का खुलना, कुण्डलिनी का जाग्रत होकर ऊर्ध्व होना, दिव्य-दृष्टि का खुलना और ब्रह्मरंध्र का खुलना सम्भव हो पाता हैं। सहस्त्रार चक्र अंतिम जन्म में कलेशात्मक कर्मों को भोग कर नष्ट करने के बाद ही विकसित होना शुरू होता है, क्योंकि वह ज्ञान का आयतन है।

पूर्ण विकसित होने के लिए यम-नियम का पालन करते हुए, योग्य गुरु के मार्गदर्शन में कई वर्षों तक अथवा कई जन्मों तक कठोर संयम के साथ अभ्यास करना पड़ता है।

जो साधक बिना परिश्रम किये, किसी से कुछ प्राप्त करने की इच्छा रखते है, वह अकर्मण्यों की भाँति भ्रम में जी रहे है इसलिए परिश्रम करों तभी कुछ प्राप्त होगा। आप ठगे न जाये और योग सम्बन्धी भ्रांतियों को मिटाने के लिये, वर्तमान समय में यह पुस्तक बहुत उपयोगी है।

-योगी आनन्द जी

Email id: anandkyogi@gmail.com

Facebook: http://www.fb.com/sahajdhyanyog

Website: http://www.kundalinimeditation.in/

Youtube: http://www.youtube.com/ c/YogiAnandJiSahajDhyanYog

ISBN 978-93-5288-373-8

9 789352 883738